सत्यमेव जयते

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त

की

रिपोर्ट

अट्ठाईसवीं रिपोर्ट

1986-87

सत्यमेव जयते

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त

की

रिपोर्ट

NIEPA DC
D06782

अट्ठाईसवीं रिपोर्ट

1986-87

Sub. National Systems Unit,
National Institute of Educational
Planning and Administration
17-B Sri Aurobindo Marg, New Delhi-110016
DOC. No. D-6782
Date 16/4/92

सं० 1/सामा०/87-अनु० ए०-3

भारत सरकार

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त का कार्यालय

पश्चिमी खण्ड 1, रामकृष्णपुरम्
नई दिल्ली-110066
दिनांक : 23 नवम्बर 1988

प्रेषक : डॉ० ब्रह्मदेव शर्मा
अनसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त

प्रेषिती : भारत के राष्ट्रपति
नई दिल्ली

(संघ के कल्याण राज्य मंत्री के माध्यम से)

महोदय,

अनसूचित जातियों और जनजातियों के लिए संवैधानिक प्रावधानों के अनुपालन पर वर्ष 1986-87 के लिए मैं यह रिपोर्ट प्रस्तुत कर रहा हूं। चूंकि आयुक्त का पद 24-11-1981 से 10-2-1986 तक खाली रहा इसलिए यह रिपोर्ट लगभग सात वर्ष के बाद तैयार हुई है। प्रस्तुत मूल्यांकन में छठी योजना का समय भी शामिल किया गया है, यद्यपि इस अवधि का कुछ विवरण अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग की रिपोर्टों में भी आ चुका है। इस आयोग का गठन भारत सरकार ने 1978 में एक संकल्प द्वारा किया था जिसमें उसके दायित्व आयुक्त के संवैधानिक दायित्वों जैसे ही निर्धारित किए गए थे। आयुक्त इस आयोग का पदेन सदस्य था। 1-9-1987 को इस आयोग का अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग के रूप में पुनर्गठन हुआ है जिसके अनुसार पहले की व्यवस्था समाप्त कर नए आयोग को अलग जिम्मेदारियां सौंपी गई हैं।

2. हमारे देश में लगभग एक चौथाई लोग अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य हैं। इन नागरिकों का न केवल जीवन स्तर अत्यन्त सोचनीय है, वरन् उन्हें आज भी उन अनेकानेक प्रतिकूल बलों के विरुद्ध न्याय के लिए जूझना पड़ रहा है जिन्हें परम्परागत व्यवस्था तथा नई सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था दोनों से समर्थन मिल रहा है। विडम्बना तो यह है कि ये प्रतिबल गतिशील आधुनिकीकरण के तहत आर्थिक-सामाजिक संरचनात्मक बदलाव की प्रक्रिया के लिए अनन्य से मान लिए गए हैं। इसलिए ये प्रतिबल भी आधुनिकीकरण की चमक-दमक में लैस हैं। इस स्थिति में संवैधानिक व्यवस्थाओं की जांच एक स्पृहणीय और दुस्तर काम हो गया है। अतएव इस रिपोर्ट में सबसे पहले गने सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की पृष्ठभूमि में संवैधानिक व्यवस्थाओं का खुलासा, उनका सही दायरा, संगत प्राथमिकताएं और उनके लिए आवश्यक गतिशील कार्यनीति प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। इसी व्यापक पृष्ठभूमि में आगे चल कर समानता और न्याय के मूलभूत प्रश्न को लेकर कानून और प्रशासनिक कार्यों के रूप में राज्य के दायित्व की सामान्य समीक्षा प्रस्तुत की गई है।

3. हमारे संविधान में 'समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक' व्यवस्था की स्थापना के लिए आदर्श ढांचे की संकल्पना है। इस संकल्पना को साकार करने के लिए उसमें बहुआयामी कार्य-योजना का संकल्प भी है। इस संकल्प में परम्परागत व्यवस्था में अन्तर्निहित अन्याय को मिटाने के साथ-साथ आधुनिक अर्थ-व्यवस्था का निर्माण न्याय और समानता की चेतना के अनुरूप करने का उद्देश्य है। अतएव नई व्यवस्था की रूपरेखा में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए प्रमुख स्थान देने के साथ-साथ निजी क्षेत्र द्वारा अपनी लघुतर भूमिका में भी सामाजिक न्याय के लिए उपयुक्त सीमा रेखाओं का अनुपालन करने पर बल दिया गया है। इस परिप्रेक्ष्य में सभी नागरिकों के लिए संविधान में शिक्षा और रोज़गार के अवसरों में समानता के प्रावधानों का विशेष महत्व है। इनके आधार पर हर नागरिक को अपनी क्षमता और योग्यता के अनुरूप नई व्यवस्था में बिना किसी भेदभाव के उपयुक्त स्थान प्राप्त करने का अवसर सुनिश्चित हो सकता था। परन्तु इस न्यायसंगत ढांचे में भी समाज के कमजोर वर्गों को भी सच्चे अर्थों में न्याय मिल सके इस उद्देश्य से कुछ विशेष व्यवस्थाओं का समावेश कर संविधान की मूलभूत भावना के अनुरूप उसको और भी मजबूत करने की जरूरत महसूस की गई थी। सार रूप में इन विशेष प्रावधानों का प्रमुख उद्देश्य यही है कि समाज के कमजोर वर्गों, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास के रास्ते में पुरानी या नई व्यवस्थाओं में अन्तर्निहित किसी प्रकार की भी कोई बाधा न आए और सभी लोगों के लिए नई अर्थव्यवस्था

में सजग भागीदारी और राष्ट्रीय जीवन में समानता के आधार पर सहभागिता सुनिश्चित हो सके ।

4. संविधान के लागू होने के समय से ही विशिष्ट सुरक्षणों सहित विभिन्न प्रावधानों के अनुपालन में अनेक कार्यक्रम लिए गए हैं जिनकी उल्लेखनीय उपलब्धियां हुई हैं । तथापि अभी तक की उपलब्धियां संविधान के निर्माताओं की उदात्त आशाओं के अनुरूप नहीं कही जा सकती हैं । इसके अलावा भूल, चूक और भटकाव के भी कई संदर्भ आए हैं जिनसे यह स्पष्ट होता जा रहा है कि आज नल प्रश्न प्रयास कितना हुआ इसकी बजाय उस प्रयास की गुणवत्ता, अन्तश्चेतना, सही दिशा और सम्यक गति के हैं । इस संबंध में मेरे मत में सबसे अहम मुद्दा यह है कि संविधान में जिन उपबन्धों की विशेष व्यवस्था और संपूरक भूमिका के रूप में रखा गया है उन्हें अनन्य और स्वयं-पूर्ण मान लिया गया है । इसीलिए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के संबंध में सभी स्तरों पर विचार-विमर्श बहुधा इन्हीं उपबन्धों के क्रियान्वयन तक सीमित रह जाता है । इस कारण उन आधारभूत व्यवस्थाओं के महत्व की, जिनकी नींव पर विशिष्ट उपबन्धों के सहायक समर्थन से मजबूत न्यायसंगत संरचना की स्थापना अपेक्षित है, कुछ हद तक अनदेखी हो गई है । इसका फल यह हुआ है कि अनेक उपलब्धियों के बावजूद अनुसूचित जातियों और जनजातियों की वर्तमान स्थिति के बारे में हम आशावादी लहजे में यह कह कर समाधान नहीं कर सकते हैं कि "हम बहुत कर चुके हैं, पर अभी बहुत कुछ करना शेष है ।"

5. जब हम अपनी अर्थव्यवस्था के पराम्परागत क्षेत्र को देखते हैं तो उसमें भूमि सुधार का निर्णायक सवाल ऐसा लगता है मानो अब केन्द्रीय नहीं रह गया है और इस मामले में कुछ उलट-प्रक्रियाएं भी बलवती हो गई हैं । अनगिनत खेतिहर मजदूरों के लिए "जमीन जोतने वाले की" सिद्धांत का अनुपालन एक मोहक सपना मात्र है । विडम्बना तो यह है कि उनके जमीन को जैसे-तैसे जोतते रहने के अधिकार के लिए भी कोई प्रभावी संरक्षण नहीं है । अनुपस्थित/पूंजीदार जमींदारों का वर्ग बढ़ता जा रहा है । देश के कई भागों में मजदूरी की स्थिति अत्यन्त सोचनीय है । जब हम परम्परागत व्यवसायों में काम करने वाले साधारण मजदूर की देखते हैं तो पाते हैं कि वे तकनीकी प्रगति के लाभ से वंचित ही रहे हैं । दूसरी ओर तकनीकी विकास का वह उलट-प्रभाव, जो औपनिवेशिक काल के पहले चरण से ही उनके लिए अभिशाप बन कर आया था, समय के साथ और भी अधिक तेज होता जा रहा है और बड़ी निरीहता से उन्हें तबाह करता जा रहा है । सच तो यह है कि वर्तमान स्थिति में विकास की शैली ही कुछ ऐसी है जिससे आसूदा लोगों को न केवल अपनी स्थिति की बनाए रखने में सहायता मिली है अपितु उन्हें और भी मजबूत होने में मदद मिल रही है ।

6. आदिवासी क्षेत्रों में स्थिति विशेष रूप से चिंताजनक है । सभी ओर आदिवासी लोग तरह-तरह से स्थानिक संसाधनों पर अपने अधिकार लगातार खोते जा रहे हैं--कहीं अधिक प्रगत वर्गों का दबाव है कहीं राज्य स्वयं ही उनके परम्परागत अधिकारों की नितांत अवहेलना कर रहा है और कहीं छोटी-बड़ी भांति-भांति की विकास परियोजनाओं के लिए एक तरह से जबरदस्ती विस्थापन का सिलसिला चालू है । आदिवासी समाज के कल्याण में संसाधनों पर नियंत्रण ही सबसे अहम सवाल है और इसलिए संवैधानिक सुरक्षणों में वही सवाल आधारभूत है । इस मुद्दे पर मैं विस्तृत जांच कर रहा हूं और जल्दी ही उस पर एक विशेष रिपोर्ट प्रस्तुत करूंगा । यहां पर उस संबंध में केवल इतना उल्लेख करना चाहूंगा कि एक ओर आदिवासी अंचलों में तरह-तरह का शोषण पहले की तरह ही निर्बाध रूप से जारी है वहीं दूसरी ओर हाल के सालों में विकास के नाम पर वित्तीय निवेश का स्तर बढ़ने से अनेक प्रतिबल और उनके दुष्परिणाम अधिकाधिक प्रखर और गंभीर होते जा रहे हैं । मध्य भारत की लगभग पूरी आदिवासी पट्टी में ही, विशेषत: भूमि और वन के सवाल को लेकर घोर असंतोष की आग सुलग रही है । कुछ जगह तो लोगों और राज्य के बीच सीधे टकराव की स्थिति बन गई है जो यदाकदा हिंसक विस्फोटों का रूप भी ले लेती है ।

7. जब हम राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के आधुनिक क्षेत्र को न्याय और समानता के संदभ में देखते हैं तो वहां भी किसी सुखद स्थिति का अहसास नहीं होता है । इस व्यवस्था के नए अवसर अधिकतर उन्हीं लोगों को मिले हैं जो शुरुआत की असमान स्थिति और बाद में नई व्यवस्था में कमजोर वर्गों के प्रति अन्तर्निहित अन्यायी प्रवृत्ति का लाभ उठाकर आगे पहुंचने में सफल हुए हैं । अनुसूचित जातियों और जनजातियों को सामाजिक न्याय के लिए सकारात्मक विभेद की नीति का लाभ मिला है परन्तु वह लाभ सार्वजनिक क्षेत्र के अवसरों तक ही सीमित रहा है जो संपूर्ण राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में अभी केवल एक छोटा-सा अंश ही है । जहां एक ओर इन उपलब्धियों को, जो निश्चय ही महत्वपूर्ण हैं, बढ़ा-चढ़ा कर दर्शाने की प्रवृत्ति है वहीं दूसरी ओर जिन अधिसंख्य लोगों को नितांत असुरक्षा की स्थिति में प्रखर प्रतिबलों के सामने अवनति का मुंह देखना पड़ रहा है उनकी बात कुछ धीरे से की जाती है । सार रूप में यह कहा जा सकता है कि हमारे राष्ट्रीय जीवन में असमानता का जन्मगत आधार न केवल कायम है अपितु और भी मजबूत होता जा रहा है । इस संबंध में सबसे भयावह तथ्य तो यह है कि जिन लोगों को नई ताकत का आधार मिल गया है वे उन्हें छोड़ने के लिए तैयार नहीं हैं और वे अब ऐसी उदार अर्थ-नीति की कायमी के लिए प्रयत्नशील हैं जिस पर कोई सामाजिक प्रतिबन्ध न हो और जहां "समानता के लिए विकास" के नाम पर निरंकुश आर्थिक बलों को निर्बाध रूप से पनपने का अवसर,मिले ।

8. इस प्रकार राष्ट्रीय जीवन में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए न्याय और समता के लिए जरूरी आधारभूत तत्वों में ही एक गुणात्मक बदलाव आ रहा है । सकारात्मक विभेद के आधार पर अकेले सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार में समानता को पूरे राष्ट्रीय जीवन में समता और न्याय का पर्याय नहीं माना जा सकता है । वह उद्देश्य तो तभी पूरा होगा जब उनके लिए राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में सभी स्तरों पर न्यायसंगत सहभागिता सुनिश्चित हो । यह एक विडम्बना है कि आज हम एक ऐसे मोड़ पर आ पहुंचे हैं जहां हमें अर्थव्यवस्था के विभिन्न स्तरों पर न्याय की यह बात उस समय कहनी पड़ रही है जब हम उन सुरक्षणों पर विचार कर रहे हैं जिन्हें समतामूलक व्यवस्था को सुदृढ़ करने के

उद्देश्य से बनाया गया था । अभी तक के अनुभव से यह स्पष्ट होता जा रहा है कि परम्परा से जिन लोगों का संसाधनों पर नियंत्रण और व्यवस्था पर अधिकार था बदलती स्थिति में उनकी प्रतिक्रिया का रूप क्या होगा तथा यदि उन्हें अपने हितों के साथ सदियों से उत्पीड़ित जनों के हित में लेशमात्र भी समझौता करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा तो प्रतिक्रिया कितनी तीखी होगी इसका सही-सही अहसास शुरू में नहीं था । आशा यही थी कि पहले तो उनकी प्रतिक्रिया तीखी नहीं होगी और यदि ऐसा होता भी है तो जैसे-जैसे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में नए अवसर उभरेंगे तो उसमें सभी को कुछ न कुछ लाभ मिलने की संभावना के संदर्भ में उस प्रतिक्रिया का धीरे-धीरे शमन होता जाएगा । परन्तु विकास के लाभों के असमान वितरण के कारण इस आशा पर पानी फिर गया । वस्तुतः नई व्यवस्था में न्यायसंगत समता के सिद्धांत को अपेक्षाकृत गौण स्थान देने की प्रवृत्ति जैसे-जैसे पनपती जा रही है एवं तुरत-सिद्धि और उपभोगवाद का माहौल जैसे-जैसे गहराता जा रहा है, सामान्य कार्य व्यवहार में भी जाति-धर्म जैसे आदिम रिश्तों को अधिकाधिक प्राधान्य मिलता जा रहा है । अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उत्पीड़न के सिलसिले में एक नया आर्थिक आयाम जुड़ गया है । निहित स्वार्थों के अपनी स्थिति मजबूत बना लेने में सफलता के संदर्भ में दलित वर्गों के लिए न्यायसंगत समता सुनिश्चित करने का काम पहले के मुकाबले अब बहुत अधिक कठिन हो गया है । यह उदीयमान विग्रह न केवल हमारी व्यवस्था को कमजोर बना रहा है अपितु उसके कारण हमारी सामाजिक संरचना में तनाव की स्थिति उसकी सहनशक्ति की हद से बाहर होती जा रही है ।

9. उपर्युक्त स्थिति के संदर्भ में यह अब जरूरी हो गया है कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए न्यायसंगत समता के आम और संवैधानिक सुरक्षणों के खास मसले पर व्यापक परिप्रेक्ष्य से विचार किया जाए । आदिवासी उपयोजनायें और अनुसूचित जातियों के लिए विशेषांश योजनाएं निश्चय ही विकास की दिशा में महत्वपूर्ण कदम साबित हुई हैं । उनके रहते ही अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास के लिए वित्तीय प्रावधानों में भारी बढ़ोतरी हुई है । परन्तु उनका कार्यान्वियन संतोषजनक नहीं रहा है । वास्तव में इन नई कार्यनीतियों के कुछ आधारभूत तत्वों का तो क्रियान्वयन हुआ ही नहीं है । राज्यों को दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता की राशि में से बहुत कुछ हिस्सा बिना खर्च किए उन सरकारों के पास पड़ा है । केन्द्रीय सरकार और योजना आयोग को आठवीं पंचवर्षीय योजना बनाते समय यह सुनिश्चित करना चाहिए कि नई योजनाओं का आयाम समग्र हो और संबंधित मंत्रालय और राज्य सरकारें उनके लिए तैयार किए गए दिशा-निर्देशों का कड़ाई से पालन करें ।

10. परन्तु केवल इतना ही काफी नहीं होगा । विकास की गति के साथ और भी तेज होती जा रही शोषण की प्रक्रियाओं का प्रभावी प्रतिकार जरूरी है । इस दिशा में शुरुआत तो सामान्य व्यक्ति के पास जो है उस पर उसका अधिकार बना रहे यह सुनिश्चित करने से होनी चाहिए । अनुसूचित जनजातियों और उनसे भी ज्यादा अनुसूचित जातियों के अधिकांश लोग अपनी आजीविका के लिए आज असंगठित क्षेत्र में मजदूरी पर निर्भर हैं । असंगठित क्षेत्र में साधारण मजदूर के श्रम और उसके कौशल के लिए मूल्यांकन की आज की स्थिति नितांत अनुदार है । विडम्बना तो यह है कि संगठित और असंगठित क्षेत्रों में मजदूरी तय करने के सिद्धांत भी अलग-अलग ह जो सरासर अन्याय है और संविधान की मूल चेतना के विरुद्ध है । और फिर खेतिहर मजदूरों और अन्य परम्परागत व्यवसायों में काम करने वाले मजदूरों के कौशलों का मूल्य तो सबसे ही कम आंका जाता है । पूरी राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में मजदूरी की दरों को तय करने के लिए एक समान आधार की व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए एक केन्द्रीय कानून बनाया जाना चाहिए । इसके साथ ही परम्परागत व्यवसायों के जातिगत आधार को जल्दी से जल्दी तोड़ कर उनको व्यावसायिक आधार पर पुर्ननियोजित करना और उसके अलावा यह भी सुनिश्चित करना जरूरी है कि उनमें लगे साधारण लोगों को आधुनिक तकनीक के उचित लाभ मिल सकें ।

11. दूसरा मुख्य प्रश्न उत्पादन के साधनों का और संसाधनों पर अधिकार का है । जब तक मजदूर और उसके उत्पादन के साधन अलग-थलग हैं और साधनों पर गैर-मजदूरों का नियंत्रण है तब तक अन्यायपूर्ण असमानता बनी रहेगी । भूमि पर असमान स्वामित्व की अन्यायपूर्ण व्यवस्था खत्म होनी चाहिए और जमीन को जोतने वाले को ही उसका न्यायसंगत स्वामित्व मिलना चाहिए । इस मामले में केन्द्रीय सरकार को एक उपयुक्त कानून बना कर हस्तक्षेप करना चाहिए जिसमें निश्चित समयबद्ध तरीके से क्रियान्वयन की व्यवस्था भी होनी चाहिए । उत्पादन के साधनों पर मजदूर का न्यायसंगत अधिकार ही वह आधार है जिससे अनुसूचित जातियों के अधिकांश लोगों को न्याय की प्राण-वायु मिल सकती है जो अभी भी उस प्राणांतक अलगाव के शिकार बने हुए हैं । अनुसूचित जनजातियों के लोगों के सामने आज मुख्य सवाल ही दो हैं—संसाधनों पर उनके परम्परागत अधिकार की विधिवत मान्यता और विकास के घातक उलट-प्रभावों से संरक्षण ।

12. ऊपर बताए गए उपायों से असंगठित क्षेत्र में संघर्षरत लोगों को कुछ तत्काल राहत मिलेगी, परन्तु वही काफी न होगा । इसके साथ-साथ अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के लिए आधुनिक क्षेत्र में उचित भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कार्यवाही करना भी आवश्यक होगा । जहां तक सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार का सबंध है, आरक्षित पदों में भर्ती के बारे में स्थिति धीरे-धीरे सुधर रही है और अब हम क्रमशः स्थिर-संतुलन की स्थिति की ओर बढ़ते जा रहे हैं । इस स्थिति को एक तरह से सकारात्मक विभेद की नीति के पहले चरण का समापन कहा जा सकता है । परन्तु इस सफल कदम के बाद हम एक ऐसे मोड़ पर आ पहुंचेंगे जिसके आगे अनुसूचित जातियों और जनजातियों के युवा वर्ग तथा अन्य जातियों के युवा वर्ग के सामने अवसरों के लगभग दो नितांत अलग-थलग संसार होंगे—अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए सार्वजनिक क्षेत्र की छोटी-सी दुनिया और दीगर लोगों के लिए राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का फैला हुआ निस्सीम आयाम ।

13. इस संदर्भ में हमारे सामने गौर करने के लिए अहम सवाल यह है कि "आरक्षण के आगे क्या ?" संविधान की आधारभूत योजना के अनुरूप सामाजिक न्याय के दायित्व को सही रूप में निभाने के लिए यह जरूरी है कि सकारात्मक विभेद के सिद्धांत को निजी क्षेत्र में लागू किया जाय । इसकी शुरुआत उन सभी आर्थिक गतिविधियों से की जा सकती है जिन्हें संस्थागत वित्त का लाभ मिल रहा है और/अथवा जिन्हें किसी अन्य तरीके से राज्य द्वारा सहायता दी जा रही है। इसी प्रकार आधुनिक क्षेत्र में स्वरोजगार के सभी नए अवसरों को एकाधिकारी प्रवृत्ति से, जो स आर्थिक विकास और न सामाजिक न्याय के हित में है, बचाना जरूरी है । विकेन्द्रीकरण के लिए उपयुक्त उन सभी गतिविधियों को जो गरीब लोगों के लिए मुख्य या गौण व्यवस्था के लिए उपयुक्त है, पूरी तरह से उन्हीं के लिए आरक्षित कर देना चाहिए। पड़त भूमि के विकास की नई संभावनाओं को विशेष रूप से गरीब व्यक्तियों के हक में ही आरक्षित कर दिया जाना चाहिए । गरीबों के लिए यही संसाधन तो अब आखिरी सरहदी इलाके की बतौर बच रहे हैं, जिनमें उन्हें कुछ अपना कह सकने जैसा आधार बना सकने की आशा की अन्तिम किरण दिखाई पड़ सकती है । सभी केन्द्रीय मंत्रालयों और राज्य सरकारों द्वारा अपने-अपने अधिकार क्षेत्र के लिए एक ऐसी व्यापक नीति तैयार की जानी चाहिए जिससे उन क्षेत्रों के विकास के दौरान जो रोजगार और स्वरोजगार के नए अवसर बनें, उनमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों को समुचित स्थान मिलता रहे। इसी तरह अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को शहरी इलाकों में जिस बहुविध नई संपदा का निर्माण हो रहा है उसमें भी समानता के आधार पर भागीदारी के लिए समुचित आयोजन किया जाना चाहिए । आदिवासी क्षेत्रों के विकास में आदिवासी समाज को समानता के आधार पर भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए विशेष कानून बनाना जरूरी है ।

14. यहां पर मैं आपका ध्यान इस तथ्य की ओर विशेष रूप से आकर्षित करना चाहूंगा कि आदिवासी लोग इस समय अपने इतिहास के एक नाजुक मोड़ पर हैं जहां एक ओर उनकी अपनी परम्परागत व्यवस्था उचित मान्यता के अभाव में निरन्तर कमजोर और अप्रासंगित होती जा रही है, वहीं दूसरी ओर उन्हें राज्य की अपरिचित औपचारिक व्यवस्था, नई अर्थव्यवस्था के अनजाने बलों तथा दीगर लोगों के निर्बाध अनधिकार घुसपैठ की समस्याओं से बरबस जूझना पड़ रहा है । इस संदर्भ में आज के आदिवासी समाज की स्थिति के दो पहलू हैं । पहला यह कि हर एक जनजाति या उसके उप-भाग को बेमिसाल सामाजिक-आर्थिक बलों का सामना करना पड़ सकता है। दूसरा यह कि इन सभी मामलों में उनके सामने मूल समस्या संक्रमण की है। संविधान के निर्माताओं को इस स्थिति के निहित अर्थों का पूरा-पूरा एहसास था और इसीलिए संविधान में अनुसूचित क्षेत्रों को एक विशेष स्थान दिया गया था । अतएव एक ओर राज्य सरकार की कार्यकारी शक्ति को आवश्यकता के अनुसार संघ सरकार के निर्देशों के अधीन रखने की व्यवस्था है और दूसरी ओर औपचारिक व्यवस्था को जनहित में आवश्यकता के अनुरूप ढालने और नियमन के लिए कार्यपालिका को विस्तृत अधिकारों से लैस किया गया है ।

15. सच तो यह है कि आदिवासी समाज आज ऐसी आपात स्थिति से गुजर रहे हैं जहां हर पल भारी पड़ रहा है। इस तथ्य का समुचित अहसास तक नहीं है । यह खेद का विषय है कि केवल साल-दर साल ही नहीं वरन् दशक-पर-दशक ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दों तक पर बिना किसी कार्यवाही के बीतते जाते हैं जिनके बारे में संविधान के निर्माता एक दिन भी गवाने देना नहीं चाहते थे । केन्द्र और राज्य दोनों ही स्तरों पर कार्यपालिका की विशेष शक्तियां चार दशकों की लम्बी अवधि के बाद भी उनके बिना उपयोग के इसलिए अछूती नहीं बनी रही कि आदिवासी क्षेत्रों की स्थिति ऐसी मनभावन आदर्श रूप में बनी हुई है जिसे अछूता रहने देना श्रेयकर होगा, वरन् यह इसलिए हुआ कि हमारी व्यवस्था उनकी समस्याओं के प्रति कदाचित असंवेदनशील रही है। संविधान में विशेष रूप से उपबन्धित कुछ औपचारिक मामलों तक का भी अमल नहीं किया गया है। अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन की किसी भी स्तर पर सम्यक समीक्षा नहीं की जा रही है। शांति और अच्छे प्रशासन के लिए संविधान के अनुच्छेद 275(1) के प्रथम परन्तुक के अन्तर्गत अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर को उन्नत करने के लिए आवश्यक राशि के निर्धारण करते ही तत्काल बिना विवेचन के दिए जाने का प्रावधान होते हुए आज तक इस प्रयोजन के लिए एक रुपया भी नहीं दिया गया है ।

16. यह खेद की बात है कि राज्य के कृत्यों और चूकों के कारण आदिवासी लोगों को तकलीफ होती है और यहां तक कि यदाकदा दण्ड भी भुगतना पड़ता है। साथ ही आदिवासियों के कल्याण और प्रगति के लिए सभी अंचलों के लिए एक ही खांचे में बने हूबहू एक जैसे कार्यक्रम बहुधा अपकारी हो जाते हैं जो संविधान की धारणा के अनुकूल नहीं हैं। एक ओर नई औपचारिक व्यवस्था को आदिवासियों की अपनी व्यवस्था और परम्पराओं को नजरअंदाज कर अपना वर्चस्व कायम करने देने की छूट और दूसरी ओर उसे उन लोगों की आवश्यकता के अनुसार ढालने के संवैधानिक दायित्व को न निभाने के कारण और उसके अनुरूप कार्यवाही के अभाव में, आदिवासी समाज के लिए संविधान में निहित अधिकार अवादयोग्य बने रहे हैं और वे न्यायपालिका के सूक्ष्म-विवेचन और शालीन संरक्षण से भी वंचित रह गए हैं। इसके कारण अधिकांश आदिवासी लोग एक तरह से संविधान के सुरक्षणों के दायरे से बाहर जैसे रह गए हैं। इस संदर्भ में वे स्थितियां सबसे अधिक खेदजनक हैं जहां यदाकदा स्वयं राज कुछ मामलों में सिर्फ इसलिए कि वे ऐसे लघु समाजों से संबंधित हैं जो बेजुबान हैं, पक्षपातपूर्ण भूमिका अपनाने लगता है । कहीं-कहीं तो उसे ऐसे कृत्यों में जो कानूनी नहीं कहे जा सकते हैं, समर्थन देने में हिचकिचाहट नहीं होती है और अगर इन मामलों में भी केन्द्र सरकार द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाता है और संविधान की व्यवस्था के अनुपालन में भी आवश्यक निर्देश जारी नहीं किए जाते हैं तो यह कुछ और नहीं तो, कम से कम असंगत तो है ही। संसाधनों पर नियंत्रण और जबरदस्ती विस्थापना

के सवाल तो बहुत से आदिवासी समाजों के लिए एक समाज के रूप में उनके अस्तित्व के लिए निर्णायक हैं। यह स्पष्ट है कि किसी समुदाय के अधिकारों की केवल इसलिए उपेक्षा नहीं की जा सकती है कि वह समुदाय छोटा है, उसकी आवाज़ केवल इसीलिए अनसुनी नहीं की जा सकती है क्योंकि उसका स्वर मन्द है और कोई प्रयोजन केवल इस कारण सार्वजनिक नहीं बन जाता है क्योंकि उसके पक्ष में अधिक शक्तिशाली और बहुसंख्य खड़े हो जायं। मैं आदिवासी लोगों की मन की अनुभूति, उनकी व्यथा और यंत्रणा तथा उनके भय और आशंकाओं को आप तक एतद्द्वारा जो पहुंचा रहा हूं यह मेरा दायित्व ही नहीं सौभाग्य भी है। यह समूचे राष्ट्र की अन्तरात्मा और उसके विवेक के सामने एक अपील है। कुछ सवाल जो मैंने इसमें उठाए हैं वे मात्र संवैधानिक सुरक्षणों के लाभ से औपचारिक रूप से वंचित रहने से ही संबंधित नहीं हैं वरन् वे सवाल स्वयं हमारे सभ्यतागत विशाल दायित्व के और मानव मूल्यों के भी हैं।

17. संवैधानिक सुरक्षणों का सफल क्रियान्वयन किसी भी मायने से एक महान दायित्व है। इसमें राज्य से प्रतिकूल बलों के विरुद्ध सतत चौकसी और अबाध समर्थन अपेक्षित है। सवाल यहां पर किसी प्रक्रिया के औपचारिक अनुपालन का न हो कर उसकी भावना के प्रति आस्था का है। इसके लिए केन्द्र और राज्य दोनों ही स्तरों पर उसके लिए जिम्मेदार संस्थाओं को सुदढ़ करने की और उनकी संरचना को ही बदलने की आवश्यकता है। इन संस्थाओं को चाहिए कि वे नेमी कार्यों से अपने को मुक्त रखें और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए संविधान में दिए गए सुरक्षणों को व्यापकतर परिप्रेक्ष्य समर्थन देने और आवश्यक संरक्षण सुनिश्चित करने की भूमिका अपनाएं। इस काम के लिए पूरी व्यवस्था को ही अधिक संवेदनशील बनाना जरूरी है। ऐसा लगता है कि हमारे राष्ट्रीय जीवन में ही कहीं कुछ चूक हो रही है। संविधान के संस्थापकों ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए न्यायसंगत समानता को एक राष्ट्रीय कार्य माना था। अतएव इन व्यवस्थाओं का अनुपालन उसी भावना के अनुसार होना चाहिए। देश के हरेक नागरिक को इस बड़े दायित्व में सहभागी होना चाहिए। राज्य के लिए यह जरूरी है कि वह ऐसे कदम उठाए जिससे सामान्य जन की अपनी आन्तरिक शक्ति बढ़े और वे उसके लिए संगठित हो सकें जिससे कि जिन सवालों से वे जूझ रहे हैं उन्हें वे स्वयं समझ सकें और नई चुनौतियों का स्वयं सामना कर सकें। इस संदर्भ में यह विशेष रूप से जरूरी है कि आदिवासी समाज को उन सभी संसाधनों पर जो युगों से उनकी जीविका के आधार रहे हैं, पूरा अधिकार और नियंत्रण पुनर्स्थापित किया जाये और लोकतंत्र की सच्ची भावना के अनुरूप इन छोटे-छोटे समाजों को अपनी जानी-मानी आमने-सामने वाली व्यवस्था में स्वशासन का अधिकार मिले। इस मामले में राष्ट्रीय विकास परिषद के स्तर पर सतत् रूप से पहल की जरूरत है जिससे हमारे देश की आधुनिक व्यवस्था सही अर्थों में समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक समाज के सुगढ़ ढांचे में ढल सके और उसमें आज के अधिकारहीन शोषित जन को भी हमारे महान देश के सामान्य नागरिक की गरिमा के अनुरूप सम्मान और प्रतिष्ठामय स्थान मिल सके।

भवदीय,

ब्रह्मदेव शर्मा

(ब्रह्मदेव शर्मा)

विषय सूची

डॉ० ब्रह्मदेव शर्मा, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त की ओर से भारत के राष्ट्रपति को पत्र (i)--(v)

भाग I (सामान्य मूल्यांकन)

खण्ड	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	पृष्ठभूमि	1
2.	अशक्तता का अवसान	5
3.	प्रगति	21
4.	कल्याण और प्रगति के लिए एक व्यापकतर ढांचा	49
5.	आगे का कार्य	62
6.	जन सामान्य और उसकी संस्थाएं	80
	सिफारिशों का सार	85
	अनुलग्नक (छह)	96

भाग II

अध्याय	शीर्षक	
1.	अस्पृश्यता	1
2.	अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचार	7
3.	भूमि, कृषि तथा आवास	31
4.	अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का शैक्षिक विकास	56
5.	अनुसूचित जातियों का आर्थिक विकास	78
6.	आदिवासी विकास	109
7.	अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए निर्धनता निवारण कार्यक्रम	168
8.	अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का सेवाओं में प्रतिनिधित्व	201
9.	अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का संसद तथा राज्य विधान-मण्डलों में प्रतिनिधित्व	242
10.	गैर-सरकारी संगठन	245
11.	अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की सूचियां	253
12.	आंग्ल-भारतीय	265

भाग I

सामान्य मूल्यांकन

1
पृष्ठभूमि

हमारे संविधान में एक ऐसी समतावादी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने की कल्पना की गई है जिसमें धर्म, मूलवंश, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर किसी तरह के भेदभाव के बिना सभी वर्गों के लिए न्यायसम स्थान हो। समाज के कमजोर वर्गों के प्रति न्यायसमता की भावना ही हमारी संवैधानिक आयोजना की मूल प्रेरणा है और उसी से वह ओतप्रोत है। संविधान के निर्माताओं को हमारी नई और पुरानी दोनों ही प्रकार की सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक संस्थाओं और राजनीतिक संगठनों में व्याप्त उन अन्यायी ताकतों का जो कमजोर वर्गों के संदर्भ में विशेष रूप से चिन्तनीय हैं, पूरा-पूरा अहसास था। इसलिए उन्होंने इन वर्गों के लिए संविधान में उपयुक्त सुरक्षण की व्यवस्था आवश्यक मानी थी। इन वर्गों में भी अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों को विशेष स्थान दिया गया जिनकी संख्या 1981 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या की क्रमश: 15.47 और 7.85 प्रतिशत हैं (अनुलग्नक 1)। इन सुरक्षणों के क्रियान्वयन की जांच करने के लिए भी संविधान में व्यवस्था की गई है जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए एक विशेष पदाधिकारी (जिसका सामान्य पदनाम आयुक्त है) की नियुक्ति करने और जांच के आधार पर एक प्रतिवेदन तैयार कर राष्ट्रपति को प्रस्तुत करने की व्यवस्था है।

1.2 इन सुरक्षणों के कार्यरूप के मूल्यांकन में स्वयं उन सुरक्षणों को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करना, उनके क्रियान्वयन के लिए व्यापक सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के सिंहावलोकन से प्रारंभ करना उचित होगा। संविधान में प्रदत्त अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण (जिसमें संरक्षण एक पूर्व-शर्त के रूप में अनिवार्य तौर पर शामिल होना चाहिए) और प्रगति के लिए संवैधानिक आयोजना के जायजों से जो इस रिपोर्ट में दिया जा रहा है, यह साफ है कि यह आयोजना व्यापक है, फिर भी उसमें कुछ बातों का अभाव है। परन्तु भावना की स्पष्टता से वे कमियां सीमा के भीतर हैं जिनका परिशोधन किया जा सकता है। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए संवैधानिक सुरक्षणों का एक निर्णायक पहलू यह है कि संविधान की आधारभूत समतावादी संरचना में उनका स्थान पूरक तत्व का है। अत: यदि क्रियान्वयन के दौरान उक्त आधारभूत संरचना में कोई कमजोरी आती है या उससे कोई थोड़ा भी हट कर काम होता है तो उससे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण और प्रगति की पूरी व्यवस्था पर ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इससे ये व्यवस्था में अन्तर्निहित प्रतिकूल प्रभावों, अन्य कमजोर वर्गों के सदस्य के रूप में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लोगों के साथ सामान्य नियति और फिर इनके अलावा स्वयं उनकी प्रारंभिक पारंपरिक विरासत की बाधाओं का एक साथ शमन के लिए नाकाफी हैं। इस परिस्थिति में उनकी स्थिति उस व्यक्ति के समान हो जाएगी जो नीचे की ओर चलने वाली सीढ़ी (एस्केलेटर) पर ऊपर चढ़ने का प्रयत्न करता है परन्तु उसे इस विचार से कि वह कहीं नीचे न चला जाए और अपनी स्थिति को बनाए रखने के लिए भी अधिकाधिक प्रयास करना पड़ता है।

1.3 अनुसूचित जातियों की स्थिति अनुसूचित जनजातियों की स्थिति से आधारभूत गुणात्मक रूप से भिन्न होने के कारण उनके लिए संवैधानिक संरक्षणों का स्वरूप भी कुछ भिन्न है। अनुसूचित जातियों के लोगों का उत्पादन के साधनों पर कोई अधिकार न होने और इसके अलावा उन्हें कठिन और कुशल काम के उचित मूल्य से भी वंचित रखा गया और व्यवस्था के द्वारा उन पर कार्यों को करने की बाध्यता निर्बाध रूप से लागू की गई और प्रच्छन्न रूप में केवल प्रयोग की संभावना से वे सदियों से देश की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था में सबसे निचले स्तर पर रहने के लिए मजबूर रहे हैं। परन्तु जनजातियों के लोग भौगोलिक और परम्परागत सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था दोनों ही दृष्टियों से अपना स्थान सीमान्त पर अवस्थित करते हैं। जनजातियां अपने विपुल संसाधन वाले अंचलों में तथाकथित आर्थिक विकास के भिन्न चरण में अपना जीवन-यापन कर रहे हैं। तदनुसार अनुसूचित जातियों के लिए सुरक्षण के दो प्रमुख पहलू हैं--(1) कुत्सित परम्पराजन्य बंधनों से मुक्ति और (2) उनके हित में सकारात्मक विभेद की नीति अपना कर राष्ट्रीय जीवन में समुचित सम्मानजनक स्थान पाने के लिए समर्थ होना। दूसरी ओर अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के बारे में सुरक्षण के मुख्य पहलू हैं--(1) परिवर्तन और विकास की प्रक्रिया में आदिवासी लोगों का अपने संसाधनों पर अधिकारों का हनन न हो और (2) जहां आदिवासी समाज आधुनिक ज्ञान के बढ़ते आयाम का पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए अधिकाधिक समर्थ होते जायें वहीं दूसरी ओर वे अपनी परंपरा के दुर्लभ गुणों को खो न बैठें। इस प्रकार संविधान में संरक्षण और सकारात्मक विभेद के लिए विशिष्ट

व्यवस्था करने के अलावा उसे अत्यन्त नमनीय बनाया गया है।

1.4 उपर्युक्त सुरक्षणों का एक महत्वपूर्ण लक्षण उनका अस्थायी स्वरूप है। यह अस्थायीपन स्वतंत्रता की पूर्वबेला में महान अपेक्षाओं-आशाओं के उदात्त भावनामय परिवेश का ही एक अनन्य अंग था। यह भावना संविधान में पूरी तरह से व्याप्त है। सबसे पहले राज्य को कई निर्णायक कार्यों को एक निश्चित समय के अन्दर सम्पन्न करने के लिए दायित्व दिया गया। संविधान के लागू होने के साथ अस्पृश्यता की मान्यता और बंधुआ मजदूरी तथा दासता के सभी रूप एक साथ अमान्य उद्घोषित हो गए। सामाजिक और आर्थिक न्याय की मूल आधार शिक्षा को सार्वभौम करने के लिए दस वर्ष की सीमा निश्चित की गई। आर्थिक न्याय की अहमियत के संदर्भ में नियोजित आर्थिक विकास को राष्ट्रीय नीति के रूप में स्वीकार किया गया था जिससे महत्वपूर्ण मुद्दों पर अनावश्यक अवरोध की गुंजाइश न रहे। सामुदायिक विकास आंदोलन के अन्तर्गत पूरे देश में प्रत्येक सामुदायिक विकास खंड के लोगों के लिए आत्म-निर्भर आर्थिक विकास की स्थिति के निर्माण के लिए केवल 6 वर्ष की अवधि रखी गई। इस सामान्य ढांचे में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की स्थिति के संदर्भ में आवश्यक संशोधन के बतौर संवैधानिक सुरक्षण की व्यवस्था की गई है। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अवसरों के लिए सकारात्मक विभेद के लिए कोई समय सीमा नहीं रखी गई जिससे वह आवश्यकता के अनुसार जारी रखी जा सके। परन्तु इस धारणा के आधार पर शुरू की कमी को पूरा करने और विकास के रास्ते पर शेष समाज के साथ समानता के आधार पर आगे बढ़ने के लिए सक्षम बनने के लिए 10 वर्ष का आयाम काफी है। राजनीतिक आरक्षण प्रारम्भ में केवल 10 वर्ष के लिए रखे गए।

कल्याण और विकास

1.5 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के व्यक्तियों के कल्याण और विकास की समीक्षा में हम विकास के परम्परागत ढांचे और इसके मूल्यांकन के लिए सामान्यतः अपनाये जाने वाले सूचकों के आधार का ही सहारा ले सकते हैं। किसी समाज के कल्याण की स्थिति उस समाज की सामाजिक-आर्थिक संरचना पर और उसके साथ ही जीवन के विभिन्न क्षेत्रों और उसके सदस्यों के शेष समाज के साथ व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर सम्बन्धों के स्वरूप पर निर्भर करती है। आधुनिक राज्य में ये सम्बन्ध देश में उस कानूनी ढांचे के अन्तर्गत कायम होते हैं जिसके लिए राज्य का समर्थन अपेक्षित है। इस ढांचे के अन्तर्गत समुचित व्यवस्था की स्थिति की आधार-शिला पर ही जन सामान्य के कल्याण के लिए आवश्यक अन्य तत्वों का भवन बनाया जा सकता है। इस पहलू पर बाद में विस्तारपूर्वक चर्चा की जाएगी।

1.6 जहां तक विकास का सम्बन्ध है यह कहना एक साधारण कथन ही होगा कि उसका मुख्य आधार लोगों की क्षमता का समुचित विकास और राष्ट्र के प्राकृतिक संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग ही है जिसके लिए हमें आधुनिक विज्ञान और तकनीक का मूल्यवान समर्थन मिल सकता है। तथापि यह याद रखना जरूरी है कि औपनिवेशिक पूंजीवाद के हाथ में इस नई तकनीकी शक्ति का उपयोग दो शताब्दियों के विदेशी राज के दौरान हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को जानबूझ कर कमजोर करने के लिये किया गया था। उन ताकतों ने हमारे देश के कुशल कारीगरों और औद्योगिक मजदूरों के एक बड़े हिस्से को विशेष रूप से उनके जीवन-निर्वाह के साधनों से ही महरूम कर दिया था और इन लोगों में अधिकांश नहीं तो बहुत से लोग अनुसूचित जातियों के थे। उनमें से अधिकांश को भूमिहीन मजदूरों की श्रेणी में शामिल हो जाने के लिए बाध्य होना पड़ा था। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान बहुत पहले ही यह महसूस किया जा रहा था कि यह प्रक्रिया बन्द होनी चाहिए। खादी उस नई व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह की प्रतीक बनी। उस समय यह कल्पना भी नहीं की जा सकती थी कि उस उलट प्रक्रिया को स्वतंत्रता के बाद भी जारी रहने दिया जा सकेगा। इसीलिए हमारे संविधान की संरचना में ही असुरक्षित जन के इस वर्ग के संरक्षण के लिए उपयुक्त उपबन्ध किए गए हैं।

1.7 तथापि उपरोक्त तथ्य को विज्ञान और तकनीक में उन्नति के सम्यक उपयोग के आधार पर राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन और उसके आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को धीमा करने के लिए बायस नहीं माना जा सकता है। अतः स्वतंत्रता के बाद राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के आधुनिकीकरण के लिए नियोजित आर्थिक विकास का महत्वाकांक्षी कार्यक्रम लिया गया। तथापि यहां पर यह कहना जरूरी है कि नए संदर्भ में विकास की पूर्ण रण-नीति में "समता प्रथम" की बजाय "विकास प्रथम" की अवधारणा का स्पष्ट नहीं तो परोक्ष रूप से प्रचलन हो गया। इसके आधार में यह भ्रांतिपूर्ण धारणा थी कि समय के साथ विकास के लाभ धीरे-धीरे रिस कर समाज के सभी वर्गों तक पहुंच जायेंगे। इस मूलभूत अवधारणा की अनुपयुक्तता साठ के दशक के आरम्भिक सालों में ही स्पष्ट होने लगी थी जब यह नजर आने लगा कि विकास का अर्थ यह नहीं कि सभी जगह गरीबों को उसका लाभ मिल ही जाए। परन्तु तब भी इसकी अहमियत और उस रणनीति में केवल कुछ सुधार के बतौर समाज के कमजोर वर्गों के लिए विशेष कार्यक्रम चालू किए गए।

1.8 जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के व्यक्तियों के लिए उनकी स्थिति के अनुसार विशेष कार्यक्रम बहुत पहले से ही लिए जाते रहे हैं। तथापि आज जब हम पीछे देखते हैं

तो स्पष्ट है कि ये कार्यक्रम बहुत कुछ नैमित्तिक मात्र थे और यह स्थिति चौथी योजना के अन्त तक बनी रही। इसके अलावा पुराने और नए, सामान्य और विशेष सभी सुधारों का दायरा संकुचित बना रहा क्योंकि उनका उद्देश्य अपर्याप्त रिसन प्रभाव की कमी को दूर करने और उसे तेज करने या अनुपूर्ति करने के लिए ही था। पारंपरिक कारीगरों और व्यवसायों की स्थिति के विषय में चिंता व्यक्त किए जाने के बावजूद विकास के उस अंधेरे पक्ष की ओर जो उसके उलट प्रभाव के रूप में इन लोगों को आहत करता है, विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। वास्तव में इस उलट-प्रभाव की वास्तविक प्रकृति और उसके पूरे निहितार्थों पर गंभीरता से विचार भी अभी शेष है। वैसे इन उलट-प्रभावों की मार सभी कमजोर वर्गों को सहनी पड़ रही है परन्तु अनुसूचित जातियों के सदस्यों पर उनकी दुहरी मार है—एक तो उन्हें व्यापक अर्थव्यवस्था में उनके कौशलों के लिए स्थान कम होते जाने की स्थिति में बढ़ते अलगाव का सामना करना पड़ रहा है और दूसरे बदलती अर्थव्यवयथा में उनके कौशलों का भारी अवमूल्यन भी हो रहा है। अनुसूचित जनजातियों के लिए ये घातक हैं क्योंकि उन्हें विकास के सभी संभव बुरे प्रभावों का मुकाबला करना पड़ रहा है जिसमें सबसे भयंकर है उनके अपने परम्परागत इलाकों से उनकी बेदखली और विस्थापन। फलतः इन उलट-प्रभावों का जायजा लिए बिना यदि विकास के सामान्य सूचकों और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों को भी जो विशेष लाभ मिले हों उनके आधार पर भी कल्याण और विकास का आकलन अपूर्ण ही रहेगा। इसलिए कल्याण और विकास के मूल्यांकन और इन लोगों को दिए गए संवैधानिक संरक्षणों के दायरे की समीक्षा में पूर्णात्मक परिवर्तन की जरूरत है। हालांकि इस कार्य के लिए मेरे पास उपलब्ध साधन अत्यन्त सीमित हैं, फिर भी इस रिपोर्ट में उसी दिशा में कुछ करने का प्रयास किया गया है।

1.9 हमारे संविधान की औपचारिक संरचना के अन्तर्गत वे मूलभूत मान्यताएं जिनके आधार पर कमजोर वर्गों के सदस्यों के लिए समाज में सम्मानजनक स्थान मिलने की अपेक्षा की गई है संक्षेप में निम्नानुसार कही जा सकती है —

(1) विभिन्न वर्गों पर अनेकानेक संदर्भों में पुराने चलन के आधार पर थोपी गई बहुविध असमर्थताओं की समाप्ति।

(2) सभी प्रकार के शोषण विशेष रूप से निर्द्वन्द्व खुले शोषण का समाप्त किया जाना।

(3) सामन्तवादी प्रथा के सभी अवशेषों की समाप्ति और भूमि को जीवन निर्वाह के साधन रूप मानना जिस पर जोतने वाले का किसी भी तरह के बिचौलियों के बिना सीधा-सीधा न्यायसंगत अधिकार हो।

(4) संपत्ति और उत्पादन के साधनों के स्वामित्व का धीरे-धीरे अधिकाधिक प्रसार और स्वामित्व के अन्तर को कम करना जिससे अन्ततः वह अंतर हमारे राष्ट्रीय उद्देश्यों के अनुरूप उपयुक्त सीमा में ही रहे।

(5) कृषि, ग्रामीण तथा घरेलू उद्योगों और परम्परागत सेवाओं सहित हमारी अर्थव्यवस्था के परम्परागत खण्ड में लगे व्यक्तियों के लिए संरक्षण और न्यायसंगत व्यवस्था की स्थापना।

(6) राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के आधुनिक खण्ड में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए प्रमुख स्थान सुनिश्चित करना।

(7) आधुनिक खण्ड में निजी क्षेत्र के लिए समुचित स्थान का निर्धारण इस तरह करना जिससे उसका तेवर सौम्य रहे और उसकी कार्य-विधि दीर्घ राष्ट्रीय लक्ष्यों से भिन्न न रहे यह सुनिश्चित करने के लिए राज्य का दिशानिर्देश भी स्वीकार्य हो।

(8) बच्चों के पालन-पोषण और उनकी शिक्षा के लिए आवश्यक व्यवस्था करके प्रत्येक नागरिक की क्षमता का पूर्ण विकास सुनिश्चित करना, और

(9) कमजोर वर्गों के सदस्यों के लिए सकारात्मक विभेद की नीति के अपवाद को छोड़ कर सभी नागरिकों के लिए जीवन के सभी क्षेत्रों में समान अवसरों को सुनिश्चित करना।

1.10 उपर्युक्त व्यवस्था में यह अपेक्षा की जा सकती थी कि असमानता के पुराने आधार धीरे-धीरे मिट जाएंगे और नए अवसर की प्राप्ति के लिए वस्तुपरक आधार कायम होते जायेंगे जिनका उन तत्वों से कोई सम्बन्ध नहीं होगा जो सामान्यतः किसी व्यक्ति के आधारभूत गुणों और वैयक्तिक कार्यों की अपेक्षा उसके जन्म के संयोग से जुड़े रहते हैं।

1.11 राष्ट्रीय उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए इस व्यवस्था में अशक्तताओं को मिटाने और शोषण की समाप्ति के लिए अनेक कार्य किए गए। इसके साथ ही बिचौलियों की समाप्ति, अधिकतम भूमिसीमा का निर्धारण, भू-धारी अधिकार देने और उपलब्ध भूमि को कमजोर वर्गों के सदस्यों को बांटने इत्यादि कई कदम सामन्तवादी व्यवस्था के अवशेषों को मिटाने के उद्देश्य से उठाए गए। "जोतने वाले को भूमि" का सिद्धान्त स्वीकार होने से यह आशा बनी थी कि भूमि पर अन्यायपूर्ण असमान अधिकार और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर सामंतवादी पकड समाप्त हो जाएगी। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक परिवर्तन के संदर्भ में परम्परागत शिल्प और कलाओं तथा ग्रामीण और घरेलू उद्योगों को विशेष रूप से संरक्षण प्रदान किया जाना था। प्रारम्भिक शिक्षा को

सार्वभौम बनाने और सभी स्तरों पर समान अवसरों के लिए बनाए गए उपबन्धों से यह उम्मीद थी कि उससे समतावादी समाज के लिए एक दृढ़ आधार बनेगा क्योंकि शिक्षा ही आधुनिक ज्ञान का और उसी से उत्पन्न नई शक्ति का प्रतीक है। राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में प्रवेश के लिए सकारात्मक विभेद की नीति के अपवाद को छोड़ कर निष्पक्षता के आधार पर अवसर सुलभ हो सकें यह सुनिश्चित कर समाज के सभी वर्गों के लिए न्यायसंगत समता का व्यवहार सुनिश्चित किया गया था। यद्यपि देखने में इसका दायरा सीमित था परन्तु एक ऐसी अर्थ व्यवस्था में किया गया जिसमें शासकीय क्षेत्र प्रधान और निजी क्षेत्र गौण रखा गया था। इसके दीर्घ-कालीन निहितार्थ महत्वपूर्ण ही नहीं निर्णायक भी थे॥

2

अशक्तता का अवसान

पिछले सात वर्षों की समीक्षा से यह स्पष्ट है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण में अनेक उपलब्धियां हुई हैं परन्तु उसमें कुछ गंभीर खामियां भी रही हैं। अस्पृश्यता की प्रथा शहरी क्षेत्रों में प्रत्यक्ष रूप से धीरे-धीरे कम हुई है और महानगरों में तो लगभग समाप्त हो गई है। ग्रामीण क्षेत्रों में बदलाव की गति अपेक्षाकृत धीमी रही है। फिर भी ऐसे कई विस्तृत अंचल तथा अनगिनत कोने हैं जहां कानूनी प्रतिबंध के बावजूद यह प्रथा पूर्ववत चली आ रही है। अनुसूचित जातियों की सामाजिक समस्याओं की प्रकृति तथा उनके निराकरण के बारे में सामान्य वातावरण में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है। अब से कुछ समय पहले अस्पृश्यता के विरुद्ध हमारे संवेदनशील नेतृत्व में ओजपूर्ण प्रतिक्रिया थी और अनुसूचित जातियों के उत्थान के कार्य की लोग बिना कहे सराहना करने लगते थे। इसके प्रति समर्पित लोगों की सहज ही छवि बन जाती थी और नेतृत्व के पदक्रम में वे ऊपर उठते जाते थे। यह खेद की बात है कि उस महान युग की इस भावना की स्मृतियां भी अब धुंधली हो गई हैं। इसके बजाय इस महत्वपूर्ण सामाजिक समस्या के लिए भी राज्य की व्यवस्था पर दयनीय निर्भरता हो गई है। इस मामले में प्रशासन की प्रतिक्रिया उसकी अपनी प्रकृति के ही अनुरूप औपचारिक समाधानों के अलावा कुछ और हो ही नहीं सकती। प्रशासन की सहायक भूमिका जो अपने में महत्वपूर्ण है अब केन्द्रीय हो गई है और समाज के नेतृत्व की पहल का स्थान गौण होता गया है। नई स्थिति का एक उत्साहजनक पहलू भी है। अब अनुसूचित जातियों के सदस्य स्वयं अपने मूलभूत अधिकारों की स्थापना के लिए अधिकाधिक आगे आ रहे हैं और राष्ट्र के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन में समानता के आधार पर सम्मानजनक स्थान पाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

2.2 उपरोक्त प्रक्रियाओं के फलस्वरूप आज की स्थिति काफी जटिल तथा उलझी हुई है। पीने के पानी जैसी सामान्य सुविधा से वंचित होने की समस्या का एक ठेठ औपचारिक समाधान यह होता है कि अनुसूचित जाति की बस्ती में ही पीने के पानी का कोई स्रोत उपलब्ध करा दिया जाए जो जाहिर है कि उन लोगों के लिए भी सुविधाजनक होगा परन्तु वास्तव में वह जातिगत भेदभाव को सामान्य बना देता है। अनुसूचित जातियों के लिए अलग बसाहतों की कायमी गांवों में यथावत जारी है। शहरी क्षेत्रों में भी स्थिति बहुत अलग नहीं है। शहरों में केवल उन वर्गों को छोड़ कर जिनमें रहाइश के मामले में उनकी आर्थिक स्थिति अहम है, जाति की भूमिका का कोई महत्व नहीं रह गया है। असंगठित क्षेत्र में विशेषकर सबसे गरीब तबकों में लोग सामान्यत: जातीय आधार पर इकट्ठे हो कर रहते हैं। गंदी बस्तियों में भी अनुसूचित जातियों के सदस्य बहुधा सबसे खराब हिस्से में रहते हैं जो एक तरह से गंदी में गंदी या घोर गंदी बस्ती कही जा सकती हैं। यह सामाजिक भेद-भाव इतना व्यापक है कि यदि मिली-जुली बस्तियों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को उस बस्ती के सीमान्त पर जगह मिल जाए तो यह स्वयंसिद्ध जैसा मान लिया जाता है कि उन्हें कोई उज्र ही नहीं होगा वरन् वे उसका स्वागत करेंगे। मैंने हाल ही (अगस्त 1988) में मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में सिंगरौली के आस पास के क्षेत्र, जो भारत के शक्ति केन्द्र रूप में उभर रहा है, के अपने दौरे में यह पाया कि जहां एक ओर परियोजना के कर्मचारियों के लिए सभी मनचाही सुविधाओं से लैस बड़ी-बड़ी आधुनिक कालोनियां बनाई जा रही हैं, वहीं दूसरी ओर परियोजना से प्रभावित लोगों की कालोनियों की स्थिति दयनीय है और उन कालोनियों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों की स्थिति नरक जैसी घृणित है। उन्हें लगभग सभी दर सबसे खराब जगह दी गई है। वे आम तौर पर निचले क्षेत्रों में जलाशय से सटे या नालों के किनारे या ऊबड़-खाबड़ बदबू और गंदगी से भरी जगह पर रहते हैं जहां हर साल बरसात के शुरू होते ही बाढ़ से जूझना पड़ता है। आदिवासी लोग तो इससे भी अधिक दयनीय स्थिति में बसे हैं जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। इन लोगों को इस स्थिति को समझाने के लिए यह कह कर संतोष कर लिया जाता है कि वे लोग तो एक साथ अलग रहना अधिक पसंद करते हैं।

2.3 अनुसूचित जातियों के सदस्यों के द्वारा अपने अधिकारों, जो विशेष रूप से उनके अस्तित्व में ही निहित हैं, का अपमान सहन न किए जाने के दावे का विरोध, बहुत से क्षेत्रों में अन्य जातियों के लोगों द्वारा भूमि पर अपने स्वामित्व तथा आर्थिक संस्थानों में अपने वर्चस्व में अन्तर्निहित अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुए, जिन्हें कानून के अन्तर्गत औपचारिक रूप से चुनौती नहीं दी जा सकती है, किया जा रहा है। कभी-कभी ये औपचारिक दावे अत्यन्त कुत्सित तथा अमानवीय रूप ले लेते हैं। उदाहरण के लिए उन लोगों को जिनके पास गांव में अपनी कहने को एक इंच भूमि भी न हो वहां रहने के अधिकार और यहां तक कि नित्य कर्म के अधिकार से भी वंचित कर दिया जाता है। यह विरोध उस समय और भी प्रचंड हो जाता है जब आर्थिक हित टकराने लगते हैं जैसा कि देश के कई भागों में न्यूनतम मजदूरी को ले कर हो

रहा है। जब प्रभुतासंपन्न आर्थिक हितों तथा सामाजिक वर्गों के साथ प्रशासन का गठबन्धन हो जाता है तो यह स्थिति बद से बदतर हो जाती है।

2.4 राज्यों द्वारा नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन अपराधों और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के विरुद्ध अत्याचारों, दोनों के संबंध में प्रस्तुत किए गए सांख्यिकीय आंकड़ों से ही स्थिति का सही आकलन नहीं किया जा सकता है। कुछ राज्यों के आंकड़ों में साल दर साल इतना भारी उतार-चढ़ाव है जिनसे प्रगति-निगति की दिशा का आभास नहीं मिल पाता है। केवल **महाराष्ट्र** में और वह भी अनुसूचित जातियों के संबंध में ही दर्ज अपराधों की संख्या में निरंतर कमी हुई है। परन्तु समय-समय पर होने वाली घटनायें और विस्फोट में जिनमें कभी-कभी अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लोगों पर घोर अनाचार होता रहता है हमारी सामाजिक वास्तविकता को बताते हैं। जैसे-जैसे जाति के आधार पर होने वाले अत्याचारों से कलंकित हमारे सामाजिक जीवन का कुत्सित पहलू **राजस्थान** जैसे राज्यों में उजागर हो रहा है, आंकड़ों के आधार पर निष्कर्षों की अविश्वसनीयता और वास्तविक स्थिति को बताने की उनकी असमर्थता नितांत स्पष्ट होती जा रही है। अध्याय 2 में विभिन्न राज्यों में प्रति लाख हरिजन-आदिवासियों पर हुए अपराधों की दर के आधार पर क्रम निर्धारण संकेतक है। उसमें **मध्य प्रदेश** दोनों सूचियों में सबसे ऊपर है। **राजस्थान, उत्तरप्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र** और **गुजरात** का स्थान कुछ आगे-पीछे होते हुए भी सबसे ऊपर के कोष्ठक में है। **केरल** अनुसूचित जाति की सूची में बीच में है, परन्तु अनुसूचित जनजातियों के विरुद्ध अत्याचारों में उसका दूसरा स्थान है। वहां आदिवासी, जो कुल जनसंख्या का केवल 1 प्रतिशत हैं, निरक्षरता और भूमि के अवैध हस्तान्तरण के गहराते जाने से रक्षाहीन स्थिति में हैं। **पश्चिम बंगाल** का स्थान अनुसूचित जातियों की सूची में अन्तिम है परन्तु अनुसूचित जनजातियों की सूची में वह बीच से भी काफी ऊपर है जो पुनः आदिवासियों की उन क्षेत्रों में असुरक्षित स्थिति का द्योतक है जहां उनकी संख्या बहुत कम है।

2.5 जहां भी उन मानवीय समस्याओं, जिनका उत्स नये पुराने और भांति-भांति के रंग से कुत्सित स्वार्थ में हो, के समाधान के लिये औपचारिक प्राविधि ही अपनाई जाती है वहां ऊपर बताई गई स्थिति का होना अवश्यम्भावी है। यह स्थिति सरकारी काम-काज में उस प्रवृत्ति का भी परिणाम है जिसके रहते संस्था की स्थापना उसके उद्देश्यों की पूर्ति का पर्याय बन जाता है और फिर कागजी रिपोर्टों के आधार पर सफलता को ले कर आनन्द और सुखानुबोध छा जाता है। अध्याय 2 की समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि कई मामलों में विशेष पुलिस चौकियों की स्थापना का विपरीत प्रभाव पड़ा है क्योंकि उस स्थिति में साधारण पुलिस चौकियां अपनी जिम्मेदारी टालने का प्रयास करती हैं जिसके फलस्वरूप लोगों को न्याय नहीं मिलता है और उसमें असाधारण विलम्ब भी होता है। विशेष न्यायालयों की स्थापना से भी कई जगह ऐसी ही स्थिति बन गई है। राज्यों ने पहले से ही ऐसे अंचलों को जहां तनाव बढ़ रहा हो जानने के लिये कुछ भी नहीं किया है। इसलिए जब स्थिति बिगड़ जाती है, प्रशासन तभी कुछ कार्यवाही करना आरम्भ करता है। साधारण तौर पर यह कार्यवाही आग लगने पर उसे बुझाने जैसी होती है जिसका कोई दीर्घकालिक लाभ नहीं होता है। सच तो यह है कि वर्तमान व्यवस्था के संतुलन बिगड़ने की स्थिति में शक्तिसम्पन्न कुलीन वर्ग के लिए अननुमेय परिणामों के भय से आधारभूत कारणों को दूर करने की ओर विशेष ध्यान न देकर कार्यवाही उनके बाहरी लक्षणों के निराकरण तक ही सीमित रह जाती है। उदाहरण के लिए, **बिहार** में जहांनाबाद जिले के एक छोटे से क्षेत्र में प्रत्येक घटना के बाद भारी खलबली और जोशीली बहादुरी की बातों के बावजूद एक के बाद एक नरसंहार की घटनाएं बिना रोक टोक के यथावत होती रही हैं। यह दुर्भाग्य की बात है कि इस क्षेत्र में एक के बाद दूसरे गांव में सामूहिक हत्याओं के बावजूद वहीं के आधारभूत शक्ति संबंध में लेश मात्र भी परिवर्तन नहीं हुआ है (अध्याय 2)।

2.6 इस समय **बिहार** अथवा **आंध्र प्रदेश** में जैसा जो कुछ कतिपय लघु अंचलों में हो रहा है वह वर्षों से चली आ रही बहुविध आर्थिक तथा सामाजिक प्रक्रियाओं और देश में असमान वृद्धि के कारण इन क्षेत्रों के पिछड़ेपन का संचित परिणाम है। इन घटनाओं से एक मूल प्रश्न यह भी सामने आ रहा है कि ऐसी व्यवस्था जो राष्ट्रीय जीवन में भारी असमानता को यदि बढ़ावा नहीं तो कम से कम पनपने तो दे ही रही है, क्या किसी एक क्षेत्र में अलग से न्यायपूर्ण समता के लिए सचमुच आवश्यक समर्थन दे सकती है। यह प्रश्न उस संदर्भ में विशेष रूप से संगत हो जाता है जहां वे लोग जो उपयुक्त प्रगतिशील उपायों के संबंध में नीति निर्धारण तथा उनके कार्यान्वियन के जिम्मेदार हैं, स्वयं ही असमान विकास के लाभों में भागीदार हों। न्यायपूर्ण समता के उद्देश्य से बनाए जाने वाले अनेक उग्र सुधारवादी कानूनों और घोषित प्रशासनिक कार्यवाही के पीछे नैतिक बल न होने का यही मूल कारण है। आज हालत यह है कि अनेक अतिवादी संगठन तक बुनियादी रूप से स्वयं राज्य के द्वारा बनाए गए कानूनों को लागू करने और कल्याण कार्यक्रमों के सही क्रियान्वयन की मांग ही जोरशोर से रखते हैं। हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में जैसे-जैसे ध्रुवीकरण तेजी से बढ़ता जाएगा यह विरोधाभासी स्थिति केवल उन क्षेत्रों में ही नहीं गहराएगी जहां असंतोष अभी मौजूद है वरन वह अन्य अंचलों में भी फैलता जाएगा जिससे वहां आज की सतही शांति समाप्त हो जाएगी और असंतोष तथा टकराव की स्थिति पैदा हो जाएगी। **जहां एक ओर प्रत्यक्ष प्रक्रियाओं का प्रतिरोध करने के लिए तत्काल उपाय किए जाने चाहिए उसके साथ ही यह जरूरी होगा कि राष्ट्रीय स्तर पर यह विचार हो कि क्या राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास की ऐसी कमजोर नींव पर निरंतर रखा जा सकता है जो उसके सामाजिक और आर्थिक तानेबाने में एक छोटे से वर्ग को लाभ पहुंचाने परन्तु ऊपर से विकास के नाम पर भारी तनाव पैदा होने के कारण अब और भी तेजी से कमजोर और भंगुर होती होती जा रही है।**

2.7 अंततः कमजोर वर्ग के लोगों के लिए समता तथा न्याय दिलाने के लिये नियोग्यताओं को खत्म करने, सामाजिक

व्यवस्था के दमन को समाप्त करने और विकास की प्रक्रिया में उत्पन्न प्रतिकूल बलों के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करने के लिए राज्य के सभी उपायों का प्रभावी होना देश अथवा संबंधित अंचल में प्रशासन और व्यवस्था की स्थिति पर ही निर्भर रहेगा। जहां कानून और व्यवस्था की सामान्य स्थिति खराब होती है वहां कमजोर वर्ग के लोग ही अधिकाधिक असुरक्षित होते जाते हैं। ऐसी स्थिति में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए किए जाने वाले विशेष प्रयासों की उपयोगिता सीमित ही हो सकती है और उस सीमा तक संवैधानिक सुरक्षणों का उद्देश्य भी अधूरा रह जाता है। यहां पर हमारे सामने दुविधा आ खड़ी होती है। जैसे-जैसे व्यवस्था की सामान्य स्थिति बिगड़ती जाती है अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों की असुरक्षा बढ़ती है। इस स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि उनके लिये विशेष प्रयास और भी गहन किए जायें। परन्तु जब सामान्य व्यवस्था साधारण दायित्वों को भी संतोषजनक रूप से पूरा कर सकने में असमर्थ हो तो अतिरिक्त कार्य तो इसके लिये और अधिक कठिन और उसकी सामर्थ्य से बाहर होंगे। ग्रामीण क्षेत्रों में कानून और व्यवस्था की स्थिति आम तौर पर काफी बिगड़ चुकी है और आदिवासी क्षेत्रों में प्रशासन की गुणवत्ता में भारी कमी है। इसलिए व्यवस्था को आम तौर पर ठीक स्थिति होने की मूलभूत मान्यता ही गलत हो जाती है। ऐसी स्थिति में यह जरूरी है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए संवैधानिक सुरक्षणों, उनका दायरा और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अपनाई गई पद्धतियों के संबंध में सारे मामले पर नए सिरे से विचार किया जाए। यद्यपि इस रिपोर्ट में कुछ सुझाव दिए जा रहे हैं तथापि इन मूलभूत प्रश्नों पर राष्ट्रीय बहस अनिवार्य है ताकि उन पर समुचित ध्यान केन्द्रित हो सके, हालांकि हमारे संभ्रांत वर्ग की अपनी स्थिति के औचित्य के बारे में नितान्त वाचालता के कारण आम सहमति होने के कोई खास आसार नजर नहीं आते।

2.8 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि —

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के प्रवर्तन को कड़ा करने के साथ-साथ ऐसे उपयुक्त कार्यक्रम भी लिये जाने चाहिए जिनसे यह सुनिश्चित हो सके कि आर्थिक मामले जाति और कुल के प्रभाव क्षेत्र से बचे रहें। विशेष रूप से —

(1) सरकार को उन सामाजिक कार्यकर्ताओं का समर्थन करना चाहिए जो असमानता के विरुद्ध लड़ रहे हैं और गरीबों को, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को, अपने विधिक अधिकारों को वास्तविकता में बदलने के लिए उद्वेलित कर रहे हैं।

(2) सरकार को उन 'सिविल' सेवकों की सेवाओं को विशेष रूप से मान्यता देनी चाहिए जो गरीबों का साथ देते हैं और निहित स्वार्थों के विरुद्ध उन्हें संरक्षण प्रदान करते हैं और सरकार को अच्छा काम करने वाले अधिकारी का अकस्मात स्थानान्तरण जैसे कामों से बड़ी सावधानी से पूरा परहेज बरतना चाहिए जिससे प्रशासन द्वारा ताकतवर को समर्थन दिये जाने की प्रवृति की आम धारणा मिट सके।

(3) अस्पृश्यता अथवा किसी अन्य रूप में भेदभाव और सामाजिक अन्याय के समर्थन में उठाए गए किसी कदम को विशेष रूप से समाज के विशिष्ट व्यक्तियों के वक्तव्यों को, तुरन्त चुनौती दी जानी चाहिए और कठोर विधिक कार्यवाही द्वारा कड़ा प्रतिरोध होना चाहिए।

2.9 मैं यह भी सिफारिश करता हूं कि —

राष्ट्रीय विकास परिषद्, बढ़ती हुई आर्थिक असमानता और अनियंत्रित उपभोगवाद के सामाजिक परिणामों, विशेषकर अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति के लिए उनके दूरगामी परिणामों, पर विशेष रूप से विचार करे।

2.10. अब मैं अत्याचारों के उस पहलू की ओर ध्यान दिलाना चाहूंगा जिसमें सरकारी अधिकारी अपने पद की आड़ में, कभी अकेले और कभी मिल कर सामाजिक रूप से अपनी स्थिति तथा ताकत का प्रयोग करते हुए बुरे से बुरे अपराध और अत्याचार करते हैं। कभी-कभी तो उन अत्याचारों को ऊपरी तौर पर सामान्य कर्त्तव्यों के निर्वहन का रूप दे दिया जाता है। ऐसे बिरले ही मामले होते हैं जिनमें कोई कार्यवाही हो और दोषी व्यक्ति को दण्ड मिल जाये और वह भी तभी होता है जब किसी मामले का असाधारण तौर पर प्रचार हो जाये अथवा कोई संवेदनशील, प्रभावशाली या अधिकार सम्पन्न व्यक्ति उसे जान ले और फिर उस मामले के पीछे पड़ जाये।

2.11 इस तरह के उत्पीड़न और अत्याचार के भी कई प्रकार होते हैं। कुछ मामलों में अधिकारी निजी आर्थिक लाभ के लिए अथवा सबक सिखाने के लिए अथवा केवल क्रूर सुख के लिए अपने पद का खुल्लमखुल्ला दुरुपयोग करते हैं और कानून के अंतर्गत काम करने का बहाना भी नहीं करते। कुछ अन्य मामलों में यह कुकृत्य कानून की आड़ में किए जाते हैं। उदाहरण के लिए जानबूझ कर कराई गई झूठी शिकायतों के आधार पर अथवा आधारहीन शंकाओं और छिटपुट घटनाओं को ले कर अपने आप कार्यवाही करना अथवा यथार्थ मामलों में नियमित जांच पड़ताल के दौरान। अन्त में कुछ ऐसे मामले हैं जिनमें कानून का देखने में गलत प्रयोग न हो फिर भी कानून की विधिवत प्रक्रियाओं के अनुसरण में ही लोगों को कष्ट भोगना पड़ता है। उदाहरण के लिए उस समय जब लोगों को अपनी भूमि से बेदखल करने के लिए अथवा उन्हें ऐसे काम करने से रोकने के लिए जिसे वे अपना अधिकार समझते हों, बल प्रयोग किया जाता है।

2.12 ऐसे मामलों के बारे में यह कहा जा सकता है कि वे व्यवस्था के सामान्य विकृत चालन का परिणाम हैं

और उनसे इसी रूप में निबटा जाना चाहिए। किन्तु यहीं पर वास्तविक पेंच है। समाज के बाकुपटु और शक्तिशाली वर्ग पहले से ही बड़े अधिकारियों तक पहुंच कर अथवा न्यायालय में मामला दायर कर ऐसी कार्यवाहियों से अपनी रक्षा कर सकते हैं। अतएव समाज के कमजोर वर्ग ही व्यवस्था के अत्याचारों के सामने उसे नजात पाने में समर्थ और उसके प्रहार के लिए उपयुक्त लक्ष्य बन जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप सभी प्रकार से निरन्तर उत्पीड़न होता रहता है और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य अपनी सामाजिक निर्योग्यताओं और उनकी दशा के संबंध में आम उदासीनता के कारण सबसे अधिक प्रभावित होते हैं।

2.13 अनुसूचित जातियों के संबंध में स्थिति में बहरहाल अभी-अभी कुछ बदलाव आया है। उनमें कुछ लोग प्रचार माध्यमों में से अधिक जानकारी हासिल होने, शिक्षा के प्रसार और बेहतर संगठन के आधार पर जागृत हो रहे हैं और उनमें प्रतिक्रिया भी तीव्र होती जा रही है। उनकी ओर से कुछ विधिक कार्यकर्ताओं के हस्तक्षेप भी स्वागत योग्य हैं। किन्तु अनुसूचित जनजातियों की स्थिति केवल असुरक्षित बनी ही नहीं रही है वरन जैसे-जैसे उनके क्षेत्र खुलते जा रहे हैं और वहां प्रशासन का वर्चस्व कायम होता जा रहा है, स्थिति और भी बिगड़ती जा रही है। आदिवासी लोग नई व्यवस्था के बड़ी आसानी से इसलिए शिकार बन जाते हैं क्योंकि वे स्वयं अपने को कानून के उलटी ओर पाते है और वह भी महज इसलिए कि स्वयं वे कानून संबंधित मामलों में आदिवासी समाज की दृष्टि तथा मान्यताओं से असंगत अथवा विपरीत होते हैं। सरकार ने संविधान के स्पष्ट उपबंध तथा उसके द्वारा कार्यपालिका पर डाले गए विशिष्ट दायित्व के बावजूद इस विसंगति को दूर करने के लिए अब तक पहला कदम उठाने की भी परवाह नहीं की है। यह नितांत आवश्यक है कि प्रशासन के विकृत चालन के इस पहलू और इसके परिणामस्वरूप अनुसूचित जन जातियों के सदस्यों पर होने वाले उत्पीड़न पर तत्काल ध्यान दिया जाए। यह दुर्भाग्य की बात है कि साधारण तौर पर हो क्या रहा है यह जानने का कोई तरीका नहीं है। इस संबंध में पहले कदम के रूप में कम से कम यह तो किया ही जा सकता है कि एक ऐसी प्रणाली तैयार की जाए जिससे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के संबंध में पुलिस हिरासत तथा मुकदमे से पहले न्यायिक हिरासत में पूरी सूचना नियमित रूप से इकट्ठी होती रहे।

2.14 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि --

(1) ऐसे सभी मामलों के सम्बन्ध में नियमित समीक्षा की व्यवस्था की जाए जिनमें --

(1) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के विरुद्ध सरकारी कर्मचारियों द्वारा (क) उत्पीड़न, (ख) कानूनी प्रक्रिया के दुरुपयोग और (ग) कानून भंग करने सम्बन्धी आरोप लगाए गए हों।

(2) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य किसी मामले में पुलिस हिरासत और मुकदमे से पहले न्यायिक हिरासत में हों।

जिला मजिस्ट्रेट को हर महीने इन मामलों की समीक्षा करनी चाहिए और उसकी रिपोर्ट राज्य सरकार को भेजनी चाहिए। इसी प्रकार की समीक्षा राज्य स्तर पर भी प्रशासनिक तौर से मुख्य सचिव द्वारा और राजनीतिक तौर से मंत्रिमंडल द्वारा की जानी चाहिए। इस समीक्षा की रिपोर्ट अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त को अग्रेषित की जानी चाहिए।

2.15 इस स्तर पर अब इन मामलों का विशेष रूप से उल्लेख किया जाना उचित होगा जिनमें ऐसे शासनादेशों के कार्यान्वयन और ऐसे विवादों को निपटाने के लिए जो मूलतः सिविल रूप के होते हैं, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के विरुद्ध या तो बल प्रयोग किया जाता है या शक्ति-प्रदर्शन किया जाता है। ऐसी स्थितियों में जहां कानून और व्यवस्था भंग होने की स्थिति में बल प्रयोग के बारे में पहले से अंदाज नहीं लगाया जा सकता है, किन्तु जब आधी रात को अथवा गहन वन में बल के साये में या यदि आवश्यक हो तो बल प्रयोग करके भी, अतिक्रमण को हटाने या किसी गांव को खाली कराने का निर्णय लिया जाता है तो उसे तत्काल-अनिवार्यता की संज्ञा नहीं दी जा सकती है ऐसी कार्यवाहियों को जो उन व्यक्तियों द्वारा की जाए जो समाज के इन असुरक्षित वर्गों के हितो की रक्षा के जिम्मेदार हैं, पूर्व-समीक्षा के अधीन किया जा सकता है। बल प्रयोग की इन सभी घटनाओं के बारे में की गई जांचों में उन्हें न्यायोचित ठहराने की प्रवृत्ति पाई जाती है। गरीब लोग जो संबंधित अधिकारियों तक अपनी बात पहुंचाने तक की स्थिति में नहीं होते। ऐसी झोंपड़ियों को तोड़ने और बस्तियों तक को जला देने की घटनाएं जो कहने को अनधिकृत भले ही हों, असामान्य नहीं हैं, यद्यपि उन घटनाओं को तत्परता से अस्वीकार कर दिया जाता है। हाल ही में धुले जिले (महाराष्ट्र) की एक ऐसी घटना में राज्य के प्रकोप के सामने लगभग 80 फालियों से लगभग 15,000 आदिवासियों को रातों रात भागना पड़ा था जो इतनी आकस्मिक (क्योंकि यह सब कुछ एक सप्ताह में घटित हो गया था) और आकार में इतनी विशाल थी कि स्वयं जिला प्रशासन भी दंग रह गया और राज्य का औपचारिक पक्ष यही कह कर प्रस्तुत किया गया कि "किसी तरह से बल का प्रयोग नहीं किया गया था।" हां, जाहिर है कि किसी प्रकार के बल का प्रयोग नहीं किया गया था। सशस्त्र पुलिस दल वहां केवल इसलिए उपस्थित था कि अगर कहीं .... राज्य की शक्ति का अलौकिक वलय ही काफी था। इसे देख कर यही आश्चर्य होता है कि क्या ऐसी प्रशंसा किसी प्रजातांत्रिक राज्य के लिए गर्व की बात हो सकती है।

2.16 मैंने सुना है कि अब कर्नाटक के वन विभाग ने बी० आर० पहाड़ियों के विस्तृत घने वनों में छितरे फालियों में बसने वाली एक आदिम जन जाति सोलिगा के सदस्यों को जहां वे अनादि काल से बसे हुए थे, निकालने का निर्णय लिया तो उनकी झोंपड़ियों को तोड़ने के लिए हाथी का उपयोग किया गया था जिसे वे पश्ता कद के नाचीज लोग सदके में आकर देखते रह गए। उन घने जंगलों के बाहर इस घटना का कहीं कोई जिक्र भी नहीं हुआ। एक और घटना है मिर्जापुर जिले (उत्तर प्रदेश) की जहां शक्तिनगर की बाहरी सीमा पर पी० ए० सी० को साथ लिए कुछ प्रशासक एक गांव के लोगों को आधी रात भरी बरसात में माइक पर यह चेतावनी दे रहे थे कि वे उसी समय वहां से निकल कर नई जगह चले जाएं जहां लोगों को ठेल ठाल कर मरने के लिए कुछ कामचलाऊ शेड और कुछ शामियाने लगा दिए गए थे। और ऐसा करते समय यह बात भी किसी के ध्यान में नहीं आई कि इस मौसम में तो पक्षी भी बाहर नहीं निकलते हैं और सन्यासी भी चातुर्मास के लिए कहीं रुक जाते हैं। एक दूसरे संदर्भ में यह आम बात है कि जहां लोग महज इसलिए कि उनके जाने को कोई और ठौर ही नहीं अपनी जगह से हटने का दृढ़ का संकल्प कर लेते हैं, वहां प्रशासन सबसे "सभ्य" तरीका अपनाता है वह है बांध के तैयार होने के बाद उसका मुहाना भरा देना और उसके बाद बढ़ता हुआ सैलाब शेष काम पूरा कर देता है जिसे करने में उसे कुछ संकोच हो सकता है। फिर इसमें क्या कोई अचरज कि प्रभावित लोग इन सभी कार्यवाहियों को ऐसा "दैव प्रकोप" मान लें जिसके सामने उनका कोई चारा नहीं। इस स्थिति को तत्काल ठीक करना जरुरी है।

2.17 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि —

एक केन्द्रीय कानून बनाया जाए जिसमें नागरिक मामलों में, विशेष रूप से उन मामलों में जहां सम्बन्धित व्यक्ति अथवा सम्बन्धित मामले में प्रभावित अधिकांश लोग अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के हों, बल के प्रयोग का निषेध किया जाए। इस कानून के बनने तक केन्द्र सरकार यह अनुदेश जारी करे कि उन सभी मामलों में जिनमें प्रशासन को मोटे तौर पर ऐसा संदेह हो कि बल का प्रयोग करना पड़ सकता है अथवा जिनमें प्रशासन का बल प्रयोग करने का इरादा न भी हो आशय केवल बल दिखा कर उसकी साया में काम करने का हो, सम्बन्धित अधिकारी कम से कम एक सप्ताह पहले इस बाबत एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार करे, जिसमें पुलिस या अन्य बल का आह्वान करने संबंधी पूरे तथ्य और कारण दिए जाएं और उसके बारे में प्रभावित लोगों की संभावित प्रतिक्रिया भी दर्शायी जाए, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त के द्वारा पदाभिहित प्राधिकारी के पास भेजे। ऊपर यथावर्णित पदाविहीत प्राधिकारी को सूचित किए बिना बल के प्रयोग के मामलों में संबंधित अधिकारी के विरुद्ध दाण्डिक कार्यवाही की जाए।

निर्योग्यताओं का निराकरण एक व्यापक ढांचा

2.18 ऊपर वर्णित निर्योग्यताएं अपने सही रूप में केवल सामाजिक ही नहीं हैं अपितु वे व्यवस्था की उस अधिक गहरी विरूपता की द्योतक हैं जिसकी जड़ों को आर्थिक संबंधों में देखा जा सकता है। इतिहास के लम्बे आयाम में जहां समाज के कुछ वर्गों ने भूमि सहित संसाधनों पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया वहीं अन्य वर्ग के लोगों को प्रकृति की उस समान विरासत को छूने तक की आजादी नहीं रही। इस प्रक्रिया में मजदूर वर्ग उस भूमि से वंचित हो गया जिसे वह जोतता था। वह जमीन के मालिक की दया-भिक्षा पर निर्भर हो गया जिसने खुले आम स्वच्छन्द रूप से उसे अपनी मेहनत के फल से भी वंचित कर दिया। इसके अलावा इस व्यवस्था में शारीरिक श्रम वाले कार्यों को बहुत नीचा स्थान दिया गया। अरुचिकर और कठोर श्रम वाले सभी कार्य विशेष रूप से कुछ वर्गों के लिए एक अकाट्य सामाजिक अनिवार्यता बन गए जिन्हें समुचित पारिश्रमिक मिले या न मिले का खयाल किये बिना ही करना लाजमी हो गया। अतएव संविधान में परिकल्पित निर्योग्यताओं को हटाने की व्यवस्था को केवल अस्पृश्यता तथा अत्याचारों की सीमित परिधि में देखने की बजाय एक व्यापक संरचना के संदर्भ में देखना जरूरी है।

भूमि को जोतने वाले लोग

2.19 अनुसूचित जातियों के लोगों में भूस्वामियों के अनुपात में 1971 की तुलना में 1981 में थोड़ी सी बढ़ोतरी हुई है (अध्याय 5)। ऐसा प्रतीत होता है कि यह बढ़ोतरी बहुत कुछ इस कारण हुई है कि उन्हें राज्यों के द्वारा भूमि के वितरण में उचित हिस्सा मिला है तथापि अधिकतम भूमि सीमा कानूनों से निकली भूमि के संबंध में स्थिति संतोषजनक नहीं है। इन जमीनों की सही तरीके से अभी पहचान तक नहीं की जा सकी है क्योंकि उनमें से अधिकांश बेनामियों की आड़ में विलीन हो गई। इसके अलावा इस भूमि का एक बड़ा भाग लंबी मुकदमेबाजी में फंसा हुआ है।

2.20 स्वतन्त्रता के तुरंत बाद की पहली लहर में यद्यपि सभी दर असामियों को संरक्षण दिया गया था तथापि सभी जगह उसके परिणाम एक समान नहीं आए। इसमें सबसे भारी चूक तो बटाईदारों को ले कर रही है जिन्हें कोई संरक्षण मिला ही नहीं। संभवतः **पश्चिम बंगाल** ही केवल एक अपवाद है जहां इस प्रथा को औपचारिक रूप से माना गया है और बटाई की शर्तों का कानूनी नियमन किया गया है। विडम्बना तो यह है कि कई राज्यों में जोत की शर्तों के उल्लंघन के लिये भूमि के मालिक की बजाय खामयाजा जोतने वाले को भुगतना पड़ता है। यदि औपचारिक स्तर पर, जहां समता-न्याय को कम से कम सिद्धात रूप में स्वीकार किया जाना लाजमी है, स्थिति ऐसी है तो क्षेत्र में स्थिति नितांत कदर्य के अलावा हो ही क्या सकती है ?

2.21 भूमि स्वामित्व के मामले में सबसे अशुभ लक्षण तो यह उभरता दिखाई दे रहा है कि भूमि एक ऐसी मूल्यवान संपत्ति का रूप लेती जा रही है जिसे लोग, इस मूलभूत सिद्धांत की पूर्ण अवहेलना करते हुए कि भूमि जीवनयापन का एक साधन है और उस पर उसी व्यक्ति का अधिकार होना चाहिए जो उस पर काम करता हो, निर्बाध रूप से अपने कब्जे में रख सकते हैं। ग्रामीण अंचल में शिक्षा का लाभ पहले उन जातियों को मिला जो अपने बच्चों को स्कूलों में भेजने की स्थिति में थीं। इनमें अधिकांश लोग वही थे जिनके पास भूमि थी। इन्हीं शिक्षित लोगों में से बहुत से लोग संगठित क्षेत्र में प्रवेश करने में सफल हुए हैं और उस क्षेत्र की शहरी तथा ग्रामीण संस्थाओं की विस्तृत संरचना में अधिकारी-कर्मचारी के रूप में लगे हुए हैं। परन्तु इसके साथ ही ये लोग निर्द्वन्द्व होकर गांव की जमीन पर अपना स्वामित्व बनाए हुए हैं। बहुत से मामलों में इन लोगों की पकड़ पहले से बहुत मजबूत हो गयी है क्योंकि अब वे स्वयं देश की शक्तिशाली प्रबंध-व्यवस्था के सदस्य हैं। दूसरे, गांव की सामान्य स्थिति को देखते हुए इनमें से अधिकांश लोगों की अपेक्षाकृत आमदनी बहुत अधिक है। इसलिए उन्हें इस बात की भी परवाह नहीं कि उनकी जमीन का उपयोग हो रहा है या नहीं अथवा कम उपयोग हो रहा है जिससे पैदावार कम हो रही है। उनकी खास दिलचस्पी मात्र जमीन के पूंजीगत मूल्य की बढ़ोतरी में है। बहुत से ग्रामीण अंचलों में गैर-हाजिर प्रवासी जमींदारों के नव सामंतवादी पंजे की पकड़ ने भीषण रूप ले लिया है। परन्तु नीति-निर्माताओं द्वारा इस तथ्य की अनदेखी की जा रही है चुंकि इन लोगों का शक्तिशाली प्रभाव गुट बन गया है। इसके अलावा बहुत सारे मामलों में स्वयं नीति-निर्धारक उसी हित-पक्ष में साझेदार हैं। शहरों के नवधनाढ्य वर्गों ने भी इस अन्यायी व्यवस्था में रुचि लेना आरम्भ कर दिया है। वे कस्बों में तथा उनके आसपास और कहीं सुदूर ग्रामीण अंचलों में शान्ति, सम्मान, सम्पत्ति और शक्ति के अनोखे बहुरंगी परिवेश की तलाश में नई रियासतें स्थापित कर रहे हैं।

2.22 आदिवासी क्षेत्रों में स्थिति गुणात्मक रूप से भिन्न है। आरम्भ में बिना किसी अपवाद के हर एक आदिवासी जमीन का मालिक था चाहे औपचारिक रूप से उसके अधिकार को मान्यता मिली हो या नहीं। औपचारिक व्यवस्था के इन अंचलों में प्रसार का पहला आघात यह लगा कि आदिवासियों के भूमि सहित प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार पर प्रश्नचिह्न लग गया। इस असंगत स्थिति के दुष्परिणाम सुविदित होने के बावजूद कहीं उसका परिशोधन नहीं किया गया है। अब आदिवासी लोग अपने उन अधिकारों की मान्यता के लिए जो परम्परागत व्यवस्था में सदा से कायम रही है और अपने उन संसाधनों के उपयोग के लिए भी जो सदियों से उनके नियंत्रण में रहते आए हैं, दूसरों की दया-भिक्षा पर निर्भर हैं। इसके परिणामस्वरूप उनकी रक्षा के लिए ढेर सारे कानून बनते रहने और विनियमों की उद्घोषणा होते रहने के बावजूद आदिवासी भूमि का हस्तान्तरण निर्बाध जारी है। विडम्बना तो यह है कि आदिवासी विकास के लिए बनाए गए कार्यक्रमों से वह प्रक्रिया और भी तेज होती गई है। उदाहरण के लिए आदिवासी जमीन के संरक्षण संबंधी कानूनों से बच कर, कानून की सामान्य प्रक्रिया के अनुसरण में एक अत्यन्त सुविधाजनक आवरण के रूप में प्रयोग किया जा रहा है सहकारी ऋण का और वह आज आदिवासियों की भूमि के हस्तान्तरण का एक प्रमुख कारक बन चुका है।

2.23 कतिपय आदिवासी क्षेत्रों में यह कथन एक स्वयं-सिद्ध सिद्धान्त जैसा है कि कोई भी भूमि जो समतल है और उस कारण खेती के लिए मूल्यवान है, तो गैर-आदिवासी की होगी और जो भूमि ऊबड़खाबड़ और सीमान्त है वह आदिवासी की होगी। इसी प्रकार जो भूमि सिंचित और हरी-भरी है, वह गैर-आदिवासियों की तथा बंजर और अनुपजाऊ भूमि आदिवासियों की। विकसित भूमि आदिवासी लोगों के कब्जे में बने रहने के लिये बहुत अधिक मूल्यवान हो जाती है। सिंचाई परियोजना के 'कमांड' के क्षेत्र वहां बसने वाले साधारण आदिवासियों पर आने वाली विभीषिका और संकट की कहानियों से अटाटूट भरे मिलते हैं। परियोजना की रूपरेखा भी जैसे ही बन कर तैयार होती है और किसी अंचल विकास की संभावना का जैसे ही हल्का सा आभास भी मिलता है, अधिक जानकार लोग वहां पहुंच जाते हैं और फिर एक तरह की लूट शुरू हो जाती है, जैसा कि उदाहरण के लिए कोरापुट (**उड़ीसा**) में मचकुंड के 'कमांड' क्षेत्र में व्यापक रूप से हुआ। और जब सिंचाई के लिए पानी बहने लगता है तब तो फिर बिना किसी रोक टोक के स्वच्छन्द रूप से लूटमार मच जाती है। विडम्बना तो यह है कि चूंकि लोगों को नई तकनीक के लिए तैयार करने के लिए पहले से कोई प्रयास ही नहीं किए जाते हैं, इसलिए आदिवासी स्वयं ही इस नए परिवेश में अभ्यास के बिना परेशानी महसूस करता है। उसे सभी तरह के प्रलोभन देने वाले लोग घेर लेते हैं जिनका एकमात्र उद्देश्य यही होता है कि उसे किसी न किसी तरह बाध्य कर, फुसला कर, समझा कर अथवा जाल रच कर ऐसी हालत बना दी जाये जिससे वह उस "नये बोझ" से मुक्त होने के लिए "सहमत" हो जाए। गैर-आदिवासियों में अधिक साहसी लोग तो किसी एक या एकाधिक लड़की को फंसा लेते हैं और संरक्षात्मक कानूनों से बचाव के लिए उनके नाम का सफलतापूर्वक उपयोग करने के कपटपूर्ण तरीके भी अपनाते हैं। ये लड़कियां इसी विश्वास में रहती हैं कि वे उनकी पत्नियां हैं और उन्हें इस बात का तनिक भी आभास नहीं होता कि यह सच नहीं है और जैसे ही उस संपत्ति को बनाए रखने के लिए उनकी आवश्यकता नहीं रहेगी और उनके यौवन की अरुणिमा मलिन हो जाएगी उन्हें तत्काल निकाल बाहर किया जाएगा।

2.24 इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि —

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की भूमि के हस्तान्तरण और अवैध अथवा अनियमित रूप से हस्तान्तरित भूमि के पुनः दिलाए जाने सम्बन्धी कानून को कठोर बनाया जाए। केन्द्रीय सरकार इस सम्बन्ध में एक आदर्श विनियम/कानून बना कर, निर्दिष्ट समय जो एक वर्ष से अधिक न हो, के अन्दर ही उसे अपनाने हेतु राज्यों को

भेजे। इन उपबंधों में निम्नलिखित बातें विशेष रूप से सम्मिलित की जायें --

(1) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों द्वारा अन्य समुदायों के सदस्यों को और अनुसूचित जनजातियों की ऐसी स्त्रियों को भी जिन्होंने किसी गैर-आदिवासी से विवाह किया है अथवा उसके साथ रह रही हैं, भविष्य में होने वाले भूमि के सभी स्थानान्तरणों का निषेध;

(2) किसी आदिवासी समुदाय के एक सदस्य द्वारा किसी दूसरे आदिवासी समुदाय के सदस्य को भूमि के स्थानान्तरण का विनियमन ;

(3) कानून के उपबन्धों और किसी न्यायालय के आदेश में किसी बात के होते हुए भी किसी व्यक्ति, सहकारी समिति अथवा संस्था द्वारा दिए गए ऋण सहित किसी तरह की बकाया की वसूली के लिए अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्ति की भूमि की बिक्री का निषेध;

(4) न्यायालयों द्वारा ऐसे सम्मति आदेशों को जिनमें अनुसूचित जाति/जनजाति के किसी व्यक्ति द्वारा भूमि का स्थानान्तरण होता हो पारित करने का निषेध ;

(5) अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लोगों को भूमि वापस दिलाए जाने से सम्बन्धित मामलों में वकील करने की मुमानियत;

(6) अनुसूचित जातियों/जनजातियों को भूमि के हस्तान्तरण के मामलों में सरसरी कार्यवाही के लिए उपबन्ध ;

(7) उन मामलों में जहां अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्ति द्वारा भूमि के स्थानान्तरण को न्यायालय द्वारा अवैध अथवा दुराशयपूर्ण करार दिया हो, केवल एक अपील करने का उपबन्ध ;

(8) अनुसूचित जातियों/जनजातियों के किसी व्यक्ति के पक्ष में निर्णय हो जाने के बाद एक निर्दिष्ट अवधि के अन्दर, यदि क्षेत्र में कोई फसल हो तो उसके कटने तक, भूमि के अनिवार्य रूप से वापस दिलाए जाने का उपबन्ध और ऐसे प्रकरणों में अपील के मामलों में अपील अदालत द्वारा स्थगन आदेश पारित करने पर पाबंदी; और

(9) किसी भी व्यक्ति द्वारा अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्ति को भूमि वापस दिलाए जाने की तारीख के तीन वर्ष के भीतर उस भूमि पर कब्जा करने को हस्तक्षेपयोग्य अपराध विहित करना।

2.25 भूमि सहित प्राकृतिक संसाधनों के उपभोग तथा उन पर स्वामित्व के सवाल का एक अन्य महत्वपूर्ण आयाम भी है। परम्परागत व्यवस्था में, जहां हाथ से खेती करना सब लोग समान रूप से जानते थे और खेती के उपकरण भी एक जैसे ही थे, भूमि पर वास्तविक नियंत्रण उसी व्यक्ति का हो सकता था जो उसे जोतता था, यद्यपि यह जरूर था कि जमींदार उत्पादन के एक बड़े हिस्से को हथिया लेता था अथवा खेतिहर मजदूर भी लगा सकता था। सामन्तवादी ढांचे में भी एक प्रकार से भूमि जोतने वाले पर निर्भरता थी। विज्ञान और तकनीकी में प्रगति होने के साथ जहां लोगों के कृषि कौशल के स्तर में कुछ अन्तर आया है वहीं आधुनिक निवेशों और कृषि यंत्रों सहित उन्नत प्रकार के उपकरणों को इस्तेमाल करने के व्यक्ति सामर्थ्य में भारी असमानता आ गई। परिणामस्वरूप जमीन जोतने वाले की स्थिति कमजोर हो गई है। इसके अलावा पूंजीवादी कृषि में मजदूरों को विस्थापित करने वाली मशीनों के दिनों दिन बढ़ते उपयोग के सामने अधिक गरीब लोग खेतिहर मजदूरों के रूप में काम करने के अवसरों से भी वंचित होते जा रहे हैं। भूमि उपयोग के संबंध में उभरते नये प्रतिमानों से संसाधनों के परम्परागत उपयोग को अनुत्तम करार दिया जा रहा है और भूमि-उपयोग के ऐसे नए तरीके अपनाए जा रहे हैं जो देखने में अधिक कुशल तथा फायदेमन्द लगते हैं जिनमें स्वाभाविक रूप से ताकतवर वर्गों के लोगों का ही पलड़ा भारी होता है और इसलिए वे भूमि और उसके उत्पादन पर अपने वर्चस्व को और भी मजबूत बनाने में समर्थ हो गए हैं। इस प्रकार नई स्थिति के दो पहलू सामने आते हैं। प्रथम, लोगों के परम्परागत अधिकार अमान्य होते जा रहे हैं। इसलिए, इस प्रक्रिया का रूप विकास के उलट-प्रहार जैसा है। दूसरे, सामान्य लोगों को आधुनिक विज्ञान और तकनीकी के लाभों में समुचित हिस्सा मिलने से वंचित किया जा रहा है। इस तरह विकास में भागीदार के रूप में अधिक गरीब लोगों के दावों की अवहेलना हो रही है। अतः इन दोनों ही रूपों में साधारण लोग हारने वाले की स्थिति में पड़ गए हैं।

2.26 उन साधारण लोगों के अधिकारों पर जो अपनी आजीविका किसी तरह ऐसी भूमि से जुगाड़ रहे हैं जिसे गलत रूप से कर बंजर भूमि बताया जा रहा है, एक दूसरी ओर से भी गंभीर अतिक्रमण हो रहे हैं। हमारे देश में एक इंच भूमि भी उपयोग-अधिकार विहीन नहीं है और जिस जमीन में कुछ भी पैदा हो सकता है, उसे लागत-लाभ के हिसाब या कितना भी कठोर श्रम क्यों न लगे इसकी परवाह किये बिना लोग उपयोग में ला रहे हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इससे पर्यावरण पर बोझ बढ़ा है। किन्तु फिर भी तथ्य तो यही है कि लोगों के पास कोई विकल्प ही नहीं है। इस प्रक्रिया को उलटने तथा पर्यावरण के संतुलन को पुनः स्थापित करने के लिए संकल्प के रूप में पर्यावरण की दृष्टि से लाभदायक वैकल्पिक भूमि उपयोग का आयोजन किया जा रहा है यथा वृक्ष खेती (वृक्षों पर आधारित सभी कार्यकलाप जैसे वानिकी, 'प्लान्टेशन,' बागवानी और चारे के लिए पेड़ उगाना)। किन्तु उस प्रक्रिया में यह "बंजर भूमि" नैगमिक संगठनों तथा गैर-गरीब लोगों को दी जा रही है। इसके पीछे दिखाने के लिये मान्यता यह है कि यह भूमि उपयोग-अधिकार विहीन है और यह कार्य इतना बड़ा है

कि इसमें गरीब, गैर-गरीब, राज्य और निजी क्षेत्र समेत सभी की सहभागिता के लिए पूरा अवसर है। इस नई आयोजना के प्रदूषित वातावरण में इस भूमि का अधिकांश भाग विशेष रूप से बढ़िया किस्म की भूमि गैर-गरीब लोगों द्वारा हथियाई जा रही है जिससे गरीबों के लिए शायद ही कोई स्थान बचा रहे। इस प्रकार गरीबों के द्वारा भूमि संसाधनों के उपयोग में भारी गिरावट हुई है और विडम्बना यह है कि यह तथ्य अनदेखा और अनकहा रह गया है। यह प्रकृति के उस उपहार में जिसे धरती माता ने अपने सब बच्चों को बिना किसी भेदभाव के दिया है, उनकी उचित हकदारी का अन्तिम आभास है, जिसे एक ऐसी व्यवस्था द्वारा, जो युक्तिसंगत, न्यायपूर्ण तथा मानवीय होने का दावा करती है, तरह-तरह की कपटपूर्ण युक्तियों से मिटाया जा रहा है। गरीबों के प्रतिरोध को "अन्यायोचित" इसलिये, करार दे दिया जाता है क्योंकि उनके कोई अधिकार नहीं है और विकास विरोधी इसलिये कह दिया जाता है क्योंकि वैकल्पिक आयोजना में तथाकथित फिजूल संसाधनों का उत्तमतम उपयोग सुनिश्चित करना है। ऐसी हालत में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उनके वर्तमान और भविष्य के न्यायपूर्ण, समतामूलक, अवंचनीय अधिकार का जिक्र ही न करना बेहतर होगा।

2.27 कृषि की दृष्टि से प्रगत क्षेत्रों में भी विकास सामान्य रूप से कमजोर वर्गों के अनुकूल नहीं हुआ है। बहुत से मामलों में किसान साधारण मजदूरों से काम कराने की प्रथा को छोड़ कर पूंजी-बहुल तकनीक अपना रहे हैं। इस बारे में एक यह प्रवृत्ति भी बढ़ रही है कि अच्छी कृषि भूमि पेड़ों, वृक्षोत्पादन और चारे के पेड़ लगाने जैसे कार्यों के लिए उपयोग की जा रही है। श्रम-विरल कार्यों की आज हालत यह है कि एक नई प्रवृत्ति चल निकली है जिसमें गरीब लोग गैर-गरीबों को अपनी भूमि पट्टे पर दे रहे हैं जो अन्त में और अपरिहार्य रूप से भूमि के हस्तान्तरण होने और उस व्यक्ति के विरासतहीन होने का पहला आभास है। खेती की दृष्टि से समृद्ध बहुत सारे, क्षेत्रों में मजदूरी विशेष रूप से इसलिए कम बनी रही है क्योंकि वहां ऐसे क्षेत्रों से जहां संसाधनों का क्षरण हो गया है, जो वहां की बढ़ती जनसंख्या को मात्र जीवन-निर्वाह कराने के लिए भी असमर्थ है, भारी संख्या में लोग एक निश्चित समय के लिए हर साल आ जाते हैं और नाम मात्र की जीवन-निर्वाह से भी कम की मजदूरी पर काम करने के लिये तैयार होने के कारण स्थानीय श्रम बाजार में अन्य मजदूरों के प्रतियोगी बन जाते हैं।

2.28 इस प्रकार हमारे देश में लोगों की भूमि संसाधनों के उपयोग संबंधी स्थिति निरन्तर ज्यादा नाजुक होती जा रही है। भूतपूर्व सामन्त बेनामी नकाबों सहित तरह तरह के कपट व्यवहारों का प्रयोग करके बड़ी जोतों पर कब्जा बनाए हुए हैं। भूमि पर स्वामित्व संबंधी अधिकतम सीमायें बहुत ऊंची हैं और यद्यपि भूमि की उत्पादन-क्षमता सिंचाई के साधनों और बेहतर कृषि तकनीक के प्रयोग से बढ़ती रही है, फिर भी अधिकतम सीमा को घटाने की अभी कोई बात भी नहीं हो रही है। नव सामंतवादी गैर-हाजिर प्रवासी जमींदारों का एक बड़ा वर्ग पैदा हो गया है जो इस भूमि पर अपना शिकंजा कायम रखने के लिए सामान्य रूप से संगठित क्षेत्र परन्तु विशेष रूप से प्रशासन में अपनी स्थिति और उसके साथ अपने संबंधों का दुरुपयोग कर रहा है। सीमान्त भूमि पर जीवन-निर्वाह करने वाले लोग उन से वंचित किये जा रहे हैं, और वहीं संसाधन-आधार गैर-गरीब लोगों द्वारा, विशेष रूप से निगमित क्षेत्र द्वारा पर्यावरण, अर्थव्यवस्था अथवा विकास का कोई न कोई सुविधाजनक मुखौटा लगा कर उसके बहाने हथियाते जा रहे हैं। आसूदा जमींदार पूंजी-बहुल तकनीक अपना रहे हैं जिससे हमारे सीमित भूमि संसाधनों पर जनसंख्या का वास्तविक दबाव बढ़ रहा है और इसके परिणामस्वरूप उपलब्ध जन शक्ति का अनुत्तम उपयोग हो रहा है। वे भूमि का श्रम-विरल उपयोग करने पर भी आमादा हैं जिससे अधिक गरीब लोग अपने परम्परागत व्यवसायों से निकलते जा रहे हैं। वे अधिक गरीब किसानों की भूमि को भी हथियाते जा रहे हैं और तकनीक के नए शक्ति-स्रोत का उपयोग कर, जो अधिक गरीब किसानों की पहुंच के बाहर है, अपनी जोत बढ़ा रहे हैं। शहरों का नव-धनाढ्य वर्ग भी इस छीना-झपटी में शामिल हो गया है और वह विस्तृत भू-खंडों को एक सुरक्षित निवेश के रूप में और अप्रत्याशित अर्नाजत लाभ के लालच में न केवल बढ़ते हुए शहरों के भीतर और इनके आसपास वरन दूर-दराज ग्रामीण अंचलों में भी हथियाता जा रहा है। युगों से वन लोगों, विशेषकर आदिवासियों का जीवन-आधार रहे हैं परन्तु अब उनके उपयोग पर प्राय: सम्पूर्ण प्रतिबंध लगा दिए गए हैं। बड़ी संख्या में आदिवासी लोग अपने मामलों पर उचित विचार हुए बिना ही बेदखली का सामना कर रहे हैं, हालांकि उनमें से बहुत सारे लोग पीढ़ियों से वहां बसे हुए हैं और उनको वहां रहने का कानूनी अधिकार भी है। इन मामलों पर आगे विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है।

2.29 इस प्रकार देश में अधिक गरीब वर्गों के लिए अत्यन्त अनिष्टकारी स्थिति बनती जा रही है, जिसमें गरीब को न केवल भूमि पर उसके अधिकार से वंचित किया जा रहा है वरन वह अपने श्रम के लाभकारी उपयोग के अवसरों से भी वंचित किया जा रहा है। और इसकी भविष्य में भी कोई आशा नहीं बंधती है क्योंकि भूमि-उपयोग के नए प्रतिमान में गरीबों के लिए कोई स्थान ही नहीं है। अनुसूचित जातियों और जन-जातियों की स्थिति, जो गांव के गरीबों में न केवल बहुसंख्यक वरन सबसे अधिक वंचित लोगों में हैं, सबसे अधिक दयनीय हो गई है।

2.30 यह अनिवार्य है कि जो संसाधन श्रमिक की अर्थव्यवस्था का आधार हैं, उन संसाधनों से उसके अलगाव की प्रक्रिया को प्रभावी ढंग से रोका जाए बल्कि उसे विपरीत दिशा में चलाया जाए। जब तक यह पहला कदम नहीं उठाया जाता है देश के गरीब लोगों में अधिकांश लोगों की अभिलाषाओं पर पर तुषारापात होता रहेगा। इन में से अधिकांश लोगों का कौशल केवल प्राथमिक क्षेत्र की गतिविधियों से, जिनमें अधिकतर कृषि तथा रूढ़बद्ध धंधे शामिल हैं से संबंधित है। यदि इन लोगों के महत्वपूर्ण कौशल तथा संबंधित संसाधनों और उत्पादन के साधनों पर नियन्त्रण के बीच की कड़ियों को अधिकाधिक कमजोर कर अन्त में

समाप्त होने दिया जाता है तो उसका अर्थ यही होगा कि समतावादी व्यवस्था की स्थापना के लिये आरंभ किए गए महायुद्ध में हार हो गई, फिर चाहे छोटी मोटी लड़ाइयों में इधर-उधर कुछ जीत भले ही हो जाये जिनका वे लोग महान उपलब्धियों के रूप में गुण-गान करते रह सकते हैं जो वास्तविकता का आतप झेलने की बजाय एक काल्पनिक संसार में मलय समीर का सुख भोगना अधिक पसंद करें। उस हालत में संसाधनों पर वही लोग अपना अधिपत्य जमा लेंगे, जिनके आधुनिक व्यवस्था से बहुविध संबंध चाहे वह ज्ञान कौशल, तकनीक, धन पूंजी, प्रभाव तथा प्राधिकार, किसी भी रूप में क्यों न हो, सही हो। अतः सबसे पहला कार्य राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के इस आधारभूत प्रतिमान को ठीक करना और उन्हें समतावादी सामाजिक व्यवस्था की अनिवार्य शर्तों के अनुकूल ढालना होगा। ऐसा प्रतिमान ही एक भरोसे योग्य नींव की भूमिका अदा कर सकता है। जिसके ऊपर अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के लिए सकारात्मक विभेद की संवैधानिक व्यवस्था का उपयोग करते हुए उनके लिए न्यायपरक समता का आयाम सुनिश्चित किया जा सकता है। जब तक यह नहीं किया जाता तब तक देश में अधिक गरीब लोगों की स्थिति के और भी असुरक्षित होते जाने से उनकी स्थिति को यथावत बनाए रखने के लिए भी अधिकाधिक प्रयास की जरूरत होगी। इस प्रतिमान के एक अभिन्न रूप में भूमि जोतने वाले के सिद्धांत की असंदिग्ध रूप से पुनः पुष्टि की जानी चाहिए और उन सभी युक्तियों का पर्दाफाश करना आवश्यक है जिन्होंने असमता-वादी प्रवृत्तियों को न केवल बनाए रखने वरन् उन्हें और भी ताकतवर बनने में मदद की है।

2.31 इन तथ्यों के सन्दर्भ में मजदूर तथा उत्पादन के साधनों के बीच संबंध समता तथा सामाजिक न्याय का एक आधारभूत निर्धारक है और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य, जिन्हें सभी प्रकार के शोषण के विरुद्ध प्रभावी संरक्षण प्रदान किए जाने की अपेक्षा की जाती है, मुख्य रूप से अपने शारीरिक श्रम, कौशल अथवा अन्य गुणों के प्रतिफल पर निर्भर करते हैं।

2.32 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि :

(क) यह सिद्धांत कि भूमि जोतने वाले की हो पुनः प्रख्यापित किया जाना चाहिए और उसे लागू करने के लिए उपयुक्त कानून बनाए जाने चाहिएं, और

(ख) वन सामान्य विशेष रूप से अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के द्वारा संसाधनों के उपयोग और उन पर उनके अधिकारों में किसी प्रकार छेड़-खानी नहीं होनी चाहिए और उन्हें उन संसाधनों का पर्यावरणीय मर्यादाएं, यदि कोई हों तो उनसे संगत, उत्तमतम उपयोग, करने के लिए समर्थ बनाया जाए और उन्हें विकास में भागीदार बनाया जाए।

इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए पहले कदम के रूप विशिष्ट रूप से निम्नलिखित उपाय तत्काल किए जाने चाहिएं—

(1) खेती में बटाई प्रथा को कानून के अधीन औपचारिक रूप से मान्यता दी जानी चाहिए और इसकी शर्तें विनियमित की जानी चाहिए जिससे बंटाईदार को भूमि जोतने वाले की हैसियत से कुल उत्पादन के कम से कम दो तिहाई हिस्से का हकदार हो जाए।

(2) ऐसे एकल परिवार के किसी भी व्यक्ति को जिसके एक सदस्य की संगठित क्षेत्र में स्थायी नौकरी हो अथवा जो अन्य किसी व्यवसाय में लगा है जिससे उसे संगठित क्षेत्र में निम्नतम श्रेणी के कर्मचारी के बराबर आमदनी होती हो, कृषि भूमि की मिलकियत की हकदारी नहीं होना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति किसी भी कारण से अपनी भूमि बेचना चाहे तो उस हालत में संयुक्त परिवार में उसके सहभागियों, उसके आसामियों और बंटाई-दारों को पूर्व-क्रय का अधिकार होना चाहिए और इन मामलों में खरीददार के द्वारा देय राशि कानूनी रूप से उन्हीं सिद्धांतों को अपनाते हुए निश्चित की जानी चाहिए जो अधिकतम भूमि सीमा से अतिरिक्त भूमियों के लिए अप-नाए गए हों।

(3) विभिन्न प्रकार के ट्रस्टों और ऐसी सहकारी समितियों द्वारा धारित सभी भूमि जिनके सभी सदस्य वास्तविक रूप से अपने हाथ से भूमि को जोतने वाले नहीं हैं, राज्य द्वारा ले ली जानी चाहिए। और भूमिहीन लोगों को वितरित की जानी चाहिए। यदि कोई ट्रस्ट किसी सार्वजनिक प्रयोजन के लिए स्थापित किया गया हो तो सरकार उस प्रयोजन को पूरा करने का दायित्व अपने ऊपर ले ले और उसके अलावा अन्य सभी दावे, यदि कोई हो, समाप्त कर दिए जाएं।

(4) उन सभी भूमियों की स्थिति का जिन पर निगमित निकायों का कब्जा है और जो कृषि से भिन्न प्रयोजनों के लिए उपयोग में नहीं की जा रही है, पुनरावलोकन किया जाना चाहिए और उसका उतना भाग जो उनकी तत्काल आवश्यकताओं के अलावा हो राज्य द्वारा ले लिया जाना चाहिए।

(5) भूमि की अधिकतम सीमा को कठोरता से घटाया जाना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए वर्तमान सिंचित भूमि तथा असिंचित भूमि के दो-किस्मी वर्गीकरण को बदला जाए और इसके स्थान पर

नया परिष्कृत वर्गीकरण जो भूमि की गुणवत्ता, उसके विकास के स्तर और उत्पादकता जैसे तत्वों पर आधारित हो उपयोग में लाया जाना चाहिए।

(6) उपर्युक्त (3), (4), तथा (5) के अनुपालन में राज्य को जो भूमि उपलब्ध हो उसे भूमिहीन मजदूरों और सीमान्त किसानों को उस क्रम में वितरित किया जाना चाहिए और उसमें अनुसूचित जातियों के तथा जनजातियों के सदस्यों को देय भाग भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए जो भूमिहीन मजदूरों में उनकी संख्या के अनुपात से कम न हो।

(7) राज्य को अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को ऐसी भूमि खरीदने के लिए, जो उपर्युक्त (2) के व्यवहार व्यवस्थान के अनुसार उपलब्ध हो, ऋण देने के लिए एक विशेष निधि का निर्माण करना चाहिए, यह ऋण ब्याज-मुक्त होना चाहिए और दस या अधिक वार्षिक किस्तों में वसूल किया जाना चाहिए।

वन का उपयोग

2.33 यहां पर सामान्य जन विशेष रूप से आदिवासी लोगों द्वारा वन संसाधनों के उपयोग का उल्लेख भी किया जा सकता है। आदिवासी समाज की एक महत्वपूर्ण निर्णायक विशेषता यह है कि उनका एक निश्चित क्षेत्र, जहां के वे निवासी हैं, गहरा सम्बन्ध होता है और उस अंचल पर उनका क्षेत्राधिकार ऐसी परंपरा से संपोषित है जो उनके लिए पवित्र है। प्रथा द्वारा पोषित उनके इस गहरे विश्वास पर पहला प्रहार औपनिवेशिक शासन के द्वारा वैज्ञानिक प्रबन्ध के नाम से राजस्व के लिए वनों के आरक्षण के रूप में हुआ जिसका असली मकसद उसका दोहन करना था। तथापि यह आघात उन लोगों के लिए असहनीय नहीं साबित हुआ क्योंकि उस समय संसाधन प्रचुर मात्रा में थे और जनसंख्या कम थी, बाहरी मांग सीमित थी और आदिवासी क्षेत्र क अधिकांश भाग प्रशासन के प्रभाव-सीमा के बाहर ही था। इसके अलावा वनों के आरक्षण की प्रक्रिया के अन्तर्गत ही कतिपय अधिकारों को मान्य किया गया था जिनका आदिवासी लोग बिना किसी बाधा के बहुत समय तक उपभोग करते रहे। परन्तु विकास के नए दौर में वन संसाधनों पर दबाव कई गुणा बढ़ गया और बहुआयामी भी हो गया। वनों से होने वाली आय में कौन सी आय पूंजीगत आधार को ही खर्चकर समाप्त करना माना जाए और किसी संसाधनों में निरंतर बढ़ोतरी के अंश का ही आहरण माना जाए, के बीच की विभाजक रेखा अत्यन्त क्षीण होने के कारण राज्य के राजस्व की वृद्धि के लिए वन एक अत्यन्त सुगम साधन भी बन गए हैं। इसके साथ ही वनों की भारी बरबादी ठेकेदारों के द्वारा तरह-तरह के निहित स्वार्थों से मिली भगत करके की जाती रही। जिसके अनर्थकारी परिणाम हुए। आदिवासी लोगों को भी पहले की जैसे ही वन भूमि पर अपनी खेती को बढ़ाने के लिए इसके बावजूद कि नया कानून उसके विरुद्ध था, बाध्य होना पड़ा है। वास्तव में नए परिप्रेक्ष्य में उनकी अर्थव्यवस्था पर अंदरूनी तौर पर जनसंख्या वृद्धि के कारण और दूसरी ओर बाहरी लोगों, संस्थाओं और यहां तक कि राज्य द्वारा भी अनाधिकृत प्रवेश के कारण दबाव बहुत बढ़ गया है। इसके परिणामस्वरूप इसके सिवाय उसके पास कोई विकल्प ही नहीं है कि वह अपने पेट की आग बुझाने के लिए विकास के परिदृश्य से कहीं दूर, "अतिक्रमण" करें जहां वैसे उसके नसीब में विकास के अरुचिकर परिणामों की आंधी के अलावा कुछ है ही नहीं।

2.34 इन दूरस्थ क्षेत्रों में जहां आदिवासी अर्थव्यवस्था पर आन्तरिक और बाह्य दोनों प्रकार का दबाव है आदिवासी लोगों के लिए ऐसे कोई भी नए अवसर नहीं हैं जो उस दबाव को कम कर सकें। वानिकी के क्रियाकलापों में आदिवासी लोगों को मिलने वाला आर्थिक लाभ केवल उनके हाथ की मजदूरी तक ही सीमित रहा है। यह बात केवल वानिकी कार्यक्रमों के लिए ही सच नहीं है बल्कि लघु वनोपज को एकत्र करने के संबंध में जिस पर आदिवासियों का विशेषाधिकार औपचारिक रूप से स्वीकृत किया गया था, स्थिति वैसी ही है। यह खेद की बात है कि आधुनिक प्रतिमान में भी आदिवासियों का पक्ष उपेक्षित रह गया है। उसके साथ अन्याय हुआ है। आज मजदूरों की भागीदारी न केवल उद्यमों के प्रबन्ध में वरन उनके स्वामित्व में भी स्पृहणीय लक्ष्य है, जिनमें व्यक्तिगत रूप से किसी मजदूर की सदस्यता मात्र संयोग है और जिनके लिए पूंजी राष्ट्रीय स्तर पर जुटाई जाती है। इसके विपरीत आदिवासी लोगों को, उनके वनों पर अनन्य रूप से अधिकार के दावे की अनदेखी करते हुए, वानिकी में अनियत दैनिक मज़दूर से ऊंचे किसी अन्य पदवी के लिए योग्य नहीं समझा गया है।

2.35 आदिवासी लोगों के लघुवनोपज एकत्र करने के उस अधिकार का भी उसकी सही भावना के अनुसार सम्मान नहीं किया गया है जिसे वनों के आरक्षण के समय विधिवत रूप से स्वीकार किया गया था। समय बीतने के साथ जो कुछ पहले अधिकार के रूप में स्वीकार किया गया था वह एक रियायत मात्र करार दे दिया गया और अब हम ऐसी स्थिति में हैं जब ये रियायतें भी आसानी से स्वीकार नहीं की जाती हैं और सच तो यह है कि उन्हें वनों पर अनावश्यक भार रूप ही देखा जा रहा है। राज्य अभिकरणों द्वारा खरीदे जाने पर भी लघु वनोपज का जो दाम आदिवासी को मिलता है वह एक ऐसे उत्पाद का मूल्य न हो कर जिस पर उसका अधिकार है,

संबंधित वस्तु को एकत्र करने में लगने वाले श्रम की मजदूरी मात्र होता है। चूंकि लघु वनोपज एकत्र करने का अधिकार वनों में रहने वाले और उन पर ही अपनी आजीविका के लिए निर्भर रहने वाले आदिवासियों को वनों के आरक्षण की प्रक्रिया के ही अंतर्गत स्वीकार किया गया था। अत: उसे सिद्धांत: समाप्त नहीं किया जा सकता है, जैसा कि व्यवहार रूप में कर दिया गया है क्योंकि आज राज्य लघु वनोपज पर रायल्टी आयद कर रहे हैं और आदिवासी को उसे एकत्र करने की केवल मजदूरी मिल रही है और उसे यदि कुछ अधिक मिलता भी है तो वह अनुकम्पा के रूप में मिलता है। जिस वस्तु पर आदिवासी लोगों को अधिकार दे दिया गया था राज्य को किसी भी हालत में रायल्टी आयद करने का अधिकार नहीं है चाहे परिस्थितियां कैसी भी न बदल जाएं और वह वस्तु उसके उपयोग में अनेकरूपता आ जाने या आदिवासी क्षेत्र में बाजार-व्यवस्था के प्रसार से कितनी भी अधिक मूल्यवान और कीमती क्यों न हो जाए। यह तो विकास प्रक्रिया का एक भाग है। यदि आदिवासी लोग विकास के उलट-प्रहारों का सामना कर रहे हैं तो उन्हें बदलती हुई स्थिति का लाभ देने से मात्र औपचारिक आधार पर मना करना अन्याय होगा जैसा भी हो, इस समय आदिवासियों को वन-अर्थव्यवस्था से मिलने वाले लाभ नितांत सीमित हैं और निर्वाह-स्तर पर भी उनकी बढ़ती हुई आवश्यकताओं की तुलना में नगण्य हैं।

2.36 वन भूमि के जटिल मुद्दों को हल करने के लिए राज्यों द्वारा समय-समय पर प्रयास किए गए हैं परन्तु उनमें अधिक सफलता नहीं मिली है। इसके बहुत से कारण हैं। बहुत से मामलों में वनों का आरक्षण मनमाने रूप से किया गया था जिस कारण लोगों को विवाद के बिन्दुओं को जानने और अपना पक्ष प्रस्तुत करने तक का अवसर नहीं दिया गया था। उत्तर प्रदेश में मिर्जापुर का मामला सर्वाधिक उल्लेखनीय उदाहरण है जिसमें उच्चतम न्यायालय ने नए सिरे से कार्यवाही करने के आदेश दिए हैं। भूतपूर्व जागीरदारी के वनों के मामले में आरक्षण आदेश इस मान्यता के आधार पर जारी कर दिए गए थे कि राज्य वनों के भूतपूर्व स्वामियों के स्थान पर नया स्वामी बन गया है जिसमें उन अनौपचारिक व्यवस्थाओं की पूरी अवहेलना कर दी गई है जिसके अनुसार वे लोग कहीं नैमित्तिक लगान देकर और कहीं मुखिया की सांकेतिक सेवा के आधार पर खेती किया करते थे। इस सम्बन्ध में सबसे उल्लेखनीय उदाहरण महाराष्ट्र में "वर्क्स" और "दली" भूमियों का है, जिनके अस्तित्व के बारे में भी राज्य अब तक औपचारिक रूप से अनदेखी करता रहा है। वनों की भूमि पर निर्वाह कर रहे उन सभी लोगों का भूमि पर कब्जा अनधिकृत करार दे दिया गया है। तीसरे वनों में में अनधिकृत कब्जों को नियमित करने और उसका सौहार्दपूर्ण हल निकालने के लिए राज्य सरकारों द्वारा समय-समय पर लिए जाने वाले निर्णय अधिकतर कार्य-विधि के सवालों, विलम्ब और विनिर्दिष्ट तारीख को कब्जा होने की साक्ष्य की ग्राह्यता की उलझनों में फंसे रह गए। यह एक विडम्बना की बात है कि पहले के मुकद्दमें में सजा कब्जे को स्थापित करने के लिए सर्वाधिक स्वीकार्य आधार है और कहीं-कहीं तो वही एकमात्र आधार माना गया है। इस औपचारिक व्यवस्था के पीछे यही मान्यताएं हो सकती हैं कि दूरस्थ क्षेत्रों में भी अधिकारियों ने दौरे किए होंगे और अतिक्रमण के मामलों में कार्यवाही करने में उन्होंने निष्ठा और ईमानदारी से काम किया होगा। इस संदर्भ में इस बात का अहसास तक नहीं मालूम देता है कि उस मान्यता को स्वीकार कर लेने पर आदिवासी लोग सरकारी अधिकारियों की भूलों और चूकों के आधार पर उनके कारण अपराधी घोषित होकर दंड के भागी हो जाते हैं।

2.37 वन आरक्षण अधिनियम, 1980 को ऐसे समय पर लागू किए जाने से जबकि आदिवासी क्षेत्रों में ऊपर बताए गए तमाम मुद्दों का तूफान पहले से चल रहा था। वहां अस्पृहणीय स्थिति बन गई है। आदिवासी को पहले से ही अतिक्रमक मान लिया जाता है और फिर उसे वहां से बिना उसकी बात सुने ही एकदम हटाने के लिए कार्यवाही की जाती है। न केवल आदिवासी जिस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में अपने आपको आज पा रहा है उसके बारे में केवल उसके कथन की उपेक्षा की जा रही है वरन् ऐसे कानूनों के तहत जो मूलत: उसके हितों के विरुद्ध है, उसे जो अधिकार मिले समझे जाने चाहिए थे, उनको अनदेखा कर उनकी भी कोई परवाह नहीं की जा रही है। यदि किसी विकल्प के अभाव में वह निष्कासन के विरुद्ध प्रतिवाद करता है तो उसे और भी बड़ी ताकत का सामना करना पड़ता है। जिसके परिणामस्वरूप बहुत से आदिवासी क्षेत्रों में टकराव की स्थिति पैदा हो गई है।

2.38 यह वन सम्बन्धी व्यवस्था अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और प्रगति से संबंधित एक महत्वपूर्ण मामला है। इसके बहुत से भेद और उपभेद हैं जिसमें से केवल कुछ के बारे में उल्लेख किया गया है। यह सवाल अनुसूचित जनजातियों के लिए संवैधानिक सुरक्षणों से भी विशेष रूप से जुड़ा है। अत: मैंने इस सम्बन्ध में एक विस्तृत जांच आरम्भ की है और भारत सरकार तथा राज्य सरकारों को पत्र भेजे हैं। मैं इस जांच के पूरा हो जाने पर यथाशीघ्र संसाधनों के उपयोग और उन पर अधिकार के प्रश्न पर एक विशेष रिपोर्ट प्रस्तुत करूंगा। यहां यह कहना ही पर्याप्त है कि आदिवासी लोगों के वन संसाधनों पर अधिकार जिसका वे अपना दावा करते हैं, की बात तो दूर उनके उपभोग की सहूलियतें भी बहुत कुछ खो बैठे हैं, जो संवैधानिक सुरक्षणों की भावनाओं के अनुरूप नहीं है।

2.39 तथापि अब यह जरूरी हो गया है कि इस संबंध में जब तक आधारभूत नीति मुद्दों पर निर्णय होने तक वन भूमि और लघुवनोपज के मामलों पर टकराव की वर्तमान स्थिति तत्काल समाप्त की जाए। मैंने यह प्रश्न मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र में कुछ क्षेत्रों की विशिष्ट स्थिति के संदर्भ में वहां की सरकारों के साथ उठाया है। मेरे मत से राज्य सरकारों को चाहिए कि वे आदिवासी लोगों के साथ दोनों ओर से यथा स्थिति बनाए रखने के आधार पर एक समझौता करें और एक कार्य योजना भी तैयार करें जिसमें निम्नलिखित तत्व शामिल हों—

(1) प्रत्येक बस्ती के लोगों के कब्जे की भूमियों की बस्ती-वार सूची तैयार की जाए जिसे इस प्रयोजन के लिए बुलाई गई एक खुली बैठक में भूमियों के कब्जेदारों द्वारा और वन तथा राजस्व विभागों के अधिकारियों द्वारा प्रमाणित किया जाएगा;

(2) ग्राम समाज और संबंधित विभागों के बीच एक करार किया जाए जिसके तहत (क) लोग अपनी ओर से यह वचन दें कि वे वन में खेती के आगे प्रसार को रोकेंगे और ऐसा करने में असमर्थ की स्थिति में दोषी व्यक्ति के बारे में उस प्रयोजन के लिए पदाभिहित अधिकारी को सूचना देंगे और (ख) सरकारी विभाग अपनी ओर से यह वचन दें कि (1) ऊपर वर्णित सूची में सम्मिलित भूमि के बारे में कोई मुकद्दमा नहीं चलाया जाएगा और (2) इन भूमियों के बारे में न्यायालयों में विभिन्न अवस्थाओं में बकाया पड़े पुराने मुकद्दमें वापस लिए जाएंगे।

(3) आपसी सहमति के आधार पर एक ऐसी कार्य योजना तैयार की जाए जिसमें पर्यावरणीय संतुलन की पुनः स्थापना और संबंधित लोगों के लिए स्थाई आर्थिक-आधार की व्यवस्था, दो समान उद्देश्य हों। इस कार्य योजना में निम्नलिखित बातें शामिल की जाएं—

(क) प्रत्येक समस्याग्रस्त गांव के लिए एक वैज्ञानिक भूमि उपयोग योजना तैयार की जाए;

(ख) ऐसी भूमि जिस पर भूमि उपयोग योजना के अनुसार खेती जारी रह सकती है, पात्र व्यक्तियों को भू-धारी अधिकार प्रदान किए जाएं,

(ग) उस भूमि को जिस पर खेती हो रही है परन्तु जो पर्यावरण की दृष्टि से खेती के लिए उपयुक्त नहीं है, भूमि उपयोग योजना में खती के लिए उपयुक्त यदि कोई भूमि उपलब्ध हो तो उससे अदला-बदली कर दी जाए और उन पर पात्र व्यक्तियों को भू-धारी अधिकार दिए जाएं;

(घ) खेती के अधीन शेष भूमियों के पर्यावरण की दृष्टि से उपयुक्त उपयोगा जैसे पेड़ों की खेती, के लिए एक योजना तैयार की जाए जिसमें अन्य तत्वों के साथ-साथ नीचे लिखे तत्व भी शामिल किए जाएं—

(1) उपयुक्त वित्तीय सहायता, (2) उस भूमि से वार्षिक उपज पर लोगों के भोगाधिकार की मान्यता और (3) पेड़ों की फसलों से साल-दर-साल क्रमिक आमदनी में व्यक्ति का हिस्सा और,

(4) लघु वनोपज एकत्र करने के आदिवासियों के अधिकार को उसकी सही भावना के अनरूप स्वीकार किया जाए और उस पर रायल्टी के रूप में लगाए गए सभी करों को समाप्त किया जाए और उस की खरीद फरोख्त के लिए ऐसी संरचना तैयार की जाए जिससे पूरे आदिवासी क्षेत्र में उन वस्तुओं की पूरे बाजार भाव पर खरीद सुनिश्चित की जाए।

2.40 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि भारत सरकार आदिवासी लोगों द्वारा वन भूमि पर तथाकथित अनधिकृत कब्जों और लघु वनोपज के संग्रह मूल्य के मुद्दों पर राज्य सरकारों से तत्काल बातचीत आरम्भ करें। जब तक आदिवासी लोगों की वनों के प्रबन्ध में भागीदारी के लिए दीर्घकालीन योजना तैयार नहीं हो जाती है तब तक पूर्वगामी पैराग्राफ में वर्णित योजना के अनुसार दोनों तरफ यथास्थिति बनाए रखने के आधार पर आदिवासी लोगों के साथ एक समझौता किया जाए।

कार्य कौशलों का सापेक्षिक मूल्यांकन

2.41 ऊपर वर्णित उत्पादन के साधनों, विशिष्ट रूप से भूमि और वन के साथ श्रमिकों के संबंध के सवाल के बाद दूसरा सवाल उनके श्रम के मूल्यांकन का है जिसमें वे दोनों गतिविधियां जिनमें लोग स्व-रोजगार में लगे हों या वे दूसरों की मजदूरी करते हों शामिल हैं। यह सवाल अनुसूचित जातियों के कल्याण से विशेष रूप से सम्बद्ध है क्योंकि वे अधिकतर संसाधन विहीन हैं और अपने जीवन-निर्वाह के लिए अपने श्रम और कौशल पर निर्भर हैं। यद्यपि, असंगठित क्षेत्र में मजदूरी का सामान्य प्रश्न राष्ट्रीय

श्रम आयोग के विचाराधीन हैं। तथापि, उसके कुछ पहलू विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों से जुड़े पहलू ऊपर से देखने में ही इतने स्पष्ट और अन्यायपूर्ण है कि उनको ठीक करने के लिए तत्काल सुधार की जरूरत है।

(क) खेतिहर मजदूर

2.42 जैसा पहले उल्लेख किया गया है देश में भूमिहीन मज्दूरों में लगभग 33 प्रतिशत लोग अनुसूचित जातियों के हैं और स्वयं अनुसूचित जातियों में 48.22 प्रतिशत लोगों का प्रमुख धंधा खेतिहर मजदूरी है। परम्परागत अर्थ-व्यवस्था में, जिसका मुख्य आधार खेती था, सामाजिक और आर्थिक संबंध बहुत ही अन्यायी थे। खेतिहर मजदूरों की हालत उसमें विशेष रूप से बहुत अधिक कमजोर थी और वे दासों या बंधुआ मजदूरों जैसा जीवन-निर्वाह करने के लिए मजबूर थे। जहां कुछ क्षेत्रों में इस स्थिति में सुधार अवश्य हुआ है फिर भी खेतिहर मजदूरों की सामान्य स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। वास्तव में खेतिहर मजदूरों के श्रम के मूल्यांकन से अन्याय शहरी और संगठित वर्गों के उत्थान के साथ न केवल गहरा ही गया है वरन् अब उसने युक्तियुक्तता का मुखौटा भी हासिल कर लिया है। कितनी विडम्बना है कि खेतिहर मजदूरी को, जिसमें न केवल मौसम या समय (दिन हो या रात) का कोई ख्याल किए बिना खुले मैदान में कठोर मेहनत के काम शामिल हैं वरन् जो अत्यन्त निपुणता का काम है, अकुशल श्रम का दर्जा दिया गया है और तदनुसार इसकी मजदूरी कम रखी गई है। इस प्रक्रिया में स्वयं अपने हाथ खेती करने वाले भूस्वामियों सहित खेत जोतने वाले सभी किसानों के दर्जों को गिराकर नितान्त अकुशल व्यक्तियों जैसा कर दिया गया है और राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में उसके अंशदान की उचित मान्यता मिलने से वंचित कर दिया गया है। कृषि कार्य के कौशल के मूल्यांकन में यह घोर अन्याय किसानों की लागत-उपज के हिसाब पर आधारित कृषि उत्पादन के गिरे मूल्यों के रूप में प्रतिबिम्बित होता है चूंकि उस हिसाब में खेती की मजदूरी की बहुत ही गिरी हुई दर अधिक से अधिक न्यूनतम मजदूरी दर ली जाती है जो स्वयं इसके बावजूद कि उन्हें कानूनी मान्यता प्राप्त है, बहुत कम होती है दोहन की यह प्रक्रिया छोटे और सीमान्त किसानों को सबसे अधिक प्रभावित करती है जो फिर अपने दाव हर उस खेतिहर मजदूर पर अपने शिकंजे को और भी कसने का प्रयास है जो परम्परागत अर्थव्यवस्था में पहले से ही मात्र हड्डी का ढांचा रूप बन कर रह गया था। इस प्रकार खेतिहर मजदूर दोहरे दोहन का सामना कर रहा है। जहां परम्परागत व्यवस्था का मारक फंदा जैसे का तैसा बना हुआ है वहीं अब वे आधुनिक क्षेत्र द्वारा चलाए जा रहे छद्म शोषण के और भी कुत्सित चक्र के शिकार भी बन गए हैं।

2.43 खेतिहर श्रमिक को उचित हकदारी का सवाल अनुसूचित जातियों के कल्याण के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अनसूचित जनजातियों के सदस्यों के लिए भी यह सवाल ऐसे सभी अंचलों में उतना ही समीचीन होता जा रहा है है जहां वे संसाधनों पर अपना अधिकार खोते जा रहे हैं और जहां स्वयं संसाधन ही खत्म होते जा रहे हैं जिससे वे वैकल्पिक रोजगार ढूंढने के लिए बाध्य हो रहे हैं। उदाहरण के तौर पर राजस्थान में उदयपुर से लेकर महाराष्ट्र में थाणे तक लगभग पूरी पश्चिमी आदिवासी पट्टी में यही स्थिति बन गई है।

2.44 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोग वास्तव में एक व्यापक प्रक्रिया के शिकार हैं जो पूरे असंगठित क्षेत्र में काम करने वालों को ही प्रभावित कर रही है। यह प्रक्रिया एक तरह से उस पहले वाली प्रक्रिया के अनुक्रम में ही चली आ रही है जिसने उपनिवेशवादी काल में हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को झंझोड़ डाला था। उन लोगों में जो संगठित क्षेत्र में हैं अपनी स्थिति की न्यायसंगतता और दूसरों के प्रति अन्यायी प्रवृत्ति इतनी गहराई से जमी है कि उसके कारण अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित व्यक्तियों के लिए उचित मजदूरी ही नहीं अपितु न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने के लिए मूलभूत सिद्धांत पर भी दुष्प्रभाव पड़ा है। राज्य द्वारा संगठित क्षेत्र के सभी कर्मचारियों के लिए यह सिद्धांत सभी दर स्वीकार किया गया है कि परिवार में एक व्यक्ति की आय पूरे परिवार के समुचित स्तर पर जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त होनी चाहिए। तथापि, असंगठित क्षेत्र में काम करने वालों के लिए कोई ऐसा सिद्धांत नहीं है। यहां पर यह स्मरणीय है कि असंगठित क्षेत्र में काम करने वालों के सामने कई और बाधाएं भी हैं जैसे कि उन्हें न केवल रोजगार की अनिश्चितता का सामना करना पड़ता है वरन् विभिन्न प्रकार के ऐसे लाभों, विशेषाधिकारों और सुविधाओं से भी वंचित रह जाते हैं, जो नियमित रोजगार के साथ जुड़े हुए हैं। 11 रु० प्रति दिन की न्यूनतम मजदूरी को कैसे न्यायोचित ठहराया जा सकता है, जिससे मजदूर को वर्ष में 300 दिन काम मिलने और काम करने पर केवल 3,300 रुपए की वार्षिक आय बने? इतनी कमाई कर लेना भी अपने आप में एक असाधारण कृति होगी। इतनी आमदनी होने पर भी संबंधित व्यक्ति निर्धनता रेखा को पार करने की दिशा में केवल आधी दूर तक ही पहुंच पाएगा। यदि इसमें रोजगार की अनिश्चितताओं को और जोड़ दें तो स्थिति और भी बुरी होगी जो सच में आज असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले सभी लोगों की नियति सी बन गई है। यही नहीं कभी-कभी कानून और उसके अधीन बनाए गए नियम भी कपटपूर्ण प्रथा के लिए गुंजाइश उत्पन्न कर देते हैं जिससे पारिश्रमिक का स्तर घट जाता है। उदाहरण के लिए गुजरात में न्यूनतम दैनिक मजदूरी 15 रुपए है, परन्तु मजदूर को आधे दिन के लिए

रखा जा सकता है । महाराष्ट्र में वन श्रमिकों को एक दिन में छह घंटे के लिए काम पर रखा जा सकता है और उसी अनुपात से कम मजदूरी का भुगतान किया जा सकता है।

2.45 इसके परिणाम स्पष्ट हैं जिनके पहले से अनुमान लगाया जा सकता है। अनियत मजदूरी पर निर्भर परिवार के सभी सदस्यों को मात्र अपना जीवन-धारण के लिए ही जिस दिन काम मिले उस दिन कार्य के लिए दौड़ने की मजबूरी है। फिर ऐसे परिवारों के बच्चों से वह अपेक्षा कैसे की जा सकती है कि वे स्कूल में जाएंगे अथवा जब वापसी पर अपनी माताओं से लाड-दुलार की अपेक्षा कर सकेंगे । इस हाल में जीवन पर्यन्त कठोर श्रम करने के बाद वयोवृद्ध लोगों को भी सु-अपेक्षित विश्राम कैसे मिल सकता है चाहे उनमें से कुछ लोगों को पेंशन भले ही मिल जाए । सामान्य रूप से असंगठित क्षेत्र में काम करने वालों और विशिष्ट रूप से खेतिहर मजदूरों के लिए कानूनी न्यूनतम मजदूरी का संविधान में प्रतिष्ठित उचित मजदूरी के लिए नीति निर्देशक सिद्धांतों से दूर का भी नाता नहीं है। कानूनी मजदूरी की ये बहुत ही गिरी हुई दरें उन दोहरे मानकों को बेनकाब करती हैं, जो मजदूरी निर्धारण के बारे में स्वयं राज्य की महत्वपूर्ण नीति में ही अन्तर्निहित हैं । **यह हमारे संविधान के उस आधार-भूत ढांचे का स्पष्ट उल्लंघन है, जो समता, निष्पक्षता और न्याय की आधार भूत मान्यताओं के ईंट-गारे से बना है।**

2.46 इसके अलावा उन बहुत से दूसरे व्यवसायों की स्थिति जो अरुचिकर और कठिन मेहनत के हैं तथा जिन्हें परम्परा से अनुसूचित जातियों के लोगों को करना पड़ता है, वैसी ही है या उससे भी बदतर है इन कामों के लिए पारिश्रमिक का आधार बहुत ही शोषण मूलक रहा है और इसमें जोर-जबरदस्ती की दुर्भावना भी थी। आधुनिक संगठनों में भी इन सेवाओं में से अधिकांश सेवाएं उन्हीं जातियों द्वारा संपादित की जा रही हैं। दुर्भाग्य से उनके बारे में परम्परागत समाज से प्रचलित विकृतियां तथा कथित आधुनिक क्षेत्र में भी चाहे परिष्कृत रूप में ही सही अपना ली गई हैं। इसलिए परम्परागत कौशलों का अन्यायी मूल्यांकन जारी है। **शोषण मूलक सम्बन्ध न केवल बने हुए हैं वरन् कुछ मामलों में वे और भी प्रतिकूल होते जा रहे हैं । जब तक कृषि सहित परम्परागत व्यवसायों में लगे लोगों के कौशल को समुचित मान्यता नहीं दी जाती है और जिस कठोर श्रम वाले कार्य में वे लगे हैं उसे उचित सम्मान नहीं दिया जाता है तब तक यह अन्याय उस व्यवस्था के एक अनन्य भाग के रूप में जारी रहेगा जिसका कानून समर्थन भले ही करे परन्तु फिर भी संविधान के मूल सिद्धांतों के विपरीत होगा।** मैं एक उदाहरण के रूप में इनमें से तीन व्यवसायों की स्थिति आगे प्रस्तुत कर रहा हूं।।

प्रसूति सेवा

2.47 गावों में आज भी परम्परागत दाई जन सामान्य में सभी वर्गों के लिए एक आवश्यक सेवा में पहले जैसी लगी हुई है। बहुत से ग्रामीण अंचलों में राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा का लाभ पहुंचा ही नहीं है और उन स्थानों में भी जहां प्रसूति और शिशु-देखभाल की सेवाएं स्थापित हो चुकी हैं, मां और शिशु की देखभाल का बड़ा हिस्सा, विशिष्ट रूप से वे काम व्यक्तिगत सेवा जैसे होते हैं और प्रसव कराने से सम्बद्ध होते हैं, दाई द्वारा ही किए जा रहे हैं। इस सेवा के बदले में उसे छोटे उपहार ही मिलते हैं जो धीरे-धीरे और भी छोटे और नगण्य होते जा रहे हैं क्योंकि उसकी सेवा लेने वालों की माली हालत, जो वैसे भी गरीब हैं, निरन्तर बिगड़ती जा रही है। कोई कारण नहीं कि इस आवश्यक सेवा के लिए पारिश्रमिक जिस परिवार में दाई की सेवा की जरूरत हो, उसकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर रहे और दाई को राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के गांव स्तरीय आधार एक अभिन्न अंग के रूप में न स्वीकार किया जाए। इस सम्बन्ध में यदि सभी परम्परागत दाइयों को उचित रूप से प्रशिक्षण दिया जाए और प्रसूति सेवाओं के आधुनिक पहलुओं से परिचित कराया जाए तो यह न केवल उनके साथ न्याय होगा अपितु राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के हित में भी होगा। उन्हें नए उपकरण भी उपलब्ध कराए जाने चाहिएं। यह सही है कि इस संबंध में समय-समय पर बहुत से कार्यक्रम लिए गए हैं। परन्तु उन सब में राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा में दाई की स्थिति के बारे में आधारभूत प्रश्न और उसकी न्यायसंगत हकदारी की उपेक्षा की गई है जिसका परिणाम यह हुआ है कि उनमें दाइयों ने रुचि नहीं दिखाई। इन सुधारों में अत्यन्त विलम्ब हो चुका है और उन्हें तुरन्त लागू करना जरूरी है। राज्य सरकारों को परम्परागत दाइयों को राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के सदस्यों के रूप में उनकी सेवाओं के लिए इस संबंध में बनाए गए उपयुक्त नियमों के अनुसार पारिश्रमिक की व्यवस्था करनी चाहिए।

मेहतर

2.48 भंगी-मुक्ति का कार्यक्रम चींटी की चाल से चल रहा है। विडम्बना यह है कि इस कार्यक्रम में मेहतरों की समस्याओं की अनदेखी की गई है और ध्यान मुख्यतः शुष्क शौचालयों को पानी वाले शौचालयों में परिवर्तित करने पर केन्द्रित रहा है जिसमें पूंजी लगती है और सहायता मालिक की होती है। जहां इन प्रयासों को पूरी ताकत लगाकर चालू रहना चाहिए, वहीं उन लोगों की समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए जो इस व्यवसाय से निकल जाते हैं और इस बीच की अवधि में उसमें लगे रहना पड़े। **इसी सेवा को तत्काल व्यावसायिक आधार दिया जाना चाहिए और उसके जातिगत मूल-आधार को धीरे-धीरे समाप्त कर दिया जाना चाहिए।** इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रथम कदम के रूप में एक समयबद्ध कार्यक्रम नगरपालिका वाले सभी कस्बों में लिया जाना चाहिए जिसमें दो वर्ष से अधिक समय नहीं लगना चाहिए। इस कार्यक्रम में मेहतरों के व्यक्तिगत जीवन को उनके व्यावसायिक जीवन से उसी

प्रकार से अलग थलग करने की व्यवस्था हो जिस प्रकार कोयला उत्खनन जैसे आधुनिक क्षेत्र के अरुचिकर तथा कठोर मेहनत वाले कार्यों में लगे अन्य कर्मचारियों के लिए किया गया है। मेहतर के जीवन यापन की परिस्थितियों को जहां कहीं भी वे क्यों न हों, सुधारने के लिए तत्काल विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए । इसके लिए कोई कारण नजर नहीं आता कि जो लोग एक नगर को स्वच्छ रखते हैं उन्हें इस नगर की ओर से परस्पर दायित्व के रूप में उपयुक्त जीवन स्तर सुनिश्चित करने का अधिकार न माना जाए। सभी नगरों में ऐसे पारनमन प्रकोष्ठ बनाए जाएं जहां पर सफाई का काम करने वाले सामान्य नागरिक की तरह से पहुंचें और उस प्रकोष्ठ में सफाई काम करने के लिए उपयुक्त वर्दी पहन लें और सफाई के उपकरण वहां से ही लेकर अपने काम करने के लिए सीधे वहीं से जाएं। सफाई का काम करने के बाद वहीं वे उसी प्रकोष्ठ में आकर सफाई के उपकरण जमा करा दें। वर्दी उतारें और नहा धो कर सामान्य स्वच्छ पोशाक पहन लें। और फिर बिना किसी अलग पहचान लिए हुए ठीक किसी भी साधारण नागरिक की तरह वहां से चले जाएं। मेहतर समुदाय के सदस्यों को विशेष रूप से इतना विकासित किया जाना चाहिए कि उनमें अच्छे स्तर की सभी सुविधाएं उपलब्ध हो जाएं और रिहायशी इलाके वर्तमान नगर की अन्य आधुनिक कालोनियों के समकक्ष बन जाएं। इसके अलावा इस समुदाय के लोगों के लिए अन्य सामान्य रिहायशी कालोनियों में आवास की सुविधा के लिए आरक्षण के आधार पर रहने के लिए वहां पहुंचने में मदद की जानी चाहिए

2.49 एक दूसरा कदम जिसे इससे भी अधिक महत्वपूर्ण माना जा सकता है वह है अगली पीढ़ी को इस अमानवीय विरासत का शिकार होने से बचाना । इस संबंध में दो बातें आवश्यक होंगी। प्रथम बच्चों को उस स्वभाव-निर्माण वाली कच्ची उम्र में इस काम में पड़ने की इजाजत नहीं होनी चाहिए जिससे कुछ लोगों को अपने जन्म की परिस्थिति के संयोग मात्र के वशीभूत होकर यह अरुचिकर काम रुचिकर न लगने लगे। मेरे मत में मेहतर का कार्य करने वाले परिवारों के बच्चों के लिए शोषण के खिलाफ संवैधानिक संरक्षण की सबसे अधिक आवश्यकता है। 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को मेहतर का काम करने का कानूनी निषेध होना चाहिए।

2.50 हमारे देश में शिक्षा नई पीढ़ी को उनके माता-पिता के व्यवसायों से अलगाव के लिए एक अत्यन्त सशक्त उपकरण सिद्ध हुई है जिसके ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के लिए गंभीर परिणाम हुए हैं। किन्तु मेहतर समुदाय मामले में वही प्रक्रिया एक बड़ा वरदान बन सकती है, क्योंकि इससे बच्चों को इस परम्परा की बेड़ियों से मुक्ति मिलेगी। छठी योजना में मेहतर के काम में लगे लोगों के बच्चों के लिए छात्रवृत्ति की एक योजना आरंभ की गई थी, किन्तु इसमें मिडिल स्कूल के प्रभावनीय स्तर के बच्चों को ही शामिल किया गया। इस प्रकार इस योजना में प्राथमिक स्कूलों में 6–11 वर्ष तक की उस महत्वपूर्ण आरंभिक वय के बच्चे, जब उनका उस व्यवसाय से पहला परिचय होता है घट गए। उस कच्ची उम्र में उन्हें इससे दूर रखने के लिए कोई अन्य प्रयास भी नहीं किया गया है। 14 वर्ष तक की आयु के ऐसे सभी बच्चों के लिए, जिनके माता पिता परम्परागत मेहतर का काम में लगे हों, आवासीय विद्यालयों में अनिवार्य तथा मुफ्त शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। इस काम के व्यवसायीकरण के लिए आवश्यक कुछ अन्य उपाय ये हैं : (1) मेहतर के काम में परम्परागत जजमानी प्रणाली का खत्म किया जाना और (2) मेहतर के काम को एक कठोर तथा अरुचिकर कार्य के रूप में अभिस्वीकृति जो पारिश्रमिक के मामले में सरकार के समूह ग के बराबर माना जाए। इस प्रकार से व्यवसायीकृत सफाई सेवा को चलाने के लिए आवश्यक राशि स्थानीय निकाय के राजस्व पर प्रथम प्रभार के रूप में मानी जानी चाहिए।

चमड़े का काम करने वाले

2.51 जहां चमड़े का काम करने वालों को परम्परागत अर्थव्यवस्था में एक नीच स्थिति में रहने के लिए बाध्य किया गया था, अब उन्हें सब तकनीकी में नई प्रगति और संगठित क्षेत्र की अर्थ शक्ति का सामना करते हुए संरचनात्मक परिवर्तन और आधुनिकीकरण की अत्यन्त अन्यायी प्रक्रियाओं से जूझना पड़ रहा है। पहले तो उन जातियों के सदस्यों को जो चमड़े के काम में लगी हुई थी उनके तैयार हुए माल के व्यापार से धीरे-धीरे अलहदा कर दिया गया। चमड़े की वस्तुओं के निर्माण में मशीनों का प्रयोग आरम्भ होने के साथ अन्य जातियों के सदस्य भी इस व्यवसाय में घुस गए हैं। किन्तु मरे जानवरों की खाल उतारना भी अनुसूचित जातियों के सदस्यों का ही दायित्व बना रहा। बूचड़खानों की स्थापना के साथ इस व्यवसाय के उन हिस्सों में जिनका आधुनिकीकरण हो गया है और आमदनी अच्छी है प्रशिक्षित तकनीशियन घुस रहे हैं। पशुओं की हड्डियां और खालों को एकत्र करने का काम भी ठेकेदारों के माध्यम से किया जा रहा है जिसमें परम्परागत काम करने वालों का दर्जा गिरकर केवल मजदूरी करने वालों का रह गया है।

2.52 अरुचिकर व्यवसाय का अपने जातिगत आधार पर से कटते जाना वांछनीय है परन्तु खेद यह है कि वह प्रक्रिया आंशिक रीति से तथा चुनिन्दा ढंग से घटित हो रही है। चमड़े का कामकाज परम्परागत व्यवसाय के द्विधात्मक आधुनिकीकरण से सबसे अवांछनीय रूप को उजागर करने वाला उदाहरण है। विडम्बना तो यह है कि राज्य सरकारों के कार्यक्रमों में मुख्य बिन्दु परम्परागत से चमड़े के काम में लगे हुए लोगों की समस्याएं न होकर चमड़े उद्योग के विकास के बारे में चिन्तित हैं। जैसा इन निगमों के नामों से ही स्पष्ट है। आवश्यक यह है कि (1) परम्परागत कौशल के मूल्य को स्वीकार किया जाए (2) उनके काम को संगठित क्षेत्र के अन्य व्यवसायों के बराबर लाभकारी बनाया जाए और (3) इन व्यवसायों में लगे लोगों की ऐसे लोगों के साथ जिन्हें अच्छी शिक्षा तथा वित्तीय संसाधनों का लाभ प्राप्त है, प्रतियोगिता के भंवर में जूझने के लिए छोड़ देने की बजाय उन्हें नए कौशल

हासिल करने में सहायता दी जाए। यदि मरे जानवरों को उठाने से लेकर चमड़े की बनी वस्तुओं के अन्तिम क्रय विक्रय तक पूरे काम को व्यावसायिक आधार पर संगठित किया जाए तो अनुसूचित जातियों के सदस्य आधुनिक कौशल तथा नई तकनीक में प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद उनमें उस जाति के सदस्य के रूप में शामिल होने के बजाय अपने कौशल के आधार पर व्यक्ति के रूप में शामिल होने के लिए सामर्थ हो सकते हैं। इस व्यावसायिक व्यवस्थाओं में अन्य जातियों के सदस्यों को भी जगह मिलेगी परन्तु वह व्यवसाय के केवल उन हिस्सों तक ही सीमित नहीं रहेगी जो अधिक लाभकारी और अधिक रुचिकर है। अन्य जातियों के कुछ सदस्य व्यवसाय के अरुचिकर कामों में अधिक आमदनी की संभावना से आकर्षित होकर उनमें भी शामिल होने के भी इच्छुक होंगे। दूसरी तरफ परम्परा से इस व्यवसाय में ही लगे समुदायों के सदस्य राज्य की सहायता से आवश्यक कौशल प्राप्त करके धीरे धीरे व्यवसाय के उन हिस्सों में भी प्रवेश करते जाएंगे जो अब कम अरुचिकर और अधिक लाभप्रद होते जा रहे हैं।

2.53 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि

संघ सरकार असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के जिनमें अनुसूचित जातियों/जनजातियों का एक बड़ा हिस्सा शामिल है, के काम की स्थिति सुधारने के लिए तत्काल उपाय करें। इसमें उन आर्थिक क्रियाकलापों पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाए जो परम्परा से अनसूचित जातियों तथा जनजातियों से जुड़ी हुई हैं। यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि (1) उन सभी व्यवसायों में मजदूरी न्यायसंगत हो और उनकी दरों का निर्धारण उनके विरुद्ध अन्तर्निहित पूर्वाग्रह से प्रभावित न हो और (2) उसमें निम्न तत्वों का उचित और भार आंका जाए--(क) काम से संबंधित कौशल (ख) उसमें लगने वाले श्रम की कठोरता और (ग) काम करने की अरुचिकर स्थिति राष्ट्रीय मजदूर आयोग के निष्कर्षों और सिफारिशों की प्रतीक्षा किए बिना ही विशेष रूप से नीचे बताई गई न्यूनतम कार्यवाही तत्काल की जाए।

(क) न्यूनतम मजदूरी

(1) कानूनी न्यूनतम मजदूरी तक में वर्तमान अन्यायी स्थिति को भी समाप्त किया जाना चाहिए। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम में इस प्रस्ताव का एक उपबन्ध होना चाहिए कि सभी आर्थिक क्रियाकलापों में साधारण मजदूरों की दैनिक मजदूरी इस सिद्धांत का अनुसरण करते हुए निर्धारित की जाएगी कि परिवार के एक सदस्य की आय पूरे परिवार के जीवन-यापन के लिए पर्याप्त हो।

(2) काम की अवधि में कटौती के अनुपात से दैनिक मजदूरी की दरों में कटौती उन स्थितियों को छोड़कर निषिद्ध की जाए जहां काम निरन्तर नहीं हो और तत्काल उपलब्ध काम इतना नहीं हो जो एक व्यक्ति को भी पूरे दिन पूरी तरह व्यस्त रखने के लिए पर्याप्त हो।

(ख) मेहतर का काम

एक ओर मल को सिर पर उठाने की प्रथा को उन्मूलन करने के लिए सभी संभव प्रयास किए जाने चाहिए, उसके साथ ही मेहतर के काम को व्यावसायिक आधार पर तत्काल व्यवस्थित किया जाना चाहिए। इस योजना में विशिष्ट रूप से निम्नलिखित सम्मिलित किए जाएं।

(1) मेहतरों का पारिश्रमिक सरकार के समूह ग कर्मचारियों के बराबर निर्धारित किया जाए

(2) मेहतर के काम में लगे व्यक्तियों का व्यक्तिगत जीवन उनके व्यावसायिक जीवन से पूर्ण रूप से पृथक किया जाए

(3) 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को मेहतर के काम में लगाने को कानूनी रूप से निषिद्ध किया जाए, और

(4) 14 वर्ष तक की आयु के ऐसे सभी बच्चों के लिए जिनके माता-पिता मेहतर के काम में लगे हैं, आवासीय संस्थानों में अनिवार्य तथा मुफ्त शिक्षा दी जाए।

(ग) परम्परागत दाईयां

परम्परागत दाईयों को राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के एक अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। उन्हें उपयुक्त रूप से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए और आधुनिक उपकरण उपलब्ध कराए जाने चाहिए। गांवों में दाईयों को एक निर्धारित पारिश्रमिक और यथोचित मानदेय, जैसे उनके द्वारा कराए गए प्रति प्रसव के लिए 100 रुपए का मानदेय, दिया जाना चाहिए।

(घ) चमड़ा कर्मकार

चमड़े के काम से संबंधित पूरे व्यवसाय, चमड़ा उतारने से लेकर चमड़े की वस्तुओं के बनाने तक, को एक व्यवसाय के रूप में सहकारी आधार पर संगठित किया जाना चाहिए ताकि चमड़े का काम और उसके जातिगत आधार का संबंध औपचारिक रूप से समाप्त हो जाए। इस संबंध में निम्न कार्यवाही विशेष रूप से की जानी चाहिए--(1) इस व्यवसाय में से सभी ठेकेदारों/बिचौलियों को हटाया जाए (2) चमड़े के साधारण काम करने वाले के कौशल को ऊंचा किया जाए और उन्हें नई तकनीक के लाभ उपलब्ध कराए जाएं, और (3) एक सुदृढ विपणन संरचना स्थापित की जाए।

3
प्रगति

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की प्रगति के लिए राज्य द्वारा किए गए कार्यों का मूल्यांकन परम्परागत ढांचे के संदर्भ में उनके विकास की समीक्षा से आरम्भ करना उचित होगा। किसी समुदाय के सदस्यों को प्रगति के दो पहलू होते हैं—निरपेक्ष प्रगति तथा राष्ट्र में अन्य लोगों की प्रगति की तुलना में सापेक्ष प्रगति निरपेक्ष प्रगति का मूल्यांकन कुछ आसान होता है। उस स्थिति में विशेष रूप से जब अनुसूचित जातियों जैसे संबंधित व्यक्ति शुरू में निम्नतम स्तर पर हों। ये लोग संसाधनों पर अपने अधिकारों से ही वंचित नहीं कर दिए गए थे वरन श्रमिक कारीगर, व्यवसाय के रूप में भी उनका घोर शोषण हो रहा था। परन्तु अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की स्थिति नितान्त भिन्न रही है। अभी हाल तक अपने अपने क्षेत्रों में संसाधनों पर उनका पूर्ण तथा प्रभावी अधिकार बना रहा है। इन अंचलों के संसाधनों के वासियों द्वारा उपयोग और उनके अधिकारों पर अन्य लोगों द्वारा गंभीर अतिक्रमण तो उन अंचलों के खुलते जाने के बाद ही उसी के कारण हुआ है। इन अतिक्रमकों में न केवल निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र दोनों ही की विभिन्न संस्थाएं वरन स्वयं राज्य भी शामिल है। अतएव जहां सिंचित क्षेत्र जैसे कुछ मदों में क्षेत्र की प्रगति के सूचक उन्नति होना दर्शाते हैं, वहीं भूमि के स्वामित्व के महत्वपूर्ण प्रश्न के संबंध में अवनति हुई है। ऐसी स्थिति में कुछ मदों में प्रगति दिखाई देने के बावजूद कोई समुदाय निरपेक्ष रूप से भी पहले से अच्छी हालत में नहीं हो सकता है।

3.2 विकासशील अर्थ व्यवस्था में किसी समुदाय की प्रगति सही अर्थों में तो राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में उसकी सापेक्ष स्थिति के आधार पर ही आंकी जानी चाहिए। उसकी सापेक्ष स्थिति इस तथ्य पर निर्भर होगी कि उसकी अर्थव्यवस्था की कुल विकास दर क्या है, और उसमें संबंधित समुदाय को कितना हिस्सा मिला है। हमारे पास ऐसे कोई व्यवस्थित अध्ययन और यहां तक कि मोटे अनुमान भी उपलब्ध नहीं है जिनके आधार पर समय के साथ बदलती अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सापेक्षिक स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। तथापि कुछ मामलों में कुल स्थिति प्रायः सुविदित है, जिन्हें इन समुदायों को प्रभावित करने वाले सापेक्ष परिवर्तनों और दीर्घकालीन प्रक्रियाओं के मोटे तौर पर मूल्यांकन के लिए युक्तियुक्त आधार के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

3.3 हमारी राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के प्रायः दो हिस्से हैं—संगठित क्षेत्र और असंगठित क्षेत्र। संगठित क्षेत्र में आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र और उससे संबद्ध अवस्थापना, वाणिज्यिक संगठन और आर्थिक संस्थान, आधुनिक सामाजिक और व्यावसायिक सेवाएं और राज्य के विभिन्न उपकरण शामिल हैं। असंगठित क्षेत्र में कृषि और उससे संबद्ध गतिविधियां, ग्रामीण तथा घरेलू उद्योग, परम्परागत व्यावसायिक सेवाएं इत्यादि शामिल हैं। आधुनिक क्षेत्र हमारी अर्थ व्यवस्था में अग्रणी क्षेत्र के रूप में हैं जो असंगठित क्षेत्र की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ रहा है। आधुनिक विज्ञान और तकनीक से तथा संगठन का भी अधिकतर लाभ इसी क्षेत्र को मिल रहा है। दूसरी ओर असंगठित क्षेत्र की बहुत सारी गतिविधियों को विकास के उलटे प्रहारों का सामना करना पड़ रहा है। अतः इन दो क्षेत्रों के बीच की खाई तेजी से बढ़ रही है।

3.4 हमारी अर्थव्यवस्था के इस संरचनात्मक बदलाव की प्रकृति का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि संगठित क्षेत्र में नए अवसर बहुत कुछ में से उन लोगों को मिला है जिन्हें शक्ति के इन नवोदित शक्ति केन्द्रों के नजदीक होने का सुअवसर था और जो अपनी वंशानुगत स्थिति या शिक्षा के अधिक अच्छे अवसर मिलने के कारण उस क्षेत्र में प्रवेश के लिए पहले तैयार होकर आगे बढ़ सके। शिक्षा के स्तर में बढ़ते अन्तराल और ग्रामीण क्षेत्रों में अच्छी शिक्षा संस्थाएं न होने के कारण केवल सम्पन्न वर्ग, विशेष रूप से वे वर्ग जिनके पास भूमि थी, ही अपने बच्चों को ऊंची शिक्षा के लिए बाहर भेज सकते थे। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लोगों को संगठित क्षेत्र के अपेक्षाकृत एक छोटे से हिस्से में पैर रखने का मौका मिल सका अर्थात सरकार और सार्वजनिक क्षेत्र के अधीन सेवाओं में जिनमें उनके लिए सकारात्मक विभेद का प्रावधान किया गया है। इस तरह शिक्षा सुविधाओं और प्रतिस्पर्धा में प्रारम्भिक स्थिति के इस भारी अन्तर के कारण संगठित क्षेत्र में नए अवसरों के लिए जिनका अधिकांश भाग ऊंची जाति के सदस्यों को मिल गया है, असमान प्रतियोगिता का माहौल बन गया है। इस प्रकार क्षेत्रों के बीच और स्वंय उन क्षेत्रों के भीतर हो रहे ध्रुवीकरण का आधार जातिगत सामाजिक बन गया है।

3.5 जहां संगठित क्षेत्र में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को मिलने वाले लाभ अपेक्षाकृत सीमित है, परम्परागत क्षेत्र में भी स्थिति इससे बहुत भिन्न नहीं है। पहले हम देख चुके हैं कि इस परम्परागत व्यवस्था की सामाजिक और आर्थिक निर्योग्यताएं, विशेष रूप से आर्थिक निर्योग्यताएं खत्म नहीं हुई हैं। इसके अलावा सामान्य रूप से असंगठित क्षेत्र में और विशेषकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था ध्रुवीकरण बढ़ रहा है। ऊंची जातियों के सदस्यों का न केवल आरम्भ में ही अधिकांश संसाधनों पर स्वामित्व था वे अब तकनीक, अर्थ और प्रभाव को नवोदित शक्ति का उपयोग कर अपने स्वामित्व को समेकित करने और उसे बढ़ाने की अच्छी स्थिति हैं। समान्य रूप से संगठित क्षेत्र में विशेष रूप से सरकारी प्रतिष्ठानों में इन्हीं वर्गों के लोगों का प्रवेश हुआ है जिनसे उनकी स्थिति बहुत अधिक मजबूत हो गई है।

3.6 इसके विपरीत सामान्य रूप से पूरी ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में और विशेष रूप से कृषि क्षेत्र में आर्थिक अपहरण की प्रक्रियाएं कमजोर वर्ग के सदस्यों को विशेष रूप से अनुसूचित–जातियों के सदस्यों को बहुत बुरी तरह से प्रभावित कर रही हैं। जैसा कि भूमिहीन मजदूरों की स्थिति से स्पष्ट है । अतः एक ओर जहां ऊंची जातियों के लोग संगठित क्षेत्र से अपने संबंध सूत्रों का लाभ उठा रहे हैं और उन दोनों क्षेत्रों के बीच ध्रुवीकरण से उत्पन्न आकर्षण शक्ति के प्रभाव से ग्रामीण क्षेत्रों से निकल कर उसमें सम्मलित होते जा रहे हैं, वहीं कमजोर वर्गों के सदस्य विशेष रूप से अनुसूचित जातियों के सदस्यों की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के भीतर ध्रुवीकरण से उत्पन्न विकर्षण शक्ति के प्रभाव से ग्रामीण क्षेत्रों से बाहर धकेलते जा रहे हैं । इस प्रकार वे बहुतकर नगरीय क्षेत्रों में असंगठित क्षेत्र की संज्ञाहीन भीड़ के रेले में जुड़ते जा रहे हैं । **इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों द्वारा सेवाओं में आरक्षणों की मार्फत प्राप्त किए गए लाभों के सिवाय राष्ट्रीय अर्थ–व्यवस्था में उनकी सापेक्षिक स्थिति बिगड़ी है । वास्तव में मझोली जातियों के सदस्य जो देश में शिक्षित व्यक्तियों की दूसरी लहर में ही शामिल हो पाए हैं उस संगठित क्षेत्र में जहां राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अधिकांश नए अवसर हैं, प्रवेश पाने में असमर्थता ही सेवाओं में आरक्षण के लिए, जो कि विशेष सुविधा वाले आधुनिक और संगठित क्षेत्र में प्रवेश का एकमात्र तरीका है, जहां–तहां होने वाले संघर्षों का मूल कारण हैं, यद्यपि सही अर्थ में सामान्य जन के लिए नमित्तिक उपलब्धि के अलावा उसका कोई लाभ नहीं ।**

3.7 अनुसूचित जनजातियों की स्थिति, उत्तर-पूर्व के पर्वतीय क्षेत्रों को छोड़कर, इससे भी खराब है । वे अभी तक भी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के संगठित क्षेत्र में भाग लेने के लिए तैयार नहीं हैं और सार्वजनिक सेवाओं के सीमित क्षेत्र में भी उनका प्रतिनिधित्व बहुत थोड़ा है । परन्तु उन्हें सभी प्रकार के विकास के कड़े उलट प्रहारों का सामना करना पड़ रहा है । जैसे जैसे उनके क्षेत्र खुलते जा रहे हैं, अब संगठित क्षेत्र का तंतु-जाल इन दूर दराज के क्षेत्रों में भी धीरे धीरे फैलता जा रहा है । **इस प्रकार वे नए संचार मार्गों के किनारे की अपनी भूमिका खोते जा रहे हैं और जहां कहीं भी नए अवसर पैदा हो रहे हैं वहां से निरन्तर पीछे हटना पड़ रहा है। पहले तो नए प्रतिष्ठानों के द्वारा भूमि अर्जित हो जाने पर और उसके बाद प्रवासियों के उस रेले के सामने जो इन क्षेत्रों में घुसकर चारों ओर फैलता जाता है, आदिवासी को धकेल कर बाहर कर दिया जाता है, या अपने आप भाग जाने के लिए मजबूर कर दिया जा रहा है। ये नए घेरे समृद्धि के टापू और भारी शक्ति और प्राधिकार के केन्द्रों के रूप में उभर रहे हैं जिसमें आदिवासी के लिए कोई स्थान नहीं है या फिर वह नई अर्थव्यवस्था में और नई सामाजिक व्यवस्था में घुटनों के बल चलकर उसके अधः-स्तर में ही जगह बना सकता है । आदिवासी लोग सभी प्रकार से घाटे में हैं और विडम्बना यह है कि वे एक ऐसी व्यवस्था की लूटपाट के शिकार बन गए हैं जिसे बड़ी सरलता से अवश्यंभाविता की आभा से मंडित कर दिया जाता है जिससे इन नीतियों को बनाने के लिए जिम्मेदार लोगों को पशोपेश की स्थिति या मन की टीस की संभावना से भी निजात मिल जाए ।**

3.8 मैं अब सापेक्षिक निगति के निहित अर्थ के विवेचन पर फिर लौटना चाहूंगा जिसका सामान्यतः अनुसूचित ज्जातियों तथा जनजातियों के सदस्य सामना कर रहे हैं जबकि उनमें से अधिकांश विशेषकर अनुसूचित जनजातियों के लोगों की तो निरपेक्ष रूप में भी निगति हो रही है । कुछ भी हो, कुछ लाभ भी हुआ है, यद्यपि, उनका आयाम व्यापक नहीं है और गति अपेक्षाकृत धीमी है इसके अलावा बृहत्तर राष्ट्रीय ढांचे के प्रसंग से उनकी स्थिति के बारे में स्पष्ट नजरिया प्रस्तुत करने के प्रयास करने के पहले यह आवश्यक होगा कि पहले बताए गए परम्परागत ढांचे में जो लाभ मिले हैं और उनको जो हानि उठानी पड़ी, उसका भी जायजा लिया जाए । इस धूप छांह के मिले जुले परिदृश्य में अधिक अनुकूल बिन्दुओं से आरम्भ करना उपयोगी होगा ।

परम्परागत ढांचे में प्रगति

(क) शिक्षा

3.9 यदि निरपेक्ष संदर्भ में देखा जाय तो सबसे उल्लेखनीय उपलब्धि शिक्षा के क्षेत्र में रही है । अनुसूचित जातियों और जन-जातियों में साक्षरता के स्तर में 1971–81 के दशक में क्रमशः लगभग 45.74 प्रतिशत और 32.02 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है । यद्यपि उसी अवधि में उनकी साक्षरता दर और अन्य समुदायों की दर के बीच अन्तर भी बढ़ा है । इन समुदायों के बच्चों के सभी स्तरों पर भर्ती की दर में भी वृद्धि हुई है । प्रारम्भिक स्तर पर अनुसूचित जातियों और जनजातियों के बच्चों की दर्ज संख्या का अनुपात उनकी जनसंख्या के अनुपात के अनुसार ही है । परन्तु मिडिल स्कूल के स्तर विशेषकर अनुसूचित जातियों के बच्चों में दर्ज-संख्या तेजी से कम होती दिखाई देती है यद्यपि उसके बाद वह स्थिर हो जाती है । 1986–87 में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के दस लाख से अधिक छात्र मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियां प्राप्त कर रहे हैं । मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियों को केन्द्रीय प्रायोजित योजना के लिए सातवीं योजाना में 114.57 करोड़ रुपए का परिव्यय रखा गया है । इस राशि में इस परियोजना पर गैर-योजना के कमिटेड व्यय की बड़ी रकम शामिल नहीं है ।

3.10 तथापि, इन आंकड़ों को मोटे तौर पर केवल इसी बात को सूचक माना जा सकता है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की शिक्षा का प्रसार हो रहा है। वे उपलब्धि की वास्तविक स्थिति को दर्शाने में असमर्थ हैं । पहले तो कुछ मामलों में इन आंकड़ों का अनुमान वास्तविकता से अधिक है। उदाहरण के लिए महाराष्ट्र में, जहां अनुसूचित जातियों और जन जातियों की

दर्ज संख्या का अनुपात: क्रमश: 236.96 प्रतिशत और 100.23 प्रतिशतदिखाया गया है। यदि इनमें कम आयु और अधिक आयु के बच्चों को भी शामिल मान लिया जाए तब भी ये आंकड़े बहुत ऊंचे हैं,और निश्चित रूप से उनमें ऐसे छात्रों को भी सम्मिलित किया गया हैजो किसी अनुसूची में नहीं हैं। दूसरे कक्षा-1 में दर्ज संख्या अत्यधिक होने के कारण प्राथमिक स्तर की दर्ज संख्या बहुत ज्यादा हो जाती है। कक्षा-1 के बहुत से बच्चे उसके आगे, अगली कक्षा तक में नहीं जा पाते हैं और वे निरक्षरता की सीमा रेखा को पार करने तक में असमर्थ रहते हैं। इस प्रकार इस महत्वपूर्ण मामले में प्रगति की रफ्तार विशेषकर संविधान की अपेक्षाओं को देखते हुए बहुत कुछ धीमी ही रही है। इसका प्रमुख कारण यही है कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए विशेष रूप से अनुसूचित जनजातियों के लिए शिक्षा के महत्व का पूरी तरह से समझा ही नहीं गया है। सांस्कृतिक उपादान के रूप में शिक्षा की भूमिका युगों से स्वीकार की गई है। द्वितीय महायुद्ध के बाद आर्थिक विकास के लिए आवश्यक निवेश के रूप में शिक्षा की महत्ता को स्वीकार किया गया जिसके कारण विशुद्ध कल्याण कार्यक्रमों से उसकी अलग पहचान बनती गई। परन्तु जहां तक समाज के असुरक्षित वर्गों का संबंध है, शिक्षा की भूमिका का एक दूसरा पहलू भी है। एक ऐसी व्यवस्था में जिसमें उनके विरुद्ध पलड़ा भारी हो, अन्याय और दमन के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए शिक्षा की निर्णायक भूमिका हो जाती है। उस स्थिति में अज्ञानता ही उनका सबसे बड़ा शत्रु है।

3.11 इस नए संदर्भ में छोटे-छोटे आदिवासी समुदायों के लिए शिक्षा का विशेष महत्व बन जाता है। आधुनिक राज्य की शक्तिशाली औपचारिक संरचना जिसकी चाल-ढाल के बारे में वे अनभिज्ञ हैं, धीरे-धीरे उनकी परम्परागत संस्थाओं का स्थान लेती जा रही है। शिक्षा के अभाव में जो उन्हें नई व्यवस्था के गूढ़ रहस्य का ज्ञान कराने के लिए एक मात्र साधन हो सकती है, अपनी रक्षा करने में असमर्थ हैं। संसाधनों पर उनका परम्परागत अधिकार जो युगों से उनकी आजीविका का साधन रहा है, आज दांव पर लगा हुआ है। इसके अलावा वे उन नए अवसरों का लाभ उठाने के लिए तैयार भी नहीं है, जो परम्परा से उनके अधिकार क्षेत्र में आने वाले संसाधनों के उपयोग के आधार पर इन क्षेत्रों में निर्मित हो रहे हैं। **उत्तर-पूर्व और मध्य-भारत में आदिवासी लोगों की वर्तमान स्थितियों में जो इस शताब्दी के आरम्भ में लगभग एक जैसी थं भारी विषमता आ गई है जिसका प्रमुख कारण इन दो क्षेत्रों की विकास योजना में शिक्षा के स्थान में अन्तर है। उत्तर-पूर्व क्षेत्र में शिक्षा का विकास उनकी अर्थव्यवस्था जो आज भी कृषिपूर्व की स्थिति में ही है के विकास से पहले आरम्भ हुआ था। परन्तु मध्यभारत में आर्थिक विकास की प्रक्रिया शिक्षा के विकास जो आज भी उपेक्षित ही है से पहले शुरू हुई। अब एक ओर जहां उत्तर-पूर्व क्षेत्र में आदिवासी लोग उन संसाधनों के आधार पर जो उनके अधिकार में बने रहे विकास में तेजी से आगे बढ़ने के लिए तैयार हैं दूसरी ओर मध्यभारत में आदिवासी लोग विकास की प्रतिकूल प्रक्रियाओं के शिकार बन गए हैं और उनमें से बहुत से संसाधन विहीन होने के कारण आज सामाजिक विघटन के कगार पर पहुंच गए हैं।**

3.12 शैक्षिक प्रगति का एक मात्र विश्वसनीय सूचक इस समय साक्षरता का स्तर ही है। परन्तु अनुसूचित जातियों और जन जातियों में औसत साक्षरता के आंकड़े क्षेत्र में वास्तविक स्थिति नहीं दर्शाते हैं। बहुत सारे समुदाय अभी साक्षरता में भी बहुत पीछे हैं और उनमें से कुछ में तो आज तक एक व्यक्ति भी मैट्रिक नहीं हुआ है। समुदाय-वार उपलब्ध आंकड़ों का विश्लेषण चौंका देने वाला है। चण्डीगढ़, जिसमें राज्यों/संघ राज्य व क्षेत्रों में गैर-अनुसूचित जातियों की साक्षरता दर सबसे अधिक 69.33 प्रतिशत है, अनुसूचित जातियों का साक्षरता दर में स्थान बहुत नीचे 37.07 प्रतिशत है। इस संघ राज्य क्षेत्र को यह संदिग्ध श्रेय भी है कि उसकी सूची में 0.6 % साक्षरता वाली सिरकी-बन्द जाति सम्मलित है जो साक्षरता की क्रम सूची में देश भर की जातियों में सबसे नीचे अवस्थित है। दिल्ली संघ राज्यक्षेत्र भी गैर-अनुसूचित जातियों की साक्षरता के मामले में काफी अच्छा है जो 66.44 प्रतिशत है परन्तु कालबेलियाओं में साक्षरता का स्तर अभी भी 3.1 प्रतिशत पर ही अटका है। पांडिचेरी संघ राज्य में भी इसी प्रकार की स्थिति है जहां गैर-अनुसूचित जातियों की साक्षरता दर 60.32 प्रतिशत है परन्तु अनुसूचित जातियों के लिए साक्षरता की दर बहुत कम है, जो मात्र 32.36 प्रतिशत है। और बेतन (एक अनुसूचित जाति) की स्थिति जो 3.9 प्रतिशत साक्षरता के कारण सबसे निचले स्तर पर है, निराशाजनक है।

3.13 अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता के स्तर में अन्तर बहुत बड़ा है। इस मामले में मेघालय की नगा जन-जातियां सबसे ऊपर हैं जिनकी साक्षरता दर 81.9 प्रतिशत है और अरुणाचल प्रदेश में पंचेनमोपा निम्नतम स्तर पर है जिनकी साक्षरता दर 0.8 प्रतिशत है। उसी राज्य में भी विभिन्न जन-जातियों के बीच यह अन्तर बहुत बड़ा है। उदाहरण के लिए अरुणाचल प्रदेश में ही खमियागों की साक्षरता दर 57.9 प्रतिशत है। उड़ीसा में कुलियों और मांकिरडियाओं के बीच भारी अन्तर है जिनकी साक्षरता दर क्रमश: 36.4 प्रतिशत और 1.1 प्रतिशत है। महिलाओं की साक्षरता दर में न केवल एक राज्य से दूसरे राज्य के बीच और उसी राज्य में एक समुदाय से दूसरे समुदाय के बीच भारी अन्तर है अपितु उसी जाति में भी उनकी स्थिति सोचनीय हैं जिनमें राजस्थान की भील महिलाएं निम्नतम स्तर पर हैं जिनमें यह दर 1.2 प्रतिशत है।

3.14 इस मामले में क्षेत्र स्तर पर वास्तविक स्थिति और भी खराब है। अधिकांश शिक्षित युवक, विशेष रूप से आदिवासी क्षेत्रों में अन्यत्र अवसरों की खोज में अपने समुदाय से बाहर चले जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप साक्षरता के यह आंकड़े उन लोगों की शिक्षा के मामले में अत्यन्त नीचे स्तर होने का सही अंदाज नहीं बताते हैं जो कि अपने परम्परागत परिवेश में भारी बाधाओं का सामना करते हुए जिन्दगी बिता रहे हैं।

3.15 शैक्षिक विकास कार्यक्रम का दूसरा पह पहलू है कि केवल वे ही विद्यार्थी राज्य की उदार सहायता, जो मैट्रिकोत्तर स्तर पर छात्रवृत्तियों के रूप में उपलब्ध है, को प्राप्त कर सकते हैं जो प्राथमिक और माध्यमिक स्तरों पर आरम्भिक बाधाओं को पार कर उस स्तर तक पहुंचने के लिए सक्षम हैं। इस प्रक्रिया का प्रभाव संचयी होता है जिसके कारण विभिन्न समुदायों के बीच और उसी समुदाय के विभिन्न अंगों के बीच ध्रुवीकरण होता जा रहा है। यह दुर्भाग्य की बात है कि इन लोगों में, विशेष रूप से अनुसूचित जन-जातियों में एक बड़ा हिस्सा, प्राथमिक स्तर की शैक्षिक सुविधाओं तक का उपयोग नहीं कर पा रहा है। लेकिन विभिन्न कारणों से माध्यमिक स्तर पर शिक्षा की व्यवस्था सबसे कमजोर है। शिक्षा को सार्वजनीन बनाने के लिए राज्यों के विशेष प्रयासों के परिणामस्वरूप दूर-दराज के क्षेत्रों को छोड़कर अन्यत्र प्राथमिक विद्यालयों का प्रसार काफी विस्तृत हो चुका है। उसी प्रकार उच्च शिक्षा के लिए विशिष्ट वर्ग की मांग के कारण उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों और महाविद्यालयों की संख्या में व्यापक वृद्धि हुई है। लेकिन माध्यमिक विद्यालय, जो बीच के स्तर पर आते हैं, उनका भौगोलिक विस्तार बहुत कुछ अपर्याप्त है और अत्यधिक असमान है। आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा के लिए इसके गंभीर परिणाम हुए हैं। पहले तो मिडिल स्तर तक पहुंचते पहुंचते बच्चे अपने मां बाप के लिए वास्तविक रूप में सहायक बन जाते हैं। अतः यदि बच्चे की आगे पढ़ने की इच्छा हो तो उसे घर के बाहर जाना पड़ेगा और इस प्रकार परिवार की सहायता के लिए अनुपलब्ध हो जाएगा। इस स्तर पर छात्रवृत्तियों का और वजीफों के रूप में राज्य से कोई खास सहायता उपलब्ध न होने के कारण उसके परिवार को ही बाहर पढ़ने वाले बच्चे का खर्च वहन करना होगा जो साधारण लोगों के लिए असंभव है। इन परिस्थितियों का लड़कियों की शिक्षा पर सबसे खराब प्रभाव पड़ा है।

3.16 छात्रवृत्तियों तथा वजीफों के कार्यक्रम आकार में काफी बड़े प्रतीत होते हैं, परन्तु अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। उदाहरण के लिए संगठित क्षेत्र के लोग, जो न केवल निर्धनता रेखा से बहुत ऊपर ही हैं बल्कि काफी सुविधामय स्थिति में हैं, उनके वेतन के लगातार पुनरीक्षण की आवश्यकता को भली भांति स्वीकार कर लिया गया है, और उसको निर्वाह व्यय के स्तर के साथ स्वचालित रूप से जोड़ दिया गया है। इस वायदे की पूर्ति के लिए वित्तीय परिव्ययों को राज्य के राजस्व पर एक प्रभार जैसा माना जाता है, चूंकि उस व्यय को अन्य सभी मदों पर प्राथमिकता दी जाती है। परन्तु हमारे समाज के सबसे कमजोर वर्गों के छात्रों के लिए सहायता की राशि जिनके माता पिता के लिए दो जून भोजन जुटाने में भी कठिनाई रहती है, सालों साल बीतने जाने पर भी अपरिवर्तित बनी रहती है चाहे फिर उस दौरान भले ही कीमतें और उनमें भारी बढ़ोतरी की आवश्यकता पर सिद्धांत रूप से आम सहमति हो।

3.17 किसी तरह के भी आयोजन में शिक्षा के लिए अपर्याप्त उपलब्ध किया जाना न केवल असंगत है परन्तु मूलभूत सामाजिक मूल्यों की भावना के विरुद्ध भी है। कोई भी परिवार कभी भी विलासपूर्ण जिन्दगी बिताने की बात तो दूर, अपने लिये सुविधामय जिन्दगी की तुलना में भी अपने बच्चों की आवश्यकताओं को नीची प्राथमिकता देने की बात सोच नहीं सकता है। हां, उन परिवारों की बात अलग है जहां अभिभावक गैर-जिम्मेदार हों। इसके फलस्वरूप बच्चों की आवश्यकताओं के संदर्भ में अन्य खर्चों में कटौती यहां तक कि पेट काटना तक एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया होती है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के प्रबन्ध में भी यही तर्क यदि अधिक नहीं तो कम से कम समान रूप से तो लागू होता ही है। इस संदर्भ में समाज के कमजोर वर्गों की शिक्षा के संबंध में अर्थव्यवस्था के प्रबन्धकों की कोई भी चूक निन्दनीय है। उनके मामले में शिक्षा की सुविधायें उपलब्ध करवाने से एक दिन की भी देरी का अर्थ होगा उनके मौलिक अधिकारों का हनन और जो लोग पहले से ही वंचित हैं, उन्हें जीवन पर्यन्त कष्टमय और असम्मानजनक स्थिति में बिना उनके किसी अपराध के, रहने के लिये मजबूर करना।

3.18 संविधान में कमजोर वर्गों के लिए प्रदत्त संरचनों में शिक्षा का स्थान सबसे केन्द्रीय है और इस क्षेत्र में अपर्याप्त उपबन्ध किया जाना उन्हें उस देय संरक्षण से वंचित किया जाना है जिसकी संविधान के निर्माताओं ने उनके लिए परिकल्पना की थी। अतः अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास के लिए जो परिव्यय नियत किया जाए उसमें शिक्षा को प्रथम प्राथमिकता दी जाए। इस सुझाव में मैं उस सामान्य व्यक्ति की भावनाओं की प्रतिध्वनि कर रहा हूं, जो इस विषय पर बात करते ही सहज ही उसके मुंह से निकल पड़ती है। वह इस आसान सवाल का जवाब खोजने में असमर्थ है कि ऐसा कैसे होता है कि उनकी एक ऐसी महत्वपूर्ण आवश्यकता जिस पर उनके बच्चों का भविष्य निर्भर है पूरी नहीं की जाती जबकि राज्य इतनी संदिग्ध मूल्य वाली अनगिनत योजनाओं पर भारी फिजूल खर्ची कर सकता है। यही भावना राज्य की विधान सभाओं और संसद में उनके प्रतिनिधि भी व्यक्त करते रहते हैं परन्तु वे इसे औपचारिक व्यवस्था, जिसमें वे फंसे हुए हैं, के भ्रमजाल का सही रूप देख नहीं पाते हैं और न उसके रहस्य को समझ पाते हैं।

3.19 तथापि, यहां यह उल्लेखनीय है कि अब वह समय बीत चुका है जब शिक्षा के बारे में सामान्य उद्घोषणायें उपयोगी हो सकें। अब इस बारे में जिन कार्यों की आवश्यकता है वे हैं—(1) दुर्गम क्षेत्रों में शिक्षा में शिक्षण संस्थाओं का प्रभावी प्रसार, (2) अधिक गरीब वर्गों को शिक्षा व्यवस्था का लाभ पहुंचाना (3) शिक्षा को जन सामान्य की अर्थव्यवस्था से संगत बनाना और (4) सामान्य शिक्षा की गुणवत्ता में अभिवृद्धि जिससे वह उस स्तर की हो जाए जो नई व्यवस्था में विशिष्ट वर्गीय संस्थाओं का विशेषाधिकार बन गई है। इसके लिये प्रत्येक समुदाय या समूह, और दुर्गम क्षेत्रों के लिये उसकी विशिष्ट स्थिति

के संदर्भ से एक कार्यनीति बनाई जानी चाहिए । नई शिक्षा नीति में अनुसूचित जातियों के शैक्षिक विकास के लिये लघु स्तरीय आयोजन एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में स्वीकार किया गया है। यह सुनिश्चित किया जाना जरूरी है कि यह आयोजन एक औपचारिकता बन कर रह जाए। प्राथमिकताओं की गड़-बड़ होने से बचाना जरूरी है जैसा कि आपरेशन ब्लैक-बोर्ड जैसी सानी वाली कठोर व्यावहारिक योजना में हुआ है। इस योजना में अधिकांश सामान्य विद्यालयों, विशेष रूप से दूर-दराज क्षेत्रों में स्थित विद्यालयों में साधारण श्यामपट्ट पहुंचने के पहले ही वित्तीय कठिनाई सामने आने लगी है। विडम्बना यह हुई है कि सामान्य विद्यालयों के नाम से और उनमें श्यामपट्ट उपलब्ध कराने के बहाने बहुत सी विशिष्ट संस्थाओं को अप्रत्याशित लाभ मिल गया जिसकी उन्हें भी कल्पना भी नहीं थी। यद्यपि, संसाधनों की कमी दिखाई देती है, तथापि, यदि कोई राज्य सही प्राथमिकताओं का अनुसरण करता है तो यह कमी नहीं हो सकती । फिर संघ राज्यक्षेत्रों के लिये वित्तीय संसाधन न होने का कोई बहाना भी नहीं हो सकता है । परन्तु उनकी तुलनात्मक स्थिति असंतोषजनक है और सामान्य रूप से अनुसूचित जातियों की शिक्षा के संबंध में है और उनमें भी सबसे कमजोर जातियों के मामले में तो नितांत निराशाजनक है इन तथ्यों का इस महत्वपूर्ण कार्य के लिये चिन्ता और दिलचस्पी में कमी के अलावा और कोई स्पष्टीकरण हो नहीं सकता।

3.20 अतः मैं सिफारिश करता हूं –

(1) अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और विकास के लिए कार्यों में शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास के लिए नियत किए गए कुल परिव्ययों में शिक्षा के लिए आवश्यक परिव्यय को प्रथम चार्ज माना जाना चाहिए ।

(2) अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उन समुदायों के लिए सहायता के विशेष कार्यक्रम आरम्भ किए जाने चाहिएं जो साक्षरता के अत्यधिक निचले स्तर पर जैसे 7 प्रतिशत से कम साक्षरता स्तर पर हैं ।इस विशेष कार्यक्रम के लिए तालुक विकास खंड को इकाई माना जाए जिसके लिये 1981 की जनगणना के साक्षरता के आंकड़े उपलब्ध हैं ।

(3) छात्रवृत्तियां और वजीफों की दरों और उनके लिये पात्रता की आयु सीमा का पूर्ण रूप से पुनरावलोकन किया जाना चाहिए । ये दरें एक उपयुक्त सूचकांक जैसे कि सामान्य विद्यार्थियों और आवासीय विद्यार्थियों के लिए "शिक्षा व्यय सूचकांक" से संबद्ध की जानी चाहिए । शिक्षा व्यय सूचकांक में उपभोक्ता मूल्य सूचकांक और सामान्य जीवन स्तर सूचकांक को समान भार दे कर समायोजित किया जाय । छात्रवृत्तियां और वजीफों की दरों में बढ़ोतरी इतनी हो जिससे मंहगाई के कारण बढ़ी कीमत का प्रभाव जिसमें पूरी तरह से जज्ब हो जाए। इस शिक्षा व्यय सूचकांक का निर्धारण हर साल वर्ष की समाप्ति पर किया जाना चाहिए । छात्रवृत्तियों और वजीफों की नई दरें नए सूचकांकों के आधार पर की जानी चाहिए जिन्हें हर साल अगले शैक्षिक सत्र के प्रारम्भ से ही लागू माना जाना चाहिए ।

(4) छात्रों के लिए सभी छात्रवृत्तियां और वजीफे महीने की प्रथम तारीख को देय होने चाहिएं न कि महीने की अंतिम तारीख को जैसा अभी होता है । प्रथम माह की छात्रवृत्ति पात्रता कार्ड के आधार पर अगली कक्षा में दाखिले के दिन ही देय होना चाहिए। ये पात्रता कार्ड छात्रों को स्थायी आधार पर जारी किए जाने चाहिए ।

सार्वजनिक क्षेत्र में आरक्षण

3.21 सकारात्मक विभेद की नीति का लाभ उठाने हेतु दलित समुदायों के सदस्यों को समर्थ बनाने के लिये शिक्षा एक मूल्यवान उपलब्धि है । सकारात्मक विभेद की सामान्य नीति के अधीन आरक्षण की योजना आरम्भ में सरकार के अधीन सेवाओं में शुरु की गई थी । तब से इसका विस्तार धीरे-धीरे बढ़ता रहा है । अब तक इस नीति के अधीन बैंक उद्योग और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम पूरी तरह में आ गये हैं। शिक्षण संस्थाओं द्वारा भी यह नीति स्वीकार कर ली गई है तथापि कुछ मामलों में यह केवल आंशिक रूप से बहुत कुछ केवल गैर-शैक्षणिक पदों के लिये ही लागू की गई है । अलबत्ता, अत्यधिक उच्च स्तर के व्यावसायिक और वैज्ञानिक पद इस नीति के दायरे से बाहर हैं।

3.22 अध्याय 8 में पिछले दस वर्षों (1977–1987) में सार्वजनिक सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधित्व की प्रगति के पुनरावलोकन से यह स्पष्ट होता है कि स्थिति में साधारण तौर पर सुधार हुआ है । तथापि इसकी गति अपेक्षाकृत असमान रही है। बहुत सारे क्षेत्रों में अभी तक काफी कमी रही है। केन्द्रीय सरकार की सेवाओं में समूह 'घ' में 1977 में अनसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व विहित स्तर से अधिक था और 1987 तक समूह ग के पदों में भी प्रतिनिधित्व उस स्तर तक पहुंच गया है। परन्तु उसी अवधि में समूह क पदों में प्रतिनिधित्व का अनुपात केवल 4.16 प्रतिशत से बढ़कर 8.23 प्रतिशत और समूह ख के पदों में 6.07 प्रतिशत से बढ़कर 10.40 प्रतिशत हुआ है । इस प्रकार इन दोनों समूहों में स्थिति असंतोषजनक है। इन दोनों स्तरों पर अनुसूचित जनजातियों का प्रतिनिधित्व, सांख्यिकीय

आंकड़ों में बहुत बढ़ा हुआ दिखाई देने पर भी, वास्तव में नगण्य रहा है। इस अवधि में सार्वजनिक क्षेत्रों के उपक्रमों में भी अनुसूचित जातियों और जनजातियों के प्रतिनिधित्व की स्थिति सुधरी है और उनका अनुपात सभी स्तरों पर बढ़ा है। अब समूह ग और घ पदों में स्थिति अच्छी है क्योंकि उनका प्रतिनिधित्व विहित सीमा तक पहुंच गया है तथापि, समूह क और ख पदों में उनकी स्थिति संतोषजनक नहीं है। यद्यपि समूह ख में अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व उल्लेखनीय रूप से बढ़ा है और फिर भी 1977 में 1.81 प्रतिशत से बढ़कर वह अब तक केवल 4.86 प्रतिशत तक ही पहुंचा है। अनुसूचित जनजातियों की स्थिति नगण्य है क्योंकि उस श्रेणी में उनका प्रतिनिधित्व केवल 1.17 प्रतिशत है। इसकी तुलना में बैंक उद्योग में उनकी प्रगति बहुत अच्छी है, विशेष रूप से अधिकारियों के स्तर पर, जिसमें अनुसूचित जातियों का प्रतिशत 1976 के 0.86 प्रतिशत से बढ़कर 1987 में 7.29 प्रतिशत हो गया है। तथापि यह अभी तक जो स्तर होना चाहिए उसका लगभग आधा ही है। अधिकारी वर्ग में अनुसूचित जनजातियों का प्रतिनिधित्व, 0.13 प्रतिशत से बढ़कर 1.84 प्रतिशत होने की बड़ी वृद्धि के बाद भी अपेक्षित स्तर से बहुत नीचे है।

3.23 यद्यपि, सकारात्मक विभेद का सिद्धांत पूरी व्यवस्था में बहुत कुछ अंदरूनी प्रक्रिया बन कर सहज रूप में स्वीकृत होता जा रहा है, तथापि, यह साफ है कि अभी भी कुछ कमजोरियां हैं जिन पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है। सेवाओं में अनुसूचित जनजातियों का प्रतिनिधित्व सभी स्तरों पर और अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व ऊंचे स्तर पर कम रहता चला आ रहा है जिसे पूरा करने के लिये विशेष प्रयास किये जाने हैं। प्रोन्नतियों के माध्यम से उनकी ऊर्ध्वाधर गतिशीलता विशेष रूप से कमजोर है जिसका मुख्य कारण विभिन्न प्रकार की अड़चनों और प्रतिरोध जो उनके रास्ते में आते रहते हैं और कभी-कभी जानबूझ कर खड़े कर दिये जाते हैं। सकारात्मक विभेद की नीति के कार्यान्वयन का एक खेदजनक पहलू यह है कि उसे सामान्यतः औपचारिक तौर पर ही स्वीकार किया जाता है और इसके पीछे जो भावना है उसका कोई अधिक ख्याल नहीं रखा जाता है। इसके परिणामस्वरूप देखने में सीधे सादे तकनीकी बिन्दु भी अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को उनके देय अधिकारों से वंचित रखने में उपयोग किये जा सकते हैं। कभी कभी देखने में सीधी सादी कार्रवाइयां जैसे, समयबद्ध प्रोन्नति, विशेष वेतन-वाले पदों पर नियुक्ति और स्थानान्तरण के बाद "वस्तुपरक" कसौटी के आधार पर नियुक्ति पक्षपातपूर्ण सिद्ध हुई है (अध्याय 8 देखिए)। इससे भी अधिक खेदजनक तो यह है कि संबंधित प्राधिकारियों में विसंगतियों को दूर करने के बजाय नियमों का उद्धरण देते हुए अपनी स्थिति पर ही डटे रहने की प्रवृत्ति है। इस प्रकार जो छुट-पुट तलखी वाले मामले अपने आप सुलझ जाने चाहिएं, बने रहते हैं और छोटे-मोटे परिवर्तनों के लिये व्यवस्था की सहमति पाने के लिये भागीरथ प्रयास की जरूरत पड़ती है।

3.24 काफी तादाद में बहुत ही साधारण मामले सरकार में नीति स्तर पर अभी भी अनदेखे ही रह गये हैं, यद्यपि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के रोजगार के लिये उनके दूरगामी परिणाम हो सकते हैं। उदाहरण के लिये एक ही राज्य के विभिन्न क्षेत्रों की जनसंख्या में अनुसूचित जनजातियों के अनुपात में बड़ा अंतर होता है। फिर भी अधिकांश राज्यों ने स्थानीय आदिवासी स्थिति के इस प्रारंभिक पहलू पर विचार करने और अनुसूचित जनजातियों के लिये क्षेत्र विशिष्ट आरक्षण कोटा निर्धारित करने की पहल नहीं की है। इसी प्रकार एक आदिवासी बहुल जैसे, 80 प्रतिशत आदिवासी जनसंख्या वाले क्षेत्र में भी केन्द्रीय सरकार के उपक्रमों में समूह ग तथा समूह घ में आरक्षण उस राज्य की जनसंख्या में उनके अनुपात के आधार पर, जैसे कि 14 प्रतिशत रखा जा सकता है यह न्याय और सिद्धांतों के नाम पर सरासर अन्याय का उदाहरण है।

3.25 साक्षात्कारों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उम्मीदवारों की नियति एक अन्य समस्या है जो कभी से चली आ रही है। यह सुनिश्चित करने के लिये कोई कार्यवाही नहीं की गई है कि यदि ऐसे उम्मीदवार उपलब्ध हैं जो विहित शैक्षिक और/या तकनीकी अर्हतायें रखते हैं तो उन्हें साक्षात्कार में फेल नहीं किया जायेगा। इसके परिणामस्वरूप अर्हतायें प्राप्त उम्मीदवार बेरोजगार रहते हैं जबकि उनके लिये आरक्षित पद खाली पड़े रहते हैं। प्रशासन इन उम्मीदवारों की कोई परवाह किये बिना उन आरक्षित पदों को सरलता से रद्द हो जाने की अनुमति दे देता है। यहां पर मूल प्रश्न ऐसे साक्षात्कार बोर्ड के निर्णय की विश्वसनीयता की मान्यता का है, जो किसी उम्मीदवार से केवल चन्द मिनट बातचीत करता है जबकि उसकी शैक्षिक योग्यतायें अकादमिक प्रणाली द्वारा संबंधित व्यक्ति के अनेक सालों की लम्बी अवधि में किये गए तरह-तरह के मूल्यांकनों के आधार पर प्रमाणित होती है। साक्षात्कारों में पक्षपात का एक अत्यंत सुस्पष्ट उदाहरण मेरी नजर में आया, वह किसी साधारण संस्थान का न होकर सुप्रतिष्ठित जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय से संबंधित था जो कमजोर वर्ग के लोगों की ओर झुकाव के लिये विख्यात है। अनुसूचित जातियों के उनके अपने ही एक छात्र को उच्च पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिये साक्षात्कार में बहुत ही थोड़े न कुछ जैसे अंक मिले, यद्यपि उसने उसी विश्वविद्यालय से मास्टर की परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की थी और उस प्रवेश के लिये लिखित परीक्षा में भी ऊंचे अंक प्राप्त किये थे। इस विश्वविद्यालय ने इस बीच

इस प्रकार की विसंगतियों को दूर करने के लिये अपनी कार्यविधि का पुनरावलोकन कर लिया है। यदि ऐसा विचार के ऐसे गढ़ में घटित हो सकता है जिसकी पहचान ही युक्तियुक्तता और वैज्ञानिक भावना है तब फिर अन्य भौतिक परम्परा और पूर्वाग्रहों की जकड़ कैसी होगी इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। इस बारे में राज्यों द्वारा कार्यवाही का अभाव कोई आश्चर्य की बात नहीं है। और न इस कारण का पता करने के लिये भी दूर जाने की आवश्यकता है कि इस सामाजिक दायित्व को पूरा करने के लिये जिम्मेदारी आयद करने की बात को अभी तक औपचारिक रूप में क्यों नहीं किया गया है।

3.26 पूर्वाग्रहों के कारण अन्यायी स्थिति का यदि लेखा बनाया जाय तो उसमें सबसे अधिक निन्दनीय उदाहरण सार्वजनिक क्षेत्र के कतिपय उद्यमों में साफ सफाई के "नीचे काम" में लगे लोगों के प्रति खुला पक्षपातपूर्ण व्यवहार है। सफाई के काम को ठेकेदारों के सुपुर्द करने के कुटिल उपाय द्वारा उस काम करने वालों को उन लाभों से वंचित कर दिया गया है जो संगठित क्षेत्र के सब कर्मचारियों को मिलते हैं। किसी को भी इस बात की कोई चिन्ता नहीं दिखाई देती कि इस महत्वपूर्ण सेवा में लगे हुए लोगों को संबंधित उद्यम के कर्मकारों का दर्जा ही नहीं दिया गया है और उनमें भावताव करने की क्षमता न होने तथा उनके काम की मजदूरी की दर समाज की प्रचलित परम्परा में अत्यंत कम होने का लाभ उठाकर वहां उनको अत्यंत शोषणकारी मजदूरी दी जाती है। इससे यह प्रकट होता है कि तथाकथित आधुनिक संगठन भी समाज के सबसे कमजोर वर्गों के साथ अपने व्यवहार किस प्रकार नितांत असंवेदनशील और अमानवीय हो सकते हैं और हमारी व्यवस्था अन्यमनस्क भाव से उसे इस रूप से देखती रह सकती है। इन मामलों में प्रबन्ध मण्डल का दिखाने को यह तर्क होता है कि साफ-सफाई रखने के न्यूनतम स्तर को बनाये रखने जैसे महत्वपूर्ण काम में उनकी चिन्ता उस काम की गुणवत्ता के बारे में होती है जिसे वे समझते हैं कि केवल ठेका प्रणाली से ही सुनिश्चित किया जा सकता है। यह तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता है। एक ऐसे प्रबन्ध मण्डल को, जो युक्तियुक्तता और आधुनिकता का दम भरता है, अपनी कथनी और मान्यताओं के अनुसार अपना कार्य व्यवहार भी करना चाहिए और उन सिद्धांतों का जो दूसरे कर्मचारियों के लिये सामान्य रूप से काम में लाये जाते हैं जैसे उपयुक्त प्रोत्साहनों या सहकारिता के आधार पर काम का नियोजन पालन करना चाहिए न कि गुलाम बनाकर उन्हें हाक कर काम करवाने की अत्याचारी प्रवृत्ति को आधुनिक क्षेत्र में भी फिर से बढ़ावा देना जैसा कि इसमें ठेकेदारी प्रथा में अंतर्निहित है।

3.27 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि

(1) केन्द्रीय सरकार को आरक्षण पर एक व्यापक कानून बनाना चाहिए और उसके अधीन उपयुक्त नियम भी बनाने चाहिएं। इस कानून में ऐसा उपलब्ध होना चाहिए जिससे प्रत्येक राज्य उपयुक्त संशोधन कर उसे अपनी स्थानीय स्थिति के अनुरूप ढाल सके। तथापि, यदि कोई राज्य उसे दी गई अवधि जैसे, केन्द्रीय कानून के बनने के तीन महीने की अवधि के अन्दर तत्संबंधी कार्यवाही न करे तो संबंधित राज्य पर उसका विस्तार स्वयंमेव हो गया समझा जाना चाहिए।

(2) केन्द्रीय सरकार को अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आयुक्त के परामर्श से आरक्षण पर एक विस्तृत निर्देशिका तैयार करना चाहिए जो केवल परिपत्रों का संग्रह मात्र न हो परन्तु जिसमें इस रिपोर्ट में और इससे पहले की रिपोर्टों में बताई गई सब कमियों को दूर करने के लिए आवश्यक बातों का समावेश किया जाना चाहिए।

(3) सरकार के अधीन रिक्तियों के अनारक्षण के मामले में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आयुक्त का परामर्श बाध्यकारी होना चाहिए। इस संबंध में सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को भी आयुक्त के क्षेत्राधिकार में लाया जाना चाहिए।

(4) राज्य सरकारों के लिए भी यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि वे भी आरक्षण के बारे में इसी प्रकार की कार्यविधि अपनाएं और ऐसे सभी मामले किसी स्वतन्त्र प्राधिकारी को भेजे जाने चाहिएं जिसका परामर्श बाध्यकारी होना चाहिए।

(5) सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को यह निदेश दिया जाना चाहिए कि "सफाई" के काम को ठेके पर देने की प्रथा समाप्त की जाए। इस कार्य का प्रबन्ध सहकारिता के आधार पर किया जा सकता है परन्तु इसमें शर्त यह होनी चाहिए कि इन सहकारी समितियों के सदस्यों को वे सभी लाभ दिए जाएं जिनके लिए उस उद्यम के अन्य कर्मचारी हकदार हों।

असमान विकास, अनुसूचीकरण और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रमाण-पत्र

3.28 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विभिन्न समुदायों में असमान विकास के बारे में पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। जैसे जैसे अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को व्यापक अर्थव्यवस्था में न्यायपूर्ण अवसर मिलते जायेंगे असमान विकास की प्रक्रिया भी और बलवती होती जाने की संभावना है। अधिक कमजोर समुदायों और विकास की दौड़ में देर से हिस्सा लेने वालों के लिये असमान विकास के निहितार्थ अधिकाधिक स्पष्ट होते जा रहे हैं। अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती में प्रतिनिधित्व अत्याधिक असमान है। एक ओर साल-दर-साल

आरक्षित पदों में से अधिकांश पद कुछ इनेगिने समुदायों को ही मिलते जा रहे हैं और दूसरी ओर अनुसूचित जातियों और जनजातियों में से अधिकांश, विशेष तौर पर अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को जो शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हैं, उनमें से कुछ थोड़े से पद भी नहीं मिल पा रहे हैं, उनमें से कुछ का तो अभी तक इस मामले में खाता भी नहीं खुला है। इस प्रकार अखिल भारतीय स्तर पर आरक्षित पदों के लिये प्रतियोगिता असमानों की प्रतियोगिता बनती जा रही है। इसी प्रकार की स्थिति अन्य राज्यों में भी उत्पन्न हो रही है और उन समुदायों के सदस्यों में जो तुलनात्मक रूप से विकसित समूहों के साथ प्रतियोगिता में आने के लिये असमर्थ हैं, असंतोष की भावना फैली है, भले ही अभी वह दबे स्वर में है। इस मामले को मेघालय और नागालैण्ड राज्यों में जो आदिवासी बहुल राज्य हैं और जिनका प्रशासन आदिवासी विशिष्ट वर्ग के हाथों में है अपेक्षाकृत कम विकसित आदिवासी समुदायों के लिये उनकी जनसंख्या के आधार पर अलग आरक्षण देने की नीति अपनाकर हल करने का प्रयत्न किया गया है। जैसे जैसे शिक्षा के लाभ, कमजोर समूहों और सुदूर क्षेत्रों को मिलेंगे वहां के पहली पीढ़ी के शिक्षित युवकों के लिये आरक्षित पदों के लिये सीमित प्रतियोगिता में भी कोई स्थान पाना कठिन होगा। यह उपयुक्त समय है कि इस मामले के सभी पहलुओं पर विचार किया जाय और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों में कम विकसित समुदायों को, उनके पक्ष में विशेष सकारात्मक विभेद की नीति अपना कर, सार्वजनिक क्षेत्र में प्रवेश करने के लिये समर्थ बनाया जाये।

3.29 यहां पर सन् 1976 में क्षेत्र प्रतिबंध हटाये जाने के बाद कुछ राज्यों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की जनसंख्या में अकस्मात बढ़ोतरी का विशेष उल्लेख जरूरी है। इस संदर्भ में सर्वाधिक उल्लेखनीय मामला कर्नाटक का है जहां 1976 में क्षेत्र में क्षेत्र प्रतिबंध हटाए जाने के बाद बड़ी संख्या में लोगों ने समान जाति नाम होने का फायदा उठाया और 1981 की जनगणना में अपने आपको अनुसूचित जनजातियों के रूप में दर्ज कराया। यदि समान नाम के आधार पर उनके दावे स्वीकार किये जाते हैं तो उस राज्य में संबंधित आदिवासी समुदायों के असली लोगों का कोई भविष्य नहीं है। आंध्र प्रदेश में भी पूरे राज्य में लंबाडियों को एक अनुसूचित जाति के रूप में मान्यता मिल जाने के बाद यह समस्या उत्पन्न हो गई है जो काफी गंभीर है, यद्यपि अभी उसका रूप विकराल नहीं है। गोंडों को, जो वहां के आदिवासी समुदायों में सबसे अधिक पिछड़े हैं, सन् 1976 में क्षेत्र-प्रतिबंध हटाये जाने के बाद, पहले चुनाव में ही राजनीतिक क्षेत्र में अपना स्थान सुगालियों (लंबाडियों) को दे देना पड़ा था। नई स्थिति में उठ मामलों से निपटने के लिये संरक्षण कानून के अभाव में गोंडों को अपनी भूमि पर अत्यधिक दबाव का सामना करना पड़ रहा है। महाराष्ट्र के कुछ भागों में भी इसी प्रकार की स्थिति विद्यमान है जहाँ पर कुछ समुदाय अनुसूची में ठाकुर जैसे कुछ जनजातियों के नामों का लाभ उठाने का प्रयास कर रहे हैं जो कि अत्यन्त नमनीय जाति नाम है और जिसका प्रयोग हर जगह बड़ी संख्या में लोग करते हैं।

3.30 इस प्रकार लाभ पाने की संभावना से आकर्षित होकर जो अभी तक जहां तहां एकाकी ही हैं, 1976 में क्षेत्र प्रतिबन्ध हटाये जाने के बाद बहुत सारे समुदाय अनुसूचित जनजातियों की सूची में प्रविष्ट होने के लिये, प्रयत्न कर रहे हैं। यद्यपि, उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश की सीमाओं पर रहे कोलों और गोंडों के मामलों में, जो मध्यप्रदेश में अनुसूचित जनजातियों और उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जातियों के रूप में सूचीबद्ध हुई है, विसंगतियां अवश्य हैं परन्तु ऐसा लगता है कि इन दावों के बहुत से मामलों से संबंधित समुदाय केवल इस कारण अनुसूची में शामिल किये जाने के लिये प्रयत्नशील नहीं हैं कि उन्हें एक अनुसूचित जनजाति या अनुसूचित जाति के रूप में अनुसूचित हो जाने से कुछ लाभ होंगे परन्तु उनकी निगाह उस ओर है कि अनुसूचित जातियां या जनजातियों, जैसा भी हो, के बड़े समूहों में असमानों की बीच प्रतियोगिता की स्थिति में, उन्हें तत्काल भारी लाभ मिल सकेगा।

3.31 इसलिये अनुसूची के प्रश्न की बारीकी से और सावधानीपूर्वक जांच करने की आवश्यकता है। संविधान में जातियों, मूल वंशों या जनजातियों को अनुसूचित जातियों या जनजातियों के रूप में प्रत्येक राज्य के लिये अलग अलग अनुसूचित किये जाने की परिकल्पना की गई है। संविधान में किसी जाति, मूलवंश या जनजाति को पूरे देश में अनुसूचित किये जाने के लिये कोई उपबंध नहीं किया गया है। इसका कारण यह है कि किसी जाति, मूलवंश या जनजाति द्वारा उसी नाम का प्रयोग किए जाने को इस बात के लिए पर्याप्त सुदृढ़ आधार नहीं माना जा सकता है कि उस जाति नाम में पूरे देश में एक ही लोग शामिल हैं। अपनी जाति के लिए उसी नाम का प्रयोग करने वाले लोगों की स्थानीय संरचना में पूर्णत: भिन्न स्थितियां हो सकती हैं। इसके कारण जातियों, मूल वंशों या जनजातियों, जैसी स्थिति हो, का अनुसूचीकरण शुद्धत: राज्यवार प्रत्येक मामले के गुण दोषों पर विचार करने के बाद किया जाना चाहिए। इस संबंध में भी, संविधान के उपबंध सावधानी बरते जाने की अपेक्षा करते हैं। अनुच्छेद 341 और 342 के अनुसार राष्ट्रपति "जातियों, मूलवंशों और जनजातियों अथवा जातियों, **मूल वंशों और जनजाति के भागों या उनमें के समूहों**" (रेखांकन जोड़ा गया है) को किसी राज्य अथवा संघ राज्य क्षेत्र, जैसी स्थिति हो, के संबंध में अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के रूप में विनिर्दिष्ट कर सकता है। इस प्रकार किसी जाति, मूल वंश या जनजाति पर किसी राज्य में अनुसूचित करने के लिए विचार करने से पूर्व भी यह जांच की

आवश्यक्ता है कि क्या उस नाम वाले लोग उस पूरे राज्य में सूची में शामिल किए जाने के लिए योग्य हैं। उस जाति के अन्दर कोई समूह या उस जाति का कोई भाग उदाहरण के लिए किसी विशिष्ट क्षेत्र में रहने वाले, ऐसा हो सकता है जो इस विशेष प्रबंध के लिए पात्र हो सकते हैं। इस संबंध में संविधान की पांचवीं अनुसूची के खण्ड 5 का उल्लेख भी किया जा सकता है जिसके अनुसार किसी भी कानून को उस राज्य के पूरे अनुसूचित क्षेत्र अथवा **उसके किसी भाग में** लागू किए जाने के लिए एक अधिसूचना द्वारा संशोधित किया ज सकता है। इस प्रकार संविधान में कार्यपालिका की ओर से विभेदपरक और सतर्कतापूर्ण कार्यवाही करने की परिकल्पना है। यह अपेक्षा की जाती है कि आदिवासी व्यवस्था के साथ नेमी और समान्यकृत व्यवहार नहीं किया जाएगा। प्रत्येक समुदाय, उस समुदाय के किसी हिस्से या उसमें वर्ग विशेष पर उस राज्य के प्रत्येक क्षेत्र के संदर्भ में विचार किया जाएगा ताकि राज्य की कानूनी रचना और आदिवासी जन के कल्याण और प्रगति के लिए राज्य के कार्यक्रम में प्रत्येक समूह की परम्परा से संगत रहें ज विभिन्न वर्गों के लिए बहुत अलग हो सकती हैं। **अतः आदिवासी मामलों में सामान्यीकृत कार्यक्रमों का लिया जाना इस बात का सूचक है कि राज्य को कार्यपालिका पर संविधान द्वारा जो जिम्मेदारी डाली गई है वह उसे पूरा करने के लिए इच्छुक अथवा तैयार नहीं है। अतः इस प्रकार को कार्यनोति उन संवैधानिक संरक्षणों का उल्लंघन है जो संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक आदिवासी समुदाय के लिए उपलब्ध कराया जाना चाहिए।**

3.32 संविधान के लागू होने के बाद जातियों और जन-जातियों के अनुसूचीकरण में साधारण तौर पर तत्संबंधी उसी व्यवस्था का अनुसरण किया गया था जो इन समुदायों के लिए स्वतन्त्रता से पूर्व भारत में ब्रिटिश सरकार या भारत के देशी राज्यों जैसी स्थिति हो, के संबंधित कानूनी उपबंधों के अधीन की गई थी। इसमें संदेह नहीं कि उसमें कुछ विसंगतियाँ थीं। परन्तु भाषायी आधार पर राज्यों के गठन के कारण स्थिति अधिक जटिल हो गई थी। उक्त गठन में अलग अलग प्रशासनिक इतिहास वाले बहुत से क्षेत्रों को नए राज्यों में एक साथ जोड़ दिया गया था। इसके परिणामस्वरुप उन सभी समुदायों को जिन्हें भूतपूर्व राज्यों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के रुप में मान्यता प्राप्त थी, बिना विचार के यंत्रवत इकट्ठा कर दिया गया और फिर उन्हें प्रत्येक नए राज्य के लिए बनाई गई एक सूची में सम्मलित कर दिया गया था। नए राज्यों में जहां नई सूचियों में, कुछ जातियों का भूतपूर्व राज्यों के क्षेत्र के साथ संबद्धता बनी रही प्रत्यक्ष रुप से कुछ विसंगतियां आ गयीं जिनमें से कुछ वास्तविक थीं। इस प्रक्रिया में, जिसमें अनेक क्षेत्रीय प्रशासनिक इकाईयां इधर उधर हो गई थीं, आदिवासी समुदायों के बारे में एक निर्णायक तत्व उनका एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र से निकट का संबंध होना पृष्ठभूमि में चला गया और उसकी उपेक्षा ही गई। कुछ असली विसंगतियां जिनको लेकर कुछ क्षेत्रों में लोग काफी उत्तेजित थे, निः सन्देह दूर हो गई थीं, लेकिन नए राज्यों के सभी भागों में सभी समुदायों को मान्यता दिए जाने के कारण बहुत सी ऐसी समस्याएं उत्पन्न हुई थीं जिनका पहले जिक्र किया गया है और जिनकी इस रिपोर्ट के अध्याय 11 में विस्तार से विवेचना की गई है।

3.33 अनुसूचित जातियों और जनजातियों, विशेष रूप से जन जातियों के समान नाम, उपनाम, पदवी, इत्यादि होने का लाभ उठाते हुए अन्य लोगों द्वारा किए गए झूठे दावों की बढ़ती हुई संख्या के बहुत प्रतिकूल प्रभाव हैं जिन पर अविलम्ब ध्यान दिया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए कानून का उल्लंघन करते हुए भूमि का हस्तांतरण, किसी भी पक्ष के बारे में गलत दावे के आधार पर आसानी से किया जा सकता है, जैसे एक आदिवासी विक्रेता को गैर-आदिवासी के रूप में जताकर या गैर-आदिवासी खरीददार ही आदिवासी होने का दावा कर सकता है। कानून का हेर फेर और उसका स्पष्ट दुरुपयोग सरकारी तन्त्र का गुप्त सहयोग आसान हो जाता है। रोजगार के मामलों में लोगों की जाति के सत्यापन की प्रक्रिया अपेक्षाकृत अधिक सुलझी हुई है। इसमें जालसाजी की स्थिति में दाण्डिक कार्यवाही का भय भी है। तब भी अनुसूचित जाति/जनजाति के झूठे प्रमाण पत्र जारी करने की घटनाएं खतरनाक स्तर तक पहुंच गई हैं। अतः इस बढ़ते हुए दुरुपयोग को रोकने के लिए उपयुक्त कार्यविधि अपनाना जरुरी हो गया है। यदि किसी आदिवासी द्वारा भूमि किसी ऐसे व्यक्ति को हस्तान्तरित की जाती है जो उसी गांव में नहीं रहता है और आदिवासी होने का दावा करता है तो उस दशा में खरीददार के लिए यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि वह भूमि हस्तान्तरण को औपचारिक रूप से प्रभावी किए जाने से पहले जाति संबंधी एक प्रमाण पत्र प्रस्तुत करे। इस मामले में भी रोजगार के लिए जाति प्रमाण पत्र जारी करने की जो कार्य विधि है वही अपनाई जानी चाहिए। उदाहरण के लिए अनुसूचित-जातियों और जन-जातियों के सभी सदस्यों को हाई स्कूल परीक्षा के प्रमाण पत्रों के साथ कम्प्यूटर नम्बरों सहित जाति संबंधी प्रमाण पत्र जारी किए जाने चाहिएं। ये प्रमाण पत्र अन्यथा सिद्ध किए जाने की स्थिति को छोड़कर किसी व्यक्ति की जाति जनजाति का उसी तरह प्रामाणिक सबूत माने जाने चाहिएं, जिस तरह नौकरी में लगने और रिटायर होने के संदर्भ में आयु के लिए मैट्रिक परीक्षा के प्रमाण पत्र में प्रविष्ट जन्म की तारीख प्रामाणिक साक्ष्य के रूप में मानी जाती है। यह कार्य विधि 1989 से प्रभावी की जानी चाहिए।

3.34 इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि

(1) **अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सूचियों में सम्मलित किए जाने के लिए विभिन्न समुदायों के दावों की जांच प्रत्येक मामले में विशेष रूप से गठित विशेषज्ञों के एक दल द्वारा पूर्ण रूप से की जानी चाहिए। इस विशेषज्ञ दल से यह अपेक्षा की जानी चाहिए कि वह उन दावों की जांच (क) उस समुदाय के अन्दर के प्रत्येक उप समूह, यदि कोई हो, और (ख) प्रत्येक सुसंगत भौगोलिक इकाई, जो ऐतिहासिक जातीय और भाषाई आधारों के संदर्भ में इस प्रयोजन के लिए आवश्यक हो, की सामाजिक**

स्थिति के प्रसंग से करें । इस विशेषज्ञ दल को इस प्रस्ताव के बारे में संबंधित भौगोलिक ईकाइयों में अन्य अनुसूचित जातियों और जन जातियों जैसा भी हो, की प्रतिक्रियाओं को भी दर्ज करना चाहिए । इस विशेषज्ञ दल की रिपोर्ट पर उसके पूरे रिकार्ड सहित एक ऐसी राष्ट्रीय समिति द्वारा विचार किया जाना चाहिए जिसमें प्रतिष्ठित समाजविज्ञानी शामिल हों । प्रत्येक मामले में इस राष्ट्रीय समिति की सिफारिशें और अनुसूचित जातियों और जन जातियों के आयुक्त के तत्संबंधी विचार भी, यदि कोई हों संसद के सामने अनुसूचियों में संशोधन के लिए उनके विचार के लिए प्रस्ताव लाने के समय उसे उपलब्ध कराए जाने चाहिए ।

(2) इन सूचियों की ऐसी विसंगतियां जिनका झूठे दावे प्रस्तुत करने के लिए प्रयोग होता है जो संबंधित प्राधिकारियों की जानकारी में आएं उनको संकलन किया जाना चाहिए और सूचना तथा मार्ग दर्शन के लिए उन प्राधिकारियों को भेजी जानी चाहिए जो अनुसूचित जातियों/जन जातियों के प्रमाण पत्र जारी करने के लिए जिम्मेदार हैं ।

(3) अनुसूचित जातियों/ जनजातियों के सभी छात्रों को उनकी स्कूली शिक्षा की समाप्ति पर जाति के स्थायी प्रमाण पत्र कम्प्यूटर नम्बरों सहित जारी किए जाने चाहिए । स्कूल बोर्डों के लिए यह अनिवार्य किया जाए कि वे अनुसूचित जातियों/जन जातियों के छात्रों को मिले कम्प्यूटर नम्बरों को उनके हाईस्कूल के प्रमाण पत्रों में शामिल करें । यह प्रमाण पत्र किसी व्यक्ति के अनुसूचित जाति या जन जाति का होने का निश्चायक साक्ष्य समझा जाना चाहिए ।

आर्थिक विकास के कार्यक्रम

3.35 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोगों के आर्थिक हितों को आगे बढ़ाने के कार्यक्रम राष्ट्र के सुनियोजित आर्थिक विकास प्रारम्भ किए जाने के समय से ही लिए गए थे । तथापि, चूंकि आरम्भ में मूलभूत धारणा यह रही थी कि इन समुदायों के लोग सामान्य विकासीय कार्यक्रम के लाभों में अन्य लोगों की तरह ही सामान्य रूप से भागीदार होंगे, अतः उनके विकास के लिए विशेष कार्यक्रमों की रचना का रूप अनुपूरक था । इस प्रकार सोचा यह गया था कि यथासमय प्रारंभिक दूरी समाप्त हो जाएगी और जिन बाधाओं का उन्हें सामना करना पड़ा था वे भी दूर हो जाएंगी । आदिवासी क्षेत्रों में वहां अवस्थापना की कमी और उनकी सामान्यतः अल्पविकसित स्थिति के संदर्भ में इस अनुपूरक कार्य का आकार काफी बड़े होने की जरूरत थी । परन्तु दो कारणों से इन कार्यक्रमों का प्रभाव अपर्याप्त रहा । प्रथमतः मूल परिकल्पना के अनुसार विकास के सामान्य कार्यक्रमों का लाभ कमजोर वर्गों तक नहीं पहुंचा । दूसरे, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए जो कार्यक्रम इस अपेक्षा से बनाए गए थे कि वे विकास के सामान्य प्रयासों के अनुपूरक होंगे, वे उनका पर्याय बन गए । इस स्थिति में आगे चलकर उस समय कुछ सुधार हुआ था जब सामान्य रूप से सीमान्त कृषक, खेतिहर मजदूर आदि जैसे कमजोर वर्गों और सूखा प्रवण क्षेत्र जैसे प्रतिकूल परिस्थिति क्षेत्रों के लिए विशेष कार्यक्रम बनाए गए । इन लक्ष्य वर्गों का एक बड़ा हिस्सा अनुसूचित जातियों और जन जातियों का सदस्य है । इसलिए इन लाभों का एक भाग इन वर्गों के लिए अलग से रखा गया है । यद्यपि, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों विशेष रूप से जन जातियों तक उनका देय भाग सही रूप में पहुंचने में अनेक बाधाएं आती हैं, तथापि, अन्य कार्यक्रमों (पैरा 3.38 से तुलित) की तुलना में स्थिति यहां पर बहुत अच्छी है । तथापि सामाजिक और आर्थिक दोनों ही स्थितियों में अन्तर्निहित बाधाओं के संदर्भ में अंतिम उद्देश्य को देखते हुए ये कार्यक्रम भी पर्याप्त नहीं माने जा सकते थे ।

3.36 पांचवी पंचवर्षीय योजना के समय से आदिवासी उपयोजनाएं और छठी योजना के समय से अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजनाएं बनाने से अनुसूचित जनजातियों और जातियों के विकास की कार्यनीति में निर्णायक मोड़ आया है यद्यपि उनका ढांचा परम्परागत व्यवस्था के अन्तर्गत ही रहा है । इन योजनाओं में इन समुदायों के कल्याण और प्रगति से संबंधित मामलों पर समग्र रूप से विचार करने का प्रयास किया गया था और इन समुदायों के लोगों को एक निश्चित समय-सीमा के अन्दर अन्य लोगों के स्तर तक लाने के स्पष्ट उद्देश्य से व्यवस्था के औपचारिक अवरोधों को काटते हुए कार्यक्रम बनाने का प्रयास किया गया था ।

3.37 विभिन्न योजनाओं के अधीन अनुसूचित जातियों तथा जन जातियों से संबंधित कार्यक्रमों का पुनरावलोकन इस रिपोर्ट के भाग 2 में दिया गया है। उसमें भिन्न भिन्न कार्यक्रमों की समीक्षा की गई है जैसे गरीबी निवारण कार्यक्रम, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, रोजगार योजनाएं, एकीकृत ग्रामीण विकास, विभिन्न मंत्रालयों/विभागों की अपनी-अपनी योजनाएं और अन्तिम रूप से आदिवासी उप योजना और विशेष संघटक योजना के अधीन पूरक रूप के प्रयास । जैसे पहले बताया गया है सभी योजनाओं के अधीन उपलब्धियों का मूल्यांकन उसके सूचकों, जैसे वित्तीय प्रावधान और खर्च तथा लाभ भोगियों की संख्या, के आधार पर किया गया है । बड़ी-बड़ी राशियों का आबंटन इस बात का सूचक है कि सामान्य रूप से गरीबी निवारण और विशेष रूप से अनुसूचित-जातियों और जन जातियों की आर्थिक प्रगति के कार्यक्रमों को ऊंची प्राथमिकता दी गई है : आदिवासी उपयोजना और विशेष संघटक योजना की कार्यनीति से उनके विकास के सवालों पर ध्यान केन्द्रित हुआ है । आज हम कम से कम इस स्थिति में तो हैं कि उपलब्धियों की यथार्थपरक समीक्षा करें और प्रयासों की खामियों को भी पहचान सकें । जिससे यह महत्वपूर्ण राष्ट्रीय विषय अस्पष्ट आम धारणाओं और नेक इरादों की परिधि से बाहर आ गया है । आदिवासी उपयोजना की कार्यनीति लागू होने से आदिवासी विकास के लिए प्रावधान पांचवीं योजना में 1102 करोड़ रुपए से तेज गति से बढ़कर छठी योजना में 4668.46 करोड़ रुपए

हो गया था और अनुसूचित जातियों के लिए प्रावधान जो पांचवीं योजना में अनुमानित और स्पष्ट है कि बहुत थोड़ा था, विशेष संघटक योजनाएं लागू करने के बाद छठी योजना में बढ़कर 4123 करोड़ रुपए हो गया था। उसके बाद वित्तीय प्रावधान स्थिर गति से बढ़ता रहा है। यद्यपि, अभी भी इस ओर काफी बढ़ाने और तत्संबंधी व्यवस्था को सुचारू करने की आवश्यकता है।

3.38 ऊपर वर्णित सभी कार्यक्रमों का कुल मिलाकर संचयी प्रभाव गरीबी की रेखा से अभी भी नीचे रह रहे लोगों की संख्या के रूप में स्पष्ट होता है। इन आंकड़ों से यह जाहिर है कि गरीबी की रेखा से नीचे के लोगों का अनुपात 1977-78 के 48.13 प्रतिशत से घटकर छठी योजना के अन्त तक 37 प्रतिशत हो गया था। यह इस तथ्य के बावजूद महत्वपूर्ण उपलब्धि है कि सही आंकड़ों के बारे में विशेष रूप से निरन्तर बढ़ रही कीमतों और गरीबी की अलबत्ता स्थिर रेखा जो केवल लम्बे समय के बाद ही पुनरीक्षित होती है के संदर्भ में कुछ सच्चे सन्देह हैं। विभिन्न योजनाओं के अधीन बताई गई हितग्राहियों की कुल संख्या बहुत शानदार है। उदाहरण के लिए छठी योजना अवधि में अनुसूचित जातियों के 87.1 लाख परिवारों और अनुसूचित जन जातियों के 39.6 लाख परिवारों को लाभ पहुंचाया जाना बताया गया है। तथापि, ये आंकड़े विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के अधीन हितग्राहियों का साधारण योग मात्र हैं। इन आंकड़ों में से यदि दुहराव के आंकड़े निकाल दें तो हित ग्राहियों की सही संख्या कितनी होगी इसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। और फिर सहायता मिलने के बाद हित ग्राहियों का क्या होता है इसका तो किसीको अता-पता ही नहीं होता है। इसके अलावा राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में निहित शोषण की प्रक्रिया असंगठित क्षेत्र में निर्वाह कर रहे अधिकांश लोगों को निष्ठुरता पूर्वक सीमान्त की ओर धकेलती जा रही है। इस प्रकार न मालूम किस समय कितने लोग गरीबी की रेखा विपरीत दिशा में पार कर उसकेनीचे पहुंचते जा रहे हैं।

3.39 गरीबी मात्र आंकड़ों और शुद्ध संख्याओं का मामला नहीं है वह उस काल खण्ड में राष्ट्र में व्याप्त तत्कालीन सामाजिक आर्थिक परिवेश का गतिशील प्रति आभास है। अत: यद्यपि आर्थिक स्थितियों में निरपेक्ष रूप से बढ़ोतरी हो सकती है तथापि, देश में बढ़ती हुई असमानता सापेक्षिक रूप से वंचित होते जाने की भावना को जन्म देगी और उसे अधिकाधिक तेज और व्यापक बनाती जाएगी।

3.40 ऊपर कही गई बातों के संदर्भ में आवश्यक संशोधन के बाद भी उपलब्धियां विशेषकर उन योजनाओं में उल्लेखनीय रही हैं जिनमें लक्ष्य सुनिश्चित और गणना योग्य रूप में निर्धारित किए गए हैं। यह बड़े संतोष की बात है कि अधिकांश भूमिहीन लोगोंको आवास के लिए भूमि आवंटित कर दी गई है। आज इनके पास अपना कहने के लिए कम से कम भूमि का एक टुकड़ा तो है जो उनके लिए बड़ा भारी मानसिक संबल है। यह स्थिति इससे पहले की उस स्थिति से नितान्त भिन्न है जिनमें इन भूमिहीन लोगों में से बहुतों को लगभग दासता जैसी स्थिति केवल इस कारण से स्वीकार करनी पड़ी थी कि उनके पास खड़े होने के लिए भी कोई जगह नहीं थी। बंधुआ मजदूरी की अमानवीय प्रथा जो स्वतन्त्रता के बाद राज्यों के द्वारा अनेकानेक कानून बनाने के बाद आंखों से ओझल हो गई थी और कालान्तर में भुला दी गई थी फिर से खुले में ले आई गई। अब इस प्रथा के निकृष्टतम रूप अपवाद मात्र हैं पर फिर भी उसे माफ नहीं किया जा सकता है। इसके बावजूद यह कहा जा सकता है कि अब सामान्य रूप से बन्धुआ प्रथा शक्ति प्रयोग की बजाय प्रतिकूल आर्थिक संबंधों के रूप में अधिक है, तथापि कभी कभी अत्यन्त गर्हित घटनाएं भी सामने आ ही जाती हैं। यह सुखद संयोग है कि कुछ सुदूर क्षेत्रों में आम लोग यह कहते हैं कि महाजनी और साहूकारी अब खत्म हो गई है जिसका सीधा-सादा कारण यही है कि उनका पैसा अब सुरक्षित नहीं रह गया है। इस तरह के उदाहरण यद्यपि अभी अपवाद रूप ही हैं तथापि उनका महत्व इसमें है कि उनसे यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत रहते हुए भी उपलब्धि कितनी हो सकती है।

गरीबों के संरक्षण के लिए कानून बनाने से उनकी जायज मांगों को अब खुले रूप में वैधता मिल गई है और उनके प्रतिरोधियों का स्थान नए संदर्भ में कानून को उलट बाजू में है। इस संबंध में जिन सामाजिक कार्यकर्ताओं ने इस नई स्थिति का लाभ उठाकर सम्यक भूमिका निभाई है और लोगों को विशिष्ट समस्याओं के इर्द गिर्द संगठित किया है उनका बहुत से मामलों में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

3.41 इस बात का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि अपनी भूमि अनुसूचित जातियों के लोगों में भूमि स्वामियों की संख्या में थोड़ी सी वृद्धि हुई है सिंचाई के कुओं के कार्यक्रम के परिणाम भी उल्लेखनीय हैं यद्यपि उनकी संख्या अभी भी जितनी बड़ी क्षमता बनाई जा सकती है उसकी तुलना में बहुत थोड़ी है। बहुत से क्षेत्रों में मजदूरी की सामान्य दरें बढ़ी हैं तथापि वह लोगों की उचित हकदारी के अनुरूप नहीं है। इस संबंध में न्यूनतम मजदूरी कानून से लोगों की सहायता की है और इसके लिए उन्हें अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने का अधिकार दिया है यद्यपि उसके कार्यान्वयन के लिए कोई भी प्रशासन व्यवस्था लगभग नहीं के बराबर है।

3.42 ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युतीकरण का लाभ घोर दूर-दराज के कुछ अंचलों तक पहुंच चुका है और कुछ क्षेत्रों में सभी गांव उसके अन्तर्गत ले लिए गए हैं। राज्य सरकारों ने इस बात के लिए विशेष कदम उठाए हैं कि बिजली की लाईन अनुसूचित-जातियों/जनजातियों की बस्तियों तक पहुंचाई जाएं, हालांकि कभी-कभी उन बस्तियों का शामिल करना मात्र नैमित्तिक हो सकता है जिसका अर्थ ही मात्र लाइट खनात लग जाना जिसका जलने का भी योग न आये। सड़कों का जाल तो विस्तृत होता जा रहा है परन्तु फिर भी बहुत से दूर-दराज के क्षेत्रों की सुगम्यता में कोई सुधार नहीं हुआ है। काफी बड़ी संख्या में बस्तियों, पारों और गांवों में हैण्ड पम्प लग गए हैं, यद्यपि, उनमें से कुछ समय-समय पर खराब पड़े रहते हैं। ये सभी ऐसी बात वर्तमान स्थिति के

प्रकाशमय पक्ष को दर्शाती हैं जिससे आशा बंधती है यद्यपि उसके निराशाजनक पहलू भी बहुत व्यापक हैं ।

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास के लिए व्यापक ढांचा

3.43 आदिवासी उप योजना और विशेष संघटक योजना की एक महत्वपूर्ण विशिष्टता यह है कि वे विकास कार्यक्रमों की गठरी मात्र न हो कर प्रक्रियाओं वाला स्वरूप अधिक है। जैसा हमारी समीक्षा से स्पष्ट है कि यद्यपि, वित्तीय प्रावधानों में भारी वृद्धि हुई है और कुछ कार्यकलापों में विशेष रूप से पहले की अपर्याप्त निष्पादन की तुलना में महत्वपूर्ण उपलब्धियां हुई हैं, परन्तु नई कार्यनीति की अन्तर्निहित क्षमता का सम्यक विकास अभी नहीं हो पाया है : इस कारण उपलब्धि आशा से बहुत कम हैं, और आगे जो काम करना है उस संदर्भ में नितान्त अपर्याप्त भी है जिसके अनुसार इन समुदायों के सदस्यों के लिए राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में, विशेष रूप से उस स्थिति में जबकि राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में इन समुदायों, मुख्य रूप से अनुसूचित जनजातियों की सापेक्षिक स्थिति में सुधार नहीं हुआ है वरन् अलबत्ता बिगड़ गई है, समानता का स्थान सुनिश्चित करना है। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ लोगों को होने वाले लाभों को सामान्य प्रगति के लिए साक्ष्य, जो स्थूलरूप में दिखाई देते हैं, मान लिए जाते हैं और उनको उस रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिससे एक गलत धारणा और आत्म-तोष की भावना पैदा हो जाती है। ऐसा लगता है कि यही मानस चित्र की कारगर रणनीति बनाने के बाद भी एक लम्बे समय तक उनके क्रियान्वयन में गंभीर चूकें होती रही हैं और साधारण कार्य-कारी ब्यौरे तैयार करने तक का काम न केवल सालों तक वरन् एक योजना के बाद दूसरी योजना बीतते जाने पर अनदेखे पड़े रह जाते हैं। सही अर्थों में आगे बढ़े बिना ही साल दर साल स्थिति की समीक्षा समस्याओं की पहचान और प्रस्तावित कार्य योजनाएं बनाने का रूप नेमी कार्य को देखते रहना क्षोभकारक अनुभव है।

3.44 हम नई कार्य नीति के प्रथम मूलभूत तत्व से प्रारम्भ करें जिसका आशय यह है कि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और विकास एक राष्ट्रीय कार्य हैं जिसमें सभी नागरिकों द्वारा जीवन में अपनी स्थिति के अनुसार योगदान दिया जाना है जाहिर है कि इसकी शुरुआत सभी सरकारी संगठनों द्वारा की जानी थी जिनके पास व्यापक राष्ट्रीय जीवन में कोई न कोई जिम्मेदारी है। इस विषय में केन्द्र सरकार द्वारा पहल जरूर की गई जो स्वागत योग्य है और उसी के बाद राज्य सरकारों ने आदिवासी उपयोजनाएं और विशेष संघटक योजनाएं बनाई थीं। परन्तु यह अत्यन्त खेद की बात है कि किसी भी केन्द्रीय मंत्रालय ने 1974 में उस संबंध में प्रधानमंत्री के द्वारा पहला नोट लिखने (अनुलग्नक 2) के एक दशक से अधिक समय के बाद भी किसी एक मंत्रालय ने भी उस काम को उसकी सही भावना के अनुसार आरम्भ तक नहीं किया है। किसी ने भी अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास के लिए अपने कार्य क्षेत्र के लिये दीर्घकालीन योजना तैयार नहीं की है जिसमें निम्न बातें समुचित रूप से शामिल होनी चाहिए : (1) वर्तमान स्थिति, (2) विशेष समस्याओं और आगे के कार्यों का विवरण, (3) राज्य सरकारों द्वारा किए गए प्रयास और (4) निर्धारित कार्य सम्पन्न हो जाय यह सुनिश्चित करने के लिए मंत्रालय की अपनी योजना इस संबंध में अधिक से अधिक यांत्रिक रूप से कुछ अभ्यास किए गए हैं और उन विकास कार्यक्रमों के सामने जिनका अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों से संबंध हो सकता है, नैमित्तिक रूप से वित्तीय प्रावधान अंकित कर दिये गए हैं। **केन्द्रीय मंत्रालयों का जो आकार अब हो गया है उसको देखते हुए केवल यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उनमें इस राष्ट्रीय कार्य के लिए न केवल इच्छा का अभाव है वरन वे जिम्मेदारी स्वीकार करने के लिए अनिच्छुक** ।

विशेष केन्द्रीय सहायता के अनुपूरक रूप की अवमानना

3.45 संविधान के उपबन्धों के अनुसरण में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए केन्द्रीय सरकार की सहायता राशि के रूप में होना जरूरी है। इस मूलभूत तत्व के परिपालन में जो बार-बार चूक होती रही थी उसकी ओर ढीलू आयो समिति ने विशेष रूप से ध्यान आकर्षित किया था। आदिवासी उपयोजना में स्पष्ट दिशा-निर्देश और समुचित कार्यविधि निर्धारित करके इस चूक को दूर करने का प्रयास किया गया था। यही सिद्धान्त बाद में अनसूचित जातियों के कल्याण और प्रगति के लिए विशेष संघटक योजनाओं में अपनाया गया था। राज्यों से यह अपेक्षा की गई थी कि पहले वे राज्य की सामान्य योजना में से उनके विकास के लिये समुचित प्रावधान की व्यवस्था करके एक व्यापक योजना बनाएंगे। इस आधारभूत निवेश के ऊपर दूसरी परत के रूप में संबंधित केन्द्रीय मंत्रालयों द्वारा उन योजनाओं में उनके अपनी-अपनी जिम्मेदारी क्षेत्रों के कार्यक्रमों के लिये समुचित अनुपूरक राशि दी जानी थी। अन्त में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के प्रभारी मंत्रालय से यह अपेक्षा की गई थी कि उन योजनाओं में जो भी कमियां बच रहें उन्हें वह विशेष केन्द्रीय सहायता देकर पूरी करें। उस आयोजना की यह मूलभूत मान्यता, कि विशेष केन्द्रीय सहायता राज्य के प्रयासों को समर्थन देने वाला अनुपूरक रूप होनी चाहिए, का समाचार नहीं हुआ है।

3.46 यद्यपि सामान्य स्थिति ऊपर के वर्णन के अनुसार है, तथापि, क्षेत्र की वास्तविक स्थिति में विभिन्न राज्यों में काफी भिन्नता है। इसके अलावा विशेष संघटक योजनाओं और आदिवासी उपयोजनाओं की स्थितियों में उल्लेखनीय अन्तर है। राज्य योजना में विशेष संघटक योजनाओं के लिए प्रावधान तदर्थ आधार पर निश्चित किया जाना अभी भी जारी है जो बहुत कुछ संबंधित राज्यों के विभिन्न विभागों और उनके अधिकारियों की पहल पर निर्भर करता है। इस प्रावधान का विशेष केन्द्रीय

सहायता से कोई संबंध नहीं है। इसके फलस्वरूप ऐसा कोई रास्ता नहीं है जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि विशेष केन्द्रीय सहायता अनुसूचित जातियों के लिए राज्य के प्रयासों के अलावा वास्तव में अनुपूरक के रूप में उपयोग में आती है। इस संबंध में आदिवासी उपयोजनाओं के मामले में स्थिति कुछ अच्छी है। सभी राज्यों में आदिवासी उपयजना के लिए बजट में अलग उपशीर्ष कार्य किए जा चुके हैं और कुछ राज्यों में आदिवासी उपयोजनाओं के लिए पृथक मांग भी स्थापित की गई है। यह व्यवस्था यह सुनिश्चित करने के लिये कि विशेष केन्द्रीय सहायता अनुपूरक रूप में इस्तेमाल हो पहला कदम है। परन्तु उनका भी इस महत्वपूर्ण पहलू के बारे में कोई मॉनीटरिंग नहीं किया जा रहा है, यद्यपि, उसके किये आज जब कि सभी मदें और तत्संबंधी आंकड़े राज्य के बजटों में नियमित रूप से दिखाये जा रहे हैं, उसके उद्देश्यों के बारे में स्पष्ट दृष्टि के अलावा और कोई विशेष प्रयास करने की आवश्यकता नहीं है।

3.47 छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान अनुसूचित क्षेत्रों वाले आठ राज्यों के बारे में योजना दस्तावेजों के आधार पर आदिवासी उपयोजनाओं के संबंध में प्रावधान तथा खर्च का सरसरा विश्लेषण (अध्याय 6) से आश्चर्यजनक तथ्य सामने आये हैं। प्रथम आदिवासी उपयोजना में समुचित रूप से क्या-क्या शामिल होना चाहिए इस बारे में भी कोई एक-समान नीति नहीं है। कुछ मामलों में ऊर्जा जैसी मदों के लिए जिनका आदिवासी विकास से कोई सरोकार नहीं है और भारी उद्योग और बड़ी सिंचाई योजनाओं जैसी मदों के लिए जो उनके ऊपर कठोर उलट प्रहारों के लिए जिम्मेदार हैं बड़े-बड़े प्रावधान आदिवासी उपयोजनाओं में शामिल किए गए हैं अनावश्यक मदों को उपयोजना में शामिल करने की यह युक्ति केवल निवेश के आंकड़ों और प्रावधान के प्रतिशत को बढ़ाने के लिए अपनाई जा रही है जिससे वे उपयुक्त और न्यायोचित दिखाई देने लगें। दूसरे राज्य योजना के लिए प्रावधान में उल्लेखनीय बढ़ोतरी हो जाने पर भी आदिवासी विकास के लिए आरंभ में तय किए गए योजना प्रावधान में कोई वृद्धि नहीं की जाती है। कुछ मामलों में हर साल के लिए प्रावधान उसके लिये निर्धारित पाँच साला प्रावधान के हिसाब से जो उपयुक्त राशि बनना चाहिए उससे बहुत कम होता है उसके फलस्वरूप आखिर में पाँच वर्ष की अवधि के लिए कुल प्रावधान प्रारंभ में स्वीकृत प्रावधान से बहुत कम रह जाता है इन सभी मामलों में राज्य योजना में आदिवासी विकास के सही दावों की अवहेलना हो जाती है। तीसरे विशेष केन्द्रीय सहायता जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य या कृषि जैसे आदिवासी विकास के लिए महत्वपूर्ण विषयों में राज्य के प्रयासों में अनुपूरक की भूमिका अपेक्षित है। इन क्षेत्रों में राज्य के अपने प्रयासों में कमी कर उसके स्थान पर उपयोग की जाती है। यह दो तरह से संभव होता है। कभी-कभी संबंधित क्षेत्रों के लिये शुरू में ही प्रावधान इस धारणा के आधार पर कम रखा जा सकता है कि वैसे ही कार्यक्रमों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता से प्रावधान होने की संभावना है। दूसरे जिन कार्यक्रमों पर राज्य की अपनी योजना से व्यय होता है उनमें खर्चा बहुत कम हुआ दिखाया जाता है जबकि विशेष केन्द्रीय सहायता से लिए गए कार्यक्रमों पर व्यय अधिक दिखाया जाता है।

3.48 सभी तरह के कार्यक्रमों को बिना सोचे-समझे एक मांग में बटोर कर एक साथ रखने के अत्यन्त हानिकारक प्रभाव हुए हैं। पूंजी-गहन परियोजनाएं कार्यान्वियन करने में आसान हैं और वे कितनी भी बड़ी राशि क्यों न हो आसानी से हजम करती जाती हैं। परन्तु आदिवासी लोगों के लिए जिन कार्यक्रमों का वास्तविक महत्व है उनके लिये धन राशि तो बहुत थोड़ी ही जरूरी होती है परन्तु उनका आयोजन कठिन होता है और कार्यान्वियन तो और भी दुष्कर होता है। ऐसे कार्यक्रमों की सफलता का सही मानदण्ड है उनका व्यापक प्रसार और बढ़ती हुई भूमिका। परन्तु विडम्बना यह है कि ऐसे कार्यक्रमों में व्यय की कमी किसी को भी अरुचिकर नहीं होती है तो प्रशासन को भी उस खर्च में कमी से राज्य के वित्तीय साधनों की स्थिति सुधरने में मदद मिलती है और जब वित्तीय संसाधनों की स्थिति कमजोर हो तो प्रशासन को भी दुर्गम क्षेत्रों में काम न करने के लिए बहाना मिल जाता है जिससे वे दिखावे के लिए भी कोई प्रयास करने की जहमत से बच जाते हैं।

3.49 ऊपर वर्णित आठ राज्यों के योजना दस्तावेजों में दिए आंकड़ों और कल्याण मंत्रालय के आंकड़ों की शासन के पक्ष में सबसे अनुकूल व्याख्या करने पर भी सरसरे विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि हिमाचल प्रदेश को छोड़कर अन्य सभी राज्यों में छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान उन राज्यों को दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता यदि पूरी नहीं तो, उसका काफी हिस्सा बिना खर्च के पड़ा रहा है। यदि विस्तृत विश्लेषण किया जाए तो और भी खराब स्थिति सामने आएगी। इस संबंध में यह भी उल्लेखनीय है कि केवल आंध्र प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, और महाराष्ट्र मामलों में बजट के पक्के आंकड़े उपलब्ध हैं। उड़ीसा और राजस्थान के आंकड़े अप्रमाणीकृत विवरण पत्रों पर आधारित हैं। जहां तक बिहार का संबंध है, उस दस्तावेज में दिए गए आंकड़े भी असंबद्ध हैं और बहुत विश्वसनीय नहीं है। अन्य राज्यों में जहां अभी समुचित बजट की व्यवस्था नहीं है स्थिति बहुत भिन्न होने की संभावना नहीं है।

3.50 जहां तक अनुसूचित जातियों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता का संबंध है अधिकांश मामलों में अनुपूरक सिद्धान्त को कार्यरूप देने के लिए प्रारंभिक कदम भी नहीं

उठाए गए हैं। विशेष संरक्षक योजनाओं के लिए आबंटन सामान्यतः नैमित्तिक होता है और कभी-कभी वह ऐसे कार्यक्रमों के लिए भी हो सकता है जिनका अनुसूचित जातियों के विकास से कोई खास महत्व नहीं है। विशेष केन्द्रीय सहायता का राज्य योजना के कार्यक्रमों से किसी भी प्रकार का कोई संबंध नहीं है।

3.51 **संक्षेप में छठी योजना के दौरान अनुसूचित जातियों और जनजातियों दोनों के लिए रखी गई विशेष केन्द्रीय सहायता का अधिकांश भाग इन समुदायों के कल्याण और प्रकृति के लिए राज्य के प्रशासन के अनुपूरक के रूप में उपयोग नहीं किया गया है। उनका उपयोग इस प्रकार से किया गया है जिससे अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास के लिए राज्य का अपना वित्तीय दायित्व कम हो जाय। इस प्रकार यह प्रणाली संविधान में प्रतिष्ठित तत्सम्बन्धी आधारभूत सिद्धान्त का उल्लंघन है।** (विस्तृत विवेचन के लिए पैरा 3.52 और 3.53 देखिए) अनुसूचित क्षेत्र वाले आठ राज्यों के विश्लेषण से यह तथ्य प्रकट होता है कि छठी योजना अवधि के दौरान इन राज्यों को दी गई 410.28 करोड़ रुपए की कुल विशेष केन्द्रीय सहायता में से 236.75 करोड़ रुपए की राशि राज्य सरकारों के पास बिना खर्च किए शेष बची मानी जानी चाहिए। चूंकि इस मामले में चूक केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों और योजना आयोग सभी ओर से हुई है इसलिये यदि केन्द्रीय सरकार इस संबंध में यह रुख अपनाती है कि इस राशि को सातवीं योजना के दौरान राज्यों को दी जाने वाली विशेष केन्द्रीय सहायता की राशि में से काट कर समायोजित कर दें तो वह सही नहीं होगा और न उससे अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और प्रगति के काम को बढ़ावा मिलेगा। इसकी बजाय राज्य सरकारों को यह सलाह दी जानी चाहिये कि वे छठी योजना के दौरान जो राशि खर्च नहीं हुई है और उनके पास पड़ी है उस के बराबर का अतिरिक्त प्रावधान सातवीं योजना में उस योजनाकाल के प्रावधान के अलावा करें, जो केवल आदिवासी क्षेत्रों में अनन्य रूप से प्राथमिक शिक्षा के स्तर को ऊंचा करने के लिए प्रयुक्त किया जाय और उसके साथ ही सातवीं योजना के दौरान प्राथमिक शिक्षा के लिए पहले ही निश्चित किए गए प्रावधान के अलावा हो।

3.52 यहां पर आकर मैं अब आदिवासी विकास के संबंधित कुछ योजनाओं में योगदान सिद्धान्त फिर से लागू किए जाने संबंधी एक महत्वपूर्ण प्रश्न की ओर ध्यान आकर्षित करता हूं। यद्यपि इस समय इसके अन्तर्गत दी जाने वाली सहायता की राशि बहुत थोड़ी है तथापि, यह एक महत्वपूर्ण मामला है क्योंकि वह अनुपूरक सिद्धान्त की आधारभूत मान्यता के अनुरूप नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 275(1) के प्रथम परन्तुक के अनुसार आदिवासी कल्याण के लिए किसी कार्यक्रम की आवश्यकता मान लिये जाने के बाद, कोई राज्य सरकार उसके लिए कुछ योगदान देने की स्थिति में है अथवा नहीं, इसका कोई भी ख्याल किये बिना केन्द्रीय सरकार पर उस काम के लिए जितनी भी वित्तीय सहायता आवश्यक हो देने का दायित्व बन जाता है। संवैधानिक व्यवस्था की इसी मूलभूत मान्यता को कार्यरूप देने के लिये ही आदिवासी विकास के लिए उपयुक्त प्रावधान निर्धारित करने के लिए उपयोजना की कार्य पद्धति बनाई गई है। आधार निवेश पहले पहल राज्यों के अपने ही संसाधनों में से निर्धारित किया जाता है। जब प्रत्येक राज्य की स्थिति को देखते हुए एक बार प्रावधान नियत हो जाता है उसके आदिवासी-कल्याण के लिए नियत लक्ष्य को पूरा कराने के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता के माध्यम से आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराने के लिए केन्द्रीय सरकार बाध्य है। **योगदान के सिद्धान्त के अनुसार चाहे उसमें राज्य का हिस्सा कुछ भी क्यों न हो, विशेष केन्द्रीय सहायता किसी कार्यक्रम के महत्व पर निर्भर न होकर राज्य सरकार की क्षमता या उसकी उसके लिये अंशदान देने की इच्छा पर निर्भर करती है जो ऊपर वर्णित संवैधानिक व्यवस्था का उल्लंघन है।**

3.53 योगदान सिद्धान्त केवल तकनीकी अर्थ में ही संविधान का उल्लंघन नहीं है, वरन् उससे उन आदिवासी समुदायों के साथ अन्याय होता है जो आर्थिक रूप से कमजोर राज्यों में रहते है। चूंकि ये राज्य संम्बन्धित कार्यक्रम के लिये आवश्यक निवेश से अपना योगदान देने में असमर्थ हो सकते हैं इसके कारण आदिवासी लोग उस राष्ट्रीय योजना का लाभ मिलने से वंचित रह सकते हैं। दूसरी ओर आर्थिक रूप से अधिक मजबूत राज्य निवेश की आवश्यकता न होने पर भी अपने अंशदान के बल पर उस कार्यक्रम के लिये केन्द्रीय सहायता हासिल कर सकते हैं। जैसा अन्यत्र बताया गया है **आदिवासी कल्याण के बारे में इस प्रकार की सामान्यीकृत व्यवस्था आदिवासी कल्याण के लिए संविधान के मूल सिद्धान्तों का उल्लंघन है। योगदान सिद्धान्त आदिवासी लोगों को उनके लिए संविधान में प्रदत्त संरक्षण के लाभ से वंचित करता है।**

3.54 यह व्यवस्था आदिवासी हितों के लिये एक और रूप में भी हानिकारक है। जब राज्य यह जानते हैं कि यह उन्हें आदिवासी कल्याण की कुछ योजनाओं के लिये केन्द्रीय राशि प्राप्त करने के लिये बाद में अपनी ओर से भी कुछ राशि जुटानी पड़ेगी तो यह नितांत स्वाभाविक है कि वे आदिवासी कल्याण के लिये पहले पहल प्रावधान निर्धारित करते समय ही उसका ध्यान रखें। इस प्रकार प्रत्येक राज्य को उस संभावना के लिये कुछ राशि अलग रखनी पड़ेगी। दूसरे शब्दों में आदिवासी कल्याण के लिये प्रावधान उस स्तर से जानबूझ कर नीचे रखा जायेगा जिसको

राज्य के संसाधनों की सामान्य स्थिति को देखते हुए अन्यथा आशा की जा सकती है। इसमें खास महत्व की बात यह नहीं है कि वित्तीय प्रावधान का आकार कुछ कम हो जायेगा। इसमें आपत्तिजनक बात यह है कि वह पूरी प्रक्रिया जिसे वस्तुनिष्ठ होना चाहिये वही दूषित हो जाती है। इसमें यह भी संभव है कि जब प्रावधान को इस तरह जानबूझकर कम रखने का राज्य प्रयास करते हैं तो वह कटौती उसी राशि तक सीमित न रहकर जिसे सामान्य परिस्थितियों में उपयुक्त माना जा सकता है बढ़ा-चढ़ा कर अधिकतम करने का प्रयास किया जाये। इस प्रक्रिया में आदिवासी कल्याण के लिये राज्यों के प्रयासों को निर्धारित करने में वस्तुनिष्ठता केन्द्रीय नहीं रह जाती है और परिणाम इस बात पर निर्भर करता है कि उस प्रक्रिया में कौन कितनी चतुराई से अपना पक्ष प्रस्तुत कर सकता है जो संविधान में आदिवासी कल्याण के दिये गये महत्व के सन्दर्भ में यह स्थिति अवांछनीय है। जैसा इसके बाद खण्ड 5 में विवेचन किया जायेगा, इस समय आदिवासी के कल्याण से संबंधित नाभिकीय संगठन बहुत कुछ कमजोर है और वे उन बातों को भी जोर से नहीं रख पाते हैं जो सीधे-सादे हिसाब से भी वांछनीय तथा पूरी तरह से न्यायसंगत हैं। कम प्रावधान करने की प्रविधि का यह युक्तियुक्तीकरण, अप्रत्यक्ष होते हुए भी, राज्य योजना के अन्तर्गत आदिवासी विकास के प्रयास का आकार निर्धारित करने के लिये महत्वपूर्ण विचार-विमर्श में उनकी स्थिति को कमजोर करने का बायस बन जाता है।

3.55 योजना आयोग द्वारा सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान आदिवासी कल्याण हेतु विशेष केन्द्रीय सहायता के लिये किया गया प्रावधान इस बात का एक ज्वलंत उदाहरण है कि सभी ओर से भारी सदभावना होते हुए भी आदिवासी हितों को किस प्रकार अनदेखा किया जा सकता है। छठी योजना में विशेष केन्द्रीय सहायता के लिये 485.50 करोड़ रूपये का प्रावधान था। इस अवधि में आबंटित राशि 486.11 करोड़ रूपये थी। देश की सातवीं योजना का कुल आकार छठी योजना की तुलना में 84.6 प्रतिशत अधिक था। इसी आधार पर यदि अनुपातिक रूप से भी आदिवासी विकास के लिये विशेष केन्द्रीय सहायता बढ़ाई जाती तो 896.23 करोड़ रूपये हो जानी चाहिये थी। इसी बीच भारत सरकार ने यह निर्णय लिया कि विशेष केन्द्रीय सहायता का लाभ पूरी आदिवासी जनसंख्या को मिलेगा जो एक स्वागत योग्य कदम था। छठी योजना के दौरान आदिवासी उप-योजनाओं में, जिनमें बहुत कर आदिवासी बहुल क्षेत्र आते हैं, आदिवासी जनसंख्या में से लगभग 72.75 प्रतिशत लोग ही सम्मिलित थे। सातवीं योजना में उपयोजना क्षेत्रों के भीतर न रहने वाले आदिवासियों को विशेष केन्द्रीय सहायता के दायरे में ले आने से शत प्रतिशत आदिवासी उसमें शामिल हो गये। इस सम्बन्ध में सादे हिसाब से भी वह साफ-साफ देखा जा सकता है कि सातवीं योजना में प्रति व्यक्ति पूंजी निवेश को छठी योजना के निवेश के समान स्तर पर रखने के लिये विशेष केन्द्रीय सहायता की राशि 485.50 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 667.35 करोड़ रूपये की जानी चाहिये थी। यदि उसमें सामान्य योजना के आकार में हुई बढ़ोतरी को भी ध्यान में रखा जाता तो यह राशि 1231.93 करोड़ रूपये तक बढ़नी चाहिये थी। परन्तु इसके विपरीत सातवीं योजना के लिये विशेष, केन्द्रीय सहायता केवल 756 करोड़ रुपये निर्धारित की गई थी जो उस राशि, जो अन्यथा निर्धारित होनी चाहिये थी, का लगभग 62.95 प्रतिशत मात्र है, इस प्रकार आदिवासी कल्याण के लिये विशेष केन्द्रीय सहायता के प्रति व्यक्ति प्रावधान में सीमान्त रूप से 130.70 रूपये से 148.05 रूपये अर्थात् केवल 13 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जबकि सामान्य वृद्धि 84.6 प्रतिशत हुई है। जिसमें किसी भी आधार पर सुखद स्थिति नहीं माना जा सकता है। मेरे द्वारा इस घोर विसंगति के बारे में भारत सरकार का ध्यान आकर्षित करने का कोई असर नहीं हुआ। (अध्याय 6 के अनुलग्नक 12)। यह आश्चर्य की बात है कि आदिवासी कल्याण से संबंधित इतने महत्व का मुद्दा लगभग सभी औपचारिक अथवा अनौपचारिक फोरमों में अनदेखा ही रह गया, यद्यपि, कुछ राज्यों ने उसके विरुद्ध विरोध प्रकट किया था। इस स्थिति के लिये सिवाय इस तथ्य का और कोई तर्कयुक्त स्पष्टीकरण नहीं हो सकता है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिये जिम्मेदार संगठन बहुत कुछ कमजोर हैं और उनकी पद गरिमा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण और प्रगति से संबंधित महत्वपूर्ण नीति निर्णयों को प्रभावित करने के लिये ना काफी है।

3.56 यह भी दुख की बात है कि संघ सरकार पूरी आदिवासी जनसंख्या को विशेष केन्द्रीय सहायता के दायरों में लाने के लिये एक आदेश मात्र जारी करके सन्तुष्ट हो गई और इस सम्बन्ध में न कोई प्रारम्भिक और न अनुवर्ती कार्यवाही ही की जिससे यह सुनिश्चित किया जा सकता कि यह सहायता राज्यों के अपने कार्यक्रमों के साथ इस प्रकार समायोजित की जाये जिससे कि उपयोजना क्षेत्र के बाहर राज्य के अपने प्रयास का वह विकल्प न बन जाये। यदि पहले प्रस्तुत किया गया विश्लेषण के इस मामले में किसी दिशा की ओर इंगित करता है तो वह यही है कि यह चूक बहुत बड़े पैमाने पर हुई हो तो यह आश्चर्य की बात नहीं होनी चाहिये।

3.57 इसलिए मैं सिफारिश करता हूं कि --

(1) केन्द्रीय सरकार द्वारा आदिवासी कल्याण के लिये वित्तीय सहायता पूरी तरह से संविधान के अनुच्छेद 275(1) के पहले परन्तुक में निहित सिद्धान्त के अनुसार दी जानी चाहिये। उस सम्बन्ध में विशेष रूप से यह सुनिश्चित किया जाना चाहिये कि (क) आदिवासी कल्याण के लिये धनराशि

Sub. National Systems Unit,
National Institute of Educational
Planning and Administration
D-6782 16/4/91

नियत किया जाने का आधार उसके किसी क्षेत्र अथवा राज्य विशेष में स्थित होने का संयोग न होकर कार्यक्रम समुच्चय की आवश्यकता होनी चाहिये और (ख) जहां एक ओर राज्य योजना में से आदिवासी कल्याण के लिये प्रावधान ऐसे सिद्धान्त के आधार पर जो उस सम्बन्ध में निर्धारित किया जाये तथा उस दायित्व को निभाने के लिए उनकी क्षमता के अनुरूप होना चाहिये वहीं दूसरी ओर केन्द्रीय सरकार की वित्तीय सहायता अनुपूरक के रूप में होनी चाहिये और उसकी राशि किसी भी तरह से राज्य के योगदान करने के सामर्थ्य तथा इच्छा से प्रभावित नहीं होनी चाहिए। आदिवसी कल्याण से संबंधित उन सभी कार्यक्रमों को जिनके लिए राज्य से योगदान करने की अपेक्षा की जाती है, इन सिद्धान्तों के सन्दर्भ में फिर से तैयार किया जाना चाहिए।

(2) आदिवासी कल्याण के लिये अनुपूरक सिद्धान्त जो संविधान में अन्तर्निहित है को अनुसूचित जातियों जनजातियों के कल्याण के कार्यक्रमों के लिये भी स्वीकार किया जाना चाहिए।

(3) सभी राज्यों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास दोनों के लिए एक-एक बजट में अलहदा मांग कायम की जानी चाहिए।

(4) आदिवासी उप योजना के लिये प्रावधानों में मुख्य रूप से वही मदें शामिल की जानी चाहिए जो आदिवासी लोगों के विकास से संबंधित है। यदि आदिवासी उप योजना में अन्य मदें जैसे बिजली तथा बड़ी सिंचाई योजनायें भी शामिल की जाती हैं तो ऐसी मदें उस बजट में भाग "ख" के रूप में इस स्पष्ट शर्त के साथ अलग से दिखाई जानी चाहियें, कि बजट के भाग "क" से भाग "ख" में कोई पुनर्विनियोजन नहीं हो सकता है।

(5) विशेष केन्द्रीय सहायता की जो राशि पंचवर्षीय योजना की अवधि के अन्त में अप्रयुक्त शेष बची रह जाये उसे एक विशेष शिक्षा निधि में जमा कर दिया जाये जिसका उपयोग अन्य रूप से प्राथमिक शिक्षा का विस्तार करने तथा उसकी गुणवत्ता बढ़ाने के लिये किया जाए।

3.58 मैं यह भी सिफारिश करता हूं कि -

(1) पैराग्राफ 3.5 में बताई गई विशेष केन्द्रीय सहायता की वह राशि जो छठी योजना के अन्त में राज्यों के पास अप्रयुक्त शेष बची है और ऐसी और भी राशियां जो इन राज्यों तथा अन्य राज्यों में आदिवासी उप योजना तथा यदि संभव हो तो विशेष संघटक योजना के सम्बन्ध में भी प्रावधान तथा व्यय की समीक्षा के बाद छठी योजना के दौरान अप्रयुक्त शेष बची पाई जायें, सातवीं योजना के अन्तिम दो वर्षों के दौरान प्राथमिक शिक्षा के लिये अतिरिक्त प्रावधान के रूप में उपलब्ध कराई जाए।

(2) आदिवासी कल्याण के लिये प्रावधान तत्काल कम से कम आनुपातिक आधार पर अर्थात् 84.6 प्रतिशत तक उपयुक्त रूप से बढ़ाया जाना चाहिये और अतिरिक्त प्रावधान चालू वर्ष के लिये भी दिया जाना चाहिये।

(3) प्रत्येक राज्य में छितरे आदिवासी लोगों के लिये पृथक उपयोजनायें तैयार की जानी चाहियें जिनमें राज्य योजनाओं से तथा विशेष केन्द्रीय सहायता से दिया जाने वाला प्राविधान स्पष्ट रूप से दर्शाया जाना चाहिये।

व्यापक संरचना जो बनी ही नहीं

3.59 अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण तथा प्रगति के लिये राज्य में विभिन्न विभागों तथा केन्द्र में विभिन्न मंत्रालयों में जो प्रावधान किया जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, वह उनके कल्याण तथा प्रगति के लिये व्यापक योजना तैयार करने की दिशा में पहला आवश्यक कदम मात्र था। अतः जिस प्रकार की विसंगतियों और यहां तक कि कुछ विकृतियों भी विशेषतः आदिवासी उपयोजना के बारे में देखने को मिली है संभवत पहले पहल किये जाने वाले किसी भी अभ्यास में होने की संभावना थी। खेद की बात तो यह है कि वे न केवल अभी तक चली आ रही हैं वरन औपचारिक अनुमोदन जो अलबता अप्रत्यक्ष है, इसके अलावा विभिन्न विभागों द्वारा प्रावधानों की मात्रा नियत करने का कार्य यांत्रिक रीति का हो गया है, जिसमें इन तमाम छोटी-छोटी राशियों का कुल मिलाकर संबंधित व्यक्तियों के विकास के लिये क्या अर्थ है इससे किसी को कोई सरोकार ही नहीं मालूम होता है। प्रत्येक विभाग द्वारा अपनी-अपनी योजनाओं के आधार पर ठोस रूप से जो कुछ किया जा रहा था। इसका संबंधित अलग-अलग प्रावधानों में से हिस्सा बांट के अभ्यास की प्रक्रिया के आधार पर आकलन करने के बाद सही रास्ता होना यह चाहिये था कि उस प्रक्रिया को उलट दिया जाता और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिये पूरा प्रयास क्या होना चाहिये वह निम्न बातों को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किया जाता है —

(1) उनकी वर्तमान आर्थिक स्थिति, (2) अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों और शेष समुदायों के बीच विकास स्तर में अन्तर, (3) राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था अथवा राज्य अर्थ व्यवस्था को कुल मिलाकर विकास की दर और (4) अनसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों द्वारा समाज के अन्य वर्गों के बराबरी तक पहुंच जाने के लिये अपेक्षित अवधि। इस प्रकार उन लोगों के विकास की दर जिन्हें अपनी आर्थिक स्थिति के स्तर और सामाजिक

तथा आर्थिक अवरोधों दोनों ही प्रकार से कमजोरी से जूझते हुए आगे बढ़ना है राष्ट्रीय राज्य अर्थ व्यवस्था की विकास दर की तुलना से अधिक होनी चाहिये थी।

3.61 योजना आयोग ने यह कार्य नीति छठी योजना के आरम्भ में आदिवासी उप-योजना के लिये तथा सातवीं योजना के आरम्भ में विशेष संघटक योजना के लिये सिद्धान्त के रूप में स्वीकार की थी। राज्य सरकारों से यह कहा गया था कि वे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास के लिये पहले समग्र प्रावधान निश्चित करें और फिर इन समुदायों के विकास की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उस प्रावधान का विभागवार प्रावधानों का आकार निर्धारित करें। यह खेद की बात है कि इस सम्बन्ध में राज्यों ने न तो कोई कार्रवाई की है और न वे इस समय ऐसी कोई कार्रवाई करने के लिये तैयार ही प्रतीत होते हैं। चूंकि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण तथा प्रगति के लिये योजना की प्रक्रिया में परिवर्तन करने की आवश्यकता भारत सरकार पहले से ही मानती है, मैं उसकी आवश्यकता पर एक बार फिर से बल देते हुए यह कह सकता हूं कि भारत सरकार द्वारा यह महत्वपूर्ण कदम उठाने में भारी विलम्ब हो चुका है अब बिना और कुछ समय गवाएं इसे पूरा किया जाय जिससे कि अनुसूचित जातियां तथा जनजातियों के लिये संविधान की भावना के अनुरूप विकास की योजनायें तैयार करने के लिये सही शुरूआत हो सके।

3.61 **इसलिए में यह सिफारिश करता हूं कि—**
यह सुनिश्चित करने के लिये तत्काल उपयुक्त उपाय किये जाने चाहियें कि आठवीं पंचवर्षीय योजना से आदिवासियों के लिये विकास की योजनायें (आदिवासी उप-योजनायें) तथा अनुसूचित जातियों के लिए विकास की योजनायें विशेष संघटक योजना स्पष्ट दीर्घकालीन दृष्टि तथा सुनिश्चित लक्ष्य के संदर्भ में तैयार की जाए जिससे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य अधिक से अधिक दो पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में संबंधित राज्य में विकास के सामान्य स्तर तक पहुंचने में समर्थ हो जाय। विशेष रूप से—

(1) आदिवासी उप-योजना तथा विशेष संघटक योजना के लिये वित्तीय प्रावधान राष्ट्रीय स्तर तथा उसी प्रकार प्रत्येक राज्य के स्तर पर भी तत्सम्बन्धी व्यापक योजना अभ्यास के एक भाग के रूप में निर्धारित किया जाना चाहिए तथा उसकी राशि का आकार इतना रखा जाना चाहिये जो पहले से सुनिश्चित किये गये उद्देश्यों की प्राप्ति करने के लिये आवश्यक हो। राष्ट्रीय योजना में तथा राज्य योजनाओं में क्रमशः पूरे राष्ट्र के लिये तथा राज्यों के शेष भागों के लिये नियत की गई विकास की दर की तुलना में आदिवासी उप-योजना क्षेत्र के लिये परिकल्पित विकास की दर का भी स्पष्ट रूप से उल्लेख किया जाना चाहिए।

(2) आदिवासी योजना तथा विशेष संघटक योजना के लिए नियत किये गये समग्र प्रावधान में विभागवार आबंटन अनुसूचित जातियों तथा जन जातियों के कल्याण और विकास के लिए प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए तत्सम्बन्धी आज की उल्टी प्रक्रिया का परित्याग कर निश्चित किये जाने चाहिए।

(3) संबंधित राज्यों तथा केन्द्रीय मंत्रालयों की पंचवर्षीय योजनाओं में आदिवासी उपयोजनाओं और विशेष संघटक योजनाओं के लिए किए गए प्रावधानों को आधार निवेश के रूप में माना जाना चाहिए और ऊपर (2) में जिस स्तर की कल्पना की गई है उसे साकार करने के लिए जो अन्तर बच रहता है उसे पूरी तरह से भरने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा पूरी पूरी राशि विशेष केन्द्रीय सहायता के रूप में दी जानी चाहिए जो अनुपूरक हो और जिसका संचालन नाभिकीय मंत्रालय करे।

अनुसूचित क्षेत्र तथा आदिवासी उप-योजनायें

3.62 नई रण नीति का एक महत्वपूर्ण तत्व यह था कि इसमें इस तथ्य की अनुमति थी कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य जिन जटिल समस्याओं से जूझ रहे हैं, विकास सम्बन्धी परम्परागत कार्यक्रम उनका पूरा समाधान नहीं करा सकते हैं। अनुसूचित जनजातियों के मामले में उनकी सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति की भिन्नता के कारण ये समस्यायें और भी पेचीदी हैं। जीवन के सम्बन्ध से इन लोगों की दृष्टि समग्रवादी है जिसको व्यक्तिक, समाजिक, आर्थिक तथा आर्थिक मांगों में असंदिग्ध रूप से अलग-अलग काट कर नहीं रखा जा सकता है जिनके सम्बन्ध में फिर अलग अलग से कार्यवाही की जा सके। इसके फलस्वरूप प्रशासन के तथाकथित विकासात्मक और गैर विकासात्मक पहलुओं के बीच भेद करना संभव नहीं है। वे आपस में इतने अनन्य रूप से जुड़े हुए हैं कि एक के बिना दूसरे का कोई अर्थ ही नहीं है वरन् इसे भेद के कारण उनका आकारी प्रभाव भी हो सकता है। उदाहरण के लिये जब तक भूमि के स्वामित्व की रक्षा के लिये प्रभावी उपाय नहीं किये जाते हैं, भूमि का विकसित होना उसे भी असुरक्षित बना देगा क्योंकि विकसित भूमि के मूल्यवान को हो जाने से हड़पने का लालच दूसरों के मन में बढ़ जाता है जब कि उसका मालिक स्वयं अपने परम्परागत कौशल तक सीमित साधनों से उसका प्रबन्ध करने में कठिनाई महसूस करते है जब तक आदिवासी को अपने उत्पादन उचित बाजार

मूल्य का एक अंश भी नहीं मिल रहा हो और बेकारी के दिनों में गुजारे के लिये उठाये गये कर्ज को पटाने के लिये अपनी खड़ी फसल ही बेचनी पड़ती हो ऐसी हालत के रहते उत्पादन बढ़ाने के किसी प्रयास का कोई खास अर्थ नहीं है, वानिकी में अनियत मजदूरों के तोहफे में उन लोगों की क्या रूचि हो सकती है जिन्हें पड़ौसी वनों से अपनी दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने तथा लघु वनोपज एकत्र करने करने के लिये उनके परम्परागत अधिकारों से वंचित किया जा रहा हो। कोई भी समाज ऐसे राज्य की हितकारी भूमिका के बारे में अहसास भी कैसे कर सकता है कि जब कि औपचारिक व्यवस्था से उनका पहला सम्पर्क ही उस सबको जिसे वे परम्परागत रूप से मन में संजोयें है आमान्य करार कर दिये जाने से प्रारम्भ हो। यही नहीं वरन कहीं कहीं गैर कानूनी या अनैतिक होने की छाप लगा दी जाये ? एक ऐसे प्रशासन से लोगों के हित में काम करने की आशा कैसे की जा सकती है जो अपनी अन्तर्निहित शक्ति और स्थिति की उन विषमताओं के कारण जिनसें आदिवासी लोगों को मजबूरन गलत पारी में कर दिया गया है, सहज की अटाटूट अधिकारों से लैस है। यह विशेष रूप से उससे स्थिति में और भी कठिन है जब कि इन क्षेत्रों में की प्रशासनिक मशीनरी में लगे लोग वहां पर उनकी व्यक्तिगत संवेदनशीलता तथा अन्य गुणों पर विचार किये बिना ही, और सभी कभी जो अपवाद मात्र नहीं है दण्द स्वरूप भी भेजा जाता है।

3.63 इस पुनरावलोकन से यह स्पष्ट है कि आदिवासी विकास के लिये उप योजना रणनीति से यह अपेक्षा की गई थी कि उससे आदिवासी क्षेत्रों की विशेष स्थिति से निपटा जा सकेगा। जहां आदिवासी उप योजना से आर्थिक विकास के क्षेत्र में उसके लिये आवश्यक निवेश की व्यवस्था करके आगे बढ़ने के लिये भारी दबाव के निर्माण की अपेक्षा की गई थी, वहीं विकास के लिये प्रशासनिक क्षेत्र में उसी के अनुरूप आवश्यक तैयारी और माहोल पैदा करने के लिये संविधान की पांचवीं अनुसूची के अधीन उपबन्धों का प्रयोग किया जाना था। परन्तु सभी आदिवासी बहुल क्षेत्र पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत नहीं थे जो नये सन्दर्भ में आवश्यक प्रतीत होता था। तदनुसार अनुसूचित क्षेत्रों के विस्तार के लिये राष्ट्रपति की शक्ति प्रदान करने के लिए संविधान की पाँचवीं अनुसूची में 1976 में संसोधन किया गया।

3.64 संविधान की पांचवीं अनुसूची में संशोधन करने के लिए विधेयक प्रस्तुत करने के समय संसद के सामने रखे गये उद्देश्य और हेतु के विवरण पत्र में यह कहा गया था कि विभिन्न राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों में पांचवीं योजना के अन्तर्गत आदिवासी विकास के प्रयासों में तेजी न लाने की दृष्टि से वर्तमान अनुसूचित क्षेत्रों के अलावा 50 प्रतिशत से अधिक आदिवासी आबादी वाले सभी क्षेत्रों को रेखांकित कर दिया गया था । आदिवासी उप-योजनाओं के अन्तर्गत आने वाले इन क्षेत्रों के लिये विशेष कार्यक्रम तैयार किये गये थे। इसके अलावा यह भी जोड़ा गया था कि "उप योजना में भूमि हस्तान्तरण, बंधुआ मजदूर, ऋण ग्रस्तता, आदि की समस्याओं सहित शोषण की समाप्ति को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। संविधान की पांचवीं अनुसूची में आदिवासी क्षेत्रों में प्रशासन के लिये विशेष उपबन्ध हैं और विधि तथा प्रशासन सम्बन्धी प्रभावीं कार्यवाही के लिए एक व्यापक तथा नमनीय ढांचा भी उपलब्ध है। पांचवीं अनुसूची के अधीन शक्तियों का प्रयोग विकास कार्यक्रमों के प्रभावी कार्यान्वयन तथा विभिन्न रूपों के शोषण की समस्या की तत्परता से हल करने के लिये किया जा सकता है जहां पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत उप योजना क्षेत्र का अधिकांश भाग समाविष्ट हो गया है फिर भी कुछ क्षेत्र उससे बाहर रह गये हैं। यह स्थिति असंगत है क्योंकि इसके होते हुए पूरे उप योजना क्षेत्र में एक साथ प्रभावीं कार्रवाई नहीं की जा सकती है । इसलिये यह वांछनीय समझा गया कि इस समय पांचवीं अनुसूची के अधीन जो क्षेत्र आते है उनका युक्तियुक्तकरण किया जाये जिससे अनुसूचित क्षेत्र में इन राज्यों के सम्पूर्ण उप-योजना क्षेत्र शामिल हो सकें।"

3.65 उपर्युक्त उद्देश्यों के अनुसरण में पांचवीं अनुसूची के अधीन उन सभी आठ राज्यों के अनुसूचित क्षेत्रों का युक्तियुक्तकरण, उनका पांचवीं योजना के दौरान आदिवासी उप-योजना के अन्तर्गत आने वाले समूचे आदिवासी बहुल क्षेत्रों की सीमाओं तक उनकी सीमा का विस्तार करके दोनों को परस्पर समक्षेत्रीय बना कर दिया गया था। तथापि, इन राज्यों में इनके अलावा जो आदिवासी बहुल क्षेत्र बाद में छठी योजना के दौरान आदिवासी उप योजना में शामिल किये गये थे, वे अभी तक पांचवीं अनुसूची के बाहर ही हैं ॥ इसके अलावा त्रिपुरा के सिवाय अन्य किसी राज्य में, जिनमें कोई अनुसूचित क्षेत्र नहीं थे, आदिवासी बहुल, क्षेत्रों को अनुसूचित क्षेत्र बनाने का सवाल हुआ भी नहीं गया है।

3.66 जहां एक ओर अनुसूचित क्षेत्रों का युक्तियुक्तकरण कुछ हद तक अभी अधूरा है, परन्तु खेद की बात्त यह है कि विधि और प्रशासन सम्बन्धी उस प्रभावी कार्यवाही के लिये पंचम अनुसूची के उपबन्धों का उपयोग जिसकी नई रण नीति की परिकल्पना की गई थी तथा जिसके बारे में उद्देश्य और हेतु के विवरण पत्र में विशिष्ट रूप से उल्लेख किया गया कि उस प्रयोजन के लिये ही विशेष रूप से संविधान में संशोधन करने के 13 वर्ष के बाद भी पहला कदम्म नहीं उठाया गया है। मध्य प्रदेश के अनुसूचित क्षेत्रों के लिये एक व्यापक रेग्युलेशन लगभग एक दशक से केन्द्रीय और राज्य सरकार के बीच सक्रिय रूप से विचाराधीन रहा है। इसका परिणाम यह हुआ है कि पांचवीं योजना के दौरान और उसके बाद वित्तीय निवेश के स्तर सें तेजी से बढ़ोत्तरी के साथ प्रशासनिक तंत्र नेमी तौर पर असाधारण रूप सें बढ़ गया है। इन क्षेत्रों में स्थित संस्थानों को युक्तियुक्त और एकीकृत करने के लिये किये गये तदर्थ उपायों और छुटपुट प्रयासों के परिणामस्वरूप स्थिति और भी अधिक गड़बड़ा गई है । जहां एक ओर व्यापक कार्यक्षेत्र वाले नये संगठनों की स्थापना

की गई परन्तु दूसरी ओर पहले से चले आ रहे संस्थानों को बन्द नहीं किया जा सका है। एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं की स्थापना के साथ-साथ जिस प्राधिकार को एक रेखीय स्थापित करने की कल्पना की गई थी वह अजन्मा ही बना रहा और विभिन्न विभागों की अलग-अलग स्वतंत्र रूप से काम करने की प्रथा यथापूर्व जारी है। इसी तरह आदिवासी क्षेत्रों में कुछ विरले अपवादों को छोड़कर अति साधारण कोटि के कर्मचारियों की पदस्थापना जारी है, और दण्ड-स्वरूप पदस्थापना जो अनहोनी घटना नहीं है, के आधार पर गलत तरह के लोगों को उन पर लाद दिया जाता है, जिससे आदिवासी कल्याण के लिये घातक परिणाम होते हैं। संक्षेप में, पांचवीं योजना में आदिवासी उपयोजनाओं के प्रारंभ होने के बाद आदिवासी क्षेत्रों में प्रशासनिक स्थिति बिगड़ गई है। मैं इस प्रश्न पर कुछ विस्तार से विवेचन अगले खण्ड में करूंगा।

अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास में प्राथमिकतायें

3.67. अनुसूचित जातियों और जनजातियों, विशेष रूप से जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए अपनाए गए कार्यक्रमों में अपनाईगई प्राथमिकताओं की स्थिति सन्तोषप्रद नहीं है। आदिवासी विकास के लिए नई रण-नीति में शोषण की समाप्ति की सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई थी और उसके बाद दूसरे स्थान पर इन समुदायों की आंतरिक शक्ति के निर्माण के कार्यक्रमों को रखा गया था। इस संदर्भ में यह स्वाभाविक था कि आर्थिक कार्यक्रमों का स्थान उनके बाद ही आता। परन्तु प्राथमिकताओं की यह योजना कार्य रूप में नहीं अपनाई गई। वास्तव में, यद्यपि शोषण-समाप्ति की कुछ कार्यवाई आरम्भ तो की गई परन्तु विकास की योजना में उन्हें प्राधान्य नहीं मिला। यह खेद का विषय है कि बाद के योजना दस्तावेजों में शोषण की समाप्ति को सिद्धान्त रूप से सर्वोच्च प्राथमिकता देने के विषय में उल्लेख तक नहीं हुआ है, और फिर इससे भी आगे राष्ट्रीय स्तर पर उसे अनदेखा कर दिया गया है। इस प्रकार आदिवासी व्यवस्था का सबसे अधिक निर्णायक पहलू लगभग उपेक्षित ही रह गया है।

संरक्षात्मक उपाय

3.68 जाति के विशिष्ट सन्दर्भ में निर्योग्यताओं के सामान्य प्रश्न और आर्थिक संबंधों के व्यापकतर ढांचे पर विस्तृत विवेचन पहले किया जा चुका है। तथापि, यहां पर उन बड़े सवालों का विशेष रूप से उल्लेख जरूरी है जिनका आदिवासी लोगों को विशष रूप से सामना करना पड़ता है और जिन्हें आदिवासी उप-योजनाओं के अन्तर्गत आदिवासी विकास के लिए राज्य के प्रयास के अभिन्न अंग के रूप में हल करने का निश्चय किया गया था। ये हैं--(1) आबकारी नीति, (2) वन नीति, (3) ऋण और विपणन तथा (4) भूमि हस्तान्तरण। मैं यहां पहले तीन सवालों का ही विवेचन करूंगा क्योंकि अन्तिम सवाल पर पहले ही विस्तार से चर्चा की जा चुकी है।

आबकारी नीति

3.69 उपनिवेशवादी दौर में आदिवासी क्षेत्रों के लिए जिस आबकारी नीति का क्रमिक विकास हुआ था उसके उद्देश्य थे--(क) आदिवासी लोगों के प्रतिरोध को खत्म करना और उनको राज के अधीन लाना और (ख) सहजता से राजस्व की कमाई। इस नीति का सबसे अधिक अनिष्टकारक पहलू आदिवासियों का सामाजिक परम्परा का नकारना था जिसके फलस्वरूप हर व्यक्ति पर "आदतन अपराधी" होने का ठप्पा लग गया जिसके लिये उस पर कभी भी कानूनी कार्रवाही की जा सकती थी। शराब के मामले में व्यापारिक व्यवस्था लागू करने के फलस्वरूप घर में बने पौष्टिक मद्य के स्थान पर बाजार की अस्वास्थ्यकर शराब आ गई। इसके साथ-साथ जैसे-जैसे निहित व्यापारिक हितों के सामने, जिन्हें न केवल अपनी स्वयं के बाहुबल का भरोसा था वरन् जिन्हें राज्य की सत्ता का भी समर्थन मिलता रहा, उनके सामाजिक बंधन टूटते गए, शराब पीने की मात्रा, शराबी प्रवृत्ति और ऋणग्रस्तता के मामले में अभूतपूर्व बढ़ोतरी होती गई।

3.70. इस घिनौनी नीति का सलीब आदिवासी लोगों को स्वतन्त्रता के बाद भी लादे रहना पड़ा। अनुसूचित क्षेत्र और अनसूचित जनजाति आयोग द्वारा इस नीति की संदिग्ध रूप से घोर निन्दा को भी सन् 1975 तक अनदेखा ही रहने दिया गया जबकि आदिवासी क्षेत्रों के लिए आबकारी नीति की नए सिरे से समीक्षा की गई। इस संबंध में भारत सरकार ने मार्ग-निर्देश जारी किए थे जिनका स्पष्ट उद्देश्य यह था कि--(1) सामाजिक परम्परा और प्रचलित कानून के बीच असंगति को दूर किया जाए, (2) इस क्षेत्र से शराब व्यवसाय की दानवी प्रथा को समाप्त किया जाए और (3) लोगों को उन सभी बातों के लिए स्वयं प्रबंध करने के लिये अवसर पैदा करना जो मूल रूप से सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन के संबंध में हैं। इस नीति में आदिवासी क्षेत्रों में शराब की बिक्री के व्यवसाय को समाप्त करना और कानून में ऐसे उपयुक्त संशोधन करने की भी परिकल्पना की गई थी जिससे लोग अपने व्यक्तिगत उपभोग और सामाजिक प्रयोजनों के लिए अपनी परम्परा के अनुसार मद्य बना सके। इस कानून में यह परिकल्पना भी की गई थी कि कानून में एक ऐसा उपयुक्त उपबन्ध किया जाएगा, जिसके अनुसार आबकारी कानून का कार्यान्वयन करने और स्वयं संचालन के लिए नियम बनाने का अधिकार स्वयं उस समाज को ही सौंप दिया जाएगा।

3.71. यह खेद की बात है कि ऊपर वर्णित नीति सभी राज्यों द्वारा पूरी तरह नहीं अपनाई गई है। इन राज्यों में भी जहां इस नीति का अच्छा खासा भाग स्वीकार कर लिया गया है, कुछ गंभीर बिन्दु छोड़ दिये गए हैं। उदाहरण के लिए मध्य प्रदेश में राज्य ने स्थानीय आबकारी व्यवस्था के प्रबन्ध और नियमन की जिम्मेदारी लोगों को नहीं सौंपी है। इसका परिणाम यह हुआ है कि आदिवासी लोग इस महत्वपूर्ण सामाजिक मामले में अब भी प्रशासन की दया पर निर्भर हैं। इसके साथ ही इस स्थिति का फायदा निहित स्वार्थ उस नीति के मूलभूत सिद्धान्तों की अवमानना करने के लिए उठा रहे हैं। यही स्थिति महाराष्ट्र की है, जहां पर एक ओर अड़चन भी है कि बहुत से छोटे

कस्बों में, जिन्हें गैर-आदिवासी लघु-अंचल मान लिया गया है, ठेके वाली शराब की बिक्री जारी है। वहां पर इन दुकानों के माध्यम से ही अवैध शराब परनालों में से पानी जैसी बह रही है और अवैध शराब उन अधिकारों के अभाव में, जिनकी मार्ग-निर्देशों में परिकल्पना की गई थी वहां के लोग चरित्रहीन बेरहम तत्वों के सामने उनका प्रतिकार करने में अपने को निस्सहाय पाते हैं। अनेक अंचलों में जहां लोगों में मद्यपान से स्वास्थ्य के बिगाड़ और आर्थिक और सामाजिक क्षति के बारे में चेतना आ रही है और वे उन दुष्प्रभावों से सामाजिक नियमन के द्वारा छुटकारा पाना चाहते हैं, एक अयुक्तियुक्त और विसंगत स्थिति पैदा हो गई है जिसमें स्वयं राज्य इस महत्वपूर्ण मामले में उनके आड़े आ रहा है। छोटे अधिकारी कहने की अपराधियों का इस आधार पर समर्थन करते हैं कि कानून के अन्तर्गत समाज को किसी व्यक्ति की निजी स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है। सरल आदिवासी लोग इस तर्क को सुन कर अचरज में पड़ जाते हैं कि जिसका मतलब यह हुआ कि उन्हें अपने घर को ठीक-ठाक करने का भी अधिकार नहीं है। इस व्यवस्था में इस महत्वपूर्ण तथ्य का अहसास तक नहीं किया गया कि आदिवासी लोगों में आधारभूत सामाजिक इकाई संयुक्त परिवार न होकर उनका अपने गांव का समाज है।

3.72. इस आबकारी नीति के संबंध में ऊंचे स्तरों पर चाहे जो भी औपचारिक रुख अपनाया गया हो, परन्तु उसके कार्यान्वियन में राज्यों की उदासीनता का वास्तविक कारण उनकी राजस्व के बारे में चिन्ता है। उनके इस उद्देश्य को छोटे स्तर के अधिकारियों से तरह-तरह के तर्क-कुतर्कों के बहाने नापाक समर्थन मिलता है क्योंकि वे लोग भी, इन लोगों पर अपनी कठोर पकड़ बनाए रखने के लिए आतुर हैं। यह बड़े दुख की बात है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी सरल आदिवासियों को आधुनिक व्यवस्था द्वारा कई बार शराब का प्रलोभन देकर तरह-तरह के जालों में फंसाया जाता रहा है। इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि राज्य उन लोगों को, जिनकी जिम्मेदार स्वशासन की सर्वोत्तम परम्पराएं हैं, अपने सामाजिक कार्यों का प्रबन्ध करने की जिम्मेदारी सौंपने और वांछित बदलाव लाने की जिम्मेदारी सौंपने के लिए तैयार न हो। उपनिवेशवादी शासन से विरासत में मिली इस आबकारी नीति में कालिमा ही कालिमा है, उसमे एक भी ऐसा रजत बिन्दु नहीं है जिसके आधार पर उसका समर्थन किया जा सके। यह आदिवासी जीवन के लिए इस सबसे बड़े अभिशाप को तत्काल समाप्त किया जाना चाहिए।

वन नीति

3.73. वन संसाधनों पर नियंत्रण और उसके उपयोग की बाबत प्रशासन और आदिवासी लोगों के बीच संघर्ष की भूमिका का वर्णन इससे पहले विस्तार से किया जा चुका है। इस संबंध में उपयोजनाएं लागू किए जाने के बाद स्थिति म सुधार नहीं हुआ है। इसके विपरीत वन संरक्षण अधिनियम बनाए जाने और स्थानीय स्थिति का उचित ध्यान रखे बिना उसका कठोरता से कार्यान्वियन किए जाने के कारण इस संबंध में स्थिति बिगड़ी है और पहले से भी अधिक खराब हो गई है। यह एक विडम्बना की बात है कि स्वयं प्रशासन की भूलों और चुकों का खमाजा दण्ड के रूप में आदिवासी लोगों को भुगतना पड़ता है। वनों में खेती वाली जमीन के विवादास्पद सवाल को भी यदि एक ओर रख दें तो भी अनेक अन्य आसान मामलों में भी स्थिति में सुधार नहीं हुआ है। कुछ राज्यों के द्वारा लघु वनोपज के राष्ट्रीयकरण के बाद भी उनके भाव बाजार भाव से बहुत नीचे चले आ रहे हैं। राज्य इन उत्पादों पर भी भारी रायल्टी आयद करते जा रहे हैं। जिनका लोगों द्वारा संग्रह करने का अधिकार बहुत से मामलों में वनों को आरक्षित करते समय ही मान्य किया गया था। इसके अलावा विपणन व्यवस्था पर आने वाले भारी ऊपरी खर्चे भी इन वस्तुओं के प्राथमिक संग्रहकर्ताओं पर लाद दिए जाते हैं जिससे उनकी खरीदी के मूल्य में भारी गिरावट आ जाती है। नपती के आधार पर मजदूरी देने की जैसी प्रणाली वानिकी के काम में अपनाई जाती है, उससे अधिकांश मामलों में लोगों को उचित मजदूरी नहीं मिल पाती है? इसके परिणामस्वरूप ठेकेदारी की प्रथा समाप्त होने के बाद भी आदिवासी लोगों को उल्लेखनीय लाभ नहीं मिला है। वनों के प्रबंध में आदिवासी लोगों की भागीदारी के सिद्धान्त का अभी कहीं जिक्र भी नहीं है।

ऋण और विपणन

3.74. ऋण और विपणन के संबंध में भी स्थिति असन्तोषप्रद बनी रही है। आदिवासी क्षेत्रों में वृहदाकार बहु-उद्देशीय सहकारी समितियों (लैम्पस) के काम संबंधी सभी अध्ययनों से यही जाहिर होता है कि उनके वांछित परिणाम नहीं मिले हैं। वास्तव में कार्यान्वियन के स्तर पर बहुत से और नीति पर भी कुछ निर्णायक प्रश्न अभी भी अनदेखे रह गए हैं। ऋण और विपणन व्यवस्था में सभी प्रकार के दुहराव और विभिन्न संस्थाओं के कार्यवृत्तों की गड़बड़ी को समाप्त करके उसे सरल और कारगर बनाने का काम अभी तक नहीं किया गया यद्यपि, उसके बारे में उपयोजना रण-नीति के आरम्भ से ही सिद्धान्त रूप में निर्णय ले लिया गया था। अतः संगठनों का बाहुल्य और भरमार जारी है जिसके जिम्मेदारी का बट कर फैल जाना, नियंत्रण में ढिलाई और संगठन पर भारी खर्च आवश्यक परिणाम हैं। वाजिब मूल्य पर आदिवासियों की उपज को खरीदने और आवश्यक उपभोक्ता सामग्री के प्रदाय के लिए प्रबन्ध एक को छोड़कर अपर्याप्त है। रियायती दर पर खाद्यान्न और कुछ मामलों में जनता कपड़ा देने की योजना इसका एक मात्र अपवाद है और वह भी आंशिक रूप से सहकारी समिति का क्षेत्राधिकार इतना विस्तृत है कि वह संबंधित क्षेत्र में प्रभावी रूप से सेवाएं उपलब्ध कराने में असमर्थ हैं। चूंकि इन संस्थाओं की खरीद फरोक्त बढ़ी नहीं इसलिये उनका रख-रखाव के खर्चे बहुत अधिक होते जा रहे हैं. चूंकि रख-रखाव के इन खर्चे की विपणन व्यवस्था को ही वहन करना है, इससे खरीद और फरोक्त दोनों के ही भावों

पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और आदिवासी स्थिति के संदर्भ में ये संस्थाएं स्वावलंबी होकर चलने योग्य नहीं बन पाई हैं।

3.75 ऋण देने का काम विभिन्न प्रकार की संस्थाओं द्वारा पूर्ववत किया जा रहा है और उसका विपणन से कोई सहज संबंध नहीं है। अतः ऋण व्यवस्था अपने साधारण ढर्रे से चली जा रही है और उसे आदिवासी अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुकूल नहीं बनाया गया है। लोगों को उपभोग ऋण देने का साधारण मामला तक अधिक से अधिक एक संदेच्छा ही बनकर रह गया है और अभी तक यह सुनिश्चित करने के लिए कोई प्रभावी योजनाएं नहीं बनी हैं जो लोगों को आनी दिन प्रतिदिन की आवश्यकपाओं या सामाजिक दायित्वों को निभाने के लिए पूरी होती हैं या नहीं जो बिल्कुल छोटी-छोटी होती हैं, जब जरूरत हो तब उपयुक्त ऋण मिल सके। वास्तव में **उपभोग ऋण की संज्ञा ही गलत है और जब तक इसे उत्पादन ऋण के एक सबसे अधिक बुनियादी तत्व के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है तब तक तथाकथित उपभोग ऋण को गरीब व्यक्ति की आर्थिक व्यवस्था में निर्णायक भूमिका के सन्दर्भ में जो महत्व मिलना चाहिये उस सम्बन्ध में व्यवस्था की अरुचि को दूर नहीं किया जा सकता।**

3.76 **इसलिये मैं यह सिफारिश करता हूं कि--**

सभी प्रकार के शोषण को समाप्त करने के उपायों को आदिवासी उप योजना के अधीन सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए और उस सम्बन्ध में राज्य सरकारों द्वारा तत्काल समयबद्ध कार्यवाही की जानी चाहिए। उपायों का प्रभावी कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए जहां आवश्यक हो केन्द्रीय सरकार को उपयुक्त निदेश जारी करने पर विचार करना चाहिये। आबकारी, वन और ऋण और विपणन के बारे में निम्नलिखित उपाय विशेष रूप से किये जाना चाहिए--

(1) **आबकारी--राज्यों को अपनी आबकारी नीतियों का पुनरावलोकन करना चाहिये और इन्हें 1-4-89 तक भारत सरकार द्वारा 1975 में जारी किये गए मार्ग निदेशों के पूर्ण रूप से अनुसार बनाया जाना चाहिये।**

(2) **वन-भारत सरकार औपचारिक रूप में एक ऐसे संकल्प पर विचार करे जिसमें स्पष्ट रूप से आदिवासी लोगों को वन संसाधनों के प्रबन्ध और विकास में भागीदार स्वीकार किया जाये ताकि वानिकी से सम्बन्धित प्रशासन और लोगों की धारणाओं में वांछित परिवर्तन लाया जा सके और आगे के कार्यक्रमों के लिये उपयुक्त प्रविधि तैयार की जा सके।**

(3) **ऋण और विपणन :- आदिवासि क्षेत्रों में ऋण और विपणम व्यवस्था का रूप निम्नानुसार होना चाहिये।**

(क) **उसे तीन स्पष्ट उद्देश्यों के सन्दर्भ में युक्ति युक्त और पुनर्गठित किया जाय--**

(1) **आदिवासी लोगों की ऋण और विपणन की सभी आवश्यकताओं के लिये "एक बिन्दु" सेवा की व्यवस्था की जाय;**

(2) **आदिवासी उत्पादों को खरीदने के लिये और उन्हें आवश्यक उपभोग वस्तुयें देने के लिये वजिब भाव सुनिश्चित किया जाये;**

(3) **आदिवासी लोगों की उपभोग ऋण सहित ऋण की सभी आवश्यकताओं का पूरी तरह से समाधान करना; और**

(ख) **ऋण और विपणन की व्यवस्था का पूरा खर्च राज्य द्वारा उस समय तक पूरी तरह से उठाया जाय जब तक आदिवासी क्षेत्र शेष राज्य के विकास के स्तर तक नहीं पहुंच जाते।**

कल्याण और प्रगति के कार्यक्रम

3.77 आदिवासी क्षेत्रों में विकास के कार्यक्रम मोटे रूप से तीन तरह के हैं। पहली श्रेणी के वे कार्यक्रम हैं जिन्हें संबंधित लोगों की एक तरह से आन्तरिक क्षमता के निर्माण से संबंधित कहा जा सकता है। इनमें शिक्षा, स्वास्थ्य और जनजागरण शामिल हैं। दूसरी श्रेणी में वे कार्यक्रम आते हैं जो आदिवासी लोगों के कल्याण और प्रगति से सीधे-सीधे संबंधित हैं। तीसरी श्रेणी में तरह-तरह की परियोजनाओं सहित क्षेत्रीय विकास के कार्यक्रम आते हैं। इनमें से अनेक परियोजनाएं मूलतः क्षेत्रीय या राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए अवस्थापना निर्माण के एक हिस्से के रूप में बनाई जाती है। मैं अन्तिम श्रेणी के कार्यक्रमों पर आज के संदर्भ में आदिवासी लोगों के लिए उनके प्रतिकूल निहित स्वार्थ के कारण अलग से विचार करूंगा।

3.78 आदिवासी समुदायों का आन्तरिक क्षमता के निर्माण से संबंधित कार्यक्रमों की प्रगति अपेक्षाकृत धीमी रही है। आदिवासी उपयोजनाओं के अंतर्गत भारी निवेश और नई रण नीति में इन कार्यक्रमों को औपचारिक रूप से उच्च प्राथमिकता दिये जाने के बाद संसाधनों की कमी से ये कार्यक्रम प्रभावित नहीं हो सकते थे। यह दुर्भाग्य की बात है कि अभी तक किसी राज्य ने आदिवासियों की शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं के लिए व्यापक योजनाएं तैयार नहीं की हैं। ये आदिवासी लोगों को आत्मनिर्भर बनाने और नई स्थितियों का मुकाबला करने के लिये सक्षम बनाने के लिये निर्णायक तत्व

हैं। एक विडम्बना की बात तो यह है कि उन क्षेत्रों में भी जहां पर बड़ी औद्योगिक और खनिज परियोजनाएं स्थापित करने के लिए भारी पूंजी निवेश किया जा रहा है नए अवसरों से लाभ उठाने के लिए लोगों को तैयार करने के लिए कोई दिलचस्पी नजर नहीं आती है । यह देखकर तकलीफ होती है कि इन परियोजनाओं में उनके अपने कर्मचारियों के बच्चों के लिए आलीशान संस्थाएं स्थापित की जाती हैं जबकि उनसे सीधे विस्थापित होने वाले और उनके आसपास रहने वाले जो उनके प्रतिकूल प्रभावों की आंधी का सामना कर रहे हैं उनके बच्चों के लिये उच्च स्तरीय तकनीकी शिक्षा की सुविधाओं जो उन्हें अपने ही क्षेत्रों में उनकी अपनी परम्परागत अर्थ-व्यवस्था के खंडहरों पर निर्मित नए अवसरों के लिए समानता के आधार पर प्रतियोगिता के लिए तैयार कर सकें उसकी बात तो दूर साधारण प्राथमिक शिक्षा तक के लिए कोई व्यवस्था नहीं की जाती है ।

3.79 आदिवासी उपयोजनाओं के अधीन अब तक लिए गए आर्थिक कार्यक्रमों में आदिवासी लोगों के कल्याण और प्रगति को केन्द्र बिन्दु नहीं रखा गया है जैसा पहले उल्लेख किया गया है । आदिवासी उपयोजनाएं बहुत करके विभागीय प्रावधानों को यांत्रिक रूप से बांटने के नैमित्तिक अभ्यास मात्र ही बनी हुई है जिन्हें अपरिहार्य दायित्व के रूप में किसी न किसी तरह औपचारिकता निभाने के लिये बड़ी अनिच्छा से लिया जाता है । इसके परिणामस्वरूप, जो सामान्य कार्यक्रम विकसित क्षेत्रों की आवश्यकताओं के प्रसंग से तैयार किए जाते हैं उन्हें आदिवासी क्षेत्रों मे उनकी आवश्यकताओं पर उचित ध्यान दिये बिना ही जैसा का तैसा लागू कर दिया जाता है । विभिन्न संस्थाएं आम तौर पर विशेषीकृत हैं जो इन क्षेत्रों की सरल सामाजिक आर्थिक स्थिति के अनुरूप नहीं है । इसलिए इन संस्थाओं का स्थापना व्यय अत्यधिक होता है । इसके साथ ही बहुधा इन संस्थाओं की स्थापना के लिये आधारभूत विशेषज्ञ अधिकारी मिलते नहीं हैं जिससे वे महत्वपूर्ण पद तो खाली पडे रहते हैं जिससे उनकी अवस्थापना और अन्य सहायक कार्मिकों पर पूरा खर्च निरर्थक हो जाता है । उदाहरण के लिए ऐसा प्रायः उस समय होता है जब चिकित्सा संस्थाएं लम्बे समय तक डाक्टर के बिना काम करती रहती हैं. बहुत सी विशेषकृत संस्थाओं मे समन्वय के अभाव जैसे कि ऋण और विपणन संस्थाओं की स्थिति है अथवा उनकी लम्बी कतार में कहीं किसी एक तत्व के अभाव की स्थिति में संस्थागत संरचना अधिकाधिक अपकारी होती जाती है । विभिन्न कार्यक्रमों की संरचना भी दोषपूर्ण हो सकती है उदाहरण के लिए यद्यपि कहने को स्वास्थ्य सेवाओं के लिए प्रावधान बड़े उदार हैं परन्तु इन राशियों का अधिकांश भाग, जो लाखों रुपए होता है प्रति वर्ष प्रति प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र स्थापना लागत के रूप में खर्च हो जाता है और कुछ हजार रुपयों की अल्प राशि दवाइयों के लिए आवंटित की जाती है। अन्ततः औषधियों और स्वास्थ्य सेवाओं के रूप में आदिवासी लोगों तक जो भी पहुंचता है वह नगण्य होता है ।

3.80 आदिवासी लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप विशिष्ट विकास योजना तैयार करने के लिए उस क्षेत्र में प्रचलित सामाजिक और आर्थिक प्रथाओं की स्पष्ट समझ एक महत्वपूर्ण शर्त है । आदिवासी लोगों की सामाजिक आर्थिक स्थितियों में भारी विविधता है । उसी तरह से विभिन्न आदिवासी क्षेत्रों की स्थितियों में भी भारी अन्तर है जिनमें एक सिरे पर समृद्ध संसाधन वाला दण्डकारण्य है और दूसरे सिरे पर समाप्त प्रायः संसाधनों वाला पश्चिमी क्षेत्र हैं। उसी क्षेत्र में भी काफी बड़ी भिन्नता है । विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्रों के लिए समीचीन है जहां यह एक घाटी से दूसरी घाटी, उसी पहाड़ी के दोनों ओर और घाटी की तलहटी से पहाड़ी की चोटी तक स्थिति बिल्कुल भिन्न हो सकती है । इसके परिणाम स्वरूप आदिवासी विकास के लिए राष्ट्रीय स्तर और राज्य स्तर पर व्यापक रण-नीतियां बनाई जा सकती हैं । उसके क्रियान्वयन के स्तर पर सामान्यीकरण और सभी आदिवासी क्षेत्रों के लिए एक जैसे कार्यक्रम बनाने का कोई भी प्रयास का फल अनिवार्य रूप से निराशाजनक होगा यहां तक कि अपकारी भी हो सकता है ।

3.81 आदिवासी क्षेत्रों के सामान्य आर्थिक आयामों और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बीच एक आधारभूत अन्तर है। अधिकांश आदिवासी क्षेत्रो मे विस्तृत प्राकृतिक संसाधन हैं और जनसंख्या अपेक्षाकृत छितरी हुई है । इसलिए उनकी अर्थव्यवस्था श्रम विरल है । दूसरी ओर राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में बहुत करके श्रमिकों का बाहुल्य है । इस मूलभूत अन्तर के महत्व को ध्यान में नहीं रखे जाने के परिणामस्वरूप अनुपयुक्त आर्थिक कार्यक्रमों को आदिवासी क्षेत्रों में भी लागू किया गया है । उदाहरण के लिए एक ओर परम्परागत फसलों की उन्नति के लिए बड़े कार्यक्रम बनाए जा सकते हैं जिनका आदिवासी क्षेत्रों में खेती में नितान्त गौण स्थान हो सकता है, दूसरी ओर झूम खेती की समस्या बीच-बीच में बहुत सी प्रायोगिक परियोजनाएं ले लिये जाने के बावजूद अनदेखी ही रह जाती है इन क्षेत्रों में पशुपालन के श्रम-प्रधान कार्यक्रम लाद दिये जाते हैं जिनके प्रति आदिवासी लोगों से कोई खास अच्छी प्रतिक्रिया नहीं मिलती है । इसके विपरीत मोटे अनाज या पहाड़ी धान जैसी उनकी अपनी महत्वपूर्ण फसलों के बारे में उन्नत बीज विकसित करने के लिए व्यापक स्तर पर कार्यक्रम के रूप में पहला जरुरी कदम भी नहीं लिया गया है । जहां ऐसी बड़ी सिंचाई योजनाएं जिनकी लोगों को भारी कीमत चुकानी पड रही है और जिनके लिए भारी निवेश की भी जरुरत है धड़ल्ले से ली जा रही है वहीं अनगिनत छोटे-छोटे नालों में पानी के प्राकृतिक प्रवाह का उपयोग करने के लिए सिर्फ इस कारण कि उनमें अधिक पूंजी निवेश जरुरी नहीं है कोई उपयुक्त योजना ही नहीं हैं। नालों और पहाड़ी नदियों को काबू में लाकर उपयोग के लोगों के परम्परागत तरीकों को सरकारी विभागों का समर्थन तकनीकी कठिनाइयों के बहाने नहीं मिल पाता है, कहीं कह दिया जाता है ढलान बहुत तेज है और कहीं भूमि कृषि के लिए अनुपयुक्त बता दी जाती है। इसलिए जो लोग इन संसाधनों का उपयोग करने के लिए

संघर्ष कर रहे हैं उनकी बात टाल दी जाती है । इस प्रकार जहां एक ओर सन्देहपूर्ण उपयोगिता वाली योजनाओं को भारी लागत के बावजूद लिया जा सकता है वहीं सामान्य लोग तकनीक में प्रगति के लाभों से वंचित रह जाते हैं । विस्तृत पर्वतीय क्षेत्रों की बड़ी क्षमता का सर्वोत्तम रूप से उपयोग वृक्षों की खेती से ही किया जा सकता है जो पर्यावरण के हित में होने के साथ आदिवासी लोगों के लिए एक स्थायी आर्थिक आधार भी बन सकती है इस तथ्य का अहसास नहीं है इसके परिणाम स्वरूप पेड़ों की खेती वानिकी, फलोद्यान तथा प्लांटेशनों के कार्यक्रमों के रूप में कृत्रिम रूप से बटी हुई है, जिसमें आदिवासियों की अधिक रुचि नहीं हो सकती है । तथापि, आन्ध्र प्रदेश मे और पश्चिमी बंगाल मे भी लिए गए पेड़ लगाने के दो विविध कार्यक्रम प्रशंसनीय हैं जिनमें आदिवासी लोगों के हितों को केन्द्र में रखा गया है ये कार्यक्रम प्रायोगिक अवस्था से आगे बढ़ गए हैं और अब उनका आयाम काफी विस्तृत है इन कार्यक्रमों को उपयुक्त रूप से अनुकूलित करते हुए राज्यों द्वारा भी लिया जा सकता है ।

3.82 पीने के पानी के कार्यक्रमों की प्रगति काफी प्रभावशाली रही है । तथापि ये योजनाएं पूंजी-गहन हैं और बहुत से दूरस्थ और दुगम क्षेत्रों मे बहुत सफल नहीं हुई है । चूंकि हाथ के नल मरम्मत न होने के कारण बहुत समय तक बेकार पड़े रहते हैं अत लोगों को फिर से अपने परम्परागत स्रोतों का सहारा लेना पड़ता है । ग्रामीण विद्युतीकरण के कार्यक्रमों से निःसदेह बहुत-सी बस्तियों म प्रकाश पहुंच गया है परन्तु उससे सम्भावित आर्थिक क्षमता का उपयोग करने के लिए कोई उल्लेखनीय प्रयास नहीं किया गया है भारी वित्तीय निवेश लगाकर सड़कों का जाल तो काफी फैल गया है तथापि गलत प्राथमिकताओं के कारण क्षेत्रीय सुगमता म उल्लेखनीय रूप से सुधार नहीं है ।

3.83 इन योजनाओं मे निवेश के अनुरूप परिणाम न होने का मूल कारण यह है कि नीचे से आयोजन की प्रक्रिया जो आदिवासी क्षेत्रों के लिए अनिवार्य तत्व है गम्भीरता पूर्वक नहीं लिया गया है । एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाएं आदिवासी विकास कार्यक्रमों के आयोजन और क्रियान्वयन के लिए इकाइयों के रूप मे नहीं उभरी हैं । राज्य सरकार के विभिन्न विभागों और केन्द्रीय अभिकरणों द्वारा आरम्भ की गई अनगिनत योजनाओं का क्रियान्वयन अलग-थलग रूप से ही अब भी जारी है, जो कभी-कभी परस्पर विरोधी भी हो जाते है और जिसमें सही एकीकरण का आभास तक नही रहता । कई मामलों में स्थिति नितान्त भ्रमपूर्ण हो जाती है जिससे बचा जा सकता है । अगर कोई विभाग आदिवासी उपयोजना में इस सामान्य आधारभूत मान्यता कि उस में सभी कार्यक्रमो का केन्द्र बिन्दु आदिवासी लोगों का कल्याण और प्रगति होना चाहिए की बिना परवाह किए किसी कार्यक्रम के भौतिक लक्ष्यों की ही दुहाई देता रहे, यह कोई असामान्य घटना नहीं होगी ।

3.84 वास्तव में अभी आर्थिक विकास के मूलभूत तत्व मोटे तौर पर भी अभी परिभाषित होने बाकी हैं समाज व्यवस्था—मूलतः अवरोधों के बारे में जो निर्णायक हो सकते हैं, सामान्य रूप से निरूपण जरूर कर दिया जाता है परन्तु बहुत कर आदिवासी उपयोजना दस्तावेजों में उनका स्थान मात्र साज-सज्जा रूप ही बने रहते है । एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं के अन्तर्गत अधिक पिछड़े क्षेत्र, औद्योगिक और खनन परियोजनाओं के प्रभाव क्षेत्र, शहरी केन्द्रों की बाह्य परिधि और विशिष्ट संसाधनों वाले क्षेत्र जैसे दलदल वन क्षेत्र इत्यादि जैसे उप अंचलों का अभी तक रेखांकन तक नहीं हुआ है जो समस्या समाधान-मूलक लघु स्तरीय आयोजन को मूर्तरूप देने के लिए आवश्यक है । आदिवासी विकास केन्द्रित योजना बनाने की बात जो कि आदिवासी उपयोजना का उद्घोषित उद्देश्य था, तो दूर रही, इसके आरंभ होने के बाद दो पूरी पंचवर्षीय योजनाएं बीत जाने पर भी अभी तक एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं के लिये भी योजनाएं नहीं बनी हैं इस प्रकार निष्कर्ष यह है कि प्रत्येक परियोजना क्षेत्र में आदिवासी लोगों के कल्याण और प्रगति के लिए कौन सी बातें आवश्यक हैं इसका अध्ययन तक अभी शुरू नहीं किया गया है इसके परिणामस्वरूप आदिवासी क्षेत्रों मे वित्तीय निवेशों के स्तर में भारी वृद्धि होने के बावजूद साधारण लोगों को अपेक्षाकृत सीमित लाभ ही मिला है—

3.85 इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि —

आदिवासी उपयोजनाएं इस प्रकार से तैयार की जानी चाहिए कि आदिवासी लोगों का कल्याण और प्रगति निरन्तर केन्द्र में रहे और सभी कार्यक्रम उसी मूलभूत मान्यता के अनुरूप हों । विशेष रूप से —

(1) आदिवासी उपयोजनाओं मे शोषण समाप्त के बाद सर्वोच्च प्राथमिकता शिक्षा, स्वास्थ्य और जन-जागरण जैसे कार्यक्रमों को दी जानी चाहिए ; जिनसे आदिवासी लोगों में आत्मविश्वास क्षमता का निर्माण हो और जिनसे वे स्वयं परिवर्तन की चुनौतियों का सामना करने के लिए समर्थ हो सकेंगे ।

(2) राज्य के बजट में एक अनुबंध होना चाहिए कि किसी अन्य कानून में किसी बात के होते हुए भी, प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौम बनाने और उस स्तर की शिक्षा के स्तर में सुधार करने के लिए आवश्यक निधियां आदिवासी उपयोजनाओं के लिये किए गए प्रावधानों पर प्रथम प्रभार होंगी ।

(3) आदिवासी क्षेत्रों के लिए आरंभ किए जाने वाले सभी कार्यक्रमों को चाहे उनके लिए राशि किसी भी स्रोत से क्यों न आए पूर्ण रूप से एकीकृत किया जाना चाहिए । वे कार्यक्रम लोगों तक एक विभेदहीन

समुच्चय के रूप में पहुंचने चाहिएं और उनका क्रियान्वयन एक एकीकृत अभिकरण द्वारा किया जाना चाहिए।

(4) आदिवासी उपयोजनाओं की मूल भावना का नीचे से आयोजन होना चाहिए। इसका समारंभ आठवीं योजना से एकीकृत आदिवासी परियोजनाओं के स्तर पर योजना बनाकर किया जाना चाहिए जिसके लिए आवश्यक कदम अभी से उठाए जाने चाहिएं।

(5) जहां एक ओर एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं में आदिवासी विकास के लिए सामान्य रण-नीति में निर्धारित प्राथमिकताओं का अनुसरण किया जाए उसके साथ ही दूसरी ओर एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं के स्तर पर कार्यक्रम पूरी तरह से प्रत्येक उस एकीकृत परियोजना में लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप होगा तैयार की जानी चाहिए। एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना में विभिन्न कार्यक्रमों के लिये सापेक्षिक महत्ता का निर्धारण भी तदनुसार ही किया जाना चाहिए जिसके लिए एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना स्तर पर संबंधित प्राधिकारियों को पूर्ण विवेकाधिकार प्राप्त होना चाहिए।

(6) एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं के सभी कार्यक्रमों में उन मदों के लिए पूरे प्रावधान किए जाने चाहिएं जिनसे आदिवासी लोगों को सीधा लाभ पहुंचता है जैसे कि प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के कार्यक्रम में औषधियों के लिए प्रावधान।

(7) एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं में अवस्थापन के आयोजन का उद्देश्य संबंधित क्षेत्र को विकास न मानकर उसे आदिवासी लोगों के कल्याण से जोड़ा जाना चाहिए। उदाहरण के लिए सड़कों के फैलाव का उद्देश्य उस योजना में पगडंडियों, पहाड़ी मार्गों और पुलियों को स्थान देकर लोगों के लिये क्षेत्र को सुगम बनाने में सुधार करना होना चाहिए।

(8) प्रत्येक एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना में ऐसे क्षेत्रों का रेखांकन और लोगों की अलग पहचान की जानी चाहिए जो विशेष समस्याओं का सामना कर रहे हों जैसे कि अधिक पिछड़े क्षेत्र, औद्योगिक और खनन परिसरों के प्रभाव क्षेत्र, शहरी विकास केन्द्र, आखेट और संग्रह अर्थ व्यवस्था वाली जातियां इत्यादि। इन सब के लिए एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं को समग्र योजना के अन्दर अलग-अलग लघु योजनाएं तैयार की जानी चाहिए।

(9) राज्य की सभी एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं की योजनाएं विभाग वार और कार्यक्रम वार प्रावधान और खर्च का पूरा विस्तृत विवरण सहित उस राज्य की आदिवासी उपयोजना से संबंधित बजट मांग के एक पूरक के रूप में पृथक से प्रस्तुत की जानी चाहिए।

विकास परियोजनाओं के उलट-प्रहार

3.86 अब मैं आदिवासी क्षेत्रों में सभी प्रकार की बड़ी योजनाओं जैसे औद्योगिक खनन, सिंचाई, पनबिजली, की स्थापना और उससे जुड़ा हुआ शहरी विकास और विस्थापन के कारण आदिवासी लोगों पर प्रतिकूल प्रभावों से संबंधित महत्वपूर्ण मुद्दों को लेना चाहूंगा। इनके प्रभाव में आने वाले आदिवासी लोगों की समस्याएं सर्वाधिक जटिल हैं; जिनकी तरफ तत्काल ध्यान दिया जाना चाहिए था और जिन्हें आदिवासी विकास के किसी भी सुनियोजित कार्यक्रम में सर्वोच्च प्राथमिकता मिल जानी चाहिए थी। जहां एक ओर इन लोगों के प्रभावी संरक्षण के लिए समुचित व्यवस्था नितांत आवश्यक है उसके साथ ही यह भी जरूरी है कि नये निवेश से उत्पन्न अवसरों का लाभ उठाने के लिए इन लोगों को तैयार करने के लिए बहुत पहले से समय रहते अग्रिम कार्रवाई करने के लिए योजना बनाई जानी चाहिए। यह खेद की बात है कि अधिकांश मामलों में इन क्षेत्रों को रेखांकित करने के लिए प्रथम प्रारम्भिक कदम तक नहीं उठाया गया है और अधिकाधिक आदिवासी लोग स्वयं ही अकेले उलट-प्रहारों का सामना करने के लिए मजबूर हैं जिसके लिये वे कतई तैयार नहीं हैं।

3.87 यहां पर सवाल संसाधनों के वैकल्पिक उपयोग; परियोजनाओं की लागत, लाभ समीकरणों और इसी प्रकार के अन्य मुद्दों तक ही सीमित नहीं है। ये सवाल अधिक आधारभूत हैं जो जीवन के महत्वपूर्ण पहलुओं जैसे मानव अधिकारों, सभ्यता संबंधी मूल्यों और राष्ट्रीय दायित्व से संबंधित हैं। आदिवासी लोग अपने इतिहास में एक अनन्य और अभूतपूर्व दौर से गुजर रहे हैं और इस स्थिति में उनको सही रास्ता निर्धारित करने के लिए उनको अपनी परम्परा के अन्तर्गत कोई पहले का ऐसा अनुभव नहीं है जिसका वे उदाहरण ले सकें। यह बदलाव इतना तेज है और इसकी चुनौती इतनी भारी है कि किसी ऐसी उपयुक्त आन्तरिक प्रतिक्रिया के उदय होने की संभावना नगण्य है जो उन्हें इस आसन्न संकट से सफलतापूर्वक पार होने के लिए समर्थ कर सकें। त्रासदी तो यह है कि राष्ट्रीय स्तर पर उनकी समस्याओं के वास्तविक स्वरूप का कोई खास अहसास ही नहीं है। बस्तर जिले में इन्द्रावती घाटी जिसका मैंने अक्तूबर 1986 में दौरा किया था; इस तरह की स्थिति का एक आम उदाहरण है जिसकी चर्चा में कुछ आधारभूत प्रश्नों को सामने लाने के लिए कुछ विस्तार के साथ करना चाहूँगा। (अनुलग्नक 3)

3.88 इन्द्रावती नदी मध्य प्रदेश में बस्तर जिले के बीच से बहती हुई दक्षिण बस्तर की उत्तरी और पश्चिमी सीमाएं बनाती है। इस नदी पर पन-विद्युत और सिंचाई

परियजनाओं की अनेक योजनाओं की एक शृंखला ही प्रस्तावित है । इसी क्षेत्र के बीच में इन्द्रावती के किनारे-किनारे कई वानिकी कार्यक्रम भी लिए गए हैं जो लोगों को पर्यावरणिक रूप से प्रभावित कर रहे हैं । और दक्षिण बस्तर जो देश का सर्वाधिक पिछड़ा आदिवासी इलाका है जिसमें 80 प्रतिशत से अधिक रकबा औपचारिक रूप से आरक्षित वन है ।

3.89 इन्द्रावती घाटी के लोगों को सभी आदिवासी लोगों की तरह ही "अपने पूर्वजों की भूमि से गहरा लगाव है । परन्तु इसके लिए एक विशेष कारण भी है । इस घाटी पर प्रकृति की विशेष अनुकंपा है, ऊपर पहाड़ियों पर समृद्ध वन और नीचे बहती शक्तिशाली इन्द्रावती सभी के लिये, यहां तक कि भूमिहीन जईफ और अपंगों तक के लिए जीवन निर्वाह के प्रचुर आधार हैं अभाव यहां अनजाना है·······लोग बड़ी-बड़ी बाड़ियों में सुन्दर साफ-सुथरी और फैली-फैलाई मिट्टी की झोंपड़ियां बनाकर रहते हैं ।"

"········लोग बाहर जाने के लिए तैयार नहीं हैं । मुआवजे की रकम बढ़ाने के किसी प्रस्ताव में उनकी कोई रुचि नहीं है । उन्हें यही भय है कि वे नकद रुपए को संभाल नहीं पायेंगे और वह उनकी अंगुलियों में से फिसल जाएगा । वे जानते हैं कि वह पैसा मद्यपान हंसी दिल्लगी और दूसरे गैर-जरूरी कामों में, जिन्हें वे टाल नहीं पायेंगे, खुर्द बुर्द हो जाएगा···· जब कोई उनके लिए आदर्श बसाहटें बनाने की बात करता है तो र घाटी के बाहर बहुत से गांवों में भूमिहीनों के लिए बनाए गए पक्का मकानों को सोच कर मन मसोस कर चुप्पी साध लेते है । उनके अनुसार उनके सामने लुभावने चित्र केवल उन्हें बहकाने के लिए खींचे जा रहे हैं ; जहां वे एक बार अपनी घाटी छोड़ देते हैं तो वहां कोई उनकी बात सुनने के लिए भी नहीं आएगा । वे बेघर और साधनहीन हो जाएंगे और वे छोड़ दिए जाएंगे भटकने के लिए उधर इधर निस्संग····।"

"········अंधकारमय भविष्य के बारे में उनका यह निष्कर्ष स्वाभाविक है जिसकी पुष्टि चारों ओर के अनुभवों से ही होती है जिनके बारे में उन्हें व्यक्तिगत रूप से या औरों की बातचीत से जानकारी है दोनों हाथ जोड़कर वे कहते हैं कि हमें आपकी भोली परजा है, मारो या जिआओ, अर्थात उनका मरना या जीना यह आपके निर्णय पर मुनस्सर है । निराशा में वे जोर-जोर से पुकार उठते हैं कि वे नहीं जाएंगे, हमें गोली से उड़वा दो, गोला बारी करवाओ, या घाटी में बम डलवा दो·······।"

3.90 ये उद्गार साफ तौर पर उस जन सामान्य का भावनात्मक उद्वेग है जो आज आसन्न विस्थापन विघटन और कंगाली की साया के रूप में है । सही अर्थों में घोर संकट वहां भी आदमी का बनाया हुआ ; का सामाना कर रहे हैं । उनकी अर्थव्यवस्था अत्यन्त सरल है । उनका पर्यावरण खुशनामा जिन्दगी के लिए संपूर्ण आधार मुहैया करता है । उनकी कार्य कुशलता है, उनकी अपनी अर्थ व्यवस्था के स्तर पर उसकी संभावनाओं का समुचित उपयोग जो वे बहुत कुछ ठीक कर रहे हैं । यदि बाहर निकलने के लिए उन्हें मजबूर किया जाता है तो नए संदर्भ में वे कौशलहीन हो जाएगे । उन्हें कुछ भूमि मिल भी जाय जिसकी संभावना बहुत कम है फिर भी वे संसाधन विहीन हो जाएंगे । इसके विपरीत उनकी अपनी घाटी समृद्धि का सागर है, जिसे छोड़ने के लिए वे मजबूर हो जायेंगे । अपने उस आरण्यक विहार के बारे वे परिचयहीन हो जायेंगे और उस अनजानी दुनिया में उसके तुफानी उतार चढ़ाव से निपटने के लिए बिल्कुल नाकाबिल ।

3.91 **इसलिए सीधा सवाल यह है कि क्या इस हालत में इन लोगों को राजसत्ता द्वारा घाटी के बाहर निकालने के लिए उनकी इच्छा के विरुद्ध मजबूर किया जा सकता है । चाहे वह निष्कासन पूरी तरह से कानूनी प्रक्रियाओं के अनुसार ही क्यों न किया जाए । इस संबंध में संविधान में उनके लिए दिये गए संरक्षण की प्रासंगिता क्या है और इन समाजों के लिए उस संरक्षण को अमली जामा पहनाने के लिए स्वयं राज्य की जिम्मदारी क्या है ?** यह साफ है कि भू-अर्जन के बावत वर्तमान कानून, जिसे सब दूर लोगों को विस्थापित करने के लिए प्राधिकार सत्ता के रूप में उपयोग किया जा रहा है, इन आधारभूत मान्यताओं पर आधारित है जो आदिवासी क्षेत्रों के लिए तर्क सम्मत नहीं है । इस कानून में आदिवासी लोगों और उनके प्राकृतिक रहवास के बीच गहरे संबंधों की पूरी तरह अनदेखी की गई है और उसका संबंध आदिवासी लोगों के केवल औपचारिक रूप से मान्य अधिकारों तक ही सीमित है जो आदिवासी लोगों की संपूर्ण अर्थ व्यवस्था के एक छोटे से हिस्से को वह भी यदि हो तो, ही समाहित करते हैं । उसमें एक और मान्यता यह भी है कि भूमि विनिमय है और उसे रुपए से तौला जा सकता है जो आज की हालत में आदिवासी लोगों को मंजूर नहीं है । इस कानून में प्रत्येक प्रभावित व्यक्ति को व्यक्ति के रूप अलग इकाई माना जाता है । परन्तु आदिवासी जीवन उनके अपने समाज के बाहर अकल्पनीय है । इस प्रकार भूमि-अर्जन से संबंधित कानून आदिवासी स्थिति से असंगत है । **कार्यपालिका ने इस असंगति की ओर भी देखा तक नहीं है जिसे संविधान द्वारा कानून और आदिवासी स्थिति के बीच सभी असंगतियों और विकृतियों को दूर करने के लिए असंदिग्ध रूप से पूरे अधिकार दिए गए हैं जिसका आशय यही है कि तत्संबंधी गंभीर जिम्मेदारी भी उसकी ही है । इसका परिणाम यह हुआ है कि आदिवासी लोगों को एक ऐसे महत्वपूर्ण मामले में संवैधानिक संरक्षणों के समुचित संरक्षण से वंचित किया जा रहा है जिस पर एक समाज के रूप में उनका अस्तित्व ही निर्भर है ।**

3.92 यहां आकर मैं भू-अर्जन कानून में सार्वजनिक प्रयोजन से संबंधित एक निर्णायक उपबन्ध की ओर ध्यान

आकर्षित करना चाहूंगा । आदिवासी समाज की स्थिति के संदर्भ में सार्वजनिक प्रयोजन किसे माना जा सकता है यह सवाल ऐसा नहीं है कि जो सीधे सादे ढंग से विधि या औपचारिक परिभाषाओं से संबंधित न होकर मानवीय मूल्यों, सांस्कृतिक दायित्व और कदाचित सीमित दायरे से संवैधानिक सुरक्षणों की मूल भावना से संबंधित है । क्या किसी मामले से संबंधित दो समाजों के सापेक्ष आकार को ही सार्वजनिक प्रयोजन का निर्धारण करने के लिए पर्याप्त आधार के रूप में स्वीकार किया जा सकता है ; क्या किसी समाज को उसके विघटन और उसके ,सदस्यों के लिए निस्सहाय दारिद्रय की विभीषिका जानते हुए भी अवश्यंभावित के लिये अपनी जगह से हटने के लिए मजबूर किया जा सकता है ? इसका उत्तर एक साफ पुरजोर और असंदिग्ध "न" है । मैंने इन लोगों की गुहार प्रधानमंत्री तक पहुंचा दी थी जिनका एक समाज के रूप में अस्तित्व बना रहे वह इस बात पर निर्भर करता है है कि राष्ट्र इस सभ्यतामूलक दायित्व के मामले में कैसी दृष्टि अपनाता है । इस घाटी के लोग प्रधानमंत्री के सकारात्मक उत्तर के लिए उनके आभारी हैं । उन्हें अभी सांस लेने का कुछ मौका मिला है क्योंकि इस मामले पर पुनः विचार किया जा रहा है । परन्तु विस्थापन, विघटन और निस्सहाय दारिद्रय का साया उन्हें अभी भी दिन और रात सता रहा है । मेरा अब यह कर्तव्य है कि मैं उस गुहार को राष्ट्रपति जी तक पहुंचाऊ और उनके माध्यम से संसद तक भी जो राष्ट्र की चेतना का प्रतिनिधित्व करती है पहुंचा दूं। इन्द्रावती घाटी के लोगों की ओर से यह गुहार केवल उन्हीं लोगों का ही अलग थलग एकाकी उदगार नहीं है परन्तु यह पूरे देश में उन आदिवासी समाजों की भावनाओं की घुमड़ का प्रतीक है जो इसी प्रकार की स्थितियों का सामना कर रहे हैं और अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए कराल संघर्ष में लगे हुए हैं। चाहे यह फिर सिंहभूम में सुवरण रखा हो या जबलपुर में बर्गी और पश्चिम में नर्मदा घाटी । परन्तु अभी तक अन्यत्र उनके निवेदनों का मानव मूल्यों और सभ्यतामूलक दायित्वों के आधारभूत प्रश्नों की बात ही अलग, सन्तोषप्रद पुनर्वास योजनाओं के रूप में भी कोई महत्वपूर्ण परिणाम नहीं निकला है । इसका सीधा सा कारण है कानून की असंगति और संबंधित अधिकारियों द्वारा 'सार्वजनिक प्रयोजन' की असमीचीन व्याख्या की अभिस्वीकृति जिनसे मिलकर एक ऐसा संदर्भ संरचना बन गया है जो ऊपर बताए गए आधारभूत मुद्दे को अनदेखा कर देता है ।

3.93 औपचारिक संदर्भ संरचना के दायरे में भी अनुपयुक्त होने पर भी अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। उदाहरण के लिए नर्मदा घाटी में आदिवासी लोगों की ओर से किए गए मेरे हस्तक्षेप के लगभग दो वर्ष के बाद भी भूअर्जन से संबंधित प्रारम्भिक कार्यवाहियों से स्पष्ट विसंगतियों को दूर करने और इस मामले से संबंधित तीन राज्यों अर्थात **गुजरात, मध्य प्रदेश** और **महाराष्ट्र** द्वारा एक समान ढांचा अपनाने के संबंध में प्रथम कदम उठाया जाना अभी शेष है। यदि ऐसे काम में भी जिसमें केवल कागज पर सफाई की जरूरत है स्थिति भी इतनी खराब है और यदि इस बारे में पिछले अनुभव से कुछ सबक लिया जा सकता है तो निष्कर्ष यही निकालता है कि यहां के लोगों की नियति ही यह मान ली गई है कि वे विकास की कीमत अदा करें और विघटन तथा निस्सहाय दारिद्रय का खामजा भुगतें और संविधान उस महान त्रासदी का मूक दर्शक ही बना रहेगा । अन्य क्षेत्रों की प्रतिक्रिया में भी अधिक अन्तर नहीं है । इस बात को देखते हुए कि विस्थापन की समस्या विकराल रूप लेती ज्जा रही है और यह सवाल आदिवासी लोगों के लिए संवैधानिक सुरक्षणों से गहराई से जुड़ा हुआ है, मैंने इसकी विस्तृत रूप से जांच करना आरम्भ किया है । मैं इस जांच को उपलब्ध सीमित संसाधनों और संबंधित अधिकारियों से इस संबंध में मुझे जो सहयोग प्राप्त होगा उसके आधार पर यथासम्भव शीघ्र एक विशेष रिपोर्ट प्रस्तुत करुंगा जो मानवीय मूल्यों और सभ्यतामूलक दायित्वों से संबंधित इस महत्वपूर्ण सवाल पर राष्ट्रीय आम सहमति के निर्णय के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि की भूमिका बन सकती है । इस बीच बोधघाट के बारे में प्रधान मंत्री जी को जो कुछ प्रेषित किया था उसी को फिर से दोहराना चाहूंगा कि'· · · इन लोगों की भावनाओं का जिनकी रातें बिना सोय और दिन्न बैचेनी से गुजर रहे ह पूरा सम्मान किया जाना चाहिए । इन लोगों को दिए गए विकल्पों के बारे में लोगों के पूरी तरह से आश्वस्त हो जाने के बाद ही परियोजनो को अन्तिम रूप से स्वीकृति दी जानी चाहिए · · ·। मेरे विचार में यह सुनिश्चित करने के लिए कि लोगों का पक्ष अनसुना न रह जाए सभी चालू परियोजनाओं का पुनरावलोकन किया जाना चाहिए और जहां भी आवश्यक हो उसमें उपयुक्त संशोधन तत्काल किए जाने चाहिएं।'

3.94 इसलिय मैं यह सिफारिश करता हूं कि–

जब तक आदिवासी लोगों के संसाधनों पर अधिकार और उनके उपभोग और उनके विस्थापन संबंधी संवैधानिक संरक्षणों की जांच की जाती है और तत्संबंधी नीति निर्धारण राष्ट्रीय आम सहमति बनाने की दिशा में सरकार द्वारा उसके निष्कर्षों पर विचार किया जाता है तब तक सभी चालू परियोजनाओं का और विभिन्न स्तरों पर सरकार के विचाराधीन परियोजनाओं का भी पुनरालोकन किया जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि आदिवासियों के लिए संविधान में प्रदत्त सुरक्षणों का उनकी वास्तविक भावना के अनुरूप सम्मान किया जाता है और उनका पक्ष केवल इस आधार पर बिना विचार किए नहीं रहता है क्योंकि उन्हें उस पक्ष को प्रस्तुत करने के लिए अवसर नहीं मिल रहा था या उसके लिए उनके पास वांछित अभिव्यक्ति का अभाव था अथवा उनके अधिकारों से संबंधित कानूनों में ही विसंगति थी।

आदिम आदिवासी समुदाय

3.95 अभी भी कुछ आदिवासी समुदाय अर्थव्यवस्था के कृषि पूर्व के स्तर पर निर्वाह कर रहे हैं जैसे कि आखेट और संग्रह, पशुपालन और झूम खेती । इन गतिविधियों में जीवन

निर्वाह मात्र के लिए भी विपुल संसाधन-आधार की आवश्यकता होती है । ये समुदाय अपने जीवन-निर्वाह के लिये परम्परा से जिन संसाधनों पर आश्रित थे उन पर दूसरे समुदायों के बढ़ते हुए दबाव के कारण उनकी आजीविका के लिये संसाधन आधार क्षीण हो गया है अथवा बहुत से मामलों में वे उससे पूरी तरह से वंचित हो गए हैं । और ये समुदाय बदलती हुई स्थिति में अपने आपको उसके अनुकूल करने में असमर्थता के कारण अत्यधिक असुरक्षित हो गए हैं । कई मामलों में ये समुदाय जैविक स्तर पर अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिये समर्थ नहीं है और वे अपने विलुप्त होने के खतरे का सामना कर रहे हैं ।

3.96 इन समुदायों के अत्यधिक असुरक्षित होने के कारण उन्हें आदिम जनजातियों की संज्ञा देकर उन के विकास के लिए पांचवीं योजना के प्रारंभ से ही एक विशेष कार्यक्रम चालू किया गया था जिसके लिए पूरा वित्तीय प्रावधान केन्द्रीय सरकार द्वारा उपलब्ध कराया गया था । परन्तु इस कार्यक्रम की प्रगति योजना के सामान्य कार्यक्रमों के संदर्भ में भी बहुत कुछ धीमी ही रही जो इस तथ्य से स्पष्ट है कि पांचवीं योजना अवधि में उसके लिए रखे गए प्रावधान का केवल एक हिस्सा ही उपयोग में लाया जा सका था । छठी योजना अवधि में भी इस स्थिति में उल्लेखनीय रूप से सुधार नहीं हुआ है । इस संबंध में सबसे अधिक खेदजनक रवैय्या यह रहा है कि जैविक-स्तर पर विनाशोन्मुख समुदायों के लिए भी कार्यक्रम सामान्य नेमी तौर पर तैयार किए गए हैं । ये कार्यक्रम बड़े समुदायों के लिए भी उपयुक्त नहीं है जिनमें आवश्यक जीवन शक्ति तो मौजूद है । इसलिए आदिम जनजातियों को बहुत कुछ अपने आप ही प्रतिकूल बलों का सामना करना पड़ रहा है । इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि इन समुदायों के लिए जो कार्यक्रम तैयार किए जाएं वे विशिष्ट समूह-परक हों और प्रत्येक छोटे समुदाय की समस्याओं के समाधान के लिए विशेष तौर से तैयार किए जाएं । इस संबंध में यह स्मरणीय है कि इन समूहों को, जो अर्थ व्यवस्था के क्रमिक विकास में अभी कृषि पूर्व स्थिति में ही हैं, विपुल संसाधन-आधार की जरुरत होती है । ये लोग छोटे-छोटे अंचलों में इकट्ठे होकर नहीं रहते हैं । वे बहुत ही अधिक छितरे हुए हैं । इसलिए प्रत्येक समुदाय की अर्थव्यवस्था का रूप और उसके विशिष्ट परिवेश की चुनौतियों के प्रति उसकी प्रतिक्रिया नितांत अलग अलग हो सकती है ।

3.97 आदिम जनजातियों के कार्यक्रमों में पहला निर्णायक कदम यह होना था कि उन समुदायों के स्पष्ट निर्धारण और बड़े समुदायों के मामलों में उनमें के उन उप समूहों का निर्धारण किया जाए जिनमें आदिम जनजातीय लक्षण हों । इस प्रकार से स्पष्ट निर्धारण के बाद ही उन विशिष्ट समस्याओं का पता लगाया जा सकता था जिनके विरुद्ध वे संघर्ष कर रहे थे । यह चिन्ता का विषय है कि अपेक्षाकृत बड़े समूहों के मामले में स्पष्ट निर्धारण का यह कार्य नहीं किया गया है और इस बात का विस्तृत अध्ययन किए बिना ही कि विभिन्न क्षेत्रों में उनके सदस्य किन स्थितियों में रहते हैं पूरे के पूरे समुदाय आदिम जनजाति मान लिये गए हैं । सच तो यह है कि केन्द्रीय सरकार की उदार सहायता से आकर्षित होकर राज्यों ने महज अस्तित्व बनाए रखने के लिए ही कठोर संघर्ष लगे हुए लोगों को आवश्यक समर्थन देने के निर्णायक कार्य में लग जाने की बजाय यथासंभव अधिक से अधिक समुदायों को इस विशेष श्रेणी में शामिल कराने के लिए तत्परता दिखाई है । इसके फलस्वरूप आदिम जनजातियों के लिए कार्यक्रम भी ठीक उसी तरह के हैं जैसे औरों के लिए और अन्तर केवल इतना है कि उनके लिए सहायता अधिक उदार है । ये कार्यक्रम इसलिए ठीक बैठे ही नहीं हैं ।

3.98 इन समुदायों में कुछ का आकार इतना छोटा हो गया है कि उनका जैविक समूह के रूप में अस्तित्व रहना असंभव हो गया है । नीलगिरि (तमिलनाडु) में टोडा और पानियन लोगों को विनाश के कगार पर पहुंचने के बाद फिर से जीवनक्षम अवस्था में पहुंचाने में स्वर्गीय डा० एस० नरसिंहन की भूमिका एक ऐसा ज्वलंत उदाहरण है । समर्पित लोग क्या कुछ नहीं कर सकते हैं । ओंगे और शोमपेन दो अन्य ऐसे समुदाय हैं जिनके सामने अस्तित्व का खतरा उत्पन्न हो गया है । ओंगो की संख्या शताब्दी के आरम्भ में लगभग 500 थी जो निरन्तर घटती रही है और अब 100 से भी कम रह गई है । उनके स्वास्थ्य की स्थिति तथा आबादी में कमी के कारणों के बारे में एक विस्तृत अध्ययन भारत सरकार द्वारा 1977 में किया गया था ताकि उनको जीवनक्षम बनाने, उनके कल्याण तथा विकास के लिए उपयुक्त योजना तैयार की जा सके । परन्तु यह अत्यन्त खेद की बात है कि इन लोगों के संबंधित अध्ययन इस बारे में यह मालूम होते हुए भी कि उनका अस्तित्व खतरे में है, कुछ प्रारंभिक कार्य कर लेने के बाद अधूरे छोड़ दिए गए थे । इस निर्णायक नियति की ओर किसी भी उत्तरदायी प्राधिकारी अर्थात् स्वास्थ्य मंत्रालय, आदिवासी मामलों के लिये जिम्मेदार मंत्रालय तथा योजना आयोग ने ध्यान नहीं दिया । लगभग एक दशक के बाद जब द्वीप विकास प्राधिकरण की स्थापना हुई तभी इन लोगों की समस्या फिर से सामने आई और उन अध्ययनों को फिर से चालू किया गया ।

3.99 ओंगे लोगों की स्थिति के विस्तृत परीक्षण से यह जाहिर होता है कि उनकी स्थिति उस स्थिति से कहीं ज्यादा खराब है जिसका अनुमान पहले उनकी संख्या के आंकड़ों के आधार पर लगाया जा रहा था । सन 1971 से उनकी कुल जनसंख्या में कमी नहीं हुई है । परन्तु इन लोगों में महिलाओं की संख्या, जो समूह के अस्तित्व को कायम रखने में निर्णायक है, इस अवधि में न केवल उल्लेखनीय रूप से कम हुई है, परन्तु पिछले दशक में प्रजनन आयु वर्ग की महिलाओं की संख्या में तेजी से कमी हुई है । शोमपेन लोगों के मामले में उनकी संख्या तथा स्त्री-पुरुष अनुपात के बारे में प्रारंभिक आंकड़े भी उपलब्ध नहीं हैं । एक ऐसे विशेषज्ञ दल का गठन जिसमें देश की शीर्षस्थ संस्थाओं के प्रतिनिधि

शामिल हैं, सही दिशा में कदम है, जो उम्मीद है कि इन समुदायों के सामने आ रही चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए मार्गदर्शन करा सकेगा ।

3.100 अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह में आदिम जनजातियों के मामले सुविदित हैं । हमारे देश की मुख्य भूमि में कम जाने माने बहुत से छोटे समुदाय जैसे राजी, दिदायी तथा पहाड़ी कोरवा हैं जो अस्तित्व की समस्या का सामना कर रहे हैं । इस संबंध में किसी व्यवस्थित अध्ययन के अभाव में अन्य समुदायों के ऐसे मामले अनजाने ही रह जाएंगे । यह एक मानवीय समस्या है कि जिस पर अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान और राष्ट्रीय पोषण संस्थान जैसी प्रमुख चिकित्सा संस्थाओं को अपनी ओर से ही असुरक्षित समुदायों के लिए अपनी विशेष जिम्मेदारी के रूप में ध्यान देना चाहिए ।

3.101 इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि—

(1) आदिम जनजातियों की सूची में सम्मिलित किए गए सभी समुदायों का व्यवस्थित रूप से पुनरावलोकन किया जाना चाहिए और उनमें से उन भागों/वर्गों का निर्धारण किया जाए जो अभी भी आखेट और संग्रह या झूम खेती के स्तर पर अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए संघर्ष कर रहे हैं और जो अभी भूमिहीन श्रमिकों की अवस्था में पहुंचे हैं ।

(2) इन समुदायों के अधिक से अधिक 500 व्यक्तियों के प्रत्येक समूह को जीवनसक्षम बनाने, कल्याण और प्रगति के लिए एक व्यापक योजना बनाई जाए । इस योजना में उनके स्वास्थ्य और सामाजिक आर्थिक समस्याओं से संबंधित विशिष्ट सवालों के समाधान के लिये उपयुक्त व्यवस्था की जानी चाहिए ।

(3) सरकार आदिम जनजातियों के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक विशेषज्ञ दल गठित कर जिसमें समाज विज्ञानी चिकित्सा तथा पोषण विशेषज्ञ और प्रशासक शामिल हों और जो व्यापक योजनाएं और कार्यक्रमों को बनाने के लिए परामर्श देने और उनकी प्रगति की समीक्षा करने के लिए जिम्मेदार होना चाहिए ।

(4) अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान और राष्ट्रीय पोषण संस्थान जैसे राष्ट्रीय संस्थानों को इन आदिम समूहों की समस्याओं का निर्धारण करके उनको फिर से जीवनसक्षम बनाने के लिए कार्य-नीति तैयार करने और कार्यक्रमों के लिए तकनीकी सहायता प्रदान करने के आधार पर उनके जैविक अस्तित्व को बनाए रखने के लिए आवश्यक सहायता प्रदान करने के लिए जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए ।

4

कल्याण और प्रगति के लिए एक व्यापकतर ढांचा

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए जिन कार्यक्रमों पर पहले चर्चा की गई है उनकी एक अनकही धारणा यह है कि संवैधानिक आयोजना के अनुरूप समता तथा न्याय संबंधी मूलभूत अवधारणा का समादर सुनिश्चित होगा। परन्तु जिस सीमा तक यह धारणा पूरी नहीं होती है और उन मूलभूत अवधारणाओं की स्थापना में कमी रहती है अथवा उनके मामले में स्थिति बिगड़ती है, उस सीमा तक ये कार्यक्रम इनका पूर्णतः तथा निष्ठपूर्वक कार्यान्वयन किए जाने के बाद भी अपर्याप्त साबित होंगे और इनसे इन समुदायों के सदस्य राष्ट्रीय जीवन में समान स्थिति प्राप्त कराने के लिए अपर्याप्त होंगे। यह एक गहरी चिन्ता का विषय है कि न केवल घोषित उद्देश्यों की प्राप्ति में ही अभी बहुत कमी है, वरन कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों पर गम्भीर रूप से प्रतिगमन भी हुआ है। भूमि के स्वामित्व के मामले में प्रगति नगण्य होने के कारण अनुसूचित जातियों के सदस्य एक ऐसे संसाधन पर अपने अधिकारपूर्ण दावे से वंचित रह गए हैं जो उनमें से बहुत से लोगों के जीवन निर्वाह आधार है तथा जो प्रकृति का ऐसा उपहार है जिस पर उसकी सभी संतानों का समान अधिकार है। और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्रों की भूमिकाओं के प्रायः प्रतिवर्तित हो जाने से शिक्षा तथा सार्वजनिक रोजगार में अवसरों की समानता के बारे में संवैधानिक निदेशक तत्वों में अन्तर्निहित समता और न्याय की संभावनाएं अत्याधिक सीमित हो गई हैं। यदि आर्थिक बलों को ऐसे युक्तियुक्त प्रतिबन्धों के बिना जो समानता के हित में आवश्यक हों निर्बाध रहने दिया जाता है तो विकास प्रक्रियाओं के उलट-प्रहार और भी तेज होते जाएंगे जिससे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य सर्वाधिक प्रभावित होंगे। बढ़ती असमानता, गगन-भेदी आकांक्षाएं और निर्बाध उपभोगवाद के संदर्भ में विकास-दर की बढ़ोत्तरी पर फिर से भरोसे का माहौल अनुपयुक्त है। ऐसा प्रतीत होता है कि जन सामान्य में से एक खासे हिस्से की नियति में ही, उनकी स्थिति को सुधारने के लिए राज्य के प्रयासों के बावजूद, बढ़ते हुए प्रतिकूल बलों के सामने हार मानकर और भी पीछे की ओर ढकेलते जाना है। इसलिए एक बड़ी संख्या में अनुसूचित जातियों के सदस्य जन सामान्य में अधिक गरीब लोगों की दुर्दशा में सहभागी बने रहेंगे और उसके अलावा उन्हें परम्परा के गहरे पूर्वाग्रहों और दूसरे लोगों की नवोदित विरोधी भावना का भी सामना करना पड़ेगा जिसके दो कारण हैं—एक तो अनुसूचित जातियों के उन सदस्यों से ईर्ष्या-भाव जो जीवन में ऊपर पहुंचने में सफल हो जाते हैं और दूसरा परम्परा से प्रस्थापित अपनी श्रेष्ठ स्थिति के बारे में अनिश्चितता की संभावना से उत्पन्न घोर अपमान की भावना।

4.2 अनुसूचित जातियों के सदस्यों में कुछ थोड़े से लोगों जो सार्वजनिक क्षेत्र में प्रवेश पाने में सफल हो जाते हैं, के लिए ऊर्ध्वगामी गतिशीलता उन अधिसंख्य लोगों के लिए सान्त्वना नहीं हो सकती है जिन्हें जीवन-निर्वाह मात्र के लिए संघर्ष जारी रखना पड़ेगा। व्यापकतर व्यवस्था में न्यायपूर्ण व्यावहार ही उनकी एकमात्र आशा का आधार हो सकता है जिसमें वे अन्य करोड़ों मेहनतकशों के साथ बन सहभागी सकें। गरीब लोगों की वास्तविक सम्पत्ति है उनकी शारीरिक शक्ति और हाथ का कौशल। यदि उनके कौशल को समुचित मान्यता मिल जाए और उनके श्रम के योगदान को निष्पक्ष रूप से आंका जाए, उस हालत में गरीब व्यक्ति, गरीब नहीं रह जाएंगे और उन्हें राष्ट्रीय जीवन में अपने आप सम्मानजनक स्थान मिल जाएगा। यहां एक बात पूरी तरह से स्पष्ट हो जानी चाहिए कि गरीब लोगों को, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लोगों को, जिनकी जीविका का आधार कठोर परिश्रम है जिस में वे सतत रूप से लगे रहते हैं, अपनी आर्थिक प्रगति के लिए बाहरी सहायता की आवश्यकता नहीं होती है। इस मिथ्या धारणा का परित्याग आवश्यक है। गरीबों को अपनी जीविका कमाने के लिए दूसरे लोगों अथवा राज्य द्वारा सहायता की जाती है। इसके विपरीत राज्य सहित शेष अर्थव्यवस्था की पूरी संरचना का भार इन मेहनतकश लोगों के कंधों पर है। उस संरचना के समर्थन क संपोषण का आधार है उन लोगों के शोषण की प्रक्रिया, जिन्हें अपने श्रम का देय जिसके लिए वे युक्तियुक्त रूप से हकदार हैं, नहीं मिलता है। गरीब की किसी की सहायता की जरूरत नहीं है, उसकी असली जरूरत है पुरानी और नई दोनों ही व्यवस्था के उत्पीड़न से मुक्ति जिसके बाहरी रूप तो भिन्न हो सकते हैं परन्तु तत्व रूप एक ही है।

4.3 यहां पर एक बात अलबत्ता मन में गहरी टीस के साथ स्वीकार करनी होगी कि जैसे जैसे राष्ट्रीय जीवन में असमानता बढ़ती जा रही है और इसे यदि वांछनीय नहीं तो अपरिहार्य प्रवृति के रूप में निश्चित ही

न्यायमूलक समता के लिए विकास के हित में स्वीकार किया जा रहा है, वैसे-वैसे, उसी प्रकार की अन्यायी संरचना का अनुकरण उन आदिवासी समुदायों द्वारा भी किया जा रहा है जिनकी अधिक न्यायसंगत, सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था की समृद्ध और जीवन्त परम्पराएं हैं। संभवत: यह स्वीकार किया जा सकता है कि संरचनात्मक बदलाव की प्रक्रिया में कुछ मात्रा में असमानता के प्रादुर्भाव से बचा नहीं जा सकता है। परन्तु प्रत्येक समुदाय के लिए यह जरूरी नहीं है कि उसकी अपनी प्रारम्भिक सामाजिक-आर्थिक स्थिति का ध्यान रखे बिना असमानता के उस उत्कट रूप को जो राष्ट्रीय जीवन में व्याप्त है पूरी तरह से स्वीकार कर ले और यह उम्मीद करे कि उस प्रक्रिया में जो शोषित होते हैं और जिनकी स्थिति खराब हो जाती है वे समता तथा न्याय के लिए व्यापक राष्ट्रीय प्रयासों से लाभान्वित ही जाएंगे। गरीबी की वह संकल्पना जो तथाकथित विकसित समाजों में व्याप्त है उन आदिवासी लोगों के लिए समीचीन नहीं है जो समृद्ध प्राकृतिक संसाधनों वाले क्षेत्रों में निवास करते हैं और जिन्हें अभी भी उनके उपभोग का लाभ मिल रहा है। उनकी अर्थ-व्यवस्था आर्थिक विकास के क्रम में एक भिन्न चरण पर है और अधिकांश मामलों में उनके लिए गरीबी एक अपरिचित तथ्य है। गरीबी उन कतिपय क्षेत्रों में पहली बार जन्म ले रही है, जहां समाज का संसाधनों पर से धीरे-धीरे नियंत्रण खत्म होता जा रहा है और उसे नए विकास से समुचित लाभ नहीं मिल रहा है। देश के व्यापक समतावादी समाज की स्थापना के लक्ष्य के संदर्भ में इन क्षेत्रों के लिए कम से कम यह आयोजन तो किया ही जाना चाहिए कि वहां किसी भी रूप में गरीबी न पैदा हो। यदि विकास के लाभों मे न्यायपूर्ण साझेदारी सुनिश्चित हो सके और इन समाजों के सदस्यों के बीच का अन्तर एक समतावादी समाज की मर्यादाओं की सीमा के अन्दर रखा जा सके जिसके लिए आदिवासी लोगों का सामाजिक परिवेश अधिक अच्छा है तो, आदिवासी समाज शेष राष्ट्र के लिए एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत कर सकते हैं।

4.4 अनसूचित जातियों की स्थिति इससे भिन्न है क्योंकि वे दायवंचित जन थे। और केवल सामाजिक व्यवस्था मे ही नहीं परन्तु आर्थिक व्यवस्था में भी निम्नतम स्तर पर थे। बदलाव की प्रक्रिया में जैसे-जैसे अनसूचित जातियों के सदस्य की ऊर्ध्वाधर गतिशीलता का लाभ मिलना शुरू हुआ उसके कारण उनके बीच आपस में कुछ अन्तर आ जाना अपरिहार्य है। तथापि यदि पूरा राष्ट्र न्यायमूलक समता के रास्ते पर आगे बढ़ता रहता और सबसे गरीब लोगों की आर्थिक स्थिति में विकास की सामान्य गति की तुलना में अधिक तेज गति से सुधार होता और उच्च स्तरों पर गति अधिक धीमी रहती तो ऊर्ध्वाधर गतिशीलता के कारण आपसी अन्तर अधिक नहीं हो पाता। परन्तु चूंकि राष्ट्रीय जीवन में ही असमानता निरपेक्ष रूप में भी बढ़ रही है, अनसूचित जातियों में परस्पर दूरी भी बढ़ती जा रही है और आगे भी बढ़ती रहेगी क्योंकि केवल यही एक तरीका है जिसके द्वारा एक व्यापकतर असमान व्यवस्था में नागरिकों के सभी वर्गों के लिए न्यायपूर्ण स्थिति की कल्पना की जा सकती है। अनसूचित जातियों तथा जनजातियों में जिन लोगों की शिक्षा तथा आरक्षण के कारण नये अवसरों का लाभ मिला है उसके कारण ऊर्ध्वाधर गतिशीलता से कुछ सीमा तक असमानता पहले ही उत्पन्न हो चुकी है। परन्तु अब उनमें विशेष रूप से अनुसूचित जातियों में, एक प्रकार का प्रगतिरोध आता जा रहा है। इसका कारण यह है कि यद्यपि, शिक्षा के लाभों का प्रसार इन समुदायों में निरन्तर अधिक से अधिक लोगों तक पहुंच कर फैलता जा रहा है परन्तु उन क्षेत्रों में जहां आरक्षण की व्यवस्था है अवसर सीमित हैं। यही स्थिति समाज के अन्य वर्गों के लिए भी सत्य है परन्तु इसमें एक अन्तर है जिसके बारे में मैं कुछ विस्तार के साथ चर्चा करूंगा।

4.5 प्रथम, यद्यपि सभी शिक्षित युवाओं को रोजगार के संबंध में सिद्धांत रूप से समान अवसर प्राप्त हैं परन्तु अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के युवाओं के लिए सचमुच समान अवसर होने की बात कम से कम कुछ समय और नहीं कही जा सकती है जब तक कि उन्हें तत्संबंधी आरक्षण का विशेष लाभ न दिया जाता रहे। खुली प्रतियोगिता के लिए उनकी तैयारी में भारी अन्तर है जिसका कारण केवल शिक्षा की गुणवत्ता में अंतर ही नहीं है वरन् उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि तथा ऐसे कई अन्य पहलू भी हैं जो रोजगार प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। सरकार तथा सार्वजनिक क्षेत्र के अधीन सेवाएं कुल मिलाकर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में रोजगार के अवसरों का केवल एक हिस्सा मात्र हैं और इस क्षेत्र का आनुपातिक आकार धीरे-धीरे घटता जा रहा है और यदि वर्तमान क्रम जारी रहता है तो उसके बहुत ही कम हो जाने का खतरा है। यदि इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखा जाए तो **एक बात स्पष्ट हो जाती है कि जब अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विद्यार्थी तथा सामान्य वर्गों के विद्यार्थी अपनी शिक्षा समाप्त करते हैं तो उनके सामने अवसरों के दो बिल्कुल भिन्न संसार होते हैं। अनसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य केवल सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार के अवसरों पर ही आशा लगा सकते हैं जो अब लगभग पूरे भर गए हैं और जिसकी बढ़ोतरी की दर धीमी है।** अन्य छात्रों के सामने पूरी अर्थव्यवस्था के रोजगार के अवसरों का संसार हैं जिन्हें पाने के लिए न केवल शैक्षिक उपलब्धियों का महत्व है वरन् सामाजिक पृष्ठभूमि भी बड़ी प्रासंगिक हो गई है।

4.6 दूसरे, यद्यपि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के छात्रों की संख्या बढ़ रही है परन्तु जिस प्रकार की शिक्षा उन्हें मिल रही है उसमें बहुत सुधार की गुंजाइश है। इसके परिणामस्वरूप इन छात्रों की खुली प्रतियोगिता के लिए

उतनी तैयारी अच्छी नहीं है और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में रोजगार के अवसरों में वृद्धि धीमी होने के कारण प्रतियोगिता लगातार और भी कठोर होती जा रही है। अब तक सकारात्मक विभेद की नीति के आरंभिक चरण में जैसे-जैसे अधिकाधिक संगठन, विशिष्ट रूप से सार्वजनिक क्षेत्र के संगठन, आरक्षण की नीति स्वीकार करते जा रहे थे और उसे उत्साह के साथ कार्यान्वित कर रहे थे, उसके फलस्वरूप अनुसूचित जातियों के शिक्षित युवकों को उपलब्ध होने वाले पदों की बड़ी संख्या का लाभ मिल रहा था। अब स्थिति मोटे तौर पर संतुलित हो चुकी है और उसमें भर्ती का स्तर बहुत कुछ स्थिर हो चुका है। उदाहरण के लिए, सार्वजनिक क्षेत्र में आरक्षण के नियम का एक मात्र अपवाद अत्यधिक तकनीकी और वैज्ञानिक पद रह गए हैं जिनमें सामान्य शिक्षा प्राप्त युवकों के लिए कोई खास गुंजाइश नहीं हो सकती है। समूह 'घ' में उपलब्ध पदों की तुलना में काफी समय से भर्ती की दर अधिक रही है जो वैसे भी शिक्षित युवकों के लिए बेमानी है। समूह 'ग' के पदों में भी जहां शिक्षित युवकों को अधिकांश अवसर प्राप्त होते रहे हैं, अब भराव पूरा हो गया है और खास गुंजाइश नहीं रही है। समूह 'क' और 'ख' संबंधित भर्ती में भारी कमी हैं परन्तु उनकी कुल संख्या इतनी कम है कि यदि उनमें आरक्षण के सब स्थान भर भी जाएं तब भी उससे, जहां तक सामान्य शिक्षित युवकों के लिए अवसरों का संबंध है, कोई खास अन्तर नहीं पड़ सकता है।

4.7 तीसरे, निजी क्षेत्र में दो भाग हैं, जिनमें से एक में रोजगार के अवसरों वाला है और दूसरा स्व-रोजगार के अवसरों वाला। स्वरोजगार वाले हिस्से का आकार अपेक्षाकृत काफी बड़ा है। इस भाग में केवल एक छोटा सा हिस्सा ही ऐसा है जिसमें अवसर सरकार की ओर से किए जाने वाले कतिपय नियमन या सुविधाओं जैसे, लाइसेंस, कोटे और परमिट से संबंधित है। इसी भाग में आरक्षण की नीति से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के युवकों की सहायता मिल सकती है। अधिकांश स्व-रोजगार के अवसरों का लाभ बहुत कुछ पूंजी, पैसा, अवस्थापना और इसी प्रकार की चीजों पर निर्भर रहता है जो अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के पास नहीं ह।

4.8 तथापि अनुसूचित जनजातियों के शिक्षित युवकों की स्थिति भिन्न है। आदिवासी बहुल राज्यों में स्थिति एक छोर पर है। इन राज्यों में शिक्षा का स्तर काफी ऊंचा है। परन्तु उनके मामले में तृतीयक क्षेत्र में अवसर भी बहुत तेजी से बढ़ रहे हैं। अत: अब तक उनकी व्यवस्था युवकों को स्थान उपलब्ध कराने में समर्थ रही है। तथापि, उनके मामले में विकास संतुलित न होकर एकांगी हुआ है, जिसके कारण उनकी अर्थव्यवस्थाएं विरूपित हो गई हैं। इन सभी राज्यों में प्राथमिक क्षेत्र बहुत कमजोर है और द्वितीयक क्षेत्र का लगभग कोई अस्तित्व ही नहीं है। केवल तृतीयक क्षेत्र में ही वृद्धि हुई है और इसका आकार भारी भरकम हो गया है। ऐसी व्यवस्था स्वत: विकासक्षम नहीं हो सकती है। इसके अलावा, यह प्रतिमान अभी तक उन्हीं स्थितियों में चल सका है जहां की आबादी अपेक्षाकृत कम है। परन्तु जहां अधिक आबादी का सवाल हो वहां यह प्रतिमान लागू नहीं किया जा सकता है। परन्तु ये प्रतिमान शिक्षित युवकों के लिए बहुत आकर्षक है क्योंकि इससे उनकी सार्वजनिक क्षेत्र में स्थान पाने की तात्कालिक समस्या हल हो जाती है। वास्तव में यही चाहत छोटी-छोटी राजनीतिक प्रशासनिक इकाईयों की स्थापना की मांग के लिए सबसे बड़ी प्रेरणा शक्ति बन गई है। यह स्पष्ट है कि यह प्रक्रिया अनिश्चितकाल तक जारी नहीं रखी जा सकती है और उसके अन्तर्विरोधों के प्रकट होने में कोई देर नहीं लगेगी। और यह स्थिति उदाहरण के लिए, बिहार में अभी ही उत्पन्न हो गई है जहां आदिवासी जनसंख्या अधिक है और सभी शिक्षित युवकों के लिए तृतीयक क्षेत्र में नए अवसर नहीं मिल सकते हैं। यदि बढ़ती हुई आकांक्षाओं के अनुरूप नए अवसर भी बढ़ाना है तो यह जरूरी होगा कि उस प्रादेशिक अर्थ व्यवस्था के सभी पहलुओं की क्षमता को पूरी तौर से विकसित किया जाय।

4.9 इस प्रकार सभी शिक्षित युवकों के लिए देश की अर्थव्यवस्था में अवसरों की उपलब्धि पूरी तरह से खुली हुई नहीं है बल्कि उसमें बहुत सी शर्तें लगी रहती हैं। ये शर्तें उस व्यक्ति के वर्ग से जिसका वह सदस्य है, जुड़ी हुई हैं। वास्तव से रोजगार के अवसरों में गतिरोध अनुसूचियों में सम्मिलित जातियों में परस्पर अन्तर बढ़ाने के लिए जिम्मेदार हैं। जहां एक ओर आरक्षण के लाभ उन जातियों को मिल गए जो शिक्षा का लाभ प्राप्त करने में प्रथम थे, वहीं दूसरी ओर अब अन्य जातियों को आगे बढ़ने में कठिनाई हो रही है। इसके परिणामस्वरूप अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के अन्दर अधिक कमजोर समूहों के सदस्यों में न केवल निराशा की भावना ही उत्पन्न हुई है परन्तु इससे सकारात्मक विभेद की नीति की खिलाफत करने वाले लोगों को अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों में से कुछ लोगों द्वारा अपने समाज के अन्य सदस्यों को न्याय के अवसर मिलने से वंचित कर अपने लिए एकाधिकार जैसी स्थिति बना लेने की ओर इशारा कर दोषारोपण करने का अवसर भी मिल जाता है। परन्तु इस तथ्य की आसानी से अनदेखी कर दी जाती है कि यह बहुतकर सामाजिक न्याय की अवधारणा का एक ऐसे बहुत ही सीमित परिप्रेक्ष्य में रखकर अमल करने का फल है जिसमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बड़े भाग में सम्यक स्थान मिलने से वंचित होना पड़ता है। जो लोग न्यायपूर्ण स्थान पर पहुंच जाते हैं वे भी इस बारे में पूरी तरह आश्वस्त नहीं होते हैं कि वे खुली प्रतियोगिता में अपना स्थान बनाए रख सकेंगे। इसीलिए वे आरक्षण की सुविधा का परित्याग करने का जोखिम नहीं उठा सकते हैं। उनकी आशंका इस तथ्य से और पुष्ट हो जाती है कि यदि वे लोग जहां वे हैं वहां से हटकर शेष अर्थव्यवस्था में ऊंचे स्तर की तो बात अलग समान स्तर पर भी जाना चाहें तो उसकी

संभावना भी अत्यधिक क्षीण है। यह आधारभूत धारणा गलत सिद्ध हो चुकी है कि शिक्षा तथा सार्वजनिक क्षेत्र में हिस्सेदारी अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को सकल राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में समानता के आधार पर भाग लेने में समर्थ कर सकेंगे, क्योंकि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए प्रारंभ में जिस संरचना की कल्पना की गई थी उसके मानकों में आधारभूत परिवर्तन हो गए हैं। जहां एक ओर अनुसूचित जातियों के उन वर्गों के लिए जो विकास की दौड़ में देर से शामिल हो रहे हैं ऊपर उठने के लिए अवसर मिलने की व्यवस्था करना आवश्यक होगा। परन्तु दूसरी ओर इस समस्या का वास्तविक समाधान हमारे संविधान की भावना के अनुरूप अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के लिए राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में समानता के आधार पर भागीदारी के लिए समर्थ बनाने के महान कार्य में अगले चरणों का निर्धारण करना होगा।

4.10 ऊपर की समीक्षा से यह स्पष्ट है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए अब तक अपनाया गया संदर्भ कुछ कदर संकीर्ण रहा है और यदि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास की अपेक्षित दिशा के बारे में कुछ मूलभूत अवधारणाओं को ध्यान में रखा जाय तो वह ठीक ही था। जहां एक ओर भूमि जोतने वाले की और सार्वजनिक क्षेत्र की प्रमुख भूमिका की मूलभूत अवधारणा जैसे पहले के वायदों में जो कुछ भी संभव हो उसे व्यावहारिक उसका लाभ उठाने के प्रयास जारी रहने चाहिए, वहीं नई स्थिति को अनदेखा भी नहीं किया जा सकता है। मोटे तौर पर, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को संगठित तथा असंगठित दोनों ही क्षेत्रों में न्याय स्थान मिल सके इसके बारे में आश्वासन दिया जाना चाहिए। चूंकि संगठित क्षेत्र में केवल एक छोटा सा भाग ही सकारात्मक विभेद नीति के दायरे में लाया गया है जिससे अनुसूचित जातियों तथा जन-जातियों का केवल एक छोटा सा वर्ग ही उस क्षेत्र में सम्मिलित होने में समर्थ हो सका है, अतः उनमें अधिकांश लोग अभी उसके लाभों से वंचित ही हैं। जहां तक असंठित क्षेत्र का संबंध है वहां मूलभूत प्रश्न श्रम के मूल्यांकन, उत्पादन के साधनों के स्वामित्व तथा संसाधनों के उपभोग से संबंधित है। अनुसूचित जातियों के सदस्यों को जो बहुत करके अपने श्रम पर ही निर्भर करते हैं, समाज के अन्य गरीब लोगों के साथ उनके काम के लिए मजदूरी के रूप में उचित हकदारी का आश्वासन आवश्यक है। उन्हें उत्पादन के साधनों विशेष रूप से भूमि पर, जिससे उनमें से अधिकांश लोग किसी न किसी रूप में जीवन-निर्वाह करते हैं, अधिकार प्राप्ति के लिए भी समर्थ बनाया जाना है। अनुसूचित जनजातियों के मामले में सर्वाधिक आवश्यक कार्य शोषण की प्रक्रियाओं के विरुद्ध प्रभावी संरक्षण प्रदान करना है ताकि संसाधनों पर उनके नियंत्रण में कोई विघ्न न आए।

4.11 जैसे-जैसे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था आगे बढ़ती है, वैसे वैसे संगठित क्षेत्र न केवल निरपेक्ष रूप से वरन् सापेक्षिक रूप से भी बढ़ता जाएगा। विकास के लाभों का एक बहुत बड़ा भाग बहुत कुछ इसी क्षेत्र को मिलेगा। इसलिए न्याय की मांग यही होगी कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को संगठित क्षेत्र के विकास में सहभागी करने के लिए समर्थ बनाया जाए। सकारात्मक विभेद नीति का सीमित प्रसार से, जिसमें मुख्यतः सार्वजनिक क्षेत्र के रोजगार ही शामिल हैं, बदलते संदर्भ में काम नहीं होगा। उसका दायरा समूचे संगठित क्षेत्र के समव्यापी होना चाहिए।

4.12 तथापि, यहां पर एक चेतावनी आवश्यक होगी। संगठित क्षेत्र में न्याय भागीदारी काफी समय तक अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के अपेक्षाकृत एक छोटे वर्ग के लिए ही सार्थक रहेगी। परन्तु उसका अपना महत्व है। यद्यपि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों की सामान्य स्थिति असंगठित क्षेत्र में उन पर कैसी गुजरती है इस पर निर्भर रहेगी। तथापि, ये दोनों बातें एक ही प्रश्न के दो पहलू हैं और उन पर साथ-साथ कार्रवाई की जानी है। यदि राष्ट्र में अन्यायी प्रवृत्ति बढ़ती है तो अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों में भी असमानता बढ़ेगी। यद्यपि यह आशा की जा सकती है कि अनुसूचित जनजातियों के सदस्य, अपने लोगों की अधिक समतामूलक सामाजिक व्यवस्था के साथ निकट का संबंध बनाए रखने के कारण तथा अनुसूचित जातियों के सदस्य, इस निरन्तर संघर्ष के कारण जिसमें अनुसूचित जातियों का भारी बहुमत शामिल रहेगा, बढ़ती हुई असमता के विरुद्ध उल्लेखनीय प्रभाव डालने का प्रयास कर सकते हैं। यद्यपि, बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि इन समाजों में जिस विशिष्ट वर्ग का उदय हो रहा है, इसका न केवल अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण और प्रगति के संबंध में परन्तु समतावादी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के विशाल राष्ट्रीय उद्देश्य के संबंध में भी अपनी भूमिका के बारे में कैसा नजरिया होता है।

आधारभूत आयोजना

4.13 राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में समतामूलक भागीदारी की किसी भी आयोजना में मोटे तौर पर तीन तत्व शामिल होंगे अर्थात् (1) सम्पत्ति और उत्पादक साधनों पर स्वामित्व में न्याय भागीदारी, (2) स्व-रोजगार के अवसरों तथा (3) देश में आर्थिक क्रियाकलापों के सभी क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों में न्याय भागीदारी। इनमें से पहला तत्व तो केवल दीर्घकालीन लक्ष्य ही माना जा सकता है विशेष रूप से वर्तमान संदर्भ में जब कि उपनिवेशवादी काल से विरासत में मिली भूमि वितरण में अन्यायी व्यवस्था प्रारंभ में की गई परिकल्पना के अनुसार अभी समाप्त नहीं हुई है एवं सम्पत्ति तथा उत्पादक साधनों दोनों के संबंध में आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण निर्बाध रूप से हो रहा है। तथापि, यदि भूमि जोतने वाले की जैसी न्यूनतम कार्रवाईयों से इस दिशा में कुछ शुरुआत की

जाय जिस पर राष्ट्रीय आम सहमति हो तो, अभी भी कुछ बचाया जा सकता है। इस कार्रवाई में भी साधनों का बड़े पैमाने पर पुनर्वितरण करना होगा, जिससे उसके विरूद्ध दबाव उत्पन्न होने की संभावना हो सकती है। परन्तु उन नए साधनों पर अधिकार देने के बारे में पूर्व-निर्धारण करने और उनमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के लिए एक युक्तियुक्त भाग सुनिश्चित करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए जो वित्तीय निवेश की सहायता से तथा आधुनिक प्रौद्योगिकी के उपयोग से निर्मित किए जा रहे हैं, बशर्ते उसकी धारणा स्पष्ट हो और लक्ष्य सुस्थिर हों। इसी प्रकार स्व-रोजगार के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोगों का प्रवेश इस बात पर निर्भर करेगा कि उनके लिए जोखिम उठाने की उपयुक्त गुंजाइश सहित वित्तीय सहायता की व्यवस्था के अलावा प्रौद्योगिकी और संगठन संबंधी नए कौशल अर्जित करने के लिए कितनी सहायता उपलब्ध कराई जाती है। जहां वित्तीय सहायता की व्यवस्था नीति का मामला है जिसे तत्काल क्रियान्वित किया जा सकता है, वहीं कौशल अर्जित करना अपेक्षाकृत एक धीमी प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में वांछित गति की आशा केवल एक दशक या और अधिक समय तक कार्य को सतत रूप से चलाने के बाद ही की जा सकती है, क्योंकि तब तक नए कार्यों के लिए पूरी तरह से तैयार एक नई पीढ़ी तैयार हो गई होगी। रोजगार में उनका उचित भाग सुनिश्चित करने के वांछित परिणाम अल्पकाल में प्राप्त होने की अपेक्षा की जा सकती है जिससे अन्य क्षेत्रों में अगले निर्णायक कदमों के लिए मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

4.14 यह उपर्युक्त आयोजना सिद्धान्त सभी स्थितियों के लिए युक्तियुक्त है। परन्तु उसका व्यावहारिक रूप विभिन्न स्थितियों में भिन्न होगा। उदाहरण के लिए, उस स्थिति में जब सामान्य रूप में न्यायमूलक समता का समर्थन देने वाले बल काफी शक्तिशाली हों तो इस आयोजना में वर्णित विशेष कार्यक्रमों में केवल कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों पर ही ध्यान केन्द्रित रखना काफी होगा। परन्तु उस स्थिति में जब न्यायमूलक समता के समर्थक सामान्य बल कमजोर हों तब विशेष कार्यक्रम अधिक सघन करने होंगे और उनका दायरा भी व्यापक रखना होगा। इस प्रकार, जैसे जैसे राष्ट्रीय जीवन में अन्यायी प्रवृत्तियां अधिक ताकतवर होती जाती हैं वैसे-वैसे अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए न्यायमूलक समता सुनिश्चित करने का काम अधिकाधिक कठिन होता जाएगा। इसके अलावा जैसे-जैसे असमानता बढ़ती है और धीरे-धीरे छोटे-छोटे समुदायों से लेकर व्यापक राष्ट्रीय जीवन तक विभिन्न स्तरों और विभिन्न संदर्भों में वह दृश्य रूप लेती जाती है, वैसे-वैसे अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को भी सापेक्ष गरीबी और वंचित होने की भावना गहराती जाएगी। उभरते परिवेश में इस संबंध में संभावनाएं अत्यन्त भयावह होती जा रही हैं क्योंकि राष्ट्रीय जीवन में उपभोगवाद के ज्वार को इस आशा से उद्वेलित होने दिया जा रहा है कि वही ज्वार उपलब्धि के लिए कठिन परिश्रम और तेज प्रतियोगिता के रूप में प्रगति के इंजन को चलाने के लिए प्रधान-शक्ति बन जाएगा। परन्तु वास्तविकता इसके बिल्कुल विपरीत है। हमारे देश में तुरन्त सिद्धि का परिवेश बनता जा रहा है जिसमें किसी व्यक्ति के अपने प्रयास और व्यक्तिगत गुणों तथा उस व्यक्ति की उपलब्धियों के बीच कोई संबंध ही नहीं रह गया है। इससे लोगों में उन आदिम संबंधों का सहारा लेने की प्रवृत्ति पनपी है जिसे जागृत करना आसान है और जिनका यदि चतुराई से प्रयोग किया जाय तो बहुत शक्तिशाली हो सकते हैं। शीघ्र और सरलता से लाभ प्राप्त करने के लिए छीना-झपटी जैसे जैसे बढ़ेगी उसके साथ यह प्रवृत्ति अधिक तेज होती जाएगी और उससे राष्ट्रीय व्यवस्था में तनाव भी बढ़ेगा। इस संबंध में सकारात्मक विभेद की नीति न्याय और रूप दोनों के लिए आवश्यक प्राथमिक बलों का विकल्प नहीं हो सकती है--यह केवल उस आधारभूत संरचना में अनुपूरक की भूमिका अदा कर सकती है। इसलिए उस आधारभूत संरचना को तुरन्त सिद्धि के लिए विरूपित नहीं होने दिया जाना चाहिए।

(1) निजी क्षेत्र में रोजगार

4.15 हमारी अर्थव्यवस्था के आयाम में मोटे तौर पर सार्वजनिक और निजी क्षेत्र समाहित हैं। सार्वजनिक क्षेत्र में राज्य मालिक है, और उसमें काम करने वाले सभी लोग कर्मचारी हैं, यद्यपि उनकी रोजगार में स्थिति नितांत भिन्न है। निजी क्षेत्र के भी मोटे तौर से दो भाग कहे जा सकते हैं अर्थात् एक वे आर्थिक गतिविधियां जिनमें सभी लोग बहुत करके अपना रोजगार करते हैं और दूसरे वे काम जिसमें उत्पादन के साधन की मिलकियत काम करने वालों की नहीं होती है। इस भाग में संयुक्त क्षेत्र के उद्यम, लिमिटेड कम्पनियां और निजी उद्यम शामिल हैं। जैसे पहले विस्तृत चर्चा की जा चुकी है समानता के अवसर का सिद्धांत जिसे संविधान में महान राष्ट्रीय उद्देश्य के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है, उसकी भावना सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के औपचारिक द्विभाज के बावजूद उसके अन्तर को नजरअंदाज करते हुए, पूरे राष्ट्रीय जीवन में ही व्याप्त होना चाहिए। परन्तु इन दोनों क्षेत्रों में आधारभूत रूप से कुछ भिन्नता है। सार्वजनिक क्षेत्र सीधे राज्य के नियंत्रण में है और उसमें समानता का अवसर एक बड़ी सीमा तक आरक्षण की नीति के माध्यम से संस्थापित किया गया है। परन्तु जहां तक निजी क्षेत्र का संबंध है अभी तो यह सवाल तक नहीं उठा है कि उसे भी संविधान में स्थापित उस सामाजिक दायित्व को स्वीकार करने के लिए बाध्य किया जा सकता है। यह स्पष्ट है कि हमारे राष्ट्रीय जीवन में कोई भी क्षेत्र निर्बाध और निरंकुश व्यवस्था चलाने के विशेषाधिकार का दावा नहीं कर सकता है। निजी क्षेत्र की सभी गतिविधियों को उस व्यवस्था के अन्दर काम करना होता है जिनके द्वारा मालिक-मजदूर के संबंध प्रशासित होते हैं और उसे सार्वजनिक व्यवस्था, पर्यावरण और इसी प्रकार के अन्य मुद्दों से संबंधित

विनियमों का भी पालन करना होता है। इसी प्रकार सिद्धांत रूप से वह सामाजिक न्याय के लिए आवश्यक प्रतिबंधों से उन्मुक्त रहने का दावा नहीं कर सकता है। यद्यपि इस संबंध में अभी तक कोई औपचारिक बाध्यताएं नहीं हैं, राज्य को संविधान में प्रतिष्ठित राष्ट्रीय उद्देश्यों के अनुसरण में उपयुक्त उपबन्ध करने का अधिकार है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि निजी क्षेत्र अन्ततः राज्य द्वारा निर्मित अमूर्त और मूर्त अवस्थापना पर ही तो आधारित है और यह तथ्य उसके द्वारा उन सामाजिक लक्ष्यों को स्वीकार करने के लिए पर्याप्त होना चाहिए जिन्हें प्राप्त करने की राज्य से अपेक्षा की जाती है।

4.16 यदि नागरिकों के दायित्व की इस व्यापक संकल्पना को कुछ समय के लिए अलग भी रख दिया जाय, तो भी प्रारम्भ में उन संगठनों/संस्थाओं के बीच विभेद किया जा सकता है जिन्हें वित्तीय संस्थाओं के माध्यम से लोक वित्त का लाभ मिलता हो और जो पूरी तरह विशुद्ध निजी संसाधनों पर निर्भर हों। वित्तीय संस्थाओं का राष्ट्रीयकरण करने के ऐतिहासिक निर्णय का एक बड़ा उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि अर्थ-शक्ति का उपयोग राष्ट्रीय रूप से स्वीकृत सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए ही किया जा सके। अवसरों में समानता केवल एक मूलभूत अधिकार ही नहीं है अपितु यह राष्ट्रीय जीवन में समता और न्याय के लिए एक निर्णायक तत्व भी है। हालांकि उसका संदर्भ कदाचित सीमित हैं। अतः उन सभी संगठनों को जो संस्थागत वित्त का लाभ उठाते हैं सामाजिक न्याय के राष्ट्रीय उद्देश्य के लिए सक्रिय रूप से योगदान करने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए और तदनुसार उसे प्राप्त करने के लिए उन्हें उचित योगदान करना चाहिए। अब हम ऐसी स्थिति में पहुंच गए हैं जहां भारतीय कम्पनी अधिनियम, भारतीय सोसायटी अधिनियम सहित किसी भी कानून के अधीन स्थापित सभी सहकारी निकायों, सहकारी समितियों और विदेशी सहयोग से स्थापित संगठनों सहित ऐसे अन्य संगठनों को, जो संस्थागत वित्त का लाभ प्राप्त कर रहे हों, इस बात के लिए बाध्य किया जाय कि वे अपने अधीन रोजगार के अवसरों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों को उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करें। निजी क्षेत्र के अन्य संगठनों में भी अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के उचित प्रतिनिधित्व की सुविधा का धीरे-धीरे श्रेणीबद्ध विस्तार किया जाना चाहिए।

(2) स्व-रोजगार के क्षेत्र में अवसर

4.17 दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र जिसमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को उचित प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए स्व-रोजगार से संबंधित है। इस प्रश्न के दो पहलू हैं। प्रथम, स्व-रोजगार क्षेत्र में कुछ ऐसे कार्य हैं जिनके लिए अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के पास अपेक्षित कौशल हैं। द्वितीय कुछ ऐसे क्षेत्र हैं, विशिष्ट रूप से अर्थव्यवस्था के आधुनिक क्षेत्र में, जिनके लिए उनके पास आवश्यक कौशल नहीं हैं और यदि वे ऐसा कौशल अर्जित भी कर लेते हैं तो उनके पास ऐसे अवसरों का लाभ उठाने के लिए आवश्यक संसाधन नहीं हो पाते हैं। इस संबंध में उपयुक्त कार्यवाही करने के लिए सरकार द्वारा इन दोनों पहलुओं पर पृथक रूप से विचार किए जाने की आवश्यकता होगी।

4.18 परम्परागत व्यवसाय अभी भी स्व-रोजगार क्षेत्र के एक बड़े हिस्से के लिए जिम्मेदार है। जैसा पहले चर्चा की जा चुकी है उनके बारे में मुख्य प्रश्न परम्परागत कौशल के निष्पक्ष मूल्यांकन और उन परम्परागत व्यवसायों को नई तकनीक के लाभ ऐसे तरीके से पहुंचाने से संबंधित है कि उस प्रक्रिया में उनमें पहले से लगे हुए व्यक्तियों को उन लाभों का एक बड़ा भाग प्राप्त हो। इसके अतिरिक्त इन व्यवसायों को उनके जातिगत आधार से अलहदा किया जाना चाहिए और जैसी पहले विस्तारपूर्वक चर्चा की जा चुकी है, उन्हें आधुनिक क्षेत्रों में मान्य पूर्ण व्यावसायिक दर्जा दिया जाना चाहिए।

4.19 स्व-रोजगार के नए अवसर बड़े पैमाने पर आधुनिक क्षेत्र में ही पैदा हुए हैं जिनमें वितरण और आपूर्ति संबंधी एजेंसी कार्यों से लेकर व्यापारिक प्रतिष्ठानों और छोटे पैमाने के उद्योग-धंधों तक भिन्न प्रकार के कार्य शामिल हैं। आधुनिक क्षेत्र में बहुत से छोटे उद्यम कारपोरेट क्षेत्र में सार्वजनिक और निजी दोनों प्रकार के बड़े प्रतिष्ठानों से, उनकी आनुषंगिक इकाईयों के रूप में अथवा विशेष अनुबंधों के आधार पर संबद्ध हैं। ये इकाईयां उन लोगों के लिए अच्छे अवसर प्रदान करती हैं जो स्वतंत्र उद्यम के अपरिचित क्षेत्र में प्रवेश का प्रयास कर रहे हैं और किसी भी दृष्टि से कोई उनका समर्थन करने वाला नहीं है। इनमें से कुछ सही अभिरूचि और कौशल युक्त लोगों से यह आशा की जा सकती है कि वे आगे बढ़ें और धीरे-धीरे स्वतंत्र उद्यमियों के रूप में स्थापित हो जाएं।

4.20 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के लिए एजेंसी कार्यों में भाग लेना संभवतः सबसे आसान काम है क्योंकि इनके अधिकांश मामलों में वस्तुओं की आपूर्ति और उनकी बिक्री सुनिश्चित होती है। इसी प्रकार आनुषंगिक उद्योग, उनके आधुनिक क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए एक अच्छी भूमिका अदा कर सकते हैं। जो एजेंसियां कमी वाली वस्तुओं पर आधारित काम करती हैं उनका चलाना सर्वाधिक आसान है। व्यापारिक गतिविधियों में संबंधित प्रतिष्ठान के स्थल और बिक्री की वस्तुओं के प्रकार का उसकी सफलता में महत्वपूर्ण योगदान होता है। ऐसे बहुत से कामों का नियन्त्रण राज्य द्वारा या उसके संस्थानों जैसे पर्यटन विकास निगमों द्वारा निर्मित बिक्री केन्द्र अथवा नए नगरों में बाजार परिसर द्वारा किया जाता है।

4.21 कुछ मामलों जैसे पेट्रोल पम्प, रसोई गैस एजेंसीज और दुकानों के आबंटन में भी अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षण है। इनमें से कुछ थोड़ी सी रियायतें

भी दी जाती हैं। नए प्रतिष्ठान स्थापित करने के लिए कुछ सहायता और कुछ आनुषंगिक उद्योगों के लिए विशेष रियायतें भी दी जाती हैं। तथापि, स्पष्ट रूप से यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कि स्व-रोजगार के क्षेत्र में नए अवसरों के समूचे आयाम में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को उचित प्रतिनिधित्व मिल सके, व्यापक नीति नहीं तैयार की गई है। उन मामलों में भी जहां आरक्षण किया गया है संबंधित प्रतिष्ठानों की ओर से यह सुनिश्चित करने के लिए कि आरक्षण के लाभ उन्हें मिल जाएं कोई सहायता उपलब्ध नहीं है। उदाहरण के लिए एल० पी० जी० गैस के वितरण जैसे साधारण मामले में भी उनके लिए केवल लाइसेंस मिल जाना अपने आप में सफलता की कोई गारंटी नहीं है। उस व्यक्ति के लिए उस व्यवसाय की जानकारी हासिल करना और आवश्यक वित्तीय साधन जुटाना भी जरूरी है और सर्वाधिक महत्वपूर्ण और निर्णायक बात तो यह है कि नए व्यवसाय के आरम्भिक दौर में आकस्मिक कठिनाइयों से निपटने के लिए भी उन्हें आवश्यक समर्थन की व्यवस्था होनी चाहिए। इस संबंध में यह स्मरणीय है कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अनेक क्षेत्रों में कुछ समुदायों की भारी सफलता मिली है वह बहुत कुछ नए उद्यमियों की उसी लाइन में पहले से स्थापित हुए अन्य उद्यमियों से कुल, जाति, प्रदेश और धर्म के आधार पर सहज उपलब्ध अनौपचारिक सहायता के कारण हुई है। अनुसूचित जातियों के सदस्यों को न केवल उन औपचारिक संस्थाओं की सहायता पर ही निर्भर करना होता है जिनकी कार्य विधि असहाय होने के लिए कुख्यात अपितु उन्हें अनेक पूर्वाग्रहों और सीधे सीधे विरोध का भी सामना करना होता है जो उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि के कारण न केवल उसी काम में लगे उनके प्रतिद्वंद्वियों की ओर से होता है बल्कि उस व्यवस्था की ओर से भी आता है जिसे अपनी इच्छा के विपरीत उनकी सहायता करने का दायित्व निभाना पड़ता है।

4.22. इस प्रकार इस संबंध में स्पष्ट नीति के अभाव में न केवल राज्य सरकारों के विभिन्न विभाग ही बल्कि केन्द्रीय मंत्रालय भी, जिनसे कि उस भावना के अनुरूप आचरण की आशा की जा सकती थी, ऐसा औपचारिक रुख अपना लेते हैं जो राज्य की समान्य नीति और उनके संविधानिक दायित्वों से संगत नहीं होता है। इस रिपोर्ट (अध्याय-5) में वर्णित मामले जो पैट्रोलियम मंत्रालय और भारत पर्यटन विकास निगम का रुख दर्शाते हैं, इस महत् सामाजिक दायित्व के प्रति व्यवस्था की उदासीनता के दृष्टान्त हैं। आधुनिक क्षेत्र में स्व-रोजगार वाले हिस्से में भारी प्रतियोगिता है विशेष रूप से जब कुछ ऐसे विशेषाधिकार वाले कार्य-क्षेत्रों से संबद्ध होते हैं जिनमें प्रवेश हो जाने मात्र से ही व्यक्ति लाभांश का हकदार हो सकता है। यहां बस पैसे से और अधिक पैसा पैदा होता है। और जिनके पास पैसा है वे किसी भी कीमत पर भी अपेक्षाकृत कम पैसे वाले को प्रतियोगिता में पछाड़कर बाहर करने के लिये, यदि कुछ थोड़ा अलावा खर्च करना पड़े तो उसमें भी संकोच नहीं करेंगे। इस माहौल में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उन सदस्यों की बात ही क्या जो उस दौड़ में अभी बस प्रवेश ही कर रहे हैं और जिनके पास इस समय न केवल संसाधन या किसी भी प्रकार अन्य किसी रूप में कोई दूसरा समर्थन नहीं है वरन् उनके कंधों पर सामाजिक पूर्वाग्रहों का भारी सलीब भी लदा हुआ है। अतः यह आवश्यक है कि स्व-रोजगार के उन सभी हिस्सों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए युक्तियुक्त स्थान निश्चित किया जाए जो सीधे राज्य अथवा सार्वजनिक क्षेत्र के नियंत्रण में हैं और जो उनके प्रभावक्षेत्र में आते हैं। इसके अलावा संबंधित संस्थानों से उन लोगों की इन अवसरों का लाभ मिले यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी भी होनी चाहिए। स्व-रोजगार की सभी तरह की संभावनाओं वाले हिस्सों के लिए उपयुक्त कार्यक्रम तैयार किए जाने चाहिए। इन कार्यक्रमों में सामान्य रूप से संबंधित कौशलों में प्रशिक्षण और विशेष रूप से उद्यमशीलता में प्रशिक्षण शामिल होने चाहिए। इसके अलावा उनके पूरी तरह से स्थापित हो जाने तक के विकासरत के दौरान वित्तीय सहायता और मार्ग दर्शन की व्यवस्था और उसके साथ ही जोखिम तथा आकस्मिक कठिनाइयों से निपटने के लिए उपबंध भी शामिल किए जाने चाहिएं।

(3) उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण

4.23 स्व-रोज़गार के सभी कार्यों में एक महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पादन के साधनों पर अधिकार का है। इस प्रश्न के तीन पहलू हैं, अर्थात (1) उत्पादन के उन साधनों पर अधिकार को स्थिर करना जो इस समय अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के पास हैं, (2) उनके इन साधनों में सुधार और उनकी उत्पादन क्षमता में वृद्धि करना और (3) उन नए साधनों में उनके लिये युक्तियुक्त भाग सुनिश्चित करना जो देश में सामान्य आर्थिक विकास की प्रक्रिया के दौरान निर्मित होने वाले हैं।

4.24. हमारे देश में भूमि गरीब लोगों की आजीविका का सबसे अधिक महत्वपूर्ण आधार है। दो महत्वपूर्ण विषय अर्थात् भूमि जोतने वाले की हो और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उन सदस्यों के लिए जिनमें से अधिकांश बटाईदार हैं अथवा मान्यता विहीन काश्तकार हैं, प्रभावी संरक्षण की व्यवस्था पर पहले ही चर्चा की जा चुकी है। उत्पादक साधनों का विकास और गरीब लोगों के लिये स्थायी आर्थिक आधार का निर्माण एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। तथापि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के व्यक्तियों को इन में से बहुत सी योजनाओं से मिलने वाला लाभ व्यापक संदर्भ में केवल सीमान्तक ही होता है और इन योजनाओं में उनसे संबंधित कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न छूट गए हैं। ऋण और अनुदान की मंजूरी की सामान्य व्यवस्था के अनुसार साधनों के विकास के लिए सहायता के रास्ते में कार्यविधि संबंधी बाधाओं की भरमार है और कर्मचारियों के कुप्रहारों से ग्रस्त है और उसका आयाम अपेक्षाकृत सीमित ही है। इसके अलावा अनुसूचित जातियों के अधिकांश सदस्यों का उस भूमि पर कोई अधिकार ही नहीं है जिस पर वे खेती करते हैं और इसलिये वे भूमियां उन कार्यक्रमों से बाहर ही रह जाती हैं।

4.25 रोज़गार अवसरों संबंधी कार्यक्रमों का दायरा अधिक व्यापक है। तथापि, मजदूरी-मूलक रोज़गार कार्यक्रम मुख्य रूप

से ऐसे सामुदायिक साधनों के निर्माण से संबंधित होते हैं जिनके लाभ बहुतकर के समाज के अधिक संपन्न वर्ग के लोगों को मिलते हैं जिसके फलस्वरूप अन्यायी व्यवस्था और अधिक अन्यायी होती जाती है। कुछ राज्यों में भूमि विकास को रोजगार अवसरों वाले कार्यक्रमों में सम्मिलित किया गया है परन्तु उनमें अनेक रुकावटें हैं। अतः उत्पादन के साधनों के विकास को जैसी प्राथमिकता मिलनी चाहिये वैसी प्राथमिकता नहीं मिली है। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के स्वामित्व वाले भूमि संसाधन के विकास को ग्रामीण विकास की योजनाओं में सर्वोच्च प्राथमिकत दी जानी चाहिए और उन्हें एक स्पष्ट समयबद्ध अभियान के रूप में लिया जाना चाहिए। इनमें भूमि को समतल करना, बांध बनाना और अनुसूचित जातियों के सदस्यों के स्वामित्व वाली भूमि के लिए विशेष रूप से सिंचाई के साधनों के निर्माण के काम शामिल होने चाहिए। आदिवासी क्षेत्रों में जहां भूमि अधिक है, साधनों के विकास के कार्यक्रम इस तरह के होने चाहिए कि उनकी क्षमता तथा उत्पादकता में उदाहरण के लिये वृक्षों की खेती के लिए उपयुक्त कार्यक्रमों के माध्यम से वृद्धि हो परन्तु उसके साथ ही उन लोगों का अपने संसाधन-आधार पर अधिकार बना रहे।

4.26 ग्रामीण क्षेत्रों में पशु-पालन तथा मुर्गी-पालन कार्यक्रमों से यह आशा की गई थी कि यह कार्यक्रम सीमांत किसानों की आय की अनुपूर्ति और भूमिहीन लोगों के लिये नया आर्थिक आधार तैयार करने का एक बड़ा जरिया बनेंगे। परन्तु इन कार्यक्रमों के लिये भारी वित्तीय प्रावधानों और औपचारिक रूप से इन कार्यक्रमों के अंतर्गत लाभान्वित लोगों संबंधी आंकड़ों के बावजूद उनकी उपलब्धियां अपेक्षाकृत बहुत कुछ कम ही रही हैं। यह गरीबों के लिये विशाल संभावनाओं वाले इस महत्वपूर्ण कार्य-क्षेत्र में असफलता, समता तथा न्याय की विरोधी अदृश्य शक्तियों के असली रूप को उजागर करती हैं। यह एक ऐसी कार्य-क्षेत्र हैं जिसके लिए गरीब लोगों के पास वांछित कौशल है। यदि यहां सही परिवेश और व्यवस्था होती तो, वे संबंधित नए ज्ञान को सरलता से आत्मसात कर सकते थे और नई तकनीक में भी प्रवीणता प्राप्त कर सकते थे। **विस्तार सेवाओं तथा विकास प्रशासन ने गरीबों को उनके परम्परागत व्यवसाय के नए रूप के लिए उन्हें तैयार करने तथा संगठित बाजार से विनिमय के लिए आवश्यक संगठनात्मक समर्थन देने, दोनों ही मामलों में उनका साथ न देकर निराश किया है। अधिक गरीब लोग इन कार्यक्रमों की दोषपूर्ण संरचना के कारण इस विशाल नए अवसर का लाभ नहीं उठा सके हैं क्योंकि इस संरचना में गरीब आदमी को केन्द्र बिन्दु नहीं माना गया वरन् उन्हें तकनीक तथा संगठनात्मक समर्थन दोनों के लिए ही दूसरों पर आश्रित बना दिया गया।** इसके अलावा छोटी-छोटी परियोजनाओं तक की लागत बहुत अधिक बढ़-चढ़ जाती है। क्योंकि उनकी मूल आयोजना ही विशिष्ट-वर्गीय होती है और परिवार-मूलक क्रियाकलापों के वास्तविक किफायती अर्थ-नीति को हिसाब में नहीं लिया जाता है। परियोजनाओं की इस मूल्य स्फीति में अनुदान के प्रलोभन से भी बनावटी बढ़ोतरी हुई है। इस प्रकार छोटी-छोटी परियोजनाएं भी इतनी बड़ी बन जाती हैं कि वे सचमुच गरीब लोगों के बस से बाहर हो जाती हैं। इन कार्यक्रमों में तकनीकी सहायता का अभाव विशेषकर विदेशी नस्लों से संबंधित तकनीकी सहायता का अभाव और बाहरी बाजारों से उचित संबंध सूत्रों की व्यवस्था किए बिना ही उन पर अत्यधिक निर्भरता ऊंट की पीठ पर अंतिम तिनके बन गए जिनसे गरीब लोगों को उनके दायरे से अलहदा हो जाना पड़ता और इस प्रक्रिया में ऐसी घटनाएं अनिरंतर नहीं है जिनमें संबंधित लोग नये काम के लिये उठाए गए ऋण के भारी बोझ के नीचे दब जाते हैं और नये काम करने का प्रयास दुस्साहस सिद्ध होता है।

4.27 प्रशासनिक मानीटरिंग समान्यतः ऋण तथा अनुदान के वितरण करने तथा पशु अथवा मुर्गियों की खरीद के बारे में औपचारिक रिपोर्ट देने के साथ समाप्त हो जाती है। इसके साथ ही उन मामलों में प्रशासन की रुचि वहीं पर समाप्त हो जाती है क्योंकि रुपए के लेन-देन का महत्वपूर्ण काम पूरा हो जाता है और सांख्यिकीय विवरणियां भी संप्रेषित हो चुकती हैं। इस व्यवस्था के कारण अधिक शक्तिशाली वर्ग इस योजनाओं रूपी जहाज को अपहरण करने में सफल हो गए हैं यद्यपि उस जहाज का अप्रत्यक्ष रूप से भी उनसे कोई नाता नहीं था। वे इस कार्यक्षेत्र में घुस आए हैं और उन्होंने नई जागीरें बना ली हैं जिनमें गरीबों का स्थान एक दास तथा केवल अनियत कालिक मजदूर का है। बड़े-बड़े शहरों के आस-पास बड़े-बड़े मुर्गी फार्म तथा डेरियां स्थापित हो गई हैं। जिन्हें तकनीकी तथा संगठनात्मक समर्थन इच्छानुसार प्राप्त करने में और वाणिज्यिक आधार पर कार्य चलाने में समर्थ हैं। यह हमारे विकास की करूण कहानी है। परन्तु अभी सब कुछ नष्ट नहीं हुआ है, और अभी भी समय रहते उसमें से कुछ बचाया जा सकता है। यह पूरा कार्य क्षेत्र अनन्य रूप से गरीब लोगों के लिए आरक्षित कर दिया जाना चाहिए। वर्तमान इकाइयों का सहकारी करण कर दिया जाना चाहिए. आगे के कार्यक्रम इस प्रकार बनाए जायें जिसमे गरीब लोग उनमें भाग लेने और इस नए महत्वपूर्ण अवसर का लाभ उठा सकने के लिए समर्थ हो सकें।

4.28 उन लोगों की समस्याओं के बारे में पहले ही चर्चा की जा चुकी है जो सीमांत कृषि भूमि बंजर भूमि सहित गैर-कृषि भूमि तथा वनों और समाप्त प्रायः वनों पर निर्भर हैं। इन में से अधिकांश लोगों की स्थिति निराधार जैसी हो गई है और जैसे जैसे गरीब लोग अपने जीवन निर्वाह के परम्परागत आधारों से, विकल्प के रूप में बिना किसी और आशा के, वंचित होते जा रहे हैं वैसे वैसे उनकी स्थिति और भी खराब होती जा रही है। इस संबंध में यह अनिवार्य है कि भूमि के उपयोग के लिए एक व्यापक कार्य नीति तैयार की जाए जिससे गरीब लोगों के सीमान्तीकरण की प्रक्रिया पूरी तरह रुक जाय। भविष्य में उनमें के सभी अवसर अनन्य रूप से मेहनतकश लोगों के लिए आरक्षित किए जाएं और उनमें गैर-मेहनतकश तथा अ-गरीब लोगों का किसी भी रूप में प्रवेश पूरी तरह वर्जित किया जाना चाहिए। हमारे देश में बंजर भूमि संभावनाओं की आखरी ज़खीरा है और गरीब लोगों के लिये एक ऐसा

संसाधन आधार प्राप्त करने के लिए जिसे वे अपना कह सकते हैं एक मात्र आशा है ।

(4) सहायता का रूप

4.29 यहां पर इस बात पर कुछ विस्तार से विचार करना उपयोगी होगा कि सरकार गरीब लोगों को किस प्रकार की सहायता मुहैय्या करवाएं । गरीबी निवारण कार्यक्रमों की एक प्रमुख कमी उनकी ऐसी सहायता पर अत्यधिक निर्भरता है जिसका एक बड़ा हिस्सा अनुदान रूप दिया जाता है। अनुदान की मात्रा लाभार्थी की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है, व्यक्ति जितना अधिक गरीब उतना ही अधिक अनुदान । यह सहायता कहने को इस लिए दी जाती है जिससे गरीब लोगों की आजीविका का साधन आधार इस तरीके से उभर और अथवा निर्मित हो सके ताकि वह आर्थिक दृष्टि से स्वविकास सक्षम हो सके । यह कार्यनीति गरीबों की एकांशी अवधारणा पर आधारित है और उसी कारण उसकी आधारभूत समस्या को हल करने में सफलता सीमित रही है । **किसी गरीब आदमी का स्वविकासक्षम होना वास्तव में इस बात पर निर्भर करता है कि उसे अपनी मेहनत का प्रतिफल चाहे उसका रूप मजदूरी हो या उसकी मेहनत के फलों का भाव क्य मिलता है । जैसा हमने पहले उल्लेख किया है इस संबंध में असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले के विरुद्ध भारी पूर्वाग्रह है जिसके कारण उन्हें अपने श्रम के न्यायपूर्ण मूल्यांकन के आधार पर जिस प्रतिफल की हकदारी हो सकती उसका एक अंश भी उन्हें नहीं मिलता है ।** असंगठित क्षेत्र में लगभग सभी मामलों में चाहे काम कैसा भी क्यों न हो स्थिति यही है । **जबतक मजदूरी के रूप में गरीब लोगों को हकदारी न्याय नहीं हो जाती है तब तक किसी भी रूप में दी जाने वाली सहायता उसकी अपनी अर्थ-व्यवस्था के घाटे को पूरा करने में खप जाएगी और वह पीछे खिसक पहले वाले स्तर पर गरीबी रेखा के नीचे आ अटकेगा अथवा अधिक से अधिक उसके इर्द-गिर्द मड़राता रहे होगा ।**

4.30 अनुदानों के रूप में दी जाने वाली सहायता का एक बुरा दुष्प्रभाव भी है । कर्मचारी लोग सहायता के तात्विक आधार को समझने की न कोई परवाह करते हैं और न उसकी जरुरत ही समझते हैं । साधारण तौर पर अनुदान को "पात्र" लोगों की ऐसी जमात को खैरात माना जाता है जिनके हित में यही बेहतर होता कि वे कठिन परिश्रम करते और स्वयं अपने पैरों के ऊपर खड़े होते । इसके परिणाम-स्वरूप इस अनुचित लाभ का कुछ हिस्सा देने वाले के हाथ में रह जाए तो उसमें कोई न आपत्ति हो सकती और न मन में पाप की भावना की आशंका । स्वयं लाभार्थी भी इस मनस्थिति से मौन सहमति देकर समझौता कर लेते हैं क्योंकि वह भी समझता है कि जो कुछ उसे मिल रहा है वह आखिर है तो मुफ्त ही और उनके सौजन्य पर आधारित इन कटौतियों के लिए गुंजाइश रखने की गरज में परियोजनाओं की लागत बढ़ा-चढ़ा कर बनाई जाती है । इसके परिणाम स्वरूप अन्ततः उस परियोजना की पूरी वास्तविक लागत ऋण के रूप में हितग्राही को चुकानी होती है । परन्तु फिर इन परियोजनाओं के लागत-लाभ का हिसाब गड़बड़ हो जाता है और हितग्राही कर्ज के भारी बोझ के नीचे दब जाते हैं जो उसके संभाले नहीं संभलते हैं ।

4.31 इस अनुग्रह सहायता से ग्रामीण क्षेत्रों में एक अत्यन्त अशोभनीय स्थिति पैदा हो गई है । जन सामान्य और राज्य के बीच निर्भरता का संबंध बनता जा रहा है और गरीब लोग छोटी-छोटी सी बातों के लिए अनुग्रह की आकांक्षा करने लगे हैं जिसका सीधा सरल कारण है कि उनकी निगाह में सफलता के लिए सबसे आसान वही रास्ता है । इससे काम की गरिमा, आत्मनिर्भरता और सम्मान की भावना और मानव मात्र में मूलभूत समता की भावना जैसे जीवन के आधारभूत मूल्यों का क्षरण हो रहा है । आदिवासी लोगों में मूल्यों का क्षय जिनमें स्वावलंबन और आत्मगौरव की सुन्दर परम्पराएं हैं अनिष्ठ सूचक है । इन कार्यक्रमों से होने वाले संदिग्ध आर्थिक लाभ जो उनसे सामाजिक. जीवन की सुन्दर परिधान के विरूपित होने से संभावित क्षति की तुलना से नगण्य हैं विशेष रूप से एक ऐसे काल खण्ड में जब राष्ट्र उसी मूल व्यवस्था और समतावादी समाज की स्थापना के लिए कृतसंकल्प है । गरीब लोगों की सहायता के लिए कार्यक्रम का रूप अनुग्रह की बजाय समुचित रूप से हकदारी का होना चाहिए । तथापि अनुदान योजनाएं इतनी बुरी तरह से जड़ें जमा चुकी हैं कि उन्हें हकदारी-योजनाओं के रूप में तत्काल बदला नहीं जा सकता है । परन्तु इसकी शुरुआत विशेष रूप से ऊपर बताए गए व्यापकतर परिप्रेक्ष्य में सकारात्मक विभेद के नए चरण में की जानी चाहिए । एक उपयुक्त रोजगार गारंटी बनाई जानी चाहिए जिसे सब जगह लागू किया जाए और उसमें यह व्यवस्था भी हो कि बिना औपचारिक स्वीकृति इत्यादि के अपने आप चलती रहे । ऐसी योजना में काम के अधिकार स्वाभाविक रूप से प्रवाहमान हो सकेगा । इसके साथ ही यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि लोगों को एक उपयुक्त मजदूरी मिले और उस काम से उत्पादन के ऐसे साधनों का निर्माण हो जिनकी मिलकियत मजदूरी करने वाले की हो, ताकि धीरे-धीरे उसके पास एक ऐसा संसाधन आधार बन जाये जिससे वह स्वविकासक्षम हो जाये ।

(5) अन्य साधनों का स्वामित्व

4.32 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को उन नए साधनों के स्वामित्व में जो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के आधुनिक क्षेत्र में निर्मित हो रहे हैं, न्याय हिस्सा देने का प्रश्न अपेक्षाकृत जटिल है । तथापि इस काम को प्राथमिकता के आधार पर लिया जाना चाहिए क्योंकि जो लोग पहले से विशेषाधिकार भोग रहे हैं और सवित स्रोतों के निकट स्थित हैं वे ही उन नए अवसरों में एक

भारी हिस्से को हथियाते जा रहे हैं। किसी भी रूप में असमानता में बढ़ोतरी अवांछनीय है परन्तु यदि उसका स्वरूप जातीय हो तो वह निंदनीय और खेदजनक है। वह दुर्भाग्य की बात है कि अन्यायी विषमता से उत्पन्न होने वाले दूरगामी सामाजिक परिणामों की ओर उतना ध्यान नहीं दिया गया है जितना जरूरी है।

4.33 आधुनिक क्षेत्र बहुत करके नगर आधारित हैं। अनेक नगरों में हालत ऐसी होती जा रही है जहां किसी व्यक्ति को अपनी योग्यता के आधार पर रोजगार तो मिल सकता है परन्तु रहने के लिए कोई जगह न होने से उस अवसर का लाभ उठाने में असमर्थ रहे। यहां पर यह उल्लेखनीय है कि शुरु में नगर केन्द्रों और ग्रामीण अंचलों के बीच ऊंची जातियों के स्तर पर सामाजिक रूप से सान्तत्य की स्थिति थी। ग्रामीण क्षेत्रों से आने वाले ऊंची जातियों के सदस्यों के असंगठित क्षेत्र में बड़े पैमाने पर शामिल होते जाने से यह सामाजिक स्तर का सान्तत्य और भी गहरा हो गया है। यही संबंध सूत्र नए अवसरों की खोज में लोगों की नगरों में भारी संख्या में अगवानी में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। इसके विपरीत, गरीब लोग विशेष रूप से अनुसूचित जातियों के लोग ग्रामीण अर्थव्यवस्था के दबाव के मारे निकलने के लिये मजबूर हैं और उनके जाने के लिए नगरों की गंदी बस्तियों के सिवाय और कोई जगह नहीं है। यह स्थिति उन आदिवासी क्षेत्रों में भी अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के बाहर जाकर अवसरों की तलाश के रास्ते में सबसे अधिक अवरोधक कारणों में से एक है जहां नगर केन्द्र बहुत कर गैर आदिवासी परिसरों के रूप में विकसित हो रहे हैं और आदिवासी लोगों के लिये उनमें पैर रखने की जगह भी नहीं है।

4.34 आवास निर्माण सार्वजनिक क्षेत्र तथा निजी क्षेत्र दोनों मे ही महत्वपूर्ण क्रियाकलाप है तथा आवास का स्वामित्व केवल एक विशेषाधिकार ही नहीं है अपितु उसके मालिक के लिए भारी अप्रत्याशित लाभ का स्रोत भी बन गया है। हाऊसिंग बोर्डों जैसी सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा बनाए गए मकानों के आबंटन में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के लिए आरक्षण की व्यवस्था है, परन्तु सहकारी समितियों सहित निजी क्षेत्रकी गतिविधि में उनकी भागीदारी नगण्य है। इसके परिणामस्वरूप अनुसूचित जाति के सदस्यों को शहरी क्षेत्रों के सीमान्त पर और गंदी बस्तियों की जिन्दगी से जूझना पड़ता है। **यह वांछनीय होगा कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के भौगोलिक स्तर पर एकात्मीकरण की कार्य विधि तैयार की जाए।** उदाहरण के लिए सहकारी समितियों सहित विकास संबंधी सभी संगठनों के लिए यह अनिवार्य किया जा सकता है कि वे अपनी योजनाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के लिए मकानों अथवा भू-खंडो के आबंटन में एक हिस्सा निर्धारित करें और उनके आबंटन में सर्वत्र समान संभावना सुनिश्चित करने के लिये रैन्डम आधार अपनाया जाये। इसमें उनके लिए रियायती दरें लागू करने के लिए भी एक योजना भी बनाई जानी चाहिए, क्योंकि सम्पन्न लोग कमजोर वर्गों की प्रगति की लागत का एक हिस्सा अपने सामाजिक दायित्व के रूप में वहन कर सकते हैं। इसके अलावा असल में यदि देखा जाये तो इस योजना के तहत सही अर्थों में किसी त्याग की अपेक्षा नहीं है वरन् सुसम्पन्न वर्गों के लिए अनर्जित लाभों में कुछ थोड़ी सी कमी हो सकती है। सरकार को अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को ऋण के रूप में सहायता की व्यवस्था भी करनी चाहिए ताकि वे विकास के नए क्षेत्रों में अपने लिये जगह बना सकें। इन्हीं सिद्धान्तों के अनुरूप राज्यों, निगमों अथवा निजी प्रतिष्ठानों द्वारा विकसित किए गए सभी बाजार परिसरों में भी समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए।

4.35 **अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि**

भारत सरकार एक व्यापक नीति आलेख तैयार करें जिसमें राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के लिए न्याय स्थान सुनिश्चित करने के राष्ट्रीय वायदे को पूरा करने के लिए एक व्यापक रण–नीति की स्पष्ट रूप रेखा प्रस्तुत की जाए। जब तक यह नीति नहीं बनाई जाती है और एक उपयुक्त रणनीति तैयार नहीं की जाती है तब तक निम्नलिखित तात्कालिक कार्रवाई आरंभ की जाए जो संवैधानिक दायित्व को पूरा करने के लिए तैयार की गई किसी भी संरचना में प्रथम कदम के रूप में आवश्यक होगा।

(1) सामान्य रूप से असंगठित क्षेत्र में और उन व्यवसायों में जिनमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य परम्परागत रूप से लगे हुए हैं मजदूरी की हकदारी और कौशल के मूल्यांकन को एक उपयुक्त कानून बनाकर न्याय और समता-मूलक बनाया जाना चाहिए।

(2) रोजगार के लिए ऐसे व्यापक कार्यक्रम आरम्भ किए जाने चाहिएं जिनमें समाज के कमजोर वर्गों के स्वामित्व वाले साधनों के निर्माण और विकास को केन्द्र में रखा जाना चाहिए जिनमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों के व्यक्तियों के लिए न्याय हिस्सा सुरक्षित किया जाना चाहिए।

(3) उन लोगों की परम्परागत हकदारी को जो तथा-कथित बंजर भूमि जैसे सीमान्त संसाधनों पर जीवन–निर्वाह करते रहे हैं, मान्यता दी जानी चाहिए और उन संसाधनों की भावी क्षमता का विकास गरीबों के सहयोग से किया जाना चाहिए और उन साधनों पर उन्हीं का पूर्ण अधिकार होना चाहिए जिसमें से अ–गरीबों को स्पष्ट रूप से अलग किया जाना चाहिए।

(4) वे सभी आर्थिक कार्य जैसे पशु–पालन, मुर्गी पालन, बागवानी सहित वृक्षों की खेती जो सीमान्त किसानों और भूमिहीन मजदूरों के लिए एक सहायक व्यवसाय रूप हो सकते हैं, अनन्य रूप से विकेन्द्रीकृत क्षेत्र के लिए आरक्षित किए जाने चाहिए। उनमें किसी भी प्रकार का केन्द्रीकरण

कानून द्वारा निषिद्ध किया जाना चाहिए । इन क्रियाकलापों में लघु मजदूर उद्यमी के प्रतिमान को अनिवार्य रूप से स्वीकृत किया जाना चाहिए । मजदूर उद्यमी को वित्तीय, तकनीकी और संगठन संबंधी सभी प्रकार की आवश्यक पूरी सहायता उपलब्ध कराई जानी चाहिए ।

4.36 इसके अलावा में यह सिफारिश भी करता हूं कि :—

सकारात्मक विभेद की नीति को और व्यापक बनाया जाना चाहिए इसके अंतर्गत विशेष रूप से निम्न तत्व शामिल हों —

(1) यह नीति राष्ट्रीय वायदे के अनुरूप संगठित क्षेत्र के गैर-सरकारी उद्यमों में उनके सामाजिक दायित्व में सहभागिता के उपलक्ष में तत्क्षण लागू की जानी चाहिए । इसे संयुक्त क्षेत्र के उन सभी उद्यमों और ऐसे सहकारी निकायों के लिए अनिवार्य बनाया जाना चाहिए जो संस्थागत वित्त का लाभ प्राप्त कर रहे हों ।

(2) सकारात्मक विभेद की नीति प्रत्येक मंत्रालय/ वेविभाग/सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठान द्वारा उन सभी आर्थिक क्रियाकलापों के लिए तैयार की जानी चाहिए जो उनके अधिकार क्षेत्र में आते हैं । अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के द्वारा उस नीति का लाभ उठाया जा सके इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्हें एक व्यापक योजना भी तैयार करनी चाहिए ' इस योजना में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को आर्थिक रूप से स्थायी उद्यमियों के रूप में स्थापित करने के अंतिम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सामान्य रूप से उपयुक्त कौशल और विशेष रूप से उद्यम संबंधी प्रशिक्षण शामिल किया जाना चाहिए और उद्यम के अच्छी तरह स्थापित हो जाने तक के प्रारंभिक चरण में उपयुक्त वित्तीय सहायता और मार्ग-दर्शन के लिए उपबंध किया जाना चाहिए जिसमें तरह-तरह के जोखिमों और आकस्मिक घटनाओं से निपटने के लिए भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए ।

3 उन सभी नई संपत्ति और संसाधनों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के लिए समुचित आरक्षण किया जाना चाहिए जैसे कि आवासीय गृहों और वाणिज्यिक केन्द्रों में जो राज्य और अथवा सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा भूमि अर्जन वित्तीय व्यवस्था और इसी प्रकार की अन्य सहायता के आधार पर नगरीय क्षेत्रों के निजी क्षेत्रों में निर्मित हो रहे हैं । इन सभी योजनाओं की संरचना में ही अनुसूचित जातियों और जनजातियों के पक्ष में कुछ रियायतें रखी जानी चाहिए ।

(4) भारत सरकार को अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को आवश्यक वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए एक विशेष योजना तैयार करनी चाहिए ताकि वे ऊपर (3) में निर्दिष्ट नए साधनों में एक उपयुक्त हिस्सा पाने में समर्थ हो सकें ।

(6) आदिवासी क्षेत्रों में विशेश उपाय

4.37 आदिवासी क्षेत्रों में नए आर्थिक अवसर एक ऐसे समय पर बन रहे हैं जब आदिवासी लोग उनमें भाग लेने के लिए तैयार नहीं हैं यही नहीं, वे उन संभावनाओं के बारे में अवगत भी नहीं हैं । वहां जब सड़क बनती है तो आदिवासी लोग उस जगह से दूर चले जाते हैं और सड़क के किनारे की उनकी भूमि, जिसका स्थान मूल्य बढ़ जाता है, दूसरे व्यक्ति हथिया लेते हैं । वहां जब कोई नगर बड़ा होने लगता है या बसाया जाता है तो आदिवासियों को वहां से बलात् हटा दिया जाता है अथवा वे स्वेच्छा से ही वहां से चले जाते हैं । और इस प्रक्रिया में उनकी भूमि की बढ़ती कीमत का लाभ पूरी तरह गैर-आदिवासियों के हाथ में चला जाता है । विडम्बना की स्थिति वहां उठ खड़ी होती है जब कोई गांव नगर-पालिका बन जाता है तो उसके मूल निवासियों की सम्पत्तियां भी कर व्यवस्था के अधीन आ जाती हैं । जिस व्यक्ति के पास उस विकासशील बस्ती में एक साधारण सा मकान भी होता है वह बड़ी परेशानी में पड़ जाता है क्योंकि वह उस छोटे से कर को भी अदा करने की स्थिति में नहीं होता जो उसकी सम्पत्ति के नए सन्दर्भ में बढ़े हुए मूल्य के आधार पर जिसका उसे तनिक आभास तक नहीं हो सकता है लगाया जाता है । इस प्रकार वह दूसरी सम्पत्ति की बात अलग अपने पैतृक मकान तक को नहीं बनाए रख सकता है ।

4.38 ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि विकास के आरम्भिक चरण के दौरान आदिवासी हितों की रक्षा की जाए और उन्हें उस विकास के लाभों में सहभागी बनाया जाए जो उन संसाधनों के उपयोग पर आधारित हैं जिन पर परम्परागत रूप से उनका अधिकार था। आदिवासी अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक परिवर्तन के दौर में संसाधनों पर उनके अधिकार की समाप्ति का सामान्य मामला काफी जटिल और महत्वपूर्ण भी है जिसकी विस्तृत समीक्षा एक विशेष रिपोर्ट में की जाएगी । यहाँ पर मैं चर्चा को आदिवासी क्षेत्रों में नए विकास केन्द्रों में सामान्य विकास की गतिविधियों तक ही सीमित रखना चाहूंगा । आदिवासी क्षेत्रों में नगर केन्द्रों में गृहनिर्माण की सभी योजनाओं में प्रस्तावित भू-खंड, मकान या फ्लैट, जैसा भी हो, उन सब में से कम से कम 50 प्रतिशत उस नगर केन्द्र के पश्च प्रदेश में रहने वाले अनुसूचित जन जातियों के सदस्यों के लिए आरक्षित किए जाने चाहिए जिसका स्पष्ट निर्धारण हर मामले में स्थानीय स्थिति के सन्दर्भ में किया जाय

इसमें अनारक्षण के लिए कोई उपबन्ध नहीं होना चाहिए यदि वे भू-खंड/गृह-स्थल उस समय तक खाली बने रहें जब तक आदिवासी लोग उनका लाभ लेने के लिए तैयार न हो जाय तो कोई बात नहीं।

4.39 अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को नई आर्थिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में भागीदार बनने के लिए भी समर्थ बनाया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए उन सभी वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों के लिए जो आदिवासियों की भूमि पर स्थापित किए जाते हैं, यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि भूमि के स्वामी को सम्बन्धित प्रतिष्ठान में भागीदार के रूप में रखा जाय और यह उपबन्ध भी बनाया जाय कि उसमें आदिवासी का अंशदान वस्तु अर्थात उस भूमि के रूप में होना जिस पर वह प्रतिष्ठान बनता है। आदिवासी लोगों की शहरी क्षेत्रों में उन सभी सम्पत्तियों को जो उनके पास सम्बन्धित क्षेत्र के नगरपालिका घोषित होने के पहले से थी उस समय तक कर से मुक्त रखा जाय, जब तक, वे उस संपत्ति का उपयोग किराए अथवा व्यापार/व्यवसाय के लिए नहीं करते हैं।

4.40 आदिवासी क्षेत्रों में होने वाले विकास के लाभों में आदिवासी लोगों की भागीदारी के बारे में पहले उल्लेख किया जा चुका है। भागीदारी की कल्पना मात्र मजदूरी के अवसरों या दूसरे रोजगार के अवसरों में कुछ हिस्सा मिलने के रूप में नहीं सीमित रहनी चाहिए। इसके आयाम में विभिन्न उद्यमों के आदिवासी क्षेत्रों में नए उद्यमों की संरचना का स्वरूप यथासंभव सहकारी समितियों को होना चाहिए। जिसमें देश में चीनी उत्पादन के लिए गठित सहकारी समितियों की भाँति कच्चे माल के उत्पादन अथवा वनों के दोहन में लगे लोग सदस्य होने चाहिएं। संयुक्त क्षेत्र सहित निजी क्षेत्र के सभी उद्यमों के लिए यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि उनके दायरों में सम्बन्धित अंचल में रहने वाले आदिवासी लोगों के 50 प्रतिशत शेयर से कम नहीं होना चाहिए। सार्वजनिक क्षेत्र के सभी उद्यमों में ऐसे लोगों के लिए विशेष स्थान बनाए जाने चाहिए जो संबंधित उद्यम से सीधे प्रभावित हुए हों और जो उनके प्रभाव क्षेत्र में रह रहे हों और उसकी मिलकियत में उनके लिए एक उपयुक्त हिस्सा दिया जाना चाहिए ताकि वे वास्तविक रूप में उस उद्यम में भागीदार बन सकें।

4.41 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि--

यह सुनिश्चित करने के लिए विशेष उपाय किए जाने चाहिए कि आदिवासी क्षेत्रों में जो नई संपत्ति तथा संसाधन निर्मित हो रहे हैं और जो नए उद्यम स्थापित किए जा रहे हैं उनमें एक उपयुक्त हिस्सा आदिवासी लोगों को विशेष रूप से मिलें--

(1) आदिवासी क्षेत्र में औद्योगिक तथा नगर केन्द्रों की स्थापना और विस्तार की सभी योजनाओं में कुल गृह भू-खंडों, आवासीय भवनों और वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों का 50 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के लिए आरक्षित किया जाना चाहिए।

(2) उन सभी व्यक्तियों और सार्वजनिक निकायों के लिए जो आदिवासी क्षेत्रों में किसी आदिवासी की भूमि पर कोई उद्यम स्थापित करते हैं, यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि वे उसे मात्र इसी तथ्य के आधार पर उसकी भूमि पर प्रतिष्ठान बना है उस उद्यम में एक शेयर होल्डर की हैसियत से भागीदार बनाए।

(3) आदिवासी क्षेत्रों में स्थापित सभी सहकारी उद्यमों में अनुसूचित जनजाति के सदस्यों की भागीदारी और या उन्हें शेयर दिलाने के लिए एक उपयुक्त योजना तैयार की जानी चाहिए।

(4) आदिवासी क्षेत्रों में स्थापित उद्यमों के लिए कच्चे मालों के लिए उत्पादन में लगे मजदूरों के लिए एक विशेष स्थान दिया जाना चाहिए जो उन लोगों के समकक्ष हो जिन्हें उद्योग द्वारा सीधे-सीधे काम में लिया जाता हैं और जहां पर संभव हो, संस्थान के शेयरों में और उसके प्रबन्ध में भी उन्हें भागीदार बनाया जाना चाहिए।

(5) उस स्थिति में जब किसी अंचल को किसी शहरी निकाय के क्षेत्राधिकार में लाया जाता है तो संबंधित क्षेत्र में आदिवासी लोगों की पैतृक संपत्तियों को करों से मुक्त रखा जाना चाहिए।

(6) सरकार को आदिवासी लोगों को स्थिति की आवश्यकता के अनुसार ऐसा समर्थन देने की व्यवस्था करनी चाहिए जो उन्हें ऊपर वर्णित विशेष प्रावधानों का लाभ उठाने के लिए समर्थ बना सके।

(7) विकास केन्द्र और नए नगरों की स्थापना।

4.42 अब मैं भारत सरकार द्वारा हाल ही में की गई उस पहल का उल्लेख करना चाहूंगा जिसके आधार पर विभिन्न राज्यों में विकास केन्द्रों और महाराष्ट्र सरकार के विचाराधीन बम्बई के निकट मुख्य भूमि पर प्रस्तावित नगर की स्थापना पर विचार किए जाने की संभावना है। इन केन्द्रों और नगरों का विकास बहुत पहले से सुनियोजित रूप में होने की सम्भावना है जो अन्य स्थलों पर शहरी आयोजन के उपबन्धों के बावजूद लगभग अनियोजित नगरीय विकास की स्थिति से नितांत भिन्न हैं, इसमें लोगों की अन्य शहरी क्षेत्रों में जैसा होता रहा है उसी तरह उन जो प्रारम्भ में ही इन जगहों पर स्थान पाने की उखाड़ पछाड़ में शामिल हो जायगे बहुत भारी लाभ मिल जाएगा। यह उल्लेखनीय है कि जहां तक अनुसूचित जातियों और जनजातियों का सम्बन्ध है, उनके लिए सुनियोजित विकास का अनुभव भी कोई सुखद अनुभव नहीं रहा है, उदाहरण के लिए पुनर्वास बस्तियों में जिसके बारे में पहले जिक्र किया जा चुका है, यह नया आयोजन अनुसूचित जातियों और जनजातियों के पक्ष में राज्य द्वारा हस्तक्षेप किए जाने के लिए एक अच्छा अवसर प्रदान करता है ताकि वे नए विकास केन्द्रों और उपनगरों में ससम्मान प्रवेश पाने में समर्थ हो सकें और उनके विकास में भागीदार बन सकें।

4.43 अतः मैं यह सिफारिश करता हूं कि--

केंद्रीय सरकार को सम्बन्धित राज्य सरकारों के परामर्श से एक व्यापक योजना तैयार करनी चाहिए ताकि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य सामान्य रूप से प्रस्तावित विकास केन्द्रों में निर्मित किए जा रहे नए अवसरों और विशिष्ट रूप से बम्बई के निकट मुख्य भूमि पर बन रहे नए शहर में सम्भावित अवसरों के लाभ प्राप्त करने में समर्थ हो सकें। जहां एक ओर इन योजनाओं की संरचना ही ऐसी हो जिसमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के पक्ष में उपयुक्त रियायतों के लिए उपबन्ध हों तथा यदि आवश्यक हो तो कुछ और उपबन्ध भी किए जायें वहीं दूसरी ओर अनुसूचित जातियों के सदस्यों को इस नए विकास में भाग लेने हेतु समर्थ बनाने के लिए एक विशेष निधि का भी निर्माण करें।

5

आगे का कार्य

एक ऐसी व्यापक संरचना की रूपरेखा प्रस्तुत करने के बाद जिससे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए संविधान में प्रदत्त सुरक्षणों के अनुरूप न्याय और समता की स्थिति सुनिश्चित की जा सके, अगला महत्वपूर्ण सवाल है यह सुनिश्चित करने के लिए कि वह संरचना सचमुच कारगर बन सके आवश्यक उपायों का। इस पहलू पर तीन स्तरों पर विचार करना होगा, अर्थात राष्ट्र, संस्थानों और समाज के स्तरों पर। यह आवश्यक होगा कि इस पर विचार राष्ट्रीय स्तर से आरम्भ किया जाए। उस स्तर पर जब तक दृष्टि स्पष्ट नहीं है तब तक कल्याण और प्रगति की ऐसी व्यापक योजना भी जिसकी रूपरेखा पहले बतलाई गई है, विकास के उन उलट-प्रहारों के समक्ष नाकाफी होगी जो निरन्तर अधिकाधिक होते जायेंगे जबकि उनके प्रभावों के शमन तक करने के लिए प्रति बल अत्यन्त क्षीण होते जायेंगे।

राष्ट्रीय परिवेश

5.2 स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्रीय परिवेश सामाजिक और आर्थिक न्याय की वास्तविक भावना के अनुरूप असंदिग्ध रूप से उसके पक्ष में था जिसे संवैधानिक आयोजना में उपयुक्त रीति का समाहित किया गया था। यद्यपि, मूलभूत, मान्यतायें अपरिवर्तित रही हैं, तथापि, यह स्पष्ट है कि बहुत से महत्वपूर्ण मुद्दों पर स्थिति बिगड़ी है इसका परिणाम यह हुआ है कि न केवल असमानता ही बढ़ ही रही है बल्कि उसे यदि एक समात्मक प्रवृत्ति के रूप में नहीं तो कम से कम अप्रत्यक्ष रूप से तो अपरिहार्य स्वीकार किया जा रहा है और उस सीमा तक सामाजिक तथा आर्थिक उद्देश्यों का हनन हो रहा है। इस सम्बन्ध में मूल प्रश्न यह है कि क्या ऐसे परिवेश में जिसमें न्यायमूलक समता की भावना स्पष्ट रूप से गौण स्थिति में पहुच गई हो, सबसे अधिक कमजोर स्थिति वाले समुदायों (जो स्थिति वर्तमान में अनुसूचित जातियों के मामले में उनकी सामाजिक स्थिति के कारण और जनजातियों के मामले में विकास की एक भिन्न अवस्था के कारण है के बारे में साधारण रूप से यह अपेक्षा की जा सकती है कि उन्हें समाज के अन्य कमजोर वर्गों की तुलना में कोई खास तौर पर बेहतर सलूक किया जा सकता है?

5.3 अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कुछ सदस्यों को सकारात्मक विभेद की नीति से कुछ लोगों को लाभ मिलने के कारण कदाचित भिन्न धारणा बनने के बावजूद यह स्पष्ट है कि ऐसा होना संभव नहीं है। असमतामूलक राष्ट्रीय परिवेश में इन जातियों के सामान्य सदस्य उस वृहत्तर शोषित समाज में जो कठोर जीवन-संघर्ष में जूझ रहा है अपने स्तर पर पूर्वग्रह, द्वेष और विरोध का सामना करते रहना पड़ेगा। वास्तव में अब यह स्पष्ट हो गया है कि स्वतन्त्रता के बाद प्रारम्भिक उत्साह में समता और न्याय के मार्ग में आने वाली समस्याओं की जटिलता की ओर जिस प्रकार निहित स्वार्थ पुनः संगठित होकर नई शक्ति के साथ उभर सकते हैं इसका अहसास तक नहीं हुआ था। उस समय की सद्भावना के पूर्ण वातावरण में सचमुच यह विश्वास कर लिया गया था कि अन्यायी विषमता अस्थायी थी और एक समतावादी समाज की स्थापना से सम्बन्धित राष्ट्र में परिवर्तन की सामान्य प्रक्रियाएं प्रारम्भिक बाधाओं को पार करने के लिए तथा प्रतिकूल प्रक्रियाओं को निष्प्रभावी करने के लिए पर्याप्त होंगी।

5.4 उपरोक्त मान्यता के निहितार्थ का सर्वोत्तम उदाहरण अनुसूचित जनजातियों के कल्याण तथा प्रगति के लिए अपनाई गई वे नीतियां हो सकती हैं जिनके लिए संविधान में सुरक्षण स्पष्ट और व्यापक हैं। संविधान की पांचवीं अनुसूची में विशेष उपबन्धों के महत्व पर चर्चा पहले की जा चुकी है। किन्तु 1961में अनुसूचित क्षेत्र तथा अनुसूचित जनजाति आयोग उस समय के राष्ट्रीय परिवेश के अनुरूप इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि राज्य उनके हितों की रक्षा करने के लिए सामान्य प्रक्रिया अपना कर भी उपयुक्त कानून बना सकते थे। इसलिए, उनके निष्कर्ष के अनुसार सभी आदिवासी बहुल क्षेत्रों को अनुसूचित क्षेत्र में शामिल करने के लिए उनका विस्तार करना आवश्यक नहीं था। इस प्रक्रिया में संविधान की पांचवीं अनुसूची में किए गए बड़े उपबन्धों का तर्काधार उपेक्षित हो गया। नीति निर्माण के स्तरों पर आदिवासी स्थिति के बारे में सही समझ के अभाव के कारण तथा उस विश्वास से कि विकास के सामान्य कार्यक्रम उनकी समस्याओं के समाधान के लिए पर्याप्त थे उपरोक्त धारणा और भी पुष्ट होती गई। उदाहरण के लिए **उत्तर प्रदेश** में अनेक जातियों जिन्हें स्वतन्त्रता के पहले बहुत समय से आदिम जाति के के रूप में मान्यता मिली हुई थी। इस नए परिवेश में इसी विश्वास के आधार पर कि सामान्य व्यवस्था में ही उनके हितों का संरक्षण किया जा सकेगा, अनुसूचित जनजातियों के रूप में घोषित नहीं की गई थीं। इस कारण वे उन न्यूनतम संरक्षणों से भी बंचित रह गए जो अन्य स्थानों पर आदिवासी लोगों को प्राप्त हुए, जिसके फलस्वरूप इस राज्य की दक्षिणी सीमा पर सुदूर पहाड़ियों तथा वनों की गहराइयों में इन लोगों का इतना घोर शोषण होता रहा है जैसा न कभी पहले हुआ और न जिसकी और कहीं मिसाल है।

5.5 आदिवासी स्थिति के सम्बन्ध में सर्वाधिक घातक चूक इस बात के अहसास न होने के कारण हुई है कि आदिवासी लोग

अपने इतिहास के एक ऐसे नाजुक दौर से गुजर रहे हैं जहां बदलाव इतनी तेज रफ्तार से हो रहा है कि वह उनकी समझ से बाहर है और अधिकांश आदिवासी समाजों की नई चुनौतियों से संबद्ध अपनी प्रतिक्रियायें लाजमी तौर पर नाकाफी साबित होंगी। बदलाव का यह दौर उनके लिए निर्णायक है क्योंकि इस दौर में जो कुछ भी खोना है सो खो जायेगा जिसकी बाद में अनुपूर्ति नहीं की जा सकेगी। आदिवासी लोग न केवल अपने संसाधनों पर बड़ी तेज रफ्तार से अपना नियंत्रण खोते जा रहे हैं बल्कि वे सामाजिक विघटन का सामना भी कर रहे हैं जो उनके इतिहास में अभूतपूर्व है। खेद तो यह है कि इन प्रक्रियाओं का युक्तियुक्तकरण करने का प्रयास किया जाता है और कई बार तो उन्हें अवश्यभाविता का अलौकिक रूप भी दे दिया जाता है। आदिवासी क्षेत्रों की स्थिति विभिन्न प्रकार के प्रतिगामी बलों की स्वच्छन्द खिलवाड़ के लिए अत्यन्त अनुकूल है जहां न केवल कानून का पूर्णत: उल्लंघन करते हुए वरन कानून के अनुपालन के बहाने उसकी आड़ में भी वे अपना मकसद हासिल कर सकते हैं, जिसका उस समाज पर घातक प्रभाव हो सकता है। यह विडम्बना है कि आदिवासी क्षेत्रों में शोषण बहुत कुछ ऐसे रूपों में किया जाता रहा है, जो देखने के सीधे-साधे और हानिरहित हैं और ऐसा लगता है कि मानो वे क्रियाकलाप संबंधित कानूनों और नियमों के अधीन प्रशासन के सामान्य दायित्वों के अनुसरण में किए जा रहे हैं। इसलिए इन क्षेत्रों के लिए प्रशासनिक तटस्थता की परम्परा अनुपयुक्त है। प्रशासन निहित स्वार्थों द्वारा आदिवासी अर्थव्यवस्था की लूट का मूक-दर्शक नहीं रह सकता है, चाहे उस प्रक्रिया में कानून का उल्लंघन हो रहा है अथवा नहीं या फिर चाहे उन निहित स्वार्थों ने अपने चेहरे पर कैसे भी लुभावने और आकर्षिक नकाब क्यों न पहन रखे हों।

5.6 आदिवासियों की करुण गाथाओं की रुंधी आवाज पहले तो आदिवासी अंचलों के बाहर तक आ ही नहीं पाती है और जब कुछ सुनने में आता भी है तो उन व्यथा कथाओं पर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं किया जाता है और हल्के फुल्के ढंग से व्यवस्था की छुट-पुट भूल-चूक का रूप दे दिया जाता है। आदिवासी स्थिति का सतत् रूप से कोई क्रमबद्ध मूल्यांकन नहीं किया गया है, यद्यपि संविधान में राज्यपाल को यह निर्देश दिया गया है कि वह प्रतिवर्ष अनुसूचित क्षेत्रों में प्रशासन की स्थिति पर एक रिपोर्ट तैयार करें और उसे राष्ट्रपति को प्रस्तुत करें। यह ठीक है कि ये रिपोर्टें तैयार की जा रही हैं परन्तु नेमी तौर पर मानों औपचारिकता को पूरा करने मात्र के लिए। इन रिपोर्टों में प्रशासन की स्थिति के नाजुक सवाल को तो छुआ भी नहीं जाता है और उनमें विभागीय क्रियाकलापों का संकलन मात्र होता है। संविधान के निर्देशक तत्वों के सम्बन्ध में इस गम्भीर चूक को भी एक मामूली सी गलती के रूप लिया जाता रहा है। इसका परिणाम यह हुआ है कि प्रशासन से जिस महत्वपूर्ण भूमिका की अपेक्षा की गई थी वह उपेक्षित हो गई है और इन अंचलों में उसकी लूटमार अनदेखी रह गई है। **किसी भी सरकार ने इस व्यवस्था की दुष्क्रियात्मकता के प्रतिकूल प्रभावों को खुले रूप में स्वीकार करने का साहस नहीं किया है जिसके परिणामस्वरूप राज्य की नीतियों, कार्यक्रमों तथा उसके कार्यों में द्वैध-वृत्ति रही है।** अन्यथा इस बात की कैसे सफाई दी जा सकती है कि सभी दर यह स्वीकार किए जाने के बावजूद कि आदिवासी लोगों के सामने सबसे बड़ी समस्या सरकार के छोटे कर्मचारियों द्वारा शोषण की ही है और यह मानने के बाद भी कि लगभग सभी राज्यों में ये क्षेत्र दण्ड-स्वरूप क्षेत्र पदस्थापना के बन गए हैं उसके संबंध में नेमी कागजी कार्यवाहियों में वर्षों यूं ही बीतते जाते हैं और इस महत्वपूर्ण मामले पर न राज्य सरकारों द्वारा अथवा नहीं ही केन्द्र सरकार द्वारा कोई ठोस कार्यवाही की जाती है? इस संबंध में सर्वोच्च स्तरों तक से भेजे जाने वाले सन्देश भी उनके जारी होने के कुछ सही समय बाद भुला दिए जाते हैं और उधर आदिवासी क्षेत्रों की स्थिति यथावत बद से बदतर होती रहती है।

5.7 निष्क्रियता अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को सुरक्षणों के लाभ से वंचित रखने के लिए सामान्य युक्ति है जिसे निहित स्वार्थों की मौन सहमति का समर्थन भी आसानी से मिलता रहता है। किन्तु यहां पर कुछ नई प्रवृत्तियों का उल्लेख किया जाना आवश्यक है जो उस विश्वास और सद्भावना के वातावरण के साथ जिसका पहले जिक्र किया गया है मेल नहीं खाती है। कानून की आड़ में किए जा रहे गलत कार्यों और विधिक प्रक्रिओं के दुरुपयोग की घटनाएं उल्लेखमीय रूप से बढ़ गई हैं और यह प्रवृत्ति जारी है। कुछ ऐसे अवसर भी हैं जिनके सरकारी विभाग भी इन युक्तियों का सहारा लेने में संकोच नहीं करते हैं। कभी कभी न्यायालयों के हस्तक्षेप के द्वारा कुछ राहत मांगी जा सकती है, किन्तु न्यायालय एक सीमा से परे नहीं जा सकते हैं। और उनके निदेशों का पालन भी मात्र औपचारिकता निभाने के लिए किया जा सकता है जिससे वास्तविक स्थिति में कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं होता है।

5.8 इसमें तीन तरह की आम स्थितियां होती हैं--(1) कानून के उपबन्धों और संवैधानिक दायित्वों की उपेक्षा, (2) अधिकारियों द्वारा ऐसे अन्यायपूर्ण कार्य जो कहने को उनके कर्त्तव्यों के अनुसरण में होते हैं किन्तु कानून की भावना अथवा सरकार की घोषित नीतियों से संगत नहीं होते हैं, परन्तु जिनके लिए सरकार की मौन स्वीकृति रहती है और (3) सरकार द्वारा प्रत्यक्ष-रूप से गैर-कानूनी काम। इस सम्बन्ध में कुछ उदाहरण उन तीन बड़े क्रिया-कलापों अर्थात वनभूमि और मजदूरी के विषय में दिए जा रहे हैं जिनका अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों से सर्वाधिक सम्बन्ध है। और जो इस प्रवृत्ति के निर्देशी है।

वन

(1) **वन ग्राम**

5.9 26 जनवरी, 1950 से संविधान लागू होने के साथ **बेगार तथा** इसी तरह के बल प्रयोग के आधार पर काम के अन्य रूप निषिद्ध हो गए थे और वे कानून के अन्तर्गत दंडनीय भी हो गए थे। तथापि, वन गांवों में रहने वाले लोगों पर वन विभाग द्वारा

लगाई गई शर्तों के कारण नई स्थिति के सन्दर्भ में जो विषमता उत्पन्न हो गई थी वह यथावत जारी रही क्योंकि उनके लिए वही स्थिति उसी तरह स्वाभाविक समझ ली गई थी, जैसे कि वहीं पर वनस्पति और जीव जन्तुओं की उपस्थिति जिसकी ओर कोई विशेष ध्यान देने की जरूरत नहीं होती। अनुसूचित क्षेत्र और अनुसूचित जाति आयोग (1961) द्वारा इस आशय की सिफारिश से कि वनग्रामवासियों को उनकी खेती पर काश्त का स्थायी हक दिया जाय कोई अन्तर नहीं आया। इस स्थिति की विषमता सन् 1960 में केरल में उस समय सामने आई जब वहां हिलमैन नियमों को जिसके अन्तर्गत वन क्षेत्र में रहने वाले लोगों की शर्तें परिभाषित की गई थीं। चुनौती दी गई थी और उसे उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर अवैध घोषित कर दिया गया कि उसकी शर्तों की प्रकृति बलपूर्वक मजदूरी जैसी होने से उनके द्वारा नागरिकों के मूलभूत अधिकारों का उल्लंघन होता था। पांच वर्ष से अधिक बीत जाने के बाद भारत सरकार का ध्यान 1975 में मूलभूत अधिकारों के इस उल्लंघन के इस की ओर आकर्षित हुआ और राज्यों को परामर्श दिया कि सभी वन गांवों को राजस्व गांवों में परिवर्तित कर दिया जाए और इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को स्वतन्त्रता का अधिकार पुनस्थापित किया जाए जिसकी देश के नागरिकों के लिए गारन्टी की गई है। कुछ राज्यों ने इस परामर्श को कुछ कदर अनिच्छापूर्वक पर फिर भी स्वीकार किया है, परन्तु अनेक राज्य अभी भी पीढ़ियों से वहां रह रहे लोगों के मूलभूत अधिकारों का घोर उल्लंघन करते हुए पहले की स्थिति पर ही डटे हुए हैं॥

(2) लड़ाई गोबर की

5.10 **मध्यप्रदेश** में एक उत्साही युवक वन मंडल अधिकारी ने यह आदेश जारी कर दिया कि आदिवासी लोग आरक्षित वनों से उन पशुओं के गोबर को इकट्ठा नहीं कर सकते थे, जो चराई के मौसम में विधिमान्य परमिटों के आधार पर भारी संख्या में चरने के लिए बाहर से लाए जाते थे। इस अधिकारी के अनुसार पशुओं का वह गोबर लघुवनोपज था। और उस संबंध में किसी भी नियम के अधीन कोई उपबन्धन न होने के कारण आदिवासियों का उस पर किसी प्रकार का हक नहीं बनता था। इससे वे सैकड़ों आदिवासी लोग जो न जाने कितने दशकों से हर मौसम में गोबर इकट्ठा करके कुछ पैसा कमा लेते थे, ठगे से रह गए। इस सम्बन्ध में लोगों की ओर से सीधे और स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से भेजे गए अभ्यावेदनों का कोई परिणाम नहीं हुआ। इस मामले में जिला कलेक्टर भी हस्तक्षेप नहीं कर सके। जब यह मामला मेरे ध्यान में लाया गया था और मैंने वन मन्त्री को पत्र लिखा परन्तु मेरा पत्र भी अनुत्तरित ही रह गया था।

5.11 संवैधानिक प्राधिकारी सहित किसी भी ओर से कोई राहत न मिलने पर लोगों ने न्यायालय के समक्ष एक याचिका दाखिल की। इस याचिका के दाखिल किए जाने पर भी जिसमें इस अवैध कार्यवाही के विरुद्ध समता और न्याय दोनों ही आधारों पर आवेदन किया गया था, व्यवस्था की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई जिससे कि विभाग द्वारा उन आदेशों का स्वतः स्फूर्त पुनरीक्षण किया जाता अथवा जिससे उस अन्याय को खत्म करने के लिए राज्य को मनाया जा सकता। इसके विपरीत राज्य द्वारा यह निर्णय लिया गया कि न्यायालय के समक्ष इस मामले की पैरवी करके उस कार्यवाही का समर्थन किया जाए। विद्वान सरकारी वकील ने जो प्रतिवादियों अर्थात **मध्यप्रदेश** राज्य की ओर से उपस्थित हुआ था, पशुओं के गोबर पर राज्य के दावे को स्थापित करने के लिए बिना किसी प्रकार के मानसिक संशय के सुख-दुख की स्थिति से नितांत उदासीन भावना से अपने महत कानूनी कौशल और अपने पीछे राज्य के सम्पूर्ण प्राधिकार का प्रयोग करते हुए पक्ष प्रस्तुत किया। इस मामले में इस बात का लेशमात्र अहसास भी नहीं आया कि विद्वान वकील उसी राज्य की ओर से वकालत कर रहे थे जो दूसरे पक्ष में खड़े उन्हीं लोगों को संरक्षण प्रदान करने के लिए जिम्मेदार था जो शोषण की दानवी प्रक्रियाओं की मार से एक ऐसी अधम स्थिति में पहुंच गया था जहां उन्हें एक ऐसे क्षेत्र में गोबर एकत्र करने के अधिकार के लिए लड़ना पड़ रहा था जो कम से कम उनके स्वप्नों में उस स्वर्णिम युग की कल्पना का जब वे उनके पूर्वजों के पावन निवास थे उत्प्रेरित करते होंगे। यह सौभाग्य की बात थी कि उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश ने कानून में प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या उन लोगों के पक्ष में स्वीकार की (अनुलग्नक 4) उसी के आधार पर वे लोग फिर से गोबर इकट्ठा करना शुरु कर सके और अवमानवीय स्तर पर ही सही परन्तु आजीविका का साधन कमाने लगे।

5.12 मन में यही आता है कि मालूम नहीं इन आदिवासियों की हालत क्या होती यदि कानून को बनाते समय उस में कोई दूसरा शब्द प्रयोग किया गया होता, क्योंकि यह भविष्यवाणी तो नहीं की जा सकती है कि भविष्य में कानून की व्याख्या प्रत्येक पद अपने अर्थ को लेकर कौन सा रास्ता अपना सकता है और उन लोगों के भाग्य का निर्णयक बन सकता है जिन्हें उस विद्वत्तापूर्ण विचार-विमर्श के बारे में जो उस कानून के बनाने के समय होता है अथवा बाद में उनकी व्याख्या के समय होता है, कुछ भी ज्ञान नहीं होता है। **आदिवासी लोगों के जीने के अधिकार के इस घोर उल्लंघन का परदाफाश हो जाने और उसकी न्यायालय द्वारा पुष्टि हो जाने के बाद भी इस राज्य में कहीं कोई हलचल नहीं हुई। जाहिर है कि राज्य ने इस उल्लंघन को अवश्य ही अपने अधिकारियों की कर्त्तव्य निष्ठा के रूप में समझा होगा जिसका राज्य के कल्याण के लिए अकिंचन महत्व नहीं माना जा सकता है।**

(3) वानिकी में मजदूरी

5.13 **महाराष्ट्र** में श्रम विभाग द्वारा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अधीन एक अधिसूचना 15-5-1986 को जारी की गई जिससे वानिकी मजदूर 14 रुपए प्रतिदिन की मजदूरी के लिए हकदार हुए। परन्तु वन विभाग पहले ही विभागीय प्रक्रिया के अनुसार मजदूरी की दरें निर्धारित कर चुका था जिसके मुताबिक प्रतिदिन की मजदूरी केवल 7.60 रु० होती थी। वन अधिकारियों ने अपने विभागीय परिपत्र के उपबन्धों का सम्मान करते हुए कानून के अधीन निकाली गई उक्त अधिसूचना को नजरअन्दाज कर दिया। **वन अधिकारियों के इस निर्णय में**

इस मान्यता के अलावा कोई दूसरा तर्क आधार नहीं हो सकता है कि जहां तक राज्य में वन क्षेत्रों का सम्बन्ध है वह उनका अनन्य अधिकार क्षेत्र है अथवा वहां "सरकार के अन्दर उनकी अपनी सरकार" है। तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि महाराष्ट्र का वन विकास निगम इस अकथित आधारभूत मान्यता के सम्बन्ध में कुछ गलती कर बैठा और उसने कानूनी आदेश को स्वीकार कर लिया और सांविधिक उपबन्ध के अनुसार न्यूनतम मजदूरी का भुगतान करना आरम्भ कर दिया। उनका यह कृत्य स्पष्ट रूप से पवित्र नियमों का उल्लंघन था। इस संबंध में वन विभाग द्वारा उपयुक्त अनुदेश जारी किए गए। निगम को उसका अपना पूर्व निर्णय पूरी तरह से विधिसम्मत होने के बावजूद विभाग के आदेश को मानने के लिए बाध्य होना पड़ा। उसे इस तथ्य की पूरी जानकारी के बावजूद कि वैसा करने से कानून का उल्लंघन होगा, विभागीय दरों पर वापिस आना पड़ा।

5.14 जब यह गैर-कानूनी तथा अन्यायपूर्ण स्थिति मेरी जानकारी में आई तो मैंने राज्य सरकार को इस सन्दर्भ में इस आशा से एक पत्र लिखा (अनुलग्नक-5) कि एक बार ये तथ्य मंत्रालय की जानकारी में आ जाने पर ऐसी स्पष्ट गैर-कानूनी स्थिति को समाप्त कर दिया जाएगा और लोगों को कानून के अधीन जो देय है वह दे दिया जाएगा क्योंकि कम से कम इतनी तो ऐसी व्यवस्था से अपेक्षा की ही जा सकती है जो कानून पर आधारित प्रशासन के प्रति समर्पित है। कितने खेद की बात है कि व्यवस्था में यह सहज विश्वास मिथ्या सिद्ध हुआ। वन विभाग अपने इस मत पर कायम रहा, जिसे राज्य सरकार ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि न्यूनतम मजदूरी संबंधी वह अधिसूचना अकृत और शून्य थी क्योंकि उस अधिसूचना को जारी करने से पहले संबंधित विभाग द्वारा उचित कार्य-विधि का अनुसरण नहीं किया गया था। वन श्रमिकों की ओर से उच्च न्यायालय में दाखिल की गई रिट याचिका के प्रति दिए गए प्रत्युत्तर में भी उदासीनता और निर्लिप्ति की भावना थी। वह याचिका सरकार में उस विवाद के संबंध में तर्कपूर्ण समझ जाग्रत करने में असफल रही।

घटनाओं के इस विवाद में किसी ने भी न यह आवश्यक समझा और न उपयोगी कि राज्य के आदिवासी विकास विभाग को इस के बारे में सूचित किया जाय, अतएव वह विभाग उसके बारे में अवगत ही नहीं था। संविधान के अधीन नियुक्त विशेष अधिकारी की अपनी भूमि का स्पष्ट हवाला देते हुए राज्य सरकार का ध्यान उस असंगत तथा अनुचित स्थिति की ओर आकर्षित करने का मेरा प्रयत्न भी व्यर्थ सिद्ध हुआ जिसमें ऐसी सरकार जिसका दायित्व आदिवासियों को सभी प्रकार के शोषण के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करना था उसी का एक अंग उन्हीं लोगों का शोषण करने के लिए स्वयं जिम्मेदार था। इसकी बजाय राज्य सरकार ने एक अन्य आदेश जारी किया, जो न केवल अन्यायपूर्ण था बल्कि गैर-कानूनी भी था, जिसके अनुसार उक्त अधिसूचना के अधीन "निर्धारित न्यूनतम मजदूरी का कार्यान्वयन" अगले आदेश होने तक स्थगित रखा गया। कोई भी नई अधिसूचना के जारी होने के बाद जो मजदूरी के मामले में रिक्तता की स्थिति उत्पन्न हो गई उसकी चिन्ता नहीं हुई। इस बिन्दु पर राज्य सरकार को भेजा गया मेरे पत्र की भी कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। नियमों के लबादे के नीचे किन्तु कानून की घोर अवमानना और राज्य के संवैधानिक दायित्व की परवाह किए बिना लोगों का शोषण बे-रोक जारी रहा। नियमों का प्रचलन जारी रहा जबकि कानून बेजुबान बना रहा और संविधान उसका निरीह दर्शक!

5.15 मार्च 1988 में आकर वानिकी के लिए न्यूनतम मजदूरी कदाचित अनिच्छा से ही पुनरीक्षित की गई। किन्तु सभवत: अधिकारी उस मजदूरी की न्यायसंगतता के बारे में पूर्णत: आश्वस्त थे जिनका वे उस समय तक भुगतान कर रहे थे। क्योंकि सभवत: उनके अनुसार उतना ही उन आदिवासी लोगों के लिए देय भी था जिनकी जरूरतें ज्यादा नहीं थीं और सभवत: इसलिए भी क्योंकि वे उन वनों के भी तो ऋणी थे जो उन्हें जीवन-निर्वाह की दूसरी चीजें प्रदान करते थे। इसके परिणामस्वरूप वे उन लोगों की कमाई में इतनी बड़ी बढ़ोतरी से समझौता नहीं कर सके। वन विभाग के परिपत्र ने अपने अधिकारियों को यह प्राधिकार दिया था कि वे वानिकी में मजदूरों को किसी सामान्य कार्य दिवस की तीन चौथाई अवधि के लिए नियुक्त कर सकते थे और उन्हें कानून में उपबन्धित मजदूरी के तीन चौथाई के बराबर मजदूरी का भुगतान कर सकते थे। मुझे यह सूचित किया गया है कि वन विभाग में यह प्रथा कुछ पहले से ही प्रचलित रही है। किन्तु इस बात से किसी का कोई सरोकार नहीं दिखाई देता कि यह प्रथा न्यूनतम मजदूरी के कानून का उल्लंघन हो सकती है। इसके अलावा किसी ने भी यह विचार करना आवश्यक नहीं समझा कि जो लोग काल का निर्धारण अभी भी सूर्य तथा तारों से करते हैं उनसे उस आदेश की व्यवस्था के अनुसार सूक्ष्म संगणना करने की आशा कैसे की जा सकती थी और वह भी एक ऐसे परिवेश में जहां वन रक्षक उनका मालिक हो और वन क्षेत्र एकांतिक सम्पदा और ये लोग उस एक चौथाई समय का क्या करेंगे जो उनके पास बचेगा? ये सभी बातें शायद संगत ही नहीं हैं क्योंकि आदिवासी लोग एक अलग दुनिया में रहते हैं। यह सवाल कि जिन लोगों ने कानून के अधीन नई मजदूरी दर लागू हो जाने के बाद वन विभाग के लिए काम किया है वे मजदूरी की दरों में अन्तर के बराबर बकाया के हकदार हैं, अभी अनिर्णित ही रह गया है और इस बिन्दु पर मेरे पत्र का कोई उत्तर नहीं मिला है। मन में यही सवाल आता है कि क्या सरकार बम्बई अथवा दिल्ली जैसी जगह मजदूरों को कानूनी रूप से देय राशि से एक पैसा भी रोके रख सकती थी एक दिन के लिए भी।

भूमि

5.16 सबसे अधिक अनिष्टसूचक प्रवृत्ति तो यह है कि कहीं कहीं कुछ राज्य प्राधिकारियों ने भूमि से संबंधित कानून की घोर अवहेलना करते हुए साहस के साथ सुरक्षणों से इंकार करने का रास्ता अपनाया है। भूमि हस्तान्तरण के विरुद्ध सुरक्षात्मक उपायों के प्रभावहीन होने का सबसे महत्वपूर्ण कारण ऐसे गैर-आदिवासियों की ओर से अत्यधिक दबाव की स्थिति पैदा कर देना है जो स्वयं प्रभावसम्पन्न है और जिन्हें उसमें प्रशासन की भी मौन स्वीकृति मिल जाती है। इन लोगों के द्वारा अवैध रूप से

हस्तान्तरण भूमि को वापिस दिलाने का अन्त तक विरोध किया जाता है। वस्तुतः नितांत गैर-कानूनी हस्तान्तरणों को भी नैतिक आधारों पर उचित करार कराने का प्रयास किया जाता है और जब राज्य उन हस्तांतरणों/सौदा को रद्द करने का प्रयत्न करता है जिसे वह अन्यायपूर्ण समझता है तो उनके मन में पीड़ा होती है। यह विडम्बना है कि जैसे जैसे हस्तान्तरण के मामले बड़े पैमाने पर होने लगे हैं, अतः संख्या की ताकत आदिवासियों के विरुद्ध होती गई है और भांति-भाँति के युक्तियुक्त कारण प्रदर्शित किए जाते हैं जिनके प्रति सभी स्तरों पर सकारात्मक प्रतिक्रिया मिलती है क्योंकि अन्ततः उस समय के सन्दर्भ में सबसे महत्वपूर्ण साबित होता है वह है संख्याओं का गणित। आदिवासियों पर पहले का अन्याय भुला दिया जाता है और सहानुभूति उन लोगों के साथ दिखाई जाती है जिन्हें गैर-कानूनी रूप से कब्जा की गई भूमि पर से उसके कानूनन हकदारों के पक्ष में हटने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

5.17 जिस तरीके से **केरल, महाराष्ट्र** और **आन्ध्र प्रदेश** के राज्यों ने आदिवासियों की भूमि के मामलों को निपटाया है, वह इस अवांछित प्रवृत्ति का उदाहरण प्रस्तुत करता है। केरल सरकार ने आदिवासियों की भूमि के संरक्षण तथा गैर-कानूनी रूप से हस्तान्तरित भूमियों को वापिस दिलाने के लिए 1975 में एक कानून बनाया। यह अधिनियम एक पूरे दशक तक लागू नहीं किया गया। इस संबंध में सरकार ने उसे लागू करने के बारे में अगला कदम 1986 में केवल तभी उठाया जबकि उसे इस कानून को न लागू करने के मामले में विभिन्न मंचों पर लज्जित करने वाले सवालों का सामना करना पड़ा और इस कानून को लागू करने के लिए जो भी अनिच्छापूर्वक बाध्य होने के बाद भी यह कानून 1975 से लागू न किया जाकर 1982 से लागू किया गया। उससे पूर्ववर्ती तारीख से लागू करने की बात तो अलग रही यद्यपि वैसा करना ही संविधान की भावना के अनुसार अपेक्षित था और संभावना तो यह भी हो सकती है कि सभी औपचारिक कार्य-विधियां पूरी हो जाने के बाद भी यह कानून उसे सही प्रकार से लागू करने की इच्छा न होने के कारण कागजी कार्रवाई मात्र बना रह जाय। केरल में आदिवासी लोगों की जनसंख्या केवल एक प्रतिशत है और जाहिर है कि एसे लोगों पर जो बीतती है उससे उन लोगों को कोई बड़ा सरोकार नहीं हो सकता है जो बहुमत का रुख देखते हैं, बिना इसकी परवाह किए कि वे सही हैं या गलत।

5.18 **महाराष्ट्र** में राज्य सरकार द्वारा 31-7-86 को एक गोपनीय परिपत्र जारी किया गया जिसमें राजस्व प्राधिकारियों से यह कहा गया कि वे आदिवासी लोगों की सुरक्षा के लिए तत्समय प्रवृत्त कानून के उपबन्धों के अनुसरण में गैर-आदिवासियों द्वारा अवैध रूप से कब्जा की गई भूमियों को आदिवासियों को वापिस दिलाने के लिए कार्यवाही न करें। यह परिपत्र साफतौर से न केवल कानून के विरुद्ध था बल्कि अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को सुरक्षा प्रदान करने के राज्य के दायित्व का घोर उल्लंघन भी था। तथापि, जब मैंने मुख्य मन्त्री को इस मामले की जानकारी कराई तो वह परिपत्र तुरन्त वापिस ले लिया गया था।

5.19 **आन्ध्र प्रदेश** में तो इस मामले में पराकाष्ठा ही हो गई है। राज्य सरकार द्वारा 1979 में एक आदेश जारी किया गया था जिसमें राजस्व प्राधिकारियों को यह निर्देश दिया गया था कि वे उन मामलों में गैर-कानूनी रूप से हस्तान्तरित आदिवासी भूमियों को वापिस दिलाने के लिए विनियम के उपबन्धों के अधीन कार्यवाही न करें, जिनमें उस भूमि पर तत्समय कब्जा रखने वाला व्यक्ति एक छोटा किसान है। आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने इस परिपत्र को पूरी तरह से गैर-कानूनी होने के कारण अवैध घोषित कर दिया। तथापि, राज्य सरकार ने यह आवश्यक नहीं समझा कि इस आदेश को वापिस लिया जाए। राज्य के आदिवासी विकास विभाग ने उच्च न्यायालय के इस निर्णय को राजस्व अधिकारियों की सूचना के लिए केवल अग्रेषित किया था। उसका निहित संदेश स्पष्ट था। यद्यपि विवादास्पद आदेश गैर-कानूनी था तथापि अधिकारियों को मूल अधिनियम में अपेक्षित कार्यवाही करने की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि वह सरकार की न केवल व्यक्त इच्छा ही थी वरन् उसकी असली इच्छा भी वही थी। इस सम्बन्ध में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण संबंधी संसदीय समिति और केन्द्रीय कल्याण मंत्री द्वारा भेजे गए औपचारिक पत्रों का भी कोई प्रभाव नहीं हुआ। मेरी ओर से भेजे गए उस पत्र पर भी एक वर्ष से अधिक बीत जाने के बाद भी कोई उत्तर नहीं आया है जिसमें राज्य सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया था कि यह राज्य सरकार द्वारा अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को उन संवैधानिक सुरक्षणों से, जिन्हें सुनिश्चित करना उसका संवैधानिक दायित्व है, वंचित करने के समान था। इसके विपरीत आन्ध्र प्रदेश में एक असमान्य घटना हुई है। इस मामले पर एक सर्वदलीय बैठक आयोजित की गई जिसने इस कानून को ही बदलने की वांछनीयता का समर्थन किया। यहां पर एक विलक्षण स्थिति पैदा हो गई है जिसमें हमारे समाज के सबसे ज्यादा असुरक्षित वर्गों के हितों की रक्षा जिनके द्वारा संविधान निर्माताओं ने बहुत चिन्ता और मनन के आधार पर सुरक्षणों के लिए उपबन्ध बनाए हैं, केवल इस आधार पर नकार देने की बात सोची जा रही है कि उस राज्य के शेष लोग अन्यथा महसूस कर रहे हैं। यह कुतूहल की बात है कि केन्द्र सरकार ने इस राज्य सरकार द्वारा संवैधानिक उपबन्धों की इस घोर अवमानना को संविधान के द्वारा उसे प्रदत्त शक्तियों का उपयोग करने और उस राज्य सरकार को एक निदेश जारी किए जाने के लिए उपयुक्त मामला क्यों नहीं समझा है जिससे वह काला आदेश निरस्त हो जाता जो उन महत्वपूर्ण मूल्यों को नकारता है जिनके लिए हमारा संविधान समर्पित है।

मजदूरी और बंधक स्थिति

5.20 जहां एक ओर कृषि में मजदूरी का मामला निःसंदेह समग्र कृषि अर्थव्यवस्था की सामान्य स्थिति से संबंधित है वहीं दूसरी ओर यह भी तथ्य है कि साधारण किसानों की कमजोर आर्थिक स्थिति और अधिक मजदूरी देने में उनकी असमर्थता का फर्जी तर्क एसे लोग प्रस्तुत करते हैं जो न केवल न्यूनतम वरन् उससे कहीं अधिक मजदूरी दे सकते हैं। किसानों के हितों की रक्षा

करने के लिए कुछ राज्यों के प्रकट रुख वास्तव में उस क्षेत्र में गतिशील परिवर्तन की सामान्य प्रक्रियाओं के, जो एक नया संतुलन स्थापित कर सकती थीं, विरोधी तत्व के रूप में कार्य कर रहा है। **महाराष्ट्र में रोजगार गारन्टी योजना के अधीन आरम्भ किए गए सभी कार्यों में मजदूरी को न्यूनतन कृषि मजदूरी के स्तर पर स्थिर कर देने से गरीब लोग अन्य क्षेत्रों में उठान के उचित लाभों से वंचित रह जाते हैं, जो उनकी बजाय भारी लाभों के रूप में बिचौलों और ठेकेदारों को मिल जाते हैं।**

5.21 समृद्धि और घोर गरीबी के सह् अस्तित्व का सबसे अपकीर्तिकर उदाहरण दक्षिण गुजरात का है। इस क्षेत्र को सिंचाई का भारी लाभ मिला है। किसानों ने आधुनिक कृषि वैज्ञानिक पद्धतियां अपना ली हैं और नकदी फसलें, विशेष रूप से गन्ने की फसलें लेना शुरूकर दिया है। ये किसान वाक् पटु और जानकार हैं और अपने को चीनी सहकारी समितियों के माध्यम से संगठित भी कर लिया है। इस प्रकार उन्होंने बाजार से सीधे संबंध स्थापित कर लिए हैं जिससे पक्का माल तैयार करने की प्रक्रिया में मूल्य बढ़त का पूरा लाभ उन्हें मिल जाता है किन्तु विडम्बना यह है कि हलपति लोग, जो आदिवासियों में सबसे कमजोर समुदायों में से एक है और जो इतिहास में बहुत पहले से ही अपने संसाधन आधार पर से नियंत्रण खो चुके थे और तभी से खेतिहर मजदूरों के रूप में काम करते रहे हैं, न केवल इस विकास के लाभों में से एक छोटा सा अंश भी प्राप्त नहीं कर सके, वरन उनकी स्थिति और भी खराब हो गई है वास्तव में यहां ऐसे मजदूरों को जो सचमें बंधुआ मजदूर हैं, खोजने की जरूरत नहीं है, यदि कोई देखना चाहे तो वे किसी भी जगह् अनायास ही देखे जा सकते हैं। वे लोग इन नवधनाढ्य किसानों की जमीन पर थोड़ी मजदूरी पर बंधुआ की स्थिति में ही काम करते आ रहे हैं, जिनकी उन पर पकड़ अब और भी अधिक मजबूत हो गई है। इसके पड़ौसी क्षेत्र में जो पंचमहल से लेकर खान देश तक फैला हुआ है, आदिवासी लोगों का संसाधन आधार इतना क्षीण हो गया है कि वह लोगों को वर्ष में कुछ महीनों के लिए भी आजीविका नहीं दे पाता है। इसके परिणामस्वरूप वे रोजगार की खोज में दक्षिण गुजरात के इन समृद्धि के द्वीपों सहित सभी दिशाओं में जाने के लिए विवश हो जाते हैं। अपने घरों से दूर ये लोग कितनी भी थोड़ी मजदूरी पर काम करने के लिए मजबूर होते हैं। स्थानीय किसानों ने स्थानीय मजदूरों विशेष रूप से हल-पतियों के बारे में प्रचलित इस मिथ्याचार का उपयोग बड़ी मुसतैदी से किया है कि वे आलसी होते हैं और लगातार कठिन परिश्रम करने में असमर्थ हैं। **गन्ने की फसल की कटाई करने वाले प्रवासी मजदूर दयनीय परिस्थितियों में काम करते हैं और गन्ने की अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में उनके लिए जो उपयुक्त देय हो सकता है उसका उन्हें एक अंश भी नसीब नहीं होता।**

5.22 गुजरात के श्रम विभाग में एक संवेदनशील अधिकारी ने उनकी आर्थिक स्थिति का एक यथार्थवादी मूल्यांकन प्रारम्भ किया और वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उनकी मजदूरी कानूनी न्यूनतम मजदूरी से बहुत कम है और इस प्रकार इन प्रतिष्ठानों द्वारा राज्य के कानून का उल्लंघन किया जा रहा था। परन्तु इस संबंध में सरकार द्वारा कोई कार्यवाही नहीं की गई। यद्यपि चीनी की फैक्ट्रियों के पास जहां ये लोग काम करते हैं, कम मजदूरी देने के लिए आर्थिक सामर्थ्य का अभाव या अन्य कोई ऐसा कारण नहीं हो सकता था। इस हालत में उनको यह मामला कुछ स्वयंसेवी संगठनों की सद्भावना से न्यायलय के सामने उठाया गया था जहां पर कुछ रियायतें मिल जाने के बाद भी कानूनी लड़ाई अभी जारी है।

5.23 यह बात नितान्त स्पष्ट है कि इस मामले में श्रम संबंधी दो महत्वपूर्ण कानूनों, अर्थात न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और अन्तर्राज्यिक प्रवासी मजदूर अधिनियम के उपबंधों का घोर उल्लंघन हुआ है। किन्तु इसमें इस तथ्य कि बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उत्सादन) अधिनियम के उपबंधों का भी उल्लंघन किया गया है, की भी उपेक्षा की गई है। जब मैंने राज्य सरकार का ध्यान ऐसी संस्थाओं द्वारा जो सहकारी समझी जाती हैं और जिनसे जन सामान्य के कल्याण के लिए कार्य करने की अपेक्षा की जाती है, उस कानून के घोर उल्लंघन की ओर आकर्षित किया तो इसका एक औपचारिक उत्तर प्राप्त हुआ। उस संबंध में राज्य सरकार ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उत्सादन) अधि-नियम का उल्लंघन नहीं हुआ है। यह खेदजनक बात है कि जब मैंने विशेष अधिकारी की हैसियत से विशेष रूप से यह मत व्यक्त किया था कि उस क्षेत्र में प्रवासी मजदूरों की परिस्थिति कानून के अन्तर्गत उपबंधों में निरूपित बंधुआ स्थिति जैसी थी (अनु-लग्नक-6) तो उसके बाद भी राज्य सरकार द्वारा यह आवश्यक नहीं समझा गया था कि वह संविधान के अधीन अनुसूचित जन-जातियों के लिए प्रदत्त सुरक्षणों के उस विवादास्पद उल्लंघन की औपचारिक रूप से जांच करें।

मात्र औपचारिक अनुपालन

5.24 इस स्थिति के लिए जिम्मेदार सबसे महत्वपूर्ण कारक हैं, उसमें निहित भावना का उचित सम्मान किए बिना संविधान में विहित विभिन्न संस्थानों की स्थापना और उनकी कार्य-विधि संबंधी संवैधानिक उपबंधों का औपचारिक रूप से अनुपालन। संविधान में शामिल सुरक्षण और कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा करने के लिए स्थापित संस्थाएं राज्य के औपचारिक तंत्र का एक अभिन्न अंग है। इस तरह के सुरक्षण समाजवादी गणतंत्र की स्थापना के लिए समर्पित प्रजातान्त्रिक राष्ट्र में भी आवश्यक हैं क्योंकि राष्ट्रीय जीवन में ऐसी स्थितियां रूप ले सकती हैं जिनमें बहुमत के हितों में सामने छोटे समाजों के हितों की उपेक्षा ही नहीं वरन उन्हें नकारा भी जा सकता है। छोटे समूहों के लिए न्याय-मूलक समता की व्यवस्था, विशेष रूप से उन समूहों के लिए जिनके सामने अनुसूचित जातियों जैसी सामाजिक पूर्वाग्रहों की स्थिति और उन समूहों के लिए जो अनुसूचित जनजातियों की तरह विकास की भिन्न अवस्था में हैं, लोकतान्त्रिक प्रणाली की सामान्य

कार्य विधि में की नहीं जा सकती थी। अतः यह उपबंध औपचारिक रूप से परिभाषित लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के अनुरूप औपचारिक व्यवस्था के काम करने से संबंधित होने की बजाय वस्तुतः प्रजातांत्रिक समाज की मूल चेतना से संबद्ध है। किन्तु इनके लिए संविधान में उपबंध किए जाने और व्यवस्था में संस्थाओं की स्थापना किए जाने के बाद उन दायित्वों का निर्वहन इस बात पर निर्भर करेगा कि राज्य काज का संचालन करने के लिए जिम्मेदार प्राधिकारी उनकी ओर कैसा रुख अपनाते हैं। इस संबंध में भी संविधान निर्माता सजग थे और उन्होंने संविधान में महत्वपूर्ण उपबन्ध शामिल किए थे जिससे ये मामले प्रतिनिधिक संस्थाओं में विभिन्न समूहों के बीच शक्ति परीक्षण का विषय न बन जाए। उदाहरण के लिए, आदिवासी विकास के लिए निधियों का आवश्यक अन्तरण भारत की संचित निधि पर एक प्रभार है। यह इस दृष्टि से किया गया था जिससे इस प्रश्न पर संसद में चर्चा को दलगत आधार पर होने से बचाया जा सके। आदिवासी कल्याण से संबंधित मामलों में पर्याप्त शक्तियों के साथ विशेष दायित्व भी राज्य के राज्यपाल को सौंपे गए हैं। परन्तु जैसा पहले उल्लेख किया जा चुका है, ये व्यवस्थाएं भी संविधान की भावना के अनुरूप नहीं बन पाई हैं।

5.25 मुझे विश्वास है कि जिस भावना से मैंने ऊपर वर्णित मामले उठाए हैं, संबंधित प्राधिकारी उसके महत्व को स्वीकार करेंगे। मैं इस बात पर बल देना चाहूंगा कि यह सुनिश्चित किया जाए कि एक बार जब संवैधानिक सुरक्षणों का प्रश्न उठाया जाता है तो उस पर नेमी औपचारिक तरीके की अपेक्षा संविधान की भावना के अनुसरण में विचार किया जाए। यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी संविधान में ही राज्य पर डाली गई है कि मात्र रूप, कार्य-विधि और यहां तक कि कानून के अनुपालन के लिए भी अनुसूचित जातियों तथा जन जातियों के हितों की बलि न दी जाए। यह बात विशेष रूप से अनुसूचित क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों के संबंध में समीचीन है। यह अपेक्षा की जाती है कि इस मामले में राज्य का रुख असंदिग्ध रूप से उनके पक्ष में होगा। किसी भी स्तर पर इस दायित्व की जानबूझ कर की गई कोई अवहेलना स्पष्ट रूप से संविधान की भावना का उल्लंघन है, चाहे उससे किसी कानून का उल्लंघन भले ही न होता हो। इसलिए किसी भी प्रकार की विसंगतियाँ उत्पन्न होने पर जैसी कि उदाहरण के लिए पूर्ववर्ती पैराग्राफों में वर्णित हैं, स्वमेव राज्य में मंत्रिमंडल, राज्यपाल और केन्द्रीय मंत्रिमंडल के ध्यान में आ जानी चाहिए। यह भी आवश्यक है कि इस संवैधानिक दायित्व की जानबूझ कर अवहेलना करने के मामलों में कार्यवाही करने के लिए उपयुक्त कार्य-विधि तैयार की जाए।

5.26 **इसलिए, मैं यह सिफारिश करता हूं कि—**

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के लिए प्रदत्त संवैधानिक परित्राणों के आरोपित उल्लंघन के मामलों पर कार्यवाही करने के लिए सरकार के कार्य संचालन के नियमों में उपयुक्त उपबन्ध किए जाएं। ये सभी मामले राज्य में मंत्रिमण्डल और राज्यपाल तथा केन्द्र में केन्द्रीय मंत्रिमण्डल के सामने प्रस्तुत किया जाने चाहिएं। एक परिपाटी भी स्थापित की जानी चाहिए और यदि आवश्यक हो तो, ऐसे मामले को उच्चतम न्यायालय को भेजने के लिए एक उपयुक्त केन्द्रीय कानून बनाया जा सकता है जिनमें कोई प्राधिकारी जानबूझकर इस तरह से काम करता है कि उससे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को संवैधानिक सुरक्षणों के विशेषाधिकार से वंचित किया जाता है अथवा शोषण के विरुद्ध प्रभावी संरक्षण प्रदान करने के लिए उपयुक्त उपाय जानबूझकर नहीं करता है। जानबूझकर की गई ऐसी अवहेलना के आधार पर उसके सिद्ध हो जाने के बाद संबंधित व्यक्ति अथवा व्यक्तियों पर समुचित कार्यवाही करने के लिए प्रावधान किया जाना चाहिए।

संस्थागत ढांचा और संरचना

5.27 अब मैं संवैधानिक सुरक्षणों के लिए संस्थागत व्यवस्था की समीक्षा करना चाहूंगा। इस संबंध में दो पहलू हैं जिन पर स्पष्ट रूप से विचार किया जाना है। जैसा इससे पूर्व बार-बार उल्लेख किया गया है, कमजोर वर्गों के लिए न्यायपूर्ण समता की व्यवस्था केवल कुछ कल्याण योजनाओं और विकासशील कार्यक्रमों का ही मामला नहीं है। ये तत्व महत्वपूर्ण हैं किन्तु वे उस तत्व के बाद आते हैं जिसे पूर्व-शर्त के रूप में माना जा सकता है अर्थात इस बृहत्तर व्यवस्था के उन कामों और प्रवृत्तियों में जो कमजोर वर्गों पर बुरा प्रभाव डालने वाले प्रतिकूल बलों को उत्पन्न करने के लिए जिम्मेदार हैं, प्रभावी शोध उपबंध किया जाना। यहां यह उल्लेखनीय है कि अर्थ-व्यवस्था के आधुनिक क्षेत्र में स्थित संस्थाओं और लोगों की स्थिति कुछ ऐसी होती है कि उन्हें विकास के नए बलों के साथ एक ही दिशा में सामान्तर चलने का विशेष लाभ अनायास ही मिल जाता है। इसलिए आधुनिक संस्थानों का प्रबंध अपेक्षाकृत एक आसान काम है और जो लोग उनके प्रबंध में लगे हैं उन्हें दिल दिमाग और कौशल संबंधी असाधारण गुणवत्ता की आवश्यकता नहीं है। **किन्तु कमजोर वर्गों को समता और न्याय मिले यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार संस्थाओं का काम एक अत्यन्त दूभर काम होता है क्योंकि उन्हें विकास के उन बलों के ही विरुद्ध ही नहीं समय के ही बहाव के विरुद्ध संघर्ष करना पड़ता है। इसलिये इन संस्थाओं के प्रभावी होने के लिये जरूरी है कि वे असाधारण रूप से दृढ़ एवं कार्यकुशल हों। ऐसी संस्थाओं को उस व्यवस्था के अन्दर एक आंतरिक शोधकतंत्र के रूप में काम करना होता है, जिसकी प्रवृत्ति उन्हीं लोगों के हितों को जिनकी रक्षा के लिए ये संस्थाएं स्थापित की जाती हैं, न केवल उपेक्षा करते हुए वरन् उन्हें कुचलते हुए भी आगे बढ़ने की होती है।** इस संदर्भ में केवल संस्थाओं की स्थापना मात्र ही पर्याप्त नहीं हो सकती है। यही नहीं, यदि ये संस्थाएं ही, जो इन शोधक उपायों के लिए जिम्मेदार हैं, स्वयं कमजोर हैं तो वे न केवल निष्प्रभावी

होंगी, वरन दुष्प्रभावी भी होंगी, क्योंकि उनकी उपस्थिति से उन औपचारिक आवश्यकताओं को पूरा हुआ माना जा सकता है जिनकी संविधान में परिकल्पना की गई है, तथापि सही अर्थों में वे उस जिम्मेदारी को नहीं निभा पाती हैं। इस प्रकार गरीबों के हितों की रक्षा के लिए कमजोर संस्थाओं का होना उनके हितों के विरुद्ध है। ये ऐसी संस्थाएं अन्य शक्तिशाली हितों के दबाव के सामने हथियार डाल सकती हैं और एक ऐसी व्यवस्था में, जो स्वयं आन्तरिक नियंत्रण और संतुलन की उपयुक्तता की मान्यता पर आधारित है, आड़े समय पर स्थिति के अनुरूप कमजोर वर्गों के हित की रक्षा करने के लिए योग्य न साबित हों। किसी पक्ष के कमजोर प्रतिनिधित्व से प्रतिनिधित्व न होना ज्यादा अच्छा है।

5.28 यहीं पर आकर अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए जिम्मेदार संस्थाओं की भूमिका की द्वैधवृत्ति साफ हो जाती है। व्यवस्था की उन सामान्य प्रक्रियाओं का जो इन समुदायों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है प्रभावी रूप से सामना करने के लिए एक उपकरण के रूप में उनकी भूमिका जिससे कि उसमें समुचित संतुलन सुनिश्चित किया जा सके, अभी तक सही तौर पर समझी ही नहीं गई। अधिक से अधिक ये संस्थाएं क्षति हो जाने के बाद बचाव के काम और कल्याण के कामों में संलग्न हो जाती हैं। वास्तव में परिवर्तन और विकास की प्रक्रियाओं में कमजोर वर्गों के हित विपरीत रूप से प्रभावित न हों यह सुनिश्चित करने के लिए नीति स्तर पर उनकी ओर से पहल पर यदि बेरुखी से अप्रसन्नता का इजहार नहीं तो उपेक्षा तो कर ही दी जाती है। यह दुर्भाग्य की बात है कि उनकी इस भूमिका को नकारात्मक और सकारात्मक योगदान के रूप में जिसे वे उस समता और न्याय के पक्ष में खड़े होकर अदा करते हैं, जो यह सुनिश्चित करने के लिए केवल मात्र विश्वसनीय उपाय है कि विकास की गति स्थायी हो और उसकी प्रगति सही दिशा में हो, देखने की बजाय नकारात्मक और अनावश्यक परेशानी पैदा करने वाली मानी जाती है।

5.29 उपरोक्त द्वैध वृत्ति का उत्स प्रशासनिक संरचना की प्रकृति में देखा जा सकता है। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण के लिए जिम्मेदार संस्थाओं की संरचना सामान्य और ठीक वैसी ही होती है जैसी कि अन्य वृत्तिमूलक विभागों/मंत्रालयों की होती है। परन्तु वृत्तिमूलक संगठनों में नियंत्रण की लाइनें सीधी साफ और जिम्मेदारियां स्पष्ट रूप से निर्धारित होती हैं। उनमें से प्रत्येक विभाग का कार्यवृत्त सीमित होता है जिसका आकार प्रशासनिक कार्यों के अधिकाधिक विशिष्टीकरण के साथ-साथ लगातार छोटा होता जा रहा है। इनमें से कुछ अधिक से अधिक जन समस्याओं से संबंधित होते हैं न कि किन्हीं समाजों के कल्याण से। सामान्य रूप से प्रशासन की ओर से लोगों के पास कोई नहीं जाता है वरन् लोगों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे उस व्यवस्था के साथ सम्पर्क साधें। स्पष्ट रूप से ऐसी व्यवस्था अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के कल्याण और प्रगति के लिए अनुपयुक्त है जिसे विशुद्ध औपचारिक रूप में, उदाहरण के लिए विकास कार्यक्रमों के एक समुच्चय के रूप में, पूरी तरह से पारिभाषित नहीं किया जा सकता है। आम तौर पर कमजोर वर्गों में भी जो वर्ग बेहतर स्थिति में और अधिक ताकतवर होते हैं, वे ही न केवल कल्याण योजनाओं का लाभ उठाने में वरन् अपनी समस्याओं के निवारण के लिए प्राधिकारियों के पास पहुंचने में भी वे ही समर्थ होते हैं। अधिकांश गरीब लोग सभी तरह के शोषण को भाग्य के लेख जैसा मान लेते हैं और उनको जैसे-तैसे सहन करते हुए जिन्दगी बिताने की स्थिति से समझौता कर लेते हैं।

5.30 इसलिए ऐसे लोगों के कल्याण से संबंधित किसी विभाग का काम किसी भी पैमाने पर अत्यन्त दुष्कर कार्य है। केन्द्रीय कल्याण मंत्रालय के दायित्व के बारे में विचार करते हुए जिसका कार्य क्षेत्र देश के उस एक चौथाई लोगों के लिए समता और न्याय सुनिश्चित करने से संबद्ध है, जो न केवल गरीबी की विभीषिका का सामना कर रहे हैं, अपितु उन पूर्वाग्रहों के विरुद्ध भी संघर्ष कर रहे हैं जो परम्परागत सामन्तवादी व्यवस्था और आधुनिक विकास की मीमांसा दोनों की ही गहराई में बसे हुए हैं मन विस्मय और प्रशंसा की मिश्रित भावना से भर जाता है। उस केन्द्रीय मंत्रालय और संबंधित राज्यों के विभागों को अंततः यही सुनिश्चित करना होता है कि अनगिनत संस्थाओं और संगठनों के द्वारा लिए गए अनगिनत लघु छोटे और बड़े क्रियाकलाप उस व्यक्ति की समझ में आएं जिसकी भलाई के लिए उनकी सेवा की उनसे आशा की जाती है। यह सुविदित है कि किसी बड़ी मशीन के पुर्जों की डिजाइन में छोटी सी भी भूल अथवा उनके चलने में थोड़ी सी भी विसंगति हो जाने पर पूरा प्रयास ही व्यर्थ हो सकता है अथवा वह उस व्यक्ति के लिए एक भार भी बन सकता है जिसकी सेवा करने की उससे आशा की जाती है। प्रशासन में समन्वय एक अप्रिय शब्द है। अतः सवाल यह है कि क्या जिम्मेदार मंत्रालय/विभाग के पास आवश्यक समन्वय करने के लिए और अपेक्षित नेतृत्व प्रदान करने के लिए पर्याप्त प्रतिष्ठा है जिससे उन अनगिनत छुट पुट प्रयासों का इकजाई किया जा सके और उनके वांछित परिणाम मिल सकें। इस संबंध में सामान्यतः यही कहा जा सकता है कि ऐसा नहीं है।

5.31 यहां पर आकर इस बात की ओर ध्यान देना जरुरी है कि राज्यों के आदिवासी और हरिजन कल्याण विभाग और केन्द्रीय मंत्रालय आरम्भ में मुख्यतः पिछड़े वर्गों के कल्याण नामक कार्य-क्षेत्र के अधीन कल्याण के कुछ थोड़े से ही कार्यक्रमों से संबंधित थे। पांचवीं योजना के दौरान आदिवासी विकास के लिए और छठी योजना के दौरान अनुसूचित जातियों के विकास के लिए नई कार्य-नीति स्वीकार कर लिए जाने के बाद उनकी जिम्मेदारियों के दायरे में मूलभूत परिवर्तन हुआ। किन्तु, उनके काम करने का ढंग मोटे तौर पर जैसे का तैसा बना रहा है। इस नई कार्य नीति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व यह है कि अनुसूचित जातियों और जन-जातियों के कल्याण और प्रगति का एक राष्ट्रीय कार्य है और सभी विभागीय प्राधिकारी उन से संबंधित इन सभी बातों के लिए

जिम्मेदार हैं जो उनके क्षेत्राधिकार में आते हैं। इस नई व्यवस्था में आदिवासी और हरिजन कल्याण विभागों से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि विकास के पहले दौर की तरह इस नए दौर में भी वे विशिष्ट योजनाओं के क्रियान्वन के लिए सीधे-सीधे जिम्मेदारी लें। उन्हें यह सुनिश्चित करने की और भी बड़ी जिम्मेदारी लेनी थी कि अन्य सभी अभिकरण अपने-अपने काम को गंभीरता से लें और इससे सभी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि वे स्वयं सभी परिस्थितियों में विशेष रूप से उस समय जब राज्य की व्यवस्था से ही टकराव की स्थिति में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के सदस्यों के साथ कंधा मिलाकर खड़े हों। तथापि, इस भूमिका के समुचित अहसास के अभाव में जैसे-जैसे आदिवासी तथा हरिजन कल्याण के कार्यक्रमों में निवेश का स्तर पांचवीं योजना के बाद तेजी से बढ़ा। इन विभागों ने विभिन्न विभागीय कार्य क्षेत्रों में अपनी सीधी जिम्मेदारी बढ़ाने की बात को बेहतर माना और इसी के अनुसार काम आगे बढ़ा। इसके फलस्वरूप विभिन्न विभागों के क्षेत्राधिकारों में दुहराव है और उनकी जिम्मेदारियों में अस्पष्टता आती गई है, जिसका सबसे उल्लेखनीय उदाहरण **मध्य प्रदेश**, **उड़ीसा** और **महाराष्ट्र** में शिक्षा और विपणन की प्रशासनिक व्यवस्था है। इसका परिणाम होता है नियंत्रण में शिथिलता और स्थापना के ऊपरी खर्च में बढ़ोतरी और फिजूलखर्ची। इसके अलावा जो और भी खराब है, जब संबंधित विभाग जैसे शिक्षा विभाग जो उस विषय में विशेषज्ञ विभाग है, स्वयं को पूरी तरह आदिवासी शिक्षा के लिए जिम्मेदार और उसमें गहराई से जुड़े हुए नहीं महसूस करते हैं तो उस हालत में उस विषय की देख रेख और संचालन ऐसे लोगों के हाथ में चला जाता है जो उसके लिए सक्षम नहीं हैं। यह स्थिति नई रणनीति के विपरीत है और आदिवासी तथा हरिजन कल्याण विभागों द्वारा एक प्रभावी नाभिकीय प्राधिकरण और कमजोर वर्गों तथा प्रभावित लोगों के प्रवक्ता की महत्वपूर्ण भूमिका अपनाने में बाधक साबित हुई है। उपरोक्त द्वैध-वृत्ति का अपरिहार्य परिणाम हुआ है एक दुष्ट चक्र का निर्माण। ये विभाग कमजोर रहे हैं और वे संविधान के द्वारा सौंपे गए भारी दायित्वों का निर्वाह करने के लिए संसाधन सम्पन्न तक नहीं हैं। संबंधित संस्थाओं की सही भूमिका के महत्व को न समझने और बड़ी चुनौतियों का सामना करने के लिए उनमें आवश्यक अधिकारों के अभाव के संदर्भ में जहां-तहां कतिपय कार्यक्रम चलाकर, जिन्हें उनकी उपलब्धियों के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है और जिनके आधार पर उपयुक्त रिपोर्टें तैयार की जा सकती हैं, परितोष खोजने का प्रयास करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि ये विभाग पदस्थापना की दृष्टि से प्रतिष्ठित या गौरवगरिमा वाले नहीं होते हैं। अतएव इन विभागों में पदस्थापना प्रशासनिक अधिकारियों की अपनी प्राथमिकता में कुछ विशिष्ट अपवादों को छोड़कर ऊंची नहीं होती है। तथापि संवेदनशील लोग इन विभागों के पदक्रम में निचला दर्जा होने पर भी उनमें पदस्थापना वरण करते हैं। परन्तु ऐसे लोग जैसे ही अपनी भूमिका को सही परिप्रेक्ष्य में रखने का और उसके अनुसार काम करने का प्रयास करते हैं वैसे ही वे अपने को बेतुकी स्थिति में पाते हैं। जब वे अधिक कष्टदायक हो जाते हैं तो उन्हें आसानी से बदल दिया जाता है। केवल **आन्ध्र-प्रदेश** ही एक ऐसा राज्य है कि जहां आदिवासी क्षेत्रों में और अनुसूचित जातियों से विकास से संबद्ध पद कुछ सिविल सेवाओं में समवर्गीय सम्मान का चिह्न बन गए हैं और उन पर नियुक्ति के लिए स्वस्थ होड़ है। अन्यथा प्रायः इन विभागों का न केवल प्रतिष्ठा के अनुक्रम में दर्जा नीचा है अपितु उनमें काम करने वाले लोगों में से बहुत से लोग उनसे अपेक्षित कठिन काम के लिए उपयुक्त भी नहीं हैं।

5.32 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए जिम्मेदार मंत्रालय/विभाग का सर्वाधिक महत्वपूर्ण काम है जन-सामान्य की भावनाओं से निरन्तर अवगत रहना और उस औपचारिक व्यवस्था, जिसका वह मंत्रालय/विभाग एक अंग है, में अन्तर्निहित पूर्वाग्रहों से मुक्त उनकी वास्तविक स्थिति की सही स्थिति की अद्यतन जानकारी रखना। यह अपेक्षा उन सामान्य प्रशासनिक विभागों के निदेशक तत्वों से कदाचित भिन्न होती है, जिनके लिए सामान्य व्यवस्था का प्रतिमान सर्वोपरि और बाध्यकारी भी होता है। परन्तु यह स्थिति विशेष रूप से आदिवासी मामले में मान्य नहीं हो सकती है जिनके बारे में स्वयं संविधान में व्यवस्था को उनकी स्थिति के अनुरूप अनुकूलित करने के लिए उपबंध है। सामान्य विभागों के मामले में नागरिकों के साथ संबंध राजनीतिक कार्यपालिका के माध्यम से और विभिन्न मंचों में जनता के प्रतिनिधियों सहित गैर सरकारी व्यक्तियों के साथ विचार-विमर्श के आधार पर ही होता है। किन्तु यह सीमित विचार-विमर्श किसी संगठन में जन सामान्य की दृष्टि और उनके पक्ष को पूरी तरह से अपना लेने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकता है। इसलिए नाभिकीय विभाग को औपचारिक संगठनों की सामान्य व्यवस्था की सीमाओं के बहुत बाहर जाना होगा। यहां पर एक ऐसी व्यवस्था की जरूरत है जिसमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सामान्य सदस्यों एवं उनके कल्याण के लिए जिम्मेदार संगठनों के बीच वैचारिक आदान प्रदान विशुद्ध रूप से सरकारी और औपचारिक माध्यमों से अलग माध्यमों की मार्फत निरन्तर होता रहे।

5.33 इस संबंध में सबसे अधिक विसंगत स्थिति वहां पैदा हो जाती है जब आदिवासी लोगों को ऐसे कानूनों का कोप-भाजन बनना पड़ता है जो स्वयं असंगत हैं और संविधान की भावना के अनुरूप नहीं है। ऐसी भी स्थितियां हो सकती हैं जहां विवाद के बिन्दु लोगों के सच्चे अधिकारों से संबंधित हों पर फिर भी उन्हीं के खिलाफ शक्ति का प्रयोग किया जाए। ऐसे मामलों में आदिवासी और हरिजन कल्याण के नाभिकीय विभाग को उन लोगों की ओर से कार्यवाही करनी चाहिए और उन्हें प्रभावी संरक्षण मिल सके ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए। मैंने पहले ही एक ऐसे कानून की तत्काल आवश्यकता का उल्लेख किया है जिसमें ऐसे विवादों को निबटाने में जो मूलतः नागरिक मामलों से संबंधित हैं शक्ति के प्रयोग का निषेध हो और यदि उस प्रकार की स्थिति उत्पन्न होने की आशंका हो तो प्रशासन द्वारा कोई कदम उठाने से पहले

उसके लिए निर्दिष्ट प्राधिकारी को पहले से एक विस्तृत रिपोर्ट भेजी जाए। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को प्रभावी संरक्षण प्रदान करने के लिए और उनके कल्याण और प्रगति के लिए जिम्मेदार प्रशासन की छवि को सुधारने के लिए विधिक उपबंधों को और भी मजबूत बनाने की तत्काल आवश्यकता है। विशिष्ट रूप से ये उपबंध नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, भूमि जोतने वालों के अधिकार, न्यूनतम मजदूरी और सकल राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अवसरों में समानता से संबंधित हैं। **अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए जिम्मेदार प्रशासन को सरकार के सबसे शक्तिशाली तंत्र के रूप में गठित किया जाना चाहिए और यह काम चुनिन्दा लोगों को उनके मन, दिमाग और कौशल के गुणों के आधार पर सौंपा जाना चाहिए।**

5.34 इसलिये में यह सिफारिश करता हूं कि —

संविधान में परिकल्पित राज्य के दायित्व को पूरा करने के लिए अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और प्रगति के प्रभारी मंत्रालय के काम और उसकी संरचना का तत्काल पुनरावलोकन किया जाना चाहिए। मंत्रालय को मुख्य रूप से एक नाभिकीय प्राधिकरण के रूप में कार्य करना चाहिए और उस पर ऐसे दायित्वों का बोझ नहीं डाला जाना चाहिए जो उचित रूप से विभिन्न विषयों से संबंधित मंत्रालयों/विभागों के होने चाहियें। इस मंत्रालय को गरीबी निवारण कार्यक्रमों से संबंधित मुख्य जिम्मेदारी भी सौंपी जानी चाहिए क्योंकि यही कार्यक्रम वह आधार है जिस पर पूरक प्रयास किया जा सकता है। राज्यों और केन्द्र के कार्य संचालन के नियमों में सभी विषयों से संबंधित मंत्रालयों/विभागों के लिए यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि वे ऐसे सभी मामलों में जिनका अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए कोई निहितार्थ हो, उनके संबंध में उस मंत्रालय द्वारा अन्तिम निर्णय लिए जाने अथवा उस मामले को मंत्रिमण्डल के समक्ष विचार के लिए प्रस्तुत किये जाने से पहले नाभिकीय मंत्रालय/विभाग की सहमति प्राप्त करें। उनके संबंध में उस मंत्रालय द्वारा अन्तिम निर्णय लिए जाने अथवा उस मामले को मंत्रिमण्डल के समक्ष विचार करने के लिए प्रस्तुत किये जाने से पहले नाभिकीय मंत्रालय/विभाग की सहमति प्राप्त करें। इस तरह की एक परम्परा भी डाली जानी चाहिए कि यदि अनुसूचित जातियों और जनजातियों से संबंधित जिम्मेदार मंत्रालय का प्रभारी मंत्री, प्रधान मंत्री या मुख्य मंत्री नहीं है तो मंत्रिमण्डल में औपचारिक रूप से उनके बाद उसका अगला स्थान होना चाहिए जिससे समन्वय की जिम्मेदारियों का निर्वहन प्रभावी रूप से किया जा सके।

कुछ अन्तर्निहित सीमाएं

5.35 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए न्यायमूलक समता के लिए संस्थागत हस्तक्षेप में एक दूसरी अन्तर्निहित सीमा भी है जिसे सचेतन रूप से हल करने की आवश्यकता है। यह सीमा इस तथ्य से उत्पन्न होती है कि ये संस्थाएं उस औपचारिक व्यवस्था का एक अंग हैं जिसमें उस व्यवस्था के बाहर स्थित लोगों के विरुद्ध अन्तर्निहित पूर्वाग्रह हैं, यह व्यवस्था संगठित क्षेत्र का एक अंग है, इसलिए इस व्यवस्था के सदस्य संगठित क्षेत्र के लोगों की समस्याओं को अच्छी तरह से समझ सकते हैं जिससे प्रासंगिक रूप से उनके अपने निजी अथवा वर्ग हित भी सिद्ध होते हैं। कमजोर वर्गों के लोग जिनमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों के अधिकांश सदस्य शामिल हैं, मूल परिभाषा के अनुसार ही असंगठित क्षेत्र से संबंधित हैं। यही किंकर्तव्यता इसलिए उनके कल्याण के लिए जिम्मेदार संस्थाएं कभी-कभी ऐसा पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाती हैं अथवा अपनाने के लिए बाध्य हो जाती हैं जो न केवल इन समुदायों के हितों के विरुद्ध ही हो सकता है बल्कि घोर अन्याय भी हो सकता है।

5.36 प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार और उनके उपयोग के संबंध में व्यवस्था की धारणा, जिसका पहले जिक्र किया गया है, इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। वृहत्तर व्यवस्था की यही सामान्य धारणा अनुसूचित जातियों और जन जातियों के कल्याण और प्रगति के लिए जिम्मेदार संस्थाओं को अपने दायित्वों का उनकी सच्ची भावना के अनुसार पालन करने में बाधक है। यह सत्य है कि किसी भी संस्था के लिए संदर्भ संरचना अनिवार्य रूप से देश का कानून ही हो सकता है। इसलिए, जब तक कोई कानून हैं, सभी संस्थाओं से यह अपेक्षित है कि वे उसे अपने कार्य के लिए संगत संदर्भ संरचना के रूप में स्वीकार करें। किन्तु यहीं पर एक महत्वपूर्ण प्रश्न आ खड़ा होता है। **इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि राज्य विधानमंडल अथवा संसद द्वारा पारित किया गया कोई कानून अनिवार्य रूप में संविधान की भावना के अनुरूप ही होगा।** यह बात इस तथ्य से स्पष्ट है कि इन कानूनों को नागरिकों द्वारा चुनौती दी जाती है और कभी-कभी न्यायालय ऐसे कानूनों को असंवैधानिक भी घोषित करते है। **यह तथ्य कि कुछ ऐसे कानून हो सकते है जो आदिवासी लोगों के हितों से संगत नहीं हों, स्वंय संविधान में हैं। देश के कानूनों का अनुकूलन करने के लिए उसकी पांचवीं अनुसूची के अधीन एक अत्यधिक नमनीय और व्यापक उपबंध को सम्मिलित करके स्वीकार किया गया है। इसके साथ ही इस संबंध में जिम्मेदारी असंदिग्ध रूप से कार्यपालिका को दी गई है। इस प्रकार अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए जिम्मेदार अभिकरणों के लिए यह विशेष रूप से आवश्यक है कि उन्हें विधिक संरचना को पवित्र विधान के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं है। इन संस्थाओं के लिए संदर्भ संरचना, अनुसूचित जातियों और जनजातियों की प्रगति और कल्याण का ही होना जरुरी है।**

5.37 यह तथ्य कि अपनी इस भूमिका का प्रशासन को अहसास नहीं है, इससे स्पष्ट है कि कई असंगत कानूनों को उनके आदिवासी लोगों के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव के बावजूद अनुसूचित क्षेत्रों में लागू किया गया है। कुछ मामलों में मात्र अज्ञानता और कुछ में वस्तु स्थिति के बारे में भ्रांत धारणा इसके मूल में है। कुछ मामलों में यह राजस्व के बारे में सामान्य चिन्ता के वशीभूत होकर काम करने के कारण होता है।। यह स्थिति उस उदीयमान संदर्भ में अलबत्ता पक्षपातपूर्ण हो जाती है जिसमें वे प्राकृतिक संसाधन, जिसमें आदिवासी लोगों का सदियों से जीवन निर्वाह हुआ है और जिसे वे अधिकार पूर्वक अपना समझते हैं, सकल राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में केन्द्रीय होते जा रहे हैं।। विशिष्ट शक्ति वर्ग इन संसाधनों के संबंध में औपचारिक स्थिति को सही मानते है जिसके अनुसार उनके ऊपर राज्य का पूरा अधिकार होता है और आदिवासियों के अधिकारों को वर्जनीय भार के रूप में माना जाता है। अतः उनकी दृष्टि निवेश-उत्पादन की परंपरागत विचारणा से प्रभावित होती है और तदनुसार इन संसाधनों के प्रयोग की योजना से तर्क कानून और अर्थशास्त्रीय सिद्धांत के आधार पर बनाई जाती है।

5.38. उपरोक्त स्थिति के सन्दर्भ में अनुसूचित क्षेत्रों में विशेष रूप से पक्षपातपूर्ण स्थिति बन गई है जहां संवैधानिक आयोजना कानूनी ढांचे को स्थानीय स्थिति से संगत बनाने के लिए आवश्यक अनुकूलन की परिकल्पना करती है, वहीं इस कार्य के लिए विवेकाधिकार जो असीमित है कार्यपालिका में निहित है। इसके साथ ही अभी की हालत में इस मामले में पहल केवल कार्यपालिका द्वारा ही की जा सकती है क्योंकि एक तो लोग स्वयं इससे संबंधित प्रश्नों के स्वरूप के बारे में भी अनजान होते हैं और उनके प्रतिनिधियों की अभिव्यक्ति कदाचित नगण्य ही है। देश में अन्य प्रबुद्ध लोग विभिन्न आदिवासी अंचलों की बहुविधा स्थितियों से अपरिचित हैं। और इस पृष्ठभूमि में यदि कार्यपालिका इस महत्वपूर्ण मामले में पहल नहीं करती है तो जैसा इससे पहले अनेक संदर्भों में जिक्र किया गया है।। विधिक ढांचे और आदिवासी स्थिति के बीच विसंगति बनी रहती है। वास्तव में यह सुनिश्चित करने के लिए एक औपचारिक कार्यविधि भी तैयार नहीं की गई है कि ऐसे किसी कानून को जो आदिवासी लोकाचार से असंगत है, अनुसूचित क्षेत्र अथवा उसके किसी भी भाग पर लागू न किया जाए या उपयुक्त संशोधन के साथ लागू किया जाए। इस संबंध में ऐसे उदाहरण भी हैं जिनमें अनुपयुक्त कानून को लागू करने से लोगों में तीव्र प्रतिक्रिया हुई है।। किन्तु, बहुत करके ऐसे कानून लोग सहन करते रहते हैं यद्यपि लोगों के लिए उनके परिणाम दुखद ही होते हैं।

5.39 यहां एक विचित्र स्थिति है। इस स्थिति में किसी असंगत कानून का होना इस बात पर निर्भर नहीं है कि उसके बारे में सोच-समझकर निर्णय लिया गया है वरन इसलिए कि कार्यपालिका अपने संवैधानिक दायित्व को निभाने में असफल रही पंचम अनुसूची के क्षेत्रों के संबंध में स्थिति छठी अनुसूची के क्षेत्रों की स्थिति से नितांत भिन्न है क्योंकि छठी अनुसूची के मामले में सामान्य कानूनों को लागू करने की प्रक्रिया स्वयं संविधान में दी गई है। इसलिए ये क्षेत्र स्थानीय स्थिति से अनमेल कानूनों के रेले से बच गए हैं। पांचवीं अनुसूची के क्षेत्रों पर कानूनों को लागू करने से पूर्व इन कानूनों के उचित रूप से अनुकूलन के अभाव में, संवैधानिक आयोजना में अंतर्निहित लोगों के अंतर्निहित अधिकार अनुपलब्ध ही बने रहें हैं। इसके अलावा लोगों को ऐसे कानून का उल्लंघन करने के लिए जिसमें उनका कोई दोष ही नहीं होता दण्ड भी भुगतना पड़ता है—जिसका सबसे स्पष्ट उदाहरण आबकारी कानून है। यह स्थिति कम से कम असंगत तो कही ही जा सकती है जिस पर उच्चतम स्तर पर तत्काल विचार किया जाना चाहिए और सहज न्याय के हित में उच्चतम न्यायालय का ध्यान भी जाना चाहिए जो ऐसे निदेश जो ऊपर वर्णित परिस्थितियों में उपयुक्त समझे जाएं, देने पर विचार करें।

5.40 इसलिये मैं सिफारिश करता हूं कि—

(1) सामान्य कानूनों को अनुसूचित क्षेत्रों पर जिस रूप में वे हैं उसी रूप में अथवा ऐसे अनुकूलन के साथ जैसे प्रत्येक मामले में आवश्यक हो लागू करने के पहले उनके नियमित रूप से समीक्षा के लिए एक उपयुक्त कार्य-विधि प्रारंभ की जानी चाहिए।

(2) कानूनों के उचित अनुकूलन के संबंध में कार्यपालिका द्वारा काम न किए जाने से उत्पन्न दुःखद स्थिति पर उच्चतम न्यायालय द्वारा ऐसे निदेश जैसे वे उस संबंध में आवश्यक समझें देने के लिए विचार किया जाना चाहिए।

जीवन्त संपर्क और मानीटरिंग

5.41 उपयुक्त स्थिति के संदर्भ में नाभिकीय मंत्रालय/विभागों का एक महत्वपूर्ण काम ऐसी उपयक्त प्रक्रियाओं को बनाना है जिनसे उन्हें इस बात की सही जानकारी रहे कि लोगों का अपनी निजी स्थिति के बारे में क्या सोच है और सरकार उस संदर्भ में उनके लिये क्या करना चाहती है। इस सोच को ध्यान में रखते हुए जो असली और निर्णायक तत्व है मानीटरिंग की नई व्यवस्था है ही नहीं। अभी जो मानीटरिंग हो रहा है वह मात्र प्रावधान और खर्च तथा हितार्थियों संबंधी कुछ आंकड़ों तक ही सीमित है। जैसा कि अभी हम देखेंगे इन आंकड़ों से कुछ खास जानकारी नहीं मिलती है अनसूचित जातियों और जनजातियों से संबंधित अनुसंधान संस्थाओं का कामकाज नेमी बन गया है। वे अनसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और प्रगति से संबंधित महत्वपूर्ण प्रश्नों पर कोई खास प्रकाश नहीं डालते हैं।

5.42 मैं इस संबंध में सबसे सरल मदों जैसे जानकारी इकठ्ठा करने से आरंभ करूंगा। जैसा पहले उल्लेख किया गया है, अनसूचित जातियों और अनसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए, प्रावधान खर्च इत्यादि के आंकड़ों में भी अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। अधिकांश मामलों में हर बार हर मद के लिए जानकारी विशेष रूप से एकत्र करनी पड़ती है ऐसा कोई कारण नहीं है कि सभी संगठन और संस्थान अपनी सूचना के प्रवाह को इस रूप में व्यवस्थित करें जिससे अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण के लिये उनके अपने संवैधानिक दायित्व के अनुपालन जो भी वे कर रहे हैं, वह सामान्य रीति से उन्हें अपने मूल्यांकन के लिए मालूम होता जाए, जैसा कि सेवाओं में आरक्षणों के मामले में किया जा रहा है परन्तु जो समता और न्याय के जटिल प्रश्नों के एक छोटे से पहलू को ही छूता है। उदाहरण के लिए भारतीय रिजर्व बैंक भी जानकारी के सामान्य प्रवाह के रूप में वृहदाकार बहुददेशीय सहकारी समितियों संबंधी सूचना और शिक्षा मंत्रालय, भर्ती इत्यादि के आंकड़े एकत्र करता है। ऐसी प्रक्रिया अन्य संगठनों द्वारा भी आसानी से अपनाई जा सकती है।

5.43 अनसूचित जातियों और जनजातियों की आर्थिक स्थिति के बारे में कोई संदर्भ रेखीय आंकड़े नहीं हैं और न ही ऐसी समय-सारणियां तैयार करने का कोई प्रयास किया जा रहा है जिससे कि उनकी आर्थिक स्थिति में परिवर्तन क्रम मालूम होता रहे। विभिन्न विभागों में इस आवश्यकता के अहसास के अभाव में, उनके द्वारा किए गए गहन अध्ययनों में भी आदिवासी स्थिति की असलियत की बात महज इस कारण से रह जाती है कि सामान्य अध्ययनों के लिए अपनाए गए आम मानक आदिवासी स्थिति के सही जायजे के लिये उपयुक्त नहीं होते हैं। उदाहरण के लिए आदिवासी क्षेत्रों की प्रमुख फसलों को कृषि संबंधी सांख्यिकीय आंकड़ों के मानक प्रोफार्मा में "अन्य" फसलों के अन्तर्गत इकट्ठाई करके रख दिया जाता है। और यह प्रक्रिया ठीक सी है क्योंकि कुल मिलाकर ये फसलें देश के सकल कृषि उत्पादन का एक छोटा सा हिस्सा होती है। किन्तु ऐसे आंकड़े आदिवासी अर्थव्यवस्था के विस्तृत आयोजन की बात अलग उसकी प्रारंभिक समीक्षा के लिए भी किसी काम के नहीं हैं। स्थानीय स्थितियों में महत्वपूर्ण वैभिन्य और परिवर्तन जो आदिवासी क्षेत्रों के विशिष्ट लक्षण हैं, विकास खंड के स्तर पर भी तत्संबंधी आंकड़ों को जोड़कर औसत के रूप में प्रस्तुत की जाती है जिससे वह वैभिन्य अदृश्य हो जाता ह और क्षेत्रीय वास्तविकता के बारे में सही जानकारी का लोप हो जाता है। इसी तरह समाज सेवाओं के ग्राम-वार विवरणों से उनकी सही स्थिति के बारे में इसलिये कोई जानकारी नहीं दे पाते हैं क्योंकि आदिवासी लोगों के लिए सामाजिक सेवाओं को उपलब्ध कराने के लिये असली इकाई गांव न होकर पारा होता है और एक गांव में कहीं कहीं तो विशाल क्षेत्र में फैले बीसियों पारे होते हैं। इसी प्रकार हर पांच साल के बाद अत्यन्त विस्तृत कृषि संगणना के बावजूद आज तक झूम खेती संबंधी प्रामाणिक सूचना, यहां तक कि ऐसे आदिवासी लोगों की संख्या के बारे में भी जो पूर्णतः अथवा आंशिक रूप से झूम पर निर्भर हैं, उपलब्ध नहीं हैं

5.44 अतः मैं यह सिफारिश करता हुं कि --

(1) भारत सरकार को वर्ष 1989 के लिए देश में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों के बारे में एक ऐसा स्थिति-पत्र तैयार करना चाहिए, जिसमें नमूना-सर्वेक्षणों और गहन अध्ययनों के आधार पर अनुसूचित जातियों और जनजातियों तथा देश के विभिन्न भागों में अन्य लोगों के विकास के स्तरों के बीच अन्तर के बारे में एक अनुमान भी दिया जाय। इसे आने वाले वर्षों में विकास के स्तर का निर्धारण करने के लिए बेंच-मार्क के रूप में उपयोग में लाया जाना चाहिए।

(2) इस बेंच मार्क सर्वेक्षण के बाद हर साल एक सरसरा आर्थिक सर्वेक्षण किया जाय जिसका उद्देश्य परिवर्तन को दिशा पर नजर रखना होना चाहिए।

(3) इस सम्बन्ध में अगला व्यापक अध्ययन आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष में किया जाना चाहिए। जिसका उद्देश्य उपलब्धियों का निर्धारण कमियों का आकलन और अगली पंचवर्षीय योजना में उनको प्रगति के लिए प्रयासों का निर्धारण होना चाहिए।

(4) प्रत्येक वृत्तिमूलक मंत्रालय को अपने-अपने दायित्वों के क्षेत्रों के परिप्रेक्ष्य में अनुसूचित जातियों और जन-जातियों की आर्थिक स्थिति के बारे में एक स्थितिपत्र तैयार करना चाहिए।

(5) प्रत्येक मंत्रालय में सामान्य जानकारी के प्रवाह की समीक्षा की जानी चाहिए और उसे उपयुक्त रूप से पुन-रीक्षित किया जाना चाहिए जिससे अनुसूचित जातियों और जनजातियों से संबंधित आवश्यक सूचना सामान्य प्रवाह के रूप में उपलब्ध होती रहे।

(6) बेंचमार्क सर्वेक्षण, पंचवर्षीय व्यापक सर्वेक्षण और सर-सरे वार्षिक सर्वेक्षण की जिम्मेदारी, राष्ट्रीय नमना सर्वेक्षण संगठन को सौंपी जानी चाहिए जिसके पास आवश्यक कौशल है। इस संबंध में राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन को राज्यों के आदिवासी और हरिजन अनुसंधान संस्थानों सहित विभिन्न संगठनों द्वारा उपयुक्त सहायता दी जानी चाहिए।

अनुसूचित क्षेत्रों में शांति और अच्छा शासन

5.45. ऊपर सुझाए गए उपाय अनुसूचित जातियों और जनजातियों से संबंधित सामान्य मामलों को निपटाने के लिए आवश्यक हैं। किन्तु अनुसूचित क्षेत्रों में रहने वाले आदि-

वासी लोगों की अनन्य स्थिति है जिसका इससे पूर्व अनेक प्रसंगों में उल्लेख किया गया है। उनके मामले में संबंधित क्षेत्रों में शांति और अच्छे शासन के सवाल निर्णायक हैं और वही पांचवीं अनुसूची के केन्द्रीय विषय भी हैं। यह खेद की बात है कि आदिवासी लोगों के लिए संवैधानिक सुरक्षणों के प्रसंग में सबसे बड़ी चूक इसी महत्वपूर्ण मामले में रही है। इसके परिणामस्वरूप आदिवासी क्षेत्रों में स्थिति अच्छी नहीं है। भूमि और वनों सहित संसाधनों पर नियंत्रण के प्रश्न पर पूरे आदिवासी क्षेत्रों में असंतोष सुलग रहा है। नई परियोजनाओं की स्थापना के कारण विस्थापन का आकार भीषण संकटकारी होता जा रहा है। इससे कई क्षेत्रों में टकराव की स्थिति पैदा हो गई है। फिर भी, जैसा पहले उल्लेख किया गया है, राज्यों द्वारा पांचवीं अनुसूची के उपबन्धों के अधीन प्रशासन को सुव्यवस्थित करने के लिए कोई कार्यवाही नहीं की गई है जिससे आदिवासी क्षेत्रों में शांति और अच्छे प्रशासन के लिए एक सुदृढ़ आधार उपलब्ध कराया जा सकता है। चूंकि इस संबंध में संवैधानिक उपबन्धों के अधीन उनसे अपेक्षा के अनुरूप राज्यपालों द्वारा अब तक पहल नहीं की गई है, अब यह जरूरी हो गया है कि संघ सरकार पहल करे और इस संबंध में उपयुक्त निदेश जारी करे और उनका अनुपालन भी सुनिश्चित करवाए।

5.46. आदिवासी क्षेत्रों में शांति की स्थिति जिसकी संविधान में परिकल्पना की गई है, तब तक पुन: स्थापित नहीं की जा सकती है, जब तक विरोध के मूल कारण दूर नहीं किए जाते हैं। अत: अनुसूचित क्षेत्रों में शांति और अच्छे शासन के लिए विनियम ऐसे होने चाहिएं जो सबसे पहले आदिवासी लोगों को सभी प्रकार के शोषण के विरुद्ध इसकी चिन्ता किए बिना कि शोषण के पीछे समर्थक तत्व कोई व्यक्ति, संस्था अथवा स्वयं राज्य का कानून ही क्यों न हो, प्रभावी संरक्षण सुनिश्चित करें। वे इन क्षेत्रों में ऐसे परिवेश का भी निर्माण करें जिसमें प्रतिरोधी बल पैदा हो सके जो आदिवासियों को वंचित करने वाली प्रक्रियाओं को प्रभावी रूप से रोक सकें।

5.47. निम्नलिखित कुछ बड़े विषय हैं जिनका इन विनियमों में विशिष्ट रूप से समावेश किया जाना चाहिए—

(1) ऋण और विपणन

आदिवासी अर्थव्यवस्था में शोषण का सबसे बुरा रूप सूदखोरी और विपणन का काम काज है। कुछ राज्यों ने साहूकारी की प्रथा को निषिद्ध कर दिया है और कुछ अन्य राज्यों ने आमतौर पर विनियमित किया है। **आदिवासी अर्थव्यवस्था में साप्ताहिक बाजारों के महत्व को नहीं समझा गया है। इन बाजारों में व्यापारियों के काम-काज को संप्रशासित करने के लिए कोई विनियम नहीं है।** यह अनिवार्य है कि साहूकारी की प्रथा निर्मूल कर दी जाय और उसकी जगह पूरी तौर से सहकारी ऋण की व्यवस्था की जाए। इसी प्रकार आदिवासी क्षेत्रों में विपणन के क्षेत्र में व्याप्त विभिन्न प्रकार के भ्रष्ट आचरणों जैसे खड़ी फसलों की अग्रिम खरीद को दंडनीय अपराध बनाया जाना चाहिए, साप्ताहिक बाजारों को गांव अथवा गांव समूह के स्तर पर लोगों की संस्थाओं के नियंत्रण के अधीन लाया जाना चाहिए।

(2) भूमि हस्तान्तरण

5.48. यद्यपि भूमि हस्तांतरण के विषय में विभिन्न राज्यों में कुछ विनियम बनाए गए हैं, तथापि, आदिवासी लोगों को प्रभावी संरक्षण नहीं मिल पाया है। नया विनियम पहले के विनियमों के क्रियान्वयन के अनुभव के आधार पर तैयार किया जाए और उसमें सभी संभव बचाव के रास्तों को प्रभावी रूप से बन्द किया जाए। मैं इस संबंध में अपनी पहले की सिफारिश को दोहराना चाहूँगा कि इन विनियमों में विशेष रूप से निम्न उपबन्ध किए जाएं—

(1) आदिवासियों की भूमि के गैर-आदिवासी व्यक्तियों को हस्तान्तरण पर पूरा निषेध। इस उपबन्ध में मातृसत्ता वाले समाजों को छोड़ कर सभी मामले शामिल होने चाहिएं जिसमें आदिवासी महिला ने गैर-आदिवासी व्यक्ति के साथ विवाह किया हो, जिससे लड़की से विवाह करके भूमि पर कब्जा जमाने की जघन्य प्रवृत्ति निर्मूल की जा सके, (2) विभिन्न आदिवासी समाजों के बीच विकास की गति में बढ़ते अन्तर के संदर्भ में एक आदिवासी समुदाय के सदस्यों के द्वारा दूसरे आदिवासी समुदाय के सदस्यों की भूमि के हस्तान्तरण का विनियम न किया जाना, (3) वित्तीय संस्थाओं और सरकारी अभिकरणों द्वारा अपने बकाया ऋणों की वसूली के लिए भूमि की बिक्री का निषेध और (4) भविष्य में होने वाली भूमि की सभी बिक्रियों में आदिवासी लोगों के हित में पूर्व-क्रय का अधिकार दिया जाना। आदिवासियों की भूमि गैर-कानूनी रूप से अर्जित करने को दंडनीय अपराध बनाया जाना चाहिए। इसी प्रकार आदिवासी लोगों को वापस दिलाई गई भूमियों पर फिर से कब्जा करने वाला कठोर दण्ड का भागी होना चाहिए।

(3) वनों का प्रबन्ध

5.49. इस विनियम में आदिवासी लोगों के लघु वनोपज एकत्र करने के अधिकार को असंदिग्ध रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए और उन पर राज्यों द्वारा रायल्टी लगाने का निषेध होना चाहिए। लघु वनोपज को संसाधित करने का पूरा काम आदिवासियों की सहकारी समितियों के माध्यम से होना चाहिए जिसमें यह उपबन्ध होना चाहिए कि उस प्रक्रिया में मूल्य-बढ़त का पूरा लाभ संबंधित वनोपज को जंगलों से एकत्र करने वाले लोगों को मिलना चाहिए। इस विनियम में वनों पर आधारित सभी उद्योगों में और वन साधनों के प्रबन्ध में भी आदिवासियों की भागीदारी के लिए उपबंध किया जाना चाहिए।

(4) आबकारी

5.50. इस विनियम में निम्न उपबंध होने चाहिएं—(1) सामाजिक परम्परा और राज्य के कानून के बीच विसंगति की समाप्ति और (2) गांव के स्तर पर समाज को (ग्राम पंचायत को औपचारिक संस्था को नहीं उससे अलग) व्यक्तिगत और सामाजिक प्रयोजनों के लिए परम्परागत मद्य तैयार करने का प्रबंध और नियमन करने का अधिकार। इस विनियम में ऐसी शक्तियां भी शामिल की जानी चाहिए कि समाज इसकी अवहेलना करने वालों पर दण्ड आरोपित कर सके और यदि समाज में विशेष रूप से महिलाओं ने शराब बंदी के लिये ग्राम सहमति दी तो इसे लागू कर सके। इस विनियम में औद्योगिक क्षेत्रों जैसे गैर-आदिवासी अन्तः क्षेत्रों को छोड़कर सभी आदिवासी क्षेत्रों में शराब के व्यापारिक विनियम का निषेध किया जाना चाहिए और उन अंतःक्षेत्रों में शराब की बिक्री केवल शासकीय दुकानों के माध्यम से होनी चाहिए।

अनुसूचित क्षेत्रों में अवांछित व्यक्तियों की गतिविधियां

5.51. अनेक चरित्रहीन और बेईमान लोग आदिवासी क्षेत्रों में विभिन्न तरीकों से विशेष रूप से आबकारी व्यवसाय के परनाले में से और ठेकेदारों तथा व्यापारियों के लठैतों के रूप में घुस आए हैं। इन तत्वों को संरक्षण संबंधी उपबन्ध रास नहीं आते हैं। जैसे ही प्रशासन द्वारा कोई संरक्षात्मक कार्यवाही शुरू की जाती है, वे उसे निष्फल करने के लिए नई युक्तियां ढूंढ निकालते हैं। इसके अलावा जब एक ओर उनके रास्ते बन्द हो जाते हैं वे वहां की सरल स्थिति में शोषण के लिए नए तरीके खोज लेते हैं। इसलिये नीचे लिखी बातों के लिए एक विशेष उपबन्ध किया जाना चाहिए—

(1) आदिवासी क्षेत्रों में अवांछनीय व्यक्तियों का पता लगाना, (2) उनकी गतिविधियों को नियंत्रित करना और (3) यदि स्थिति के अनुसार आवश्यकता हो तो उन्हें सरसरी कार्रवाई के आधार पर अनुसूचित क्षेत्रों अथवा उनके किसी भाग से बाहर निष्काषन की व्यवस्था। इस विनियम में प्रशासन पर यह दायित्व डाला जाय कि वह ऐसे व्यक्तियों का पता लगाए और स्वमेव उनके विरुद्ध उपयुक्त कार्यवाई प्रारम्भ करे।

आदिवासी समाज में स्व-शासन की व्यवस्था

5.52 यह एक सर्वमान्य सिद्धांत है कि अच्छा शासन स्व-शासन का विकल्प नहीं है और उसे सभी सभ्य समाजों में उस रूप में स्वीकार किया गया है। आदिवासी क्षेत्रों में जहां अपने प्रबन्ध की परम्परा अभी भी कायम है स्व-शासन ही अच्छे शासन के लिए सबसे अच्छी शर्त हो सकती है। आदिवासी क्षेत्रों में शांति-सुख के अभाव एक मूलभूत समाज की सत्ता का क्रमिक ह्रास उनकी रोजमर्रा की जिन्दगी के मामलों तक में बाहरी संस्थाओं का हस्तक्षेप और भूमि पर उनके अधिकार तथा अन्य संसाधनों के उपयोग जैसे मामलों में भी दूसरों पर बढ़ती निर्भरता। चूंकि आदिवासी क्षेत्रों में सामुदायिक जीवन की परंपरा अभी भी समृद्ध है और वे लोग अपने आंतरिक मामलों के प्रबन्ध के लिये पूरी तरह सक्षम हैं, इसलिये यही सबसे अधिक उपयुक्त होगा कि उनकी इस परम्परा और प्राधिकार का क्षरण न होने दिया जाए। इससे इन समाजों में चारो ओर से आने वाली नई चूनौतियों का सामना करने के लिए आत्मविश्वास की भावना जागृत होने में सहायता भी मिलेगी और यह उनके सुन्दर काव्यात्मक परिवेश को बनाए रखने में भी सहायक होगा।

5.53 उपरोक्त स्थिति को देखते हुए जिन्दगी का जितना बड़े से बड़ा दायरा संभव हो सकता है उसे स्थानीय संस्थाओं जिनका विशेष रूप से गठन किया जाय, के क्षेत्राधिकार में लाया जाना चाहिए। ये संस्थाएं किसी उच्च स्तरीय प्राधिकार, चाहे वह प्रशासनिक हो या गांव के स्तर पर जनसामान्य के प्रति पूरी तरह जिम्मेदार होनी चाहिएं। इस संबंध में छठी अनुसूची के उपबन्धों को यद्यपि एक अन्तर के साथ आदर्श रूप माना जा सकता है। इस मामले में दायित्व ऐसी स्थानीय संस्थाओं को सौंपा जाय जो जिला परिषद के समान किसी औपचारिक प्रतिनिधिक संस्था के प्रति जिम्मेदार न होकर समाज के प्रति सीधी जिम्मेदार हों। इन संस्थाओं के लिए यह आवश्यक होना चाहिए कि वे खुली सभा में काम करें और ग्राम समाज को नियमित रूप से रिपोर्ट दें। उन्हें (1) भूमि और वन का प्रबन्ध, (2) शैक्षिक और स्वास्थ्य संस्थाओं सहित समाज सेवाओं की स्थापना और उनका प्रबन्ध, (3) कानून और व्यवस्था और (4) जघन्य अपराधों के सिवाय सभी आपसी मामलों में फैसले करने के लिए प्राधिकार दिया जाना चाहिए। इस विनियम में राज्य के लिए यह भी अनिवार्य किया जाना चाहिए कि वह इन सभी कार्यों के लिए उन संस्थाओं को पर्याप्त संसाधन देगा जिससे उनके प्रभावी रूप से काम करने में कोई वित्तीय रुकावटें न आयें।

एक रेखीय सरल प्रशासनिक संरचना

5.54. आदिवासी क्षेत्रों में अच्छे प्रशासन के लिए एक अन्य आवश्यक शर्त यह है कि वहां की प्रशासनिक संरचना वहां की अविशिषीकृत सरल सामाजिक आर्थिक स्थिति से संगत होना चाहिए। इसके साथ ही संबंधित अधिकारियों को सौंपे गए दायित्वों के निर्वहन के लिए उन्हें पर्याप्त शक्तियां वित्तीय तकनीकी और प्रशासनिक प्रदान की जानी चाहिए। प्रशासनिक संरचना को सरल क्रियाशील और कुशल बनाये रखने की दृष्टि से आदिवसी क्षेत्रों में पदस्थ अधिकारियों के लिये यह उपबन्ध होना चाहिये कि उनको इतर बहुविध दायित्व दिये जा सकते हैं यद्यपि उनके संगठन में जिस में वे कार्यरत हैं, उनका कार्यक्षेत्र सीमित हो। हां यह अवश्य है कि संबधित कार्यों के लिये तकनीकी आवश्यकताओं का अनूपालन जरूरी होगा। इस विनियम में नीचे दी गई बातों

के लिए कानूनी आधार बनाया जाना चाहिए—(1) विकास खंड और परियोजना के स्तरों पर जो कि आदिवासी क्षेत्रों में योजना प्रशासन के लिए आधारभूत इकाइयां हैं, नियंत्रण का एकीकरण और (2)इन स्तरों पर नाभिकीय प्राधिकारियों को सामान्य प्रशासनिक पदक्रम के बंधनों को काटते हुए आवश्यक शक्तियों से लैस करना। विकास खंड और परियोजना स्तर पर प्रशासनिक प्राधिकारणों को उन्हीं स्तरों पर उपयुक्त रूप से गठित उन निकायों के प्रति जिम्मेदार बनाया जाना चाहिए जिनमें लोगों के दोनों तरह के परम्परागत और नए नेता और उनके प्रतिनिधि सम्मिलित हों।

प्रशासनिक कर्मचारियों को अनुशासित करना

5.55. आदिवासी क्षेत्रों में प्रशासनिक कर्मचारी अपने पद के रुआब मात्र से बड़ी आसानी से बेहद अधिकार से लैस हो जाते हैं। इसके साथ ही उनमें एक दूसरे का समर्थन करने की सहज प्रवृत्ति है जिसके फलस्वरूप आदिवासी लोग छोटे कर्मचारियों के तानाशाही तौर तरीकों के सामने अपने को नितांत असुरक्षित महसूस करते हैं। यह स्थिति उन प्रगत क्षत्रों की स्थिति के विपरीत है,जहां लोगों में वाक्-चातुर्य अधिक है और वे अपने अधिकारों के प्रति सजग और उस प्राधिकार की प्रकृति को भी पहचानते हैं जिसका प्रयोग कर्मचारी कर सकता है। इस विनियम में आदिवासी क्षेत्रों में काम कर रहे कर्मचारियों के लिए एक विशेष आचरण संहिता का उपबन्ध किया जाना चाहिए। इसमें विशेष रूप से (1) कर्मचारियों और उनके संबंधियों द्वारा संपत्तियों के उपार्जन की पूरी तरह से निषिद्ध किया जाना चाहिए, (2) आदिवासी हितों के विरुद्ध किसी भी रूप में प्राधिकार के दुरुपयोग के लिए कड़े दंड का उपबन्ध किया जाए और (3) कर्मचारियों के विरुद्ध सरसरी अनुशासनिक कार्यवाई के लिए पुलिस कर्मचारियों के लिये उपवधों जैसे उपबंध किए जाएं।

5.56. ऊपर वर्णित औपचारिक परिवर्तनों के अलावा आदिवासी क्षेत्रों को अच्छा प्रशासन देने के लिए पहला बड़ा काम यह होगा कि इन क्षेत्रों में काम कर रहे कर्मचारियों को समीक्षा की जाए और जिन लोगों को उपयुक्त न पाया जाए उन्हें तुरंत वहां से हटा दिया जाए। इसके साथ ही यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि आगे से इन क्षेत्रों में तैनातियां नेमी रूप से न की जाएं और किसी भी हालत में अवांछित लोग दंड स्वरूप अथवा अन्यथा इन क्षेत्रों में न पहुंच पाएं। अवांछित तत्वों को पहचानने और भविष्य में उनके संभावित प्रवेश की रोकने के लिये एक उपयुक्त कार्य-विधि इस विनियम में एक विशिष्ट उपबन्ध के रूप में शामिल की जाए और उसके क्रियान्वयन के लिए विनिर्दिष्ट अधिकारियों पर विशेष जिम्मेदारी आयाद की जाए।

उप-संवर्गों का सृजन

5.57. कुछ राज्यों में उनके भौगोलिक क्षेत्रों का एक बड़ा हिस्सा आदिवासी क्षेत्रों के अन्तर्गत आता है। इन मामलों में अधिकारियों के लिए वह कुछ साल तक आदिवासी क्षेत्रों में अनिवार्य रूप से काम करने संबंधी उपबन्धों का कोई खास फायदा नहीं होता। अंततः कुछ अपवादों को छोड़कर केवल इच्छा से जाने वाले लोग और कुछ अवांछनीय लोग वहां रह जाते हैं। इन राज्यों के स्थिति-तर्क को देखने से यह स्पष्ट है कि आम तौर पर राज्य सेवाओं में प्रत्येक अधिकारी को अपने पूरे सेवा काम में काफी लम्बे समय तक आदिवासी क्षेत्रों में काम करना अपेक्षित होगा जब तक कि उस पर किसी की विशेष अनुकंपा न हो अथवा वे स्वयं जानबूझ कर उसे किसी तरह से टाल न सकें। इस अनिश्चितता से बहुत सी मनोवैज्ञानिक समस्याएं पैदा हो जाती हैं जो अनुसूचित क्षेत्रों में अच्छे प्रशासन के हित में नहीं है। यह आवश्यक है कि अधिकारियों की तैनाती को व्यवस्थित किया जाए। चूंकि इन राज्यों में प्रत्येक अधिकारी को आदिवासी क्षेत्रों में न्यूनतम अवधि के लिए काम करना आवश्यक है, बेहतर यही होगा कि कि वह इन दुर्गम क्षेत्रों में उस समय काम करें जब वह युवा हो और जब उसकी व्यक्तिगत जिम्मेदारियां अपेक्षाकृत कम हों। अतः इस विनियम में यह उपबंध किया जाए कि इन राज्यों की सभी प्रमुख सेवाओं में उप-संवर्ग बनाए जाएं जिनमें आदिवासी क्षेत्रों में सेवा काल के आरंभ में ही लगभग 10 वर्ष तक सेवा करने के लिए एक अनुबन्ध रखा जाए।

विकास के उलट-प्रहारों के विरुद्ध संरक्षण

5.58. अनुसूचित क्षेत्रों में अच्छे प्रशासन के लिए एक महत्वपूर्ण सहवर्ती शर्त यह सुनिश्चित करना है कि आदिवासी लोगों पर विकास के उलट-प्रहारों का असर न पड़े। आदिवासी लोगों को किसी भी प्रकार के उलट-प्रहारों से बचाने की जिम्मेदारी स्पष्ट रूप से उस उद्देश्य के लिए नामांकित अधिकारियों को सौंपी जानी चाहिए जिन्हें ऐसी कोई भी कार्रवाई करने के लिए प्राधिकृत किया जाना चाहिए जो उन लोगों का संरक्षण करने के लिए आवश्यक हो। एक ऐसा उपबन्ध भी होना चाहिये जिसके तहत उन अधिकारियों द्वारा इस कानूनी जिम्मेदारी के अनुसरण में सद्भावना से किए गए काम के आधार पर किसी व्यक्ति अथवा प्राधिकारी द्वारा उनके विरुद्ध कोई कानूनी अथवा अन्य कायवाही से पूरा संरक्षण मिले। किसी कानूनी उपबन्ध अथवा किसी आदिवासी द्वारा किए गए किसी अनुबन्ध में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी किसी भी आदिवासी पर उसके द्वारा विकास की किसी योजना के लिए लिए गए ऐसे ऋण के कारण या अन्यथा जो उसके द्वारा सद्भावना से लिया गया हो परन्तु उस योजना से वांछित लाभ नहीं मिला हो, देनदारी आयद होने का संरक्षण दिया जाना चाहिए। इससे लोगों को राज्य सहकारी

समितियों, बैंकों और अन्य संस्थाओं के कर्मचारियों के भ्रष्ट आचरणों के प्रभावों से मुक्ति मिल सकेगी। इन मामलों में प्रशासनिक प्राधिकारियों पर यह जिम्मेदारी डाली जाय कि वे उन अनुबंधों से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का आपस में मिल कर हल निकाले और उस योजना की असफलता के लिए जिम्मेदारी और तत्संबंधी देनदारी भी निश्चित करें।

5.59. संसाधनों का उपयोग और उन पर अधिकार उनके वैकल्पिक उपयोग के प्रसंग में इस अधिकार से उन लोगों को वंचित हो जाना और उनके पुनर्वास ही नहीं अपितु विकास के लाभों में भागीदारी से संबंधित प्रश्न काफी जटिल हैं। इसलिये एक अलग से व्यापक विनियम बनाया जाए जिसमें इन सभी पहलुओं का पूरी तरह समावेश हो। इस संबंध में यह विशेष रूप से आवश्यक होगा कि सार्वजनिक प्रयोजन की आदिवासी क्षेत्रों के सदर्भ में स्पष्ट परिभाषा की जाए। आदिवासी क्षेत्रों के मामले में जाहिर है कि सार्वजनिक प्रयोजन के निर्धारण के लिए अन्य हितों के समक्ष आदिवासी समाज के सापेक्षिक आकार को आधार नहीं माना जा सकता है। इसी प्रकार वे दो आधारभूत तत्व जिन पर भूमि अर्जन का कानून आधारित हैं आदिवासी समाज की स्थिति से सगत नहीं है। ये तत्व हैं—पहला यह कि भूमि विनिमय है, और उसे पैसे से तोला जा सकता है और दूसरा यह कि प्रत्येक व्यक्ति को उसकी हकदारी निर्धारित करने के प्रयोजन के लिए एक अलग इकाई के रूप में समझा जा सकता है। वास्तव में अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि अधिग्रहण अधिनियम के अन्तर्गत कार्यवाही निःसंदेह वैध है किन्तु विडंबना यह ह कि उसके चलते आदिवासी असुरक्षित हो गए हैं और संविधान में प्रदत्त सुरक्षणों से कार्यरूप में वंचित हो गए हैं। इस प्रश्न पर विशेष रिपोर्ट में विस्तार के साथ चर्चा की जाएगी।

5.60 इसलिये मैं सिफारिश करता हूं कि—

सभी संबंधित राज्यों को तत्काल अनुसूचित क्षेत्रों में शान्ति तथा अच्छे प्रशासन के लिए व्यापक विनियम तैयार करने चाहिएं। इस विनियम में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित के लिये भी उपबंध शामिल किए जाने चाहिएं—

(1) अनुसूचित क्षेत्रों में एक रेखीय प्रशासनिक संरचना की स्थापना,

(2) सभी राज्य सेवाओं में आदिवासी क्षेत्रों के लिए उप-संवर्गों का निर्माण,

(3) सरकारी कर्मचारियों के लिए एक विशेष आचरण संहिता जिसमें सरसरी अनुशासनिक कार्यवाहीं का उपबंध हो,

(4) ग्राम स्तर पर उपयुक्त संस्थाओं का गठन किया जाना जो स्व-शासन के लिए स्थानीय परम्पराओं के अनुरूप सीधे लोगों के प्रति उत्तरदायी हों। य संस्थाएं दिन प्रतिदिन के कार्य, जिसमें भूमि तथा वन आबकारी, शान्ति बनाए रखना तथा जघन्य अपराधों के अलावा सभी विवादों के निपटारे का प्रबन्ध शामिल है, के लिए जिम्मेदार होनी चाहिएं,

(5) साप्ताहिक बाजारों का विनियमन,

(6) अवांछनीय लोगों के कार्यों पर निगरानी तथा

(7) विकास के उलट प्रहारों के विरुद्ध संरक्षण।

अनुसूचित क्षेत्रों में प्रशासन की स्थिति की समीक्षा

5.61. अनुसूचित क्षेत्रों में शान्ति और अच्छे प्रशासन के विनियम अपने आप में तब तक अपर्याप्त रहेंगे जब तक अनुसूचित क्षेत्रों में प्रशासन की समीक्षा की प्रणाली को भी पूरी तरह से व्यवस्थित नहीं किया जाता। इस समय अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन पर राज्यपालों की रिपोर्टों में विभिन्न गतिविधियों का विशेष रूप से इन क्षेत्रों के कल्याण विभागों की गतिविधियों का वर्णन मात्र शामिल होता है। उनमें वहां के आम आदमी से संबंधित शान्ति तथा अच्छे प्रशासन के मूलभूत प्रश्नों को उठाया ही नहीं जाता है। इन रिपोर्टों की राष्ट्रीय स्तर पर कोई समीक्षा नहीं की जाती है। सच तो यह है कि अच्छा प्रशासन क्या है इसकी संकल्पना तथा राज्यपाल द्वारा रिपोर्ट में क्या क्या सम्मिलित करना चाहिए यह भी स्पष्ट नहीं है, इस प्रक्रिया के न होने से अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर को राज्य के दूसरे क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर के बराबर लाने के संबंध में संविधान के अनुच्छेद 275 (1) के प्रथम परन्तुक के विशिष्ट उपबंध भी निष्प्रभावी बने हुए हैं।

5.62. विडम्बना यह है कि यही वह विशिष्ट संवैधानिक उपबन्ध था जिसके कारण अनुसूचित क्षेत्रों में प्रशासन की स्थिति का महत्वपूर्ण प्रश्न वित्तीय आयोग के क्षेत्राधिकार से बाहर रखा गया था। द्वितीय वित्त आयोग द्वारा उन दो परन्तुकों में विनिर्दिष्ट पहलुओं से संबंधित अपने कार्य के आयाम के बारे में उठाए गए एक प्रश्न के लिये दिये गए स्पष्टीकरण में निष्कर्ष रूप में यह कहा गया था कि "इस प्रकार खण्ड 1 के परन्तुकों का प्रभाव यह है कि उसके मुख्य भाग के अन्तर्गत संसद को प्रदत्त शक्तियों को वापिस लेते हुए उस खण्ड में एक अपवाद उत्कीर्ण कर दिया गया। यह भी कहा गया था कि "राज्य के लिए इस बात की छूट है कि वह योजनाओं को पांच वर्ष की अवधि में एक बार जब कि संविधान के अनुच्छेद 280 के अधीन सामान्य रूप से वित्त आयोग का गठन किया जाता है, प्रायोजित करने की बजाय कभी भी प्रायोजित कर सकते हैं।" दूसरे शब्दों में योजनाओं का अनुमोदन तथा उनके लिए वित्तीय सहायता की मंजूरी समानान्तर कार्यवाही है और चूंकि यह निरन्तर प्रक्रिया है इसलिए यह उपयुक्त है कि इन मामलों में वित्त आयोग को बीच में लाए बगैर भारत सरकार तथा राज्य सरकारों के बीच कार्यवाही किए जाने के लिए छोड़ दिया.

जाए और एक ऐसा मामला जिसके बारे में यह सोचा गया था कि बेहतर होगा कि उसे एक निरन्तर प्रक्रिया के हिस्से के रूप में भारत सरकार तथा राज्य सरकारों के बीच कार्यवाही किए जाने के लिए छोड़ दिया जाए, उनके बीच में विचार के लिये एक बार भी नहीं प्रस्तुत हो पाया, क्योंकि राष्ट्र के द्वारा संविधान अपनाए जाने के 38 वर्ष के बाद भी वह प्रक्रिया अभी शुरू नहीं हो पाई है।

5.63. अनुच्छेद 279 के मुख्य उपबन्ध के एक अंग के रूप में आदिवासी क्षेत्रों को विशेष समस्याओं पर विचार न करने का वित्त आयोग का निर्णय संविधान की भावना के अनुरूप नहीं था। आदिवासी लोगों के कल्याण तथा प्रगति के लिए सामान्य आयोजना के अनुरूप उक्त अनुच्छेद के प्रथम परन्तुक के अधीन उपबन्ध सभी प्राधिकारियों तथा संस्थाओं द्वारा अपने क्षेत्राधिकार के अधीन सामान्य गतिविधियों के एक अंग के रूप में किए गए सामान्य प्रयास के अलावा एक अनुपूरक के रूप में है। सातवें वित्त आयोग ने इस स्थिति में आंशिक ही सही, पर कुछ सुधार किया है। गृह मंत्रालय तथा राज्य सरकारों ने पहली बार आदिवासी क्षेत्रों को विशेष समस्याएं उनके सामने इस अनुरोध के साथ प्रस्तुत की थीं कि अनुच्छेद 279 के मुख्य उपबन्ध के अधीन राज्यों के सामान्य अधिनिर्णय के एक भाग के रूप में अतिरिक्त प्रावधान किया जाए। आयोग ने इस दृष्टिकोण को स्वीकार कर लिया। तथापि, उन्होंने आवास निर्माण तथा इन क्षेत्रों में काम करने वाले कर्मचारियों की वित्तीय तथा अन्य प्रतिकूल स्थितियों को देखते हुए क्षतिपूर्ति भत्ते के लिए केवल अल्प राशि की ही स्वीकृति की, उन्होंने अन्य अनुरोधों को इसलिये स्वीकार नहीं किया था क्योंकि वे "उन प्रस्तावों के लिए दिए गए तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ थे।" आठवें वित्त आयोग ने क्षतिपूर्ति भत्ते तथा आवास निर्माण के लिए प्रावधान करने के अलावा अवस्थापना सुविधाओं के लिए भी प्रावधान किया। एक और आयोग ने यह स्वीकार किया कि "आदिवासी क्षेत्रों में जीवनयापन की परिस्थिति काफी कष्टप्रद है"। दूसरी ओर उन्होंने जरूरी प्रावधान की राशि के निर्धारण करने में बाधा महसूस की थी, क्योंकि "आदिवासी क्षेत्रों में कार्य कर रहे उन सरकारी कर्मचारियों की संख्या के बारे में कोई विस्तृत आंकड़े नहीं मिल रहे हैं जिन्हें क्षतिपूर्ति भत्ते की स्कीम के अन्तर्गत अभी शामिल किया जाना शेष है।" जाहिर है कि यह टिप्पणी अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन की गुणवत्ता के लिए राज्यों की चिंता के बारे में भली नहीं है।

5.64 यह प्रतीत होता है कि वित्त आयोग द्वारा अनुच्छेद 275 के प्रमुख खंड के अधीन धनराशि के आबंटन से उस अनुच्छेद के प्रथम परन्तुक के अधीन विशेष आबंटन के बारे में कुछ गलतफहमी हुई है। यद्यपि इस अन्तर को भारत सरकार द्वारा सातवें वित्त आयोग के समक्ष अपने ज्ञापन में स्पष्ट रूप से रखा गया था। उसमें यह कहा गया था कि उन प्रस्तावों को अनुसूचित क्षेत्रों में "प्रशासन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए एक दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य के एक भाग" के रूप में समझा जा सकता था। आगे यह भी जोड़ा गया था कि "इसे निश्चित करने के लिए वित्त आयोग द्वारा पूरक धनराशि प्रदान करने के लिए तथा अनुच्छेद 275 (1) के प्रथम परन्तुक के अनुसरण में अन्य कमियों का पता लगाने के लिए लगातार समीक्षा करना आवश्यक होगा। इस आवधिक समीक्षा से अगले वित्त आयोग के समक्ष आदिवासी स्थिति अधिक स्पष्ट रूप से प्रस्तुत की जा सकेगी।" परन्तु यह वायदा भी मात्र एक इरादा ही बना रहा। एक ओर विशेष संवैधानिक उपबन्ध लम्बी अवधि तक प्रभावहीन बने रहे और दूसरी ओर आठवें वित्त आयोग के सामने भी आदिवासी क्षेत्रों का मामला बहुत कुछ बिना प्रस्तुत किए ही रह गया क्योंकि जब उस ज्ञापन में आधारभूत सांख्यिकीय आंकड़ों तक का अभाव था तो फिर गुणवत्ता के पहलुओं और अन्य बारीकियों की बात ही अलग है, जिनके लिए संविधान की परिकल्पना के अनुरूप इन क्षेत्रों में "शान्ति और अच्छा प्रशासन" सुनिश्चित करने के लिए प्रशासन को समर्थ बनाने के लिए तैयार किए जाने चाहिएं थे। द्वैधवृत्ति की इस स्थिति को तत्काल संभालने की आवश्यकता है।

5.65 इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि

यद्यपि, संविधान के अनुच्छेद 275 (1) के प्रथम परन्तुक में वर्णित "अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन का स्तर उस राज्य के शेष क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर तक उन्नत करने" से संबंधित विशिष्ट प्रश्न वित्त आयोग के क्षेत्राधिकार से बाहर है, तथापि भारत सरकार आगे से अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन को वित्त आयोग के विचारार्थ विषयों में एक विशेष विषय के रूप में शामिल करे जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि इन क्षेत्रों के प्रशासन की साधारण आवश्यकताओं का, जो कि स्तर को ऊंचा करने के लिए आवश्यकताओं से अलग उनकी विशिष्ट स्थिति को ध्यान में रखते हुए अलग से निर्धारण किया जाए और उनके लिए पर्याप्त प्रावधान किया जाए। अनुसूचित क्षेत्रों का मामला वित्त आयोग के समक्ष व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने के लिए भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों को उपयुक्त मार्गनिर्देश भी जारी किए जायें जिनमें उन पहलुओं का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया जाए, जिन पर वित्त आयोग द्वारा विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता हो।

5.66 शान्ति बनाए रखने और आदिवासी लोगों को प्रतिकूल बलों तथा विकास के उलट-प्रहारों के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करने के लिए अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन की समीक्षा निर्णायक है। इन लोगों के कल्याण और प्रगति के लिए वही एक मात्र विश्वसनीय और दृढ़ आधार हो सकता है ऐसे महत्वपूर्ण पहलू को हर राज्य की अपनी जैसी

तैसी नेमी प्रक्रियाओं के भरोसे पर नहीं छोड़ा जा सकता है। इस मामले में केन्द्र सरकार की विशेष जिम्मेदारी है। अनुसूचित क्षेत्रों के संबंध में राज्यों की कार्यपालिका शक्तियां उतनी व्यापक नहीं हैं जितनी अन्य क्षेत्रों के लिए और वे पांचवीं अनुसूची के उपबन्धों के अधीन हैं। केन्द्र सरकार के पास राज्यों को अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के बारे में निदेश जारी करने की शक्ति है और उसका निहितार्थ है कि केन्द्र सरकार पर उसके प्रशासन के बारे में भारी जिम्मेदारी भी आयद की गई है। संघ सरकार की इस जिम्मेदारी के एक पहलू के लिए, अर्थात प्रशासन के स्तर को उन्नत करने के लिए आवश्यक निधियों के संबंध में जिसकी ऊपर चर्चा की गई है, संविधान में ही उपयुक्त उपबन्ध किया गया है।

5.67 चूंकि प्रशासन की गुणवत्ता, आदिवासी लोगों के कल्याण और प्रगति की कुंजी है, इसलिए यही उचित होगा कि उसका मूल्यांकन एक उपयुक्त और सतत प्रक्रिया के रूप में होना चाहिए। उदाहरण के लिए, प्रशासन की समीक्षा हर साल राज्य की वार्षिक योजनाओं पर विचार-विमर्श से पहले परन्तु स्वतन्त्र रूप से की जा सकती है। अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन की राज्य स्तर पर और केन्द्र के स्तर पर भी समीक्षा के लिए एक स्पष्ट कार्यविधि स्थापित की जानी चाहिए।

5.68 उन सभी राज्यों जिनमें अनुसूचित क्षेत्र हों को यह निर्देश दिया जाए कि वे उन दिशा निर्देशों के अनुसरण में जो राज्यों के परामर्श से इस प्रयोजन के लिए बनाए जाएं, अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन पर प्रारम्भिक रिपोर्ट तैयार करें। अच्छे प्रशासन की संकल्पना की व्याख्या विभिन्न गुणात्मक और मात्रात्मक मानकों के आधार पर स्पष्ट रूप से की जाए। अनुसूचित क्षेत्रों के अच्छे प्रशासन के लिए पहले बताए गए विनियमों और प्रत्येक मामले में आवश्यकता के अनुसार कुछ अन्य पूरक तत्वों को इस चर्चा के लिए आधार माना जा सकता है। प्रारम्भिक रिपोर्ट के साथ एक वित्तीय ज्ञापन भी आना चाहिए जिसमें ऐसी मदों के लिए निधियां शामिल की जाएं जो अनुच्छेद 275 (1) के प्रथम परन्तुक के अनुसार प्रशासन का स्तर ऊंचा करने के लिए आवश्यक हों। प्रारम्भिक रिपोर्ट प्रत्येक वर्ष विहित तारीख तक केन्द्र सरकार को प्रस्तुत की जानी चाहिए उस पर शासकीय स्तर की एक समीक्षा समिति में विचार किया जाए, जिसमें अन्य लोगों के साथ-साथ आदिवासी विकास के प्रभारी नाभिकीय मंत्रालय, योजना आयोग, गृह मंत्रालय और कार्मिक विभाग के प्रतिनिधि शामिल हों। राज्य सरकार समीक्षा समिति के विवेचन के प्रकाश में प्रशासनिक रिपोर्ट को उपयुक्त रूप से पुनरीक्षित करे। राज्य सरकार की यह पुनरीक्षित रिपोर्ट अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन पर राज्यपाल की उस रिपोर्ट के लिए आधार के रूप में इस्तेमाल की जाए जिसे बाद में उपयुक्त रीति से राष्ट्रपति को प्रस्तुत किया जाए। राज्यपालों की इन रिपोर्टों पर आगे की पूरी कारवाई नाभिकीय मंत्रालय द्वारा की जानी चाहिए और वही उसे मंत्रिमंडल समिति के सामने जो अन्य बातों के साथ-साथ अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन की समीक्षा के लिए विशेष रूप से गठित की गई हो, प्रस्तुत करने के लिए जिम्मेदार हो। यह समिति संबंधित राज्य के मुख्य मंत्री के साथ इस रिपोर्ट पर विशेष चर्चा भी करे। वित्तीय ज्ञापन की सभी मदों के लिए जिन पर परस्पर सहमति हो, उस संबंध में संवैधानिक उपबन्धों के अनुसार राज्यों को पूरी सहायता दी जानी चाहिए। देश के सभी अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन की स्थिति की एक व्यापक समीक्षा राज्यपालों के सम्मेलन के सामने और अन्त में संसद के सामने प्रस्तुत की जानी चाहिए।

5.69 इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि--

संविधान की पांचवीं अनुसूची के अधीन अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन पर राष्ट्रपति को प्रस्तुत की गई राज्यपाल की रिपोर्ट के आधार पर भारत सरकार की एक मंत्रिमंडलीय समिति इसी प्रयोजन के लिए विशेष रूप से गठित की जाए जिसके द्वारा अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन की वार्षिक समीक्षा की जानी चाहिए। राज्यपाल की प्रशासन की रिपोर्ट पैरा 5.68 में दिए गए सुझाव के अनुसार तैयार की जानी चाहिए। इस रिपोर्ट के साथ वित्तीय ज्ञापन भी दिया जाना चाहिए जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ ऐसे वित्तीय प्रावधानों का विवरणपत्र भी दिया जाना चाहिए जो अनुसूचित जाति क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर को उठाने के लिए आवश्यक हो।

5.70 मैं इसके अलावा यह भी सिफारिश करता हूं कि--

चूंकि वित्त आयोग ने अनुसूचित क्षेत्रों में कार्यरत कर्म-चारियों को वहां की कठिन परिस्थितियों में काम करने के लिए क्षतिपूर्ति और उनके लिए भौतिक सुविधाओं और अन्य प्रकार के प्रोत्साहन देने की आवश्यकता स्वीकार कर ली है अतएव इन सब बिन्दुओं को समाहित करते हुए एक व्यापक योजना बनाने की आवश्यकता स्थापित हो गई है। अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए प्रथम कदम के रूप में केन्द्रीय सरकार को राज्य सरकारों के साथ परामर्श करके श्रेणीबद्ध क्षतिपूर्ति और प्रोत्साहन की एक व्यापक योजना तैयार करनी चाहिए जिसमें क्षतिपूर्ति और प्रोत्साहन की मात्रा निर्धारित करने के लिए तैनाती के स्थान पर दुर्गमता, सामाजिक सेवाओं की उपलब्धि का स्तर, जलवायु और ऐसे ही अन्य कारक को हिसाब में लिया जाना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए आवश्यक राशियां भारत सरकार द्वारा अनुच्छेद 275 (1) के प्रथम परन्तुक के अधीन अपने दायित्वों के अनुसरण में प्रदान की जानी चाहिए।

6.
जनसामान्य और उसकी संस्थाएं

जन संघटन

संस्थागत संरचना को सुदृढ़ करने और उसे उपयुक्त रूप से साधनों से लैस करने की जरूरत को जितना भी बल दिया जाए वह ना काफी है। परन्तु इसके साथ ही यह स्पष्ट है कि कैसी भी बाहरी सहायता लोगों की उन समस्याओं का स्थायी हल नहीं हो सकती हैं जो हितों के विरोध और अपने-अपने पक्ष के प्रति अंध श्रद्धा से उत्पन्न होती हैं। अतएव यह अनिवार्य है कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य चुनौतियों का सामना करने के लिए स्वयं तैयार हों। जहां कहीं शिक्षा का प्रसार हुआ है और लोगों में जानकारी फैली है, लोग स्वयं अपने दावे स्थापित करने में समर्थ रहे हैं। तथापि इस प्रकार की सामान्य प्रक्रियायों की गति विशेष रूप से आदिवासी क्षेत्रों में, इतनी धीमी है कि वहां की चुनौती का सामना करने के लिए उन प्रक्रियायों के काफी ताकतवर हो जाने पर लोगों के साथ घोर अन्याय होगा। इसलिए अनुसूचित जातियों और जनजातियों, विशेषतः जनजातियों के सदस्यों की संघटना उनके कल्याण तथा प्रगति से संबंधित कार्य सूची में एक महत्वपूर्ण बिन्दु होना चाहिए।

6.2 जहां कहीं भी स्वैच्छिक संगठनों में समर्पित व्यक्तियों की सेवाएं उपलब्ध हो सकी हैं, उन्होंने इस मामले में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। गरीबों की संघटना के लिए राज्य की सहायता इस तथ्य के बावजूद अपेक्षाकृत सीमित रही है कि इसे गरीबी निवारण की रण-नीति के एक अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार किया गया है। इसके साथ ही जहां ऐसी सहायता मिलती भी है वहां उस स्थिति में उनकी अन्तर्निहित सीमाएं बन जाती हैं जबकि संबंधित लोग प्रशासन के ही गलत कामों के विरुद्ध संघर्ष कर रहे हों, जसा कि आदिवासी लोगों के साथ होता है और यदि कोई स्वैच्छिक संगठन वहां जड़ें जमा लेता है और लोगों का विश्वास प्राप्त कर लेता है तो उसमें अपने मुख्य उद्देश्य से विलग होने की प्रवृत्ति हो जाती है। राजनैतिक दल का समर्थन प्राप्त करने के लिये लालायित हो जाते हैं जिसके कारण उसके लिये तटस्थ रहना और गरीबों के हितों का निरपेक्ष समर्थन जारी रखना कठिन हो जाता है।

6.3 स्वच्छिक काय के लिए राज्य की सहायता से संबंधित एक दूसरी गम्भीर सीमा कार्य निष्पादन के मूल्यांकन की आवश्यकता के कारण उत्पन्न होती है। संघटना के काम में किसी व्यक्ति के योगदान का मूल्यांकन कतिपय मात्रात्मक सूचकों के रूप में करना संभव नहीं है जो उदाहरण के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य इत्यादि जैसे समाज सेवा के विशिष्ट क्रियाकलापों में लगी हुई संस्थाओं के लिए अन्यथा बहुत सरल है। इस कारण से यदि किसी संस्था की गतिविधियां संघटना के काम तक सीमित रहती हैं तो, औपचारिक व्यवस्था में कोई ऐसी उपयुक्त विधि नहीं है जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि उस सहायता का उपयोग वांछित प्रयोजन के लिए हो रहा है। इस स्थिति में ऐसी संस्थाओं को राज्य से निधि प्राप्त करने के लए केवल एक आवरण के रूप में ही उपयोग किया जा सकता है और प्रशासन भी उन्हें अपने कृपा पात्रों को आर्थिक लाभ देने की युक्ति के रूप में देख सकता है।

6.4 इसलिए राज्य से सहायता प्राप्त स्वैच्छिक संस्थाओं की संघटना संबंधी भूमिका अत्यन्त सीमित ही हो सकती है। उनमें से कुछ संस्थाएं प्रशंसनीय कार्य कर रही हैं, विशेष रूप से दूर दराज के क्षेत्रों में जहां उन्होंने शैक्षिक तथा स्वास्थ्य संस्थाएं स्थापित की हैं। परन्तु इन गतिविधियों का दायरा भी बहुत अधिक नहीं बढ़ सकता है क्योंकि स्वैच्छिक संस्थाओं की वास्तविक शक्ति ही इस बात में निहित है कि उनके काम का आकार छोटा है। यदि उनके काम का विस्तार एक सीमा से परे होता है तो वे भी प्रबन्ध की अन्य नौकरशाही संगठनों की तरह समस्याओं में उलझ सकती हैं। इसके अलावा आखिर सामाजिक सेवाओं की व्यवस्था तो राज्य को करनी है, इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि इन सेवाओं के सामान्य स्तर में सुधार किया जाए। इसलिए अलग-थलग छोटे छोटे प्रयास कितने भी सराहनीय क्यों न हों, राज्य के प्रभावी तथा सुचारू कार्यक्रम का विकल्प नहीं हो सकते हैं।

6.5 गरीबों की संघटना के काम को एक अनौपचारिक सहायक संरचना की आवश्यकता है। दुर्भाग्य से देश में एक विशालकाय नव धनाढ्य वर्ग के जनमने के बावजूद स्वैच्छिक सामाजिक कार्य के लिए निजी आर्थिक सहायता नगण्य ही है। औद्योगिक घरानों लोकहित के कामों के लिए प्रोत्साहन का अनुभव कुछ अपवादों को छोड़कर कोई सुखद नहीं रहा है। जो आगे आये हैं वे भी अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के बीच कार्य की तरफ ध्यान नही गया है। यह एक विडम्बना है कि स्वैच्छिक संस्थाओं के लिए विशेष रूप से जो आदिवासी क्षेत्रों में काम कर रही हैं, सहायता का प्रमुख स्रोत विदेशी संस्थाएं हैं। इन मामलों में सामाजिक कार्यकर्ता कहने को अपने काम के संबंध में बहुत कुछ स्वतन्त्र हैं और वे प्रबोधन और संघटनात्मक काम भी कर सकते हैं। परन्तु विदेशी सहायता के आधार पर विशेष रूप से देश के संवेदनशील क्षेत्रों

में संघटनात्मक काम की अपनी ही कुछ सीमाएं हैं, और उन्हें बड़ी कड़ाई से निर्धारित सीमाओं से आगे बढ़ने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसके फलस्वरूप विदेशी सहायता प्राप्त स्वैच्छिक संस्थाओं की औपचारिक स्थिति चाहे कुछ भी हो परन्तु संघटनात्मक काम में उनकी भूमिका सीमित हो सकती है। उनकी स्थिति उस समय असंगत हुए बिना नहीं रह सकती है जब उनके कार्यक्रम से उनके और स्थानीय प्रशासन के बीच टकराव की स्थिति पैदा हो जाती है। यहां पर भी फिर सामान्य राष्ट्रीय परिवेश का सवाल आ जाता है। यहां भी बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि समाज के कमजोर वर्गों के सामने इन चुनौतियों के प्रति देश के संवेदनशील लोगों की क्या प्रतिक्रिया होती है।

6.6 इतना कह देने के बाद भी, यह नहीं माना जा सकता है कि राज्य प्रतिकूल बलों के विरुद्ध लोगों की संघटना के लिए भी आवश्यक सहायता देने की अपनी जिम्मेदारी से मुक्त हो सकता है, यद्यपि वे प्रतिकूल बल विकास की प्रक्रिया से अथवा राज्य के अपने क्रियाकलापों से ही क्यों न उत्पन्न हुए हों। राज्य को यह सब उदाहरण के लिए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के मामले में विशेष रूप से जनजातियों के मामले में अपने कर्तव्य के रूप में करना आवश्यक है और ऐसा काम यद्यपि उपयुक्त सीमा के अन्दर संभव भी है। इस मामले में सबसे अधिक आशा का क्षेत्र प्रतीत होता है। शिक्षित युवकों के आंतरिक असंतोष का समुचित निदेशन जिनमें से कुछ रचनात्मक कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए उत्सुक हैं। एक बड़ी संख्या में युवक और युवतियां किसी चुनौती तथा किसी प्रयोजन की तलाश में रहते हैं। वे स्वैच्छिक संस्थाओं में और काफी जोखिम उठाकर उग्रवादी संगठनों में भी शामिल हो रहे हैं। परन्तु उनमें से बहुतों का मोहभंग हो जाता है क्योंकि स्वैच्छिक संस्थाओं के काम का दायरा सीमित होने से बहुत दिनों तक उनकी रुचि के अनुरूप उनको बांधे नहीं रख पाता है। यह स्थिति विशेष रूप से तब आती है जब वे ऐसी समस्याओं का सामना करते हैं जो संघटना में आधारभूत प्रश्न सामने आने पर और व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष में उग्रवादी तरीके से अंधी गली बन जाने पर उठ खड़ी होती है। सरकार एक ऐसा कार्यक्रम बनाए जिसमें छात्र को, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के छात्रों को, शामिल किया जाए जो अपने शिक्षा जीवन में ही, परन्तु माध्यमिक परीक्षा के बाद संघटनात्मक काम को स्वैच्छिक आधार पर करने के लिए तैयार हों। इस उद्देश्य से एक छात्र स्वयं सेवक कोर की स्थापना की जा सकती है। जिसमें ऐसे छात्र शामिल किए जायें जो गावों में जाकर एक पूरे वर्ष के लिए सामान्य जन के साथ, जो उनके साधारण कार्यों में सहभागी होकर काम करने के लिए सहमत हों और उस प्रक्रिया में लोगों को संगठित करें तथा उन्हें उनके अधिकारों और दायित्वों के बारे में भी अवगत करावें। इस संबंध में एक महत्वपूर्ण बात यह है कि यह अवधि कम नहीं होनी चाहिए ताकि इसमें बिना अभिरुचि वाले छात्र न शामिल हो सकें। यह अवधि अधिक भी नहीं होनी चाहिए जिससे कि यह कार्यक्रम रोजगार रूप बनकर विकृत न हो जाए। स्वयंसेवकों को निर्वाह-भत्ता दिया जाए। यदि ये छात्र आगे अपना अध्ययन जारी रखते हैं तो उन्हें इस काम का शैक्षणिक श्रेय भी दिया जाना चाहिए और रोजगार के मामले में भर्ती भी उसके लिए कुछ नम्बर दें।

6.7 इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि—

(1) ऐसे सामाजिक कार्यकर्ताओं/स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ निरन्तर वैचारिक आदान-प्रदान के लिए खंड जिला, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तरों पर उपयुक्त मंच स्थापित किए जाएं जो मुख्य रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों में संघटनात्मक काम और ऐसे संघर्ष की स्थितियों के जो स्थानीय अधिकारियों के साथ विभिन्न प्रश्नों के बारे में समय समय पर पैदा होती रहती हैं, समाधान करने में लगे हैं।

(2) सरकार छात्रों का विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के छात्रों का एक स्वयं सेवक कोर गठित करने पर विचार करे। प्रत्येक स्वयं सेवक कोर में एक वर्ष के लिए काम करे तथा लोगों की साधारण आर्थिक गतिविधियों में भाग लेते हुए संघटनात्मक काम करे। छात्र स्वयंसेवक को क्षेत्र में प्रचलित न्यूनतम मजदूरी के बराबर निर्वाह भत्ता दिया जा सकता है। स्वयं सेवक के इस कार्य की शैक्षिक मान्यता दी जानी चाहिए तथा बाद में सेवाओं में भर्ती के समय भी उसके लिए कुछ अंक दिए जायें।

6.8 यहां पर आदिवासी समाजों को हुई उस क्षति का हवाला दिया जाना उचित होगा जो उनके ऊपर एक विदेशी औपचारिक व्यवस्था के आरोपित हो जाने तथा उनकी स्वशासन की अनौपचारिक संस्थाओं के माध्यम से लोगों के जीवन के सभी पहलुओं की देखरेख करने की परम्परा के तिरस्कार के कारण हुआ है। अब आदिवासी लोग भी अन्य लोगों की तरह ही अपने जीवन से संबंधित लगभग सभी बातों के लिए उन शहरी संस्थाओं पर आश्रित हो गए हैं जिनके तौर तरीके से वे परिचित नहीं हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि अब भूमि पर उनका अधिकार पटवारी, जो उनका अभिलेख रखता है; की दया पर निर्भर है तथा उनके द्वारा वनों का उपयोग वन रक्षक की मर्जी पर निर्भर है। आदिवासी पर साहूकार की लेनदारी उस काम के आधार पर निर्धारित होती है जिस पर कभी उसे कानून में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार अपना अंगूठा लगाना पड़ा हो, परन्तु जिसका असली कर्ज की रकम से कोई वास्ता ही न हो। सभी तरह के झगड़ों का फैसला न्यायालयों में होता है जिसके लिए खर्चा चाहिए वह भी भारी खर्च। यहां तक कि जब कहीं उसकी इज्जत पर हमला हो जाए तो उसे लाजमी है पुलिस स्टेशन जाना, जहां पहुंचकर हो

में संघटनात्मक काम की अपनी ही कुछ सीमाएं हैं, और उन्हें बड़ी कड़ाई से निर्धारित सीमाओं से आगे बढ़ने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसके फलस्वरूप विदेशी सहायता प्राप्त स्वैच्छिक संस्थाओं की औपचारिक स्थिति चाहे कुछ भी हो परन्तु संघटनात्मक काम में उनकी भूमिका सीमित हो सकती है। उनकी स्थिति उस समय असंगत हुए बिना नहीं रह सकती हैं जब उनके कार्यक्रम से उनके और स्थानीय प्रशासन के बीच टकराव की स्थिति पैदा हो जाती है। यहां पर भी फिर सामान्य राष्ट्रीय परिवेश का सवाल आ जाता है। यहां भी बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि समाज के कमजोर वर्गों के सामने इन चुनौतियों के प्रति देश के संवेदनशील लोगों की क्या प्रतिक्रिया होती है।

6.6 इतना कह देने के बाद भी, यह नहीं माना जा सकता है कि राज्य प्रतिकूल बलों के विरुद्ध लोगों की संघटना के लिए भी आवश्यक सहायता देने की अपनी जिम्मेदारी से मुक्त हो सकता है, यद्यपि वे प्रतिकूल बल विकास की प्रक्रिया से अथवा राज्य के अपने क्रियाकलापों से ही क्यों न उत्पन्न हुए हों। राज्य को यह सब उदाहरण के लिए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के मामले में विशेष रूप से जनजातियों के मामले में अपने कर्तव्य के रूप में करना आवश्यक है और ऐसा काम यद्यपि उपयुक्त सीमा के अन्दर संभव भी है। इस मामले में सबसे अधिक आशा का क्षेत्र प्रतीत होता है। शिक्षित युवकों के आंतरिक असंतोष का समुचित निदेशन जिनमें से कुछ रचनात्मक कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए उत्सुक हैं। एक बड़ी संख्या में युवक और युवतियां किसी चुनौती तथा किसी प्रयोजन की तलाश में रहते हैं। वे स्वैच्छिक संस्थाओं में और काफी जोखिम उठाकर उग्रवादी संगठनों में भी शामिल हो रहे हैं। परन्तु उनमें से बहुतों का मोहभंग हो जाता है क्योंकि स्वैच्छिक संस्थाओं के काम का दायरा सीमित होने से बहुत दिनों तक उनकी रुचि के अनुरूप उनको बांधे नहीं रख पाता है। यह स्थिति विशेष रूप से तब आती है जब वे ऐसी समस्याओं का सामना करते हैं जो संघटना में आधारभूत प्रश्न सामने आने पर और व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष में उग्रवादी तरीके से अंधी गली बन जाने पर उठ खड़ी होती है। सरकार एक ऐसा कार्यक्रम बनाए जिसमें छात्र को, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के छात्रों को, शामिल किया जाए जो अपने शिक्षा जीवन में ही, परन्तु माध्यमिक परीक्षा के बाद संघटनात्मक काम को स्वैच्छिक आधार पर करने के लिए तैयार हों। इस उद्देश्य से एक छात्र स्वयं सेवक कोर की स्थापना की जा सकती है। जिसमें ऐसे छात्र शामिल किए जायें जो गावों में जाकर एक पूरे वर्ष के लिए सामान्य जन के साथ, जो उनके साधारण कार्यों में सहभागी होकर काम करने के लिए सहमत हों और इस प्रक्रिया में लोगों को संगठित करें तथा उन्हें उनके अधिकारों और दायित्वों के बारे में भी अवगत करावें। इस संबंध में एक महत्वपूर्ण बात यह है कि यह अवधि कम नहीं होनी चाहिए ताकि इसमें बिना अभिरुचि वाले छात्र न शामिल हो सकें। यह अवधि अधिक भी नहीं होनी चाहिए जिससे कि यह कार्यक्रम रोजगार रूप बनकर विकृत न हो जाए। स्वयंसेवकों को निर्वाह-भत्ता दिया जाए। यदि ये छात्र आगे अपना अध्ययन जारी रखते हैं तो उन्हें इस काम का शैक्षणिक श्रेय भी दिया जाना चाहिए और रोजगार के मामले में भर्ती भी उसके लिए कुछ नम्बर दें।

6.7 **इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि--**

(1) **ऐसे सामाजिक कार्यकर्ताओं/स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ निरन्तर वैचारिक आदान-प्रदान के लिए खंड जिला, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तरों पर उपयुक्त मंच स्थापित किए जाएं जो मुख्य रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों में संघटनात्मक काम और ऐसे संघर्ष की स्थितियों के जो स्थानीय अधिकारियों के साथ विभिन्न प्रश्नों के बारे में समय समय पर पैदा होती रहती हैं, समाधान करने में लगें हैं।**

(2) **सरकार छात्रों का विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के छात्रों का एक स्वयं सेवक कोर गठित करने पर विचार करे। प्रत्येक स्वयं सेवक कोर में एक वर्ष के लिए काम करे तथा लोगों की साधारण आर्थिक गति-विधियों में भाग लेते हुए संघटनात्मक काम करे। छात्र स्वयंसेवक को क्षेत्र में प्रचलित न्यूनतम मजदूरी के बराबर निर्वाह भत्ता दिया जा सकता है। स्वयं सेवक के इस कार्य की शैक्षिक मान्यता दी जानी चाहिए तथा बाद में सेवाओं में भर्ती के समय भी उसके लिए कुछ अंक दिए जायें।**

6.8 यहां पर आदिवासी समाजों को हुई उस क्षति का हवाला दिया जाना उचित होगा जो उनके ऊपर एक विदेशी औपचारिक व्यवस्था के आरोपित हो जाने तथा उनकी स्वशासन की अनौपचारिक संस्थाओं के माध्यम से लोगों के जीवन के सभी पहलुओं की देखरेख करने की परम्परा के तिरस्कार के कारण हुआ है। अब आदिवासी लोग भी अन्य लोगों की तरह ही अपने जीवन से संबंधित लगभग सभी बातों के लिए उन शहरी संस्थाओं पर आश्रित हो गए हैं जिनके तौर तरीके से वे परिचित नहीं हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि अब भमि पर उनका अधिकार पटवारी, जो उनका अभिलेख रखता है, की दया पर निर्भर है तथा उनके द्वारा वनों का उपयोग वन रक्षक की मर्जी पर निर्भर है। आदिवासी पर साहूकार की लेनदारी उस काम के आधार पर निर्धारित होती है जिस पर कभी उसे कानून में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार अपना अंगूठा लगाना पड़ा हो, परन्तु जिसका असली कर्ज की रकम से कोई वास्ता ही न हो। सभी तरह के झगड़ों का फैसला न्यायालयों में होता है जिसके लिए खर्चा चाहिए वह भी भारी खर्च। यहां तक कि जब कहीं उसकी इज्जत पर हमला हो जाए तो उसे लाजमी है पुलिस स्टेशन जाना, जहां पहुंचकर हो

सकता है अपराधी की ओर से ही अपने बचाव के लिए पहले से ही रिपोर्ट दर्ज करा रखी हो, जिससे उस मामले के पक्षकारों की अदला बदली हो जाये और जिस पर अत्याचार हुआ वही अपराधी बन जाए। फिर इसमें क्या आश्चर्य कि आदिवासी की सबसे उत्कृष्ट इच्छा होती है मुझे छोड़ दो।

6.9 पंचायत राज संस्थाओं से भी आदिवासी लोगों की स्थिति में कोई खास अन्तर नहीं आया है। ये संस्थायें भी औपचारिक व्यवस्था का एक अंग हैं और उन्हें तत्सम्बन्धी निर्धारित नियमों और प्रक्रियाओं के अनुसार ही काम करना होता है। इसके अलावा उनमें भी पदक्रम होता है और उच्च स्तरों की ऐसी संस्थाओं और प्राधिकारियों के प्रति उत्तरदायी होती हैं जो जनसामान्य; जिसकी सेवा उनसे अपेक्षित है, से बहुत दूर अवस्थित होती हैं। इन संस्थाओं में आदिवासी लोगों के प्रतिनिधि आमतौर पर उनके कामकाज के तरीकों से अनभिज्ञ होते हैं। अतः वे उन वाक्पटु लोगों जिनकी संख्या थोड़ी हो सकती है अथवा अधिकारियों के कहने में आकर काम करते हैं। इसके साथ ही जन प्रतिनिधियों को भी तो अपने निजी स्वार्थ बनाने की प्रवृत्ति हो सकती है विशेष रूप से उस स्थिति में जब उन्हें जन सामान्य के द्वारा छानबीन का सामना नहीं करना पड़ता जिनसे कोई तथ्य छुपे नहीं रहते। औपचारिकताओं को पूरा करना कोई खास कठिनाई का सवाल नहीं, विशेष रूप से उस हालत में जब अधिकारी भी उसमें सहयोगी बन जायें।

6.10 भारत के मध्यक्षेत्र में पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत आने वाले अचंलो की स्थिति के ठीक विपरीत उत्तर पूर्व के आदिवासी समाज छठी अनुसूची द्वारा प्रशासित होते हैं जिसमें उनके दिन प्रतिदिन के जीवन से संबंधित सभी मामलों के बारे में स्व-शासन के लिए विशेष रूप से उपबन्ध किए गए हैं। इन उपबन्धों में भूमि और वन संसाधनों का प्रबन्ध और व्यक्तियों के आपराधिक कृत्यों और उनके बीच झगड़ों का निपटारा करना शामिल होता है। वहां गांव पुलिस के क्षेत्राधिकार में नहीं है। भारत के मध्यक्षेत्र के आदिवासी लोग ऐसी व्यवस्था जहां पटवारी, वन रक्षक, पुलिस, सिपाही और आबकारी निरीक्षक न हो उससे बेहतर व्यवस्था की कल्पना भी नहीं कर सकते।

6.11 यद्यपि मध्यक्षेत्र की आदिवासी पट्टी में परम्परागत संस्थाओं के अधिकार का भारी क्षरण हुआ है तथापि, वे अभी भी कार्यशील हैं क्योंकि विवाह और तलाक से संबंधित सिविल मामले अभी भी उनकी परम्परा के अनुसार ही व्यवस्थित होते हैं और सामुदायिक संगठनों द्वारा संचालित किए जाते हैं। इसके साथ ही अन्य मामलों में भी लोग प्रशासन के पास जाने से डरते हैं और समाज के अन्दर ही मामले का फैसला पसन्द करते हैं क्योंकि समाज का हर व्यक्ति उसके तथ्यों को और उसे तय करने के बारे में परम्पराओं को भी जानता है। वह अधिकारियों और न्यायालयों के सामने पेश होने के मानसिक आघात से बच जाता है, जो अन्यथा उसे झेलना पड़ता है, क्योंकि वहां की प्रक्रिया और यहां तक कि किसी मामले में तथ्यों को प्रस्तुत करने के लिए बयान देने की परिपाटी तक सभी कुछ तो उसके लिए अनजान है। आदिवासी लोग एक भारी चुनौती का सामना कर रहे हैं। क्योंकि उनकी परम्परागत संस्थाओं के प्राधिकार को समाज में अपराधी प्रवृत्ति के लोगों द्वारा अधिकाधिक चुनौती दी जा रही है। एक समाज के रूप में वे विकास के उलट प्रहारों और व्यक्तिवाद की चुनौती, दोनों का सामना कर रहे हैं। एक ऐसे विघटन का मुकाबला करना उनकी नियति ही बन गयी है जिसका किसी भी समाज के इतिहास में आकार अभूतपूर्व है क्योंकि आज के दिन सभी तरह से प्रतिबल इकजाई हो गए हैं जिनका वे स्वयं अपने आप प्रतिरोध करने में असमर्थ हैं। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि लोगों को उनकी प्रकृति के अनुसार इन नए बलों का प्रतिरोध करने के लिए समर्थ और शक्ति सम्पन्न बनाया जाए।

6.12 इसलिए म यह सिफारिश करता हू कि --

आदिवासी क्षत्रों में गांव स्तर पर पंचायत राज संस्थाओं को विशेष रूप से गठित किया जाना चाहिए जिससे वे आदिवासी समुदाय की परम्पराओं के अनुरूप ढल सके। ऐसा या तो संबंधित पंचायत राज कानून में एक विशेष उपबन्ध करके अथवा एक विनियम के द्वारा उक्त कानून में आवश्यक सीमा तक संशोधन करके किया जा सकता है। इसमें विशिष्ट रूप से निम्न लिखित बातें होनी चाहिए।

(1) आदिवासी क्षेत्रों में पारा/गांव स्तर पर सभी संस्थाएं उस पारे/गांव के लोगों के प्रति सीधी उत्तरदायी हों।

(2) इन संस्थाओं को ऐसी कार्य विधि के अनुसार खुले में काम करना चाहिए जो उस संबंध में लोगों द्वारा तय की जाए।

(3) इन संस्थाओं की जिम्मेदारियां व्यापक होनी चाहिएं जिसमें लोगों के दिन प्रतिदिन के जीवन और भूमि तथा वन संसाधनों सहित स्थानीय संसाधनों के प्रबंध संबंधी सभी मामले शामिल किए जाए।

6.13 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए संविधान में रखे गए संरक्षणों का दायरा काफी विस्तृत है और उसके अन्तर्गत आवश्यक रूप से उनके जीवन के सभी पहलू सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक और दोनों ही सन्दर्भ में परम्परागत समाज और नवोदित आधुनिक व्यवस्था शामिल हैं। संविधान की इस योजना में यह सुरक्षण भी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार के हैं। प्रत्यक्ष सुरक्षणों से अप्रत्यक्ष सुरक्षण और भी अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि अप्रत्यक्ष सुरक्षणों के बिना प्रत्यक्ष सुरक्षणों का महत्व नगण्य हो सकता है और वे उसकी भावना को बिना छुए मात्र रस्म बन सकते हैं। आदिवासी क्षेत्रों की स्थिति अत्याधिक जटिल है और अनन्य है जिसे संवैधानिक सुरक्षणों की आयोजना के रूप में प्रत्यक्ष रूप से स्वीकार किया गया है। परन्तु उस विशिष्ट स्थिति की बेहतर अभिस्वीकृति है प्रत्येक संभावना का विस्तृत विवरण तैयार करके विशिष्ट उपबन्ध न बनाना

क्योंकि ऐसा कोई भी प्रयास निश्चित रूप से नाकाफी होता और किसी न किसी क्षेत्र में किसी न किसी समाज की वर्तमान सामाजिक आर्थिक स्थिति के विरुद्ध भी हो सकता था। इसी कारण कार्यपालिका को असीमित विवेकाधिकार प्रदान किया गया है।

6.14 इन सुरक्षणों के क्रियान्वयन की सततरूप से जांच और समीक्षा उनके मामले में निर्णायक है, विशेष रूप से आदिवासी लोगों के मामले में, क्योंकि किसी नाजुक अवसर पर किसी महत्वपूर्ण मामले में चूक होने पर बात ही और हो जाए उससे फिर और जो क्षति हो उसकी कभी कोई प्रतिपूर्ति ही न हो पाए। आदिवासी लोगों से संबंधित सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है प्राकृतिक संसाधनों पर उनका अधिकार हो और उनका उपभोग। यही ऐसा एक क्षेत्र है जिसके मूल सवालों को सामने ही नहीं लाया गया है, जिसके परिणाम-स्वरूप ये लोग एक गम्भीर संघर्ष में लगे हुए हैं जिसमें वे एक ओर अकेले हैं और उनके विरुद्ध तमाम शक्तिशाली हित एक जुट हो गए हैं और स्वयं राज्य भी उसी विरोधी खेमे में हैं। अब एक ऐसी स्थिति आ गई जहां असंतोष की खलबलाहट खुले रूप में विद्रोहों और टकराहटों के रूप में प्रकट हो रही है। विकास के नाम पर आदिवासी लोगों को विस्थापित किया जा रहा है जिसमें ऐसे कानूनों का प्रयोग किया जाता है जो असंगत हैं और उनमें आदिवासी स्थिति की वास्तविकता का ध्यान नहीं रखा गया है। इस बात के भी कोई प्रमाण नहीं है कि राज्य ने संविधान में उनके लिए किए गए सुरक्षणों पर उचित ध्यान दिया है। यह एक अत्याधिक गम्भीरता मामला है; जिसकी संविधान के अनुच्छेद 338 के उपबन्ध के अधीन जांच की जा रही है यद्यपि, यह जांच वर्तमान संस्थागत प्रबन्ध की सीमाओं के अन्दर ही है। यह प्रश्न के निर्णायक रूप से महत्वपूर्ण होने के कारण, इसका विशेष रूप से उन्लेख किए जाने की जरूरत है, ताकि इसकी ओर जितना जरूरी है उतनी गम्भीरता से ध्यान दिया जा सके। इसके बारे में विशेष रिपोर्ट, राज्यों से मांगी गई सूचना प्राप्त होने पर जिसके लिए अनुरोध अब से एक वर्ष से अधिक समय पूर्व किया गया था, परन्तु उसके लिए अनिश्चित काल तक प्रतीक्षा किए बिना, यथासंभव शीघ्र प्रस्तुत की जाएगी।

6.15 इस समय विशेष अधिकारी द्वारा की जाने वाली जांचें आम तौर पर गम्भीर सीमाओं के अधीन रहती है और वे इस पद संबंधी संवैधानिक आयोजना से जैसी अपेक्षा की गई है उसके मुकाबले बहुत कम पड़ती हैं। इस समय की जांचों में राज्य सरकारों तथा केन्द्रीय मंत्रालयों की रिपोर्टें, इस संगठन के अधिकारियों द्वारा किए गए तदर्थ अध्ययन और ऐसी विशिष्ट घटनाओं की छानबीन शामिल होती है जो विशेष अधिकारी की जानकारी में साधारण रीति से या विशेष पत्र व्यावहार के द्वारा आतीं हैं। इन जांचों का स्वरूप सामान्य पूछताछ जैसा होता है जो बहुत कर संबंधित संगठनों और प्राधिकारियों की सद इच्छा पर ही निर्भर होती है। यह एक भारी विसंगति है कि यद्यपि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए सुरक्षणों के क्रियान्वयन के बारे में जांच करने के संबंध में उपबन्ध संविधान में विहित किए गए हैं परन्तु उसके बावजूद इन्हें सरकार द्वारा किसी कानूनी प्राधिकार के द्वारा, उदाहरण के लिए, जांच आयोग अधिनियम के अधीन विशेष अधिकारी को और उसके द्वारा पदविहित अधिकारियों को शक्तियां प्रदत्त करके सुदृढ नहीं किया गया है। यद्यपि, विशेष अधिकारी को अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आम्बुटसमन के रूप में बताया गया है (देखिए, आई० एल० ओ० 75 वां सत्र, 1988 की VI (1) रिपोर्ट-पार्श्यल रिविजन आफ द इंडिजिनस एंड ट्रायबलस पापुलेशन कन्वेशन 1975 प्र० 23) तथापि, उसकी आवाज इतनी मंद है कि वह विकास के बढ़ते कोलाहल में लगभग सुनाई ही नहीं देती।

6.16 उन घटनाओं की जांच में, जिसमें अराजकीय लोग पक्षकार होते हैं कुछ परिणाम यद्यपि, वे भी एक सीमा में निकाल पाते हैं। परन्तु उन घटनाओं की जांच, जिनमें सरकारी अधिकारी, विभाग या स्वंय राज्य पक्षकार होते हैं, लगभग निष्फल ही रहती है। पहले तो असुविधाजनक संदर्भों पर कोई कार्रवाई ही नहीं की जाती है और यदि कार्रवाई की भी जाती है तो नेमी तरह की। लगातार पूछताछ का परिणाम आम तौर पर यही होता है कि विवादास्पद कार्यवाही का तगड़ा समर्थन प्रस्तुत करना जिसके पक्ष में कानून के उपबन्ध, प्रक्रिया की तफसील और है, और संबंधित घटना के लिए जिम्मेदार परिस्थितयों के बारे में राज्य की ओर की बात पुरजोर तौर पर रखी जाती है। यह खेद की बात है कि ऐसे मामलों में भी जिनका किसी प्रकार से समर्थन किया ही नहीं जा सकता उनमें भी शोधक कार-वाई आसानी से नहीं की जाती है और इन मामलों को कार्यवाही के लिए पीछे पड़ने पर सरकारी रूख और भी सख्त होता जाता है। इस संबंध में इसके पहले कई मामलों का विशेष रूप से भूमि और वनों से संबंधित मामलों का उल्लेख किया जा चुका है। जिनमें विशेष अधिकारी ने इस स्पष्ट मत के बावजूद कि इन लोगों को संविधान में दिए गए सुरक्षणों के लाभों से वंचित किया जा रहा था अभी तक कोई राहत नहीं मिल पाई है। जब तक यह स्वीकार नहीं किया जाता है कि गरीव लोग, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य उन्हीं प्रक्रियाओं के शिकार हैं जो कहने को कानून के अनुरूप ही होती है, तब तक उन्हें खास राहत नहीं मिल सकती है और संवैधानिक सुरक्षण उनकी सही भावना के अनुसार कार्यान्वित नहीं हो पायेंगे, चाहे प्रारूप प्रगति कैसी भी उत्कृष्ट क्यों न दिखाई दे। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण तथा प्रगति के लिए जिम्मेदार संस्थाओं का एक मुख्य काम इन लोगों को इस प्रकार की देखने में सरल सीधी और कहने की कानूनी प्रक्रिया के समक्ष

संरक्षण प्रदान करना है जिसके लिए उन्हें पर्याप्त रूप से सक्षम बनाया जाना चाहिए। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के प्रभारी विभागों को भी प्रशासन के एक अभिन्न अंग के रूप में और उसी प्रकार क्षेत्र में काम करने वाले सरकारी अधिकारियों को भी इस भूमिका को स्वीकार करना चाहिए। विशेष अधिकारी और उसके संगठन से, जो औपचारिक रूप से इस प्रशासनिक व्यवस्था का एक अंग नहीं है और एक स्वतन्त्र संवैधानिक प्राधिकरण है, न केवल इस भूमिका को अंगीकार करने की अपेक्षा की जानी चाहिए वरन् उसे आवश्यक पदमान तथा कानूनी तथा संगठनात्मक समर्थन भी दिया जाना चाहिए जिससे कि देश के लगभग एक-चौथाई नागरिकों के लिए जो सीमांत पर अवस्थित है, संविधान में दिए गए सुरक्षणों के बारे में इस गम्भीर दायित्व को वहन कर सके।

राष्ट्रीय विकास परिषद

6.17 अंत में मैं इस बात को दोहराना चाहूंगा कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए न्यायमूलक समता को केवल संविधान में दिए गए कुछ सुरक्षणों का औपचारिक रूप से पालन करने का पर्याय नहीं माना जा सकता है। उसे नई सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए राष्ट्रीय प्रयासों की एक गतिशील चेतना के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। जिससे हमारी परम्परा के जो भी मूल्यवान तत्व हैं, वे कायम रहें और एक आधुनिक समाज की असली चेतना अथवा धर्म निरपेक्षता, समता और न्याय के आधारभूत मूल्य जीवन में रम जाए। राष्ट्र के निर्माताओं ने इस महान कार्य की एक राष्ट्रीय कार्य के रूप में परिकल्पना की थी, और उसे इसी रूप में कायम रखा जाना चाहिए। इस रिपोर्ट में बताई गई संवैधानिक आयोजना के संबंध में हुई चूकों, विचलनों और विरूपणों को सावधानीपूर्वक बीन-बीन कर निकाल दिए जाए। यह केवल तभी संभव हो सकता है जब समाज के कमजोर वर्गों विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए समता और न्याय राज्य के सभी कार्यों की कसौटी बन जाए। हमारे देश में परिवर्तन और विकास की प्रक्रिया के दिशा निर्देश के लिए सर्वोच्च मंच राष्ट्रीय विकास परिषद है। यदि राष्ट्रीय विकास परिषद इन विषयों पर विशिष्ट रूप से विचार करती है और यह सुनिश्चित करती है कि संविधान की असली भावना राज्य के सभी घटकों द्वारा सभी स्तरों पर आत्मसात की जाती है तो वह उस दायित्व के अनुरूप ही होगा।

6.18 इसलिए मैं यह सिफारिश करता हूं कि --

राष्ट्रीय विकास परिषद एक स्थायी समिति का गठन करे जो (1) उन्हें राष्ट्रीय विकास परिषद के सामने रखे जाने से पहले सभी मामलों पर विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए संविधान में दिए गए सुरक्षणों के लिए निहितार्थों के सन्दर्भ में विचार करें। (2) उन सभी चूकों, विचलनों और विरूपणों का जो साधारण तौर पर घटित हो सकते हैं और ऐसे प्रतिकूल प्रभावों, यदि कोई हों, जो विकास के कार्यक्रमों के कारण विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों पर पड़ सकते हैं, पता लगाए और (3) यह सुनिश्चित करें कि सभी कार्यक्रमों में शोधक उपाय शामिल किए जाए और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को राष्ट्र में विकास के लाभों में उपयुक्त हिस्सा मिले।

सिफारिशों का सार

1. नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के प्रवर्तन को कड़ा करने के साथ साथ ऐसे उपयुक्त कार्यक्रम भी लिए जाने चाहिए जिनसे यह सुनिश्चित हो सके कि आर्थिक मामले जाति और कुल के प्रभाव क्षेत्र से बचे रहें। विशेष रूप से--

(1) सरकार को उन सामाजिक कार्यकर्ताओं का समर्थन करना चाहिए जो असमानता के विरुद्ध लड़ रहे हैं और गरीबों को विशेष, रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को, अपने विधिक अधिकारों को वास्तविकता में बदलने के लिए उद्वेलित कर रहे हैं।

(2) सरकार को उन 'सिविल' सेवकों की सेवाओं को विशेष रूप से मान्यता देनी चाहिए जो गरीबों का साथ देते हैं और निहित स्वार्थों के विरुद्ध उन्हें संरक्षण प्रदान करते हैं और सरकार को अच्छा काम करने वाले अधिकारी का अकस्मात स्थानान्तरण जैसे कामों से बड़ी सावधानी से पूरा परहेज बरतना चाहिए जिससे प्रशासन द्वारा ताकतवर को समर्थन दिए जाने की प्रवृत्ति की आम धारणा मिट सके।

(3) अस्पृश्यता अथवा किसी अन्य रूप में भेदभाव और सामाजिक अन्याय के समर्थन में उठाए गए किसी कदम को विशेष रूप से समाज के विशिष्ट व्यक्तियों के वक्तव्यों को तुरन्त चुनौती दी जानी चाहिए और कठोर विधिक कार्यवाही द्वारा कड़ा प्रतिरोध होना चाहिए।

(पैरा 2.8)

2. राष्ट्रीय विकास परिषद, बढ़ती हुई आर्थिक असमानता और अनियंत्रित उपभोगवाद के सामाजिक परिणामों विशेषकर अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति के लिए उनके दूरगामी परिणामों पर विशेष रूप से विचार करें।

(पैरा 2.9)

3. ऐसे सभी मामलों के संबंध में नियमित समीक्षा की व्यवस्था की जाए जिनमें---

(1) अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के विरुद्ध सरकारी कर्मचारियों द्वारा (क) उत्पीड़न (ख) कानूनी प्रक्रिया के दुरुपयोग और (ग) कानून भंग करने संबंधी आरोप लगाए गए हों।

(2) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य किसी मामले के पुलिस हिरासत और मुकदमें से पहले न्यायिक हिरासत दे में हों।

जिला मजिस्ट्रेट को हर महीने इन मामलों की समीक्षा करनी चाहिए और उसकी रिपोर्ट राज्य सरकार को भेजनी चाहिए। इसी प्रकार की समीक्षा राज्य स्तर पर भी प्रशासनिक तौर से मुख्य सचिव द्वारा और राजनतिक तौर से मंत्रिमंडल द्वारा की जानी चाहिए। इस समीक्षा की रिपोर्ट अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों के आयुक्त को अग्रेषित की जानी चाहिए।

(पैरा 2.14)

4 एक केन्द्रीय कानून बनाया जाए जिसमें नागरिक मामलों में विशेष रूप से उन मामलों में जहां संबंधित व्यक्ति अथवा संबंधित मामले में प्रभावित अधिकांश लोग अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के हों, बल के प्रयोग का निषेध किया जाए। इस कानून के बनने तक केन्द्र सरकार यह अनुदेश जारी करें कि उन सभी मामलों में जिनमें प्रशासन को मोटे तौर पर ऐसा सन्देह हो कि बल का प्रयोग करना पड़ सकता है अथवा जिनमें प्रशासन का बल प्रयोग करने का इरादा न भी हो आशय केवल बल दिखा कर उसकी साया में काम करने का हो, संबंधित अधिकारी कम से कम एक सप्ताह पहले इस बाबत एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार कर जिसमें पुलिस या अन्य बल का आवाहन करने संबंधी पूरे तथ्य और कारण दिए जाएं और उसके बारे में प्रभावित लोगों की संभावित प्रतिक्रिया भी दर्शायी जाए, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त के द्वारा पदाभिहिन प्राधिकारी के पास भेजें। ऊपर यथावर्णित पदाभिहित प्राधिकारी को सूचित किए बिना बल के प्रयोग के मामलों में संबंधित अधिकारी के विरुद्ध दाण्डिक कार्यवाही की जाए।

(पैरा 2.17)

5. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की भूमि के हस्तान्तरण और अवैध अथवा अनियमित रूप से हस्तान्तरित भूमियों के पुनः दिलाए जाने संबंधी कानून को कठोर बनाया जाये। केन्द्रीय सरकार इस संबंध में एक आदर्श विनियम/कानून बना कर निर्दिष्ट समय जो एक वर्ष से अधिक न हो, के अन्दर ही उसे अपनाने हेतु राज्यों को भेजे। इन उपबन्धों में निम्नलिखित बातें विशेष रूप से सम्मिलित की जायें---

(1) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों द्वारा अन्य समुदायों के सदस्यों को और अनुसूचित जनजातियों की ऐसी महिलाओं को भी जिन्होंने किसी गैर-आदिवासी से विवाह किया है अथवा उसके साथ रह रही है, भविष्य में होने वाले भूमि के सभी हस्तान्तरणों का निषेध;

(2) किसी आदिवासी समुदाय के एक सदस्य द्वारा किसी दूसरे आदिवासी समुदाय के सदस्य को भूमि के स्तानान्तरण का विनियमन;

(3) कानून के उपबन्धों और किसी न्यायालय के आदेश में किसी बात के होते हुए भी किसी व्यक्ति, सहकारी समिति अथवा संस्था द्वारा दिए गए ऋण सहित किसी तरह की बकाया की वसूली के लिए अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्ति की भूमि की बिक्री का निषेध;

(4) न्यायालयों द्वारा ऐसे सम्मति आदेशों को जिनमें अनुसूचित जाति/जनजाति के किसी व्यक्ति द्वारा भूमि का हस्तान्तरण होता हो, पारित करने का निषेध;

(5) अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लोगों को भूमि वापस दिलाए जाने से संबंधित मामलों में वकील करने को मुमानियत;

(6) अनुसूचित जातियों/जनजातियों की भूमि के हस्तान्तरण के मामलों में सरसरी कार्यवाही के लिए उपबन्ध;

(7) उन मामलों में जहां अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्ति द्वारा भूमि के हस्तान्तरण को न्यायालय द्वारा अवैध अथवा दुराशयपूर्ण करार दिया हो, केवल एक अपील करने का उपबन्ध;

(8) अनुसूचित जातियों/जनजातियों के किसी व्यक्ति के पक्ष में निर्णय हो जाने के बाद एक निर्दिष्ट अवधि के अन्दर, यदि क्षेत्र में कोई फसल हो तो उसके कटने तक, भूमि के अनिवार्य रूप से वापिस दिलाए जाने का उपबन्ध और ऐसे प्रकरणों में अपील के मामलों में अपील अदालत द्वारा स्थगन आदेश पारित करने पर पाबन्दी ; और

(9) किसी भी व्यक्ति द्वारा अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्ति को भूमि वापस दिलाए जाने की तारीख से तीन वर्ष के भीतर उस भूमि पर कब्जा करने को हस्ताक्षेप योग्य अपराध विहित —

(पैरा 2.24)

6. यह सिद्धांत कि भूमि जोतने वाले की हो पुनः प्रख्यापित किया जाना चाहिए और उसे लागू करने के लिए उपयुक्त कानून बनाए जाने चाहिएं, और जन सामान्य विशेष रूप से अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के द्वारा संसाधनों के उपयोग और उन पर उनके अधिकारों में किसी प्रकार छेड़खानी नहीं होना चाहिए और उन्हें उन संसाधनों की पर्यावरणीय मर्यादाएं, यदि कोई हो तो उनसे संगत, उत्तमतम उपयोग, करने के लिए समर्थ बनाया जाय और उन्हें विकास में भागीदार बनाया जाय। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए पहले कदम के रूप में विशिष्ट रूप से निम्नलिखित उपाय तत्काल किए जाने चाहिएं :—

(1) खेती में बटाई प्रथा को कानून के अधीन औपचारिक रूप से मान्यता दी जानी चाहिए और इसकी शर्तें विनियमित की जानी चाहिएं जिससे बटाईदार को भूमि जोतने की हैसियत से कुल उत्पादन के कम से कम दो तिहाई हिस्से का हकदार हो जाये।

(2) ऐसे एकल परिवार के किसी भी व्यक्ति को जिसके एक सदस्य की संगठित क्षेत्र में स्थायी नौकरी हो अथवा जो अन्य किसी व्यवसाय में लगा है जिससे उसे संगठित क्षेत्र में निम्नतम श्रेणी के कर्मचारी के बराबर आमदनी होती हो, कृषि भूमि की मिलकियत की हकदारी नहीं होना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति किसी भी कारण से अपनी भूमि बेचना चाहे तो उस हालात में संयुक्त परिवार में उसके सहभागियों, उसके आसामियों और बंटाईदारों को पूर्व-क्रय का अधिकार होना चाहिए और इन मामलों में खरीददार के द्वारा देय राशि कानूनी रूप से उन्हीं सिद्धान्तों को अपनाते हुए निश्चित की जानी चाहिए जो अधिकतम भूमि सीमा से अतिरिक्त भूमियों के लिए अपनाए गए हों।

(3) विभिन्न प्रकार के ट्रस्टों और ऐसी सहकारी समितियों द्वारा धारित सभी भूमियां जिनके सभी सदस्य वास्तविक रूप से अपने हाथ से भूमि को जोतने वाले नहीं हैं, राज्य द्वारा ले ली जानी चाहिएं और भूमि-हीन लोगों को वितरित की जानी चाहिएं। यदि कोई ट्रस्ट किसी सार्वजनिक प्रयोजन के लिए स्थापित किया गया हो तो सरकार उस प्रयोजन को पूरा करने का दायित्व अपने ऊपर ले ले और उसके अलावा अन्य सभी दावे, यदि कोई हो, समाप्त कर दिए जाये।

(4) उन सभी भूमियों की स्थिति का जिन पर निगमित निकायों का कब्जा है और जो कृषि से भिन्न प्रयोजनों के लिए उपयोग में नहीं ली जा रही है, पुनरावलोकन किया जाना चाहिए और उसका उतना भाग जो उनकी तत्काल आवश्यकताओं के अलावा हो राज्य द्वारा ले लिया जाना चाहिए।

(5) भूमि की अधिकतम सीमा को कठोरता से घटाया जाना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए वर्तमान सिंचित भूमि तथा असिंचित भूमि के दो-किस्मी वर्गीकरण को बदला जाये और इसके स्थान पर नया परिष्कृत वर्गीकरण जो भूमि की गुणवत्ता, उसके विकास के स्तर और उत्पादकता जैसे तत्वों पर आधारित हो उपयोग में लाया जाना चाहिए।

(6) उपर्युक्त (3), (4) तथा (5) के अनुपालन में राज्य को जो भूमि उपलब्ध हो उसे भूमिहीन मजदूरों और सीमान्त किसानों को उस क्रम में वितरित किया जाना चाहिए और उसमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को देय भाग भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए जो भूमिहीन मजदूरों में उनकी संख्या के अनुपात से कम न हो।

(7) राज्य को अनसूचित जातियों तथा जन जातियों के सदस्यों को ऐसी भूमि खरीदने के लिए, जो उपर्युक्त (2) के व्यवस्थान के अनुसार उपलब्ध हो, ऋण देने के लिए एक विशेष निधि का निर्माण करना चाहिए, यह ऋण ब्याज-मुक्त होना चाहिए और दस या अधिक वार्षिक किस्तों में वसूल किया जाना चाहिए। (पैरा 2.32)

7. भारत सरकार आदिवासी लोगों द्वारा वन भूमि पर तथाकथित अनधिकृत कब्जों और लघु वनोपज के संग्रह मूल्य के मुद्दों पर राज्य सरकारों से तत्काल बात-चीत आरम्भ करें। जब तक आदिवासी लोगों की वनों के प्रबन्ध में भागीदारी के लिए दीर्घकालीन योजना तैयार नहीं हो जाती है, तब तक पूर्वगामी पैराग्राफ में वर्णित योजना के अनुसार दोनों तरफ यथास्थिति बनाए रखने के आधार पर आदिवासी लोगों के साथ एक समझौता किया जाय।

(पैरा 2.40)

8. संघ सरकार इस असंगठित क्षेत्र के मजदूरों जिसमें अनसूचित जातियों/जनजातियों का एक बड़ा हिस्सा शामिल है, के काम की परिस्थिति को सुधारने के लिए तत्काल उपाय करें। उसमें उन आर्थिक क्रियाकलापों पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाए जो परम्परा से अनसूचित जातियों तथा जनजातियों से जुड़ी हुई हैं। यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि (1) इन सभी व्यवसायों में मजदूरी न्याय संगत हो और उनकी दरों का निर्धारण उनके विरुद्ध अन्तर्निहित पूर्वाग्रह से प्रभावित न हो

और (2) उसमें निम्न तत्वों को उचित महत्व दिया जाए—(क) काम से सम्बन्धित कौशल, (ख) उसमें लगने वाले श्रम की कठोरता और (ग) काम करने की अरुचिकर स्थिति। राष्ट्रीय मजदूर आयोग के निष्कर्षों और सिफारिशों कीप्रतीक्षा किए बिना ही विशिष्ट रूप से नीचे बताई कार्यवाही तत्काल की जाए--

(क) **न्यूनतम मजदूरी**

(1) कानूनी न्यूनतम मजदूरी तक में वर्तमान अन्यायी स्थिति को भी समाप्त किया जाना चाहिए। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम में इस प्रभाव का एक उपबन्ध होना चाहिए कि सभी आर्थिक क्रियाकलापों में साधारण मजदूरों की दैनिक मजदूरी इस सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए निर्धारित की जाएगी कि परिवार के एक सदस्य की आय पूरे परिवार के जीवनयापन के लिए पर्याप्त हो।

(2) काम की अवधि में अटौती के अनुपात से दैनिक मजदूरी की दरों में कटौती उन स्थितियों को छोड़कर जहां कार्य निरन्तर नहीं हो और तत्काल उपलब्ध कार्य इतना न हो जो एक व्यक्ति को भी पूरे दिन पूरी तरह व्यस्त रखने के लिए पर्याप्त नहीं है निषिद्ध की जानी चाहिए।

(ख) **मेहतर कार्य**

एक ओर मल की सिर पर उठाने की प्रथा का उन्मूलन करने के लिए सभी संभव प्रयास किए जाने चाहिए उसके साथ ही मेहतर के काम को व्यावसायिक आधार पर तत्काल व्यवस्थित किया जाना चाहिए। इस योजना में विशिष्ट रूप से निम्नलिखित सम्मिलित किए जायें –

(1) मेहतरों का पारिश्रमिक सरकार के समूह ग कर्मचारियों के बराबर निर्धारित किया जाए;

(2) मेहतर के काम में लगे व्यक्तियों का व्यक्तिगत जीवन उनके व्यावसायिक जीवन से पूर्ण रूप से पृथक किया जाए;

(3) 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों की मेहतर के काम में लगाने को कानूनी रूप से निषिद्ध किया जाए; और

(4) 14 वर्ष तक की आयु के ऐसे सभी बच्चों के लिए, जिनके माता-पिता मेहतर के काम में लगे हैं, आवासीय संस्थानों में अनिवार्य तथा मुफ्त शिक्षा दी जाए।

(ग) **परम्परागत दाईयां**

परम्परागत दाईयों को राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के एक अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। उन्हें उपयुक्त रूप से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए और आधुनिक उपकरण उपलब्ध कराए जाने चाहिएं। गांवों में दाईयों को एक निर्धारित पारिश्रमिक और यथोचित मानदेय जैसे उनके द्वारा कराए गए प्रति प्रसव के लिए 100 रुपए का मानदेय दिया जाना चाहिए।

(घ) **चमड़ा कर्मकार**

चमड़े के काम से संबंधित पूरे व्यवसाय, चमड़ा उतारने से लेकर चमड़े की वस्तुओं के बनाने तक को, एक व्यवसाय के रूप में सरकारी आधार पर संगठित किया जाना चाहिए ताकि चमड़े के काम और उसके जातिगत आधार का सम्बन्ध औपचारिक रूप से समाप्त हो जाए। इस संबंध में निम्न कार्यवाही विशेष रूप से की जानी चाहिए।

(1) इस व्यवसाय में से सभी ठेकेदारों/बिचौलियों को हटाया जाए,

(2) चमड़े के साधारण काम करने वालों के कौशल को ऊंचा किया जाए और उन्हें नई तकनीक के लाभ उपलब्ध कराए जाएं, और

(3) एक सुदृढ़ विपणन संरचना स्थापित की जाए।

(पैरा 2.53)

9. अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और विकास के लिये कार्यों में शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिये। विशिष्ट रूप से —

(1) अनुसूचित जातियों औ जनजातियों के विकास के लिये नियत किये गये कुल परिव्ययों में शिक्षा के लिये आवश्यक परिव्ययों को प्रथम चार्ज माना जाना, चाहिये;

(2) अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उन समुदायों के लिये सहायता के विशेष कार्यक्रम आरम्भ किये जाने चाहियें जो साक्षरता के अत्यधिक निचले स्तर पर जैसे 7 प्रतिशत से कम साक्षरता स्तर पर हैं। इस विशेष कार्यक्रम के लिये तालुक/विकास खंड को ईकाई माना जाए, जिसके लिए 1981 की जनगणना के साक्षरता के आँकड़े उपलब्ध हैं।

(3) छात्रवृत्तियों और वजीफों और उनके लिए पात्रता की आय सीमा का पूर्ण रूप से पुनरावलोकन किया जाना चाहिये। ये दरें एक उपयुक्त सूचकांक जैसे कि सामान्य विद्यार्थियों और आवासीय विद्यार्थियों के लिये शिक्षा व्यय के सूचकांक से सम्बन्ध की जानी चाहिये शिक्षा व्यय सूचक में उपभोक्ता मूल्य सूचकांक और सामान्य जीवन स्तर सूचकांक को समान भार दे कर समायोजित किया जाय। छात्रवृत्तियों और वजीफों की दरों में बढ़ोतरी इतनी हो जिससे मंहगाई के कारण बढ़ी कीमतों के प्रभाव उस में पूरी तरह से जज्ब हो जाय। इस शिक्षा व्यय सूचकांक का निर्धारण हर साल वर्ष की समाप्ति पर किया जाना चाहिये। छात्रवृत्तियों और वजीफों की नई दरें नये सूचकांकों के आधार पर तय की जानी चाहिये तथा अगले शैक्षिक सत्र के आरम्भ से ही लागू माना जाना चाहिये।

(4) छात्रों के लिये सभी छात्रवृत्तियां और वजीफें महीने की प्रथम तारीख को देय होने चाहिये, न कि महीने की अन्तिम तारीखों की जैसा अभी होता है। प्रथम माह की छात्रवृत्ति पात्रता कार्ड के आधार पर अगली कक्षा में दाखिले के दिन से

ही देय होनी चाहियें, पात्रता कार्ड स्थायी आधार पर जारी किये जाने चाहिये।

(पैरा 3.20)

10. अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिये सरकारी सेवाओं में और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में आरक्षण की एक सुबोध नीति अपनाई जाये। विशेष रूप से –

(1) केन्द्रीय सरकार को आरक्षण पर एक व्यापक कानून बनाना चाहिये और उसके अधीन उपयुक्त नियम भी बनाने चाहियें। इस कानून में ऐसा उपबन्ध होना चाहिये जिसे प्रत्येक राज्य उपयुक्त संशोधन कर उसे अपनी स्थानीय स्थिति के अनुरूप उसे ढाल सके। तथापि, यदि कोई राज्य उसे दी गई अवधि, जैसे केन्द्रीय कानून के बनने के तीन महीने की अवधि के अन्दर तत्सम्बन्धी कार्यवाही न करें तो उसका विस्तार सम्बन्धित राज्य पर स्वयंमेव हो गया समझा जाना चाहिये।

(2) केन्द्रीय सरकार को अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आयुक्त के परामर्श से आवश्यक आरक्षण पर एक विस्तृत निर्देशिका तैयार करनी चाहिये जो केवल परिपत्रों का संग्रह मात्र न हो परन्तु जिसमें इस रिपोर्ट में और इससे पहले की रिपोर्टों में बताई गई सब कमियों को दूर करने के लिए आवश्यक बातों का समावेश किया जाना चाहिये।

(3) सरकार के अधीन रिक्तियों के अनारक्षण के मामलों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आयुक्त का परामर्श बाध्यकारी होना चाहिये। इस सम्बन्ध में सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को भी आयुक्त के क्षेत्र अधिकार में लाया जाना चाहिये।

(4) राज्य सरकारों के लिये भी यह अनिवार्य किया जाना चाहिये कि वे भी अनारक्षण के बारे में इसी प्रकार की कार्य विधि अपनायें और ऐसे सभी मामले किसी स्वतन्त्र प्राधिकारी को भेजे जाने चाहियें जिसका परामर्श बाध्यकारी होना चाहियें।

(5) सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को यह निदेश दिया जाना चाहिये कि "सफाई" के कार्य को ठेके पर देने की प्रथा समाप्त की जाये। इसमें कार्य का प्रबन्ध सहकारिता के आधार पर किया जा सकता है परन्तु इसमें शर्त यह होनी चाहिये कि इन सहकारी समितियों के सदस्यों को वे सभी लाभ दिये जायें जिनके लिये उस उद्यम के अन्य कर्मचारी हकदार हों।

(पैरा 3.27)

11. अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सूचियों में सम्मिलित किये जाने और उनमें से अपवर्जन किये जाने के लिये दावों पर कार्यवाही करने के लिये और अनुसूचित जाति/जनजाति के प्रमाण पत्रों का सत्यापन करने के लिये निम्नलिखित उपाय अपनायें जाने चाहिये।

(1) अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सूचियों में सम्मिलित किये जाने के लिये विभिन्न समुदायों के दावों की जांच प्रत्येक मामले में विशेष रूप से गठित विशेषज्ञों के एक दल द्वारा पूर्ण रूप से की जानी चाहिये। इस विशेषज्ञ दल से यह अपेक्षा की जानी चाहिये कि वह उन दावों की जांच (क) उस समुदाय के अन्दर के प्रत्येक उप-समूह यदि कोई हो, और (ख) प्रत्येक सुसंगत भौगोलिक इकाई, जो ऐतिहासिक जातीय और भाषाई आधारों के सन्दर्भ में इस प्रयोजन के लिये आवश्यक हो, की सामाजिक स्थिति के प्रसंग से करें। इस विशेषज्ञ दल को इस प्रस्ताव के बारे में संबंधित भौगोलिक इकाईयों में अन्य अनुसूचित जातियों और जनजातियों, जैसा भी स्थिति हो, की प्रतिक्रियाओं को भी दर्ज करना चाहिये। इस विशेष दल की रिपोर्ट पर उसके पूरे रिकार्ड सहित एक ऐसी राष्ट्रीय समिति द्वारा विचार किया जाना चाहिये जिसमें प्रतिष्ठित समाजविज्ञानी शामिल हों। प्रत्येक मामले में इस राष्ट्रीय समिति की सिफारिशें और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आयुक्त के तत्संम्बन्धी विचार भी, यदि कोई हों, संसद के सामने अनुसूचियों में संशोधन के लिये उनके विचार के लिये प्रस्ताव लाने के समय उसे उपलब्ध कराये जाने चाहियें।

(2) इन सूचियों की ऐसी विसंगतियां जिनका झूठे दावे प्रस्तुत करने के लिये प्रयोग होता है जो सम्बन्धित प्राधिकारियों की जानकारी में आयें उनका संकलन किया जाना चाहिये और सूचना तथा मार्ग दर्शन के लिए उन प्राधिकारियों को भेजी जानी चाहिये जो अनुसूचित जातियों/जन जातियों के प्रमाण पत्र जारी करने के लिये जिम्मेदार हैं।

(3) अनुसूचित जातियों/ जनजातियों के सभी छात्रों को उनकी स्कूली शिक्षा की समाप्ति पर जाति के स्थाई प्रमाण पत्र कम्प्यूटर नम्बरों सहित जारी किये जाने चाहियें। स्कूल बोर्डों के लिये यह अनिवार्य किया जाये कि वे अनुसूचित जातियों/ जनजातियों के छात्रों को मिले कम्प्यूटर नम्बरों को उनके हाईस्कूल के प्रमाण पत्रों में शामिल करे। यह प्रमाण पत्र किसी व्यक्ति के अनुसूचित जाति या जनजाति का होने का निश्चायक साक्ष्य समझा जाना चाहिये।

(पैरा 3.34)

12. अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए केन्द्रीय सरकार की विशेष जिम्मेदारी की दृष्टि से वित्तीय सहायता की योजना और उसे कार्यान्वित करने के लिए कार्य-विधि इत्यादि को सुव्यवस्थित किया जाना चाहिए विशिष्ट रूप से—।

(1) केन्द्रीय सरकार द्वारा आदिवासी कल्याण के लिए वित्तीय सहायता पूरी तरह से संविधान

के अनुच्छेद 275(1) के पहले परंतुक में निहित सिद्धांत के अनुसार दी जानी चाहिए। इस संबंध में विशेष रूप से यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि (क) आदिवासी कल्याण के लिए धनराशि नियत किए जाने का आधार उनके किसी क्षेत्र अथवा राज्य विशेष में स्थित होने का संयोग न होकर उनके लिए कार्यक्रम समुच्चय की आवश्यकता होना चाहिए और (ख) जहां एक ओर राज्य योजना में से आदिवासी कल्याण के लिए प्रावधान ऐसे सिद्धान्तों के आधार पर जो उस संबंध में निर्धारित किये जाय तथा जितनी उस दायित्व को निभाने के लिये उनकी क्षमता के अनुरूप में होनी चाहिए वहीं दूसरी ओर केन्द्रीय सरकार की वित्तीय सहायता अनुपूरक के रूप में होनी चाहिए और उसकी राशि किसी भी तरह से राज्य के योगदान करने के सामर्थ्य तथा इच्छा से प्रभावित नहीं होनी चाहिए। आदिवासी कल्याण से संबंधित उन सभी कार्यक्रमों का जिनके लिए राज्य से योगदान करने की अपेक्षा की जाती है, इन सिद्धान्तों के संदर्भ में फिर से तैयार किया जाना चाहिये।

(2) आदिवासी कल्याण के लिये अनुपूरक सिद्धान्तों को जो संविधान में अर्न्तनिहित अनुसूचित जातियों के कल्याण के कार्यक्रमों के लिए भी स्वीकार किया जाना चाहिए।

(3) सभी राज्यों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास दोनों के लिए एक एक बजट में अलहदा मांग कायम की जानी चाहिए।

(4) आदिवासी उपयोजना के लिए प्रावधानों में मुख्य रूप से वही मदें शामिल की जानी चाहिएं जो आदिवासी लोगों के विकास से संबंधित हैं। यदि आदिवासी उपयोजना में अन्य मद जैसे बिजली तथा बड़ी सिंचाई योजनाएं भी शामिल की जाती है तो ऐसी मदें उस बजट के भाग 'ख' के रूप में इस स्पष्ट शर्त के साथ अलग से दिखाई जानी चाहिए कि बजट के भाग 'क' से भाग 'ख' में कोई पुर्नविनियोजना नहीं हो सकती है।

(5) विशेष केन्द्रीय सहायता की जो राशि पंचवर्षीय योजना की अवधि के अन्त में अप्रयुक्त शेष बची रह जाए उसे एक विशेष शिक्षा निधि में जमा कर दिया जाए जिसका उपयोग अनन्य रूप से प्राथमिक शिक्षा का विस्तार करने तथा उसकी गुणवत्ता बढ़ाने के लिए किया जाये।

(पैरा 3.57)

13. छठी योजना के दौरान विशेष केन्द्रीय सहायता के उपयोग और सातवी योजना के दौरान उसके आबंटन की समीक्षा की जानी चाहिए। विशिष्ट रूप से—

(1) पैराग्राफ 3.5 में बताई गई विशेष केन्द्रीय सहायता की वह राशि जो छठी योजना के अन्त में राज्यों के पास प्रायुक्त शेष बची है और ऐसी और भी राशियां जो इन राज्यों तथा अन्य राज्यों में आदिवासी उपयोजना तथा यदि संभव हो तो विशेष संघटक योजना के संबंध में भी प्रावधान तथा व्यय की समीक्षा के बाद छठी योजना के दौरान अप्रयुक्त शेष बची पाई जाएं। सातवीं योजना के अन्तिम दो वर्षों के दौरान प्राथमिक शिक्षा के लिए अतिरिक्त प्रावधान के रूप में उपलब्ध कराई जाये।

(2) आदिवासी कल्याण के लिए प्रावधान तत्काल कम से कम आनुपातिक आधार पर अर्थात् 84.6 प्रतिशत तक उपयुक्त रूप से बढ़ाया जाना चाहिये और अतिरिक्त प्रावधान चालू वर्ष के लिए दिया जाना चाहिए।

(3) प्रत्येक राज्य में छितरे आदिवासी लोगों के लिए पृथक उपयोजनाएं तैयार की जानी चाहिएं जिनमें राज्य योजनाओं से तथा विशेष केन्द्रीय सहायता से दिया जाने वाला प्रावधान स्पष्ट रूप से दर्शाया जाना चाहिए।

(पैरा 3.58)

14. यह सुनिश्चित करने के लिए तत्काल उपयुक्त उपाय किए जाने चाहिएं कि आठवीं पंचवर्षीय योजना से आदिवासियों के लिए विकास की योजनाएं (आदिवासी उपयोजना) तथा अनुसूचित जातियों के लिए विकास की योजनाएं (विशेष संघटक योजना) दीर्घकालीन दृष्टि तथा सुनिश्चित लक्ष्यों के संदर्भ में तैयार की जाए जिससे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य अधिक से अधिक दो पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में संबंधित राज्यों में विकास के सामान्य स्तर तक पहुंचने में समर्थ हो जाये। विशेष रूप से—

(1) आदिवासी उपयोजना तथा विशेष संघटक योजना के लिए वित्तीय प्रावधान राष्ट्रीय स्तर तथा उसी प्रकार प्रत्येक राज्य के स्तर पर भी तत्संबंधी व्यापक योजना अभ्यास के एक भाग के रूप में निर्धारित किया जाना चाहिए तथा उसकी राशि का आकार इतना रखा जाना चाहिए जो पहले से सुनिश्चित किए गए उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक हों। राष्ट्रीय योजना में तथा राज्य योजनाओं में क्रमशः पूरे राष्ट्र के लिये तथा राज्यों के शेष भागों के लिये नियत की गई विकास की दर की तुलना में आदिवासी उप-योजना क्षेत्र के लिए परिकल्पित विकास की दर का भी स्पष्ट रूप से उल्लेख किया जाना चाहिए।

(2) आदिवासी उपयोजना तथा विशेष संघटक योजना के लिए नियत किए गए समग्र प्रावधान में विभाग-वार आबंटन अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण और विकास के लिए प्राथ-

मिकताओं को ध्यान में रखते हुए तत्संबंधी आज की उलटी प्रक्रिया का परित्याग कर निश्चित किए जाने चाहिए। और

(3) संबंधित राज्यों तथा केन्द्रीय मंत्रालयों की पंच-वर्षीय योजनाओं में आदिवासी उपयोजनाओं और विशेष संघटक योजनाओं के लिए किए गए प्रावधानों को आधार निवेश के रूप में माना जाना चाहिए और ऊपर (2) में जिस स्तर की परिकल्पना की गई है उसे साकार करने के लिए जो अन्तर बच रहता है उसे पूरी तरह से भरने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा पूरी पूरी राशि विशेष केन्द्रीय सहायता के रूप में दी जानी चाहिए जो अनुपूरक ही और जिसका संचालन भी नाभिकीय मंत्रालय करे।

(पैरा 3.61)

15. सभी प्रकार के शोषण की समाप्त करने के उपायों को आदिवासी उपयोजना के अधीन सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए और उस संबंध में राज्य सरकारों द्वारा तत्काल समयबद्ध कार्यवाही की जानी चाहिए। इन उपायों का प्रभावी कार्यान्वियन सुनिश्चित करने के लिए जहां आवश्यक हो केन्द्रीय सरकार का उपयुक्त निवेश जारी करने पर विचार करना चाहिये। आबकारी, वन और ऋण और विपणन के बारे में निम्नलिखित उपाय विशेष रूप से किए जानें चाहिएं—

(1) आबकारी—राज्यों को अपनी आबकारी नीतियों का पुनरावलोकन करना चाहिए और इन्हें 1–4–89 तक भारत सरकार द्वारा 1975 में जारी किए गए मार्ग-निर्देशों के पूर्ण रूप से अनुसार बनाया जाना चाहिए।

(2) वन–भारत सरकार औपचारिक रूप से एक ऐसे संकल्प पर विचार करे जिसमें स्पष्ट रूप से आदिवासी लोगों को वन संसाधनों के प्रबन्ध और विकास में भागीदारी के रूप में स्वीकार किया जाए ताकि वानिकी के संबंधित प्रशासन और लोगों की धारणाओं में वांछित परिवर्तन लाया जा सके और आगे के कार्यक्रमों के लिए उयुक्त प्रविधि तैयार की जा सके।

(3) ऋण और विपणन–आदिवासी क्षेत्रों में ऋण और विपणन व्यवस्था का रूप निम्नानुसार होना चाहिये—

(क) उसे तीन स्पष्ट उद्देश्यों के संदर्भ में युक्तियुक्त और पुनर्गठित किया जाए—

(1) आदिवासी लोगों की ऋण और विपणन की सभी आवश्यकताओं के लिए एक बिन्दु सेवा की व्यवस्था की जाये ;

(2) आदिवासी उत्पादों को खरीदने के लिए और उन्हें आवश्यक उपभोग वस्तुएं देने के लिए वाजिब भाव सुनिश्चित किया जाए ;

(3) आदिवासी लोगों की उपभोग ऋण सहित ऋण की सभी आवश्यकताओं का पूरी तरह से समाधान करना और

(ख) ऋण और विपणन की व्यवस्था का पूरा खर्च राज्य द्वारा उस समय तक पूरी तरह से उठाया जाये जब तक आदिवासी क्षेत्र शेष राज्य के विकास के स्तर तक नहीं पहुंच जाते हैं।

(पैरा 3.76)

16. आदिवासी उपयोजनाएं इस प्रकार से तैयार की जानी चाहिएं कि आदिवासी लोगों का कल्याण और प्रकृति निरन्तर केन्द्र में रहे और सभी कार्यक्रम उसी मूलभूत मान्यता के अनुरूप हों। विशेष रूप से—

(1) आदिवासी उपयोजनाओं में शोषण समाप्ति के बाद सर्वोच्च प्राथमिकता शिक्षा, स्वास्थ्य और जनजागरण जैसे कार्यक्रमों को दी जानी चाहिए जिनसे आदिवासी लोगों में आन्तरिक क्षमता का निर्माण हो और जिनसे वे स्वंय परिवर्तन की चुनौतियों का सामना करने के लिए समर्थ हो सकें।

(2) राज्य के बजट में एक अनुबंध होना चाहिए कि किसी अन्य कानून में किसी बात के होते हुए भी प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौम बनाने और उस स्तर की शिक्षा के स्तर में सुधार करने के लिए आवश्यक निधियां आदिवासी उपयोजनाओं के लिये किए गए प्राविधानों पर प्रथम प्रभारी होंगी।

(3) आदिवासी क्षेत्रों में लिये जाने वाले सभी कार्यक्रमों को चाहे उनके लिये राशि किसी भी स्रोत से क्यों न आए पूर्ण रूप से एकीकृत किया जाना चाहिए। ये कार्यक्रम लोगों तक एक विभेदहीन समुच्चय के रूप में पहुंचने चाहिए और उनका क्रियान्वयन एक एकीकृत अभिकरण द्वारा किया जाना चाहिए।

(4) आदिवासी उपयोजनाओं की मूल भावना नीचे से आयोजित होनी चाहिए। इसका शुभारंम्भ आठवीं योजना से एकीकृत आदिवासी परियोजनाओं के स्तर पर योजना बनाकर किया जाना चाहिए जिसके लिए आवश्यक कदम अभी से उठाए जाने चाहिएं।

(5) जहां एक ओर एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं में आदिवासी विकास के लिए सामान्य रण-नीति में निर्धारित प्राथमिकताओं का अनुसरण किया जाए, उसके साथ ही दूसरी ओर एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं के स्तर पर कार्यक्रम पूरी तरह से प्रत्येक एकीकृत परियोजना में लोगों की आवश्यकताओं

के अनुरूप तैयार किया जाना चाहिए एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना में विभागीय प्रावधानों के विभिन्न कार्यक्रमों के लिये सापेक्षिक महत्ता का निर्धारण भी तदनुसार ही किया जाना चाहिए जिसके लिए एकीकृत आदिवासी विकास परियोजन स्तर पर संबंधित प्राधिकारियों को पूर्ण विवेकाधिकार प्राप्त होना चाहिए।

(6) एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं के सभी कार्यक्रमों में उन मुद्दों के लिए पूरे प्रावधान किए जाने चाहिए जिनसे आदिवासी लोगों को सीधे लाभ पहुंचता है जैसे कि प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के कार्यक्रम में औषधियों के लिये प्रावधान।

(7) एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं में अवस्थापना के आयोजन का उद्देश्य संबंधित क्षेत्र को विकास न मानकर उसे आदिवासी लोगों के कल्याण से जोड़ा जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, सड़कों का फैलाव का उद्देश्य उस योजना में पगडंडियों, पहाड़ी मार्गों, और पुलियों को स्थान देकर लोगों के लिये क्षेत्र को सुगम बनाने में सुधार करने को प्राथमिकता देकर होना चाहिए।

(8) प्रत्येक एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना में ऐसे क्षेत्रों का रेखांकन और लोगों की अलग पहचान की जानी चाहिए जो विशेष समस्याओं का सामना कर रहे हों जैसे कि अधिक पिछड़े-क्षेत्र, औद्योगिक और खनन परिसरों के प्रभाव क्षेत्र, शहरी विकास केन्द्र, आखेट और संग्रह अर्थव्यवस्था वाली जातियां इत्यादि। इन सब के लिए एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं की समग्र योजना के अन्दर अलग-अलग लघु योजनाएं तैयार की जानी चाहिएं।

(9) राज्य की सभी एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं की योजनाएं विभागवार और कार्यक्रम वार प्राविधान और खर्च का पूरा विस्तृत विवरण सहित उस राज्य की आदिवासी उपयोजना से संबंधित बजट के मांग के एक पूरक के रूप में पृथक से प्रस्तुत की जानी चाहिए।

(पैरा 3.85)

17. जब तक आदिवासी लोगों के संसाधनों पर अधिभार और उनके उपभोग और उनके विस्थापन संबंधी संवैधानिक सुरक्षणों की जांच की जाती है और तत्संबंधी नीति निर्धारण राष्ट्रीय आमसहमति बनाने की दिशा में सरकार द्वारा उसके निष्कर्षों पर विचार करने तक सभी चालू परियोजनाओं का और विभिन्न स्तरों पर सरकार के विचाराधीन परियोजनाओं का भी पुनरावलोकन किया जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि आदिवासियों के लिए संविधान में प्रदत्त सुरक्षणों की उनकी वास्तविक भावना के अनुरूप सम्मान किया जाता है और उनका पक्ष केवल इस आधार पर बिना विचार किए नहीं रहता है क्योंकि उन्हें उस पक्ष को प्रस्तुत करने के लिए अवसर नहीं मिला था या उनके अधिकारों से संबंधित कानूनों में ही विसंगति थी। उसके लिये उनके पास वांछित अभिव्यक्ति का अभाव था।

(पैरा 3.94)

18. आदिम आदिवासी समुदाय के विकास के लिए कार्यक्रम सुव्यवस्थित किए जाने चाहिए, विशिष्ट रूप से--

(1) आदिम जनजातियों की सूची में सम्मिलित किए गए सभी समुदायों का व्यवस्थित रूप से पुनरावलोकन किया जाना चाहिए और उनमें से उन भागों/वर्गों का निर्धारण किया जाए जो अभी भी आखेटा और संग्रह या झूम खेती के स्तर पर अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए संघर्ष कर रहे हैं और जो कभी भूमिहीन श्रमिकों की अवस्था में है।

(2) इन समुदायों के अधिक से अधिक 500 व्यक्तियों के प्रत्येक समूह को जीवनक्षम बनाने, कल्याण और प्रगति के लिए एक व्यापक योजना बनाई जाए। इस योजना में उनके स्वास्थ्य और सामाजिक-आर्थिक समस्याओं से संबंधित विशिष्ट सवालों के समाधान के लिये उपयुक्त व्यवस्था की जानी चाहिए।

(3) सरकार आदिम जनजातियों के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक विशेषज्ञ दलगठित करें जिसमें समाज विज्ञानी, चिकित्सा तथा पोषण विशेषज्ञ और प्रशासक शामिल हो और जो व्यापक योजनाएं और कार्यक्रम को बनाने के लिए परामर्श देने और उनकी प्रगति की समीक्षा करने के लिए जिम्मेदार होना चाहिए।

(4) अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान और राष्ट्रीय पोषण संस्थान जैसे राष्ट्रीय संस्थानों को इन आदिम समूहों की समस्याओं के निर्धारण करके उनके फिर से जीवनक्षम बनाने के लिए कार्यनीति तैयार करने के आधार पर उनके जैविक अस्तित्व को बनाए रखने के लिए आवश्यक सहायता प्रदान करने के लिए जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए।

(पैरा 3.101)

19. भारत सरकार एक व्यापक नीति आलेख तैयार करे जिसमें राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों और जन जातियों के सदस्यों के लिए न्याय स्थान सुनिश्चित करने के राष्ट्रीय वायदे को पूरा करने के लिए एक व्यापक रणनीति की स्पष्ट रूप रेखा प्रस्तुत की जाए। जब तक यह नीति नहीं बनाई जाती है और एक उपयुक्त रणनीति तैयार नहीं की जाती है तब तक निम्नलिखित तात्का-

लिक कार्यवाही आरम्भ की जाए जो संवैधानिक दायित्व को पूरा करने के लिए किए गए किसी भी संरचना में प्रथम कदम के रूप में आवश्यक हों—

(1) सामान्य रूप से असंगठित क्षेत्र में और उन व्यवसायों में जिनमें अनुसूचित जातियों के सदस्य परम्परागत रूप से लगे हुए हैं मजदूरी की कहदारी और कौशल के मूल्यांकन को एक उपयुक्त कानून बनाकर न्याय और समतामूलक बनाया जाना चाहिए।

(2) रोजगार के लिए ऐसे व्यापक कार्यक्रम आरम्भ किए जाने चाहिएं जिनमें समाज के कमजोर वर्गों के स्वामित्व वाले साधनों के निर्माण और विकास को केन्द्र में रखा जाना चाहिए जिनमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों के व्यक्तियों के लिए न्याय हिस्सा सुरक्षित किया जाना चाहिए।

(3) उन लोगों की परम्परागत हक्कदारी को जो तथाकथित बंजर भूमि जैसे सीमान्त संसाधनों पर जीवन निर्वाह करते रहे हैं पर मान्यता दी जानी चाहिए और उन संसाधनों की भावी क्षमता का विकास गरीबों के सहयोग से किया जाना चाहिए और उन संसाधनों पर उन्हीं का पूर्ण अधिकार होना चाहिए जिसमें से अ-गरीबों को स्पष्ट रूप से अलहदा किया जाना चाहिए।

(4) वे सभी आर्थिक कार्य जैसे पशुपालन, मुर्गी पालन, बागवानी सहित वृक्ष खेती जो सीमान्त किसानों और भूमिहीन मजदूरों के लिए एक सहायक व्यवसाय रूप में हो सकते हैं, अनन्य रूप से विकेन्द्रीकृत क्षेत्र के लिए आरक्षित किए जाने चाहिएं। उनमें किसी भी प्रकार का केन्द्रीयकरण कानून द्वारा निषिद्ध किया जाना चाहिए। इन क्रियाकलापों में लघु मजदूरों वाले उद्यमी के प्रतिमान को अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए। मजदूर उद्यमी को वित्तीय, तकनीकी और संगठन संबंधी सभी प्रकार की आवश्यक पूरी सहायता रूप में उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

(पैरा 4.35)

20. सकारात्मक विभेद की नीति को और व्यापक बनाया जाना चाहिए। उसके अन्तर्गत विशेष रूप से निम्न तत्व शामिल हों—

(1) यह नीति राष्ट्रीय वायदे के अनुरूप संगठित क्षेत्र में गैर-सरकारी उद्यमों में उनके सामाजिक दायित्व में सहभागिता के उपलक्ष में तत्क्षण लागू की जानी चाहिए इसे संयुक्त क्षेत्र के उन सभी उद्यमों और ऐसे साहूकारी निकायों के लिए अनिवार्य बनाया जाना चाहिए जो संस्थागत वित्त का लाभ प्राप्त कर रहे हों।

(2) सकारात्मक विभेद की नीति प्रत्येक मंत्रालय/विभाग/सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठान द्वारा उन सभी आर्थिक क्रियाकलापों के लिए तैयार की जानी चाहिए जो उनके अधिकार क्षेत्र के अधीन हैं। उनमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों द्वारा उस नीति का लाभ उठाया जा सके इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक व्यापक योजना तैयार करनी चाहिए। इस योजना में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों को आर्थिक रूप से स्थायी उद्यमियों के रूप में स्थापित करने के अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सामान्य रूप से उपयुक्त कौशल और विशिष्ट रूप से उद्यम संबंधी प्रशिक्षण शामिल किया जाना चाहिए और उस उद्यम के अच्छी तरह स्थापित हो जाने तक के प्रारम्भिक चरण में उपयुक्त वित्तीय सहायता और मार्ग-दर्शन के लिए उपबन्ध किया जाना चाहिए जिसमें तरह तरह के जोखिमों और आकस्मिक घटनाओं से निपटने के लिए भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

(3) उन सभी संपत्तियों और संसाधनों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के लिए उचित आरक्षण किया जाना चाहिए जैसे आवासीय गृहों और वाणिज्यिक केन्द्रों में जो राज्य और/अथवा सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा भूमि अर्जन, वित्तीय व्यवस्था और इसी प्रकार की अन्य सहायता के आधार पर नगरीय क्षेत्रों के निजी क्षेत्रों मे निर्मित किए हैं। इन सभी योजनाओं की संरचना में ही अनुसूचित जातियों और जनजातियों के पक्ष में कुछ रियायतें रखी जानी चाहिएं।

(4) भारत सरकार को अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को आवश्यक वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए एक विशेष योजना तैयार करनी चाहिए ताकि वे ऊपर (3) में निर्दिष्ट नए साधनों में एक उपयुक्त हिस्सा अर्जित करने में समर्थ हो सकें।

(पैरा 4.36)

21. यह सुनिश्चित करने के लिए विशेष उपाय किए जाने चाहिए कि आदिवासी क्षेत्रों में जो नई सम्पत्तियां तथा साधन निर्मित हो रहे हैं और जो नए उद्यम स्थापित किए

जा रहे हैं उनमें एक उपयुक्त हिस्सा आदिवासी लोगों को मिले। विशेष रूप से—

(1) आदिवासी क्षेत्र में औद्योगिक तथा नगर केन्द्रों की स्थापना और विस्तार की सभी योजनाओं में कुल गृह-भूखण्डों, आवासीय भवनों और वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों का 50 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के लिए आरक्षित किया जाना चाहिए।

(2) उन सभी व्यक्तियों और सार्वजनिक निकायों के लिए जो आदिवासी क्षेत्रों में किसी आदिवासी की भूमि पर कोई उद्यम स्थापित करते हैं, यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि वे उसे इसी तथ्य के आधार पर कि उसकी भूमि पर प्रतिष्ठान बना है इस उद्यम में एक शेयर होल्डर की हैसियत से भागीदार बनाएं।

(3) आदिवासी क्षेत्रों में स्थापित सभी सहकारी उद्यमों में अनुसूचित जनजाति के सदस्यों की भागीदारी और/या उन्हें शेयर दिलाने के लिए एक उपयुक्त योजना तैयार की जानी चाहिए।

(4) आदिवासी क्षेत्रों में स्थापित उद्यमों के लिए कच्चे मालों के लिए उत्पादन में लगे मजदूरों के लिए एक विशेष स्थान दिया जाना चाहिए जो उन लोगों के समकक्ष हों। जिन्हें उद्योग द्वारा सीधे काम में लिया जाता है। और जहां पर संभव हो उस संस्थान के शेयरों में और उसके प्रबन्ध में भी उन्हें भागीदार बनाया जाना चाहिए।

(5) उस स्थिति में जब किसी अंचल को किसी शहरी निकाय के क्षेत्राधिकार में लाया जाता है तो संबंधित क्षेत्र में आदिवासी लोगों के पैतृक सम्पत्तियों को करों से मुक्त रखा जाना चाहिए।

(6) सरकार को आदिवासी लोगों को स्थिति की आवश्यकता के अनुसार ऐसा समर्थन देने की व्यवस्था करनी चाहिए जो उन्हें ऊपर वर्णित विशेष प्रावधानों का लाभ उठाने के लिए समर्थ बना सके।

(पैरा 4.41)

22. केन्द्रीय सरकार को संबन्धित राज्य सरकारों के परामर्श से एक व्यापक योजना तैयार करनी चाहिए ताकि अनसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य सामान्य रूप से प्रस्तावित विकास केन्द्रों में निर्मित किए जा रहे नए अवसरों और विशिष्ट रूप से बंबई के निकट मुख्य भूमि पर बन रहे नए शहर में सम्भावित अवसरों के लाभ प्राप्त करने में समर्थ हो सके। जहां एक ओर इन योजनाओं की संरचना ही ऐसी हो जिसमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों के पक्ष में उपयुक्त रियायतों के लिए उपबन्ध हो तथा यदि आवश्यक हो तो कुछ और उपबन्ध भी किए जाएं वहीं दूसरी ओर अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को उस नए विकास में भाग लेने हेतु समर्थ बनाने के लिए एक विशेष निधि का भी निर्माण करें।

(पैरा 4.43)

23. अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के लिए प्रदत्त संवैधानिक सुरक्षणों के आरोपित उल्लंघन के मामलों में कार्यवाही करने के लिए सरकार के कार्य संचालन के नियमों में उपयुक्त उपबन्ध किए जाएं। ये सभी मामले राज्य में मंत्रिमण्डल और राज्यपाल तथा केन्द्र में केन्द्रीय मंत्रिमंडल के सामने प्रस्तुत किये जाने चाहिए। एक परिपाटी भी स्थापित की जानी चाहिए और यदि आवश्यक हो तो, ऐसे मामलों को उच्चतम न्यायालय को भेजने के लिए एक उपयुक्त केन्द्रीय कानून बनाया जा सकता है जिनमें कोई प्राधिकारी जानबूझकर इस तरह से काम करता है कि उससे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को संवैधानिक सुरक्षणों के विशेषाधिकार से वंचित किया जाता है अथवा शोषण के विरुद्ध प्रभावी सुरक्षण प्रदान कराने के लिए उपयुक्त उपाय जानबूझकर नहीं लेता हो। जानबूझकर की गई ऐसी अवहेलना के आधार पर उसके सिद्ध हो जाने के बाद, संबंधित व्यक्ति अथवा व्यक्तियों पर समुचित कार्यवाही करने के लिए प्रावधान किया जाना चाहिए।

(पैरा 5.26)

24. संविधान में परिकल्पित राज्य के दायित्व को पूरा करने के लिए अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और प्रगति के प्रभारी मंत्रालय के कार्य और उसकी संरचना का तत्काल पुनरावलोकन किया जाना चाहिए। मंत्रालय को मुख्य रूप से एक नाभिकीय प्राधिकरण के रूप में कार्य करना चाहिए और उस पर ऐसे दायित्वों का बोझ नहीं डाला जाना चाहिए जो उचित रूप से विभिन्न विषयों से संबंधित मंत्रालयों/विभागों के होने चाहिएं। इस मंत्रालय को गरीबी निवारण कार्यक्रमों से संबंधित मुख्य जिम्मेदारी भी सौंपी जानी चाहिए क्योंकि यही कार्यक्रम वह आधार है जिस पर पूरक प्रयास किया जा सकता है। राज्यों और केन्द्र के कार्य संचालन के नियमों में सभी विषयों से संबंधित मंत्रालयों विभागों के लिए यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि वे ऐसे सभी मामलों में जिनका अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण और प्रगति के लिए कोई निहितार्थ हो उनके संबंध में उस मंत्रालय द्वारा अन्तिम निर्णय लिए जाने अथवा उस मामले को मंत्रिमण्डल के समक्ष प्रस्तुत किए जाने से पहले नाभिकीय मंत्रालय की सहमति प्राप्त करें। इस तरह की एक परंपरा भी डाली जानी चाहिए कि यदि अनुसूचित जातियों और जनजातियों से संबंधित जिम्मेदार मंत्रालय का

प्रभारी मंत्री, प्रधानमंत्री या मुख्यमंत्री नहीं है तो मंत्रिमण्डल में औपचारिक रूप से उनके बाद उसका अगला स्थान होना चाहिए जिससे समन्वय की जिम्मेदारियों का निर्वहन प्रभावी रूप से किया जा सके।

(पैरा 5.34)

25. सामान्य कानूनों का विस्तार अनुसूचित क्षेत्रों पर करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए—

(1) सामान्य कानूनों को अनुसूचित क्षेत्रों पर जिस रूप में वे हैं उसी रूप में अथवा ऐसे अनुकूलन के साथ जैसे प्रत्येक मामले में आवश्यक हो लागू करने से पहले उनके नियमित रूप से समीक्षा के लिए एक उपयुक्त कार्यविधि प्रारंभ की जानी चाहिए।

(2) कानूनों के उचित अनुकूलन के संबंध में कार्यापालिका द्वारा कार्य न किए जाने से उत्पन्न होने वाली दुखद स्थिति पर उच्चतम न्यायालय द्वारा ऐसे निदेश, जैसे वे उस संबंध में आवश्यक समझें देने के लिए विचार किया जाना चाहिए।

(पैरा 5.40)

26. भारत सरकार को वर्ष 1989 के लिए देश में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों के बारे में एक ऐसा स्थिति-पत्र तैयार करना चाहिए, जिसमें नमूना सर्वेक्षणों और गहन अध्ययनों के आधार पर अनुसूचित जातियों और जनजातियों तथा देश के विभिन्न भागों में अन्य लोगों के विकास के स्तरों के बीच अन्तर के बारे में एक अनुमान भी दिया जाए। इसे आने वाले वर्षों में विकास के स्तर का निर्धारण करने के लिए बेंचमार्क के रूप में उपयोग में लाया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त—

(1) इस बेंच-मार्क सर्वेक्षण के बाद हर साल एक सरसरा आर्थिक सर्वेक्षण किया जाए जिसका उद्देश्य परिवर्तन की दिशा पर नजर रखना होना चाहिए।

(2) इस संबंध से अगला व्यापक अध्ययन आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष में किया जाना चाहिए जिसका उद्देश्य उपलब्धियों का निर्धारण, कमियों का आकलन और अगली पंचवर्षीय योजना में उनकी प्रगति के लिए प्रयासों का निर्धारण होना चाहिए।

(3) प्रत्येक वृत्तिमूलक मंत्रालय को अपने अपने दायित्वों के क्षेत्रों के परिप्रेक्ष्य में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की आर्थिक स्थिति के बारे में एक स्थिति-पत्र तैयार करना चाहिए।

(4) प्रत्येक मंत्रालय में सामान्य जानकारी के प्रवाह की समीक्षा की जानी चाहिए और उसे उपयुक्त रूप से पुनरीक्षित किया जाना चाहिए जिससे अनुसूचित जातियों और जनजातियों से संबंधित आवश्यक सूचना सामान्य प्रवाह के रूप में उपलब्ध होती रहे।

(5) बेंच-मार्क सर्वेक्षण, पंचवर्षीय व्यापक सर्वेक्षण और सरसरे वार्षिक सर्वेक्षण की जिम्मेदारी, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन को सौंपी जानी चाहिए जिसके पास आवश्यक कौशल है। इस संबंध में राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन को राज्यों के आदिवासी और हरिजन अनुसंधान संस्थानों सहित विभिन्न संगठनों द्वारा उपयुक्त सहायता दी जानी चाहिए।

(पैरा 5.44)

27. सभी संबंधित राज्यों को तत्काल अनुसूचित क्षेत्रों में शान्ति और अच्छे प्रशासन के लिए व्यापक विनियम तैयार करने चाहिएं। इस विनियम में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित के लिए भी उपबंध शामिल किए जाने चाहिएं—

(1) अनुसूचित क्षेत्रों में एक रेखीय प्रशासनिक संरचना की स्थापना;

(2) सभी राज्य सेवाओं में आदिवासी क्षेत्रों के लिए उप-संवर्गों का निर्माण;

(3) सरकारी कर्मचारियों के लिए एक विशेष आचरण संहिता जिसमें सरसरी अनुशासनिक कार्यवाही का उपबंध हो;

(4) ग्राम स्तर पर उपयुक्त संस्थाओं का गठन किया जाना जो स्व-शासन के लिए स्थानीय परम्पराओं के अनुरूप सीधे लोगों के प्रति उत्तरदायी हों। ये संस्थायें दिन प्रतिदिन के कार्य जिसमें भूमि तथा वन, आबकारी, शान्ति बनाए रखना तथा जघन्य अपराधों के अलावा सभी विवादों के निपटारे का प्रबन्ध शामिल है, के लिए जिम्मेदार होनी चाहिए;

(5) साप्ताहिक बाजारों का विनियमन;

(6) अवांछनीय लोगों के कार्यों पर निगरानी; तथा

(7) विकास के उलट-प्रहारों के विरुद्ध संरक्षण।

(पैरा 5.60)

28. यद्यपि, संविधान के अनुच्छेद 275 (1) के प्रथम परन्तुक में वर्णित "अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन का स्तर उस राज्य के शेष क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर तक उन्नत करने" से संबंधित प्रश्न वित्त आयोग के क्षेत्राधिकार से बाहर है, तथापि, भारत सरकार आगे से अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन को वित्त आयोग के विचारार्थ एक विशेष विषय के रूप में शामिल करे जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि इन क्षेत्रों के प्रशासन की साधारण आवश्यकताओं का जो कि उसके स्तर को ऊंचा करने के लिए आवश्यकताओं से अलग उनकी विशिष्ट स्थिति को ध्यान में रखते हुए अलग से निर्धारण किया जाए और उनके लिए पर्याप्त प्रावधान किया जाए। अनुसूचित क्षेत्रों का मामला वित्त आयोग के समक्ष व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने के लिए भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों को उपयुक्त मार्ग-निर्देश भी जारी किए जायें जिनमें स्पष्ट रूप से उन

पहलुओं का उल्लेख किया जाए जिन पर वित्त आयोग द्वारा विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता हो।

(पैरा 5.65)

29. संविधान की पांचवीं अनुसूची के अधीन अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन पर राष्ट्रपति को प्रस्तुत की गई राज्यपाल की रिपोर्ट के आधार पर भारत सरकार की एक मंत्रिमंडलीय समिति इसी प्रयोजन के लिए विशेष रूप से गठित की जाए जिसके द्वारा अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन की वार्षिक समीक्षा की जानी चाहिए। राज्यपाल की प्रशासन की रिपोर्ट पैरा 5.68 में दिए गए सुझाव के अनुसार तैयार की जानी चाहिए। इस रिपोर्ट के साथ वित्तीय ज्ञापन भी दिया जाना चाहिए। जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ ऐसे वित्तीय प्रावधानों का विवरण-पत्र भी दिया जाना चाहिए जो अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर को उठाने के लिए आवश्यक हों।

(पैरा 5.69)

30. चूंकि वित्त आयोग ने अनुसूचित क्षेत्रों में कार्यरत कर्मचारियों को वहां की कठिन परिस्थितियों में कार्य करने के लिए क्षतिपूर्ति और उनके लिए भौतिक सुविधाओं और अन्य प्रकार के प्रोत्साहन देने की आवश्यकता स्वीकार कर ली है अतएव इन सब बिन्दुओं को समाहित करते हुए एक व्यापक योजना बनाने की आवश्यकता स्थापित हो गई है। अतः अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए प्रथम कदम के रूप में केन्द्रीय सरकार को राज्य सरकारों के साथ परामर्श करके श्रेणीबद्ध क्षतिपूर्ति और प्रोत्साहन की एक व्यापक योजना तैयार करनी चाहिए जिसमें क्षतिपूर्ति तथा प्रोत्साहन की मात्रा निर्धारित करने के लिए तैनाती के स्थान की दुर्गमता, सामाजिक सेवाओं की उपलब्धि का स्तर, जलवायु और ऐसे ही अन्य कारक को हिसाब में लिया जाना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए आवश्यक राशियां भारत सरकार द्वारा अनुच्छेद 275(1) के प्रथम परन्तुक के अधीन अपने दायित्वों के अनुसरण में प्रदान की जानी चाहिए।

(पैरा 5.70)

31. ऐसे सामाजिक कार्यकर्ताओं/स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ निरन्तर वैचारिक आदान-प्रदान करने के लिए खण्ड, जिला, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तरों पर उपयुक्त मंच स्थापित किए जाएं जो मुख्य रूप से अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों में संघटनात्मक काम, और ऐसी संघर्ष की स्थितियों के स्थानीय अधिकारियों के साथ विभिन्न प्रश्नों के बारे में समय समय पर पैदा होती रहती हैं; समाधान करने में लगे हैं।

(पैरा 6.7)

32. सरकार छात्रों का विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के छात्रों का एक स्वयं सेवक कोर गठित करने पर विचार करे। प्रत्येक स्वयं सेवक कोर में एक वर्ष के लिए कार्य करें तथा लोगों की साधारण आर्थिक गतिविधियों में भाग लेते हुए संघटनात्मक काम करे। छात्र स्वयं सेवक को क्षेत्र में यथा प्रचालित न्यूनतम मजदूरी के बराबर निर्वाह-भत्ता दिया जा सकता है। स्वयं सेवक के इस कार्य को शैक्षिक मान्यता दी जानी चाहिए तथा बाद में सेवाओं में भर्ती के समय भी उसके लिए कुछ अंक दिए जाएं।

(पैरा 6.7)

33. आदिवासी क्षेत्रों में गांव स्तर पर पंचायत राज संस्थाओं को विशेष रूप से इस प्रकार गठित किया जाना चाहिए जिससे वे आदिवासी समुदाय की परम्पराओं के अनुरूप ढल सकें। ऐसा या तो संबंधित पंचायत राज्य कानून में एक विशेष उपबंध करके अथवा एक विनियम के द्वारा उक्त कानून में आवश्यक सीमा तक संशोधन करके किया जा सकता है। इसमें विशिष्ट रूप से निम्नलिखित बातें होनी चाहिएं —

(1) आदिवासी क्षेत्रों में पारा/गांव स्तर पर सभी संस्थाएं उस पारे/गांव के लोगों के प्रति सीधे उत्तरदायी हों।

(2) इन संस्थाओं को ऐसी कार्य-विधि के अनुसार खुले में काम करना चाहिए जो उस संबंध में लोगों द्वारा तय की जाए।

(3) इन संस्थाओं की जिम्मेदारियां बहुत व्यापक होनी चाहिएं जिसमें लोगों के दिन-प्रतिदिन की जीवन और भूमि तथा वन संसाधनों सहित स्थानीय संसाधनों के प्रबन्ध संबंधी सभी मामले शामिल किए जाएं।

(पैरा 6.12)

34. राष्ट्रीय विकास परिषद एक स्थायी समिति का गठन करे जो—

(1) उन्हें राष्ट्रीय विकास परिषद के सामने रखे जाने से पहले सभी मामलों पर विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए संविधान में दिए गए सुरक्षणों के लिए निहितार्थों के सन्दर्भ में विचार करें

(2) उन सभी चूकों, विचलनों और विरूपणों का पता लगाएं जो साधारण तौर पर घटित हो सकते हैं और ऐसे प्रतिकूल प्रभावों यदि कोई हो, जो विकास के, कार्य-क्रमों के कारण विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर पड़ सकते हैं पता लगायें और

(3) यह सुनिश्चित करें कि सभी कार्यक्रमों में शोधक उपाय शामिल किए जाएं और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को राष्ट्र में विकास के लाभों में उपयुक्त हिस्सा मिले।

(पैरा 6.18)

अनुलग्नक

1971 और 1981 की जनगणना, में कुल जनसंख्या, अनुसूचित जाति जनसंख्या और अनुसूचित जनजाति जनसंख्या

क्र० सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	कुल जनसंख्या		अनुसूचित जातियां			
		1971	1981	1971	प्रतिशत	1981	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8
	राज्य						
1.	आंध्र प्रदेश	4,35,02,708	5,35,49,673	57,74,548	13.27	79,61,730	14.87
2.	असम*	1,46,25,152	1,98,96,843	9,12,639	6.24	12,41,526	6.24
3.	बिहार	5,63,53,369	6,99,14,734	79,50,652	14.11	1,01 42 333	14.51
4.	गुजरात	2,66,97,475	3,40,85,799	18,25,432	6.84	24,38,297	7.15
5.	हरियाणा	1,00,36,808	1,29,22,618	18,95,933	18.89	24,64,012	19.07
6.	हिमाचल प्रदेश	34,60,434	42,80,818	7,69,572	22.24	10,53,958	24.62
7.	जम्मू–काश्मीर	46,16,632	59,87,389	3,81,277	8.26	4,97,363	8.31
8.	कर्नाटक	2,92,99,014	3,71,35,714	38,50,034	13.14	55,95,353	15.07
9.	केरल	2,13,47,375	2,54,53,680	17,72,168	8.30	25,49,382	10.02
10.	मध्य प्रदेश	4,16,54,119	5,21,78,844	54,53,690	13.09	73,58,533	14.10
11.	महाराष्ट्र	5,04,12,235	6,27,84,171	30,25,761	6.00	44,79,763	7.14
12.	मणिपुर	10,72,753	14,20,953	16,376	1.53	17,753	1.25
13.	मेघालय	10,11,699	13,35,819	3,887	0.38	5,492	0.41
14.	नागालैंड	5,16,449	7,74,930	—	—	—	—
15.	उड़ीसा	2,19,44,615	2,63,70,271	33,10,854	15.09	38,65,543	14.66
16.	पंजाब	1,35,51,060	1,67,88,915	33,48,217	24.71	45,11,703	26.87
17.	राजस्थान	2,57,65,806	3,42,61,862	40,75,580	15.82	53,33,879	17.04
18.	सिक्किम	2,09,843	3,16,385	9,502	4.53	18,281	5.78
19.	तमिलनाडु	4,11,99,168	4,84,08,077	73,15,595	17.76	88,81,295	18.35
20.	त्रिपुरा	15,56,342	20,53,058	1,92,860	12.39	3,10,384	15.12
21.	उत्तर प्रदेश	8,83,41,144	11,08,62,013	1,85,48,916	21.00	2,34,53,339	21.16
22.	पश्चिम बंगाल	4,43,12,011	5,45,80,647	88,16,028	19.90	1,20,00,768	21.99
	संघ राज्य क्षेत्र						
1.	अंडमान व निकोबार द्वीप समूह	1,15,133	1,88,741	—	—	—	—
2.	अरुणाचल प्रदेश	4,67,511	6,31,839	339	0.07	2,919	0.46
3.	चंडीगढ़	2,57,251	4,51,610	29,073	11.30	63,621	14.09
4.	दादरा व नागर हवेली	74,170	103,676	1,332	1.80	2,041	1.97
5.	दिल्ली	40,65,698	62,20,406	6,35,698	15.64	11,21,643	18.03
6.	गोवा, दमण व द्वीव	8,57,771	10,86,730	16,514	1.93	23,432	2.16
7.	लक्षद्वीप	31,810	40,249	—	—	—	—
8.	मिज़ोरम	3,32,390	4,93,757	—	—	135	0.03
9.	पांडिचेरी	4,71,707	6,04,471	72,921	15.46	96,636	15.99
	भारत	54,81,59,652	68,51,84,692+	8,00,05,398	14.60	10,59,96,149+	15.47

स्रोत: 1971 के आंकड़ों के लिए भारत के महापंजीकार द्वारा अक्तूबर 1975 में प्रकाशित 1975 का सीरीज 1, पेपर 1, अनुसूचित जातियां और जनजातियां 1981 के आंकड़ों के लिए भारत के महापंजीकार द्वारा 1983 में प्रकाशित क्रमशः सीरीज 1, भाग II ख (ii) और भाग II ख (iii), प्राथमिक जनगणना सार अनुसूचित जातियों और जनजातियों।

*असम के बारे में 1971 की जनगणना के आंकड़ों से मिजोरम के आंकड़ शामिल हैं। असम में 1981 में जनगणना नहीं हुई। भारत के महापंजीकार द्वारा प्राथमिक जनगणना सार में कुल जनसंख्या प्रक्षेपित की गई है। अनुसूचित जाति-जनजाति की जनसंख्या कुल सामान्य जनसंख्या की वृद्धि दर अर्थात् 36.5 प्रतिशत के आधार पर प्रक्षेपित की गई है।

1

तथा कुल जनसंख्या से उनका प्रतिशत दर्शाने वाला विवरण पत्र

क्र० सं०	राज्य-संघ राज्य क्षेत्र	अनुसूचित जनजातियां			
		1971	प्रतिशत	1981	प्रतिशत
1	2	9	10	11	12
	राज्य				
1.	आंध्र प्रदेश	16,57,657	8.81	31,76,001	5.93
2.	असम*	19,19,947	13.13	21,85,845	10.99
3.	बिहार . .	49,32,767	875	58,10,867	8.31
4.	गुजरात	37,34,422	13.99	48,48,586	14.22
5.	हरियाणा	—	—	—	—
6.	हिमाचल प्रदेश	1,41,610	4.09	1,97,263	4.61
7.	जम्मू-काश्मीर	—	—	—	—
8.	कर्नाटक	2,31,268	0.79	18,25,203@	4.91
9.	केरल	2,69,356	1.26	2,61,475	1.03
10.	मध्य प्रदेश	83,87,403	20.14	1,19,87,031	22.97
11.	महाराष्ट्र	29,54,249	5.86	57,72,038	9.19
12.	मणिपुर	3,34,466	31.18	3,87,977	27.30
13.	मेघालय	8,14,230	80.48	10,76,345	80.58
14.	नागालैंड	4,57,602	88.61	6,50,885	83.99
15.	उड़ीसा	50,71,937	23.11	59,15,067	22.43
16.	पंजाब	—	—	—	—
17.	राजस्थान	31,25,506	12.13	41,83,124	12.21
18.	सिक्किम	—	—	73,623	23.27
19.	तमिलनाडु	3,11,515	0.76	5,20,226	1.07
20.	त्रिपुरा	4,50,544	28.95	5,83,920	28.44
21.	उत्तर प्रदेश	1,98,565	0.22	2,32,705	0.21
22.	पश्चिम बंगाल	25,32,969	5.72	30,70,672	5.63
	संघ राज्य क्षेत्र				
1.	अंडमान व निकोबार द्वीप समूह . . .	18,102	15.72	22,361	11.85
2.	अरुणाचल प्रदेश	3,69,408	79.02	4,41,167	69.82
3.	चंडीगढ़	—	—	—	—
4.	दादरा व नागर हवेली	64,445	86.89	81,714	78.82
5.	दिल्ली	—	—	—	—
6.	गोवा, दमण व द्वीव	7,654	0.89	10,721	0.99
7.	लक्षद्वीप	29,540	92.86	37,760	93.82
8.	मिजोरम	—	—	4,61,907	93.55
9.	पांडिचेरी	—	—	—	—
	भारत	3,80,15,162	6.94	5,38,14,483+	7.85

@इस संख्या में वह अत्यधिक वृद्धि शामिल हुई प्रतीत होगी जो क्षेत्र प्रतिबन्धों के हटाए जाने के परिणामस्वरूप कतिपय ऐसे समुदायों के संबंध में बढ़ी है जिनके नाम अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित समुदायों के नामों के समान हैं।

+इन आंकड़ों में 1981 में असम की अनुसूचित जाति-जनजाति की प्रक्षेपित जनसंख्या शामिल है।

अनुलग्नक 2

प्रधान मंत्री द्वारा 10-6-74 को गृह मंत्री को भेजे गये मिनिट की प्रति

देश के विभिन्न भागों में आदिवासियों में असंतोष बढ़ रहा है। इस संबंध में संसद सदस्यों और अन्य व्यक्तियों द्वारा बहुत से ज्ञापन प्रस्तुत किए जा रहे हैं। इन ज्ञापनों इत्यादि में वर्णित की गई समस्याओं पर विचार सामान्य रूप से मंत्रालयों/विभागों द्वारा किसी व्यक्ति विशेष की समस्या अथवा इक्की-दुक्की घटनाओं के रूप में किया जाता है। परन्तु चूंकि हम आदिवासी क्षेत्रों के विकास पर बल देना चाहते हैं यह आवश्यक हो जाता है कि इस समस्या पर और अधिक व्यापक दृष्टि से विचार किया जाए।

2. यह सुविदित है कि आदिवासियों के बीच वर्तमान असंतोष मुख्य रूप से निम्नलिखित कारणों से है—

(i) भूमि हस्तान्तरण,

(ii) बाह्य व्यक्तियों द्वारा शोषण, और

(iii) आदिवासी क्षेत्रों में विकास की कमी।

परन्तु यदि कोई इन समस्याओं के मूल कारणों पर विचार करे तो महत्वपूर्ण तथ्य सामने आते हैं। इसके अलावा ये समस्याएँ स्वत: पृथक समस्याएं नहीं है—और सफलतापूर्वक उनका हल निकालने के लिए एक एकीकृत कार्य नीति अपनाना आवश्यक है।

3. आदिवासी समुदायों की समस्याएं मोटे तौर पर तीन समूहों में विभक्त की जा सकती हैं —

(i) उत्तर-पूर्व के आदिवासी क्षेत्र (मणिपुर, त्रिपुरा और असम के मैदानी आदिवासी क्षेत्रों को छोड़कर);

(ii) मध्य भारत की आदिवासी पट्टी, मणिपुर, त्रिपुरा और असम; और

(iii) बिखरी आदिवासी जनसंख्या।

उत्तर-पूर्व में आदिवासियों की स्थिति निम्नलिखित कारणों से देश के शेष भाग की स्थिति से भिन्न है, जो (1) अपेक्षाकृत पृथकता; (2) वनों और भूमि में परम्परागत अधिकारों के निरन्तर संरक्षण; (3) शैक्षिक प्रकृति; और (4) नियोजन के क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से अधिक प्रयास शोषण किए जाने और वंचित रखे जाने की समस्या जिनसे अन्य क्षेत्र ग्रस्त हैं सामान्य रूप से इस क्षेत्र में नहीं है। यहां मुख्य समस्या विकास संबंधी प्रयासों से जुड़ी हुई है। इन छोटे राज्यों की प्रवृत्ति बड़े राज्यों के नमूने के आधार पर कार्यक्रम बनाने की होती है जिसका परिणाम यह है कि बड़े निवेशों के बावजूद औसत आदिवासी को कोई उल्लेखनीय लाभ नहीं पहुंचा है।

4. देश के शेष भागों में आदिवासी क्षेत्र बड़े राज्यों के भाग हैं और वहां बहुत हद तक अन्तर मिश्रण रहा है। सुरक्षा के पर्याप्त उपायों के अभाव और ऐसे उपायों के प्रभावी रूप से लागू न होने का परिणाम होता है शोषण निम्नलिखित रूपों में— ऋणग्रस्तता, बंधुआ मजदूरी, भूमि हस्तान्तरण और उत्पादन के अन्य साधनों पर से नियंत्रण का ह्रास अधिकांश क्षेत्र अभी भी आदिवासी बहुल हैं। अधिक दुर्गम क्षेत्र अल्पविकसित हैं परन्तु वे अपेक्षाकृत शोषण मुक्त हैं।

5. ऐसे क्षेत्रों में जहां आदिवासी अप्रवास और बिखराव के कारण अल्पसंख्यक रह गए हैं वहां भी उन्हें उत्पादन के साधनों पर उनके नियंत्रण से वंचित किया गया है। इस प्रकार आदिवासी संकेन्द्रण वाले क्षेत्रों और बिखरे आदिवासी जनसंख्या में गुण-वत्ता का अन्तर है।

6. आदिवासी संकेन्द्रण वाले क्षेत्रों में समस्याओं को हल करना अधिक आसान है क्योंकि क्षेत्र पर आधारित ऐसे नियोजन की परिकल्पना की जा सकती है जिसका केन्द्र बिन्दु आदिवासी समुदायों का विकास हो। इस स्थिति को और बिगड़ने से बचाया जा सकता है और आदिवासियों की प्रतिभा के अनुसार उनके विकास के लिए उनकी सहायता की जा सकती है।

7. आदिवासी संसद सदस्यों और अन्य व्यक्तियों द्वारा लिखे गए विभिन्न पत्रों और ज्ञापनों से उनकी समस्याओं को समझने के लिए रुचिकर और लाभप्रद सामग्री प्राप्त हुई है। जैसा बताया गया है बिखरी आदिवासी जनसंख्या की समस्या भिन्न हैं परन्तु अन्य दो समूहों की समस्याएं हैं (i) विकास का अपर्याप्त प्रयास, (ii) विभिन्न रूपों में बढ़ता हुआ शोषण, और (iii) उदासीन प्रशासन। और अब जब पांचवीं योजना बनाई जा रही है इस समस्या पर समुचित ध्यान देने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

8. विकास के प्रयत्न के संदर्भ में मुख्य प्रश्न बहुधा वित्तीय-संसाधनों के बारे में उठाया जाता है। पांचवीं योजना में आदिवासी संकेन्द्रण वाले क्षेत्रों में "उपयोजना" की युक्ति द्वारा इस समस्या को हल करने की बात सोची गई है। अब तक राज्य योजना के प्रयास अत्यधिक छोटे रहे हैं। और सामान्यत: अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता ही एकमात्र निवेश रही है अब राज्यों से यह कहा गया है कि वे अपनी योजनाओं में इन क्षेत्रों पर अपेक्षित बल दें। केन्द्रीय मंत्रालयों से भी यह कहा गया है कि वे उन क्षेत्रों के लिए उनके हक में कुछ प्राथमिकताओं के साथ उपयोजनाएं तैयार करें। दो सौ करोड़ रुपए का परिव्यय (पर्वतीय और आदिवासी क्षेत्रों के लिए पांच सौ करोड़ रूपये में से) इन क्षेत्रों के लिए पृथक रखे जाने की संभावना है। चूंकि सामान्य कार्यक्रमों में बहुत से कार्यक्रम आदिवासी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं है, विभिन्न सेक्टरों के अधिकारियों से यह कहा गया है कि वे अपने कार्यक्रमों को इन क्षेत्रों के अनुरूप बदलें और जहां आवश्यक हो, इन क्षेत्रों में नए कार्यक्रम आरम्भ करें। यह प्रस्ताव भी किया गया है कि आदि-

वासी क्षेत्रों के लिए रखे गए परिव्यय गैर-हस्तान्तरणीय बनाए जायें। अब यह सुनिश्चित किया जाना है कि इस नीति को अपनाने में विभिन्न मंत्रालय और राज्य आनाकानी न करें। यदि ऐसा किया गया तो वित्तीय संसाधन पर्याप्त नहीं होंगे, यद्यपि उत्तर-पूर्व और अन्य आदिवासी क्षेत्रों में निवेश के स्तरों में अन्तर जारी रहेगा। अस्तु, निवेश में अन्तर वास्तविक प्रश्न नहीं होगा क्योंकि निवेश का आकार अभूतपूर्व होगा। मुख्य कार्य यह होगा कि उनका समुचित उपयोग सुनिश्चित किया जाए अन्यथा इतने बड़े निवेश का स्वमेव परिणाम यह होगा कि आदिवासी अर्थ व्यवस्था बिगड़ जाएगी।

9. उत्तर-पूर्व क्षेत्र से बाहर के क्षेत्रों में विकास राशियों के समुचित उपयोग के अलावा शोषण की समाप्ति पर सर्वाधिक प्राथमिकता देनी चाहिए। राज्य सरकारों की ऐसी नीतियों का जो शोषण को बढ़ावा देती हों या आदिवासी अर्थ व्यवस्था पर बुरा प्रभाव डालती हों, पुनरावलोकन किया जाना चाहिए। संसद सदस्यों तथा दूसरे व्यक्तियों द्वारा समय-समय पर लिखे गए पत्रों से यह देखा जा सकता है कि निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान अपेक्षित है।

(क) **आबकारी**—अब यह सामान्यतः स्वीकार किया जाता है राज्य सरकारों द्वारा अपनाई गई आबकारी नीति के परिणामस्वरूप शोषण हुआ है। मद्य निषेध पर केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड की एक उप-समिति ने जिसमें राज्यों के आबकारी मंत्री भी शामिल थे, इस प्रश्न पर विचार किया था तथा इस निष्कर्ष की पुष्टि की थी। कुछ समय पहले संसद सदस्यों के एक दल ने आदिवासी क्षेत्रों में औसत मद्य बेचने के विरोध में एक अभ्यावेदन दिया था। उन्होंने यहां तक सुझाव दिया था कि यदि इसमें राजस्व की बात सामने आती है तो इसके लिए विकास संबंधी परिव्ययों को कम किया जा सकता है। मद्यनिषेध पर केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड ने इस सुझाव का समर्थन किया है। बोर्ड की उस बैठक में आबकारी मंत्रियों ने राजस्व का प्रश्न भी उठाया था परन्तु चल रहे शोषण को दृष्टि में रखते हुए इस बात पर सहमति व्यक्त की गई थी कि उक्त बदलाव के लिए क्षतिपूर्ति कोई पूर्व शर्त नहीं हो सकती। अनुसूचित क्षेत्र और जनजाति आयोग ने 1961 में इसी प्रकार की सिफारिशें की थीं परन्तु यह खेद की बात है कि सरकार द्वारा स्वीकार कर लिए जाने के बाद भी अभी तक इनका कार्यान्वयन नहीं किया गया है। चूंकि इस मामले पर विस्तारपूर्वक विचार किया जा चुका है, अतः नई आबकारी नीति पर बिना और विलम्ब के शीघ्र निर्णय लिया जाना चाहिए।

(ख) वन नीति, जो आदिवासी अर्थव्यवस्था के सा घनिष्ठ रूप से संबद्ध है, लगातार ऐसे वाणिज्य संबंधी उपयोग की ओर बढ़ रही है जो स्थानीय अर्थव्यवस्था से असंबंधित है। इसके कारण अधिक पिछड़े क्षेत्रों में काफी तनाव बढ़ रहा है। इसकी तत्काल समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है।

(ग) लाइसेंस नीति में और बड़े औद्योगिक तथा खनन परिसरों के लिए परियोजना बनाने में प्रायः स्थानीय सहज आदिवासी स्थिति को विचार में नहीं रखा जाता। इन क्षेत्रों में नए निहित स्वार्थ जन्म ले रहे हैं। जहां तक संभव हो स्थानीय भागीदारी के तत्व को लागू करके और संभावित क्षेत्र के सर्वतोमुखी विकास के लिए अग्रिम नियोजन द्वारा परम्परागत अर्थव्यवस्था और आधुनिक सेक्टर के बीच संतुलित सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है।

(घ) व्यापारियों और महाजनों द्वारा शोषण एक गम्भीर समस्या बनी हुई है। सिद्धान्त रूप में ऋण एंव विपणन का एक एकीकृत ढाँचा स्वीकार किया गया है जो उनकी सभी आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है तथा उत्पादन ऋण उपभोग और सामाजिक आवश्यकतायें, आवश्यक उपभोग की वस्तुओं की आपूर्ति और कृषि उत्पादों तथा लघु बन उत्पाब का क्रय परन्तु राज्य सरकारों, भारत के रिजर्व बैंक, सहकारी समितियों और इस समस्या से संबंधित अन्य संगठनों को आदिवासी क्षेत्रों के लिए कार्यविधि और संगठनात्मक ढांचे पर अपने कठोर रूख को बदलना होगा।

10. कानूनी संरक्षणों के बावजूद आदिवासी क्षेत्रों में भूमि हस्तान्तरण एक गम्भीर समस्या बनी हुई है। यद्यपि सुसंगत कानूनों का प्रवर्तन अप्रभावकारी है भूमि हस्तान्तरण का मुख्य कारण आदिवासियों की सामान्य आर्थिक स्थिति है जिसके लिए ऊपर वर्णित कारण बहुत बड़ी सीमा तक जिम्मेदार हैं। अतः जहां एक ओर भूमि कानूनों के कार्यन्वयन को सुदृढ़ करना होगा मात्र यह उपाय इस समस्या को हल करने में सहायक नहीं हो सकता। इस संदर्भ में ऊपर वर्णित कारणों के महत्व पर विचार करना होगा।

11. आदिवासी विकास के लिए सर्वाधिक निर्णायक निवेश है प्रशासन की गुणवत्ता आदिवासियों की सामाजिक आर्थिक स्थितियों में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र और एक समुदाय से दूसरे समुदाय के बीच काफी अन्तर है। उन प्रशासनिक परिपाटियों का स्थान, जो स्थानीय परिस्थितियों के प्रसंग से विगत लम्बे काल में विकसित हुई है, समान

कार्य-विधियों ने ले लिया है आदिवासी जनसंख्या पर और इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। उन्नत क्षेत्रों के लिए विकसित सामान्य प्रशासनिक ढांचे को सादे आदिवासी क्षेत्रों पर अध्यारोपित करने के परिणामस्वरूप काफी गड़बड़ी पैदा हुई है। इससे अत्याधिक विशिष्टीकरण हुआ है, परिहार्य पुनरावृत्ति हुई है। समन्वय का अभाव हुआ है और उत्तरदायित्व का बिखराव हुआ है। चूंकि इन क्षेत्रों में से अधिकांश में संरक्षण संबंधी और विकास संबंधी कार्यों में भेद करना कठिन है, विकास और विनियमन संबंधी कार्यों में विभाजन का समय अभी नहीं आया है। सादी आदिवासी स्थिति के लिए एक सादे प्रशासनिक ढांचे की आवश्यकता है जिसे लोग आसानी से समझ सकें।

12. परन्तु इससे भी वदतर बात यह है कि आदिवासी क्षेत्रों में तैनातियां अधिकांशतः दंडस्वरूप तैनातियों के रूप में की जाती हैं जिसका परिणाम यह होता है कि इन क्षेत्रों में तैनात होने वाले कार्मिक सामान्यतः उदासीन होते हैं। वहां छोटे अधिकारियों द्वारा काफी शोषण होता है जिसके परिणामस्वरूप स्थानीय प्रशासन में लोगों का विश्वास कम हो जाता है। इस संबंध में यह स्पष्ट है कि खास-खास अधिकारी ऐसे होने चाहिएं जिन्हें आदिवासियों से सहानुभूति हो। प्रशासन की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए ठीक प्रकार के कार्मिकों का चयन आवश्यक है। इस संबंध में यह उल्लेख करना सुसंगत होगा कि अनुच्छेद 275 (1) के परन्तुक में आदिवासी क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर को उन्नत करने के लिए विशेष रूप से उपबन्ध किय गया है। परन्तु इस पहलू पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गय है।

13. आदिवासी विकास, जिसका कार्यान्वियन राज्य सरकारों की मार्फत किया जाता है, उन विषयों में शामिल है जिनके लिए संविधान केन्द्र सरकार में विस्तृत शक्तियां निहित करता है। किसी कानूनी कठिनाई की अवस्था में रेगूलेशन जारी करने के लिए संविधान में उपबन्ध किया गया है। केन्द्र तथा राज्य के बीच विवाद से बचने के लिए केन्द्र को अधिकार दिया गया है कि आवश्यकता पड़ने पर वह राज्य सरकार को निदेश दे सकता है। इसमें अनुच्छेद 275 (1) के अधीन आदिवासी विकास के लिए व्यय को एक प्रभार बनाया गया है और विकास संबंधी योजनाओं के लिए वित्तीय मंजूरी को स्वचालित बनाया गया है। परन्तु केन्द्र ने इस प्राधिकार का पर्याप्त रूप से प्रयोग नहीं किया है। वास्तव में उसकी भूमिका इस प्रयोजन के लिए राज्यों को मंजूरियां देने तक ही सीमित रही है। अब जब कि केन्द्र का इरादा विगत समय की अपेक्षा एक बहुत बड़ा परिव्यय देने का है, यह सुनिश्चित करने के लिए इन निधियों का समुचित प्रयोग किया जाए यह आवश्यक है कि वह एक स्पष्ट कार्य नीति के आधार पर इस समूचे विषय में एक सकारात्मक भूमिका निभाए।

हस्ता०
(इंदिरा गांधी)

बोधघाट और उसकी डूब के क्षेत्र में रह रहे लोग

डॉ० बी० डी० शर्मा

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त

इन्द्रावती नदी

बस्तर जिले में इन्द्रावती नदी की विद्युत क्षमता का उपयोग करने के लिए जल विद्युत परियोजनाओं की एक श्रृंखला स्थापित करने की योजना बनाई गई है। ये परियोजनाएं बोधघाट, कुटरू के पूर्व, कुटूरू के पश्चिम, भोपालपटनम और अन्तिम रूप से इन्द्रावती और गोदावरी के संगम पर इंचामपल्ली में स्थापित किए जाने का प्रस्ताव किया गया है। इन सब परियोजनाओं की कुल विद्युत क्षमता लगभग 1500 मेगावाट है। बोधघाट परियोजना की विद्युत उत्पादन क्षमता 500 मेगावाट होगी। कुछ छोटे विद्युत संयंत्रों का भी प्रस्ताव किया गया है, जैसा एक संयंत्र चित्रकूट में होगा जो 7.5 मेगावाट बिजली का उत्पादन करेगा। इंचामपल्ली परियोजना के सिवाय इन परियोजनाओं में से किसी पर भी सिंचाई की योजना नहीं बनाई गई है ।

2. इन्द्रावती नदी बस्तर जिले को दो भागों में बांटती हुई पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ती है। यह चित्रकूट में अपने झरने बनाने से लगभग 50 कि० मी० पहले से बस्तर पठार से होकर बहती है। यह लगभग 35 कि० मी० तक गहरी घाटी में से बहने के बाद सतधार में फैल जाती है और उसके बाद अबुझमाड़ जिसमें विस्तृत मैदान हैं, की उबड़-खाबड़ पहाड़ियों के दक्षिणी किनारे पर बहती है और उसके दक्षिण में नीची पहाड़ियों पर बहती है। इस विस्तृत मैदान की दक्षिणी सीमा पर एक पर्वत श्रृंखला है जो गोदावरी नदी के साथ-साथ चलती है जो महाराष्ट्र और आन्ध्र प्रदेश राज्यों के साथ बस्तर की दक्षिण सीमा बनाती है।

इन्द्रावती के दक्षिण में स्थित बस्तर

3. इन्द्रावती के दक्षिण में स्थित बस्तर जिले में तीन तहसीलें, अर्थात बीजापुर दन्तेवाड़ा और कोन्टा तथा जगदलपुर तहसील का भी कुछ भाग सम्मिलित हैं। इसकी आबादी जगदलपुर, गोदम, दन्तेवाड़ा, किरनडूल पट्टी के अधिक जनसंख्या वाले केन्द्रों को छोड़कर छितरी बसी हुई है। इसके अधिकांश वन आरक्षित हैं। जिसमें बस्तर के इस भाग के भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 80 से 85 प्रतिशत तक समाविष्ट है। इन वनों में पूर्णत: साल की कुछ घनी पट्टियां शामिल हैं। इसमें मुख्य किस्मों के रूप में बांस, सागवान; बिजा और साजा के मिश्रित वन भी हैं। इन वनों में खाने योग्य पत्तियां, जड़ें और फल और स्थानीय जनता द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले वनों के अन्य उत्पादनों की विभिन्न किस्में भरपूर मात्रा में विद्यमान हैं।

4. दक्षिणी बस्तर तुलनात्मक रूप से पिछड़ा हुआ है क्योंकि वह दुर्गम्य है और उसमें आर्थिक आधारिक संरचना का अभाव है। वहां पर कृषि के अतिरिक्त वनरोपण मुख्य आर्थिक कार्यकलाप रहा है। बैलाडिला ही, जहां एक लोह अयस्क परियोजना है, केवल इसका एक अपवाद है। तथापि, इस परियोजनासे स्थानीय आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण रूप से लाभ नहीं हुआ है। यह आधुनिक औद्योगिक कार्यों के लिए बाहर से लाई गई जनसंख्या के एक एनक्लेव के रूप में विकसित हुआ है। इसके अतिरिक्त नए अवसर की खोज में आए अन्य व्यक्ति भी इसमें रहते हैं। आदिवासियों में से केवल बहुत थोड़े व्यक्ति ही इस आधुनिक क्षेत्र मे निचले स्तर पर स्थान प्राप्त किए हैं। इसका प्रभाव इस क्षेत्र में जनता की सामाजिक संरचना पर बहुत बुरा रहा है जिससे नए प्रशासन तंत्र के विरुद्ध आदिवासी विरोध उत्पन्न हुआ है।

परिप्रेक्ष्य का अभाव और उसके परिणाम

5. संसाधनों से भरपूर इस क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों के विकास और उनके उपयोग के लिए एक दीर्घकालिक योजना का अभाव है। ऐसी योजना के लिए समय-समय पर कुछ विरल सुझाव उस समय दिए गए थे जब अच्छी कृषि भूमि की खोज की जाती थी या कुछ ऐसी परियोजनाओं का प्रस्ताव किया जाता था जिनमें बड़े भूभाग की आवश्यकता होती थी। उदाहरण के लिए एक अवसर ऐसा आया था जब तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान से आए विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास के लिए एक कालोनी बनाने के लिए निर्णय किया गया था। इस परियोजना के लिए अकेले बिजापुर तहसील में लगभग एक लाख एकड़ भूमि कृषि भूमि लेने का प्रस्ताव किया गया था। परन्तु नारायणपुर तहसील में पुनर्वास का अनुभव, जहां पर उसी प्रयोजन के लिए एक लाख एकड़ भूमि दी गई थी, सुखद नहीं था। वहां पर विस्थापित व्यक्तियों की प्रयत्नपूर्वक सहायता की गई थी और वे धीरे-धीरे अच्छे कृषक बन गए थ, परन्तु आदिवासी जनता को अपनी रक्षा खुद करने के लिए छोड़ दिया गया था। इससे एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई थी जिसमें बंगाली पिछड़े क्षेत्रों में एक शक्तिशाली और शोषक तत्व के रूप में उभर

कर आए हैं और प्रशासन अभी तक इसके लिए सुधारात्मक उपाय करने में असफल रहा है, ताकि ये सुनिश्चित किया जा सकता है कि आदिवासी जनता भी नए क्षेत्र के विकास में भागीदार बन जाए। अतः बीजापुर के लिए प्रस्ताव स्थानीय विरोध के कारण समाप्त हो गया था।

वनरोपण के प्रयोग

6. यद्यपि दक्षिणी बस्तर में जनसंख्या तुलनात्मक रूप से थोड़ी है परन्तु कृषि भूमि पर दबाव बढ़ गया है क्योंकि उसके भौगोलिक क्षेत्र का एक बड़ा भाग आरक्षित वनों के अन्तर्गत ले लिया गया है। स्वतंत्रता पूर्व की अवधि में स्थानीय जमीदारों द्वारा उक्त स्थानों की दुर्गमता और दूरी का फायदा उठाया जा रहा है। और इन जमीदारों द्वारा की जाने वाली लूटमार के कारण वहां के लोग एक बडी संख्या में गांवों को खाली करके चले गए थे। इन क्षेत्रों में कृषि भूमियां वन विभाग द्वारा पुनः ले ली गई थीं जो कुछ समय बाद संरक्षित वनों और यहां तक की आरक्षित वनों के रूप में वर्गीकृत हो गई थीं स्वन्त्रता प्राप्ति के बाद जैसे ही स्थिति में सुधार हुआ था और जनसंख्या का दबाव बढ़ा था उस वन क्षेत्र में खेती करने की अनुमति देने की मांग की गई थी काफी बड़ी संख्या में लोग किसी औपचारिक अनुमति के बिना वनों में चले गए थे। इस प्रश्न पर जनता और प्रशासन के बीच एक गंभीर विरोध उत्पन्न हो गया था। 1965 से 1968 के दौरान जब कुछ राजनैतिक दलों ने भूमि हथियाओ अभियान आरम्भ किया था तो जगदलपुर, दन्तेवाड़ा के दक्षिणी भाग और बरसूर के निकट के क्षेत्रों के विस्तृत वन जनता द्वारा जला दिए गए थे। प्रशासन द्वारा उस क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि की क्रमबद्ध रूप से पहचान करके और वहां पर लोगों को बसाकर इस विरोध को समाप्त किया था। लोगों की दूर के क्षेत्रों में जाने के लिए भी मनाना संभव हुआ था क्योंकि इस औपचारिक बन्दोबस्त पूर्व से आपसी विचार विमर्श किया गया था। लोगों को संबंधित क्षेत्रों का दौरा कराया गया था और तब तक बातचीत जारी रखी गई थी जब तक उनको अन्तिम रूप से अपना पुर्नवास सुविधाजनक नहीं लगा था। तथापि कुछ भूमियों के बन्दोबस्त के बारे में राजस्व और वन विभागों में अपने क्षेत्राधिकार के बारे में मतभेद थे भी इस कारण थे कि कुछ मामलों में 15 वर्ष बीत जाने के बांद भी लोगों को नियमित पट्टे नहीं दिए गए थे।

7. तथापि यह क्रमबद्ध बन्दोबस्त थोड़ी अवधि के लिए रहा था। फलस्वरूप लोगों की वन क्षेत्र में अवैध रूप से गतिविधियां एक अनियमित तरीके से जारी हैं। हाल ही में कुछ घटनाओं की रिपोर्ट दी गई थी जिनमें यह बताया गया था कि वन अधिकारियों द्वारा वन गांव निवासियों की झोंपड़ियां जला दी गई थीं जिसका कारण यह था कि उन्होंने वन में जबरदस्ती कब्जा किया था। संक्षेप में घने बसे क्षेत्रों में काफी बड़ी जनसंख्या दक्षिणी बस्तर के वनों में प्रवेश कर गई है। उन्होंने वन के छोटे-छोटे खंड साफ कर लिए हैं और उन पुरानी भूमियों पर भी कब्जा कर लिया है जिन पर खाली किए गए गांवों में उनके पूर्वज खेती करते थे।

8. बस्तर के वनों में वनरोपण के बहुत से दूसरे प्रयोग भी होते रहे हैं जिसमें सामान्य रूप से लोगों की जरूरतों और और आकांक्षाओं की अवहेलना हुई है। प्रथम रूप से बस्तर में कार्यकारी योजनाएं साल और अन्य उपयोगी किस्म के पेड़ों की विपुल मात्रा वाले प्राकृतिक वनों के स्थान पर सागवान के वन लगाने के पक्ष में हैं। आदिवासी अर्थ-व्यवस्था पर इसका प्रभाव स्पष्ट हो गया है क्योंकि बड़े-बड़े क्षेत्र सागवान के वन रोपण के अधीन आ रहे हैं। बस्तर के बहुत से भागों में प्रयोग के आधार पर सफेदे के वन भी लगाए गए हैं। तथापि यह परियोजना शीघ्र ही बंद कर दी गई थी। यद्यपि बस्तर में सफेदे के वन लगाने का प्रभाव कुल मिलाकर नगण्य है तथापि इसने उन गांवों की अर्थव्यवस्था को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है जिनके चारों तरफ से क्षेत्र में ये वन लगाए गए हैं। व्यापार करने के प्रयोजन से एक बड़े पैमाने पर देवदार के वन लगाकर बस्तर के प्राकृतिक वनों को मानव निर्मित वनों से बदलने की अन्तिम महत्वाकांक्षी योजना सत्तर के दशक में प्रस्तुत की गई थी। देवदार के वन लगाने का प्रयोग जगदलपुर के निकट आरंभ किया गया था। तथापि यह परियोजना परिस्थिति के कारणों के आधार पर और आदिवासी अर्थव्यवस्था पर इसके प्रतिकूल प्रभाव के कारणो के आधार पर उस समय बंद करनी पड़ी थीं जब विश्व-बैंक द्वारा 4.000 करोड़ रुपए के नियोजित निवेश के साथ अपने अन्तिम अवस्था पर पहुँच चुकी थी। इस प्रयोग योजना के क्षेत्र में देवदार के वनों का एक बहुत बड़ा हिस्सा कुछ वर्ष पहले विध्वंसकारी अग्निकांड की चपेट में आ गया था। इस प्रयोग योजना के चारों ओर के थोडे से क्षेत्र के लोगों को इस योजना का सुखद अनुभव नहीं हुआ है।

9. उपर्युक्त प्रयोग आर्थिक लाभ के उद्देश्य से किए गए थे। वनरोपण में एक दुसरी परियोजना श्रृंखला संबंधित वन संरक्षकों ने बनाई थी। इस योजना में अबुझमांड के विस्तृत पर्वतीय क्षेत्र को प्राकृतिक रुप में सुरक्षित रखे जाने के लिए उसका विकास किए जाने का प्रस्ताव किया गया था। यह इस विचार से किया गया था कि उस वनों और उस क्षेत्र के लोगों को बाह्य प्रभाव से मुक्त रखा जाए। परन्तु इस प्रस्ताव को खत्म कर दिया गया था। इसका कारण यह था कि उस राज्य ने आदिवासियों के लिए इस कूपमंडूकता के सिद्धांत को स्वीकार नहीं किया गया था।

10. बस्तर के दक्षिण में दो अभ्यारण्य हैं—एक कांगेर घाटी में फैला है और दूसरा कुटरु आरक्षित वन के एक भाग में

फैला है। इनमें से पहले को एक राष्ट्रीय उद्यान के रूप में विकसित किया जा रहा है और दूसरा गौरी गायों के लिए एक अभ्यारण्य है। इस गौरी गायों के अभ्यारण्य की परिधि में बहुत बड़ी संख्या में गांव आ गए हैं। उनसे प्रभावित लोग उन्हें हटाए जाने के लिए प्रतिरोध कर रहे हैं। पड़ौसी गाँव भी गौरी गायों के खतरे से प्रभावित हुए हैं। यदि वे इन जंगली जीवों के विरुद्ध कोई रक्षात्मक कदम उठाते हैं तो उन्हें वन अधिकारियों की कार्यवाहियों का सामना करना पड़ता है।

वन संरक्षण अधिनियम 1980

11. वन संरक्षण अधिनियम, 1980 के नए उपबन्धों के लागू किए जाने से भी आदिवासियों में रोष उत्पन्न हुआ है। निस्तर के परम्परागत अधिकारों का भी हरेक जगह पूरी तरह ख्याल नहीं रखा जा रहा है। इस स्थिति को बनाने में उस जिले में आरक्षित वनों की सीमाओं को पुन: निर्धारित किए जाने के निर्णय ने भी प्रभावित किया है। बस्तर में एक बहुत बडा क्षेत्र संरक्षित वनों के रूप में निश्चित किया गया है। बहुत सारे मामलों में इस क्षेत्र में वनों की प्रगति आरक्षित वनों जैसी ही है। इसके प्रचालन कार्य में इन वनों की संरक्षित श्रेणी से आरक्षित श्रेणी में हस्तांतरित करने का लक्ष्य रखा गया है। बहुत सारे ऐसे मामले हैं जहां नई सीमा रेखाएं गांवों के बिल्कुल निकट पड़ती हैं। इस बारे में एक व्यापक आशंका है कि इन क्षेत्रों को आरक्षित वनों के रूप में घोषित कर दिए जाने पर लोगों को उनमें प्रवेश करने से रोक दिया जाएगा। बहुत से मामलों में इस प्रस्तावित हस्तांतरण की पूर्वापेक्षा में से ही नए नियम लागू किए जा रहे हैं। जिन क्षेत्रों के भौगोलिक क्षेत्रफल का अधिकांश भाग (85 से 90 प्रतिशत तक) इन आरक्षित वनों के अधीन है उनके लोगों के सामने गंभीर समस्याएं हैं। कुछ मामलों में विकास संबंधी छोटी जरूरतों जैसे विद्यालय भवन या स्वास्थ्य केन्द्र या एक छोटे सिंचाई जलाशय के लिए आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं की जा रही है। इसके लिए स्थानों को प्रदान करने के लिए प्रशासन के सामने कोई समस्या नहीं हो सकती है।

12. बस्तर में भूमि और वनों से संबंधित विषयों पर असंतोष कोई नई बात नहीं है। लोगों द्वारा किए गए कब्जों को बहाल करके इस तनाव को कम किया गया था और उन्हें नई आशा दी गई थी। परन्तु इस सम्बन्ध में अभी तक कोई दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य उत्पन्न नहीं हुआ है। बस्तर के भूतपूर्व शासक के एक अनुयायी बाबा हरिहर दास की लोकप्रियता उनके इस वायदे पर हुई थी कि यदि वे उनके परामर्श को मानेंगे तो उनके लिए भूमि और वन उसी तरह खुले रहेंगे जैसे उनके राजा के शासन के दौरान प्रथा थी। इसी प्रकार, जैसा गत सत्तर के दशक में भूमि हथियाओ आन्दोलन में हुआ था, वैसे ही वायदे के आधार पर उन उग्रवादी तत्वों ने भी अपने अनुयायी बना लिए हैं। इन उग्रवादी तत्वों का समाधान उपलब्ध भूमियों पर लोगों को एक क्रमबद्ध कार्यक्रम द्वारा बसाकर किया गया था। तथापि इन उग्रवादियों को अब अपने कार्य के लिए एक आधार मिल रहा है क्योंकि वनों और भूमि के प्रबंध से संबंधित बहुत से मामलों में असंतोष बढ़ रहा है। इसके लिए उन्हें आन्ध्र प्रदेश के पड़ौसी क्षेत्रों से भी समर्थन मिल रहा है क्योंकि इस जिले में बैलाडिला खनन केन्द्र है जो उनका आधार है। प्रशासन ने इस मामले में अन्तर्ग्रस्त विषयों पर लोगों के दृष्टिकोण की तरफ पर्याप्त ध्यान दिए बिना ही नए तनाव को पूर्णत: कानून और व्यवस्था के विषय के रूप में स्वीकार किया है। इसलिए इस जिले में पुलिस तंत्र लागू कर दिया गया है। वन अधिकारियों को आग्नेयशस्त्रों के लिए लाइसेंस दिए जा रहे हैं और यह सुझाव दिया गया है कि इस विषय में राज्य स्तर के नीति निर्णय के अनुसरण में उनमें से कुछ औपचारिक रूप से शस्त्र बंद किया जाए। दक्षिण बस्तर में राज्य के सशस्त्र बलों की एक बटालियन तैनात की गई है। बस्तर जिले से लिए गए व्यक्तियों में से ही एक बस्तर विशेष कार्यकारी दल का गठन किया गया है। तथापि यह ज्ञात हुआ है कि उनका एक बड़ा प्रतिशत बाहर के व्यक्तियों का है जो अपने संबंधियों की मदद से स्थानीय रोजगार कार्यालयों के माध्यम से आ गए हैं।

बलों को तैनात किया जाना

13. दक्षिण बस्तर की स्थिति अपेक्षाकृत रूप से असुविधाजनक है। बस्तर के प्रशासन को, विशेष रूप से बाह्य पुलिस चौकियों को, आदिवासी हमेशा विदेशी तत्व समझते हैं। उन्होंने पुलिस प्रशासन को अपने संरक्षक के रूप में नहीं समझा है परन्तु गैर-आदिवासी समूहों के रूप में समझा है। दूसरे, सशस्त्र बलों का व्यवहार भी किसी भी रूप में इससे भिन्न नहीं है और उन्हें जिला पुलिस बल की अपेक्षा कम वांछनीय समझा जा रहा है।

14. इस क्षेत्र के उग्रवादियों को एक लाभ यह है कि उनकी भाषा और माध्यम को वहां की जनता समझती है। वे उन्हें अपने खाली किए गए घरों की बात कहकर यह बताते हैं कि वन उनके हैं और इसलिए कोई भी व्यक्ति उन्हें अपनी स्थानीय जरूरतों के लिए वन वनों का प्रयोग करने से नहीं रोक सकता है। वे उन्हें यह भी बताते हैं कि राज्य वन ठेकेदारों की बाट में हैं जो उन संसाधनों का क्षीण करने के लिए वास्तव में जिम्मेदार है। वे मजदूरी के भुगतान की दरों पर भी निगाह रखते हैं मजदूरी में अनुचित कटौतियां किए जाने की दशा में वे एक प्रतिवादी समूह के रूप में काम करते हैं। ऐसे मामलों में भी जिन्हें सरकार स्वंय वन के लघु उत्पाद संग्रह करने का मूल्य बाजार मूल्य से कम दर पर नियत करती है, वे ठेकेदारों पर दबाव डालते हैं और बाजार मूल्य देने के लिए आग्रह करते हैं। यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो वे आदिवासी लोगों को मना लेते हैं कि वे उत्पाद संग्रह न करें और इन छोटे

आर्थिक लाभों को भी ग्रहण न करें जिन्हें वे अन्यथा प्राप्त कर सकते थे।

15. दक्षिण बस्तर में सामान्य रूप से आदिवासी व्यक्ति के सामने गंभीर संकट है। उग्रवादी उसके पक्ष में होते हैं, तब ऐसा कोई कारण नहीं है कि वह उनकी बात न माने। परन्तु प्रशासन, विशेष रूप से पुलिस, उनसे संपर्क रखने के कारण आदिवासियों के विरूद्ध कार्यवाही करता है। यदि वे पुलिस के दबाव में उनसे अलग हो जाते हैं तो तब वे उग्रवादी उनसे नाखुश हो सकते हैं। प्रशासन के पास उन प्रश्नों का कोई हल नहीं है जो उनकी ओर से उग्रवादियों द्वारा खड़े किए जाते हैं। अतः उनका प्रभाव बढ़ रहा है। वर्तमान परिस्थिति में इसका एक मात्र हल यह है कि पुलिस बल की वृद्धि की जाए परंतु इससे किन्हीं मूलभूत प्रश्नों का कोई हल निकलने की बजाय विरोध ही बढ़ेगा।

बोधघाट परियोजना का निष्पादन

16. इंद्रावती नदी की विद्युत क्षमता का विदोहन करने का मामला दीर्घकाल से विचाराधीन रहा है। तथापि बोधघाट के चारों ओर प्रथम सर्वेक्षण गत साठ के दशक में आरंभ किया गया था। आरंभ में यह आशा की गई थी कि यह बहुउद्देशीय परियोजना होगी और इसमें सिंचाई का भी कुछ उपबन्ध होगा। तथापि, अन्तिम रूप से यह केवल विद्युत परियोजना के रूप में ही आविर्भूत हुई थी जिसमें सिंचाई इत्यादि का कोई उपबन्ध नहीं रखा गया था। इसके बाद के निश्चित स्थान और उसकी ऊंचाई के बारे में भी मामला दीर्घकाल से विचाराधीन था। क्योंकि भौगोलिक संरचना और पठारों के बारे में कुछ अनिश्चितताएं थीं। इस कारण परियोजना के बारे में स्पष्ट चित्र केवल बहुत देर बाद सामने आया था। इस परियोजना की आधारशिला तत्कालीन प्रधान मंत्री ने 21.1.1979 को रखी थी। उसके बाद इसका निष्पादन करने के लिए जिम्मेदार अभिकरणों के बारे में निर्णय लेने में कुछ विलम्ब हुआ था। इसका कुछ काम सिंचाई विभाग द्वारा आरंभ किया गया था। उसके बाद इस काम को मध्य प्रदेश विद्युत बोर्ड के सुपुर्द किया गया था परन्तु वह निर्णय पुनः बदल दिया गया था। अब पुनः पिछले कुछ वर्षों से इस परियोजना का निष्पादन कार्य मध्य प्रदेश विद्युत बोर्ड द्वारा किया जा रहा है। बोधघाट परियोजना के निर्माण कार्य के लिये आधारित संरचना की स्थापना किये जाने में भी कुछ समय लग गया था। इस परियोजना के निष्पादन के लिये पहली बस्ती रायपुर में और दूसरी जगदलपुर में स्थापित की गई थी। बरसूर गांव से आगे कोई सड़क नहीं थी। बरसूर गांव को गीदम से जोड़ने वाली सड़क भी केवल कागज पर थी। गीदम से बरसूर तक और बरसूर से बोधघाट तक की पूरी सड़क परियोजना प्राधिकारियों द्वारा बनाई गई है। नदी के दूसरे किनारे से भवन निर्माण की सामग्री लाने की सुविधा के लिये इन्द्रावती नदी पर एक बड़े पुल का निर्माण किया जाना भी जरूरी था। इस परियोजना द्वारा बनाई गई सड़क और यह पुल अन्तिम रूप से किरनडूल को नारायणपुर और राजनन्द से जोड़ने के लिये राजमार्ग का एक भाग बन जायेगा। यह सड़क प्रस्तावित रेलवे लाईन के समानान्तर भी होगी।

17. ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी डूब में आने वाले क्षेत्र का एक विस्तृत सर्वेक्षण इस परियोजना के प्रस्ताव किये जाने की आरम्भिक अवस्था में आवश्यक नहीं था क्योंकि वहां पर पहाड़ियां बहुत ऊंची है और प्रभावित गांवों की पहचान स्थल आकृति के आधार पर भी की जा सकती थी। ये गांव इन्द्रावती नदी के दोनों ओर की पहाड़ियों के नीचे की दो ढलानों पर बसे हुए हैं जो सामान्य रूप से काफी संकरी हैं परन्तु कुछ स्थानों पर वे काफी फैली हैं। नदी के बेसिन में कुछ छोटे टापू भी हैं। इन टापुओं पर कोई बस्ती नहीं है परन्तु कुछ टापुओं की भूमि पर आसपास के गांव के लोग खेती करते हैं। इस क्षेत्र के वन बहुत सघन और बहुत ऊंचे किस्म के हैं। कुछ क्षेत्रों में साल प्रमुख जाति है, अन्य स्थानों पर मिली जुली जातियों के वृक्ष हैं। इस क्षेत्र की बस्तियां बहुत छोटी हैं जो दूर-दूर बसी हैं। इस परियोजना की डूब में आने वाला और इसके दूसरे प्रयोजनों के लिये अपेक्षित कुल क्षेत्रफल 13,783 हैक्टेयर है जिसका विस्तृत विवरण नीचे दिया गया है।

	वन भूमि	राजस्व भूमि	निजी भूमि	कुल
डूब	5433.862	2708.427	4698.188	12840.477
निर्माण	270.470	360.101	312.099	942.670
योग	5704.332	3068.528	5010.287	13783.147

प्रकृतिवाद बनाम विकास के समर्थक

18. बोधघाट परियोजना बस्तर के लोगों के लिये विशेष लाभ प्रदान नहीं करती है क्योंकि इसमें एक सिंचाई घटक नहीं है जिससे इसके नियंत्रण के संभावित क्षेत्र में नई आशाएं की जाती। इस परियोजना के बारे में विचार विमर्श सरकारी क्षेत्रों और तकनीकी विभागों तक ही सीमित रखा गया था। अतः इस कार्य के प्रारम्भिक चरणों की लोगों को कोई सूचना नहीं दी हुई थी। इस परियोजना की जानकारी तब हुई थी जब इससे सम्बन्धित परिस्थितियों की सन्तुलन के बारे में विभिन्न मदों पर राष्ट्रीय स्तर पर आवाज उठी थी। इस शांत घाटी के बारे में विवाद से पारिस्थितिकी शब्द देश के शिक्षित लोगों के बीच एक घरेलू शब्द बन गया था। इन्द्रावती घाटी के चित्रकूट के झरनों के आगे की एक रहस्य का वातावरण है क्योंकि यह

वृक्षों से आवृत है और इसके चारों ओर की पहाड़ियों की खड़ी ढलानें होने के कारण अत्यधिक दुर्गम है। कुछ प्रकृति-वादियों ने इन्द्रावती परियोजना की परिस्थितिकी जटिलताओं के बारे में प्रश्न उठाने आरम्भ किये थे। इस परियोजना के कोई पर्यावरणिक दुष्प्रभाव न होंगे इस बारे में प्रमाण पत्र देने के लिये केन्द्रीय सरकार के आग्रह के कारण उन्हें और भी बल मिला था। कुछ वनों को साफ करने के रूप में इस परियोजना का कुछ काम पहले ही आरम्भ हो चुका था जो इस पूर्व धारणा पर हो रहा था कि इसको अनुमति मिल जायेगी, जो 1980 से पूर्व ही अवधि में प्रचलित प्रथा के अनुसार स्वीकृत समझी गई थी। परन्तु जैसे ही यह बात केन्द्रीय सरकार की सूचना में आई तो इस अतिक्रमण को बहुत गम्भीर समझा गया था और परियोजना कार्यक्रम बन्द करना पड़ा था। तथापि वैसा करने में अत्यधिक अनिच्छुकता रही थी। इससे प्रकृतिवादियों को अपना मामला और अधिक शक्ति के साथ उठाने के लिये बल मिला और उन्होंने इसे उत्साह-पूर्वक उठाया। तथापि यह सारा वाद-विवाद दूर से ही किया जा रहा था और इसके लिये क्षेत्र के बारे में घनिष्ठ जानकारी नहीं थी और अन्तर्ग्रस्त मामलों के वास्तविक स्वरूप का कोई ज्ञान नहीं था। इस परियोजना की डूब में आने वाली वन सम्पदा का विस्तृत अनुमान वन विभाग द्वारा लगाया गया था। इस सर्वेक्षण के बारे में कुछ कथायें उठाई गई थीं और इसका निष्पक्ष मूल्यांकन करने के लिये उच्च शक्ति प्राप्त एक तकनीकी समूह गठित किया गया है। परन्तु उनके निष्कर्षों के सम्बन्ध में विस्तृत विवरण अभी उपलब्ध नहीं हैं। पारिस्थितिकी दुष्प्रभावों की गूंज होने और केन्द्र सरकार द्वारा गम्भीर आपत्तियां किये जाने के कारण एक अनिश्चितता उत्पन्न हो गई थे और परियोजना प्राधिकारी भी निराश हो गये थे और जो कार्य हाथ में था उसे पूरा करके कार्य बन्द कर दिया गया था और परियोजना स्थान पर कार्य रोक दिये गये थे। इस परियोजना से जिलों के अनुबंधों, आपूर्तियों इत्यादि से सम्बन्ध अधिकारी समूहों को बहुत अधिक अपेक्षायें हो गई हैं। इस नई अनिश्चितता के सन्दर्भ में उन्हें भारी आशंका हो गई है कि कहीं वे बड़े अवसर उनके साथ से निकल न जाएं। यह बताया गया है कि इनमें से कुछ लोगों ने पर्दे के पीछे से कार्य करना आरम्भ कर दिया है और वे परियोजना की शीघ्र मंजूरी के लिये एक मंच बना रहा हैं। इसे कुछ राजनीतिक रंग भी दिया जा रहा है। उनका तर्क यह है कि इस परियोजना की डूब में जो वन जायेंगे वे बस्तर में कुल वन क्षेत्र का एक छोटा सा अंश भी नहीं होगा। उनका यह तर्क भी है कि इस परियोजना के लिये यह कटाई उसी क्षेत्र में वन विभाग द्वारा की गई सामान्य कटाई के बराबर भी नहीं होगी फिर निरन्तर की जा रही उस अवैध कटाई से इसकी तुलना की बात ही नहीं की जा सकती है जिसका परिणाम बहुत अधिक होता है। वे यह बताते हैं कि बस्तर में कुल वन क्षेत्र लगभग 65 प्रतिशत है जबकि दक्षिणी बस्तर में यह 80 प्रतिशत या अधिक है। यदि प्रकृतिवादियों के इस तर्क को स्वीकार किया जाये, तो भविष्य में बस्तर में विकास का कोई कार्यक्रम आरम्भ नहीं किया जा सकता है। वे अपने तर्क पर पुनः इस आधार पर बल देते हैं कि वन अधिकारियों द्वारा की गई अत्यधिक अनियमितताओं के कारण असंख्य अविसंगतिकारक स्थितियां उत्पन्न हुई हैं। उदाहरण के लिये वन संरक्षण अधिनियम के उपबन्धों का प्रयोग करते हुए स्कूल भवनों, अथवा औषधालयों का बाढ़ से प्रभावित होने की दशा में निवास के वैकल्पिक स्थानों अथवा निस्तर अथवा सिंचाई के लिये छोटे तालाबों के बनाने पर भी आपत्ति की गई थी। इस परियोजनाओं में कटाई की क्षतिपूर्ति के लिये बनरोपण का उपबन्ध भी है। तथापि, वन अधिकारी वन भूमियों से इतर भूमि पर वन रोपण के लिये आग्रह कर रहे हैं। बस्तर में वनों से बाहर की भूमियों पर पेड़ों की प्रगति बहुत अच्छी है। अन्य क्षेत्रों में कृषि की जाती है। अतः वनों के बाहर बिना पेड़ों वाली खाली भूमियां उपलब्ध नहीं हैं। उनके अनुसार प्रकृतिवादियों का तर्क परियोजना को निष्फल करने के लिये केवल एक चालाकी है। उनका उद्देश्य बस्तर को अविकसित रखने का है ताकि वे विशेषाधिकारों और प्रश्रय का उपयोग करते रहें और बस्तर की उन्नति होने से आविर्भूत होने वाले नये वर्ग द्वारा इनमें कोई बिध्न उत्पन्न न हो सके।

लोगों का अनुभव

19. बोध घाट पर इस पूरे वाद विवाद में उसकी डूब के क्षेत्रों के लोगों ने बिल्कुल कोई भाग नहीं लिया है। वे दूरस्थ स्थान पर होने के कारण इस विवाद से बाहर रहे हैं और उन भागीदार समूहों की पहुंच से दूर रहे हैं जो इस मतभेद में पक्षकार हैं। मेरा इस क्षेत्र का तीन दिन का दौरा एक नया अनुभव था। 15 वर्ष से भी अधिक पूर्व जब मैं कलैक्टर था, अपनी पदावधि के दौरान मैंने इन में से कोई भी गांव नहीं देखा था, यद्यपि मैंने जिले के लगभग सभी दुर्गम क्षेत्रों का चक्कर लगाया था। जिन गांवों में मैं गुजरा उनमें बहुत सारे गांवों में लोगों ने बताया कि केवल पटवारी तथा पुलिस के सिपाही ही ऐसे अधिकारी थे जो कभी उनके गांव आये थे। आबकारी की नई नीति आरम्भ हो जाने के बाद पुलिस के सिपाहियों के दौरों की संख्या नगण्य हो गई है क्योंकि अब ठेकों पर बिकने वाली दुकानदारी की शराब की बिक्री बन्द हो गई है और उन्हें अपनी परम्परागत शराब बनाने की अनुमति मिल गई है। बोधघाट परियोजना के अधीन अब तक किये गये मुख्य कार्य से सड़कें और इन्द्रावती को पार करने वाला पुल हैं। आरम्भ में गांवों में यह धारणा थी कि यह परियोजना केवल उन योजनाओं से ही संबंधित थी। बिजली पैदा करने वाली यूनिट लगाने के लिये की गई एक गहरी खुदाई, के बारे में समझा गया था कि वह

मूल्यवान खनिजों जैसे सोना, चांदी, की संभावनाओं का पता लगाने के लिये की गई थी। बस्तर में भूवैज्ञानिक दल लम्बे समय से दूरवर्ती स्थानों में अपने कैम्प स्थापित करके कार्य कर रहे थे। इसलिये नये समूह के बारे में उनका अनुमान अस्वाभाविक नहीं था। यह केवल तीन चार वर्ष पहले की बात है जब बांध स्थल पर कुछ खुदाई आरम्भ की गई थी और उन्हें पहली बार अपने घरों से अपने संभावित विस्थापन का बोध हुआ था। पिछले दो तीन वर्षों में घरों का नाप, पेड़ों की गणना, कृषि भूखण्डों की सूची इत्यादि से मामला आरम्भ हुआ था। उन्होंने बरपूर और गोडाम में आयोजित हुई कुछ बैठकों में भी भाग लिया है। उनके अनुसार किसी भी अधिकारी अथवा राजनीतिक नेता ने उनके क्षेत्र का कभी दौरा नहीं किया और न ही परियोजना की प्रकृति के बारे में कुछ बताया और न ही कभी उनकी वह बात सुनी थी जो वे कहना चाहते थे। प्रचलित कानूनी प्रक्रियाओं के अनुसरण में डूब के क्षेत्र के लोगों का विस्थापन निश्चित हुआ समझा गया है। यद्यपि बस्तर में बोधघाट के बारे में विरोध हो भी रहा है, परन्तु यह केवल पारिस्थिति की सम्बन्धी है जिनमें सम्पन्न वनों का विनाश भी शामिल है। व्यक्तियों की समस्याओं के बारे में कोई भी चर्चा तक नहीं करता है।

20. ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ समय पूर्व उनका मामला कांग्रेस (ई) के कुछ विधायकों और विरोधी दलों के कुछ सदस्यों मुख्यतः श्री महेन्द्र कर्मा द्वारा उठाया गया था। इस विधायक समूह का मत प्रबल हो उठा है और अब वे इसके पक्ष में हैं। श्री महेन्द्र कर्मा ने कम्युनिस्ट पार्टी छोड़ दी है और कांग्रेस में शामिल हो गये हैं। अब वे इस परियोजना के प्रभावशाली वकील हैं। गोडाम के श्री जय-किशन शर्मा ही, जो कांग्रेस के ही हैं, केवल ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें उस क्षेत्र के लोग अपनी समस्याओं के लिये सर्वोच्च नेता के रूप में जानते हैं। यह उनसे संबंधित मामलों की आवाज उठाते रहे हैं और उस उद्देश्य के लिये बैठकें भी आयोजित करते रहे हैं। यद्यपि वे यह कार्य उस क्षेत्र के बाहर दूर स्थान से करते रहते हैं।

21. भूमि अर्जन की कार्यवाहियों में प्रगति हो रही है। चार गांवों के मामले में भूमि तथा निवास स्थानों की क्षति-पूर्ति का भुगतान पहले ही किया जा चुका है। ये गांव बाँध स्थल पर सड़कों के निर्माण के कामों से प्रभावित हुए हैं। इसके लिये भूमि का औसत विक्रय मूल्य जमा हर्जाना वाला प्रचलित फार्मूला अपनाया गया है। भूमि की क्षतिपूर्ति की दर लगभग 1,900 रूपये प्रति एकड़ है। कुछ समय के अन्दर यही राशि अन्य 38 गांवों में विस्थापित व्यक्तियों को दी जा सकती है।

22. चूंकि विस्थापन को समस्याएं और व्यक्तियों द्वारा विरोध किए जाने का मामला सामने आया था, यह स्वीकृत किया गया था कि परियोजना उनके पुनर्वास की कीमत भी देगी। इस योजना के अनुसार प्रत्येक परिवार को परियोजना के खर्चे पर विकसित की गई 6 एकड़ भूमि, और लगभग 1/2 एकड़ माप का एक बड़ा भूखण्ड और एक छोटा-सा घर उपलब्ध कराया जायेगा। प्रत्येक बस्ती में लगभग 25 घर होंगे जिन्हें संयुक्त रूप में सुविधायें जैसे पीने के पानी का एक कुआं, एक सामुदायिक केन्द्र और एक स्कूल उपलब्ध कराये जायेंगे। परियोजना प्रशासन के अनुसार ऐसे एक स्थल का चुनाव पहले ही किया जा चुका है। किन्तु उस पर हो रहा काम रोक दिया गया है क्योंकि परियोजना का कार्य स्पष्ट अनुमति आने तक रोक दिया गया था।

23. विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास के सम्बन्ध में स्थिति बिल्कुल स्पष्ट नहीं है। मुझे लोगों ने बताया था कि एक बार उनमें से कुछ लोगों को परियोजना अधिकारी द्वारा जीप में जिले के विभिन्न भागों में ले जाया गया था और सामान्यतः क्षेत्र दिखाये गये थे। तथापि, उन्हें वहां के लोगों अथवा सम्बन्धित क्षेत्रों के नेताओं से मिलने का कोई अवसर नहीं दिया था जो भूमियां उन्होंने देखी हैं वे अधिकतर घटिया किस्म की हैं अथवा भाटा भूमियां हैं। ये भूमियां वनों से दूर हैं। केवल अबूझमाड़ का क्षेत्र ही उन्होंने अच्छा क्षेत्र देखा था। परन्तु उन गांवों के लोगों ने उन्हें स्पष्ट रूप से बताया था कि वे अपने ग्राम क्षेत्र के अन्दर कोई पुनर्वास किये जाने की अनुमति नहीं देंगे। संभावित पुनर्वास योजना के बारे में यही आखिरी बात लोगों ने सुनी थी।

24. लोग सरकार द्वारा संभावित पुनर्वास के बारे में अत्यधिक शंकाशील हैं। जब मैंने यह प्रश्न ग्राम में एकत्र लोगों के सामने रखा, जो उन्होंने यह बात कही कि चार गांवों में भूमियां परियोजना प्राधिकारियों द्वारा पहले ही ले ली गई थी, परन्तु उनका पुनर्वास नहीं किया गया था और उनका यथा संभव कोई पुनर्वास करने का उनका कोई विचार भी नहीं है। जहां उन गांवों में कुछ व्यक्ति भूमि अर्जन हो जाने के बाद भी भूमियों पर खेती करते रहे हैं, वहीं कुछ अन्य लोगों के पास कोई भूमि नहीं है, क्योंकि उनकी भूमि खुदाई से निकाली गई मिट्टी के ढेर से पट गई है। अब उनके पास करने के लिये अन्य कोई काम नहीं है क्योंकि यह काम रोक दिया गया है। इस प्रकार उन्हें अपने पड़ोसियों की दया पर निर्भर करने के लिये छोड़ दिया गया है और उन्हें अकिंचन बना दिया गया है। उनमें से कुछ ने पास के वनों में जाने का खतरा भी उठाया था और भूमि का एक टुकड़ा भी साफ कर दिया था। बाहर के कुछ व्यक्तियों ने उन्हें यह विश्वास दिलाया था कि वे सरकार को उन भूमियों का उन्हें पट्टा देने के लिये मनायेंगे, इसके बजाय वे अब भारी खर्चा करके कोर्ट में एक मुकदमें में फंसे हुए हैं

ऐक सम्पन्न घाटी :

25. उस क्षेत्र में मेरे दौरे के बाद लोगों की परेशानी और दुविधा स्पष्ट हो गई थी। वहां पहाड़ों की ढलानों पर समृद्ध वन हैं और उनसे नीचे पूरे वर्ष बहने वाली नदी (इन्द्रावती) बह रही है। इस संकरी पट्टी पर विस्तृत मैदान हैं जो कई पीढ़ियों से लोगों द्वारा स्थायी कठिन श्रम से पुन: प्राप्त तथा विकसित किये गये हैं। एक दूसरे को काटने वाले नाले और स्रोतों को साधा गया है, खड़ी ढलानों को ऊंचे बांध बनाकर नियंत्रण में लाया गया है जब कि कम खडे मैदानों को सीढ़ीनुमा भूखण्डों में व्यवस्थित किया गया है और पानी स्वाभाविक रूप से ऊपर से नीचे की आता है। इस घाटी की अपनी ही एक विशिष्ट सूक्ष्म जलवायु है। यह मई से नवम्बर तक सघन कोहरे से भरी होती है जो उन दिनों को छोड़कर प्रतिदिन गिरता है, जिस दिन बारिश हुई हो, और इसका भेदन सूर्य की तेज किरणों द्वारा केवल सुबह 10 बजे तक सूर्य के आकाश में ऊपर आ जाने पर ही होता है। सब कुछ गीला हो जाता है और खेतों से फसलों को, बोने के समय से लेकर पकने तथा कटने तक, घंटों पानी की धीमी टपकन का लाभ मिलता है। इसलिये इसे क्षेत्र में मौसम की अनिश्चितताओं के बारे में जानकारी नहीं है और प्रकृति इन सीधे लोगों के लिये अत्यधिक उपकारी है निकटवर्ती पहाड़ियों से इनके खेतों में से बहता पानी, घने वनों वाली ढलानों से अपने साथ लाये गये पौष्टिक तत्वों से, उनके खेतों को निरन्तर उपजाऊ बनाता रहता है। उन्हें किसी भी सूखे अथवा अभाव की कोई याद नहीं हैं और उन्होंने अपने पूर्वजों से ऐसी घटना की बात सुनी भी नहीं है।

26. इन लोगों के अनुसार उनके पास तीन साहूकार हैं— ऊपर वन, नीचे नदी और चारों ओर हरे भरे खेत। वन जड़ों, टहनियों तथा पत्तियों से सम्पन्न हैं, जबकि नदी में विभिन्न प्रकार की मछलियां तथा अन्य उभयचर पोषण करते हैं। चार महीनों के लिये वे वनों में जाते हैं जो उन्हें वह सब कुछ देता है जिसकी उन्हें आवश्यकता होती है, अन्य चार महीनों के लिये वे नदी में जाते हैं जो उन्हें उस अवधि के लिये विपुल भरण-पोषण देती है। उनके क्षेत्र उनकी शेष आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। उन्हें किसी प्रकार के आश्रय के लिये किसी अन्य साहूकार अथवा ऋणदाता के पास नहीं जाना पड़ता। यहां तक कि गांव में एक भूमिहीन भी अकिंचन नहीं है क्योंकि वह गांव में काम कर सकता है, वन जा सकता है और नदी में मछली पकड़ सकता है। वहां अपरिमित खुशी का जीवन है जो किसी भी बाहरी तत्व से निर्विघ्न है।

27. इस क्षेत्र की दुर्गमता उनके लिये एक बहुत बड़ा वरदान रही है। शोषक बलों के लिये भी वनों में से होकर उनके पास पहुंचना असंभव था। इस क्षेत्र के पुनर्वास किये जाते की एक लम्बी कहानी है। अधिकांश गांवों में अनन्य रूप से आदिवासी जनसंख्या रहती है, कुछ बड़े गांवों जैसे बिन्टा में मिली-जुली जनसंख्या है। कोई नहीं जानता कि उड़िया ब्राह्मण जो यहां बसे हुए हैं, कब इस गांव में आये थे। वे पूर्णत: हर दृष्टि से आदिवासी निश्चित किये गये हैं। उन्हें 13वीं सदी में पूर्व शासको द्वारा बस्तर आने के लिये आमंत्रित किया जाता था। उनकी यह परम्परा चली आ रही है

28. इन लोगों की समृद्धि और शोष तत्वों से उनका मुक्त होना उनके सामान्य स्वास्थ्य और घरों के आकार-प्रकार से स्पष्ट है। बहुत से आदिवासियों के पास बड़े-बड़े घर हैं जो उनकी सुविधा के अनुसार बनाए गए हैं। उनके घरों के पास बड़े छायादार पेड़ हैं। वहां सौ वर्ष पुराने विशाल पेड़ों सहित ग्रामों के बड़े बाग हैं। गांवों का बसाव इस शब्द के सही अर्थों में एक आदर्श रूप का है। वे अपनी घाटी के बाहर के गांवों में केवल तभी जाते हैं। जब अनिवार्य हो। प्रकृति ने उन्हें वह सब कुछ दिया है जिसकी उन्हें आवश्यकता है। वे प्रकृति की कृतज्ञ सन्तान हैं जो उसके गौरव का गुणगान करते हैं और उसकी ताल पर उस समय नृत्य करते हैं जब ऊंची पहाड़ियों के वन से भरे शिखरों के ऊपर चांद चमकता है और जब इन्द्रावती के लहराते जल में उसका प्रतिबिम्ब झलकता है और जब लताओं और बगीचों में से मन्द बयार चलती है।

29. सारे देश में आदिवासी लोग उन क्षेत्रों के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध हैं जिनमें वे रहते हैं। मेरे दौरे के दौरान सभी जगह कुछ भावनायें व्यक्त की गई थी और एकमात्र प्रश्न जो सब को परेशान कर रहा था, विस्थापित होने का भय था। ऊपर वर्णित आदर्श स्थापना में रहने वाले इन लोगों का यदाकदा होने वाला भावात्मक विरोध स्वाभाविक है जिन्हें अभाव अथवा आवश्यकताओं का कभी अहसास ही नहीं हुआ, जो प्रकृति की विभ्रान्तियों और गहन घाटी में मनुष्य के व्याघातों से सुरक्षित हैं, और इस पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। उन्हें ऐसी भूमि कहां मिलेगी। यही प्रश्न प्रत्येक व्यक्ति की जबान पर था। यदि इस सम्बन्ध में सर्वोत्तम प्रयास भी किये जायें तो भी पीढ़ियों से उनके पूर्वजों द्वारा विकसित ऐसे उपजाऊ क्षेत्र सरकार उन्हें कैसे उपलब्ध करवा सकती है। क्योंकि सभी जगह अनुभव रहा था। अत: हरेक व्यक्ति को स्पष्ट हो गया था कि उनके पुनर्वास के लिये केवल भाटा भूमियां तथा सीमान्त भूमियां ही उपलब्ध हैं। अच्छी भूमियों पर लोगों ने पहले ही कब्जा कर लिया है। यदि उन्हें कुछ भूमि मिल भी जाती है तो वह वन से दूर होगी, जिस पर वे घाटी में रहते हुए बहुत अधिक निर्भर करते हैं। वे जानते हैं कि सरकार उन्हें वन में घुसने नहीं देगी जहां इस प्रकार की भूमियां फिर भी मिल सकेंगी। इस असंभावना की चेतावनी उन्हें इस तथ्य से मिली है कि वन के नियमों का उल्लंघन करने के अनेक मामलों में उन्हें कार्यवाही का सामना

करना पड़ रहा है जिनमें वह मामले भी शामिल हैं जिनमें परियोजना द्वारा उनकी भूमि ले लिये जाने पर उन लोगों ने मूल वनों की सफाई करके भूमि बना ली थी। जब हरे भरे क्षेत्र, समृद्ध वन तथा उपकारी इन्द्रावती सभी मिलकर हो उन्हें पूर्ण भरण पोषण उपलब्ध करा सकने में समर्थ है तब यदि उन्हें पांच एकड़ नाप की नगण्य सी भूमि पर निर्भर रहना पड़ेगा तो उनकी दशा क्या होगी। इसके अतिरिक्त यह भी कुछ स्पष्ट नहीं था कि क्या एक दर्जन या उससे अधिक सदस्यों वाले पूरे परिवार को भी उतनी ही भूमि मिलेगी अथवा कमाने वाले सभी वयस्क सदस्य पृथक पृथक इतनी भूमि के लिए पात्र होंगे।

30. किसी वैकल्पिक स्थल पर पुनर्वास किया जाना केवल कहने की ही बात थी। परन्तु उन्हें यह कैसे विश्वास हो कि जिन भूमियों में बसने के लिये सरकार उन्हें निदेश देगी वहां की जनता उनको स्वीकार करेगी जो अपने नेताओं से नहीं मिले हैं और वे उन लोगों को जानते भी नहीं हैं क्या वहां की आत्मायें उनको स्वीकार होंगी। उन्हें यह भी पता करना है। प्रत्येक गांव के पांच ग्राम देवता होते हैं, डोंगर देव (पहाड़ देवता), माटी देवी (धरती देवी), गांव देवी (गांव देवी), पितर देव, (पूर्वज आत्मा), तथा अंगा देव (अधिष्ठाता देवता) जो देवी नन्देश्वरी में निष्ठा रखते हैं। जब वे घर छोड़ेंगे तो क्या उन सबको भी इन्द्रावती की कल कल करती जल धारा में समाहित होने के लिए छोड़ दिया जायेगा।

31. असंख्य अन्य प्रश्न उन्हे परेशान कर रहे थे क्या वे एक समुदाय के रूप में वहां जायेंगे या व्यक्तिगत रूप में? सरकार के पास ऐसी व्यापक भूमियां कहां होंगी जहां पूरे के पूरे गांव अथवा उनके एक बड़े भाग को एक साथ बसाया जा सके? यदि नये निवास स्थान में उन्हें किसी खराब वर्ष का सामना करना पड़ा तब क्या होगा? यदि लोगों ने उनका स्वागत नहीं किया और उनके साथ समस्याओं में पड़ गये उनका तब क्या होगा? ददामी प्रचण्ड लोग हैं। वे किसी की बात नहीं सुनते हैं। मडिया जाति अपनी मायावी कला के लिये प्रसिद्ध हैं क्योंकि उनकी औरत अभाव के समय में नृसिंह (आधा भाग मनुष्य का और आधा भाग सिंह का) के रूप में चारों ओर के क्षेत्रों को रोंदती हैं तब वे कहां जायेंगे? वे क्या करेंगे वे इस घाटी में रह रहे हैं। वे कुएं के मेंढक के समान हैं। वे कैसे प्रबन्ध करेंगे वे स्वयं ही इस पर विचार कर सकते हैं और यह निर्धारित कर सकते हैं कि यदि अधिक नहीं तो उनके नुकसान के बराबर क्षतिपूर्ति वैकल्पिक स्थाई साधन के रूप में क्या हो सकती है। परन्तु किसी ने उनकी समस्याओं के बारे में उनसे बात भी नहीं की है। आधुनिक प्रणाली की दृष्टि से सभी लाभों को धन के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। परियोजना प्राधिकारी का कहना है कि राहत की मात्रा, जो कि स्पष्ट रूप से बहुत थोड़ी है आसानी से बढ़ाई जा सकती है। परन्तु आदिवासियों पर इन प्रस्तावों का कोई असर नहीं होता है। वह किसी ऐसे अन्य क्षेत्र में जाने के लिये सहमत नहीं है, जो उसके अपने क्षेत्र के समान नहीं है। उसे कोई विकल्प स्वीकार्य नहीं है। चाहे नई संभावनायें बेहतर हों अथवा बदतर हों, बस उनकी इसमें कोई रूचि ही नहीं है। नकद क्षतिपूर्ति के प्रश्न पर उसकी स्थिति स्पष्ट है। यह निर्धन व्यक्ति है, जो शराब का आदी है और जिन्हें स्वादिष्ट मास वाली आनन्दपूर्ण दावत द्वारा सरलता से मित्र बनाया जा सकता है। उसे यह पक्का विश्वास है कि उसे जो पैसा मिलेगा वह शराब में चला जायेगा और दावत का प्रबन्ध वह नहीं कर पायेगा। यह उसका हमेशा का ही अनुभव रहा है और उसके पास यह विश्वास करने का कोई कारण ही नहीं है कि अगली बार जब उसके पास पैसे आयेंगे तब ऐसा नहीं होगा। इसलिये वह पैसे के लिये जैसा कि एक बूढ़े, व्यक्ति ने बताया, एक हजार या एक लाख अथवा रूपये से लदे ट्रक के लिये भी अपनी भूमि का सौदा नहीं कर सकता है। इन आंकड़ों का उसके लिये कोई अर्थ नहीं है क्योंकि वह वहां तक तो गिन भी नहीं सकता है।

32. जब परियोजना प्राधिकारियों द्वारा निर्मित कालोनियों में उनके पुनर्वास की बात की गई थी तो उन्होंने उन्हें तत्काल सर्वत्र थोथा (भूमिहीन) कालोनियाँ कह कर उसका प्रतिवाद किया था। 8×8 की माप के कमरे अथवा ऐसे दो कमरों में वे कैसे रह सकते हैं, उनके अपने घर तो छायादार पेड़ों के नीचे बने बेतरतीब प्राँगण हैं जिनमें उनकी सभी आवश्यकताओं के लिए प्रावधान बनाए गये हैं। उनका यह स्पष्ट मत था कि मकान बनवाने में सरकार जो भी खर्च करेगी वह ठेकेदारों द्वारा ही हड़प लिया जायेगा और उनके पास उसके केवल एक अंश मात्र से अधिक कुछ नहीं पहुंचेगा। घर के विकल्प में उनकी तनिक भी रूचि नहीं थी, यह हर जगह स्पष्ट कर दिया गया था। इस प्रकार विकल्प भूमि का चित्र धूमिल था और केवल कुछ काल्पनिक बात थी। नकद क्षतिपूर्ति बहुत अल्प है परन्तु अधिक क्षतिपूर्ति में भी उनकी कोई रुचि नहीं क्योंकि वे उस रुपये को अपने पास रोके नहीं रख सकेंगे। उनकी धारणा के अनुसार, प्रस्तावित कालोनियां, घटिया सामग्री से बनी इतनी कमजोर होंगी कि वे वर्षा के अगले मौसम तक भी नहीं टिक पायेंगी ये सब केवल उनकी धारणा है क्योंकि उन्हें किसी ने नहीं बताया है और उनको विश्वास में भी नहीं लिया गया है। उनका निष्कर्ष स्पष्ट है वे उस स्थान से बाहर नहीं जायेंगे, चाहे जो कुछ भी हो जाये। तथापि, उन्होंने अभी भी मुझ से यह तक किया था कि मैं सरकार को उनके मामले के बारे में सहमत करूं। उन्होंने कहा कि वे निर्धनों के लिये सरकार की चिन्ता के बारे में जानते हैं क्योंकि उनके उत्थान के लिये विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम आरम्भ किये गये थे। उन्होंने दिये गये ऋणों तथा भूमियों का भी उल्लेख किया किन्तु उन्हें आश्चर्य हुआ कि जब उनके मामले की बारी आई थी तो, यह कैसे हुआ था कि उस उपकारी

सरकार ने कोई ख्याल ही नहीं रखा था। उन्हें अपने घरों से क्यों उजाड़ा जाये? उन्हें इस प्रयोजन से कोई सरोकार नहीं है कि इस परियोजना से बिजली उत्पन्न की जायेगी, बिजली आर्थिक विकास के लिये आवश्यक है, यह एक निरर्थक प्रस्ताव था क्योंकि उस क्षेत्र में किसी प्रकार की शिक्षा ही नहीं थी। उन्हें इस तर्क से आमोदित नहीं किया जा सकता था कि उनके बच्चों का भविष्य बेहतर हो जायेगा। उन्होंने अपने बच्चों के बारे में समाधान कर लिया था कि वे भी उन्हीं की तरह घाटी में उसी प्रकार का जीवन व्यतीत करेंगे मेरे रामगोंडी गांव में पहुंचने से आधा घण्टा पहले ही दो साल का एक बच्चा मर गया था क्योंकि स्थानीय सिरहा (जादू वाला व्यक्ति) पिछले दो दिनों से विस्तृत बलिदानों तथा आराधनाओं के बाद भी उसे बचा नहीं सका था। विकास की कोई भी बात लोगों में आस्था नहीं जगाती।

33. इन लोगों ने यह तर्क रखा कि वे सरकार के प्रजाजन हैं। उनपर सरकार को दया करनी चाहिए। वे सरकार की अवज्ञा नहीं कर सकते। वे सरकार के विनम्र प्रजाजन हैं। यदि सरकार की यही इच्छा है तो उनमें से प्रत्येक को रस्सी से फांसी लगने दी जाए अथवा गोली से मरने दिया जाय। उनकी संख्या अधिक है और उनके शरीर बांध की नींव भरने के लिए प्रयोग में लाए जा सकते हैं। जिससे राज्य को निर्माण के लिए सामग्री की लागत में बचत होगी। यदि आप चाहते हैं तो इस क्षेत्र पर बम फेंक दो (गोला/घसारो) ताकि हरेक व्यक्ति मर जाए और बांध के निर्माण का विरोध करने के लिए कोई न रहें। उन्होंने कहा कि उनमें से कोई भी इस क्षेत्र से बाहर नहीं जाएगा।

34. यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि परियोजना से प्रभावित होने वाले लोगों की कोई बात ही न सुनी जाए विशेष रूप से तब जब कि परियोजना के ही एक भाग के रूप में उनके पुनर्वास की जिम्मेदारी स्वीकार करते हुए सरकार ने एक औपचारिक निर्णय किया था। बस्तर के आयुक्त की अध्यक्षता में विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास हेतु एक समिति गठित की गई है। इसके अतिरिक्त एक राज्य स्तरीय निदेशक समिति भी है। पुनर्वास समिति में अन्य बातों के साथ-साथ जनता के प्रतिनिधि इसके सदस्य के रूप में रखे गए हैं। तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि इन लोगों के पक्ष की बात ही नहीं की गई है। इससे एक बड़ा मतभेद पैदा हो गया है और उन्हें उनके घरों से उजाड़ने जैसे महत्वपूर्ण वर्तमान मामले में भी जनता तथा उसके प्रतिनिधियों में फूट पड़ गई है। यह अनिवार्य रूप से माननीय मामला है परन्तु इसे प्रभावित हुए व्यक्तियों से कोई बात न करके एक नैमित्तक ढंग से धन, आरेखन, नक्शा तथा स्कीमबद्ध योजना के रूप में निपटाया गया है। इस मामले में सूचना न दिया जाना विस्मयकारी है। जहां तक जनता का सम्बन्ध है प्रधान मंत्री द्वारा नींव रखने के समारोह में भी उन्हें इस विषय के बारे में नहीं बताया गया था। इसके अतिरिक्त, उनकी समस्याओं पर विचार-विमर्श सदा उनकी घाटी से बाहर ही किया गया है, जिसका निकटस्थ स्थान बरसूर होता था; कभी-कभी वह इससे भी दूर गोदाम तथा जगदलपुर में भी होता था। अपने घर से दूर के स्थान पर सीधे-सादे आदिवासी से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह अपनी दबी हुई भावनाओं को अभिव्यक्त करते हुए खुल कर बात करें। ऐसी सभाओं में नियंत्रण वाचाल व्यक्तियों के ही हाथों में होता है और उनकी इच्छा के अनुसार ही निर्णय किया जा सकता है। मेरे कार्यक्रम के बारे में सुनकर उन गांवों से कुछ लोग जहां मैं नहीं जा सका था जगदलपुर मुझसे मिलने आए। दशहरा त्यौहार होने के कारण वे परम्परागत मांझी दरबार में भी 14 अक्तूबर, 1986 को आए। उनमें से एक ने साहस किया और माइक पर बोलने के लिए आया। वह बोल न सका क्योंकि उसे अनुमति नहीं दी गई थी और वह जनता के खुले मंच पर बोलने के अपने अधिकार का दावा भी नहीं कर सका। तथापि, वाचाल वक्ता द्वारा दरबार को बताया गया कि निर्माण में ही विनाश भी विराजता है। भीड़ में से केवल एक सादे व्यक्ति ने बस्तर में बड़ी परियोजनाओं की प्रासंगकता के बारे में पूछा क्योंकि इस निर्धन व्यक्ति ने भूमि तथा वन, जो उसकी जीविका के लिए अत्यावश्यक थे, पर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष किया था। उसकी दलील में उनके लिए जो बोल नहीं सकते थे, एक अपील थी परन्तु जो उस समारोह का नियन्त्रण कर रहे थे उन्होंने इसे कुछ लोगों के निर्देश पर किया गया कार्य माना।

35. यह नहीं कहा जा सकता है कि बस्तर में स्थिति ठीक है क्योंकि बोधघाट परियोजना के क्षेत्र में विरोध ने भावनात्मक रूप ले लिया है। जनता की समस्याओं के बारे में विद्यमान अनभिज्ञता तथा परियोजना के बारे में किसी चर्चा में उन्हें शामिल न किया जाने से स्थिति भावनात्मक बन गई है जो खतरनाक कही जा सकती है। उच्च स्तर पर यही कटुतापूर्ण वाद-विवाद, संरक्षकों तथा परियोजना के समर्थकों के बीच होता है। उनमें से कोई भी अपने पक्ष में सहमति कराने के आधार पर प्रस्तुत नहीं कर सका है। इस परियोजना से वनों के नुकसान की तुलना कानखजूरे की एक टांग कट जाने से की जाती है। यदि बस्तर में विकास के लिए कोई मास्टर प्लान न बनाकर वहां बिजली उत्पन्न की जाती है तो बस्तर को क्या लाभ होगा। सिद्धान्तों के इस हंगामे में घाटी के व्यक्ति का कोई मार्गदर्शन करने वाला नहीं है। मध्य प्रदेश विद्युत बोर्ड अथवा "एम पी" शब्द उन लोगों के लिए एक बुरा शब्द है। मध्य प्रदेश विद्युत बोर्ड से संबंधित किसी काम से उनका कोई मतलब नहीं होगा। जिस समय मैं कोयम गांव में बैठा हुआ था उस समय मेरे पास भी तब तक कोई नहीं आया था जब तक उन्हें पटवारी द्वारा यह विश्वास नहीं दिलाया गया कि मध्य प्रदेश विद्युत बोर्ड से कोई भी व्यक्ति नहीं आया था। इस गांव के एक पटेल द्वारा आसपास यह सूचना भेज दी गई थी कि चाहे सरकारी अधिकारी ऐसा चाहते भी हों तो भी किसी कागज पर हस्ताक्षर नहीं करने हैं चाहे वह कैसा

भी कागज हों । जहां तक लोग यह स्वीकार कर रहे हैं कि सरकार की प्रजा है और उनकी इच्छा से भूमि जोत रहे हैं, सरकार उनकी हितकारी है और वे वही करेंगे जैसा उनको आदेश दिया जाएगा । वे अब भी सोच-विचार किए जाने के लिए तर्क कर रहे हैं। अब इनके इन तर्कों को केवल थोड़ा सा मान लेने की आवश्यकता है । परन्तु अन्यथा यदि किसी क्षण उनके सामने कोई व्यक्ति यह लक्ष्य लेकर आगे आ जाएगा कि वे घाटी में रहने के अपने अधिकार का दावा कर सकते हैं और सरकार की अवज्ञा कर सकते हैं उसी क्षण यह स्थिति बदल सकती है और तब वे मुकाबले पर उतर आएंगे। इस क्षेत्र के आदिवासी लोगों को वे पहले मुकाबले भी याद हैं जो पड़ोस के बरसूर में भूमि हथियाओ आन्दोलन के समय और लोहान्डीगोंडा में श्री प्रबीर चन्द्र भंजदेव के साथ मुकाबले के समय हुए थे जिस में पुलिस द्वारा गोली चलाई गई थी। सौभाग्य से यहां स्थिति अभी तक उस चरमसीमा पर नहीं पहुंची है । परन्तु यदि तत्काल कार्रवाई नहीं की जाती है तो यह स्थिति किसी बाहरी तत्व द्वारा हस्तक्षेप किए जाने तथा इस झगड़े का लाभ उठाए जाने के लिए अनुकूल होगी।

36. पहला मुख्य कार्य लोगों का विश्वास जीतने और उन्हें पुनः यह आश्वासन देने का है कि उनका पक्ष बिना सुनवाई के नहीं रहेगा। दूसरे शब्दों में जब तक वे उन विकल्पों से सन्तुष्ट होकर जो कि उन्हें दिए जाएंगे, वहां से हटना स्वीकार नहीं करेंगे तब तक परियोजना का कार्य पुनः आरम्भ नहीं किया जाएगा । चूंकि परियोजना के लिए अंतिम अनापत्ति आदेश नहीं दिए गए हैं और यह मामला अभी तक भी पर्यावरण विभाग के पास अनिर्णीत पड़ा है, इस अनापत्ति की शर्तों का विस्तार किया जाना चाहिए और उसमें उन लोगों के पुनर्वास के लिए एक स्वीकार्य योजना सहित उनके द्वारा उठाए गए मामलों को शामिल किया जाना चाहिए । इस अवस्था में कागजी योजना से लोग सन्तुष्ट नहीं होंगे । स्थानीय प्रशासन द्वारा परियोजना से प्रभावित लोगों के साथ मिलकर स्पष्ट तथा विशिष्ट विकल्प तैयार किए जाएं । इसमें सबसे बड़ी बाधा बातचीत शुरू करने की होगी । लोगों पर किसी प्रकार के दबाव के परिणाम स्वरूप अन्ततः विरोध पैदा होगा। लोगों के साथ मिलकर काम करने की प्रशासन की योग्यता की वास्तविक जांच यही होगी कि वह इस पहले ही निर्णायक कदम से निपटने के लिए किस प्रकार काम करता है । उनकी व्यथित भावना शान्त की जानी चाहिए और इन मामलों में उनकी बात उचित रूप से मानी जानी चाहिए । उन्हें यह विश्वास दिलाना पड़ेगा कि उनका जो कुछ जाएगा उनको उससे अधिक क्षतिपूर्ति होगी और उनके घाटी से बाहर जाते ही उन्हें भुला नहीं दिया जाएगा।

37. संतोषप्रद पुनर्वास योजना तैयार करना वास्तव में एक कठिन काम होगा । वन के बाहर अच्छी कृषि भूमि नहीं है। आरक्षित वन के अन्दर कृषि का आगे विस्तार करने पर पूर्ण रोक है । यह परियोजना सिर्फ बिजली पैदा करने के लिए बनाई गई है और इसमें सिंचाई के लिए किसी प्रकार का कोई उपबंध नहीं है । उक्त सामने आ रही समस्या का संतोषजनक समाधान निकालने के लिए यदि आवश्यक हो तो, ये सभी मामले पुनः उठाए जा सकते हैं । सिंचाई सुविधाओं का प्रावधान करने के लिए इस परियोजना को इस अवस्था पर भी पुनः बनाया जा सकता है । इंद्रावती के बायें किनारे पर बांध स्थल के ठीक नीचे विस्तृत समतल भूमि है । यदि संभावित क्षेत्र के विकास के लिए अभी से ही उन लोगों को साथ लेकर, जिनके विस्थापित होने की संभावना है, यह योजना तैयार की जाती है तो एक स्वीकार्य विकल्प प्राप्त हो सकता है । इसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण सहायक बिन्दु यह होगा कि वे विस्थापित लोग उस क्षेत्र से तथा वहां के निवासियों से भी परिचित होंगे । इसका लाभ यह होगा कि उन्हें उस निश्चित बात के भय से छुटकारा मिल जाएगा जो इस समय उन्हें परेशान कर रही है । यह भी आवश्यक हो सकता है कि एक छूट देनी पड़े और कृषि के लिए कुछ वन भूमि का प्रयोग करने की अनुमति देनी पड़े । परन्तु उस स्थिति में यह स्पष्ट कर देना होगा कि यह छूट पूर्व उदाहरण के रूप में नहीं रखी जाएगी । यह छूट इस उलझे हुए वाद-विषय को सुलझाने में सहायक होगी और उसके साथ ही यह प्रशासन के लिए भी भविष्य में परियोजनाएं बनाते समय उचित सावधानी बरतने के लिए एक चेतावनी के रूप में होगी।

परियोजना के बारे में कुछ मामले

38. यहां यह बात उल्लेखनीय है कि इस परियोजना के बारे में कुछ बिन्दुओं को अभी भी स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता है । यह पता चला है कि इस परियोजना के जल-मग्न क्षेत्र के चारों ओर 5 किलोमीटर भाग विशेष रूप से इसके वनस्पतिक आवरण के संवर्धन के लिए तथा वन्य पशुओं के लिए भी आरक्षित किया जाएगा । इस पट्टी में इस परियोजना के डूब के क्षेत्र गांवों के सिवाय और भी बहुत सारे गांव आ जाएंगे । वास्तव में सीधे प्रभावित हुए गांवों में से कुछ गांव इस पट्टी में स्वयंमेव ही पड़ते हैं । प्रभावित हुए कुछ लोग शायद इस पास के क्षेत्र में बसना चाहें । बस्तर में किसी भी अधिकारी द्वारा 5 किलोमीटर की इस पट्टी के आशयों के बारे में स्पष्ट नहीं किया जा सका था। यदि लोगों को उनके स्वामित्व की भूमि पर कृषि करते रहने की अनुमति दी भी जाती है तो भी वन्य जीवों के संरक्षण के लिए किए गए विशेष उपाय उन्हें बाध्यकारी तौर पर प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेंगे । जैसा कुटरू में गौरी गाथों के अभ्यारण्य के पास हो रहा है । इसलिए परियोजना को केवल प्रतिकूल रूप से प्रभावित लोगों के पुनर्वास के लिए ही योजना नहीं बनानी है परन्तु इस पट्टी के लोगों के लिए बनानी है ताकि उनकी अर्थ-व्यवस्था प्रतिकूल रूप से प्रभावित न हो और वह युक्तियुक्त रूप से संतुलित हो जाए।

39. यदि लोग अन्तिम रूप से वहां से हटने के लिए सहमत हो जाएं तो भूमि पर खड़े हुए पेड़, उनके घर और नए प्रकार की स्थापित की जाने वाली बस्तियों की क्षतिपूर्ति दरों संबंधी सभी मामलों को फिर से खोलना पड़ेगा। यह क्षतिपूर्ति नगण्य है। इन भूमियों को जिन कठिन परिस्थितियों में विकसित किया गया है उसका उचित ध्यान रखा जाना है। बड़े बंडों का मूल्यांकन निष्पक्ष रूप से किया जाना है। पेड़ों के मूल्यांकन का पुनरावलोकन किया जाना है। यह पता चला है कि बिहार में आदिवासी क्षेत्रों में आरम्भ की गई एक नवीनतम परियोजना में क्षतिपूर्ति संबंधित खेत के उत्पादन के मूल्य से 15 गुणा नियत की गई है। यह सिद्धान्त न्यायालय के एक निर्णय में निरूपित किया गया है। यह विशेष रूप से आदिवासी क्षेत्रों के लिए सुसंगत है चूंकि वहां पर भूमि हस्तांतरण के विरुद्ध कानून बन जाने के कारण भूमि का विक्रय मूल्य अत्याधिक कम हो गया है। नई आवासीय बस्तियां भी ऐसी होनी चाहिएं जो लोगों की आवश्यकताओं तथा उनके कार्यों के अनुसार हों।

इन्द्रावती पर अन्य परियोजनाएं

40. बोधघाट परियोजना पर निर्णय लेते समय इन्द्रावती पर स्थापित की जा रही अन्य सभी परियोजनाओं को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। यदि अन्य परियोजनाओं से भी लोगों के प्रभावित होने की संभावना है तो उनके विकास के लिए उपयुक्त योजनाएं तत्काल तैयार की जानी चाहिएं। मानव के विकास के लिए किया गया कोई भी पंजी निवेश व्यर्थ नहीं हो सकता है। उनके पुनर्वास आदि का काम केवल तभी आरम्भ किया जा सकता है जब संबंधित परियोजनाओं के लिए सभी औपचारिकताएं पूरी हो जाएं।

आदिवासी क्षेत्रों में बड़ी परियोजनाओं के बारे में मूलभूत नीति का मामला

41. उपर्युक्त की दृष्टि से आदिवासी क्षेत्रों में बड़ी परियोजनाओं की स्थापना के बारे में मूलभूत नीति का मामला हमारे सामने आता है। बोधघाट परियोजना के संबंध में प्रारंभिक कार्य 20 वर्ष से अधिक समय पहले शुरू किए गए थे। यह दुर्भाग्य की बात है कि इस लम्बी अवधि के दौरान लोगों से कोई बातचीत नहीं की गई है और उन्हें अपने विस्थापित होने का समाचार सुनकर असहनीय सदमा पहुंचा जो उन्होंने प्रथम बार केवल सर्वेक्षकों के माध्यम से सुना जो उन्हें मिलने वाले क्षतिपूर्ति के अनुमान तैयार करने इस क्षेत्र में आए थे। इस लम्बी अवधि के दौरान लोगों को ऐसे विकल्प के लिए सहमत कराया जा सकता था जो उन्हें स्वीकार्य होता। इस समय वे असहाय हैं और उनका यह कहना है कि उन्हें कृषि के सिवाय दूसरा कोई कार्य करना नहीं आता है। उनमें से कुछ व्यक्तियों को नए काम सिखाने के लिए उनकी सहायता की जा सकती है जिससे कुछ अनिश्चितताओं का सामना करने के लिए उनमें विश्वास उत्पन्न हो सकता था। परियोजना की डूब में आने वाले गांवों के लिए शिक्षा का एक व्यापक कार्यक्रम शुरू किया जा सकता था। इस प्रकार इस क्षेत्र में शिक्षित युवकों की एक पीढ़ी तैयार हो सकती थी जो विस्थापन तथा संतोषजनक पुनर्वास के विकल्पों से सहमत होने के लिए और अधिक अच्छी स्थिति में हो सकते थे। वे मोल-भाव करने की स्थिति में भी हो सकते थे जिससे केवल अधिक क्षतिपूर्ति अथवा कुछ और अधिक सुविधाएं देनी पड़ती जिन्हें परियोजना आसानी से दे सकती थी। उक्त शिक्षित युवकों में कुछ गतिशीलता भी आ सकती थी और उनसे यह आशा की जा सकती थी कि वे अपने क्षेत्र तथा जिले के व्यापक सन्दर्भ से विकास में अपना भी हित देखेंगे। आज युवक तथा बूढ़े दोनों समान हैं। और उन्हें एक कष्टपूर्ण भविष्य के सिवाय कोई और आशा दिखाई नहीं देती है। बोधघाट के मामले में यह अवसर खो दिया गया है। परन्तु यह अवसर उन लोगों के लिए नहीं खोया जाना चाहिए जो आदिवासी क्षेत्रों में नई परियोजनाएं तथा कार्यक्रम शुरू होने पर इसी प्रकार की स्थिति में आ सकते हैं।

42. जैसे ही एक क्षेत्र में किसी संभावित परियोजना के लिए प्रारंभिक कार्य शुरु होता है, उसके साथ ही उन लोगों को तैयार करने के लिए, जिनके परियोजना द्वारा प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होने की संभावना है अथवा जो परोक्ष रूप से प्रभावित होंगे जैसे औद्योगिक परियोजना के मामले में मिलकर कार्य करना आरम्भ किया जाना चाहिए। जनता के विकास की व्यापक योजनाओं के बहुत सारे पहलू होंगे जिनमें से विस्थापित व्यक्तियों का पुनर्वास किया जाना पूरी योजना का केवल एक तथा आखिरी पहलू है। शिक्षा इन सभी विकासीय योजनाओं के लिए सामान्य तत्व के रूप में आवश्यक है। उसी प्रकार लोगों का कौशल बढ़ाना तथा नए कौशल का उन्हें प्रशिक्षण देना भी सामान्य पहलू होगा। परियोजना की उपयुक्तता के बारे में अन्तिम रिपोर्ट की प्रतीक्षा लिए बगैर किसी चुने हुए क्षेत्र में शिक्षा तथा प्रशिक्षण पर पूंजी निवेश तुरन्त शुरू किया जा सकता है। इन मदों पर कोई पूंजी निवेश व्यर्थ नहीं हो सकता है। इसे आदिवासी क्षेत्रों में सभी विकासीय योजनाओं में उच्चतम प्राथमिकता वाली मद के रूप में स्वीकार किया गया है। इस मामले में केवल यह बात होगी कि एक निश्चित क्षेत्र को प्राथमिकता दी जाएगी तथा उस पर तत्काल ध्यान दिया जाएगा। शिक्षा लोगों को न केवल नए जोखिम के लिए ही तैयार करती है यह उन्हें किसी क्षेत्र तथा देश में कुल मिलाकर सामाजिक आर्थिक स्थिति को और अच्छी तरह समझने का ज्ञान भी करती है। ऐसा होने पर संबंधित परियोजना के लिए राज्य की चिंता को समझ सकते हैं यद्यपि अपने निजी हितों का ओर उनका अधिक झुकाव हो फिर भी वे अधिक स्थिर तथा तर्कसंगत दृष्टिकोण अपनाने की स्थिति में होंगे। शिक्षित व्यक्तियों के भावनात्मक बंधन भी बहुत मजबूत नहीं होते हैं क्योंकि शिक्षा ही लोगों में आशाएं उत्पन्न करती है और उन्हें अधिक व्यापक ढांचे में नए अवसर ढूंढने के लिए मानसिक रूप से तैयार करती है। उन लोगों के विपरीत जो अन्य कौशल के बिना भूमि से

बंधे हैं और अनजानी दुनिया में जाने का जोखिम उठाने से डरे हुए हैं इनके सामले में निराशाएं, बाहर जाने में उनकी असमर्थता के कारण उत्पन्न होती हैं ।

43. मैं सिंचाई तथा पण-विद्युत परियोजनाओं द्वारा विस्थापित लोगों के पुन: स्थापन के लिए एक व्यापक ढांचा एक पृथक नोट में पहले ही प्रस्तुत कर चुका हूं। जिसका शीर्षक है "सिंचाई परियोजना द्वारा विस्थापित आदिवासियों का पुनर्वास पारिस्थितकी रूप से जीवन क्षम तथा सामाजिक रूप से अनुकूल एक वैकल्पिक उपाय" । इसमें दिए गए सुझावों के आधार पर एक उपयुक्त नीति का ढांचा शीघ्रता से तैयार किया जाए जिसे भविष्य में पुनर्वास कार्यक्रमों को तैयार करने में मार्गदर्शन करने के लिए राज्यों को भेजा जाना चाहिए। इसी प्रकार का एक उपयुक्त ढांचा औद्योगिक तथा खनन परियोजनाओं और शहरों में नए तथा बढ़ रहे केन्द्रों से प्रभावित लोगों के लिए भी तैयार किया जाए । आदिवासी उप योजनाओं के अधीन आयोजन के प्रयोजन के लिए ऐसे क्षेत्र पहले ही विशेष क्षेत्रों के रूप में स्वीकार हो चुके हैं । विस्थापित लोगों के पुनर्वास के लिए तथा नए प्रांगणों के प्रभाव क्षेत्र के विकास के लिए विशेष अभिकरणों की भी परिकल्पना की गई थी । सरकार के ये निर्णय बिना और किसी विलम्ब के पूर्णतः तथा प्रभावी रूप से कार्यान्वित किए जाने चाहिएं ।

दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य योजना

44. संसाधनों से समृद्ध आदिवासी क्षेत्रों में विकास के लिए प्रत्यक्ष रूप से एक बड़ी क्षमता है । इसके अतिरिक्त इनमें से कुछ क्षेत्रों में योजनाकारों को स्थानीय परिस्थितियों तथा राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार विविध विकल्प उपलब्ध हैं । इन समृद्ध वन क्षेत्रों की भूमि भी समृद्ध होती है। इसलिए विकल्प प्राकृतिक वनों, बागान फसलों, उद्यान-कृषि फसलों अथवा कृषि के बीच हो सकता है । इसी प्रकार कोई क्षेत्र खनिज संसाधनों से भी समृद्ध हो सकता है । उस मामले में यह निर्णय लेना पड़ेगा कि वहां खनन उद्योग को विकसित किया जाना है अथवा गैर-खनन गतिविधियां जारी रखी जानी हैं । इस मामले में विकल्प विद्युत उत्पादन, प्राकृतिक वन तथा पारम्परिक अर्थ-व्यवस्था के बीच है।

45. किसी विशिष्ट परियोजना का व्यापक ढांचा होने की आशा नहीं की जा सकती है चाहे उस आशय का निदेश भी दिया जाए और चाहे उसे संबंधित प्राधिकारियों द्वारा भी वांछनीय समझा जाए । प्रत्येक मामले में समय अवधि सीमित होती है और उसके अन्दर ही कुछ निर्णय लिए जाने होते हैं । इसलिए कुछ परिमाणों में केन्द्रित होना तथा अन्य को छोड़ देना आवश्यक हो जाता है । आदिवासियों के परम्परागत ढांचे में सामाजिक जटिलताओं को समझना अत्यधिक कठिन है । इसके लिए प्रयोजना युक्त अध्ययन केवल एक विस्तृत ढांचे में और दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य में ही संभव है । यह भी एक सामान्य अनुभव की बात है कि जिस समय कोई योजना एक बार केवल विचारार्थ हाथ में ली जाती है, उस समय कुछ निहित हित वाले समूह सामने आते हैं । इसलिए एक वस्तुपरक मूल्यांकन करना उस समय कठिन हो जाता है जब उससे लोगों के निहित हित पारिस्थिति की और उसी प्रकार के अन्य मामले संबंधित होते हैं । बहुत से अध्ययनों में पक्षपात होने की प्रवृत्ति होती है।

46. इसलिए परियोजना पद्धति में तदर्थ परियोजना अपनाने में गंभीर अवरोध होते हैं । इसलिए बैलाडिला अथवा बोधघाट के आस-पास की स्थिति जैसी अवस्थाएं तब तक उत्पन्न होती रहेंगी जब तक आदिवासियों के प्रत्येक क्षेत्र के विकास के लिए दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य तैयार नहीं किया जाता है । यहां यह बात भी उल्लेखनीय है कि आर्थिक विकास के लिए राष्ट्रीय प्रयासों के समारंभ के कारण आदिवासी क्षेत्रों की संसाधन क्षमता में विकार के रूप में परिवर्तन हुआ है। जिन संसाधनों ने आदिवासी लोगों को प्रारम्भिक जीवन स्तर पर स्थिर रखा था वे अब असीमित धन के लिए खजाने बन गए हैं । इसलिए यह अनिवार्य है कि नए संसाधनों के प्रयोग के लिए एक परिप्रेक्ष्य तैयार किया जाए जो ऐसा होना चाहिए जिसके केवल आर्थिक रूप से सर्वोत्तम परिणाम ही न निकलें परन्तु लोगों के दिलों का भी सामंजस्य हो ।

47. ऐसी परिप्रेक्ष्य योजना में विकल्प स्पष्ट अर्थों में प्रस्तुत किया जाएगा । कुछ मामलों में राष्ट्रीय हित सर्वोपरि हो सकता है जिसके लिए तत्काल कार्यवाही किए जाने की अपेक्षा की जाएगी । तब नए परिवर्तन के लिए लोगों के तैयार होने के लिए ठहरना भी संभव नहीं हो सकता है । परियोजना उनके हितों का समायोजन करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास कर सकती है परन्तु वह एक सीमा से आगे संभव नहीं हो सकता है । तथापि अधिकांश मामलों में समय अवधि का ढांचा उतना अपरिवर्तनीय नहीं होगा और एक अग्रिम कार्य योजना तैयार करना संभव हो सकता है ताकि लोग भी परिवर्तन के लिए तैयार हो जाएं और विकास कार्यक्रमों में भाग लेने की स्थिति में हो सकें तथा स्थानीय अर्थ-व्यवस्था को होने वाले लाभों में हिस्सेदार बन सकें ।

48. इसलिए यह आवश्यक है कि सभी आदिवासी क्षेत्रों के लिए एक व्यापक परिप्रेक्ष्य योजना शुरु की जानी चाहिए । यह विशेष रूप से बस्तर जैसे अत्यधिक समृद्ध संसाधनों वाले क्षेत्रों के लिए सुसंगत है । बहुत से क्षेत्रों में स्थिति की गंभीरता की दृष्टि से जिसके परिणामस्वरूप विरोध की स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है, इसे इस मामले की जब चाहे तब आरम्भ किए जाने के लिए राज्य सरकारों पर नहीं छोड़ा जा सकता है। योजना आयोग को देश के सभी आदिवासी क्षेत्रों के लिए 10 से 15 वर्ष तक की परिप्रेक्ष्य योजनाएं प्राथमिकता के आधार पर तैयार करने की जिम्मेदारी ग्रहण करनी चाहिए ।

5 नवम्बर, 1986

पशुओं के चरने के लिए लाइसेंसशुदा वन क्षेत्र में चरने वाले पशुओं के गोबर का वन उत्पाद न होना

(मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय का निर्णय)

(पी० डी० मूल्ये और आर० के० वर्मा, न्यायाधीश)

बरकत जलाम आदिवासी और अन्य———————वादी

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य कलेक्टर की मार्फत————प्रतिवादी

वन अधिनियम (1927 का 16) की धारा संख्या 2(4)(ख)(III)(IV) और 26 (2)—**लाइसेंसशुदा वन क्षेत्र में चरने वाले पशुओं का गोबर वन उत्पाद नहीं है और न ही यह इस रूप में वन विभाग में निहित है।**

पशुओं के चरने के प्रयोजन के लिए लाइसेंसशुदा वन क्षेत्र में चरने वाले पशुओं का गोबर "वन उत्पाद" की उस परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आता है जो भारतीय वन अधिनियम की धारा 2 (4) (III) या (IV) में दी गई है। चरने वाल जानवर घरेलू पशु होते हैं जो प्राकृतिक रूप से वनों में नहीं पाए जाते हैं और इस कारण लाइसेंसशुदा वन क्षेत्र में चरने वाले पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर जानवरों के ऐसे उत्पाद का भाग नहीं बनता है जो वन में पाया जाता है अथवा वन से लाया जाता है। वन अधिनियम की धारा 2(4) के खंड (III) और (IV) में व्यवहृत शब्द वन में पाए जाने वाले अथवा वन से लाए गए "जानवरों के उत्पाद के अन्य सभी भाग" और "धरातल की मिट्टी" वन में प्राकृतिक रूप से पाई जाने वाली वस्तुओं की ओर इंगित करते हैं। चरने वाले पशुओं का गोबर एकत्र करने का अधिकार "वन उत्पाद" के रूप में वन विभाग में निहित नहीं हो सकता है (पैरा 7-11)।

वादी की ओर से—अनिल त्रिवदी—राज्य की ओर से—कुल श्रेष्ठ

आदेश

आर० के० वर्मा न्यायाधीश—यह पेटीशन भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन 16 वादियों द्वारा दाखिल की गई है जो आदिवासी हैं और आरक्षित वन क्षेत्र के वन गांव चैनपुरा के निवासी हैं और जो पशुओं के पालन और चराने के काम में लगे हुए हैं। वादियों ने प्रतिवादियों की उस कार्यवाही को चुनौती दी है जिसके द्वारा वादियों को उन पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर को इकट्ठा करने, जिन्हें वे चराते हैं, और घरेलू पशुओं से ऐसे उत्सर्जित पदार्थ की एकत्र की गई मात्रा के निपटान के लिए उसे सुरक्षित वनों से हटाने से रोका गया है।

2. वादियों का यह कथन है कि वे उस आरक्षित वन क्षेत्र में जिसमें उन्हें पीढ़ियों से पशु चराने की अनुमति दी गई थी, चरते समय पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर इकट्ठा करने का कार्य करते रहे हैं और इससे पूर्व कभी भी उन्हें उस गोबर को इकट्ठा करने और खाद के रूप में उसका निपटान करने से नहीं रोका गया था। गोबर इकट्ठा करने और बेचने का कार्यकलाप उनकी रोजी का साधन रहा है।

3. प्रतिवादी संख्या 2 (जिला वन अधिकारी, खारगोन) की ओर से दाखिल किए गए उत्तर के अनुसार वादियों और अन्य व्यक्तियों ने चैनपुरा गांव के बाहर वन उपखंडों में गोबर के 48 ढेर इकट्ठे किए थे और वादियों को वहां से गोबर हटाने से रोका गया था क्योंकि आरक्षित वन क्षेत्र में पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर भारतीय वन अधिनियम की धारा 2(4)(ख) के खंड (III) और (IV) में सम्मिलित परिभाषा के अर्थों में वन उत्पाद होता था। उक्त अधिनियम की धारा 26 (2) किसी वन उत्पाद को हटाने का निषेध करती थी जब तक वन अधिकारी द्वारा लिखित रूप में अनुमति न दी गई हो या राज्य सरकार द्वारा बनाए गए किसी नियम के अधीन अनुमति न हो। उस उत्तर में यह भी कहा गया है कि चूंकि घरेलू पशुओं द्वारा उत्सर्जित पदार्थ वन उत्पाद होता है। अतः उसे बाहर ले जाने की अनुमति प्राप्त किए बिना वादियों द्वारा वन गांव चैनपुरा से बाहर नहीं भेजा जा सकता। यद्यपि वन गांव चैनपुरा जिसमें वादी रहते हैं, के क्षेत्र के अन्दर इकट्ठा किया गया गोबर वादियों की सम्पत्ति होना स्वीकार किया जाता है, उस गांव क्षेत्र के बाहर वन में इकट्ठा किया गया गोबर इस आधार पर वन विभाग की सम्पत्ति होने का दावा किया जाता है कि वादियों द्वारा वन में इकट्ठा किया गया पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर वन उत्पाद का रूप है।

4. अतः इस पेटीशन में वास्तविक विवाद यह है कि क्या उस आरक्षित वन क्षेत्र में जिसमें वादियों को अपने पशु चराने का लाइसेंस दिया गया है, उनके द्वारा चराए जाने वाले पशुओं से उत्सर्जित गोबर वन उत्पाद हो जाता है जिस पर वन विभाग अपनी सम्पत्ति के रूप में दावा करने का अधिकार रखता है। वादियों ने यह दलील दी है कि उन्होंने गोबर "ग्वाड़ियों" (पशु शिविरों) से इकट्ठा किया है जहां पर पशु चराने के लिए

27-9-1986 को निर्णीत 1986 का म० प्र० सं० 575 (इन्दौर)

लाइसेंसशुदा वन क्षेत्र में पशु रात के दौरान रखे जाते हैं। उत्तर में यह बताया गया है कि वादियों द्वारा कलेक्टर और आयुक्त से सम्पर्क किया गया था और वादियों को इकट्ठा किए गए गोबर का ढेर इकट्ठा करके प्रभार के रूप में प्रति ट्रक 80 रुपये की दर से भुगतान करने का प्रस्ताव किया गया था। यह भी बताया गया है कि यह प्रस्ताव इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए किया गया था कि भोले आदिवासी लोगों को गोबर का ढेर इकट्ठा करने के उनके श्रम के लिए उचित रूप से क्षतिपूर्ति दी जानी चाहिए।

5. ऊपर निर्दिष्ट भारतीय वन अधिनियम की धारा 2 (4) (ख) के खंड (III) और (IV) में दी गई वन उत्पाद की परिभाषा निम्नलिखित है —

2(4) "वन उत्पाद" में निम्नलिखित शामिल है—

(क) × × ×

(ख) निम्नलिखित चीजें जब वे वन में हैं अथवा वन से लाई जाती हैं अर्थात्—

(i) × × ×

(ii) × × ×

(iii) जंगली जानवर और खालें, हाथी दांत, सींग, हड्डियां, रेशम, कृमिकोष (कोकून) शहद और लाह तथा जानवरों के उत्पाद के अन्य सभी भाग, और

(iv) 'पीट' धरातल की मिट्टी, पत्थर तथा खनिज (चूना, मखरला) खनिज तेल और तेल उत्पाद, खानों और खदानों सहित)

× × ×

(महत्वपूर्ण अंश रेखांकित)'

6. प्रतिवादियों की ओर से विद्वान सरकारी वकील ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि जो पशु लाइसेंस के अधीन चरने के प्रयोजन के लिए आरक्षित वन क्षेत्र में रखे जाते हैं उनके द्वारा उत्सर्जित गोबर वन उत्पाद होगा क्योंकि वह खण्ड (iii) के अधीन जानवरों के उत्पाद का भाग और खण्ड (iv) के अधीन धरातल की मिट्टी है।

7. उक्त विद्वान वकील को सुनने के बाद हमारा मत यह है कि पशु चराने के प्रयोजन के लिए लाइसेंस के अधीन वन क्षेत्र में चराए जाने वाले पशुओं का गोबर जैसा इस वर्तमान मामले में है, वन उत्पाद की परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आता है जैसा प्रतिवादियों की ओर से विद्वान वकील ने निवेदन किया है। चरने वाले पशु घरेलू जानवर हैं जो वनों में प्राकृतिक रूप से नहीं पाए जाते हैं और इस कारण लाइसेंस के अधीन वन क्षेत्र में चराए जाने वाले पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर वन में पाए जाने वाले या वन से लाए जाने वाले जानवरों के उत्पाद का भाग नहीं बन सकता है। यह भी नहीं कहा जा सकता है कि लाइसेंस के अधीन वन क्षेत्र में चराए जाने वाले पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर वन में पाई जाने वाली अथवा वन से लाई जाने वाली "धरातल की मिट्टी" का लक्षण धारण करता है। हमारे मत में वनों से पाए जाने वाले अथवा वनों से लाए जाने वाले "जानवरों के उत्पाद के अन्य सभी भाग" और "धरातल की मिट्टी" दोनों पद वनों में प्राकृतिक रूप से पाई जाने वाली वस्तुओं की ओर निर्देश करते हैं। इस प्रकार उन घरेलू पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर, जिन्हें वादियों द्वारा लाइसेंस के अधीन चरने के लिए वन क्षेत्र में ले जाया जाता है, "वन उत्पाद" के अर्थ के अन्तर्गत शामिल नहीं होता। अतः वादियों द्वारा चराए जाने वाले पशुओं के इकट्ठा किए गए गोबर के ढेरों पर "वन उत्पाद" के रूप में वन विभाग का अधिकार नहीं हो सकता।

8. प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा दाखिल किए गए उत्तर में यह कहा गया है कि जहां तक वन गांव चैनपुरा के क्षेत्र के अन्दर गोबर इकट्ठा करने का संबंध है, वादियों को यह स्वतन्त्रता है कि वे उस क्षेत्र में उसे इकट्ठा कर सकते हैं और बाहर ले जाने की अनुमति प्राप्त करने के बाद अपनी इच्छा के अनुसार उसका निपटारा कर सकते हैं परन्तु वादी वन गांव चैनपुरा के क्षेत्र से बाहर आरक्षित वन क्षेत्र में प्रवेश करके इस अधिकार का विस्तार करने का दावा नहीं कर सकते। अस्तु इस मामले में यह विवाद नहीं उठाया गया है कि घरेलू पशु लाइसेंस के अधीन आरक्षित वन क्षेत्र में प्रवेश करते हैं और इसलिए वादी प्रश्नगत क्षेत्र में अपने पशु चराने के लिए हकदार हैं। इस कारण इसमें भारतीय वन अधिनियम की धारा 26 का कोई उल्लंघन नहीं है और वादियों द्वारा पशु चराए जाने के कार्य को उक्त अधिनियम की धारा 26 (2) के अधीन अनुमति दी गई है।

9. विद्वान सरकारी वकील ने 30 जून, 1986 की एक गजट अधिसूचना सं० एफ० 7-1-84-X-3 का हवाला दिया है जिसमें राज्य सरकार द्वारा भारतीय वन अधिनियम की धारा 26 की उपधारा (2) के खण्ड (क) धारा 32 के खण्ड (1) और धारा 76 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए बनाए गए नियम छपे हैं जो सरकारी वनों में पशु चराने का नियमन करने संबंधी हैं। इन नियमों में नाम मात्र के वार्षिक चराई शुल्क के एवज में पशु चराने की सुविधा की मंजूरी के लिए उपबन्ध किया गया है। काश्तकारों, कृषि मजदूरों और ग्रामीण शिल्पकारों के घरेलू पशुओं यथा गायों, बैलों, सांडों और भैंसों के लिए उनकी प्रथम दस इकाइयों तक कोई शुल्क विहित नहीं किया गया है और यदि उनकी संख्या दस से और चौदह से ऊपर बढ़ती है तो उन पर प्रति इकाई क्रमशः 25 पैसे और 50 पैसे का नाममात्र का शुल्क विहित किया गया है। वादियों के विद्वान वकील ने 28 जून, 1979 की एक पुरानी अधिसूचना संख्या एफ 7-29-78-3-1-X का हवाला दिया जिसमें उक्त घरेलू पशुओं के लिए निःशुल्क चराने

की सुविधा मंजूर करने के लिए उपबन्ध किया गया था।

10. अस्तु, पशु चराने की सुविधा संबंधी उपबन्धों में अथवा किन्ही ऐसे अन्य उपबन्धों में इस बात का कोई उल्लेख नहीं किया गया है कि लाइसेंस के अधीन वन क्षेत्रों में पशु चराने पर उनके द्वारा उत्सर्जित गोबर पर मे चरवाहों की अपने दावे का परित्याग करना होगा।

11. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए यह पिटीशन मंजूर किया जाता है। यह अवधारित किया जाना चाहिए कि वन क्षेत्र में जहां वादियों को अपने पशु चराने की अनुमति दी गई थी, बादियों के पशुओं द्वारा उत्सर्जित गोबर वन उत्पाद नहीं होता और इसलिए वादी उसे इकट्ठा करने और उसे बाहर ले जाने की अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता के बिना उसे वन क्षेत्र से बाहर ले जाने के लिए हकदार हैं।

12. प्रस्तुत मामले में प्रतिवादियों ने जब्त की गई खाद (गोबर) जो वादियों द्वारा आरक्षित वन क्षेत्र में इक्कट्ठा की गई थी, का मूल्य इस न्यायालय के तारीख 29-4-86 और 12-6-86 के आदेशों के अधीन 120 रुपये प्रति ट्रक की दर से जमा करा दिया है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि यह पिटीशन स्वीकार किया गया है। वादी इस न्यायालय में जमा की गई इस कीमत के भुगतान के लिए हकदार होंगे। प्रतिभूति निक्षेप, यदि कोई हो, सत्यापन के बाद वादियों को वापस किया जाएगा।

पेटीशन मंजूर किया गया।

स्रोत एम पी एल जे पृष्ठ 704--707

अनुलग्नक 5

महाराष्ट्र में वानिकी कार्यचालन में न्यूनतम मजदूरी के भुगतान पर एक नोट

पृष्ठभूमि

महाराष्ट्र सरकार ने जुलाई 1982 में एक समिति नियुक्त की थी जिसे वन तथा वानिकी में रोजगार में प्रचलित परिस्थितियों की जांच करने तथा उस संबंध में न्यूनतम मजदूरी दरों का निर्धारण करने के मामले में सरकार को परामर्श देने के लिए कहा गया था। सरकार ने 1985 में इस समिति की सिफारिशें मंजूर कर ली थीं। तदनुसार वानिकी कार्यों के लिए न्यूनतम मजदूरी की दरें न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के समुचित उपबन्धों के अधीन अधिसूचित की गई थीं और 15 मई, 1986 से लागू की गई थीं। तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि वन विभाग ने न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अधीन इस अधिसूचना के उपबन्धों का अनुपालन नहीं किया और वानिकी में मजदूरी का भुगतान उस अनुसूची में दी गई दरों के अनुसार किया जाना जारी रहा जो वन विभाग द्वारा वर्ष 1985-86 के लिए अनुमोदित की गई थी और मार्ग-दर्शन के लिए क्षेत्रीय कार्यालयों को परिचालित की गई थी। वन विभाग ने वर्ष 1986-87 के लिए नई अनुसूची तैयार नहीं की थी। इसलिए 1986-87 के दौरान भी वर्ष 1985-86 की पुरानी अनुसूची प्रचलित रही। वानिकी में दरों के प्रयोजन के लिए नया वर्ष 1 जुलाई से आरंभ होता है। स्थानीय अधिकारियों के अनुसार वर्ष 1987-88 के लिए भी कोई नई दरें निर्धारित नहीं की गई हैं इसलिए 3-7-88 को स्थिति यह थी कि 1985-86 की दरें ही प्रचलन में थीं।

2. ऐसा प्रतीत होता है कि महाराष्ट्र वन विकास निगम लिमिटेड ने न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अधीन वानिकी के लिए विहित दरों की अनुसूची पर ध्यान दिया था और 1986-87 के दौरान इन्हें लागू किया था। तथापि, इस निगम के निदेशक मंडल ने 20-4-87 को हुई अपनी बैठक में यह प्रस्ताव पास किया था कि "महाराष्ट्र के वन विकास निगम लिमिटेड की दैनिक मजदूरी दरें वन विभाग में प्रचलित दरों के बराबर होनी चाहिएं।" इसलिए उन्होंने यह संकल्प किया और निदेश दिया कि वन विभाग द्वारा परिचालित अनुसूची में दी गई दरों का 1-5-1987 से कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए। जैसा पहले बताया गया है यह अनुसूची वर्ष 1985-86 से संबंधित है। 1 जुलाई 1987 के शुरू में मेरे दौरे के समय वानिकी के सभी कार्यों में मजदूरी की दरें वन विभाग के उस परिपत्र द्वारा नियंत्रित हो रही थीं, जिसमें वर्ष 1985-86 के लिए उनके द्वारा विहित मजदूरी की दरें दी गई थीं।

तथ्य

3. इस प्रकार वानिकी में मजदूरी की दरों के संबंध में स्थिति संक्षेप में निम्नलिखित रूप में वर्णित की जा सकती है :--

(1) महाराष्ट्र सरकार ने 1982 में यह आवश्यक समझा था कि वन कार्यों में लगे लोगों के कार्य की परिस्थितियों और मजदूरियों की जांच की जाए। इसके परिणामस्वरूप, इस प्रयोजन के लिए एक समिति नियुक्त की गई थी।

(2) समिति द्वारा अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद राज्य सरकार द्वारा उसकी सिफारिशें 1985 में स्वीकार की गई थीं।

(3) वानिकी कार्य के लिए मजदूरी की नई दरें औपचारिक रूप से 15 मई 1986 को अधिसूचित की गई थीं और उसी तारीख से लागू की गई थी।

(4) वन विभाग ने सरकार की इस अधिसूचना पर कोई ध्यान नहीं दिया था और वर्ष 1985-86 के लिए पहले बनाई गई अनुसूची के अनुसार ही क्षेत्र में उनके कर्मचारियों को मजदूरी दिया जाना जारी रहा था। यह अनुसूची वर्ष 1986-87 के दौरान पुनरीक्षित नहीं की गई थी और 1987-88 के लिए भी पुनरीक्षित नहीं की गई है और उसी को लागू किया जाना जारी है।

(5) महाराष्ट्र के वन विकास निगम ने न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अधीन जारी सरकारी अधिसूचना का अनुसरण करते हुए अपनी मजदूरी की दरों को पुनरीक्षित किया था किन्तु बाद में उन्होंने यह अनुभव किया था कि उन्हें वन विभाग द्वारा विहित दरों का ही अनुसरण करते रहना चाहिए था और उन्होंने पुनः अपनी पहली दरें ही अपना ली थीं।

(6) इस प्रकार आज की तारीख में वानिकी कार्यों में सभी मजदूरियां वन विभाग के वर्ष 1985-86 के लिए जारी किए गए परिपत्र के अनुसार ही नियंत्रित होती हैं और न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के उपबन्धों के अधीन जारी की गई और 15-5-86 से लागू की गई सरकारी अधिसूचना की उपेक्षा की गई है।

एक आलोचनात्मक मूल्यांकन

4. ऊपर कथित तथ्यों के संदर्भ में दो प्रश्नों पर विचार किए जाने की आवश्यकता है—(1) वानिकी में मजदूरी की दरों की पुनरीक्षित किए जाने की आवश्यकता और (2) दरें बढ़ाने के लिए सरकार द्वारा जारी औपचारिक अधिसूचना के विद्यमान होते हुए वन विभाग द्वारा पुरानी दरें जारी रखने का औचित्य।

वानिकी में अधिक मजदूरी के लिए न्यायोचित्त

5. जहां तक मजदूरी की दरों को पुनरीक्षित करने की आवश्यकता का संबंध है, यह स्पष्ट है कि सरकार स्वयं इस आवश्यकता के बारे में सहमत थी क्योंकि उसने 1982 में वानिकी में मजदूरी की स्थिति की जांच के लिए एक समिति नियुक्त की थी। समिति द्वारा जितनी वृद्धि का सुझाव दिया गया था तथा जो सरकार द्वारा स्वीकार की गई थी वह भी महत्वपूर्ण है, जिससे वहां हुए बदलाव की तत्काल आवश्यकता प्रमाणित होती है। वन विभाग द्वारा विहित अनुसूची में विहित न्यूनतम मजदूरी की दर केवल 7.60 रुपए प्रतिदिन है जबकि उस समिति की सिफारिशों पर आधारित सरकारी अधिसूचना में विहित अकुशल श्रमिक की मजदूरी की दर 14 रुपए प्रतिदिन है। इससे यह स्पष्ट है कि पहली दरें क्षेत्र की बदली परिस्थितियों की दृष्टि से इतनी पुरानी हैं कि इसे उचित जांच के बाद एक बार में ही दुगना करना पड़ा है।

6. महाराष्ट्र सरकार द्वारा हाल ही के वर्षों में अन्य विभागों के मजदूरों के लिए मजदूरी की जो दरें अधिसूचित की गई हैं, उनसे भी स्पष्ट रूप से यह प्रकट होता है कि सामान्य मजदूरी दर वानिकी में प्रचलित दर से अधिक रही है। उदाहरण के लिए, बीड़ी श्रमिकों की मजदूरी की न्यूनतम दर 8.80 रु० से 12.20 रुपए प्रतिदिन के बीच है (8-7-86 से) और ईंट तथा छतों की टाइल बनाने वाले मजदूरों के लिए क्षेत्रों के अनुसार 9.50 रु० से 11.90 रुपए प्रतिदिन के बीच है।

7. वानिकी में मजदूरी का केवल एक अपवाद यह है कि खेतिहर मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी दर अधिक है और रोजगार गारंटी योजना के अधीन तत्स्थानी मजदूरी की दर अधिक है। खेतिहर मजदूरों की मजदूरी का ढांचा भिन्न है। खेतिहर मजदूर संगठित क्षेत्र से बाहर हैं और राज्य एक हद के बाद इसकी मजदूरी की गति को नियंत्रित नहीं कर सकता है। रोजगार गारंटी योजना के अधीन मजदूरी की दरों को खेतिहर मजदूरों की मजदूरी आदर के साथ आशयपूर्वक संबद्ध किया गया है। रोजगार गारंटी योजना के अधीन मजदूरी भी एक भिन्न श्रेणी में आती है और इसे संगठित क्षेत्र में विशिष्ट रूप से सरकारी विभागों के अधीन कामों में, मजदूरी निर्धारित करने के लिए एक आधार के रूप में नहीं लिया जा सकता है। यद्यपि, पूरे प्रश्न की जांच किए बिना ही खेतिहर मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी के बारे में कोई बात कहना ठीक नहीं होगा तथापि, यह स्पष्ट है कि महाराष्ट्र में ये मजदूरी देश के अन्य किसी भी स्थान की, विशेष रूप से पड़ौसी राज्यों की मजदूरी से पिछड़ी है। किसी भी दशा में उन्हें वानिकी में मजदूरी निर्धारित करने के लिए जो राज्य का एक महत्वपूर्ण कार्य है, एक आधार के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इन परिस्थितियों में केवल एक ही निष्कर्ष निकाला जा सकता है, जो यह है कि जब मई, 1986 में ही 14 रुपए प्रतिदिन की मजदूरी युक्तियुक्त समझी गई थी तो मूल्यों में निरन्तर वृद्धि के साथ वानिकी श्रमिकों के लिए और अधिक मजदूरी न्यायोचित्त है।

वानिकी में कम मजदूरी का औचित्य

8. अगला प्रश्न 14 रुपए प्रतिदिन की अधिसूचित मजदूरी दर के होते हुए भी 7.60 रुपए की कम मजदूरी दर जारी रखने के औचित्य के बारे में है। वन विभाग द्वारा 7.60 रुपए की दर अपने विभागीय कार्य-पालन के लिए वार्षिक मजदूरी दरें निर्धारित करने के लिए सामान्य कार्य-विधि की अनुसरण करते हुए विहित की गई थी। वन विभाग के 27-3-86 के आदेश के अनुसार यह दर वर्ष 1985-86 के लिए थी। ऐसा प्रतीत होता है कि ये दरें वन विभाग की प्रथा के अनुसार निर्धारित की गई थीं। इन मजदूरियों की राज्य के किसी कानून के अधीन स्वीकृति प्राप्त नहीं हैं। दूसरी ओर, 14 रुपए प्रतिदिन की न्यूनतम मजदूरी वाली दर राज्य के एक कानून के अधीन सरकार को दी गई कुछ शक्तियों का प्रयोग करते हुए अधिसूचित की गई है। यह अधिसूचना कानून के रूप में ही है और इसमें वही शक्ति है जो इस मूल कानून में है। ऐसी स्थिति में जब तक यह अधिसूचना प्रभावी है, सरकार का कोई अन्य आदेश नहीं चल सकता है जब तक वह आदेश अन्य कानूनों का अतिक्रमण करके बनाए गए एक विशिष्ट कानून के अधीन न निकाला जाए। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस समय वानिकी में न्यूनतम कानूनी मजदूरी 14 रुपए प्रतिदिन है। वन विभाग द्वारा परिचालित अनुसूची में विहित दरें इस अधिसूचना के होते हुए नहीं चल सकती हैं और 15-5-86 से इसका अतिक्रमण किया गया ही समझा जाना चाहिए।

9. यह बताया गया है कि कार्य-विधि संबंधी कुछ भूलों के कारण श्रम विभाग द्वारा जारी की गई अधिसूचना की वैधता के बारे में कुछ संदेह हैं। कार्य-विधि राज्य सरकार का आंतरिक मामला है और उसकी किसी त्रुटि को एक ऐसे औपचारिक आदेश का कार्यान्वयन न करने के लिए एक तर्क के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता है जो जनसंख्या के एक वर्ग के हित में एक अधिकार प्रदान करता है। यदि किसी प्रकार के किन्हीं आधारों पर राज्य सरकार को इस अधिसूचना की विधि-मान्यता के बारे में संदेह है तो कार्यान्वयन न करने के लिए उन भूलों की आड़ नहीं लेनी

चाहिए परन्तु उन त्रुटियों को तत्काल दूर करना चाहिए ताकि मजदूरों को परेशानी न उठानी पड़े। वन मजदूरों को केवल औपचारिक रूप से अधिसूचित हुई दरों से सरोकार है, और उन्हें इससे सरोकार नहीं है कि एक निश्चित कार्य-विधि का पालन किया गया है अथवा नहीं। राज्य के पास केवल दो विकल्प हैं, अर्थात या तो जब तक यह अधिसूचना प्रभावी है, यथा अधिसूचित मजदूरी का भुगतान करे या फिर इस अधिसूचना को रद्द करें ताकि लोगों के पास अपने हक के समर्थन में कोई विधिक आधार न रहे। इसके सिवाय कोई बीच का रास्ता जिसमें अधिसूचना प्रभावी रहती है, किन्तु मजदूरियां एक सरकारी परिपत्र के अधीन दी जाती हैं, न तो कानूनी रूप से विधिमान्य हैं और न ही नैतिक रूप से न्यायोचित है।

वानिकी मजदूर अनुसूचित जन जाति के व्यक्ति होने से जटिलताएं

10. यह स्पष्ट है कि वानिकी में मजदूर 14 रुपए प्रतिदिन की न्यूनतम मजदूरी के हकदार हैं और वन विभाग द्वारा कुछ तकनीकी कारणों से उन्हें इस हक से वंचित किया जा रहा है। यह किन्हीं भी परिस्थितियों में स्वीकार्य प्रस्ताव नहीं हो सकता है। किन्तु इस प्रश्न में उस समय एक नाजुक पहलू और बढ़ जाता है जब यह ज्ञात होता है कि वानिकी में अधिकांश मजदूर अनुसूचित जनजातियों के हैं, आदिवासियों के हितों की रक्षा करना राज्य का विशेष दायित्व है। तब यह ऐसी विडम्बना है कि राज्य स्वयं ही आदिवासियों को उस हक से वंचित करने में सहायक बने जो कानून के अधीन उन्हें देय है।

आदिवासियों के हितों के संरक्षण की प्रणाली की असफलता

11. किसी ऐसी स्थिति की तो कल्पना की जा सकती है जब राज्य के किसी एक विभाग द्वारा संकीर्ण और पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया गया हो और उसका निर्णय आदिवासियों के हितों के विरुद्ध हो गया हो। किन्तु स्वयं शासन द्वारा ही ऐसा किए जाने की अपेक्षा नहीं की जा सकती है जिस पर संविधान के अधीन आदिवासियों के हितों की रक्षा करने का विशेष दायित्व है। इसलिए इस स्थिति में यह प्रश्न उठता है कि राज्य व्यवस्था में बनी नियंत्रण और संतुलन की प्रणाली किस कारण सक्रिय नहीं हुई जो ऐसी विरोधी स्थितियों का समाधान करा सकती थी। इसके अतिरिक्त यह कैसे हुआ कि आदिवासी हितों की रक्षा के लिए बनाई गई विशेष व्यवस्था ने इस स्थिति में कोई प्रतिक्रिया नहीं की जब आदिवासियों के हितों की रक्षा करना शासन का एक स्पष्ट और निश्चित दायित्व था परन्तु उसका एक विभाग उनके हितों के विरुद्ध कार्य कर रहा था?

12. संविधान में आदिवासियों के हितों की रक्षा करने के लिए बहुत से स्तरों पर विशेष उपबन्ध किए हैं। पहले-पहल प्रत्येक सरकारी विभाग से यह अपेक्षा की जाती है कि वह आदिवासियों के संरक्षण के लिए अपने दायित्व को समझे। विभाग का यह कर्तव्य इसलिए बनता है कि वह विस्तृत शासन व्यवस्था का एक भाग है। इसलिए जिम्मेदार विभाग, एक विशेष मामले के रूप में, इस स्थिति का पुनरावलोकन कर सकता था कि आदिवासी लोगों के हितों की रक्षा करना केवल राज्य का ही दायित्व नहीं है किन्तु सभी विभागों का भी दायित्व है। यह ज्ञात हुआ है कि यह मामला उच्च न्यायालय में उठाया जा चुका है। इसका यह अर्थ है कि उक्त विभाग को इस मामले में अन्तर्ग्रस्त प्रश्न के बारे में जानकारी हो गई थी। फिर चाहे आदिवासी हितों से संबंधित प्रश्नों पर न्यायालय में ध्यान केन्द्रित न भी किया गया हो, यदि विभाग उनके हितों के लिए जागरूक होता तो वह इस मामले के आधार पर स्थिति पर पुनः विचार करने के अवसर का लाभ उठा सकता था, परन्तु ऐसा नहीं हुआ। इसके बजाय ऐसा प्रतीत होता है कि विभाग ने इसे एक ऐसा साधारण विधिक मामला समझा जिसकी सामान्य ढंग से पैरवी की जानी थी। उन्हें जरा भी चिन्ता नहीं हुई और केवल न्यायालय के निर्णय की प्रतीक्षा करने लगे। ताकतवर समूहों की ओर से ऐसी प्रतिक्रिया किया जाना उनका स्वाभाविक लक्षण है क्योंकि यह मामला समाज के कमजोर तथा असुरक्षित वर्गों के अधिकारों से संबंधित है। परन्तु किसी सरकारी विभाग द्वारा ऐसा रुख अपनाया जाना विशिष्ट रूप से जब वह आदिवासी लोगों से संबंधित हो, एक गैर-जिम्मेदारी की बात है।

13. द्वितीय रूप से सुधारात्मक उपाय श्रम विभाग द्वारा किया जा सकता था, क्योंकि, राज्य अधिनियम के अधीन औपचारिक अधिसूचना उक्त विभाग द्वारा ही जारी की गई थी, जिसके सामान्य रूप से कार्यान्वयन की जिम्मेदारी भी उस विभाग की ही है। ऐसा प्रतीत होता है कि श्रम विभाग ने इस मामले में गैर-जिम्मेदाराना मनोवृत्ति अपनाई, जिसका संभव कारण यह हो सकता है कि उसकी ओर से कार्य-विधि में उक्त भूल हुई है, और इस पर ऐतराज करने वाले सरकारी विभाग ने तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की, जो आदिवासी हितों की कोई परवाह करने के बजाय प्रारूप और कार्य-विधि का सही तौर पर पालन करने का आग्रह कर रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस स्तर पर भी श्रम विभाग तथा क्रोड स्थापना विभाग ने इस तथ्य पर विचार नहीं किया है कि इसमें आदिवासियों के हित अन्तर्ग्रस्त हैं, जिनकी रक्षा करना शासन का दायित्व है। इस मामले में यदि कोई जिम्मेदार है तो वह श्रम विभाग है, जिसने कानून का पालन नहीं किया और यह सुनिश्चित नहीं किया चूंकि आदिवासी लोग इसका प्रतिवाद नहीं कर सकते हैं इसलिए उनके दावों को अवहेलना करके संविधान के उपबन्धों का उल्लंघन न किया जाए।

14. इससे अगली अवस्था में आदिवासी कल्याण विभाग से सुधारात्मक उपाय किए जाने की अपेक्षा की जा सकती थी। यद्यपि, संविधान केवल तीन राज्यों अर्थात मध्य प्रदेश, बिहार और उड़ीसा के मामले में एक अलग आदिवासी कल्याण

मंत्री के लिए उपबंध करता है, तथापि, महाराष्ट्र में काफी आदिवासी जनसंख्या है और उनके कल्याण को राज्य सरकार द्वारा औपचारिक रूप से दिए गए महत्व की दृष्टि से एक अलग विभाग स्थापित किया गया है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसे महत्वपूर्ण मामले में आदिवासी लोगों के हितों की रक्षा के लिए उसकी ओर से कोई प्रत्युत्तर न दिया जाए जो आदिवासियों को उनकी ऐसी हकदारी से इंकार करने के बारे में है जो एक विस्तृत जांच के बाद स्वीकार की गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह त्रुटि आदिवासी कल्याण विभाग द्वारा इस कारण से हुई है कि अपनी भूमिका के बारे में उसकी धारणा स्पष्ट नहीं थी। संकल्पना की दृष्टि से किसी भी विकासीय गतिविधि के बारे में आदिवासी कल्याण विभाग की महत्वपूर्ण कार्यकारी भूमिका नहीं होनी चाहिए, उन अपवाद वाली स्थितियों को छोड़कर जिनमें संबंधित विभाग होने के कारण उसके हस्तक्षेप की अपेक्षा की गई हो, क्योंकि सरकार का एक अंग होने के कारण उसे वह दायित्व सौंपा जाना चाहिए। यह संकल्पना, राष्ट्रीय स्तर पर उपयोजना कार्य-नीति औपचारिक रूप से अपनाए जाने के बाद सत्तर के दशक के आरंभ से स्पष्ट रूप से स्वीकार की गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि उप-योजना कार्य-नीति का आशय और संबंधित कार्य क्षेत्रों के बारे में अलग-अलग विभागों की जिम्मेदारी तय नहीं की गई थी। इसलिए इन विभागों द्वारा इस महत्वपूर्ण भूमिका की उपेक्षा करने का एक नेमी प्रकार का तरीका अपनाया जा रहा है। उदाहरण के लिए आदिवासी कल्याण विभाग सामान्यतः शिक्षा, क्रय-विक्रय आदि कार्यों में संलग्न है। शिक्षा विभाग की जिम्मेदारी शिक्षा की है, जिसके पास विशेषज्ञ हैं और क्रय-विक्रय की जिम्मेदारी क्रय-विक्रय सहकारी समितियों की है जिन्हें उस क्षेत्र में विशेष ज्ञान प्राप्त है। आदिवासी कल्याण विभाग की मुख्य जिम्मेदारी आदिवासी लोगों की सहायता करना है और यह सुनिश्चित करना है कि उनके अधिकारों का अतिक्रमण न किया जाए और उनके हितों के साथ समझौता न किया जाए। मैं इस विद्यमान स्थिति से अधिक गंभीर किसी स्थिति की कल्पना नहीं कर सकता हूं जिसमें आधी मजदूरी का नुकसान सन्निहित है, जिसमें आदिवासी कल्याण विभाग को दृढ़ निश्चय के साथ कार्य करना चाहिए था, और यह सुनिश्चित करना चाहिए था कि लोगों के साथ केवल इस कारण से अन्याय न हो कि किसी कार्य-विधि का पालन नहीं किया गया है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि निर्धनों के विरुद्ध बहुत सी ज्यादतियां, कानून की आड़ के अधीन और नियम के नाम पर की जा रही हैं। यह एक दयनीय स्थिति है कि सरकार ने ऐसे समय में भी उसी प्रकार की युक्ति का सहारा लिया और आराम से बैठी रही जब एक वर्ष से अधिक समय तक प्रत्येक आदिवासी को उसकी देय आधी मजदूरी से वंचित किया जा रहा था।

15. प्रसंगाधीन मामले में न केवल राज्य के अलग-अलग विभाग ही आदिवासियों के हितों की रक्षा करने में असफल रहे हैं बल्कि ऐसा प्रतीत होता है कि पूरी सरकार ने अपने इस गंभीर दायित्व की ओर ध्यान नहीं दिया है। इस मामले को उपयुक्त रूप से मंत्रिमण्डल स्तर पर उठाया जाना चाहिए था और मंत्रिमण्डल को यह सुनिश्चित करना चाहिए था कि आदिवासियों के हितों की रक्षा की जाए और सरकार के किसी भी विभाग को इस संवैधानिक दायित्व की उपेक्षा करने तथा आदिवासियों के मजदूरी के लिए युक्तियुक्त और उचित दावों की अवहेलना करने की अनुमति न दी जाए।

16. आदिवासी लोगों के हितों की रक्षा करने में राज्य प्रशासन की यह असफलता, जिसका प्रत्यक्ष रूप से यह कारण रहा है कि सरकारी अधिसूचना जारी करने में कार्य-विधि संबंधी अनियमितता हुई थी, इस बात की सूचक है कि आदिवासी लोगों के हितों के संरक्षण के लिए संवैधानिक योजना की उस भावना को ही मान्यता नहीं दी गई थी। संविधान, सरकार को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह केन्द्रीय सरकार की लिखे बिना एक साधारण अधिसूचना द्वारा संसद द्वारा पारित किए गए किसी कानून को भी अनुसूचित क्षेत्र के लिए अनुपयुक्त घोषित कर दे। कार्यपालिका में ऐसा कड़ा प्राधिकार यह सुनिश्चित करने के लिए निहित किया गया है कि जब आदिवासी लोगों के हितों की रक्षा का प्रश्न हो तो, कोई औपचारिक बहाने न बनाए जाएं। ऐसे औपचारिक संवैधानिक उपबन्ध के रहते हुए कार्य-विधि में अनियमितता के किसी भी उल्लेख को थोथा ही कहा जाएगा और राज्य प्रशासन के उच्च प्राधिकार को अनावश्यक नहीं कहा जा सकता है।

17. इस मामले से केन्द्र तथा राज्यों दोनों में आदिवासी हितों की रक्षा करने के लिए किए गए प्रबंधों के अपर्याप्त होने का भी पता चलता है। संविधान की पांचवीं अनुसूची में अनुसूचित क्षेत्रों में प्रशासनिक स्थिति के पुनरावलोकन का उपबन्ध है, जिस पर राज्यपाल को भारत के राष्ट्रपति को वार्षिक रिपोर्ट देनी होती है: यह तथ्य कि वन विभाग की इस गंभीर भूल पर, जिससे आदिवासी लोगों का शोषण होता है एक वर्ष से अधिक समय तक कोई ध्यान ही नहीं दिया था, इस बात का सूचक है कि अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के पुनरावलोकन के बारे में संविधान के इस महत्वपूर्ण उपबन्ध का संचालन नेमी प्रकार से किया जाता है।

18. संविधान द्वारा संघ सरकार को यह प्राधिकार दिया गया है कि वह, जैसा आवश्यक हो, आदिवासी लोगों के हितों की रक्षा के लिए और उनके कल्याण में वृद्धि करने के लिए निदेश जारी करें। किन्तु यह एक विडम्बना की बात है कि संघ सरकार पूरे महाराष्ट्र राज्य में फैले आदिवासी लोगों के अधिकारों से संबंधित उस घोर उल्लंघन से अवगत भी नहीं है जो मजदूरी के बारे में युक्तिसंगत दृष्टिकोण अपनाने से एक विभाग द्वारा इंकार किए जाने के परिणामस्वरूप हुआ है। यहां यह उल्लेखनीय है कि कल्याण मंत्रालय और योजना

आयोग द्वारा आदिवासी विकास का वार्षिक पुनरावलोकन करने के लिए एक प्रणाली है। आदिवासी लोगों की अर्थ-व्यवस्था को उल्लेखनीय रूप से प्रभावित करने वाली इस गंभीर भूल का अविदित रहना पुनः इस बात का सूचक है कि आदिवासी स्थिति का पुनरावलोकन करने और आदिवासी विकास के लिए योजना बनाने की कार्य-विधि में कुछ आधारभूत गलती है।

निष्कर्ष

19. यह काफी स्पष्ट है कि वानिकी के लिए न्यूनतम मजदूरी की दरों से संबंधित सरकारी अधिसूचना को कार्यान्वित न किया जाना आदिवासियों के संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन करना है। अधिसूचना के जारी होने में रही कार्य-विधि संबंधी किसी त्रुटि से राज्य सरकार को उसके उस दायित्व से छुटकारा नहीं मिलता है कि वह यह देखें कि आदिवासी लोगों को अपने श्रम के लिए यथोचित मजदूरी प्राप्त हो। वानिकी कार्यों में प्रचलित मजदूरी की वर्तमान दरें, जैसा पहले चर्चा की गई है, हर दृष्टि से शोषणकारी है। चाहे उस समिति द्वारा सुझाई गई मजदूरी की दरें अन्य विभागों की मजदूरी की सामान्य दरों से अधिक हैं, सरकार को उसे दो महत्वपूर्ण विचारों की दृष्टि से स्वीकार कर लेना चाहिए था। प्रथम, वानिकी एक विशेष कार्य है और इसके लिए उच्च स्तर के कौशल की आवश्यकता होती है, जिसे दुर्भाग्य से आधुनिक प्रणाली द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं है। वनों में जाने में भी बहुत खतरे होते हैं और कार्य की परिस्थितियां काफी कठोर होती हैं। इसके अतिरिक्त, वानिकी कार्याचालन से जिनमें आदिवासी मजदूर एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, राज्य को पर्याप्त राजस्व भी प्राप्त होता है जो वन मजदूरों की मजदूरी के निर्धारण में एक महत्वपूर्ण विचारणीय बात होती चाहिए। यहां यह उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय स्तर पर यह बात एक से अधिक बार स्वीकार की जा चुकी है कि आदिवासी लोगों को वानिकी में सहभागियों के रूप में माना जाना चाहिए। महाराष्ट्र इस सिद्धान्त को बहुत समय पहले स्वीकार कर चुका था कि वन के कार्यों में राज्य द्वारा अर्जित लाभ में से वन मजदूरों को 20 प्रतिशत तक की सीमा तक हिस्सा मिलेगा। यह ज्ञात हुआ है कि इस व्यवस्था को हाल ही में समाप्त कर दिया गया है और कार्यकारी खर्च और 6 प्रतिशत लाभांश के आधार पर एक नया फार्मूला अपनाया गया है। यह उस सामान्य मतैक्य के संदर्भ में एक प्रतिगामी कदम है कि आदिवासी वानिकी में सहभागी होने चाहिएं। इस प्रकार नीति के सम्पूर्ण ढांचे के संदर्भ में यह अपेक्षा करना युक्तिसंगत है कि वानिकी में मजदूरी की न्यूनतम दरें अन्य किसी भी स्थान पर प्रचलित मजदूरी दरों से तात्विक रूप से अधिक होंगी। इसलिए 14 रुपए प्रतिदिन की मजदूरी को बहुत अधिक नहीं माना जा सकता है परन्तु इसे एक मर्यादित मजदूरी माना जा सकता है, और सभी दृष्टियों से वन मजदूर 14 रुपए की तुलना में भी तात्विक रूप से अधिक मजदूरी के अधिकारी हैं।

20. जब एक बार यह स्थापित हो जाता है कि एक युक्ति-संगत मजदूरी जिसके लिए वन मजदूर हकदार है, 14 रुपए प्रतिदिन से अधिक होनी चाहिए, यह तथ्य कि उनसे उतनी मजदूरी पर कार्य करने की अपेक्षा की जाती है जो इससे लगभग आधी होती है। स्पष्ट रूप से यह सिद्ध करता है कि आदिवासी लोगों को उनकी देय हकदारी से इंकार किया जा रहा है, और इस सीमा तक यह एक शोषण का कृत्य बन जाता है। इसलिए अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की देय मजदूरी से इंकार करना और उसके परिणामस्वरूप होने वाले शोषण से उन संवैधानिक उपबन्धों का उल्लंघन होता है, जो अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की सभी प्रकार के शोषणों से रक्षा करने का राज्य का दायित्व निर्धारित करते हैं। यदि सरकार का एक विभाग स्वयं ही इस प्रकार से इंकार करने में सहायक हो तो, स्थिति और भी अधिक असुरक्षित हो जाती है। विधिवत रूप से अधिसूचित न्यूनतम मजदूरी को कार्यान्वित न करने की बाबत यह तर्क मान्य नहीं है कि यह कार्य विधि संबंधी भूलों के कारण नहीं हुआ है, विशिष्ट रूप से उस समय जब राज्य उससे संबंधित सभी कार्यों तथा आदिवासी लोगों को संरक्षण प्रदान करने के लिए स्वयं जिम्मेदार है। इसलिए राज्य सरकार तत्काल संशोधन करने के लिए और उस प्रतिकूल स्थिति को समाप्त करने के लिए बाध्य है जिसमें एक विडम्बना के रूप में राज्य ने न केवल अपने संवैधानिक दायित्व का ही निर्वहन नहीं किया है बल्कि अपने विभागों के भ्रष्टाचार के कार्यों के कारण उल्लंघनों के लिए जिम्मेदार भी है। यथा अधिसूचित न्यूनतम मजदूरी की दरें वानिकी के सभी कार्य चालनों में तत्क्षण लागू की जानी चाहिए और इसे उस अधि-सूचना की तारीख अर्थात 15 मई, 1986 से पूर्व प्रभावी किया जाना चाहिए। इस अवधि के दौरान जिन मजदूरों ने काम किया है, उन्हें उस कार्य के वर्गीकरण के अनुसार जिसमें वे लगाए गए हैं, 14 रुपए प्रतिदिन या उससे अधिक पुनरीक्षित मजदूरी दी जानी चाहिए।

ह०

21 जुलाई, 1987। बी० डी० शर्मा, आयुक्त

अनुसूचित जातियां तथा अनुसूचित जनजातियां

अनुलग्नक 6

दक्षिण गुजरात में गन्ने की फसल कटाई के लिए सरकारी गन्ना उद्योगों द्वारा नियुक्त किए जाने वाले मजदूरों के कार्य की परिस्थितियां और उनकी व्यवस्था पर एक नोट

मैंने गन्ने की फसल की कटाई के लिए सहकारी गन्ना उद्योगों में कार्य की परिस्थितियों और उनमें लगे मजदूरों के संगठनों का स्थान पर जाकर एक अध्ययन करने के लिए 11 और 13 अप्रैल 1987 के बीच दक्षिण गुजरात का दौरा किया था। मैंने बाजीपुरा और बंकानेर के दो कैम्प और बारदौली तथा चालथान में दो चीनी मिलें देखी थीं। मैं इस क्षेत्र में नौ सहकारी चीनी मिलों के अध्यक्षों और प्रबन्ध निदेशकों से मिला था। मैंने गांधीनगर में 15–4–87 को राज्य सरकार के अधिकारियों और गुजरात के मुख्यमंत्री के साथ एक बैठक करके अपने विचार-विमर्श का समाहार किया था।

गन्ने के उत्पादन की पृष्ठभूमि

2. उकाई सिंचाई योजना के नियंत्रण के अधीन क्षेत्र का आर्थिक बदलाव लगभग बीस वर्ष पूर्व इस परियोजना के शुरू होने के बाद होना आरम्भ हुआ था। दक्षिण गुजरात क्षेत्र का एक विशेष सामाजिक आर्थिक ढांचा है जिसमें मुख्य रूप से बड़े भूस्वामी और खेतिहर मजदूर हैं। हलपति समुदाय जो निर्बलतम आदिवासी समुदायों में से एक है, इस क्षेत्र में रह रहा है और उसके पास अपनी कोई भूमि नहीं है और रहने के लिए अपना कोई स्थान भी नहीं है। वे परम्परागत रूप से भूस्वामियों के परिवारों के साथ संबद्ध रहे हैं और पीढ़ियों से उनके पास काम किया है। राज्य द्वारा बंधुआ मजदूरी उन्मूलन के लिए उठाए गए प्रगतिशील कदमों और भूमि-हीन मजदूरों के लिए बनाए गए सामान्य कार्यक्रमों के बाद उनके उक्त संबंध में कुछ बदलाव हुआ है। अब बहुत से क्षेत्रों में हलपतियों के पास अपने निजी रिहायशी भूखंड हैं और उन्होंने खुद या विभिन्न योजनाओं के अधीन राज्य की सहायता से अपने घरों का निर्माण भी कर लिया है। हलपतियों में से अधिकांश लोगों ने ऋण लिया हुआ है जिसे वे विशिष्ट रूप से उस समय लेते हैं जब उन्हें शादी और अन्य सामाजिक प्रयोजनों के लिए पैसे की आवश्यकता होती है। विवाह का अर्थ दास्ता का वारंट होता है जिसमें दंपति को वर्षों तक कम मजदूरी पर भूस्वामी के पास काम करना पड़ता है और उसके पास उसे छोड़ने का कोई विकल्प नहीं होता है। ग्रामीण क्षेत्र में वर्तमान मजदूरी विशेष रूप से हलपतियों के लिए 6 रुपए प्रति-दिन है। परिवार में पुरुष को जिसे एक समय का भोजन दिया जाता है, केवल 5 रुपए दिए जाते हैं। मैं वालोद गांव के निकट हलपतियों से मिला था उन्होंने बताया कि उन्हें अपनी इस स्थिति से समझौता करना पड़ा, क्योंकि उनमें से एक को जिसने मजदूरी केवल 5.50 रुपए तक बढ़ाने की आवाज उठाई थी, तीन वर्ष तक श्रमिक के रूप में नियुक्त न करने का दण्ड दिया गया था। एक महिला की मासिक मजदूरी जो भूस्वामी के घरों में खाना पकाने के सिवाय सब कार्य करती है केवल 12 रुपए है तथा इसके साथ प्रतिदिन एक समय का भोजन मिलता है। वह प्रातः बहुत सवेरे जाती है तथा दोपहर 2 बजे के लगभग वापस लौटती है। जो लोग मवेशियों की देखभाल में लगाए जाते हैं उनकी वार्षिक मजदूरी 300 रुपए से 800 रुपए के बीच होती है। हलपतियों पर भूस्वामियों की पूरी पकड़ है और हलपति लोग ग्रामीण अर्थव्यवस्था में निम्न स्तर पर हैं और एकाकी तथा असहाय स्थिति में हैं। विकास संबंधी कार्यक्रमों के द्वारा जो परिवर्तन हुए हैं उनका उनके लिए कोई अर्थ ही नहीं है। वास्तव में उनका विकास गंभीर रूप से पिछड़ा हुआ है।

3. यह एक विडम्बना की बात है कि इस क्षेत्र में बहने वाली सिंचाई की नहरों से जहां एक ओर भूस्वामी सम्पन्न हो रहे हैं वहीं दूसरी ओर हलपतियों की दशा निकृष्ट हो गई है। इन नहरों के नियंत्रण में पड़ने वाले एक बड़े क्षेत्र में गन्ने की फसल उगाई जाती है। तीन वर्ष की अवधि वाले चक्र में गन्ने के एक खेत में कुल मजदूरी लागत, सिंचाई आरम्भ होने से पूर्व परम्परागत खेती की मजदूरी लागत से भी कम प्रतीत होती है। इस स्थिति से कृषकों का हित हुआ है और खेतिहर मजदूरों की स्थिति खराब हो गई है क्योंकि उनकी मजदूरी के लिए नियुक्ति की कुल अवधि कम हो गई है। इसका संभव कारण यह हो सकता है कि हलपतियों को गन्ने की कटाई और लदान के लिए मजदूरी पर लगाए जाने से इंकार किया गया है जिसकी मजदूरी लागत गन्ने की खेती की मजदूरी लागत का एक बड़ा भाग होती है। यह एक विडम्बना की बात है कि हलपति लोग स्वयं यह कहते हैं कि यह कार्य उनकी क्षमता से बाहर है। इस बारे में किसी को भी मालूम नहीं है कि यह एक सच्ची बात है या एक कपोल कल्पना है। परन्तु इसमें एक बात स्पष्ट है कि "पूर्वी बीहड़" भाग से आने वाले "झुंड" शारीरिक दृष्टि से हट्टे-कट्टे होते हैं जबकि हलपतियों में अधिकांश लोग दुबले होते हैं। हम इस विषय में विचार-विमर्श बाद में करेंगे।

4. इस क्षेत्र में उकाई सिंचाई परियोजना से सिंचाई के लाभ उपलब्ध होने के बाद गन्ने की खेती का विस्तार बहुत तेज गति से हुआ था। गन्ने की कटाई और लदान से भिन्न खेती संबंधी कार्य चालन गन्ने की खेती के कार्य सहित हलपतियों द्वारा किए जाते थे। इस प्रकार उन्हें खेतों को तैयार करने, गन्ने की फसल बोने और निराई के कार्यों में लगाया जाता था। परन्तु गन्ने की कटाई और लदान के काम में हलपतियों को भी लगाने के लिए प्रयास किए गए थे जो असफल सिद्ध हुए।

सहकारी गन्ना उद्योगों की स्थापना

5. दक्षिण गुजरात के प्रगतिशील किसानों ने महाराष्ट्र में सहकारी आधार पर गन्ना उत्पादन के संगठन के अनुभव का लाभ उठाया था। वास्तव में सहकारी चीनी मिलें बहुत आरम्भ में ही स्थापित की गई थीं और यह गन्ने के उत्पादन क्षेत्र का विस्तार करने

में सहायक बन गई थीं। जहां गन्ने के उत्पादन से संबद्ध खेती के अन्य सभी कार्य व्यक्ति की पहल पर छोड़े जा सकते थे, वहीं गन्ने की फसल की कटाई और लदान को गन्ने की पूरी आर्थिक प्रणाली में अधिक उत्पादकता और दक्षता की प्राप्ति के लिए सुव्यवस्थित करना होता था। गन्ने की कटाई और लदान इतने नियमित रूप से करने होते हैं कि उद्योग को गन्ने की आपूर्ति प्रतिदिन ही नहीं बल्कि प्रत्येक दिन के प्रत्येक भाग में स्थायी रूप से होती रहे क्योंकि आपूर्ति में कुछ थोड़े से घंटों का अन्तर होने से भी चीनी की निकासी कम हो सकती है। इसके परिणामस्वरूप कटाई और लदान की एक बहुत पक्की सारणी उद्योग की कार्यकारी सारणी के अनुसार अग्रिम रूप से तैयार की जाती है जिसका परिश्रम के साथ पालन किया जाता है। कटे हुए तैयार गन्ने की मिल तक ढुलाई और कटाई तथा दूसरी ओर मिल की मांग के अनुसार ताल-मेल के साथ की जाती है। इससे यह स्पष्ट है कि इस इतने बड़े समयबद्ध कार्य-चालन को, जिसमें हजारों कृषक शामिल होते हैं, इस बात पर नहीं छोड़ा जा सकता है कि इस सारी कार्य-चालन व्यवस्था का संचालन सांख्यिकीय आंकड़ों के अनुसार स्वयंमेव हो जाएगा। इस संबंध में देश के अन्य भागों की चीनी मिलों का अनुभव भी इस दिशा में उनका मार्ग दर्शन कराता है। किसानों को अपना गन्ना लिए हुए मिलों में अपनी बारी के लिए कई दिनों तक प्रतीक्षा करनी होती है जिसमें केवल किसान का समय और शक्ति ही नष्ट नहीं होते हैं परन्तु गन्ने की कटाई और उसकी पिराई के बीच समय जितना बढ़ता है उससे निकासी की मात्रा भी घटती है और इससे उत्पादन में कमी आती है।

गन्ने की कटाई और लदान के लिए किराया मजदूरों का गठन

6. सहकारी चीनी मिलों की स्थापना से किसानों को एक संगठनात्मक आधार मिल गया था। इन सहकारी समितियों द्वारा गन्ने की खेती के लिए किसानों का मार्ग दर्शन कराया गया था और गन्ने के कार्य-चालन की एक समय-सारणी भी उन्हें दी गई थी ताकि गन्ने की बुआई भी उपयुक्त रूप से उसी तालमेल से की जाए जिससे प्रत्येक व्यक्ति के खेत में गन्ने की अधिक से अधिक उपज हो सके और उसकी कटाई ढुलाई भी उसी तालमेल के अनुसार की जा सके। तथापि गन्ने जैसी खेती में उसकी कटाई से पूर्व के कार्यों में उस पक्की कार्य सारणी की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि इस फसल में, जो तीन वर्ष की अवधि के चक्र वाली होती है, काफी विकल्प संभव होता है। इसलिए गन्ना उद्योगों ने चीनी मिलों में उच्च कार्यकुशलता प्राप्त करने के उद्देश्य से गन्ने की कटाई और लदान को सुव्यवस्थित करने क्त कार्य आरंभ किया। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यदि अनन्य रूप से इस कार्य के लिए मजदूरों को संगठित किया जा सके तो कटाई और लदान की पक्की समय सारणी का सर्वोत्तम रूप से पालन किया जा सकता है। इस संबंध में स्थानीय मजदूरों के सामने हमेशा दो बाधाएं होती हैं। वह यह है कि वे वहां पर अपने घरों में रहते हैं और उन्हें एक कैम्प के आधार पर मजदूर बल के रूप में अनुशासन में नहीं रखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त मजदूर अपनी सामाजिक संरचना के कारण अनियमित भी हो सकते हैं। क्योंकि उनके ऊपर अपने परिवार और समाज के कुछ दायित्व हो सकते हैं जिन्हें क्षेत्र के कार्य के मुकाबले प्राथमिकता दी जा सकती है। इसलिए सहकारी चीनी मिलों ने यह निर्णय किया कि गन्ने की फसल की कटाई और लदान खानदेश क्षेत्र में बसने वाले बाहर के मजदूरों के माध्यम से व्यवस्थित की जाए। ये मजदूर हट्टे-कट्टे आदिवासी होते हैं जिनका संसाधन आधार बड़ा दुर्बल होता है और जिनमें नए आर्थिक अवसरों के लिए बाहर जाने की लगन होती है। इस प्रकार इस मजदूर बल में पंच महल और डंग्स जिलों और पड़ौसी मध्य प्रदेश राज्य सहित पूरे आदिवासी क्षेत्र के मजदूर शामिल होते हैं।

7. ऐसा प्रतीत होता है कि गन्ना सहकारी उद्योग के इस निर्णय में, कि स्थानीय मजदूरों, विशिष्ट रूप से हलपतियों के बजाय बाहर के मजदूरों को उक्त काम में लगाया जाए, एक गहरा भेद था। इस सहकारी उद्योग के लिए गन्ने की कटाई और लदान का कार्य इसके अपने स्वरूप के अनुसार ही क्रमबद्ध रूप से सुव्यवस्थित किया जाना था। यदि इस कार्य में स्थानीय मजदूरों को लगाया जाता तो इससे उन्हें भी अपने स्वामियों की तरह एक संगठन बनाने का अवसर मिल सकता था। स्वामी, वे भूस्वामी थे जो स्वयं गन्ना उद्योग में व्यवस्थित हो गए थे। ये लोग गन्ने की कटाई और लदान के बाद अपने प्रवासी साथियों की तरह अलग नहीं हो सकते थे। यह भी संभव था कि उनमें से कुछ अपनी मजदूरी के बारे में कुछ मूलभूत प्रश्न उठा सकते थे और ऐसे प्रश्न पूरे गन्ना कार्य संचालन के बारे में भी उठाए जा सकते थे क्योंकि वे अर्थ-व्यवस्थाओं, कार्य संचालनों और चीनी सहकारी उद्योग के सिद्धान्तों के दीर्घकाल तक सहचर्य में रहने के कारण उस बात को समझ चुके थे। इस प्रकार भूस्वामी गन्ने की कटाई और लदान की किसी ऐसी ऐसी सुव्यवस्थित गति-विधि से स्थानीय मजदूरों को लगाने का जोखिम नहीं उठा सकते थे जिसमें उन्हें इस प्रकार संगठित होने और उस क्षेत्र में एक नया बल उत्पन्न करने का अवसर मिल सकता जो उन संगठित किसानों से भिन्न होता जिसे किसी प्रकार की चुनौती दिया जाना कठिन होती। इसका सर्वोत्तम विकल्प यही था कि उन्हें इस गतिविधि से दूर रखा जाए तथा प्रवासी मजदूरों पर निर्भर किया जाए। यहां यह उल्लेख किया जाना उपयोगी होगा कि उद्योग का प्रबंध मण्डल इस बात की निगरानी रखता है कि फसल की कटाई के पश्चात् प्रत्येक प्रवासी मजदूर उस स्थान से चला जाये। इस प्रकार हलपतियों की सामाजिक प्रणाली के बारे में सामान्य धारणा तथा हलपतियों की अपनी धारणा भी स्पष्ट हो गई है। हलपति यह विश्वास करते हैं कि गन्ने की कटाई तथा लदान एक श्रमसाध्य काम है। हम इस पर बाद में चर्चा करेंगे कि गन्ने की कटाई और लदान को जान-बूझकर श्रमसाध्य बनाया गया है ताकि इससे स्थानीय समूह वर्जित हो जाये। हलपति शराब पीने के आदी हैं तथा वे रात के समय बुलाए जाने की संभावना से भयभीत होते हैं। कटे हुए गन्ने की ढुलाई सामान्य रूप से रात के समय की जाती है जिसके लदान का कार्य कैम्प में रह रहे प्रवासी मजदूरों द्वारा ही सम्भव हो पाता है लेकिन यदि ये मजदूर गांवों में अपने घरों में रहें तो इस काम की व्यवस्था करना असंभव होगा। यह कार्य प्रणाली हलपतियों के लिए उन्हें गन्ने की कटाई और उसके लदान के मजदूर दल से शामिल करने के लिए भी सर्वाधिक अप्रोत्साहन-कारी सिद्ध हुई है। इसलिए गन्ने की कटाई और लदान में लगे

बाहर के मजदूर ही दो दशक से अधिक तक इसमें एक अनन्य समूह के रूप में रहे हैं। इसी प्रकार कृषि संबंधी अन्य कार्यों में लगे मजदूर उस जीवन स्थिति से आगे नहीं बढ़े हैं और अपने कार्य क्षेत्र में अनन्य रूप से बने रहे हैं। इससे यह प्रकट होता है कि इस कार्य का संचालन करने वाले कितने चालाक ही सकते हैं क्योंकि पूर्ण रूप से अनुशासित किसी प्रणाली के अधीन भी पारस्परिक अनन्यता की ऐसी प्रणाली की कल्पना करना कठिन है।

गन्ने की कटाई और उसका लदान करने वालों मजदूरों की भर्ती की प्रणाली

8. गन्ना उद्योगों द्वारा मजदूरों की भर्ती के लिए एक सु-स्थापित प्रणाली प्रचलित है। औपचारिक रूप सें गन्ने की कटाई और लदान की व्यवस्था किसान सदस्यों की मार्फत उद्योगों द्वारा की जाती है। इस उद्योग के एजेंट भर्ती के क्षेत्रों में जैसे खानदेश में प्रतिवर्ष मई या जून के लगभग जाते हैं। वे मुकादमों या मुखिया लोगों से सम्पर्क करते हैं और उनसे यह पूछते हैं कि वे गुजरात में कितने व्यक्तियों को ला सकेंगे। यह आवश्यक नहीं है कि वे ठेकेदार अब कोई नए होंगे क्योंकि यह संबंध अब काफी पुराना हो चुका है और एजेंट बहुत से मुकादमों से परिचित हैं। इन भर्ती एजेंटों में बहुत गहरी प्रतियोगिता होती है क्योंकि प्रत्येक उद्योग उस दिन से मजदूरों की एक सुनिश्चित संख्या चाहता है जिस दिन से पिराई का कार्य आरम्भ होता है। एजेंट मुकादम के साथ एक करार करता है और उसे एक अग्रिम धन-राशि देता है जो मजदूरों की उस संख्या के आधार पर कम-बढ़ती होती है जिसे वह लाने के लिए वायदा करता है। प्रत्येक एजेंट उद्योग द्वारा वांछित मजदूरों की विहित संख्या से लगभग 25 प्रतिशत अधिक मजदूरों के लिए ठेका करता है ताकि उसके पास उस स्थिति के लिए गुंजाइश रहे जब कोई मुकादम उतने मजदूर नहीं ला सकता है जितने का उसने वायदा किया था।

9. आरंभिक करार के बाद एजेंट अक्तूबर में उन लोगों को उद्योग के स्थान तक लाने के लिए उन्हें उनके गांवों से एकत्र करना आरंभ करते हैं। इनके परिवहन का खर्चा पूर्ण रूप से सहकारी उद्योग वहन करता है। मजदूर एक निश्चित स्थान पर एकत्र किए जाते हैं जहां से एजेंट उन्हें प्राप्त कर सकते हैं। और उन्हें बस या रेलगाड़ी से ले जा सकते हैं। प्रत्येक मजदूर को 40 रुपए की अग्रिम धन राशि दी जाती है। इन मजदूरों को उद्योग क्षेत्र में कैम्प के स्थान पर आते ही अग्रिम रूप से 15 दिन के लिए अनाज दिया जाता है और अन्य खर्चों के लिए प्रति व्यक्ति 15/- रुपए दिए जाते हैं। चूंकि उन्हें एक विस्तृत क्षेत्र से एकत्र किया जाता है अतः उद्योग के क्षेत्र में उनका आगमन एक उस विशिष्ट दिन के लिए नियंत्रित किया जाना संभव नहीं है जो उद्योग द्वारा कार्य करना आरंभ करने की तारीख से मेल खाता हो। ऐसी स्थिति में यह संभव है कि कुछ दल निश्चित स्थान पर समय से 10 से 20 दिन तक पहले पहुंच जाएं और दूसरे दल केवल समय आरम्भ होने पर ही पहुंचें। इस प्रकार इसमें मजदूरों के अवरुद्ध रहने की एक अवधि सन्निहित होती है जिसमें उन्हें गन्ने की कटाई का काम नहीं दिया जा सकता है और वे उस अवधि में अपनी मर्जी का काम कर सकते हैं लेकिन वे एजेंटों की सामान्य अनुमति से ही ऐसा काम कर सकते हैं। यह ज्ञात हुआ है कि इस अवधि में गन्ना उगाने वाले किसान उनसे धान की फसल कटवाते हैं जिसके लिए उन्हें नाम मात्र की मजदूरी दी जाती है।

कार्य करने की प्रणाली

10. गन्ने की कटाई की व्यवस्था का एक विशेष लक्षण और है। अनुभव यह बताता है कि इसमें सर्वोत्तम परिणाम तभी प्राप्त किया जा सकता है जब एक व्यक्ति गन्ना काटने का काम करे और दूसरा उसे साफ करने और उसकी पूलियां बनाने का काम करे। गन्ना काटने के उपकरण का स्थानीय नाम कोयता है। एक व्यक्ति कोयता से गन्ने काटता जाता है और दूसरा उसे उठा कर साफ करता जाता है और पूलियां बनाता जाता है। सामान्य रूप से कटाई-सफाई का यह कार्य पुरुष दारा किया जाता है तथापि उसकी पत्नी उस दल के द्वितीय व्यक्ति के रूप में उसकी सहायता करती है। गन्ने की कटाई-सफाई करने वाले कोयता वाले कहलाते थे। अब कोयता ने एक तकनीकी अर्थ भी ग्रहण कर लिया है अर्थात मजदूर दल की एक ऐसी इकाई जो एक कोयता के साथ काम करती हैं। इस इकाई में साधारण तौर पर दो व्यक्ति पति और पत्नी दंपति होते हैं। तथापि, इस इकाई में और व्यक्ति जैसे एक दंपत्ति और एक बच्चा जो प्रवास के दौरान अपने माता-पिता के साथ जाता है शामिल हो सकते हैं। कुछ कोयता इकाइयों में केवल दो पुरुष सदस्य जैसे पिता और पुत्र या दो महिला सदस्य भी जैसे मां और बेटी शामिल हो सकते हैं। जिस परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक होती है वे एक से अधिक कोयता इकाई बना सकते हैं। गन्ने की कटाई और सफाई के लिए कोयता इकाई एक आधारभूत इकाई है जिसका महत्व इस नोट में बाद में स्पष्ट हो जाएगा जब हम इस कार्य की व्यवस्था कर विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे। जहां तक प्रबंध मंडल का संबंध है एक कोयता में दो वयस्क व्यक्ति शामिल माने जाते हैं और यदि उसमें कोई दूसरा सदस्य होता है जैसे एक लड़का या/और एक लड़की तो प्रबंध मंडल द्वारा किसी भी प्रयोजन के लिए उसकी उपस्थिति पर विचार नहीं किया जाता है।

11. इन कोयता वालों के सिवाय एक दूसरे प्रकार के मजदूर भी हैं जो गन्ना उद्योग में बाहर से आते हैं। वे छोटे भू-स्वामी होते हैं जिनके पास बैलगाड़ियां होती हैं। वे गाड़ी वाले कहलाते हैं। गाड़ी वाले की प्रत्येक इकाई में कम से कम एक कोयता इकाई और एक बैलगाड़ी होती है। इसमें एक कोयता का काम गन्ना काटना, उसकी पूलियां बनाना और उसे ट्रक में लादना होता है। गाड़ी वालों का काम गन्ने की कटाई करना, उसकी पूलियां बनाना और उसे अपनी बैलगाड़ियों में मिल तक पहुंचाना होता है। गाड़ी वालों को एक निश्चित दर से उनके द्वारा तय की गई दूरी के आधार पर परिवहन खर्चा दिया जाता है।

मजदूरी का ढांचा

12. गन्ना उद्योग मजदूरों की मजदूरी निर्धारित करने के लिए खंड मजदूरी प्रणाली का अनुसरण करते हैं। इसके लिए वर्तमान मजदूरी दर 22 रुपए प्रति मीट्रिक टन गन्ना है। जैसे

पहले उल्लेख किया गया है इसमें गन्ने की कटाई, सफाई और उसका ट्रकों में लदान भी शामिल है। गाड़ीवालों के लिए ढुलाई की इस मजदूरी दर में प्रतिटन की मील-दूरी प्रभार शामिल है। चूंकि गन्ने की कटाई सफाई उसकी पूलियां बनाने और उन्हें एक ट्रक में लादने के काम एक संयुक्त कार्य है जिसमें कम से कम दो व्यक्ति अन्तर्ग्रस्त होते हैं। अत: वास्तविक रूप से गन्ने की कटाई और लदान में खंड मजदूरी प्रति व्यक्ति के बजाय कोयता इकाई से संबंधित हैं। प्रबंध मंडल के अनुसार इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए कि गुजरात में न्यूनतम मजदूरी 11 रुपए प्रतिदिन है, यह मजदूरी 22 रुपए निश्चित की गई है। यह आशा की जाती है कि एक कोयता इकाई जिसमें दो व्यक्ति शामिल होते हैं प्रतिदिन एक मीट्रिक टन गन्ना तैयार कर सकती है। इस प्रकार दो व्यक्तियों की एक इकाई की औसत आय 22 रुपए आती है जिसमें उन्हें प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 11 रुपए की मजदूरी मिलती है जो न्यूनतम मजदूरी के बराबर ही है।

गन्ने की कटाई और लदान के कार्य की व्यवस्था

13. इस अवस्था में यह उल्लेख करना आवश्यक होगा कि गन्ने की कटाई और लदान को व्यवस्था कैसे की जाती है। सभी कोयता इकाईयां जो काम करने आती हैं एक बड़े दल की होती है जो एक मुकादम के नेतृत्व में काम करती है। किसी मुकादम का दल एक समान आकार का नहीं होता है और उनमें बहुत अन्तर होता है क्योंकि दल का आकार मजदूरों की संख्या पर निर्भर करता है जिसे कोई मुकादम संचालित करने और लाने में समर्थ होता है। यह दल इतना छोटा हो सकता है कि उसमें 8 कोयता इकाइयां या 16 मजदूर हों अथवा इतना बड़ा हो सकता है कि उसमें 80 कोयता इकाइयां या 160 मजदूर हों। क्षेत्र में कार्य एक मुकादम के दल को सौंपा जाता है। जो उनके बाद उस काम को एक साथ रहकर पूरा करते हैं। एक मुकादम के कोयता सदस्यों में काम अनौपचारिक रूप से बांटा जाता है। सभी कोयता इकाईयां प्रात: काल से एक ही आधार पर काम करना आरम्भ करती है। प्रत्येक कोयता इकाई को खेत की एक समान चौड़ी पट्टी आवंटित की जाती है और उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह दिन की समाप्ति तक दूसरे छोर पर उसी स्थान तक पहुंच जाएगी। यदि खेत छोटा होता है तो यह दल पहले खेत में काम पूरा करने के बाद दूसरे खेत में चला जाता है। इस दल द्वारा तैयार किया गया गन्ना ट्रकों में लादा जाता है जिसे मिल में ले जाया जाता है। गन्ने को तौल मिल में की जाती है और वह उस मुकादम दल के लेखे में दर्ज कर दी जाती है। इस प्रकार 15 दिन की अवधि के दौरान किए गए कार्य का योग किया जाता है और उसे मुकादम द्वारा रखे गए एक कार्ड में उपदर्शित किया जाता है। इस प्रकार जहां तक मिल का संबंध है, कार्य की इकाई मुकादम दल है। उनके कुल काम की नाप-तौल दिन प्रतिदिन की जाती है और उक्त पूरा दल किए गए काम के अनुसार भुगतान के लिए हकदार होता है। प्रत्येक कोयता इकाई के लिए काम का कोई लेखा नहीं रखा जाता। इसलिए इस दल की कमाई संबंधित मुकादम दल की सभी कोयता इकाइयों को बराबर-बराबर बांटी जाती हैं।

14. यद्यपि किए गए काम का लेखा और प्रतिदिन की दर के अनुसार भुगतान के लिए पात्रता पखवाड़े के आधार पर तैयार की जाती हैं तथापि भुगतान वास्तव में प्रत्येक पखवाड़े आधार पर नहीं किया जाता है। गन्ना मिलों ने मजदूरी के भुगतान की एक विशेष कार्य विधि विकसित की है। मिलों द्वारा एक मुकादम के दल के अनुसार लेखे रखे जाते हैं। प्रत्येक दल के लेखे में उक्त सत्र के आरम्भ से किए गए कुल कार्य का संचित योग दिखाया जाता है और उसके लिए खंड मजदूरी के अनुसार भुगतान की पात्रता भी दिखाई जाती है। तथापि, भुगतान किए गए कार्यों के अनुसार प्रति पखवाड़े पर नहीं किया जाता है। मिलें मुकादमों को प्रति पखवाड़े प्रति कोयता इकाई के आधार पर 30 किलो ज्वार और 30 रुपए अग्रिम रूप से देती हैं। इस प्रकार मिल द्वारा प्रति व्यक्ति प्रति दिन एक किलो ज्वार और एक रुपया अग्रिम दिया जाता है। यह अग्रिम पूरे सत्र में प्रति पखवाड़े दिए जाते हैं अर्थात् अक्तूबर से अप्रैल/मई तक। सत्र के अन्त में लेखे मिल द्वारा प्रत्येक मुकादम के लिए और मुकादम द्वारा प्रत्येक कोयता इकाई के लिए अन्तिम रूप से तय किए जाते हैं। पूरे सत्र में मिल द्वारा मुकादम दल को दिए गए कुल अग्रिम को उस कुल राशि में से घटाया जाता है जो किए गए कार्य के आधार पर उक्त दल को भुगतान की जानी होती है। क्योंकि किए गए कार्य का लेखा कोयता इकाई के अनुसार नहीं रखा जाता है। अत: किए गए काम के लिए उक्त मुकादम को जो कुल रकम मिलती है वह उस मुकादम दल की सभी कोयता इकाइयों में बराबर बराबर बांटी जाती है। पिछले वर्ष जब मैंने कैम्प के मजदूरों से व्यक्तिगत रूप से पूछताछ की थी तो मुझे पता चला था कि उस सत्र केसमाप्त होने पर पखवाड़े के आधार पर दिए गए नकद और वस्तु के रूप में अग्रिम को घटाने के बाद प्रति कोयता इकाई कुल भुगतान 800 रुपए और 1200 रुपए के बीच था।

15. इस अवस्था में यह उपयोगी होगा कि सत्र के आरम्भ से अन्त तक के कार्य की व्यवस्था के बारे में कुछ विचार निर्धारित किया जाए। जैसा पहले बताया गया है किसी विशिष्ट उद्योग के लिए वांछित मजदूरों के आगमन पर मजदूरों को उक्त उद्योग के सीमा क्षेत्र के अन्दर एक केन्द्रीय स्थान पर लाया जाता है प्रत्येक उद्योग का सीमा क्षेत्र काफी बड़ा होता है और उसके केन्द्रीय स्थान से पूरे सीमा क्षेत्र में गन्ने की कटाई और लदान की व्यवस्था करना संभव नहीं है। अत: मजदूर बल को उद्योग द्वारा अन्तिम रूप से तैयार की गई कार्य अनुसूची के अनुसार पुन: वितरित किया जाता है। एक स्थान पर कटाई का काम पूरा होने पर दूसरे स्थान पर काम किए जाने पर मजदूरों के कैम्प एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले जाते हैं। एक औसत के अनुसार यह पाया गया था कि वे एक स्थान पर तीन से चार सप्ताह तक ठहरते हैं और इस प्रकार प्रत्येक मजदूर से यह अपेक्षा की जाती है कि वह सात आठ महीने में कार्य सत्र के दौरान चार पांच बार अपने कैम्प बदले।

मजदूरों के लिए अन्य सुविधाएं

16. उद्योग द्वारा प्रत्येक कोयता इकाई की एक छोटी झोंपड़ी बनाने के लिए सामग्री प्रदान की जाती है जिसमें उसे

छः सात महीने तक शरण मिलती है । इस सामग्री में बांस और चटाई के तीन तीन नग होते हैं । बांसों से ढांचा बनाया जाता है और उसे चटाइयों से छाप लिया जाता है । एक चटाई पिछली तरफ लगाई जाती है और अन्य दो चटाइयों को बीच के बांस के दोनों तरफ लगाकर ढलान बनाया जाता है । झोंपड़ी के सामने वाला आधा भाग खुला होता है और कुछ मामलों में पूरा भाग खुला होता है । इन झौंपड़ियों का औसत आकार लगभग 4'×6' का होता है और बीच में इसकी ऊंचाई 3'×4' की होती है । जब कैम्प एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता है तो यह झौंपड़ियां उखाड़ ली जाती हैं और नए स्थान पर पुनः बना ली जाती हैं । एक कोयता इकाई को जिसमें एक दंपति और एक या दो बच्चे शामिल होते हैं इसी छोटी झौंपड़ी में गुजारा करना होता है ।

17. कोयता इकाई के पुरुष सदस्य काम करने के लिए प्रातः-काल शीघ्र काम करने के लिए बाहर चले जाते हैं और महिला सदस्य परिवार के लिए भोजन तैयार करने के बाद जाती हैं । चूंकि उनकी नियुक्ति दैनिक मजदूरी पर नहीं होती है इसलिए काम के लिए कोई निश्चित घंटे नहीं रखे गए हैं । वे मध्यान्ह भोजन के लिए लगभग आधा घंटा लगाते हैं जो काम का अधिक दबाव होने की दशा में केवल 15 मिनट का भी हो सकता है और वे खेत में निरन्तर तब तक काम करते हैं जब तक उस दिन के लिए लिया गया काम पूरा होता है । वे शाम को वापस लौटते हैं और जल्दी सो जाते हैं । गन्ने की ढुलाई रात के दौरान की जाती है । इस प्रयोजन के लिए काम का स्थान कैम्प से तीन चार किलोमीटर दूर होता है । इस प्रकार कटाई और लदान का काम दिन रात जारी रहता है । जब सत्र समाप्त होता है तब अन्तिम रूप से हिसाब तय किया जाता है । कैम्प उखाड़ दिए जाते हैं और प्रवासी मजदूर खानदेश में और अन्य स्थानों पर अपने घरों को वापस लौटने आरम्भ हो जाते हैं । सत्र अप्रैल के दिनों में समाप्त होता है । परन्तु किसी वर्ष विशेष में फसल अधिक होने से यह मई तक बढ़ाया जा सकता है ।

कैम्प का जीवन

18. गन्ने की कटाई और लदान में लगे मजदूरों की स्थिति का पूर्ण रूप से आंकलन तब तक नहीं किया जा सकता है जब तक उनके कैम्पों का दौरा न किया जाए और खेत में उनके काम करने की परिस्थितियों को न देखा जाए । मैंने सड़क के किनारे पर दो कैम्पों को देखा था । झौंपड़ियां बेतरतीब-वार पड़ाव के रूप में ...ीत होती थीं । परन्तु जहां तक चार या पांच कोयता इकाइयों का संबंध है जो एक छोटे दलों में होते हैं उनमें एक तरतीब है क्योंकि झौंपड़ियों की व्यवस्था इस प्रकार की जाती है जिसमें एक संयुक्त चार-दीवारी बन जाए । झौंपड़ियों चटाइयों में से हवा अन्दर जाती है और उसी प्रकार सूर्य और चन्द्रमा की किरणें भी अन्दर आती हैं । उनमें नीचे का फर्श-ऊंचा नीचा होता है तथापि, इसका उन लोगों के लिए कोई मतलब नहीं होता है जो कड़ाके की सर्दी और कड़ी धूप में दिनभर कठिन मेहनत करने के बाद आते हैं । इन कैम्पों में उस समय से ही काम-काज शुरू हो जाता है जिस समय तारे चमक रहे होते हैं । ऐसा इसलिए होता है कि उन्हें प्रातःकाल शीघ्र एजेन्टों के आने से पहले अपने सवेरे के काम-काज, काफी अंधेरा रहते पूरे करने पड़ते हैं । और दिन भर के कार्य के लिए तैयार होना पड़ता है । प्रत्येक झौंपड़ियों के पास आग लगाई जाती हैं और दिन के लिए भोजन बनाया जाता है जिसमें केवल थोड़ी सी बड़ी-बड़ी और मोटी-मोटी उस **ज्वार की रोटियां** होती हैं जो प्रबंध मण्डल द्वारा उन्हें दी जाती हैं और नमक तथा सूखी लाल मिर्च की **चटनी** होती है, वे केवल इन्हीं चीजों का खर्च बरदास्त कर सकते हैं । उनके लिए दाल और सब्जियां ऐश और विलासिता की चीजें हैं जिन्हें वे कभी-कभी प्राप्त कर सकते हैं, सामान्य रूप से एक सप्ताह में दो बार से अधिक नहीं । वृद्ध, प्रौढ़ और युवक सभी रोटी और चटनी बांट लेते हैं और उसका एक हिस्सा बच्चों के लिए रखा जाता है जिसे बच्चे दोपहर तक भूख लगने पर खा सकें । बच्चे भी दिनभर ऐसा ही करते हैं । पुरुष सुबह सवेरे खेतों में चले जाते हैं और महिलाएं भोजन बनाकर और उसे लेकर खेत में जाती हैं जहां वह दोपहर को बांट लिया जाता है । उनकी झौंपड़ियों में कोई चीज नहीं होती है क्योंकि वे केवल रातभर के लिए वहां रहते हैं और उद्योग द्वारा किए गए अग्रिम से अपना गुजारा करते हैं । उन्हें जलाने की लकड़ी उस किसान द्वारा दी जाती है जिसके खेत में वे दिनभर कार्य करते हैं । उनके पास दैनिक प्रयोग के कपड़े अथवा कोई वस्तुएं नहीं होती हैं । उनकी रातें सर्वाधिक भयावह होती हैं । क्योंकि उन्हें सख्त जमीन पर लेटते ही निरन्तर मच्छरों और कीड़े-मकौड़ों के साथ संघर्ष करना होता है । उनमें से कोई भी व्यक्ति एक ऊंचे बिस्तर की बात स्वप्न में भी नहीं सोच सकता है क्योंकि अन्यथा भी उससे झौंपड़ी में ही रहना अपेक्षित है जो प्रत्यक्ष रूप से उनका वर्ष में छः सात महीने के लिए आवास होता है, जिस अवधि में वे चीनी मिलों के लिए कार्य करते हैं । ये लोग रातभर संशोपंज में रहते हैं क्योंकि किसी को यह पता नहीं होता है कि ट्रक कब आने वाला है और हार्न बजने के साथ उन्हें उठना पड़ेगा और दिन के समय उन्होंने जो गन्ना तैयार किया है उसके लदान के लिए खेत में जाना पड़ेगा । जैसा किसी ने कहा है वे एक आंख से जागते रहते हैं और दूसरी आंख से सोते रहते हैं ।

19. मजदूरों के ये कैम्प केन्द्रीय अधिनियम के उन उपबंधों की दृष्टि से लज्जाजनक हैं जो प्रवासी मजदूरों के लिए बनाए गए हैं और जिन्हें सभी राज्यों ने मान्यता दी है और अपनाया है । इन झौंपड़ियों के इस पड़ाव से यह धारणा बनती है कि लोगों को वर्षानुवर्ष कई-कई महीनों तक अमानवीय परिस्थितियों में रहना पड़ता है । वहां पर किसी प्रकार की भी जन-सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं, फिर काम करने वाली महिलाओं के गोद के बच्चों और इस लम्बे प्रवास की अवधि में उनके साथ आए बच्चों के लिए सुविधाओं की तो कोई बात ही नहीं है । ये बच्चे अपने माता-पिता के खेतों में चले जाने पर नटखट बच्चों की तरह इधर-उधर दौड़ते रहते हैं । वहां ऐसे हजारों किशोर बच्चों के लिए कोई बाल-वाड़ियां या स्कूल नहीं हैं जिनकी देख-रेख की जिम्मेदारी राज्य की है । वहां पर पीने के पानी के लिए भी कोई प्रबंध नहीं है क्योंकि कैम्प में रहने वालों को निकट के साधनों पर निर्भर रहना होता है । जब वे काम करने के लिए बाहर जाते हैं तो उन्हें नहरों,

खेतों और गढ्ढों से पानी पीना पड़ता है और उनके लिए इस बात का कोई मतलब ही नहीं होता कि वह किस प्रकार का पानी है। यद्यपि, सामान्य रूप से उनके नियुक्तिकर्ता को उन्हें पूरा संरक्षण प्रदान करना चाहिए तथापि, उनके स्वास्थ्य के बारे में किसी भी व्यक्ति की जिम्मेदारी नहीं है। वे उद्योग के डाक्टर के पास जा सकते हैं लेकिन ऐसा केवल तभी होता है जब कोई गंभीर रूप से बीमार हो जाता है और प्रबंध मण्डल उसके जाने के लिए परिवहन की व्यवस्था करता है। इसके अतिरिक्त वे स्वयं ही अपना प्रबंध करते हैं और उनमें से कुछ जब वे अधिक दिन तक बीमार हो जाते हैं अपने घर को वापिस चले जाते हैं ताकि वे अपने निजी चिकित्सक से परामर्श कर सकें और वन से जड़ी बूटियां ला सकें जिनकी उन्हें अच्छी जानकारी है। जब वे कुछ ठीक हो जाते हैं तो पुनः मजदूरों के साथ आ जाते हैं। इस प्रकार यह कठिन जिन्दगी चलती रहती है क्योंकि उनमें से कुछ की रातें बोतलों और पत्नियों तथा पड़ौसियों से झगड़ों में ही बीत जाती हैं। हरेक बात तभी निपटती है जब ट्रक आता है या ऐजेन्ट अगले दौर के काम के लिए बुलाता है।

20. उस क्षेत्र में इन मजदूरों की ये स्थितियां अच्छी तरह विदित हैं और बहुत से प्रबुद्ध व्यक्तियों की यह भावना रही है कि यह स्थितियां ठीक नहीं हैं। उनके रहन-सहन की भौतिक परि-स्थितियां बहुत घटिया हैं और उन्हें शहर की गन्दी बस्तियों की तुलना में भी अमानवीय रहन-सहन ही कहा जा सकता है। इसमें आश्चर्य की बात यह है कि इन लोगों की आय का स्तर बहुत कम है, जो अपने घरों से बहुत दूर आते हैं और सर्दी और गर्मी में दिन और रात प्रकृति की शक्तियों से संघर्ष करते हैं। इनकी दैनिक औसत मजदूरी 6-7 रुपए से अधिक प्रतीत नहीं होती है। यह मजदूरी अनिवार्य रूप से इतनी ही आती है जब इसकी गणना उनकी कुल आय और उस कुल अवधि के आधार पर की जाती है जिसके दौरान वे अपने घर से चलना आरम्भ करने के दिन से वापिस लौटने के दिन तक ठेके के अधीन नियुक्त रहे थे। गुजरात सरकार के श्रम विभाग ने उनकी समस्याओं पर कई बार विचार किया है और इसकी अन्तिम जांच यह प्रदर्शित करती है कि इन मजदूरों की दैनिक मजदूरी केवल 4–6 रुपए के लगभग होगी। परन्तु यह प्रणाली इतनी दृढ़ रूप से स्थापित है और इतनी विस्तृत है कि उस राज्य सरकार ने इस प्रश्न को खुले रूप में निर्णय के लिए छोड़ देना ही उपयुक्त समझा और लोगों की दुर्दशा की कोई चिन्ता न करते हुए उद्योगों को यह अनुमति दे दी है कि वे अपने काम की व्यवस्था उस तरह से करें जो उनके लिए सर्वाधिक उपयुक्त हो। इसके साथ ही साथ एक अकथित आधारभूत तत्व भी चलता रहा है कि अन्ततः चीनी उद्योग ऐसे लोगों को मजदूरी रोजगार दे रहे हैं जिनके पास अपने घर पर कोई अन्य विकल्प नहीं है और उन्हें अपने शरीर और आत्मा को एक साथ बनाए रखने के लिए कोई न कोई काम अवश्य मिलना चाहिए। उसे श्रम विभाग का उक्त नोट किसी तरह बाहर वालों को पता चल गया था और वह एक स्थानीय समाचारपत्र में प्रकाशित किया गया था। इस मामले को अहमदाबाद के लोक अधिकार संघ द्वारा उठाया गया था जिसने उच्च न्यायालय के सामने यह प्रस्ताव रखा था कि चीनी उद्योगों को इस प्रभाव के आदेश दिए जाएं कि उनके द्वारा गन्ने की कटाई लदान के लिए नियुक्त किए गए सभी मजदूरों को उस पूरी अवधि के लिए न्यूनतम मजदूरी का भुगतान किया जाना चाहिए जिसके दौरान उद्योग से उनका ठेका रहा है।

मजदूरों और उद्योगों के बीच औपचारिक संबंध

21. सहकारी चीनी उद्योगों के मुकाबले में इन मजदूरों की औपचारिक स्थिति बिल्कुल स्पष्ट है। चीनी उद्योग जो किसान की ओर से मजदूरों को नियुक्त करते हैं, प्रमुख नियोजक हैं परन्तु ठेके संबंधी तथा कानूनी दायित्वों के लिए उनकी पूरी जिम्मेदारी है। वे मुकादमों के साथ एक करार करते हैं जिसके एवज में वे मजदूरों को लाते हैं। कानून के अधीन मुकादमों से उन मजदूरों की सूची प्रस्तुत किए जाने की अपेक्षा की जाती है जिन्हें उन्होंने उद्योगों में काम करने के लिए लगाया है। मुकादमों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे स्वयं अन्तर्राज्यिक प्रवासी मजदूर (नियोजन का विनियमन और सेवा शर्तें) अधिनियम के अधीन महाराष्ट्र राज्य की सरकार और गुजरात राज्य की सरकार, दोनों से एक लाइसेंस प्राप्त करें। उन्हें महाराष्ट्र सरकार के पास उन मजदूरों की एक सूची दाखिल करनी होती है जिन्हें वे महाराष्ट्र से बाहर गुजरात में काम करने के लिए लाते हैं। इस अधिनियम के अधीन गुजरात राज्य की सरकार ने मुकादमों को एक छूट दी है और अब यह जिम्मेदारी मुकादमों के संघ की है जिसे इस अधिनियम के अधीन कानूनी औपचारिकताएं पूरी करने के लिए बनाया गया है। उद्योग औपचारिक रूप से मुकादमों के संघ के साथ समझौता करते हैं और व्यक्ति रूप में मजदूरों की स्थिति के लिए कोई जिम्मेदारी स्वीकार नहीं करते हैं।

न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप

22. यद्यपि ऊपर वर्णित कानूनी उपबंध लागू थे तथापि, किसी दंड के अभाव में चीनी उद्योग द्वारा उनका उल्लंघन किया गया था जैसा इससे पूर्व के खंड में उनके काम करने की परिस्थितियों के बारे में दिए गए विवरण से स्पष्ट है। इस स्थिति में हस्तक्षेप करने के लिए सक्रियवादियों के एक समूह ने गुजरात उच्च न्यायालय के सामने एक प्रस्ताव रखा था। उच्च न्यायालय ने विशेष रूप से नियुक्त की गई एक जांच समिति की ओर से उसमें अन्तर्ग्रस्त प्रश्नों के सभी पहलुओं की जांच करने के बाद मजदूरों के हक में अपना निर्णय दिया था और उद्योगों को यह निदेश दिया था कि वे उन्हें प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 11 रुपए की दर से न्यूनतम मजदूरी का भुगतान उस पूरी अवधि के लिए करें जिसमें वे ठेके के अधीन थे। इस समिति में इन मजदूरों की स्थितियों की जांच भी विस्तृत रूप से की थी और न्यायालय को अपनी रिपोर्ट दी थी। उद्योगों के प्रतिनिधियों सरकार और उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त समिति की बैठक की गई थी और उसमें मार्ग निर्देश और मजदूरों को भुगतान के लिए समय-अनुसूची भी विहित की गई थी परन्तु उसके बाद ऐसा हुआ कि प्रबंध निदेशकों और गन्ना उद्योग संघ के पदा-धिकारियों ने अपना निर्णय बदल दिया और उच्च न्यायालय में पुनः मामला उठा दिया। न्यायालय में यह मामला एक महीने से अधिक तक चला और इसके परिणामस्वरूप 14–4–1987

का एक दूसरा अन्तरिम आदेश दिया गया जिसमें चीनी उद्योगों तथा राज्य सरकारों को विस्तृत निदेश दिए गए कि न्यूनतम मजदूरी का भुगतान किया जाए और सभी अभिलेखों को सन्तोषप्रद रूप से तय किया जाए। इसके परिणामस्वरूप एक समझौता करना पड़ा था जिसमें न्यायालय को भी सम्मिलित किया गया था जिसमें चीनी उद्योग उस वर्ष के लिए खंड मजदूरी 22 रुपए से बढ़ाकर 29 रुपए प्रति मीटरी टन करने के लिए सहमत हो गए थे।

23. ऐसा प्रतीत होता था कि इस अवधि के दौरान उद्योगों के मालिक अपनी कानूनी स्थिति कमजोर होने के कारण भयभीत हो गए थे। विशिष्ट रूप से उच्च न्यायालय के मामले की स्थितियों की दृष्टि से उन्होंने धोखेबाजी की नीति अपनाना और अनुचित तरीकों से मुकादमों और मजदूरों में फूट डालना शुरू कर दिया था। इस संबंध में कुछ उद्योग, जैसे बारदोली उद्योग काफी सक्रिय थे और इस विरोधी अभियान में अग्रणी बने हुए थे। तथापि इसकी एक दूसरी प्रतिक्रिया भी हुई क्योंकि इसमें उन सक्रियतावादियों का एक समूह शामिल हो गया था जो इस सारे दृश्य को बड़ी तत्परता से देख रहे थे और उन्होंने बहुत शीघ्र ही यह अनुभव किया था कि जब तक मजदूरों को अपने अधिकारों के लिए स्वयं ही सचेत न किया जाए और उच्च स्तर पर की जा रही कार्यवाहियों के बारे में अवगत न कराया जाए तब तक ऊपर से मात्र औपचारिक हस्तक्षेप बेकार होगा। इसके परिणामस्वरुप वे इस मामले में सक्रिय हो गए थे और मजदूरों को सचेत किया गया था ताकि उनमें और न्यायालय के हस्तक्षेप में विश्वास की एक भावना उत्पन्न हो सकेगी। मजदूरों और सक्रियतावादियों के बीच निरन्तर सम्पर्क और सौहार्द का होना एक सराहनीय बात थी जिसके कारण से उद्योगों की वह घातक योजनाएं सफल नहीं हो सकीं थीं जो वे समय के साथ खिलवाड़ करके न्यायिक प्रक्रिया को नकारने के लिए प्रयत्न कर रहे थे ताकि उस सत्र के अन्त में मजदूरों को पुरानी दरों से उनके हिसाब तय करके ही उन्हें वापस भेजा जा सके और वे निर्णय दिये जाने अथवा उसे प्रभावी किए जाने से पूर्व ही उस दृश्य से ही ओझिल हो जायें। इस संबंध में न्यायालय को कुछ उद्योगों को कई बार चेतावनी देनी पड़ी थी। न्यायालय के निर्णय के वास्तविक रूप में कार्यान्वियन के समय अभिलेखों का उपलब्ध न होना एक बड़ी समस्या बन गई थी। अन्यथा वह निर्णय इतना व्यापक था कि उक्त अवधि विषयक महत्वपूर्ण प्रश्न के बारे में उसकी व्याख्या दूसरे प्रकार से भी की जा सकती थी जिसके लिए मजदूर न्यूनतम मजदूरी के लिए हकदार थे जो उस अधिनियम के अधीन स्पष्ट और निश्चित है। उद्योग इस प्रचलित प्रणाली का लाभ उठाना चाहते हैं जिसमें मजदूरों का दैनिक लेखा नहीं रखा जाता था और उन्होंने यह योजना बनाई थी कि ऐसे अनुकूल अभिलेख तैयार किए जाएं जिससे ऐसे आंकड़े प्राप्त हों जो पुरानी दरों से उनकी हकदारी के बराबर हों और उनके हक में उच्च न्यायालय का निर्णय निष्प्रभावी हो जाए।

24. यह मामला जारी है। ऊपर निर्दिष्ट अन्तरिम आदेश द्वारा गठित त्रिपक्षीय समिति ने कार्य करना आरम्भ कर दिया है तथापि, अभी वह धीमी गति से हो रहा है। उच्च न्यायालय ने जिस अभिलेख प्रकोष्ठ की स्थापना के लिए राज्य सरकार को निदेश दिया है उसके बारे में कोई अधिक प्रगति हुई प्रतीत नहीं होती है। इस बीच प्रमाणिक रूप से यह ज्ञात हुआ है कि उद्योगों का प्रबन्ध मण्डल कुछ समझौता करने का प्रयत्न कर रहा है और पक्षकारों के बीच बैठकें की जा रही हैं। यदि उपयुक्त समय के अन्दर अन्तिम निर्णय नहीं लिया जाता है तो उच्च न्यायालय के निदेशों के अनुसार अगले वर्ष के लिए अर्थात् उस सत्र के लिए जिसके लिए मजदूरों की भर्ती पहले ही आरम्भ हो चुकी है, क्या प्रबन्ध किया जाना आवश्यक होगा यह अभी प्रबन्ध मण्डल और न्यायालय की पुष्टि के साथ मजदूरों के हितों का समर्थन करने वालों के बीच तय होना शेष है।

परम्परागत संगठन और नया परिवेश

25. गन्ने की कटाई और लदान के लिए मजदूरों की व्यवस्था परम्परागत संस्थाओं के उस प्रत्युत्तर का रुचिकर उदाहरण प्रस्तुत करती है जो उन संस्थानों ने नई स्थितियों के प्रति और आधुनिक व्यवस्था की हरेक घटना को अपने ही ढांचे के संदर्भ में देखने की उस धुन के प्रति प्रकट किया है जिसका पालन किए जाने के लिए वह आग्रह करती है और वह इस बात से भी बेखबर होती है कि वह जिन आधारभूत मूल्यों का औपचारिक रूप से समर्थन करती है उनके लिए भी इस बात के क्या दुष्परिणाम होंगे। इन मजदूरों में से अधिकांश अनुसूचित जनजातियों के व्यक्ति हैं जो सर्वाधिक पिछड़े ऐसे आदिवासी क्षेत्र से आते हैं जहां समुदाय की अपनी व्यवस्था अभी सुदृढ़ बनी हुई है और उनके कार्य संस्कार सहकारिता की भावना, आपसी सहायता और मानवीय सोच-विचार के आधार पर निर्मित हुए हैं। इन आदिवासी समुदायों की व्यवस्था नौकरशाही वाली नहीं है और उनके नेता बराबर वालों में से केवल प्रथम व्यक्ति के रूप में होते हैं। ये लोग काम के लिए समूहों में बाहर जाते हैं और उनमें से एक को उनके नेता की भूमिका निभानी होती है। इसी व्यक्ति को मुकादम के रूप में रखा जाता है जो उस पूरे समूह की ओर से बोलता है और उनके प्रतिनिधि के रूप में काम करता है। इसके विपरीत उनके नियुक्तिकर्ता इस स्थिति को भिन्न रूप में समझते हैं। नियुक्तिकर्ताओं के लिए मुकादम की भूमिका एक ठेकेदार के रूप में होती है जो वांछित संख्या में मजदूरों को लाने का वचन देता है और कार्य को ऐसे निर्णयों और शर्तों के अनुसार पूरा करने का वायदा करता है जिनके लिए उस समय सहमति दी जाती है। जिसके परिणामस्वरूप नियुक्तिकर्ता उस मुकादम के साथ एक उप ठेकेदार के रूप में बरतता है और उसका इस बात से कोई संबंध नहीं रहता है कि वह अपने समूह में कार्य को किस तरह व्यवस्थित करता है और

मजदूर बल का किस तरह प्रबन्ध करता है तथा उन्हें किए गए काम के लिए किस तरह भुगतान करता है।

26. चीनी उद्योगों ने मुझे यह बताया था कि नियुक्त किए गए मजदूरों, उनके द्वारा किए गए कार्य और भुगतान की गई राशि इत्यादि के बारे में विस्तृत विवरण मुकादम के पास से उपलब्ध होंगे। मजदूरों से की गई मेरी पूछताछ से यह प्रकट हुआ था कि उस कार्य सत्र के अंत में जब लेखे अन्तिम रूप से तय किए गए थे तो प्रत्येक मुकादम समूह में कोयता वालों को वास्तव में एक समान राशि प्राप्त हुई थी। अलग अलग व्यक्तियों ने जो कुछ अग्रिम रूप से लिया था उसके बारे में कटौती की जाती है जो एक मानने योग्य बात है। परन्तु यह सच्चाई एक आश्चर्य की बात थी कि कार्य-सत्र के अंत में प्रत्येक कोयता वाले को एक समान राशि मिली थी क्योंकि अंततः छह से सात महीने की अवधि में कोयता वालों की कुल आय में इस कारण से कुछ भिन्नता होने की अपेक्षा की जा सकती थी कि किसी खंड दर प्रणाली में किए गए कुल कार्य के आधार पर ही किसी व्यक्ति की कमाई निर्धारित की जाती है और यह उन दिनों की संख्या के आधार पर निर्धारित नहीं की जाती है जिन दिनों के लिए उस व्यक्ति को काम पर लगाया गया है। इसके अतिरिक्त किसी समूह में लोग ऐसे भी हो सकते है जो दूसरों के मुकाबले में अधिक परिश्रमी और बेहतर साधन सम्पन्न होते है और इस कारण से भी आय में भिन्नता हो सकती है। इसी प्रकार उनकी आय में कुछ भिन्नता इस कारण से भी अपेक्षित हो सकती है कि किसी भी व्यक्ति से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि उसने पूरे कार्य-सत्र के दौरान नियमित रूप से कार्य किया है क्योंकि वह किसी निजी कार्य सामाजिक अनिवार्यताओं और अपनी या परिवार में किसी की बीमारी के कारण अनुपस्थित भी हो सकता है। जब मैंने मजदूरों से यह पूछा कि यदि कोई व्यक्ति बीमारी के कारण कार्य के लिए उपस्थिति नहीं होता था तो उस मामले में कैसे होता था तो इसका सीधा-सा उत्तर यह दिया गया था "कुछ नहीं बस वे कार्य करने के लिए नहीं जाते हैं"। यह ही एक सामान्य उत्तर था कि किसी व्यक्ति की कमाई इस तथ्य के कारण से प्रभावित नहीं होती थी कि वह बीमारी के कारण काम से अनुपस्थित रहा था। अतः मैंने इस मामले को ओर आगे उठाया और यह पूछा कि उस स्थिति में क्या होता है जब कोई व्यक्ति बीमार न होने पर भी काम करने के लिए नहीं जाता है। पुनः इसका वही सीधा उत्तर दिया गया था "कोई व्यक्ति यदि वह बीमार नहीं है तो काम करने के लिए क्यों नहीं जाएगा ?" विशेष अवसरों पर जब लोग कोई त्यौहार मनाते है तो कोई भी व्यक्ति काम करने के लिए नहीं जाता है उस स्थिति में बात ही खत्म हो जाती हैं। जिस मजदूर से मैंने बात की थी वह अपने साथ अपनी पत्नी को नहीं लाया था परन्तु अपनी कोयता इकाई को लाया था जिसमें वह और उसका जवान लड़का शामिल था। जब मैंने उससे इतने लम्बे समय तक अपने परिवार से दूर रहने के बारे में पूछा तो उसने बताया कि वह उस सत्र की अवधि में दो बार दूर के स्थान पर अपने घर को देखने के लिए गया था जिसका अर्थ यह होता है कि वह प्रत्येक बार चार दिन के लिए अनुपस्थित रहा था। इससे इस प्रकार की लम्बी अनुपस्थिति के लिए जब अपने घरों को देखने जाते थे उनकी मजदूरी से कटौती करने के बारे में दूसरा ही प्रश्न उत्पन्न हो गया था। इस अनुपस्थिति के बारे में पूछने पर उसी प्रकार का उत्तर दिया गया था --"मैं मुकादम को बता देता हूं और चला जाता हूं"। इसके अतिरिक्त अपने घर से इतनी दूर के स्थान पर कार्य करते हुए ऐसे अवसर आते है जब किसी व्यक्ति को निजी और सामाजिक कार्यों को करने के लिए काम छोड़ने की आवश्यकता होती है। अतः ऐसी अनुपस्थिति की अनुमति एक निश्चित मामले के रूप में होती है। जब मैंने यह पूछा कि यदि कोई व्यक्ति एक अधिक लंबे समय तक काम से अनुपस्थित रहता है तो तब क्या होता है तो इसका वही उत्तर था --"कोई व्यक्ति जितना आवश्यक है उससे अधिक समय तक अनुपस्थित क्यों रहेगा ?" यदि परिवार में कोई मृत्यु हो जाती है तो किसी व्यक्ति को अधिक लम्बे समय तक रुकना पड़ सकता है और यह बात भी मानने योग्य है। इसके अतिरिक्त महिलाएं प्रसव के बाद कार्य से अनुपस्थित रहती हैं। जब मैं कार्य से अनुपस्थिति के प्रश्न पर कोई बात हासिल करने में असफल रहा तो मैंने प्रत्येक कोयला इकाई द्वारा प्रति दिन किए गए कार्य की मात्रा के बारे में पूछना आरम्भ कर दिया। प्रत्येक कोयता इकाई को जितना काम पूरा करना होता है वह उसके बारे में जानती है क्योंकि वे सभी आधार रेखा से ही कार्य आरम्भ करते है और उन्हें दिन की समाप्ति पर दूसरे सिरे पर पहुंचना होता है। कुछ लोग जल्दी-जल्दी काम करते है और कुछ अन्य काम को देर से खत्म करते है। इसके अतिरिक्त यह भी संभव है कि किसी कोयता इकाई में कोई बीमार पड़ जाए तब उसके परिणामस्वरूप कोयता इकाई का अकेला व्यक्ति उस दिन बहुत पीछे रह जाता है। इन सभी मामलों में जब कोई कोयता इकाई दूसरी कोयता इकाइयों के साथ-साथ चलने में समर्थ नहीं होता है तो उसके मित्रों द्वारा अनौपचारिक रूप से उसकी सहायता की जाती है। इसके परिणाम स्वरूप प्रत्येक कोयता इकाई द्वारा जब वे काम करते हैं प्रत्येक दिन पूरा किया गया कार्य पूरे सत्र में बराबर होना समझा जाता है।

27. ऐसी प्रणाली प्रचालित होने से मुकादम का कार्य काफी आसान होता है। उसे कुछ विशिष्ट और सादे कार्यों के लिए प्रबन्ध मण्डल के साथ सम्पर्क करना होता है। प्रारम्भ में जब कोयता वाले काम करना आरम्भ करते हैं और प्रत्येक पखवाड़े में उनके कार्य स्थल पर पहुंचने के बाद उन्हें रुपए देने के लिए प्रबंध-मंडल आवश्यक अग्रिम धन राशि मुकादम को देता है। प्रत्येक कोयता इकाई को एक समान

अग्रिम धन राशि दी जाती है और इसलिए लेखा रखने की कोई समस्या नहीं होती है। सामान्य तौर पर दूसरे प्रकार की अग्रिम धन राशियों के लिए कोई व्यवस्था नहीं होती है परन्तु जहां कहीं पर ऐसी अग्रिम धनराशियां दी जाती हैं तो वे मुकादम की मार्फत दी जाती हैं जिसके लेखे में वह रकम दर्ज कर दी जाती है और जिस व्यक्ति के पक्ष में वह स्वीकृत की जाती है उसके बारे में एक नोट भी दर्ज कर दिया जाता है। मुकादम एक कार्य पर्ची रखता है जिसमें कटाई और लदान किए गए गन्ने की मात्रा उसके ट्रक द्वारा भेजे जाने के बाद उद्योग स्थल पर प्राप्त होने पर दर्ज करता है। उद्योग के लेखाकार द्वारा प्रत्येक मुकादम समूह के लिए इन आंकड़ों को जड़ किया जाता है और सत्र के अन्त में लेखे अन्तिम रूप से तय किए जाते हैं। उस सत्र के दौरान जितना कुल काम किया जाता है उसकी कुल कीमत को कोयता इकाइयों की संख्या से भाग देने से जो संख्या आती है वही प्रत्येक कोयता इकाई की हकदारी राशि होती है जो इस प्रकार से साधारण तरह से तय की जाती है। इन आंकड़ों की जानकारी प्रत्येक कोयता इकाई को हो जाती है क्योंकि उस स्थल पर ही इसकी घोषणा की जाती है। जैसा पहले बताया गया है प्रत्येक कोयता इकाई को दिया गया अग्रिम भी एक समान होता है। अतः वह राशियां उनके अन्तिम भुगतान में से घटाई जाती हैं और प्रत्येक कोयता इकाई को एक समान राशि मिलती है। और यदि उस सत्र के दौरान किसी कोयता ने कोई विशेष अग्रिम लिया होता है तो वह इस भुगतान में से नहीं घटाया जाता है परन्तु संबंधित कोयता उक्त वांछित राशि अन्तिम भुगतान प्राप्त करने के बाद मुकादम को वापस देता है। इस प्रणाली में प्रत्येक व्यक्ति उस कुल मजदूरी के बारे में पूरी तरह से स्पष्ट होता है जिसके लिए प्रत्येक कोयता हकदार है और अग्रिम दिए जाने की नियमित प्रणाली के अनुसार प्रत्येक कोयता को जो कुछ मिला है और यदि किसी व्यक्ति विशेष ने विशेष अग्रिम धन राशि ली होती है तो उसका भी उसे स्पष्ट तौर से पता होता है। बनाई गई यह आन्तरिक कार्य विधि आसान है और समूह इसे समझ सकता है। इसमें किसी थोड़े परिवर्तन से भी यह स्थिति अस्पष्ट हो सकती थी जैसे नियमित और विशेष अग्रिमों को एक साथ जोड़ देना और तब प्रत्येक व्यक्ति इस बारे में अनिश्चित होता कि उसकी हकदारी कितनी होगी।

28. यह एक आदर्श व्यवस्था की स्थापना है जो आदिवासियों और अन्य परम्परागत समुदायों के सदस्यों ने अपने घरों से दूर जाकर गन्ने के खेतों में वह कार्य करने के लिए विकसित की है जिसमें कड़ी और अथक मेहनत करनी होती है और साथ ही कई प्रकार की अनिश्चितताएं भी होती हैं और फिर उनके कैम्प की प्रतिकूल स्थापना होने से वे और अधिक सख्त हो जाती हैं। वे दिन और रात के दौरान प्राकृतिक शक्तियों के आघात सहन करते हैं और उन्हें पीने के लिए स्वच्छ पानी भी नहीं मिलता है। जैसे एक मजदूर ने इसे इस प्रकार बताया है "जैसा कुछ भी मिल जाता है उनके लिए वही पानी है।" उन्हें रात को मच्छरों और कीट-पतंगों संक्रमणों और कीड़े मकोड़ों जैसी बीमारियों और गंदगी से भी जूझना पड़ता है जब वे "एक आंख खुली और दूसरी बंद" वाली स्थिति में सोते हैं कि उन्हें काम के लिए खत में अर्ध रात्रि में ही उस गन्ने के लदान के लिए ले जाया जाएगा जिसकी उन्होंने दिन में कटाई सफाई की थी और उन्हें बहुत सवेरे ही पुनः काम पर वापस आना होगा, इसके बावजूद आगे दूसरा दिन भी कठोर मेहनत का होता है।

29. यह प्रणाली विश्वास और सद्भावना तथा उस छोटे समूह के स्व-प्रबंध के आधार पर बनाई गई है जो साधारण तौर पर उस मानव जाति समूह का ही या उनके पैत्रिक भूभाग के पड़ौस का होता है। यदि कोई व्यक्ति अपरिचित होता है तो इस कारण से उनका एक दूसरे से और अधिक मेल जोल बढ़ जाता है और वे आवश्यकता पड़ने पर किसी छोटे तथा बड़े संकट के समय एक दूसरे की सहायता करते हैं। समूह का प्रत्येक व्यक्ति सभी को स्वीकार्य बराबर के दर्जे के भावत्यक मानदण्डों के साथ जिम्मेदार व्यक्ति की तरह व्यवहार करता है हरेक व्यक्ति काम करता है क्योंकि वे काम के लिए ही आए हैं और वह उनके जीवन का एक पहलू है। किसी भी व्यक्ति से जीवन निर्वाह के लिए कुछ कमाने की तब तक अपेक्षा नहीं की जा सकती है जब तक वह कोई काम नहीं करता है। अतः बिना काम किए जीवन-यापन करने की बात मानने वाली बात नहीं है और उसमें हरेक व्यक्ति काम करता है बशर्ते कि वह काम कर सकता है और जब वह काम नहीं कर सकता है तो नहीं करता है और हरेक व्यक्ति इसे समझता है कि जब कोई बीमार हो जाता है तो वह काम नहीं कर सकता है और कोई व्यक्ति उस समय भी काम नहीं कर सकता है जब वह अपने घर चला जाता है, और कुछ व्यक्तिगत तथा सामाजिक कार्य करता है। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किए गए कार्य की मात्रा में अन्तर होता अनिवार्य है क्योंकि सभी एक समान नहीं होते हैं परन्तु यह किसी व्यक्ति का अपना दोष नहीं है, वह एक प्राकृतिक बात है। अतः प्रत्येक व्यक्ति उस प्रणाली की आवश्यकताओं को समझता है। इस प्रकार आपसी सहायता और सहयोग सतत रूप से मिलते रहते हैं और कोई यह महसूस नहीं करता है कि कोई किसी की मदद क्यों कर रहा है। यह एक पूर्ण सामाजिक सुरक्षा की प्रणाली है जो अधिकांश समतावादी समूहों के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकती है। हरेक व्यक्ति अपनी सर्वोत्तम सामर्थ्य के अनुसार काम करता है और उस सत्र के अंत में एक समान राशि प्राप्त करता है।

30. इस प्रणाली का संचालन मुकादम करता है जो वास्तव में उन्हीं में से एक होता है और उनके साथ ही काम करता है। वह एक कोयता के रूप में ही मजदूरी के

लिए हकदार होता है क्योंकि वह भी अपने परिवार के साथ चलता है। उनमें से अधिकांश पढना लिखना भी नहीं जानते हैं। परन्तु यह प्रणाली इतनी आसान है कि यह उस समूह के सभी सदस्यों की समझ में आती है और मुकादम इसका संचालन बिना किसी अधिक कठिनाई के कर सकता है। इसमें उसकी निरक्षरता बाधक नहीं होती है। प्रबंध मण्डल उसकी इस भूमिका के लिए उसका सम्मान करता है क्योंकि वह इस भूमिका को छोटे ठेकेदार की भूमिका के रूप में समझता है परन्तु वास्तव में वह ऐसा नहीं है। प्रबंध मण्डल की यह सूझ-समझ उनकी वास्तविक छवि के अनुसार नहीं है। यद्यपि इसमें झगड़े का बीज डाल दिया गया प्रतीत होता है तथापि, उससे अभी तक तक यह प्रणाली प्रभावित नहीं हुई है।

कानूनी ढांचा

(1) न्यूनतम मजदूरी अधिनियम

31. अब यहां पर इसकी जांच करना आवश्यक है कि संबंधित कानूनों के विशिष्ट उपबन्धों के संदर्भ में किन परिस्थितियों में मजदूर काम कर रहे हैं। गुजरात का न्यूनतम मजदूरी अधिनियम इन मजदूरों पर लागू होता है जिसके अनुसार प्रत्येक मजदूर को 11 रुपये प्रतिदिन की न्यूनतम मजदूरी पाने का हकदार है। इस राज्य में लागू किए जा रहे न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के बारे में अस्पष्टता है । मूलभूत प्रश्न यह है कि यह कैसे सुनिश्चित किया जाए कि जिस व्यक्ति को दैनिक मजदूरी के आधार पर लगाया गया है, उसको दिया गया कार्य परिश्रम के साथ है और न्यूनतम कार्य पूरा किया है। यदि कार्य का कोई मानदण्ड विहित नहीं किया गया है तो किए गए काम की मात्रा लगभग नाममात्र की रह सकती है और कार्य-निष्पादन वांछित स्तर से बहुत काम रह सकता है। अतः इसका हल यही हो सकता है कि खंड दर प्रणाली अपनाई जाए परन्तु खंड दर इस तरह से निश्चित की जाए कि किसी भी साधारण व्यक्ति से यह अपेक्षित हो उसे न्यूनतम मजदूरी देने के लिए उतनी मात्रा में काम करना होगा। इस प्रणाली में किसी भी न्यूनतम मजदूरी से कम नहीं मिलेगा यदि कोई व्यक्ति अपने व्यक्तिगत निष्पादन के अनुसार न्यूनतम से अधिक कमा सकता है।

32. शारीरिक श्रम करने वाले मजदूरों के संबंध में कार्य के मानदण्ड निर्धारित करने का प्रश्न सर्वाधिक कठिन रहा है। इसके मानदण्ड सामान्य तौर पर तदर्थ आधार पर विहित किए जाते हैं और वे एक औसत मजदूर से वास्तविक अपेक्षाओं के आधार पर नहीं होते हैं परन्तु इस आधार पर होते हैं कि सर्वाधिक हट्टे-कट्टे और परिश्रमी मजदूरों से कितना काम अपेक्षित हो सकता है। चूंकि इस कार्य के मानदण्ड स्वयं राज्य के उन विभागों द्वारा ही निर्धारित किए जाने अपेक्षित होते हैं जो उन्हें नियुक्त करते हैं, अतः इसमें मजदूरों के विरुद्ध पक्षपात अनिवार्य रूप से उत्पन्न हो जाता है। इस संबंध में पूरे देश में यह सामान्य भावना व्याप्त है कि इस कार्य के निर्धारित मानदण्ड बहुत अधिक हैं और पूरे देश में असंख्य सरकारी विभागों में खंड मजदूरी प्रणाली के अधीन मजदूरों को जो मजदूरी मिलती है वह न्यूनतम मजदूरी से कम है। बहुत ही कम मामले इसका अपवाद हैं। परन्तु ये मानदण्ड गणना में उक्त स्थिति के अपवाद नहीं हैं। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि 8 घंटे के कार्य दिवस में एक कोयता जितने गन्ने का कटाई और सफाई कर सकता है उसकी मात्रा निर्धारित करने के लिए कोई वैज्ञानिक विधि अपनाई गई है। गन्ने की कटाई और सफाई में लगाए गए मजदूरों के साथ, गन्ने की उस मात्रा के बारे में जिसकी वे एक दिन में कटाई और सफाई कर सकते हैं, हुई मेरी बातचीत से यह प्रकट हुआ कि साधारण तौर पर एक कोयता द्वारा एक मीटरी टन गन्ने की कटाई और सफाई नहीं की जा सकती है। इसके लिए वे मजदूर कभी-कभी यह युक्ति अपनाते हैं कि वे गन्ने के खेतों को गन्ने की कटाई करने से पूर्व जला देते हैं जिससे गन्ना साफ हो जाता है और कटाई आसान हो जाती है। इस युक्ति को किसानों द्वारा भी प्रोत्साहित किया जाता है क्योंकि वे इसका प्रयोग उस क्रम शृंखला को तोड़ने के लिए एक तर्क के रूप में करते हैं जो गन्ने की कटाई के कार्य-चालन में निश्चित की होती है और उनके खेत के गन्ने की कटाई को इस आधार पर प्राथमिकता देने के लिए दावा करते हैं कि उनके खेत जल गए हैं। तथापि, इससे प्रति टन रस की निकासी दर प्रभावित होती है। कुछ उद्योगों में यह प्रथा अत्यधिक हो गई है और उद्योगों में 60 से 70 प्रतिशत से अधिक गन्ना ऐसा प्राप्त होता है जो उसकी कटाई से पहले जलाया गया होता है। कुछ उद्योगों ने इस बाबत 15 प्रतिशत का दण्ड भी लगा दिया है परन्तु इससे भी मजदूर इस युक्ति को अपनाने से नहीं रुके हैं।

33. यद्यपि उस गन्ने की मात्रा जिसकी एक कोयता द्वारा कटाई और सफाई की जाती है एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न-भिन्न होगी और यह गन्ने की किस्म पर निर्भर करेगी तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि एक साधारण कोयता, जिसमें कोई विकलांगता न हो, प्रतिदिन 700 से 800 किलोग्राम तक गन्ने की सफाई कटाई कर सकता है और इससे अधिक नहीं। जो मजदूर अधिक हृष्ट-पुष्ट होते हैं वे एक मीटरी टन के मानदण्ड से भी अधिक कार्य कर सकते हैं।

34. प्रति मीटरी टन 22 रुपए की मजदूरी दर एक कोयता द्वारा प्रतिदिन कटाई और सफाई किए गए एक मीटरी टन गन्ने के मानदण्ड के आधार पर नियत है। कार्य का यह मानदण्ड बहुत अधिक है। अतः इससे यह स्पष्ट है कि एक औसत मजदूर प्रतिदिन 11 रुपए की न्यूनतम मजदूरी नहीं कमा सकता है तथापि, यह मामला खेत में कुछ अन्य प्रथाओं के कारण अपेक्षाकृत कुछ अस्पष्ट हो गया है। इस संबंध में उद्योगों के मालिकों द्वारा उठाया गया सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न कोयता के उस लाभ के संबंध में

है जो कोयता को गन्ने के पत्ती वाले ऊपरी भाग से मिलता है जिसकी बाजार में चारे के रूप में अच्छी बिक्री होती है। उनके अनुमान के अनुसार कटाई और सफाई किए गए प्रतिटन गन्ने पर से पत्तियों वाले ऊपरी भाग की मात्रा 300 से 400 किलोग्राम तक होती है जिससे उन्हें आसानी से लगभग 60 रुपए तक आय हो सकती है। इस प्रकार उनके अनुसार उनकी वास्तविक मजदूरी प्रतिदिन 11 रुपए नहीं होती है बल्कि लगभग 16 रुपए प्रतिदिन होती है। उनके इस अनुसंधान के बारे में कुछ सन्देह है उदाहरण के लिए मेरी पूछताछ से यह प्रकट हुआ था कि पत्तियों वाले ऊपर के भाग पर अनन्य रूप से गाड़ी वालों का अधिकार होता है, जिसे उन्होंने स्थापित भी किया था क्योंकि उन्हें उसे अपने उन बैलों को खिलाना होता है जो गन्ने की ढुलाई के लिए प्रयोग किए जाते हैं। यह मुद्दा दूसरे मामलों में उतना आसान और स्पष्ट नहीं है। उक्त मजदूरों ने मुझे यह बताया कि पत्ती वाले भाग को बेचने के लिए ले जाने के लिए उन्हें सुपरवाईजर को चकमा देना होता है। मुझे एक नोटिस भी दिखाया गया जिसमें सुपरवाइजरों को यह कहा गया था कि वे मजदूरों को पत्ती वाला भाग न ले जाने दें। एक गांव में खेत के स्वामी ने मुझे यह बताया कि पत्ती वाला भाग ग्राम के वे हलपति लोग ले जाते हैं जिनके पास जीवन निर्वाह के कोई अन्य साधन उपलब्ध नहीं होते हैं। पत्ती वाले इस भाग को मजदूर जिस मूल्य पर बेच सकते हैं वह भी इतना अधिक नही होता जिसका उद्योग के प्रबन्धक दावा करते हैं। अतः इस संबंध में यह निष्कर्ष निकालना युक्तियुक्त होगा कि खेत में पत्ती वाले भाग की बिक्री से एक कोयता की कमाई एक सप्ताह में 2 से 3 दिन के लिए प्रतिदिन लगभग 2 से 3 रुपए तक होगी।

35. इसके अतिरिक्त एक दूसरा मद ईंधन की लकड़ी है जिसका वह लाभ के रूप में दावा करते हैं। इस संबंध में प्रथा यह है कि कोयता वाले जिस दिन के दौरान जिस किसान के खेत में काम करते हैं उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह उस दिन के लिए ईंधन की लकड़ी उपलब्ध कराएगा। इस मामले में भी स्थिति वैसी नही है। मजदूरों ने मुझे यह बताया था कि जहां कुछ किसान उन्हें पर्याप्त मात्रा में ईंधन की लकड़ी उपलब्ध कराते हैं वहीं अन्य किसान केवल नाम मात्र के लिए ईंधन की लकड़ी देते हैं जिसके परिणाम स्वरूप उन्हें ईंधन की लकड़ी आस पास के क्षेत्र से लानी होती थी। अतः इस संदर्भ में ईंधन का मूल्य उल्लेखनीय होना नहीं माना जा सकता है जिस पर गन्ने की कटाई सफाई में लगे मजदूरों की मजदूरी के एक भाग के रूप में विचार किया जाये।

36. उन सभी तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए जो मैंने अपने दौरे के दौरान मालूम किया था और उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त आयोग की रिपोर्टों और गुजरात के ग्रामीण श्रम आयुक्त द्वारा उपलब्ध कराये गये आंकड़ों को भी दृष्टि में रखते हुए वह निष्कर्ष निकालना युक्तियुक्त है कि प्रतिदिन एक मीटरी टन गन्ने का मानदण्ड अपेक्षाकृत रूप से अधिक है और इससे एक साधारण मजदूर 11 रुपए प्रतिदिन की न्यूनतम मजदूरी अर्जित करने में समर्थ नहीं हो सकता है जिसकी गुजरात के न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अधीन परिकल्पना की गई है।

(ii) **अन्तर्राज्यिक प्रवासी मजदूर अधिनियम, 1979**

37. गन्ना मजदूरों की मजदूरी के पूरे प्रश्न की एक दूसरे दृष्टिकोण से भी जांच करनी होगी जो इस प्रसंग में की जाएगी कि उनके कार्य की व्यवस्था किस अन्तर्राज्यिक प्रवासी मजदूर नियोजन का विनियमन और सेवा की शर्तें और विविध उपबंध) अधिनियम 1979 के उपबन्धों के प्रसंग में किस तरह से की जाती है। यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि इस अधिनियम में न्यूनतम मजदूरी और समयोपरि काम की मजदूरी के भुगतान की परिकल्पना की गई है। चूंकि न्यूनतम मजदूरी और समयोपरि काम की मजदूरी का उपबंध एक विशिष्ठ उपबंध है अतः यह माना जाना चाहिए कि उक्त कानून प्रवासी मजदूरों के लिए खंड मजदूरी प्रणाली को अपनाए जाने की जान-बूझ कर इंकार करता है। इस उपबन्ध की उन परिस्थितियों से कुल ढांचे के अन्दर देखा जाता है जिसके अधीन ये प्रवासी मजदूर काम करते हैं। उन्हें उनके मूल निवास स्थानों से भर्ती किया जाता है और दूर के उन स्थानों पर ले जाया जाता है जहां वे एक कैम्प की परिस्थितियों के अधीन कार्य करते हैं। वे वहां कार्य के लिए रहते हैं और उनका किसी भी प्रकार की अन्य मौज मस्ती का कोई उद्देश्य नहीं होता है सिवाय ऐसी संयोगिक बातों के जो उनकी मानवीय आवश्यकता के रूप में होती हैं और उनके साथ आए उनके आश्रितों की मदद नगण्य सी होती है। इस प्रकार यह मानना युक्तियुक्त है कि इन परिस्थितियों के अधीन मजदूर एक संगठित दल के रूप में कार्य कर सकते हैं और वे उनके नियोजकों द्वारा अनुशासन से रखे जाने के लिए उपयुक्त होते हैं। इसके परिणामस्वरूप चाहे ये मजदूर कृषि संबंधी कार्यों में लगे हुए हों तथापि वे अपने नियोजकों के वांछित अनुशासन के अधीन रहते हुए एक संगठित बल के रूप मे कार्य करते हैं।

38. यही कारण है कि पूरे देश मे नियोजक प्रवासी मजदूरों को ही प्राथमिकता देते हैं। मजदूर अपने मूल स्थान से पृथक हो जाते हैं और वे अपने ठेके की अवधि के दौरान पूर्ण रूप से नियोजकों पर आश्रित होते हैं। ऐसी स्थिति में मजदूरों के कार्य के घंटे निश्चिय किया जाना और दिए गये काम में उन्हें युक्तियुक्त रूप से लगाया जाना संभव है और यह माना जा सकता है कि ये बातें नियोजकों द्वार लागू की गई हैं। यदि किसी मजदूर से समय से अधिक काम करने की अपेक्षा की जाती है जितना कानून के अधीन उससे किए जाने की आशा की जाती है तो इसके बारे

में कुछ विशिष्ट व्यवस्था होनी चाहिए। प्रवासी मजदूरों के कार्य करने की स्थिति यही वह वास्तविकता है जो प्रवासी मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी और समयोपरि मज़दूरी की हकदारी के लिए केन्द्रीय कानून में उपबन्धों का आधार है। अत: उनके कार्य खंड मज़दूरी प्रणाली के आधार पर व्यवस्था किए जाने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है।

39. इन प्रवासी मज़दूरों के कार्य करने की स्थितियों और न्यूनतम मज़दूरी के लिए उनकी हकदारी का एक दूसरा पहलू भी है। वह यह है कि अगर किसी व्यक्ति को किसी करार के अधीन काम करने के लिए उसके घर से लाया जाता है तो उसे दूर के स्थान पर कार्य उपलब्ध होने में कोई अनिश्चितता रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसके परिणामस्वरूप ऊपर यथावर्णित यह परिकल्पना की गई है कि ये मज़दूर उसी तारीख से न्यूनतम मज़दूरी के लिए हकदार हो जाते हैं जिस तारीख से वे नियोजक के साथ एक करार करते हैं और काम पर आने के लिए रिपोर्ट करते हैं। इसमे उनकी यात्रा का वह समय भी शामिल होता है जिसमें वे भर्ती के स्थान से कार्य के स्थान पर आते हैं। यदि ये मज़दूर ठेके की अवधि के दौरान बिना काम के रहते हैं तो इसकी जिम्मेदारी पूर्णरूप से उनके नियोजक की है क्योंकि वह मजदूर बिना काम वाले दिन के लिए भी मज़दूरी के लिए हकदार हैं। इसके अतिरिक्त यदि 6 से 7 महीने तक चलने वाले नियमित रोजगार के दौरान किसी प्रवासी मज़दूर को काम में लगाया जाता है तो वह अन्य लाभों के लिए भी हकदार होता है जैसे साप्ताहिक छुट्टी और आकस्मिक परिस्थितियों और बीमारी के लिए छुट्टी।

40. इन सभी तत्वों को सुविधापूर्वक तभी प्रयुक्त किया जा सकता है यदि खंड मज़दूरी प्रणाली अपना ली जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि ये तत्व खंड मज़दूरी प्रणाली में संयुक्त रूप में सम्मिलित कर लिए गये हैं। उदाहरण के लिए ऐसा उपबन्ध बनाया जा सकता है कि जिन दिनों किसी मज़दूर द्वारा प्रतिदिन कार्य किया गया है उन दिनों के प्रति 6 दिन के लिए वह एक अतिरिक्त दिन के लिए हकदार होगा जो उसके खाते में छुट्टी के दिन के एवज में जमा किया जाएगा। यह बात मज़दूरों पर ही छोड़ दी जाएगी कि ये प्रति पखवाड़े उस एक छुट्टी के दिन का किस प्रकार लाभ उठाते हैं। यह छुट्टी का दिन उस दिन से पृथक और अतिरिक्त होगा जिस दिन उद्योग में सफाई की जाती है। इस समय यह देखा जाता है कि मजदूर सफाई वाले दिन कोई काम न होने से विश्राम करते हैं और उन्हें उस दिन के लिए कोई मजदूरी भी नहीं मिलती है। छुट्टी के दिन की उन्हें मजदूरी नहीं मिलती है। वे उस एक दिन के लिए बिना काम के आराम ही करते हैं। जिस दिन मिल बन्द होती है और गन्ने की आवश्यकता नहीं होती है।

लदान का कार्य-संचालन

41. गन्ने की कटाई सफाई के काम में जिसके लिए मज़दूर प्रति मीटरी टन 22 रुपए की मज़दूरी के लिए हकदार होते हैं। कटाई सफाई किए गए गन्ने का ट्रकों में लदान भी शामिल होता है। कटाई सफाई के कार्य के लिए यह एक विशेष कार्य होता है जिसे मजदूरों द्वारा किए जाने की अपेक्षा की जाती है। कटे हुए गन्ने की ढुलाई की व्यवस्था स्वयं कारखाने द्वारा की जाती है। इस ढुलाई का समय उसके बार बार चक्कर इसमें लगाए गए ट्रकों की संख्या और प्रतिदिन कटाई सफाई किए गए गन्ने की मात्रा पर निर्भर करते हैं। गन्ने की कटाई-सफाई का काम साधारण तौर पर सवेरे आरम्भ होता है और शाम को समाप्त होता है। इसलिए गन्ने के लदान का कार्य केवल शाम को आरम्भ होता है और पूरी रात जारी रहता है। इस प्रकार गन्ने की कटाई और सफाई और उसके ट्रकों में लदान के कार्य को दो भागों में बांटा जाना संभव नहीं है जिससे दूसरी जटिलताएं उत्पन्न हो जाएंगी। किसी एक समूह द्वारा कटाई-सफाई किए गए गन्ने को पिराई केवल तभी की जा सकती है जब उस गन्ने को ट्रकों में लाद दिया जाए और उसे कांटे पर ले जाया जाए। अत: कटाई सफाई करने वालों को ही उस गन्ने का लदान भी करना चाहिए ताकि उनके कार्य की विधिवत रूप से गणना हो सके। तथापि इसका यह अर्थ नहीं है कि उनसे यह कार्य किसी भी समय कराया जा सकता है। प्रबन्ध मण्डल का यह कर्तव्य बनता है कि वह यह देखें कि यदि मज़दूरों से यह अपेक्षा की जाएगी कि वे इस काम के लिए रुकें या लदान के लिए खेतों में वापस जाएं तो वे यह प्रबन्ध कर सकते हैं कि गन्ने का ट्रकों में लदान उसी समय के दौरान किया जाए जब उसकी कटाई और सफाई की जा रही है। इस प्रकार इसमे उनका जो समय लगता है उसकी गणना उसके दिन के दौरान किए गए उनके कार्य मे की जानी चाहिए जिसके लिए उन्हें यदि आवश्यक हो समयोपरि मज़दूरी का भुगतान किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में प्रबंध मंडल को इस अधिक निकासी के लिए भुगतान करना चाहिए जिसे वे रात के दौरान काम करा कर सुनिश्चित करना चाहते हैं और ढुलाई पर बचत भी करना चाहते हैं और मज़दूरों को कुछ न देकर बेवक्त काम करा कर उन पर काम का भार नहीं डालना चाहिए। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जिस तरीके से गन्ने की कटाई-सफाई की व्यवस्था की जाती है और कार्य को करने के लिए उद्योगों द्वारा खंड मज़दूरी प्रणाली अपनाई जाती है वह अन्तर्राज्यिक प्रवासी मजदूर अधिनियम के विशिष्ट उपबन्धों से मेल नहीं खाता है।

क्या ये मजदूर बंधुआ हैं ?

42. गन्ने की कटाई-सफाई के लिए जिसकी व्यवस्था ठेके की शर्तों के अनुसार की जाती है कार्य और रोजगार की

परिस्थितियों के बारे में अन्तिम परन्तु महत्वपूर्ण प्रश्न बाध्यता के तत्व का है यद्यपि यह छुपे रूप में होता है। इसमें लोगों के किसी समूह को एक निश्चित खंड मजदूरी के आधार पर गन्ने के खेतों में काम करने के लिए दूर के स्थानों से लाया जाता है उन्हें अपने स्थान से चलने से पूर्व चीनी उद्योग द्वारा अग्रिम के रूप में थोड़ी सी राशियां दी जाती हैं और उसके बाद जीवन निर्वाह के लिए नियमित रूप से अग्रिम राशि दी जाती है। भुगतान सत्र के अन्त में किया जाता है जब लेखे अन्तिम रूप से तय किए जाते हैं।

43. इस पूरे प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण लक्षण यह है कि दिया जाने वाला अग्रिम एक कोयता इकाई को मात्र जीवन निर्वाह के लिए ही पर्याप्त होता है। मेरी पूछताछ से यह प्रकट हुआ कि ऐसी कोयता ईकाइयां दालों और सब्जियों का विलासिता के रूप में सप्ताह में केवल दो बार ही उपभोग कर सकती हैं। उन्हें सब्जियां तेल और दूसरी आवश्यक वस्तुएं प्राप्त करने के लिए अपनी ज्वार का एक हिस्सा बेचना पड़ता है क्योंकि इन खर्चों को पूरा करने के लिए एक रुपया प्रतिदिन बहुत थोड़ा होता है। जिन कोयता इकाइयों में कुछ बच्चे होते हैं उनमें उन्हें दी गई ज्वार की वह मात्रा भी उस परिवार को नमक और मिर्च के साथ खाने के लिए "सूखी रोटी" उपलब्ध कराने के लिए भी पर्याप्त नहीं होती है तब एक सप्ताह में दो बार दाल और सब्जियों की बात ही क्या हो सकती है। जो मजदूरी हरेक पखवाड़े देय हो जाती है उनके भुगतान को रोके रखने का प्रत्यक्ष कारण यह होता है कि वे मजदूर स्वयं ही इसके लिए अनुरोध करते हैं जो मद्यपान और अन्य अनावश्यक चीजों पर अपने पैसे की फिजूलखर्ची होने की संभावना से बचना चाहते हैं और वे वापस अपने घर जाते समय कुछ बड़ी राशि अपने साथ ले जाना चाहते हैं।

44. बचत एक सराहनीय उद्देश्य है परन्तु यह अपने अस्तित्व को कीमत पर सराहनीय नहीं हो सकता है। यह प्रणाली स्वीकृत मानी जाती है और इस पर कोई भी व्यक्ति एतराज नहीं करता और विशिष्ट रूप से इसलिए एतराज नहीं किया जाता है क्योंकि यह प्रबन्ध मण्डल के लिए सुविधाजनक है। वे पूरे सत्र में इस मजदूर बल पर अपनी पकड़ रखते हैं क्योंकि उनके द्वारा बीच में काम रोक दिए जाने और अपनी कार्यकारी अनुसूची बिगड़ जाने की संभावना की जोखिम बरदाशत नहीं कर सकते हैं। जब मैंने मजदूरों से यह पूछताछ की कि उन व्यक्तियों के बारे में क्या होता है जो अपरिहार्य कारणों से बीच में छोड़कर चले जाते हैं तो मेरी यह पूछताछ निष्फल सिद्ध हुई। किसी ऐसी कोयता इकाई के लिए लेखा रखने की कोई प्रणाली नहीं है जो उस सत्र के केवल एक भाग के लिए उस कार्य दल में शामिल होती है। प्रतीत होता है कि कानून यह है कि यदि कोई कोयता अपरिहार्य कारणों से बीच में छोड़ जाता है तो वह उस समूह को आखिर में मिलने वाली कमाई में कोई दावा नहीं कर सकता है। उसे केवल उसी जीवन निर्वाह राशि पर सन्तोष करना होता है जिसे वह अपने सक्रिय रूप से सहयुक्त रहने की अवधि के दौरान प्राप्त कर सकता है। अतः इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि कोई भी कोयता बीच में छोड़ कर नहीं जाता है। सत्र के दौरान बीच में छोड़ कर जाने वाले व्यक्तियों के इक्के दुक्के मामले मजदूरों द्वारा उपर्युक्त ढांचे के अनुरूप कर लिए जाते हैं।

45. जैसा ऊपर पहले ही बताया जा चुका है कार्य करने के ये वर्तमान प्रबन्ध न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और अन्तर्राज्यिक प्रवासी मजदूर अधिनियम दोनों का ही उल्लंघन करते हैं। दूसरे शब्दों में इस मजदूरों को उतनी न्यूनतम मजदूरी नहीं मिलती है जो न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अनुसार उन्हें देय होती है और उन्हें दूसरे लाभों से भी वंचित किया जाता है जैसे उस अवधि की मजदूरी जब उन्हें काम नहीं मिला है और उस छुट्टी के समय का लाभ जिसे वे उस राज्य में प्रवृत्त कानून के उपबन्धों के अनुसार अर्जित करते हैं। चीनी उद्योग में काम करने वाले मजदूरों की जो हकदारी है वह स्पष्ट रूप से इस कानून के अधीन परिभाषित है और उसका निर्धारण उनके ठेके की तारीख और जिस अवधि के दौरान वे चीनी उद्योग के कार्य में हैं उसके आधार पर आसानी से किया जा सकता है। यह प्रबन्ध जिसके अधीन वे कार्य करते हैं जो भागतः उस मुकादम द्वारा हस्तांतरित करार द्वारा परिभाषित होता है और भागतः इस प्रणाली द्वारा स्वीकृत होता है, इस प्रकार से इन व्यक्तियों को ठेके की अवधि के लिए अपने काम पर रोके रखना है और उन्हें यह छूट नहीं होती है कि वे छोड़ कर चले जायें। सिवाय अपनी उस जोखिम पर जिसमें वे उस अवधि को अपनी पूरी कमाई खो बैठेंगे और अपने श्रम के प्रति फल के उन पूरे लाभों से वंचित हो जाएंगे, जो उन्हें कानून के अधीन मजदूरी के रूप में देय हैं। इसके परिणामस्वरूप इस प्रबन्ध में बन्धन की पुट है और इस पर स्पष्ट रूप से बन्धुआ मजदूरी प्रणाली उत्पादन अधिनियम के उपबंध लागू होते हैं।

इनका नियोजक कौन है ?

46. इस प्रबन्ध में, जिसे उद्योग के प्रबन्धकों ने अपनी सुविधा के लिए स्वयं को कानून की पकड़ से बचने के लिए और उसके उल्लंघन की किसी भी प्रकार की जिम्मेदारी अस्वीकार करते हुए, इस प्रश्न को पूर्ण रूप से भ्रम में डाल दिया गया है कि "नियोजक कौन है"। यह स्पष्ट है कि इस सारे कार्य चालन की व्यवस्था किसानों की मार्फत चीनी उद्योग करते हैं। इसके बारे में कोई विशेष बात नहीं है। ये चीनी उद्योग सहकारी समितियां हैं और सभी किसान उनके सदस्य हैं। यदि इस विशेष लक्षण की उपेक्षा की भी जाती है, और जिस क्षण यह स्वीकार किया जाता है कि उद्योग किसानों की ओर से कार्य करते हैं तो उन्हें वे सारी जिम्मेदारियां ग्रहण करनी पड़ेंगी जो एक नियोजक की होती है और उन्हें ही मुख्य नियोजक के रूप में माना जाएगा न कि किसानों को। यह स्थिति उच्च न्यायालय के निर्णय में उपदर्शित की गई है। इसके विपरीत, यह स्वीकार किया जाता है कि उद्योगों का इन मजदूरों के साथ कोई संबंध नहीं है चूंकि उनका ठेका

मुकादमों के साथ होता है जो एक निश्चित संख्या में मजदूरों को गन्ने की कटाई सफाई के लिए लाने का वचन देते हैं। अतः ये उद्योग व्यक्ति रूप में मजदूरों को नहीं मानते हैं परन्तु मुकदमों को मान्यता देते हैं, जो ठेकेदार हैं। यह तत्व, प्रत्यक्ष रूप से, पक्षपातपूर्ण है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसके परिणामस्वरूप चीनी उद्योग नियोजक हैं और वे सभी व्यक्ति उनके कर्मकार हैं जो गन्ने की कटाई सफाई के कार्य में लगाए गए हैं। तब चाहे इस स्पष्ट और असंदिग्ध संबंध को संदिग्ध करने के लिए उनके द्वारा कोई भी औपचारिक बहाना अपनाया गया हो। अतः यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी उद्योगों की है कि प्रचलित कानूनों के सभी उपबन्धों को पूरी तरह से लागू किया जाए और उनका कोई उल्लंघन किए जाने पर वे उनके विशिष्ट उपबंधों के अधीन कार्यवाही के भागी होने चाहिए।

निष्कर्ष

47. गुजरात में सहकारी चीनी मिलों द्वारा गन्ने की कटाई और सफाई के लिए लगाए गए मजदूरों के कार्य करने की परिस्थितियों के बारे में कुछ निष्कर्ष स्पष्ट और असंदिग्ध हैं उनका सार यथा निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है--

(1) गन्ने के खेतों में काम करते हुए कोई प्रवासी मजदूर जितनी दैनिक मजदूरी कमा पाता है वह न्यूनतम मजदूरी से बहुत थोड़ी है। यह न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के उपबंधों का स्पष्ट उल्लंघन है और खेद की बात यह है कि यह सहकारी संस्थाओं द्वारा किया गया है।

(2) संबंधित पक्षकारों द्वारा अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम के उपबन्धों का पालन नहीं किया गया है और उन्हें राज्यों द्वारा अधिरोपित नहीं किया गया है। इस संबंध में कुछ मुख्य बातें निम्नलिखित हैं--

(क) श्रम ठेकेदारों ने महाराष्ट्र राज्य में अपना रजिस्ट्रीकरण नहीं कराया है जहां से इन मजदूरों की भर्ती की जाती है और उन्होंने उन व्यक्तियों के नामों की सूची भी उस राज्य को नहीं दी है जिन्हें वे रोजगार के लिए गुजरात में ले गए हैं।

(ख) गुजरात सरकार द्वारा उन मुकादमों को अन्तरराज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम के उपबन्धों से छूट दी गई है जिन्हें ठेकेदार के रूप में समझा गया है और जिनके साथ चीनी उद्योग करार करते हैं। परन्तु सरकार ने उन्हें एक संघ (मुकादमों संघ) बनाने की अनुमति दी है जो उनकी ओर से काम करता है और उस अधिनियम के उपबन्धों के संबंध में औपचारिकताएं पूरी करता है। तथापि, प्रत्येक मुकादमों और प्रत्येक चीनी मिल द्वारा लगाए गए मजदूरों की सूची भी नहीं रखी गई है।

(ग) ठेके के अधीन इन मजदूरों को मजदूरी का भुगतान उस तारीख से लेकर नहीं किया जाता है जिस तारीख को इस ठेके पर हस्ताक्षर किए गए थे और उन्होंने नए रोजगार के लिए अपनी यात्रा आरम्भ की थी और जब तक सत्र के अन्त में उनका ठेका समाप्त हुआ था। इसके बजाए उन्हें खंड मजदूरी प्रणाली के अधीन लगाया जाता है।

(घ) इन मजदूरों को, "अनुबन्धित श्रमिकों" के लिए मान दण्डों के अनुसार, साप्ताहिक छुट्टियां और दूसरे लाभ नहीं दिए जाते हैं जैसे आकस्मिक छुट्टी चिकित्सा छुट्टी आदि। उन्हें एक पखवाड़े में केवल उस एक दिन का विश्राम मिलता है जिस दिन मिल सफाई के लिए बंद होती है। परन्तु उन्हें उस दिन का भी भुगतान नहीं होता है क्योंकि उनकी मजदूरी तो इस बात पर निर्भर करती है कि उन्होंने कितना काम किया है।

(ङ) उनके रहने की परिस्थितियां अमानवीय हैं और उसमें किसी भी प्रकार की कोई सुविधाएं नहीं होती हैं जिनकी अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम और अन्य श्रम कानूनों के अधीन परिकल्पना की गई है।

(3) इन मजदूरों को प्रतिदिन प्रति कोयता जिसमें दो या अधिक व्यक्ति होते हैं दो किलो ज्वार और दो रुपए अल्प मात्र की अग्रिम दी जाती है। जबकि उनकी कमाई का बकाया उद्योगों द्वारा उस कार्य सत्र के अंत तक अपने पास रखी जाती है जब हिसाब अंतिम रूप से तय किए जाते हैं। यह तरीका मजदूरी के भुगतान के संबंध में देश के कानूनों के अनुरूप नहीं है।

(4) कैम्प में लोगों के रहने की परिस्थितियां अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम के उदार उपबन्धों की न केवल उल्लंघनकारी ही है बल्कि वे मानव प्राणियों के लिए उपयुक्त रहन सहन के न्यूनतम मानक के अनुरूप भी नहीं हैं।

(5) सभी आयु वर्गों के उन बच्चों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है जो अपने माता पिता के साथ आते हैं, क्योंकि उनके लिए उन कैम्प स्थानों पर जहाँ उनके माता पिता लम्बे समय तक ठहरते हैं, कोई सुविधाएं प्रदान नहीं की जाती है, जैसे बच्चों के संरक्षण केन्द्र, बालवाडियां और स्कूल।

(6) यद्यपि, ये मजदूर उन्हें मिलने वाली खंड मजदूरी दर और अग्रिम के बारे में स्पष्ट होते हैं तथापि वे उन दूसरे लाभों के बारे में स्पष्ट नहीं होते हैं जिनके लिए वे हकदार हैं चाहे उनमें से कुछ उसी उद्योग में वर्षों से काम कर रहे हैं। इसके

परिणामस्वरूप उन लाभों में अन्तर जिन्हें उद्योग मजदूरों को देय मानते हैं और जो अन्य लाभ मजदूरों की उनकी मजदूरियों के अलावा प्राप्त होते हैं।

(7) मजदूर जिन औपचारिक और अनौपचारिक प्रबन्धों के अधीन काम करते हैं उनमें बाध्यता का एक तत्व होता है और उसका परिणाम यह भी होता है कि उन्हें श्रम के प्रतिफल के रूप में जो कुछ देय होता है वे उससे वंचित रह जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप उनमें बन्धन का एक पुट उत्पन्न हो जाता है और वे बन्धुआ मजदूरी प्रणाली (उत्सादन) अधिनियम के उपबन्धों के उल्लंघनकारी हो जाते हैं।

प्रबन्ध मण्डल का मानना

48. चीनी उद्योगों के अध्यक्ष और प्रबन्ध मण्डल के साथ मेरी चर्चा में निम्नलिखित महत्वपूर्ण मुद्दे उठाए गए थे—

(1) कार्य करने की परिस्थितियां घटिया होने की बात को एकदम स्वीकार कर लिया गया था।

(2) जहां तक न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के उल्लंघन का संबंध था प्रबन्ध मंडल ने अपने पक्ष की बात कही थी। उनका विशेष तर्क यह था कि यह वर्ष अपवाद वाली परिस्थितियों का वर्ष था जिसमें उन्हें उस किसी भी व्यक्ति को लगाना पड़ा था जो काम करने के लिए आया था। अभावग्रस्त क्षेत्रों से लाए गए व्यक्ति केवल भोजन पर कार्य करने के लिए तैयार थे और तब तक छोड़ने वाले नहीं थे जब तक वे उन्हें काम देने के लिए सहमत थे।

(3) प्रबन्ध मंडल उस खंड मजदूरी दर को बढ़ाने के लिए तैयार था बशर्ते इससे कोई दीर्घकालीन स्वीकार्य हल प्राप्त हो जाए। तथापि उन्होंने मजदूरों के संघटित होने के बारे में परेशानी की अपनी आन्तरिक भावनाएं प्रकट की थीं और उन्होंने यह बताया था कि उद्योग अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम की अनिवार्यताओं से मुक्ति पाने के लिए राज्य के अन्दर से ही भर्ती करने पर विचार कर सकते हैं और इस कार्य-चालन के लिए मजदूरों पर निर्भरता को कम करने के लिए मशीनों का प्रयोग आरम्भ कर सकते हैं।

(4) प्रबन्ध मंडल ने यह स्वीकार किया था कि रात के समय गन्ने की ढुलाई को जिसमें मजदूरों को प्रतीक्षा करनी पड़ती थी और रात को जागना पड़ता था, सुव्यवस्थित किया जा सकता है ताकि उनकी परिहार्य परेशानी दूर की जा सके।

(5) प्रबन्ध मंडल उन अवितरित मजदूरियों पर ब्याज देने के लिए भी तैयार थी जो मजदूरों को प्रति पखवाड़े देय होती थी।

(6) कैम्प स्थानों पर स्थायी प्रकार के आवास बनाने के लिए कुछ उद्योगों ने कैम्प के लिए स्थलों का आबंटन करने के लिए राज्य सरकार से आवेदन किया है। ये सुविधाएं हरेक मामले में प्रदान नहीं की जा सकती हैं, क्योंकि सत्र के दौरान मजदूरों को एक से अधिक स्थानों पर जाना होगा जहां पर वे एक सीमित अवधि तक ठहरेंगे।

(7) प्रबन्ध-मंडल ने यह दावा किया था कि दवाइयों, टेन्ट की सामग्री और एक कैम्प से दूसरे कैम्प में पहुंचाने के लिए कोई कटौतियां नहीं की गई थी। उन्होंने यह आश्वासन दिया था कि इन मुद्दों पर बेहतर तालमेल रखा जाएगा ताकि आने वाले वर्षों में इस चल रही गलत फहमी की कोई संभावना न रहे।

49. यह एक प्रशंसनीय कदम है कि उच्च न्यायालय ने एक आयोग की नियुक्ति की है जो गन्ने के कार्य में लगे मजदूरों के संगठनात्मक ढांचे की जांच करेगा और ऐसे उपाय सुझाएगा जो यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हों कि न्यूनतम मजदूरी-प्रवासी मजदूरों के लिए कार्य की परिस्थितियों, आदि से संबंधित कानूनों का उनकी भावनाओं के अनुसार पूर्ण रूप से पालन किया जाए। वर्तमान प्रबन्धों की तरफदारी कोई भी नहीं कर सकता है। विभिन्न कानूनों के उपबन्ध भी काफी स्पष्ट हैं और उनमें मजदूरों की भर्ती से लेकर उनके परिवहन और खेतों में कार्य करते तक की प्रत्येक अवस्था के लिए विस्तृत कार्य विधि विहित की गई है। वास्तव में ये उपबन्ध इतने उदार हैं जैसे आवास स्तर, जन सुविधाओं और सामाजिक सेवाओं से संबंधित उपबन्ध कि वहां सक्रिय लोग भी यह स्वीकार करते हैं कि उन्हें पूरा करना कठिन है। पूरा होने पर किसी भी स्तर से श्रमिकों के लिए यह एक स्वर्ग समान होगा। यह भी संभव है कि प्रबन्ध मंडल इस दिशा में धीरे धीरे एक अवस्था से दूसरी अवस्था में गतिमान होगा और गन्ने की कटाई तथा सफाई के लिए नियुक्त किए गए मजदूरों की स्थिति आने वाले वर्षों में सुधर जाएगी। तथापि मूल समस्या न्यूनतम मजदूरी के भुगतान की है। इस संबंध में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम के प्रावधानों, जिन्हें कार्यकारी प्राधिकारियों द्वारा अपनाया गया था और कानूनी न्यायालयों द्वारा अनुमोदित किया गया था के बीच उनके कार्यचालन रूप के संबंध में बहुत बड़ा अन्तर है। जहां तक न्यूनतम मजदूरी अधिनियम का संबंध है कोई ऐसी वस्तुपरक कसौटी होनी चाहिए जिससे यह निश्चित हो

सके कि मजदूरों द्वारा कार्य का न्यूनतम मानदंड पूरा किया गया है। उच्चतम न्यायालय ने भी राजस्थान के मामले में इस विचार का अनुमोदन किया था, यद्यपि, उस राज्य में अकाल की दृष्टि से कार्य के शिथिल मानदंड अपनाए गए हैं। जैसे पहले बताया गया है इस मुद्दे पर अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम के उपबन्ध असंदिग्ध हैं। उक्त अधिनियम के अनुसार न्यूनतम मजदूरियां प्रतिदिन के कार्य के आधार पर होनी हैं और यदि कोई व्यक्ति अधिक घंटे तक कार्य करता है तो उसे समयोपरि मजदूरी दी जानी चाहिए। इन उपबन्धों की जांच कानूनी न्यायालय में पृथक से नहीं की गई है, यद्यपि, गुजरात उच्च न्यायालय का निर्णय इस विचार की अप्रत्यक्ष रूप से पुष्टि करता है।

50. इन दो प्रकार के कानूनी उपबन्धों के बीच इस भिन्नता की दृष्टि से यह आशा करना युक्तियुक्त है कि चीनी उद्योग उस राज्य के अन्दर से ही भर्ती किए गए मजदूरों पर निर्भर कर सकते हैं। यह भी संभव है कि यदि भुगतान प्रतिदिन के आधार पर किया जाता है तो वे उन स्थानीय मजदूरों से काम करवा सकते हैं जिन्हें केवल दिन भर के लिए लगाया जा सकता है जिनके लिए किसी एक अवधि तक रोजगार को निरन्तर रखने की बाध्यता नहीं होगी जैसा प्रवासी मजदूरों के मामले में होता है। प्रबन्ध-मण्डल इस बात पर विचार कर सकता है कि बन्धुआ मजदूरों के बल, जिसे वह उनके ठेके की अवधि के सभी दिनों के लिए भुगतान करने के लिए बाध्य हैं, और स्थानीय मजदूर बल जिसे वह अपनी आवश्यकताओं के अनुसार नियुक्त कर सकता है, यद्यपि, अपनी कार्यसूची में अनियमितता के थोड़े जोखिम के साथ दोनों बलों में से उसके लिए कौन सा फायदे का हो सकता है। इस बाद वाले मामले में अनुभव के साथ-साथ कुछ ऐसे प्रबन्ध संभव हो सकते हैं जिनसे अधिक नियमितता सुनिश्चित हो सकती है, यद्यपि वह उसी स्तर की नहीं होगी जैसी प्रवासी मजदूरों के मामले में होती है। इस प्रबन्ध में चीनी उद्योग प्रतिदिन न्यूनतम मजदूरी देने के लिए बाध्य नहीं होंगे बल्कि वे खण्ड मजदूरी प्रणाली अपना सकते हैं जिसे न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के उपबन्धों के अनुरूप किया गया है।

मुकादम की मार्फत ठेके से सहकारिता तक

51. दक्षिण गुजरात में गन्ना मजदूरों के सभी संगठनात्मक ढांचों और कार्य के अनौपचारिक प्रबन्धों के बारे में विस्तार से पहले चर्चा की जा चुकी है। उस विशेष स्थिति में प्रयोग करने के लिए किसी अन्य अनौपचारिक कानूनी ढांचे के अभाव में उनकी कार्य करने के परिस्थितियों को नियमित करने के लिए अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम पर निर्भर करना पड़ता है। इस ढांचे में एक श्रम ठेकेदार की परिकल्पना की गई है जो मजदूरों को उनके गांव से भर्ती करता है उन्हें कार्य स्थल पर लाता है। मुकादम को इस कार्य को करने वाले के रूप में समझा जाता है और इसलिए उसे औपचारिक रूप से श्रम ठेकेदार के रूप में स्वीकार किया जाता है। मुकादम श्रम ठेकेदार नहीं है बल्कि वह मजदूरों के एक छोटे समूह का नेता होता है जो काम के लिए बाहर आने का निश्चय करता है। अधिकांश मामलों में वह एक साधारण मजदूर होता है। परन्तु चूंकि वह पढ़ना लिखना नहीं जानता है वह कोई रिकार्ड नहीं रखता है यह जिम्मेदारी विभिन्न रूपों में उद्योग के प्रबन्ध मंडल द्वारा ग्रहण की जाती है। इसी प्रकार कोयता मजदूरों के काम की व्यवस्था भी एक सच्ची सहकारिता की व्यवस्था है जिसमें सामाजिक सुरक्षा की प्रणाली निर्मित होती है जिसमें बीमारी और व्यक्तिगत कार्य के कारण काम से गैरहाजिर रहने का समायोजन होता है। इस अवस्था में मूल प्रश्न यह है कि एक औपचारिक ढांचे के संदर्भ में, जिसमें अनौपचारिक प्रणाली वाले तत्वों के लिए पूर्ण रूप से उपबन्ध नहीं होता है, लोगों के कार्य की अनौपचारिक प्रणाली कितनी सुसंगत है। कार्य की अनौपचारिक प्रणाली की व्यवस्था किसी समूह के नेता के अधीन की जाती है जो ठेकेदार नहीं होता है और जिसमें आपसी सहायता के माध्यम से सामाजिक सुरक्षा का उपबन्ध निर्मित होता है और बीमारी व व्यक्तिगत तथा सामाजिक बाध्यताओं के कारण काम से गैरहाजिर रहने के लिए उपबन्ध होता है। कार्य करने वाली प्रत्येक इकाई को उस सत्र के अन्त में एक समान मजदूरी मिलती है चाहे उस अवधि के दौरान उसके सामने जो भी दुख-सुख रहा हो। यदि अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम के उपबन्धों के पालन करने के लिए आग्रह किया जाता है तो मुकादम को एक छोटे से ठेकेदार के रूप में कार्य करना होगा। उसे कानून के अधीन यथापेक्षित आवश्यक रिकार्ड भी रखने होंगे और महाराष्ट्र सरकार को इसकी सूचना देनी होगी और गुजरात सरकार को भी मजदूरों की कार्य दिवसों को उपस्थिति और इसी प्रकार की अन्य सूचनाओं के बारे में जानकारी देनी होगी। इससे यह स्पष्ट है कि इस समूह का नेता मुकादम जो अधिकांशतः अशिक्षित व्यक्ति होता है कार्यों का निर्वहन करने के लिए योग्य नहीं होगा। उनमें से कुछ जो शिक्षित होते हैं इस नए कार्य को ग्रहण कर सकते हैं और स्वयं ठेकेदार बन सकते हैं। यह भी संभव है कि दूसरे वाक्पटु समूह अपनी पढ़ने की योग्यता के कारण इस प्रणाली में प्रविष्टि हो जाएं। तब यदि भुगतान प्रतिदिन के आधार पर किया जाना है तो श्रम ठेकेदार को एक उपस्थिति रजिस्टर भी रखना होगा। इससे यह स्पष्ट है कि जिस दिन कोई व्यक्ति काम से अनुपस्थित होगा वह उस दिन के लिए मजदूरी का हकदार नहीं होगा। इस तरह मजदूरों की वर्तमान अनौपचारिक सहकारी व्यवस्था समाप्त हो जाएगी और औपचारिक श्रम ठेकेदार प्रणाली इसका स्थान ले लेगी।

एक सम्भव विकल्प

52. इस स्थिति में सामाजिक कार्यकर्ताओं के सामने और राज्य के सामने भी, एक बड़ा मुख्य प्रश्न है। इस वर्तमान प्रणाली के मुख्य लाभ ये हैं—

(1) इस प्रणाली में मजदूर लोग समूहों में आपसी सहयोग और विश्वास के साथ काम करते हैं और उनकी व्यवस्था में सहकारिता की वास्तविक भावना व्याप्त होती है।

(2) मजदूरों और नियोजकों के बीच कोई ठेकेदार नहीं होता है। उनका अपना नेता ही जो प्रायः स्वंय भी एक मजदूर होता है, प्रबन्ध मंडल और श्रमिकों के बीच एक सम्पर्क कड़ी के रूप में कार्य करता है। एक तरह से इसे स्व–प्रबंध की स्थितियों के अनुरूप होना कहा जा सकता है।

(3) मजदूर समूह के प्रत्येक सदस्य को अपने नाम की शर्तों और परिस्थितियों के बारे में पूर्णरूप से जानकारी होती है और प्रत्येक मजदूर को उसे मिलने वाली सभी राशियों के बारे में स्पष्ट होता है। इसका परिणाम यह होता है कि प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि उस समूह का सदस्य होने के रूप में वह क्या योगदान करता है और उसके बदले में कितना प्राप्त करने की आशा कर सकता है। इसमें कोई ऐसी गोपनीयताएं नहीं है जिनसे उस नेता को अतिरिक्त शक्ति प्राप्त हो सकती है।

(4) इसमें सामाजिक सुरक्षा की एक निर्मित प्रणाली होती है जो एक अवधि में विकसित हुई परम्पराओं द्वारा संचालित होती है और उस कार्यकारी बल के सभी सदस्यों द्वारा स्वेच्छा से स्वीकार की गई होती है।

53. इस वर्तमान प्रणाली की एक बड़ी कमी यह है कि इसमें व्यक्ति रूप में मजदूरों और चीनी प्रबन्ध–मंडल के बीच एक सीधे ठेकेदारी संबंध के अभाव में न्यूनतम मजदूरी और समयोपरि मजदूरी संबंधी उपबन्ध लागू नहीं किए जा सकते हैं। जिसकी केम्पों में रहने वाले प्रवासी मजदूरों के लिए विशेष रूप से परिकल्पना की गई है। इसके बजाय प्रबन्ध मंडल ने खंड कार्य की प्रथा अपनाई है। इसके अतिरिक्त कानून के दूसरे औपचारिक उपबन्ध जैसे रजिस्ट्रीकरण, अधिसूचना इत्यादि जिनका आशय अन्तिम रूप से मजदूरों के कल्याण का सुरक्षण करना और उसे अग्रसर करना होता है, बिना लागू किए रह जाते हैं। परन्तु एक बार औपचारिक प्रणाली अपना लिए जाने पर न्यूनतम मजदूरी के भुगतान के लिए आग्रह करना आसान होगा परन्तु इसका अर्थ यह भी होगा कि वर्तमान अनौपचारिक व्यवस्था खत्म हो जाएगी। इस होने वाली तबदीली के निम्नलिखित आवश्यक परिणाम प्रतीत होते हैं —

(1) इसमें एक श्रम ठेकेदार उत्पन्न हो जाएगा और मजदूरों को उसके नियन्त्रण में काम करना होगा।

(2) चूंकि मजदूर समूहों की अनौपचारिक कार्य प्रणाली का स्थान औपचारिक प्रणाली ले लेगी अतः ठेकेदार के अधीन उस समूह के कार्य–चालन में लिखित रूप और अभिलेख की कुछ रहस्य वाली पुट उत्पन्न हो जाएगी और उस सीमा यक मजदूर पूर्ण रूप से ठेकेदार के बंधन के अधीन हो जाएंगे और उस समूह के साझेदारों के रूप में नहीं रहेंगे जो उन्हीं में से एक के नेतृत्व में काम करता है।

(3) मजदूर सामाजिक सुरक्षा के केवल उन्हीं लाभों के लिए हकदार होंगे जो कानून के अधीन ग्राह्य होंगे, जो बिल्कुल ही नगण्य होते हैं। इस प्रकार उसे उन्हें आपसी बचन–बद्धता और विश्वास पर आधारित समूह की सुरक्षा के लाभ की हानि होगी।

(4) इसमें उत्पादकता के प्रश्न भी उत्पन्न हो सकते हैं, विशेष रूप से जब मजदूर ठेकेदार के अधीन कार्य करते हैं। इससे विरोध उत्पन्न हो सकते हैं जिसके परिणामस्वरूप कुछ रियायतें मंजूर हो सकती हैं और कुछ समझौते हो सकते हैं जैसा न्यूनतम मजदूरी के मामले में होता है।

54. इस प्रकार नए कानून के औपचारिक रूप से लागू होने से मजदूर जिस एक मात्र सुभिन्न लाभ की आशा कर सकते हैं वह यह है कि उनकी मजदूरी में एक उल्लेखनीय वृद्धि हो जाएगी और वह निम्न खण्ड दर से बढ़कर प्रतिदिन की न्यूनतम मजदूरी हो जाएगी जैसा कानून के अधीन है। यह लाभ भी कितना वास्तविक होगा इसकी भविष्यवाणी भी आसानी से नहीं की जा सकती है। इस संबंध में उस मामले में भी, जिसे जोश के साथ लड़ा गया था और जिसमें मजदूरों के हक में युक्तियुक्त रूप से निर्णय दिया गया था, मजदूरी के बारे में उस निर्णय में एक घोषणा निर्णायक सिद्ध हुई थी। न्यायालय ने यह आदेश दिए थे कि सभी मजदूरों को सभी कार्य दिवसों के लिए न्यूनतम मजदूरी दी जानी चाहिए। परन्तु मुकादम ने यह लेखा नहीं रखा था और इसलिए कोई भी यह नहीं बता पाया था कि किसी व्यक्ति ने कितने दिन काम किया था। यह संभव हो सकता है कि नियोजकों ने अपने अभिलेख रखे हों जिनमें मजदूरों के कार्य दिवसों की संख्या बहुत ही कम दर्शाई गई हो। इससे यह संभव है कि लोगों को इस निर्णय से कोई लाभ नहीं होता क्योंकि अभि-

लेख उद्योगों के पास था । इसलिए इस संबंध में एक समझौता करना पड़ा था जिसमें मजदूरों के प्रतिनिधि मजदूरी की खण्ड दर 22 रु० से बढ़ाकर 29 रुपए प्रति मीटरी टन स्वीकार करने के लिए सहमत हो गए थे। इस बात पर भी सहमति की कई थी कि प्रबंध-मण्डल मजदूरों को अवितरित रही उस राशि पर 14 प्रतिशत का ब्याज देगा जो उद्योग के प्रबंध-मंडल के पास उनकी जमा थी। इसी प्रकार हाजिरी इत्यादि की समस्याएं भी आगे आने वाले वर्षों में उठ सकती है जिनसे चीनी उद्योगों की कार्य कुशलता प्रभावित हो सकती है और जो परिणामस्वरूप उनकी भुगतान क्षमता को प्रभावित कर सकती हैं। अतः यह संभव है कि कानून के उपबन्धों को उनमें निहित भावना की कोई परवाह किए बिना अक्षरशः लागू किए जाने के लिए आग्रह करने पर शुद्ध लाभ बहुत अधिक नहीं हो सकता है और इसमें वर्तमान कार्य प्रणाली की कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण स्वस्थ परम्पराओं का घाटा हो सकता है। इन सभी बातों के होते हुए भी कानून को लागू किया जाना है और इसलिए प्रश्न यह है कि क्या इस कानून को ऐसे तरीके से अपनाया जा सकता है कि इससे मजदूरों को आशयित लाभ मिल जाएं और मजदूरों की सहकारी रूप से कार्य करने की वर्तमान प्रणाली भी जारी रह सके।

55. अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम में वर्तमान प्रणाली की तुलना में लाभ का उपबन्ध केवल न्यूनतम मजदूरी और समयोपरि मजदूरी का है। उस कानून के अन्य औपचारिक उपबन्धों का वास्तव में कोई महत्व नहीं है और वर्तमान प्रणाली, यदि इसे उपयुक्त रूप से मान्यता दी जाए और कार्य चालित किया जाए तो, हरेक दृष्टि से उनसे श्रेष्ठ सिद्ध होगी। न्यूनतम मजदूरी और समयोपरि मजदूरी के उपबन्ध अभी कार्यान्वित नहीं किए गए हैं और न ही उनके कार्यान्वयन के लिए कोई ढांचा तैयार किया गया है। अतः सैद्धान्तिक रूप से यह कहा जा सकता है कि नियोजक की यह जिम्मेदारी होगी कि वह यह देखें कि भर्ती किए जाने वाले हरेक मजदूर को उस दिन के लिए काम दिया जाए और उसकी उत्पादकता अपेक्षित सीमा तक हो। इस प्रकार इसमें यदि किसी भी तरह से कोई कमी रहती है तो उसके लिए मजदूर की कोई जिम्मेदारी नहीं होगी क्योंकि वह जिस अवधि तक ठेके के अधीन रहता है उसके हरेक दिन के लिए पूरी मजदूरी पाने के लिए हकदार है। तब यह काफी संभव है कि नियोजक कोई ऐसी युक्ति अपनाएं जिससे वे इस अनिवार्यता से मुक्त हो सकें। इसके लिए विशिष्ट रूप से उस राज्य के अन्दर से ही भर्ती करने से उन्हें एक ऐसी युक्ति प्राप्त होगी जिससे मजदूरों के बीच एक अन्तर उत्पन्न हो सकेगा। परन्तु इन दो प्रकार के मजदूरों के बीच स्पष्टतः केवल इस कारण से ही अन्तर नहीं रखा जा सकता है कि उनमें से कुछ महाराष्ट्र से आए हैं और कुछ अन्य गुजरात के हैं। इसके अतिरिक्त उस आदिवासी क्षेत्र को विभक्त करने वाली राज्य की सीमाएं, जो उत्तर में उदयपुर से लेकर दक्षिण में थाणे तक और पश्चिम में वलसाद से लेकर पूर्व में खानदेश तक फैला है, कृत्रिम हैं और उन्हें वास्तव में मजदूर भी स्वीकार नहीं कर सकते हैं। तब मजदूरों का हित साधन तभी हो सकता है जब उनके काम का मानदण्ड वैज्ञानिक रूप से निर्धारित हो जाए जिससे वे न्यूनतम मजदूरी के लिए हकदार होते हैं। यही विचार न्यूनतम मजदूरी अधिनियम संबंधी बहुत से विवादों में न्यायालय द्वारा भी ग्रहण किया गया है। प्रवासी मजदूरों के लिए भी यही विचार स्वीकार किया जा सकता है, यद्यपि, गन्ने के खेतों में कार्य की विशेष परिस्थितियों के लिए उपयुक्त अनुमति देते हुए दैनिक मजदूरी और समयोपरि मजदूरी का पालन किया जाना चाहिए।

गन्ने की कटाई के कार्य के विशेष लक्षण

56. यह आवश्यक है कि गन्ने के खेतों में काम करने के लिए लाए गए ठेके के मजदूरों पर इस दृष्टि से विचार किया जाए कि खण्ड मजदूरी ढांचे में और पारस्परिक हित और सहकारिता की भावना के साथ काम करने की उनकी प्रणाली में सभी सुसंगत तत्व शामिल हो जाएं। उनके काम के कुछ लक्षण निम्नलिखित हैं जिन पर इस संबंध में ध्यान दिया जाना है —

(1) ये गन्ना मजदूर अपने घरों से दूर कैम्पों में काम करते हैं।

(2) कैम्पों में रह कर कार्य करने का अनिवार्य रूप से अर्थ अनिश्चित प्रकार के रहन-सहन और ऐसे रहन-सहन से प्रासंगिक कठिनाइयों का जीवन व्यतीत करना होता है।

(3) कानून में यथा विहित न्यूनतम सुविधाओं से कैम्प जीवन के प्रतिकूल प्रभाव खत्म हो जाने की आशा नहीं की जा सकती है और इसलिए ऐसी सुविधाएं पूर्ण रूप से दिए जाने के बाद भी कैम्प में रहने वाले व्यक्ति अतिरिक्त क्षतिपूर्ति भत्ते के लिए हकदार होने चाहिएं।

(4) प्रत्येक चीनी मिल के कार्यचालन का क्षेत्र विस्तृत होने की दृष्टि से मजदूरों का संचालन एक ऐसे केन्द्रीय कैम्प स्थल से किए जाने की आशा नहीं की जा सकती है जहां सभी सुविधाएं प्रदान की जा सकती हैं। उन्हें एक अस्थाई अवधि के लिए छोटे कैम्पों में भी जाना होगा। इसके परिणामस्वरूप इन मजदूरों के काम की परिस्थितियां उस समय भी कठिन होंगी जब एक अस्थाई कार्य स्थल से उनके संचालन के मुकाबले में एक केन्द्रीय कैम्प से उनका संचालन किया जाता है। अतः ऐसे अस्थाई कैम्प स्थलों में कार्य करने वालों को पर्याप्त रूप से क्षतिपूर्ति करनी होगी।

(5) चीनी मिलों का कार्य चालन उस समय के सिवाय अविराम चलता रहता है जब वे केवल सफाई के लिए और किसी खराबी के कारण बंद होती हैं। इसलिए ये मजदूर वह साप्ताहिक छुट्टी भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं जिसकी साधारण रूप से सभी प्रतिष्ठानों में आशा की जाती है। इस प्रश्न के दो पहलू हैं—प्रथम यह है कि ये मजदूर 6 दिन के कार्य के लिए एक अतिरिक्त मजदूरी के लिए हकदार होने चाहिएं और इन्हें क्षतिपूर्ति कार्य भत्ता इस तथ्य के कारण से मिलना चाहिए कि वे एक पखवाड़े या ऐसी अवधि के लिए निरन्तर कार्य करते हैं जिसका अर्थ यह होता है कि उनके कार्य की प्रकृति अधिक श्रमसाध्य होती है।

(6) इस समय किसी भी प्रकार के कारण से जैसे मामूली बीमारी दुर्घटना इत्यादि के कारण से, छुट्टी के लिए कोई उपबंध नहीं है। परन्तु इन सभी बातों की पूर्ति अनौपचारिक सामाजिक सुरक्षा प्रणाली के माध्यम से हो रही है। ऐसे सभी तथ्यों की पूर्ति के लिए एक उपयुक्त भत्ता देने की प्रणाली तैयार की जा सकती है जिसके लिए वे किए गए कार्य की मात्रा का उनकी नियुक्ति की कुल अवधि के आधार पर हकदार होने चाहिएं।

(7) गन्ने की कटाई और सफाई का कार्य खेतों और अन्य स्थानों के साधारण कार्य की तुलना में वैसे भी एक श्रम साध्य काम है। इसमें विभिन्न अवसरों पर रात के दौरान भी कार्य करना पड़ता है जैसे गन्ने का लदान। ये दोनों बातें गन्ना मजदूरों के आधारभूत मजदूरी ढांचे में शामिल की जानी चाहिएं।

मजदूरी निर्धारण के लिए कोयता को एक इकाई के रूप में माना जाना

57. मजदूरी ढांचे का सुझाव देने के लिए आगे बढ़ने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक होगा कि न्यूनतम मजदूरी के लिए गन्ने के खेतों में कार्य की इकाई कोयता है जिसमें सामान्य रूप से पति और पत्नि शामिल होते हैं। कोयता के दो सदस्यों के कार्य की केवल प्रकृति ही भिन्न नहीं होती है अपितु जैसा पहले बताया गया है उनके कार्य की प्रणाली भी भिन्न होती है। इसलिए कानून के अनुसार एक व्यक्ति मजदूर की अपेक्षा एक कोयता इकाई के लिए मजदूरी ढांचे को अनुकूल बनाना बेहतर होगा। ये दो व्यक्ति पूरक कार्य में लगे होते हैं जिन्हें एक साथ मिलाकर काम की मात्रा की एक इकाई बनती है।

गन्ने की कटाई-सफाई के लिए मजदूरी का निर्धारण करने के लिए कार्य विधि

58. यदि उपर्युक्त सिद्धांतों को स्वीकार कर लिया जाता है तो गन्ने के खेतों में मजदूरी ढांचे के निर्धारण के लिए निम्नलिखित कार्य विधि का सुझाव स्वतः ही उत्पन्न होगा—

(1) काम की उस मात्रा का निर्धारण करने के लिए एक प्रयोग किया जाना चाहिए जिसे एक औसत कोयता इकाई 8 घंटे के एक कार्यदिवस में आधे घंटे की छुट्टी करके पूरा करने में समर्थ हो सकती है। यह निर्धारण सर्वोत्तम मजदूरों के संबंध में नहीं किया जाना चाहिए बल्कि साधारण मजदूरों के संबंध में किया जाना चाहिए ताकि कोई भी मजदूर पीछे न रहे और न्यूनतम मजदूरी से कम न कमाए।

(2) ऊपर मद (1) के अधीन प्रयोग के आधार पर एक मीटरी टन गन्ने की कटाई-सफाई के लिए अपेक्षित कार्य के घंटों की संख्या निश्चित की जानी चाहिए।

(3) चूंकि गन्ने के लदान का कार्य भी एक कोयता द्वारा किए गए कार्य का एक अभिन्न अंग होगा, अतः एक मीटरी टन गन्ने का लदान करने में कितना समय लगता है इसे भी पृथक में ज्ञात किया जाना चाहिए। चूंकि लदान का कार्य एक पृथक कार्य है और लोगों को विशेष रूप से उस कार्य के लिए रात के समय जाना होता है, अतः इसे विशेष महत्व दिया जाना चाहिए और चूंकि इस में कैम्प स्थल से खेत पर विशेष रूप से जाना पड़ता है, अतः इस प्रयोजन के लिए एक भत्ता देना भी आवश्यक होगा। इस प्रकार एक मजदूर को एक मीटरी टन गन्ने की कटाई-सफाई में जो समय लगता है उसमें उपर्युक्त मद (2) और (3) में आंके गए घंटे शामिल होंगे।

(4) यद्यपि साधारण तौर पर मजदूर 8 घंटे के कार्य के लिए न्यूनतम मजदूरी के लिए हकदार होंगे, तथापि गन्ने की कटाई-सफाई के कार्य की प्रकृति श्रमसाध्य होने की दृष्टि से उन्हें 25 प्रतिशत का विशेष भत्ता भी दिया जाना चाहिए। इस प्रकार एक कोयता के लिए जो दर निर्धारित की जाए वह गन्ने की कटाई-सफाई के लिए एक आधारभूत दर के रूप में मानी जानी चाहिए।

(5) वह कोयता ऊपर दर्शाई गई आधारभूत दर से ऊपर और अतिरिक्त एक विशेष भत्ते के लिए निम्नलिखित आधार पर हकदार होना चाहिए —

(क) कैम्प जीवन के लिए क्षतिपूर्ति भत्ता,

(ख) गौण कैम्पों के माधम से कार्य करने के लिए अतिरिक्त क्षतिपूर्ति भत्ता,

(ग) कुल मजदूरी बिल के 6 प्रतिशत की दर से छुट्टी क्षतिपूर्ति भत्ता,

(घ) अन्य आकस्मिकताओं के लिए कुल मजदूरी बिल के 6 प्रतिशत की दर से अतिरिक्त छुट्टी भत्ता।

59. गन्ने की कटाई-सफाई के लिए आधारभूत दर में सभी भत्ते जोड़े जाने के बाद जो राशि आती है उसे कटाई और सफाई किए गए गन्ने के लिए कार्य चालन मजदूरी दर के रूप में माना जा सकता है। चूंकि ये मजदूर अनौपचारिक समूह में काम करते हैं, इस कार्य चालन दर को इस रूप में समझा जाता है कि इसमें पर्याप्त रूप से उन सभी तत्वों

की पूर्ति होगी जो किसी संगठन में एक औपचारिक कार्य-प्रणाली में अपेक्षित होते हैं। तथापि, इसमें केवल दो प्रश्न हैं जिनका समाधान होना शेष रहेगा। प्रथम महत्वपूर्ण प्रश्न उस अवधि के दौरान भुगतान के संबंध में है जो उस समय से आरम्भ होती है। जब मज़दूर से सम्पर्क किया जाता है और उस समय समाप्त होती है जब वह सत्र के अंत में कार्य समाप्त करता है। इस समय वह इस अवधि के लिए केवल एक जीवन-निर्वाह भत्ते के लिए हकदार होता है। जहां तक इस अवधि का संबंध है, सर्वोत्तम तरीका है होगा कि इस कार्य के लिए अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक अधिनियम के अनुसार न्यूनतम मज़दूरी का भुगतान किया जाए। इस प्रकार ठेके की इस पूरी अवधि में दो भाग सम्मिलित होने समझे जाने चाहिएं, एक भर्ती की तारीख़ से काम शुरू होने की तारीख़ तक, और दूसरा, उसके बाद खेत में कार्य करने की अवधि। पहली स्थिति में मजदूर न्यूनतम मज़दूरी के लिए हकदार होंगे परन्तु दूसरी अवधि के दौरान, जैसा पहले चर्चा की जा चुकी है, परिस्थितियों के अनुसार खंड मज़दूरी प्रणाली के अधीन रहेंगे। प्रथम अवधि के दौरान नियोजकों को यह छूट होगी कि वह मज़दूरों को किसी भी काम में गन्ने के खेतों में या अन्य जगह लगा सकता है। तथापि, यह वांछनीय होगा कि राज्य सरकार द्वारा ऐसे कार्यों की सूची तैयार की जाए ताकि बाद में इस आधार पर किसी विवाद के लिए कोई अवसर उत्पन्न न हो।

60. दूसरा प्रश्न मुकादम के पारिश्रमिक के बारे में है। अधिकांश मामलों में वह एक साधारण मज़दूर होता है परन्तु वह अपने समूह के मज़दूरों के कुल मज़दूरी बिल के 10 प्रतिशत कमीशन के लिए हकदार भी होता है। यह वांछनीय होगा कि मुकादम को धीरे-धीरे पूर्ण अधिकार प्राप्त श्रम ठेकेदार के रूप में अनुमति दिए जाने की अपेक्षा उसे एक मज़दूर और उस समूह का एक अंग ही रहने दिया जाए। ठेकेदार के लिए चिह्नित किया गया 10 प्रतिशत का कमीशन उस समूह को मिलना चाहिए और यह बात उस समूह पर ही छोड़ दी जानी चाहिए कि वही यह निर्णय करें कि उनके नेता को कितना पारिश्रमिक मिलना चाहिए। यह परिकल्पना भी की जा सकती थी कि यह अतिरिक्त भत्ता उस पूरी अवधि के लिए एक मज़दूर को मिली मज़दूरी से अधिक नहीं होना चाहिए। इससे यह सुनिश्चित होगा कि यदि नेता स्वंय भी काम नहीं करता है तो उसे इतना मिल सकेगा जितना उस समूह के किसी अन्य मज़दूर को मिलता है। परन्तु यदि वह काम करता है तो उसका पारिश्रमिक उस समूह के अन्य मज़दूर की मज़दूरी से दुगुना भी हो सकता है।

गन्ने की कटाई-सफाई करने वाले मज़दूर सहकारी समितियों के सदस्य के रूप में

61. यद्यपि, उपर्युक्त उपायों से गन्ने की कटाई-सफाई करने वालों की परिस्थितियां पर्याप्त रूप से सुधर जाएंगी तथापि, इस समस्या पर एक व्यापक परिप्रेक्ष्य विचार करना आवश्यक होगा। गन्ना मिलों की सहकारी समितियों की सदस्यता अधिकांश रूप से उन किसानों तक सीमित है जो गन्ने का उत्पादन करते हैं। परन्तु इन लोगों को भी जो गन्ने की कटाई-सफाई करने के लिए आते हैं और वर्ष में छह से सात महीने तक बहुत कठिन परिस्थितियों में काम करते हैं, चीनी उत्पादन के सम्पूर्ण कार्यविधि में भागीदारों के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। वे अपना श्रम प्रदान करते हैं। यदि गन्ने की कटाई-सफाई करने वालों को भी चीनी मिलों को चलाने वाली सहकारी समितियों के सदस्यों के रूप में सूचीबद्ध कर लिया जाए तो यह इस दिशा में एक अच्छा माहौल और महत्वपूर्ण कदम होगा। इस समय श्रम के क्षेत्र में मूल समस्या नियमितता बनाए रखने और उद्योग की आवश्कताओं के लिए उनके उपलब्ध होने की है। वर्तमान समय में इस समस्या से अपक्व रूप से निपटा जा रहा है जैसा इस संबंध में पहले विस्तारपूर्वक चर्चा की जा चुकी है। गन्ना उद्योग भी स्थानीय मज़दूरों के मुकाबले प्रवासी मज़दूरों पर निर्भर करके ठेकेदारों की पद्धति अपना रहे हैं। यह बात सच है कि मज़दूरों की आवश्यकता बढ़ जाती है और इतनी अधिक हो जाती है कि उसे केवल मजदूरों को बाहर से लाकर ही पूरा किया जा सकता है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि यह नियमितता केवल ऐसे तरीकों से ही प्राप्त की जा सकती है जैसे मज़दूरियों का नियमित रूप से भुगतान न करना और ठेके की अन्य ऐसी बाध्यताएं जिनसे मजदूरों की स्वतंत्रता सीमित होती है। इसका बेहतर विकल्प यह होगा कि इस संबंध में एक दीर्घकालीन रुचि उत्पन्न की जाए जो इन मज़दूरों को सहकारी समितियों के सदस्यों के रूप में सूचीबद्ध करने के माध्यम से हो सकता है। इस भागीदारी के नियम इस प्रकार बनाए जा सकते हैं कि उससे एक स्थायी बन्धन और जिम्मेदारी की भावना उत्पन्न हो। उदाहरण के लिए किसी मज़दूर को सहकारी समिति का सदस्य होने के लिए केवल तभी हकदार रखा जा सकता है जब उसने किसी उद्योग के लिए गन्ने की कटाई-सफाई करने वाले के रूप में लगातार दो सत्रों तक कार्य किया हो। यह अनुबंध भी किया जा सकता है कि किसी व्यक्ति को अपनी सदस्यता बनाए रखने के लिए एक सत्र के दौरान कम से कम कुछ निश्चित दिनों तक काम करना होगा, जैसे कि कम से कम 90 दिनों तक। यदि सहकारी समितियों के ऐसे सदस्यों को काफी लाभांश मिलेगा तो वे उद्योग के लिए वर्ष प्रतिवर्ष काम करने के लिए आकर्षित होंगी और इस प्रकार नियमितता की समस्या हल हो जाएगी। यह ज्ञात हुआ है कि कुछ उद्योगों में गन्ने की कटाई-सफाई करने वालों के लिए भी सदस्यता खुली थी, तथापि, अन्य निहित स्वार्थों के प्रतिरोध के कारण उसका अनुसरण नहीं किया गया था। मैं इस बात पर दृढ़ रूप से आग्रह करूंगा कि इन उद्योगों की सहकारी समितियों को गन्ने की कटाई सफाई करने वालों को अपने सदस्य के

रूप में स्वीकार करने पर विचार करना चाहिए और सरकार को भी ऐसी कार्यवाही करनी चाहिए जो चीनी सहकारी समितियों के ढांचे में इस तबदीली की सुविधा के लिए आवश्यक हो।

अन्तर्राज्यिक प्रवासी श्रमिक

62. उपर्युक्त चर्चा में अधिकांश रूप से ऐसे अन्तर्राज्यिक प्रवासीय मज़दूरों की समस्याओं पर ही ध्यान केन्द्रित किया गया है जिनके लिए एक शक्तिशाली केन्द्रीय कानून बना हुआ है। चीनी मिलों में मज़दूरों का एक बड़ा भाग इस राज्य के अन्दर के दूरवर्ती स्थानों से लाया जाता है, वास्तव में जहां तक आदिवासी लोगों का संबंध है राज्य की सीमाएं अपेक्षाकृत रूप से अवास्तविक हैं। खानदेश वालों और पंचमहल के भीलों के सामने एक समान समस्याएं हैं और वे एक समान प्रतिबंधों के अधीन हैं।

सौराष्ट्र में और खांडसारी इकाइयों में मजदूर

63. इस नोट का संबंध केवल दक्षिण गुजरात के श्रमिकों से है। मैं समझता हूं कि सौराष्ट्र मण्डल में भी चीनी उद्योगों द्वारा प्रवासी मजदूर नियुक्त किए जाते हैं और पूरे देश में खांडसारी इकाइयों द्वारा भी ऐसा ही किया जाता है। इन इकाईयों के कर्मचारियों के काम करने की परिस्थितियों और उनकी मज़दूरियों की भी देखभाल की जानी चाहिए और ऊपर सुझाए गए लाभ उन्हें भी दिए जाने चाहिएं।

राज्य का हस्तक्षेप, सक्रियकार्यकर्ता और मज़दूर

64. गन्ना मज़दूरों की परिस्थितियों के बारे में प्रश्न कुछ सक्रिय कार्यकर्ताओं द्वारा उनका मामला उठाए जाने के बाद ही समाने आया है, हालांकि उन्हें सरकारी स्रोतों के माध्यम से ही इसके सूत्र प्राप्त हुए थे। श्रम आयुक्त वह पहला व्यक्ति था जिसने कार्यों की इस दुखद स्थिति का अहसास किया था और जो इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि मज़दूरों की न्यूनतम मजदूरियां नहीं मिल रही थीं। यह सुनिश्चित किया जाना है कि इसकी पुनरावृति न हो और यदि कोई कमियां हों तो प्रशासन के अन्दर सुधारात्मक उपाय किए जाने चाहिएं। इस मामले में यह आश्चर्य की बात है कि सरकार द्वारा उठाए गए कुछ कदम मज़दूर के हितों के विरुद्ध हो गए थे। यह सुविदित है कि गन्ने का उत्पादन सिंचाई पर आधारित है। फिर भी एक निर्विचार अधिसूचना जारी की गई थी जिससे न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम का कार्यान्वियन स्थगित हो गया था क्योंकि राज्य में सूखे की स्थिति व्याप्त थी। यह कदम पंचमहल जैसे सूखाग्रस्त जिलों के मामले में भी आवश्यक होना चाहिए। परन्तु यदि कुछ लोगों की सिंचाई का लाभ मिल रहा है तो वे मज़दूरों को उनकी देय मज़दूरी का भुगतान क्यों न करें और उन्हें प्रतिकूल रूप में सूखे से प्रभावित कैसे समझा जा सकता है ? मुझे विश्वास है कि भविष्य में सरकार इस प्रश्न की विस्तार से जांच करेगी और ऐसा कोई निर्विचार आदेश जारी नहीं किया जाएगा जो सभी प्रतिष्ठानों और संगठनों को न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम को कार्यान्वित करने से छूट प्रदान करता हो।

भाग II

अस्पृश्यता

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचार

भूमि, कृषि तथा आवास

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का शैक्षिक विकास

अनुसूचित जातियों का आर्थिक विकास

आदिवासी विकास

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए निर्धनता निवारण कार्यक्रम

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का सेवाओं में प्रतिनिधित्व

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का संसद तथा राज्य विधान-मंडलों में प्रतिनिधित्व

गैर–सरकारी संगठन

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की सूचियां

आंग्ल–भारतीय

अध्याय 1

अस्पृश्यता

संविधान के अनुच्छेद 17 के अधीन 'अस्पृश्यता' समाप्त की गई है तथा किसी भी रूप में इसका व्यवहार निषिद्ध किया गया है। तथापि इसका व्यवहार अभी भी जारी है, हालांकि देश के शहरी क्षेत्रों में इसका वैसा कटु रूप नहीं है जैसा ग्रामीण क्षेत्र में है। भारतीय गणतंत्र के संविधान के अंगीकार किए जाने के पांच वर्षों के अन्दर संसद ने मौलिक अधिकारोंमें दिए गए सिद्धांतों को व्यवहार में लाने के संबंध में विस्तृत विवरण विनिर्दिष्ट करनतथा उन्हें लागू करने के लिए एक कानून बनाने का निर्णय किया था। इसके परिणाम-स्वरूप अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, 1955 बना। इसके क्षेत्र को बढ़ाने और इसके दाण्डिक प्रावधानों को अधिक कठोर बनाने के लिए इस अधिनियम में 1976 में व्यापक संशोधन किए गए थे। इस संशोधन से इस अधिनियम का नाम भी बदल कर नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 कर दिया गया था। इसमें किसी व्यक्ति को अस्पृश्यता के आधार पर सार्वजनिक पूजा के स्थान में प्रवेश करने और प्रार्थना करने या किसी पवित्र तालाब, कुएं या स्रोत से पानी लेने से रोकने पर दण्ड की व्यवस्था की गई है। इस अधिनियम के प्रावधान किसी प्रकार की सामाजिक निर्योग्यता लागू करने, जैसे किसी दूकान, भोजनालय, होटल, सार्वजनिक अस्पताल या किसी शिक्षण संस्थान या लोक मनोरंजन के किसी स्थान में प्रवेश करने से मना करने या किसी सड़क, नदी, कुएं, तालाब, नलके, स्नानघाट, श्मशान भूमि इत्यादि का प्रयोग करने से मना करने पर लागू होते हैं।

2. नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के अधीन अपराध प्रसंज्ञेय और अप्रसंज्ञेय हैं। इसमें न्यूनतम एक महीने के कारावास और 100 रुपये के दण्ड से ले कर 6 महीने के कारावास तथा 500 रुपए तक के दण्ड देने की व्यवस्था है। दूसरी बार अपराध करने पर दण्ड 6 महीने के कारावास तथा 200 रुपए के दण्ड से ले कर एक वर्ष के कारावास और 500 रुपए तक का दण्ड हो सकता है। तीसरी बार तथा बाद के अपराधों के लिए दण्ड की मात्रा एक वर्ष के कारावास और 500 रुपए के दण्ड से ले कर दो वर्ष के कारावास तथा 1,000 रुपए तक हो सकती है। कारावास की न्यूनतम तीन महीने की अवधि वाले अपराधों पर न्यायालयों द्वारा सरसरी तौर पर मुकदमा चलाया जा सकता है।

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के प्रावधानों के कार्यान्वयन के लिए विभिन्न राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा उठाए गए कदम

3. इस अधिनियम की धारा 15 क (2) के अधीन राज्य सरकारों से पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध करने के लिए कदम उठाने की अपेक्षा की गई है जिनमें ये बातें सम्मिलित हैं—मुकदमे आरम्भ करने या उनका अधीक्षण करने के लिए अधिकारियों की नियुक्ति, विशेष/चल न्यायालयों की स्थापना, समुचित स्तरों पर समितियों की नियुक्ति, इस अधिनियम के प्रावधानों के कार्यचालन के लिए आवधिक सर्वेक्षण की व्यवस्था और ऐसे स्थानों का पता लगाना जहां अस्पृश्यता के कारण लोगों को निर्योग्यता का सामना करना पड़ता है तथा कोई अन्य कदम जिन्हें राज्य सरकार अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए ठीक समझती है। नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के अनुसरण में राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा उठाए गए कदमों का संक्षेप में विवेचन नीचे दिया गया है—

(क) अधिकारियों की नियुक्ति

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन मामलों की शीघ्रता से जांच करने और उनका पर्यवेक्षण करने के लिए **आंध्र प्रदेश, बिहार, गोवा, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल**, राज्यों तथा **चंडीगढ़, दिल्ली** और **पांडिचेरी** संघ शासित क्षेत्रों द्वारा इस प्रयोजन के लिए स्थापित प्रकोष्ठों में विशेष अधिकारी नियुक्त किए गए हैं अथवा विभिन्न स्तरों पर अधिकारियों को विशेष जिम्मेदारियां सौंपी गई हैं।

(ख) समितियां

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के प्रशासन तंत्र तथा अनुसूचित जातियों के कल्याण के अन्य सामान्य कार्यक्रमों के कार्यचालन का पुनरावलोकन करने के लिए **आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, गोवा, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल** राज्यों तथा **दिल्ली** संघ शासित क्षेत्र में समितियों का गठन किया गया है।

(ग) आवधिक सर्वेक्षण

ऐसे क्षेत्रों का पता लगाने के उद्देश्य से जहां अस्पृश्यता के कारण समस्यायें उत्पन्न होती हैं, नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम में एक प्रावधान किया गया है जिसके अनुसार राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा सर्वेक्षण किए जाते हैं। तदनुसार **बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु** और **उत्तर प्रदेश** राज्य सरकारों ने इस दिशा में कार्यवाही करना आरम्भ कर दिया है।

(घ) अस्पृश्यता प्रवृत्त क्षेत्रों का पता लगाना

अस्पृश्यता प्रवृत्त क्षेत्रों का पता लगाने के काम को सर्वेक्षण के साथ जोड़ा गया है। कुछ राज्यों जैसे **गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और तमिलनाडु** में क्रमश: 73, 129, 363 और 523 गांवों को अस्पृश्यता प्रवृत्त गांवों के रूप में जाना गया है। **कर्नाटक, केरल** और **उत्तर प्रदेश** ने अभी तक ऐसे गांवों का पता नहीं लगाया है परन्तु क्रमश: 6, 2 और 15 जिलों का चुनाव किया है। इन तीन राज्यों को चुने गये जिलों में अस्पृश्यता प्रवृत्त गांवों का पता लगाने के लिए कार्यवाही शीघ्र करनी चाहिए।

(ङ) प्रचार और अन्य उपाय

अस्पृश्यता की बुराई का उन्मूलन करने के लिए और इसके बारे में लोगों में जागृति लाने के लिए लगभग सभी राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा विभिन्न माध्यमों से प्रचार अभियान आरम्भ किए गए हैं। **महाराष्ट्र** सरकार ने कीतनकारों और कलापाठकों के कार्यक्रम आयोजित करके अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए प्रचार का एक नया तरीका अपनाया है।

विशेष न्यायालयों की स्थापना

4. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 11 (1) के अधीन कोई राज्य सरकार उच्च न्यायालय के परामर्श से किसी विशेष श्रेणी के मामलों का परीक्षण करने के लिए श्रेणी 1 या श्रेणी 2 न्यायिक मजिस्ट्रेट के विशेष न्यायालय स्थापित कर सकती है। इसी प्रकार नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 की धारा 15 (क) (2) (iii) के अधीन उक्त अधिनियम के अपराधों के परीक्षण के लिए विशेष न्यायालय गठित किए जा सकते हैं। इन प्रावधानों के अनुसरण में निम्नलिखित राज्य सरकारों ने प्रत्यक राज्य के सामने दिखाए गए स्थानों पर विशेष/चल न्यायालय स्थापित किए हैं—

सारणी 1

क्रम सं०	राज्य का नाम	विशेष न्यायालयों की संख्या	स्थान
1	2	3	4
1.	आंध्र प्रदेश	17	कड़प्पा, महबूबनगर, पूर्व गोदावरी, पश्चिम गोदावरी, चित्तूर, श्रीकाकुलम, मेडक, अनन्तपुर, विजयानगरम्, निल्लूर, निजामाबाद, प्रकाशम, विशाखापटनम, खम्मम, नालगोंडा, कर्नूल, कृष्णा
2.	बिहार .	4	पटना, मुजफ्फरपुर, पूर्णिय हजारीबाग
3.	कर्नाटक .	2	बेलगांव, मैसूर
4.	मध्य प्रदेश .	4	ग्वालियर भोपाल, सागर, बिलासपुर
5.	राजस्थान .	8	अलवर जिला—अलवर, राजगढ़, बेहरोड; कोटा जिला—अतरू, इटावा, बारां, कोटा; नागोर जिला—नागौर
6.	तमिलनाडु .	4	तंजावुर (कुम्भकोणम), मदुरै, तिरूचिरापल्ली, तिरुनेलवेली
7.	उत्तर प्रदेश .		सभी जिलों में ऐसे मामलों में कार्यवाही करने के लिए जिनमें अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों के साथ अत्याचार हुए हैं, मजिस्ट्रेट नामित किए गए हैं और कोई विशेष न्यायालय स्थापित नहीं किया गया है।

5. विशेष न्यायालयों के कार्यचालन का अध्ययन करने की दृष्टि से इस कार्यालय ने निम्नलिखित तीन विशेष न्यायालयों का अध्ययन किया—**महबूबनगर (आंध्र प्रदेश)** का अगस्त 1983 में, अलवर (**राजस्थान**) का जनवरी 1984 में और कुम्भकोणम (**तमिलनाडु**) का जून 1984 में। इन अध्ययनों के आधार पर निम्नलिखित सुझाव दिए जाते हैं जो विभिन्न राज्यों में विशेष न्यायालयों पर लागू हो सकते हैं—

(1) विशेष/चल न्यायालयों की स्थापना के बारे में दूरदर्शन, रेडियो और समाचारपत्रों के माध्यम से व्यापक प्रचार किया जाय ताकि अनुसूचित जातियों के व्यक्ति शीघ्र न्याय प्राप्त करने की सुविधा का लाभ उठा सकें। इससे गैर-अनुसूचित जाति समुदायों में भी यह भावना उत्पन्न होगी कि सरकार अनुसूचित जातियों की समस्याओं को समाप्त करने के लिए बहुत तत्पर है और वे अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों को उत्पीड़ित करना बन्द कर दें। इस कार्यवाही से अस्पृश्यता की प्रथा के विरुद्ध मामलों और अनुसूचित जातियों पर अत्याचार के मामलों की संख्या को कम करने में मदद मिलेगी।

(2) विशेष/चल न्यायालयों द्वारा कार्यवाही किए गए मामलों की संख्या में भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता और नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम दोनों के अधीन मामले शामिल हैं। यह सुझाव है कि ये आंकड़े अलग-अलग रखे जाएं और इनके बारे में पृथक-पृथक सांख्यिकीय सूचना न्यायिक मजिस्ट्रेटों द्वारा उच्च न्यायालय, राज्य सरकार और विशेष पुलिस प्रकोष्ठ को भेजी जाय। पुलिस को भी भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता और नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के मामलों के लिए अभिलेख पृथक-पृथक रखने चाहिएं।

(3) इन मामलों के निपटारे में विलम्ब होने के कारण कई समस्याएं उपन्न होती हैं। उदाहरण के तौर पर समय बीतने के साथ-साथ विभिन्न प्रभाव पड़ने से साक्षी विरोधी हो जाते हैं। इससे आरोप सिद्ध करना कठिन हो जाता है और मामलों को सन्देह-लाभ देकर दोषमुक्त कर दिया जाता है और मामले बंद कर दिए जाते हैं। वास्तव में विलम्ब से अत्याचारों और अस्पृश्यता की प्रथा से त्रस्त व्यक्तियों को शीघ्र न्याय दिलाने हेतु विशेष न्यायालय स्थापित करने का प्रयोजन ही समाप्त हो जाता है।

(4) विशेष/चल न्यायालयों को कहा जाय कि वे तिमाही विवरणपत्र प्रस्तुत करें जिनमें मामलों का निपटारा करने में लगा समय दर्शाया जाय। इन विवरणपत्रों की जांच-पड़ताल जिला न्यायाधीश द्वारा सूक्ष्म रूप से की जानी चाहिए ताकि इन न्यायालयों को आवश्यक सहायता तथा मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जा सके और वे मामलों का निपटारा शीघ्रतापूर्वक करने में समर्थ हो सकें।

(5) अत्याचार के मामलों के बारे में विशेष न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों का अध्ययन करने से दोषमुक्त किए गए मामलों की संख्या बहुत अधिक होना पाया गया। यह सुझाव है कि राज्य सरकारों को दोषमुक्त किए गए मामलों का विश्लेषण करना चाहिए और अपराधियों को सबक सिखाने के लिए उपयुक्त उपाय अपनाने चाहिए।

अन्तर-जातीय विवाह

6. जातिवाद और अस्पृश्यता की भावनाओं को समाप्त करने के लिए अनुसूचित जातियों और सवर्ण हिन्दुओं के बीच अन्तर-जातीय विवाह प्रोत्साहित किए जाते हैं। अन्तर-जातीय विवाह प्रोत्साहित करने की योजनाएं प्रथम बार **गुजरात, केरल, महाराष्ट्र और तमिलनाडु** राज्य सरकारों द्वारा लागू की गई थीं। उसके पश्चात् इन योजनाओं के अच्छे प्रभाव को देखने के बाद कुछ और राज्यों से भी अन्तर-जातीय विवाह की योजनाओं को लागू किया था। यदि कोई विवाह अनुसूचित जाति के किसी व्यक्ति और किसी सवर्ण हिन्दू के बीच होता है तो ये राज्य सरकारें 1,000 रुपए से 5,000 रुपये तक का नकद पुरस्कार देती हैं। कुछ राज्य सरकार इसके अतिरिक्त दूसरे लाभ भी प्रदान करती हैं। विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा अन्तर-जातीय विवाहों को प्रोत्साहित करने के लिए की गई कार्यवाही दर्शाते हुए एक विवरणपत्र अनुलग्नक 1 में दिया गया है।

अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए भारत सरकार के विभिन्न माध्यमों द्वारा किया गया कार्य

7. सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय अस्पृश्यता के विरुद्ध जनमत तैयार करने के लिए प्रयास करता रहा है। 1986 में आकाशवाणी के केन्द्रों ने इस विषय पर 4,818 कार्यक्रम प्रसारित किए थे। पत्र सूचना कार्यालय ने 30 समाचार प्रकाशन जारी किए थे। प्रकाशन विभाग द्वारा विभिन्न पत्रिकाओं में हिन्दी, अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषाओं में लेख और संपादकीय लेख भी प्रकाशित किए थे। इसके अतिरिक्त विज्ञापन तथा दृश्य प्रचार निदेशालय द्वारा 20–सूत्री कार्यक्रम और अस्पृश्यता समाप्त करने की योजनाओं के अधीन देश के विभिन्न भागों में 418 प्रदर्शनियां आयोजित की गई थीं। अस्पृश्यता की सामाजिक बुराई की ओर ध्यान केन्द्रित किए जाने के लिए क्षेत्र प्रचार निदेशालय के क्षेत्र एककों द्वारा देश के दूर-दराज के क्षेत्रों, ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्रों में विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। इसी प्रकार संगीत तथा नाटक प्रभाग द्वारा अस्पृश्यता की बुराइयों को दर्शाते हुए देश के विभिन्न भागों में लगभग 7,400 कार्यक्रम आयोजित किए गये। दूरदर्शन केन्द्रों ने अस्पृश्यता के उन्मूलन पर विभिन्न रूपों में भिन्न-भिन्न कार्यक्रम प्रसारित किए। त्रिवेन्द्रम दूरदर्शन केन्द्र ने श्रीनारायण गुरु पर एक मलयालम फिल्म दिखाई और डा० अम्बेडकर के जीवन और मिशन पर एक परिचर्चा प्रसारित की। रांची दूरदर्शन केन्द्र द्वारा 'बढ़ते कदम' और 'प्रगति के पथ पर बिहार' नामक वृत्तचित्र दिखाए गए। गुजराती में डा० अम्बेडकर के जन्म और मृत्यु की वार्षिक तिथियों पर दूरदर्शन द्वारा रिपोर्ट प्रसारित की गई। दूसरे दूरदर्शन केन्द्रों द्वारा कई अन्य कार्यक्रम भी प्रसारित किए गए।

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन मामले

8. वर्ष 1981 से 1985 तक नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के अधीन दर्ज हुए मामलों की कुल संख्या 19,378 थी। उनकी वर्ष–वार संख्या 4,085 (1981), 4,087 (1982) 3,949, (1983), 3,925 (1984) और 3,332 (1985) थी। 18 राज्यों और 4 संघ राज्य क्षेत्रों में नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन दर्ज हुए मामलों की राज्यवार तथा वर्ष-वार संख्या अनुलग्नक 2 में दी गई है। उससे यह प्रकट होगा कि इन मामलों के पंजीकरण में कमी होती जा रही है। यह एक अच्छा लक्षण है। तथापि निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि यह सवर्ण हिन्दुओं की सामाजिक मनोवृत्ति में कोई महत्वपूर्ण बदलाव दर्शाता है। **गुजरात** राज्य की सरकार ने अपने-अपने क्षेत्रों में अस्पृश्यता समाप्त करने के लिए पंचायतों की जिम्मेदारी निश्चित करके एक साहसिक कदम उठाया है। इसके अनुसार यदि कोई पंचायत किसी सार्वजनिक कुएं, जल-कल इत्यादि से पानी लेने के

संबंध में अनुसूचित जातियों के विरुद्ध भेदभाव को समाप्त करने में असफल रहती है तो उसे सरकारी सहायता तब तक के लिए बन्द कर दी जाती है जब तक वह भेद-भाव समाप्त नहीं किया जाता । ऐसे मामलों में सरकारी अनुदेशों का पालन करने में असफल रहने के लिए ऐसी पंचायतों का अतिक्रमण करने पर भी विचार किया जाता है। जिला विकास अधिकारियों को यह अधिकार भी दिया गया है कि वे पंचायतों के ऐसे सदस्यों को हटा दें जो इस संबंध में सरकार के आदेशों का पालन करने में असफल रहते हैं। अन्य राज्य सरकारें भी इसी प्रकार की कार्यवाही कर सकतीं हैं ताकि अस्पृश्यता की बुरी प्रथा को जल्दी समाप्त किया जा सके।

अस्पृश्यता की प्रथा से संबंधित कुछ मामले

9. अनुसूचित जातियों/जनजातियों, पिछड़े और अल्पसंख्यक कर्मचारी कल्याण संघ के अखिल भारतीय परिसंघ, भटिंडा के महामंत्री ने 29-6-82 की एक शिकायत में यह आरोप लगाया था कि राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड का एक फार्म अधिकारी अनुसूचित जाति के एक अधीनस्थ कर्मचारी को अस्पृश्यता के आधार पर अपमानजनक शब्द कहते हुए जैसे 'भंगी' और 'चमार') गाली-गलौज किया करता था। यह मामला उपायुक्त, भटिंडा के पास भेजा गया जिन्होंने यह पुष्टि की कि उस अधिकारी के विरुद्ध आरोप सिद्ध हो गए थे और राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड ने उस मामले के निष्कर्षों की दृष्टि से संचयी प्रभाव के साथ दो वार्षिक वेतन वृद्धियां रोक कर उस अधिकारी को दंड दिया गया।

10. 15-12-85 के 'इंडियन एक्सप्रेस' में एक समाचार छपा था कि विले पार्ले, बम्बई में नगरपालिका के एक प्राइमरी स्कूल के कुछ छात्रों से स्कूल के समय के बाद पाखाने और स्नानागार साफ करवाए गए थे। यह सफाई अभियान के भाग के रूप में नहीं कराया गया था, परन्तु केवल इसलिए कराया गया था कि उन छात्रों के माता पिता 'सफाई कामगार' थे। यह मामला बृहत बम्बई के नगर निगम के पास भेजा गया जिसने उक्त आरोप का खंडन किया और बताया कि स्कूल में पाखानों और पेशाबघरों को साफ कराने के लिए स्कूल के बच्चों को कभी भी नहीं लगाया गया। इस कार्यालय ने नगर निगम के आयुक्त से पूछा कि क्या उन्होंने समाचारपत्रों में व्यापक रूप से परिचालित की गई इस रिपोर्ट का कोई खंडन किया था। उक्त निगम ने कई अनुस्मारक भेजे जाने के बाद भी इसका कोई उत्तर नहीं दिया।

11. 'नई दुनिया' के 30-10-86 के अंक में यह रिपोर्ट छपी थी कि इन्दौर (म०प्र०) के महल कचहरी क्षेत्र में सवर्ण हिन्दुओं द्वारा अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति को सार्वजनिक नलके से पानी नहीं लेने दिया गया। यह मामला कलेक्टर, इन्दौर के पास भेजा गया जिन्होंने सूचित किया कि नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन दो अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध न्यायालय में मुकदमा दायर किया गया है। उक्त मामला विशेष न्यायालय, भोपाल में निपटान के लिए लम्बित था।

12. 'स्टेट्समैन' के 6-11-86 के अंक में एक समाचार छपा था जो मोतीनाथ संस्कृत महाविद्यालय, रमेशनगर, नई दिल्ली के दो ब्राह्मण छात्रों द्वारा अनुसूचित जाति के एक छात्र के साथ अस्पृश्यता के व्यवहार के संबंध में था जिसके परिणामस्वरूप अनुसूचित जाति के उस छात्र की हत्या की गई थी। इस अपराध का कारण यह था कि उक्त दो ब्राह्मण छात्र यह बात सहन नहीं कर सके थे कि नीची जाति का कोई छात्र उनके साथ संस्कृत पाठ्यक्रम (आचार्य) में अध्ययन करे। यह मामला दिल्ली पुलिस आयुक्त के पास भेजा गया जिनके उत्तर से यह प्रकट हुआ कि उक्त मृतक वास्तव में पिछड़ी जाति (कुम्हार) का था। पुलिस रिपोर्ट के अनुसार ब्राह्मण छात्रों का मत था कि संस्कृत पढ़ने का अधिकार केवल ब्राह्मणों को ही है।

13. अस्पृश्यता के उन्मूलन के लिए विशिष्ट रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में जहां इसकी जड़ें गहरी हैं, केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों के विभिन्न कार्यक्रम हैं। परन्तु केवल सरकारी प्रयास ही इस समस्या को हल नहीं कर सकते। अतः स्वैच्छिक संगठनों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और धार्मिक नेताओं को भी इसमें सक्रिय रूप से लगना चाहिए और यह देखना चाहिए कि हमारे समाज से अस्पृश्यता का यह कलंक समाप्त हो जाय।

अनुलग्नक 1

विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा अन्तर-जातीय विवाहों को प्रोत्साहित करने के लिए आरम्भ की गई योजनाएं दर्शाने वाला विवरणपत्र

क्रम सं०	राज्य का नाम	नकद पुरस्कार (रुपयों में)	अन्य लाभ
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	1,000	
2.	असम	5,000	दोनों पक्षों के अभिभावकों को ग्रामीण क्षेत्रों में 2,000 रुपए तथा शहरी क्षेत्रों में 1,500 रुपए
3.	बिहार	5,000	
4.	गोवा	2,000	
5.	गुजरात	5,000	
6.	हरियाणा . . .	5,000	इस राशि में से 2,000 रुपए नकद तथा 3,000 रुपए 6 वर्षों के लिए सावधि जमा के रूप में
7.	हिमाचल प्रदेश . . .	1,000	
8.	जम्मू व काश्मीर . . .	—	
9.	कर्नाटक . . .	2,000	अनुदान देने के लिए जिला परिषदों को शक्तियां दी हुई हैं।
10.	केरल . . .	2,000	
11.	मध्य प्रदेश . . .	2,000	इसके अतिरिक्त स्वर्ण पदक भी दिया जाता है।
12.	महाराष्ट्र . . .	2,000	बर्तनों के लिए 500 रुपए भी दिए जाते हैं।
13.	उड़ीसा	3,000	बच्चों के लिए मुफ्त शिक्षा
14.	पंजाब	4,000	इस रकम में से 1,000 रुपए बर्तनों के लिए दिए जाते हैं।
15.	राजस्थान . . .	5,000	प्रोत्साहन राशि दोनों पक्षों के संयुक्त सावधि जमा खाते में डाली जाती है।
16.	सिक्किम . . .	—	
17.	तमिलनाडु . .	4,000	विवाह खर्च के लिए 300 रुपए नकद अनुदान तथा स्वर्ण पदक; बच्चों को इंजीनियरिंग तथा मेडिकल कालेजों में प्रवेश के लिए प्राथमिकता दी जाती है।
18.	त्रिपुरा	2,000	प्रशंसा प्रमाण पत्र भी दिया जाता है।
19.	उत्तर प्रदेश . . .	1,000	लघु उद्योग शुरू करने के लिए 15,000 रुपए का ब्याजमुक्त कर्ज दिया जाता है।
20.	पश्चिम बंगाल . . .	2,000	
21.	दिल्ली	—	
22.	पांडिचेरी . . .	5,000	

अनुलग्नक 2

वर्ष 1981, 1982, 1983, 1984 तथा 1985 के दौरान नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन दर्ज हुए मामलों की संख्या दर्शाने वाला विवरणपत्र

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	1981	1982	1983	1984	1985
1.	आन्ध्र प्रदेश	238	263	385	274	237
2.	असम	1	—	—	—	उ० नहीं
3.	बिहार	17	28	16	15	उ० नहीं
4.	गुजरात	281	347	306	271	169
5.	हरियाणा	6	5	5	2	1
6.	हिमाचल प्रदेश	16	6	6	4	8
7.	जम्मू-काश्मीर	5	4	5	3	3
8.	कर्नाटक	581	674	567	532	659
9.	केरल	38	29	37	39	27
10.	मध्य प्रदेश	237	337	390	370	उ० नहीं
11.	महाराष्ट्र	998	769	558	510	442
12.	उड़ीसा	106	125	90	105	88
13.	पंजाब	—	4	—	—	2
14.	राजस्थान	173	186	183	168	207
15.	सिक्किम	—	—	—	—	—
16.	तमिलनाडु	1136	1105	1205	1402	1280
17.	त्रिपुरा	—	—	—	—	—
18.	उत्तर प्रदेश	224	186	173	208	188
19.	चंडीगढ़	2	1	—	—	1
20.	दिल्ली	10	3	9	7	3
21.	गोवा, दमण और दीव	2	3	—	—	1
22.	पांडिचेरी	14	12	4	15	16
	योग .	4085	4087	3949	3925	3332

टिप्पण: इन वर्षों के दौरान मणिपुर, पश्चिम बंगाल तथा दादरा एवं नागर हवेली में एक भी मामला दर्ज नहीं किया गया था।

अध्याय 2

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचार

'अत्याचार' शब्द की किसी भी कानून में परिभाषा नहीं की गई है, अतः सरकार 'अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विरुद्ध अपराध' पद का प्रयोग करती रही है। तथापि गृह मंत्रालय ने 1974 से ऐसे अपराधों के आंकड़े एकत्र करना आरम्भ किया और बताया कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों को चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है अर्थात् हत्या, गंभीर चोट, आगजनी, और बलात्कार। इसके बाद इन आंकड़ों के संकलन में भारतीय दंड संहिता के ऐसे सभी अपराध सम्मिलित हो गए जिनमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के व्यक्ति पीड़ित हुए थे। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों को रोकने के लिए केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा अपनाए गए विभिन्न उपायों के बावजूद इन समुदायों के व्यक्तियों पर अत्याचार होना जारी है। उनके ऊपर अत्याचार होने के तीन मुख्य कारण हैं अर्थात् (1) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के भूमिहीन व्यक्तियों को सरकारी भूमि के आबंटन अथवा फालतू भूमि के वितरण से संबंधित अनिर्णीत भूमि विवाद, (2) राज्य सरकारों द्वारा न्यूनतम मजदूरी का भुगतान न किए जाने या कम भुगतान किए जाने के कारण उत्पन्न हुआ तनाव और विरोध और (3) संविधान तथा विभिन्न विधायी और कार्यकारी उपायों में यथाविहित अपने अधिकारों तथा विशेषाधिकारों के बारे में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों में जागृति की अभिव्यक्ति के विरुद्ध रोष।

2. 1981-86 की अवधि में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों के पंजीकृत मामलों की संख्या का अपराधवार तथा वर्षवार विस्तृत विवरण अनुलग्नक 1 में दिया गया है। 1986 के आंकड़े निम्नलिखित हैं—

सारणी 1

अपराध का स्वरूप	अनुसूचित जातियों के विरुद्ध	अनुसूचित जन-जातियों के विरुद्ध
हत्या	564	160
गंभीर चोट	1,408	311
बलात्कार	727	285
आगजनी	1,002	232
अन्य अपराध	11,715	2,957
योग	15,416	3,945

यह देखा गया है कि अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों की हत्या के मामलों की संख्या में 1981-86 की अवधि में बराबर वृद्धि होती रही सिवाय वर्ष 1985 के जिसमें थोड़ी कमी हुई थी। इसी प्रकार इस अवधि में बलात्कार के मामलों की संख्या क्रमिक रूप से बढ़ी थी। अनुसूचित जनजातियों से संबंधित हत्या के मामलों की संख्या में 1981-84 की अवधि में वृद्धि हुई थी। 1985 में यह संख्या थोड़ी कम हो गई थी परन्तु 1986 में इसमें पुनः वृद्धि हुई।

3. अनुसूचित जातियों के विरुद्ध अपराधों की संख्या के बारे में राज्यवार तथा वर्षवार आंकड़े अनुलग्नक 2 में दिए गए हैं। उनसे यह ज्ञात होगा कि भारतीय दण्ड संहिता के अधीन ऐसे मामलों की अधिकतम संख्या, जिनमें अनुसूचित जातियों के व्यक्ति पीड़ित हुए थे, **मध्य प्रदेश** में पंजीकृत हुए थे (देश में दर्ज मामलों की कुल संख्या का 32 प्रतिशत)। ऐसे अन्य राज्य जिनमें इस छह वर्ष की अवधि में 1,000 से अधिक मामले दर्ज किए गए थे **उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल तथा आंध्र प्रदेश** थे।

4. इसी प्रकार ऊपर वर्णित अवधि में भारतीय दण्ड संहिता के अधीन ऐसे मामलों की संख्या जिनमें अनुसूचित जनजातियों के व्यक्ति पीड़ित हुए थे, अनुलग्नक 3 में दी गई है जो यह दिखाती है कि पुनः **मध्य प्रदेश** में ही ऐसे मामलों की अधिकतम संख्या पंजीकृत हुई थी (देश में दर्ज मामलों की कुल संख्या का 73.3 प्रतिशत)। ऐसे अन्य राज्य जिनमें छह वर्ष की इस अवधि में 500 से अधिक मामले दर्ज किए गए थे **राजस्थान, महाराष्ट्र, बिहार** और **गुजरात** थे।

अनुसूचित जाति/जनजाति की जनसंख्या से सह-संबंधित अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों की घटना के विषय में राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों का स्थान-क्रम

5. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों से संबंधित सांख्यिकीय आंकड़े राज्यवार, वर्षवार और अपराधवार क्रमशः अनुलग्नक 4 और 5 में दिए गए हैं। विभिन्न राज्यों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विरुद्ध अपराधों की घटनाओं की सही तुलना के लिए यह आवश्यक है कि अपराधों की संख्या का उस राज्य में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की जनसंख्या से परस्पर संबंध दिखाया जाय। अनुलग्नक 4 में दिए गए अपराधों के आंकड़ों के आधार पर 20 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को, जिनके बारे में 1988 की अवधि की सूचना प्राप्त थी, नीचे अनुसूचित जातियों की प्रति एक लाख जनसंख्या पर अत्याचारों की संख्या के अवरोही क्रम में दिखाया गया है। इस सारणी में प्रत्येक राज्य के लिए दो संख्याएं दी गई हैं : (क) अत्याचारों की उक्त चार

बड़ी श्रेणियों अर्थात् हत्या, गंभीर चोट, बलात्कार और आगजनी की घटनाओं की संख्या और (ख) उसी छह वर्ष की अवधि में भारतीय दण्ड संहिता के अधीन सभी अपराधों की (क) में दिखाए गए मामलों सहित संख्या—

सारणी 2

1981–86 के दौरान अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों की घटनाओं के विषय में राज्यों का स्थान-क्रम

(क) अत्याचारों की चार बड़ी श्रेणियों के मामलों की संख्या			(ख) भारतीय दंड संहिता के अधीन सभी अपराधों की संख्या (क) पर दिखाए गए मामलों सहित		
स्थान-क्रम	राज्य/संघराज्य क्षेत्र	अ० जा० की प्रति एक लाख जनसंख्या पर मामलों की संख्या	स्थान-क्रम	राज्य/संघराज्य क्षेत्र	अ० जा० की प्रति एक लाख जनसंख्या पर मामलों की संख्या
1	2	3	4	5	6
1.	मध्य प्रदेश	64.74	1.	मध्य प्रदेश	396.32
2.	राजस्थान	36.75	2.	राजस्थान	162.07
3.	उत्तर प्रदेश	34.11	3.	गुजरात	146.27
4.	बिहार	33.04	4.	बिहार	107.21
5.	गुजरात	32.40	5.	उत्तर प्रदेश	105.25
6.	महाराष्ट्र	19.38	6.	महाराष्ट्र	79.00
7.	जम्मू-काश्मीर	13.88	7.	जम्मू–काश्मीर	67.61
8.	हरियाणा	10.67	8.	केरल	57.98
9.	हिमाचल प्रदेश	7.50	9.	तमिलनाडु	33.22
10.	केरल	7.49	10.	हिमाचल प्रदेश	33.02
11.	पांडिचेरी	7.22	11.	कर्नाटक	28.58
12.	कर्नाटक	6.43	12.	हरियाणा	26.54
13.	उड़ीसा	6.39	13.	पांडिचेरी	23.71
14.	गोवा, दमण और दीव	4.35	14.	उड़ीसा	22.48
15.	आन्ध्र प्रदेश	4.11	15.	गोवा, दमण और दीव	17.39
16.	त्रिपुरा	3.55	16.	आन्ध्र प्रदेश	14.43
17.	पंजाब	3.19	17.	त्रिपुरा	6.77
18.	तमिलनाडु	2.65	18.	पंजाब	5.72
19.	पश्चिम बंगाल	0.49	19.	दिल्ली	0.89
20.	दिल्ली	0.45	20.	पश्चिम बंगाल	0.81

6. उसी अवधि (1981–86) में अनुसूचित जन-जातियों के व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों की घटना के विषय में 19 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों से उपलब्ध सूचना अनुलग्नक 5 में दी गई है । इस सूचना के आधार पर एक तुलनात्मक विश्लेषण निम्नलिखित सारणी में दिया गया है —

सारणी 3

1981–86 के दौरान अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों की घटना के विषय में राज्यों का स्थान-क्रम

(क) अत्याचारों की चार बड़ी श्रेणियों के मामलों की संख्या			(ख) भारतीय दण्ड संहिता के अधीन सभी अपराधों की संख्या (क) पर दिखाए मामलों सहित		
स्थान–क्रम	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	अ० ज० जा० की प्रति एक लाख जनसंख्या पर मामलों की संख्या	स्थान–क्रम	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	अ० ज० जा० की प्रति एक लाख जनसंख्या पर मामलों की संख्या
1	2	3	4	5	6
1.	मध्य प्रदेश . . .	28.99	1.	मध्य प्रदेश	146.60
2.	केरल . . .	19.92	2.	केरल	117.24
3.	राजस्थान . . .	15.25	3.	राजस्थान	59.67
4.	महाराष्ट्र . . .	6.76	4.	महाराष्ट्र	21.55
5.	बिहार . . .	5.95	5.	बिहार	15.02
6.	गुजरात . . .	5.49	6.	गुजरात	14.44
7.	आंध्र प्रदेश . . .	2.99	7.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह . .	13.64
8.	पश्चिम बंगाल . .	1.76	8.	अरुणाचल प्रदेश . . .	13.38
9.	उड़ीसा . . .	1.61	9.	आंध्र प्रदेश	6.61
10.	मणिपुर . . .	1.55	10.	मणिपुर	4.90
11.	मिजोरम . . .	0.87	11.	दादरा और नागर हवेली . .	4.88
12	अरुणाचल प्रदेश . .	0.68	12.	उड़ीसा	4.41
13.	नगालैंड . . .	0.61	13.	पश्चिम बंगाल . . .	3.61
14.	कर्नाटक . . .	0.60	14.	असम	2.52
15.	तमिलनाडु . . .	0.38	15.	तमिलनाडु	1.92
16.	असम . . .	0.37	16.	उत्तर प्रदेश	1.72
17.	उत्तर प्रदेश . . .	शून्य	17.	मिजोरम	1.30
18.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	शून्य	18.	कर्नाटक	1.04
19.	दादरा और नागर हवेली .	शून्य	19.	नगालैंड	0.61

अपराधों की प्रवृत्ति वाले क्षेत्रों की पहचान

7. निम्नलिखित सात राज्य सरकारों ने अनुसूचित जातियों के विरुद्ध अपराधों की दृष्टि से अपराधों की प्रवृत्ति वाले क्षेत्रों का पता लगाने के लिए प्रयास किए हैं —

सारणी 4

क्रम सं०	राज्य	अपराधों की प्रवृत्ति वाले क्षेत्र के रूप में जिन जिलों के बारे में पता लगाया गया
1.	बिहार	पटना, नालन्दा, रोहतास, भोजपुर, गया, वशाली, समस्तीपुर, बेगूसराय, भागलपुर, मुंगेर, रांची (11 जिले)
2.	गुजरात	अहमदाबाद (ग्रामीण), मेहसाना, सुरेन्द्रनगर, जूनागढ़, खेड़ा, अमरेली, राजकोट (ग्रामीण), बनासकांठा, वड़ोदरा (ग्रामीण), भड़ौच, कच्छ (11 जिले)
3.	हरियाणा	अम्बाला, करनाल, सोनीपत, गुड़गांव, फरीदाबाद (5 जिले)
4.	कर्नाटक	बंगलूर, बीजापुर, कोलार, मैसूर, तुमकुर, गुलबर्गा (6 जिले)
5.	मध्य प्रदेश	मुरैना, बिलासपुर, पन्ना, राजपुर, जबलपुर, उज्जैन, भोपाल (7 जिले)
6.	महाराष्ट्र	औरंगाबाद, भीड़, उस्मानाबाद, नान्देड़, परभणी, बुलढाना (6 जिले)
7.	पंजाब	फीरोजपुर जिले में 2 गांव, संगरूर जिले में 3 गांव, पटियाला जिले में 3 गांव (3 जिले)
	कुल	49 जिले

अत्याचारों के कारणों का एक विश्लेषण

8. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों के विभिन्न कारण साधारण तौर पर ज्ञात होते हुए भी, 1982-85 के दौरान उड़ीसा में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों के 523 मामलों का विश्लेषण हमारे अनुरोध पर पुलिस के उपमहानिरीक्षक (हरिजन अत्याचार तथा दहेज मृत्यु), कटक द्वारा गया था और उसके निष्कर्ष अनुलग्नक 6 में दिए गए हैं । यह विश्लेषण यह दिखाता है कि 39.2 प्रतिशत मामले अचानक झगड़े के कारण हुए, 33.46 प्रतिशत मामले पुरानी रंजिश के कारण हुए, 14.15 प्रतिशत मामले भूमि विवाद के कारण हुए और 6.12 प्रतिशत मामले कामवास के कारण हुए । इसी प्रकार अनुसूचित जनजातियों के 176 मामलों का विश्लेषण यह बताता है कि 29 प्रतिशत मामलों का मुख्य कारण भी अचानक झगड़ा ही था। 23.86 प्रतिशत मामले कामवासना के कारण हुए थे । अन्य दो उल्लेखनीय कारण पुरानी रंजिश (23.3 प्रतिशत) और भूमि विवाद (15.34 प्रतिशत) थे ।

अत्याचारों से पीड़ित अ० जा०/अ०ज० जा० के लिए राहत के उपाय

9. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयोग ने सितम्बर 1981 में सभी राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों से यह सिफारिश की थी कि अनुसूचित जातियों/जनजातियों के अत्याचारों से पीड़ित व्यक्तियों को निम्नलिखित दरों से नकद राहत दी जानी चाहिए—

हानि का स्वरूप	रकम
1	2
हत्या प्रति व्यक्ति	10,000 रु०
स्थायी विकलांगता प्रति सदस्य	10,000 रु०
अस्थायी विकलांगता	2,000 रु०
गंभीर चोट विकलांगता रहित	1,000 रु०
बलात्कार	5,000 रु०
घर नष्ट होना	2,000 रु०
अचल संपत्ति नष्ट होना	2,000 रु०
आय के साधन नष्ट होना जैसे वाहन, नाव, पशु इत्यादि	2,000 रु० तात्कालिक राहत के लिए जब तक नए साधन जुटाने के लिए अपेक्षित राशि का भुगतान न किया जाय
अचल संपत्ति नष्ट होना जैसे अनाज कपड़े और घरेलू संपत्ति	2,000 रु०
पीड़ित व्यक्ति के स्वामित्व वाले सिंचाई के कुंए, पीने के पानी के कुंए, नलकूप, बिजली की मोटर, बिजली की फिटिंग और फल वाले पेड़ों की क्षति जिसका आकलन अलग किया जाना चाहिए ।	इसके लिए क्षतिपूर्ति की राशि आकलित वास्तविक हानि के बराबर होनी चाहिए । जब तक आकलन न हो 500 रुपए का तत्काल अनुदान दिया जाना चाहिए ।

इस बीच ऊपर वर्णित नकद राहत की ये मात्रायें **आन्ध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु** और **उत्तर प्रदेश** राज्यों द्वारा स्वीकार की जा चुकी हैं । **असम** और **पश्चिम बंगाल** राज्यों तथा **दिल्ली** संघ राज्य क्षेत्र ने भी यह योजना स्वीकार कर ली है परन्तु इसके वास्तविक कार्यान्वयन के बारे में स्थिति की

अभी जानकारी प्राप्त नहीं हुई है। **जम्मू-काश्मीर** ने अभी यह योजना स्वीकार नहीं की है। **पंजाब** ने अत्याचार से पीड़ित व्यक्तियों को विभिन्न राहत निधियों से अनुग्रह अनुदान के लिए प्रावधान किया है। यह देखा गया है कि बहुत बार नकद राहत दुर्घटना के तत्काल बाद नहीं दी जाती और राज्य सरकारें जांच के अन्तिम निर्णय की प्रतीक्षा करती हैं। अत: यह सुझाव है कि **अत्याचारों से पीड़ित व्यक्तियों को नकद राहत देने के लिए तत्परता से कार्यवाही की जानी चाहिए।**

अत्याचारों के मामले जिन पर इस कार्यालय द्वारा कार्यवाही की गई

10. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर किए किए अत्याचारों के मामलों को समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचारों के अतिरिक्त उन अभ्यावेदनों पर भी यह कार्यालय कार्यवाही करता है जो इसे प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त होते हैं। इस कार्यालय द्वारा ऐसे सभी मामलों में तत्परता से कार्यवाही की गई है। इस कार्यालय में 1981 से 1986 तक प्राप्त ऐसे अभ्यावेदनों की संख्या नीचे दी गई है —

सारणी-5

वर्ष	हत्या	गम्भीर चोट	बलात्कार	आगजनी	अन्य अपराध	कुल
1981	26	31	8	1	444	510
1982	26	24	7	1	501	559
1983	25	12	10	1	794	842
1984	27	2	14	—	558	601
1985	46	25	17	10	526	624
1986	66	1	23	7	593	690
योग	216	95	79	20	3416	3826

11. अत्याचारों के बारे में केवल सांख्यिकीय आंकड़ों और उनके कारणों के अन्तिम विश्लेषण तथा वित्तीय रूप में राहत की योजना से देश में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर होने वाले अत्याचारों का प्रश्न पूरे रूप में सामने नहीं आता क्योंकि इन मामलों में से अधिकांश केवल स्थानीय घटनाएं होकर रह जाती है और कुछ का पता अधिक व्यापक रूप से लग जाता है और वे स्थानीय तथा राष्ट्रीय समाचार पत्रों में भी छप जाते हैं। कुछ पीड़ित व्यक्ति कभी-कभी इस कार्यालय सहित सीधे विभिन्न अधिकारियों के पास भी पहुंचते हैं। सामूहिक हमले और जघन्य अपराध बड़े पैमाने पर होते हैं तो उनका पूरा धुवांधार प्रचार किया जाता है, परन्तु जैसे ही प्रचार माध्यम अन्य विषयों पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं वे मामले ठंडे पड़ जाते हैं।

12. बिहार में, विशेष रूप से जहानाबाद जिले में मजदूरी और भूमि कब्जों के विवाद एक के बाद एक हत्याओं के मूल कारण रहे हैं। अरवल में भूमि के एक छोटे से टुकड़े का मामला पुलिस द्वारा गोली चलाए जाने का कारण बन गया था जिसमें रिपोर्टों के अनुसार 11 व्यक्ति मौके पर ही मर गए थे और घायल हुए 20 व्यक्तियों में से 9 व्यक्तियों की अस्पताल में मृत्यु हो गई थी। बहुत से महत्वपूर्ण व्यक्तियों ने और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त ने भी उक्त प्रभावित गांव का दौरा किया था। इस घटना के बारे में बहुत-सी रिपोर्टें रही हैं। मुख्य कारण सामाजिक और आर्थिक हैं जो किसी विशिष्ट स्थिति तक सीमित नहीं हैं परन्तु अधिक व्यापक हैं जिनका उल्लेख आयुक्त द्वारा उस गांव का दौरा करने के बाद अपनी रिपोर्ट में किया गया था (अनुलग्नक 7)। चूंकि इस घटना के मूल कारणों पर विचार नहीं किया गया है, उस क्षेत्र में पुरानी स्थिति समाप्त होती प्रतीत नहीं होती बल्कि बिगड़ती प्रतीत होती है।

13. जबकि जहानाबाद का मामला अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों द्वारा अपने अधिकार प्राप्त करने के लिए संगठित रूप से पहल किए जाने के परिणामस्वरूप हुआ है, जो कि अपवाद है, इस प्रकार की घटनाएं सामान्यत: शक्तिशाली समूहों और अनुसूचित जातियों के बीच स्थानीय विवादों से संबंधित हैं। उदाहरण के लिए **उत्तर प्रदेश** में बलिया जिले के चकरसूल गांव में हरिजनों और ठाकुरों में दो वर्ष से एक भूमि विवाद चल रहा था। इस भूमि का कब्जा गांव के ठाकुरों के प्रतिशोध के भय के कारण नहीं लिया जा सका। इस मामले में इतना अधिक तनाव था कि उस समय एक विवाद खड़ा हो गया जब अनुसूचित जातियों का एक व्यक्ति केवल बांस की पत्तियां इक्ट्ठी करने के लिए उस विवादग्रस्त भूमि पर गया जिसका ठाकुरों ने तत्परता से विरोध किया और हमला कर दिया जिसमें चार हरिजन मारे गए। इस मामले की पुलिस द्वारा सामान्य तौर पर जांच की गई थी। मुख्य मंत्री ने इस गांव का दौरा किया और मृतकों तथा घायलों के निकट संबंधियों को क्षति-पूर्ति मंजूर की। यह मामला अभी न्यायालय में लटका पड़ा है।

14. मध्य प्रदेश के मंदसौर जिले के दीपाखेड़ा गांव का एक मामला सामने आया है जिससे पता चलता है कि किस प्रकार उस गांव के शक्तिशाली लोग निर्धन वर्ग पर अपना दबदबा बनाए रखना चाहते हैं। एक व्यक्ति ने जो स्थानीय विधायक था, अनुसूचित जाति की एक महिला को काम पर रखा था। वह बतौर बंधुआ कार्य कर रही थी और उसका अपराध केवल यह था कि उसने अपने मालिक से थोड़ी-सी अधिक मजदूरी मांगी थी। इस पर उसे निर्दयतापूर्वक पीटा गया और बाहर फेंक दिया गया जिससे उसे गंभीर चोटें लगी थीं। इस मामले की सबसे अधिक हेय बात यह थी कि वह किसी प्राइवेट डॉक्टर या पड़ोस के किसी सरकारी चिकित्सालय से इलाज नहीं करा सकी थी और केवल संयोगवश उसका मामला स्वयंसेवी कार्यकर्ताओं के सामने आया जिन्होंने इसकी जानकारी पड़ोसी जिले इंदौर के कलेक्टर को कराई और इस प्रकार वह इन्दौर जैसे बड़े शहर में एक अस्पताल में गुमनाम दाखिल कराई जा सकी जहां पर गंभीर चोटों के लिए उसका इलाज किया गया। अब यह मामला भुला दिया गया प्रतीत होता है।

15. जब किसी क्षेत्र में किन्हीं सामाजिक-आर्थिक कारणों से तनाव विद्यमान होता है वहां एक छोटी-सी घटना भी एक ऐसी चिंगारी के रूप में कार्य कर सकती है जिसके परिणामस्वरूप एक बड़ा विस्फोट हो सकता है। जिला प्रकाशम (आन्ध्र प्रदेश) के गांव करमचेडू में एक किसान कीचड़ से सनी अपनी भैंस को नहला रहा था और हरिजनवाड़ा के पीने के पानी के कुंए में गंदा पानी फेंक रहा था। इसका प्रतिवाद एक हरिजन युवक ने किया। इस पर एक बड़ी भीड़ ने हरिजनों पर हमला कर दिया जिसमें 5 हरिजनों की मृत्यु हो गई और 19 व्यक्ति घायल हो गए। उनके घरों पर भी धावा बोला गया और उनकी सम्पत्तियों को काफी हानि पहुंची। माडिगा लोगों (अनुसूचित जाति) को चिराला में शरण लेनी पड़ी। जबकि इस घटना पर आपराधिक मामले आरम्भ किए जा चुके हैं, सरकार द्वारा एक जांच आयोग भी नियुक्त किया गया जिसने अपनी रिपोर्ट 31-8-1987 को प्रस्तुत की।

16. ऐसे मामलों को, जिनका संबंध अनुसूचित जातियों और जनजातियों से है, पक्षपात और भेदभावपूर्ण तरीके से निपटाना एक सामान्य-सी बात है। जिला गया (बिहार) के खिजरीसराय थाने के गांव बाना में एक लड़के की मृत्यु की जांच के दौरान पुलिस ने काफी संख्या में हरिजनों को गिरफ्तार किया, उनके घरों को लूटा और हिरासत के दौरान उन्हें यातनाएं दीं। पुलिस के उप महानिरीक्षक (हरिजन प्रकोष्ठ) ने यह पुष्टि की कि स्थानीय पुलिस ने अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति को बुरी तरह पीटा था और उसके पैर की हड्डी टूट गई थी। थाने के निरीक्षक के विरुद्ध भी कार्यवाही आरम्भ की गई थी। इस मामले को विधि सहायता समिति द्वारा भी उच्चतम न्यायालय के समक्ष रखा गया जिसके फलस्वरूप प्रभावित व्यक्तियों को राहत मिली।

17. जिला बस्तर (मध्य प्रदेश) के कुआकोण्डा थाने के अर्वे गांव में पुलिस ने डाके के आरोप में एक आदिवासी युवक और उसके साथियों को गिरफ्तार किया। जांच से पता चला कि ये अभियुक्त सक्षम न्यायालय की अनुमति के बिना 6 से 7 दिन तक पुलिस की हिरासत में रखे गए थे। जब वे हिरासत में थे तब उन्हें इतनी बुरी तरह से पीटा गया था कि उसके परिणामस्वरूप आदिवासी युवक की मृत्यु हो गई। इस मामले की जांच की गई और इससे संबंधित एक हवलदार और दो सिपाहियों को निलंबित कर दिया गया।

18. जिला थाणे (महाराष्ट्र) के जवहार तालुक के गांव चम्हारशेट भूसरपाड़ा की एक घटना वनों के मामले पर झगड़े की ओर ध्यान दिलाती है जिससे पता चलता है कि आम तौर पर ऐसे मामलों में शक्ति का प्रयोग किया जाता है। यह विवाद आदिवासियों द्वारा पेड़ों की कटाई और इमारती लकड़ी का अपनी झोंपड़ियों में प्रयोग करने के आरोपित मामले से उत्पन्न हुआ था। जब वन अधिकारियों ने इमारती लकड़ी को जब्त करने का प्रयत्न किया तो इसका लोगों द्वारा प्रतिरोध किया गया। आदिवासियों ने यह कहा कि उनका टोला डूब के क्षेत्र में आने वाला था और उन्हें अन्यत्र नए टोले में बसाना था, इसलिए नए आवास के लिए उन्होंने इमारती लकड़ी जमा की थी। अगले दिन पुलिस और वन अधिकारी मजिस्ट्रेट को सूचित किए बिना अतिरिक्त बल के साथ उस गांव में गए। लोगों द्वारा इसका प्रतिरोध किया गया जिसके परिणामस्वरूप गोली चलाई गई जिसमें एक आदिवासी की मृत्यु हो गई और एक अन्य घायल हो गया। यह मामला इस कार्यालय द्वारा महाराष्ट्र सरकार के पास भेजा गया जिसकी रिपोर्ट अभी आनी शेष है।

19. महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार और उनके साथ बलात्कार के मामलों की संख्या बहुत है। उनके परिणामस्वरूप संघर्ष भी होते हैं। जिला कटक (उड़ीसा) के जरी गांव में अनुसूचित जाति के रिक्शा चलाने वाले एक व्यक्ति पर यह आरोप लगाया गया था कि उसने एक सवर्ण हिन्दू लड़की का अपहरण किया था और उसे कारावास की सजा दी गई थी। कारावास से उसके छूटने के बाद जैसे ही तथ्यों की जानकारी हुई यह मामला तूल पकड़ गया। अनुसूचित जातियों के व्यक्ति भी संगठित हो गए और जैसा आरोप लगाया गया है उन्होंने कुछ सवर्ण हिन्दुओं के घरों को लूट लिया और उनमें आग भी लगा दी। पुलिस ने अनुसूचित जातियों के चार व्यक्तियों को गिरफ्तार किया। इस घटना के बाद सवर्ण हिन्दुओं ने

हरिजनों के घरों में आग लगा कर इसका बदला लिया। इस घटना में अनसूचित जातियों के दो व्यक्तियों की मृत्यु हो गई और कई अन्य घायल हुए थे। इस मामले का व्यापक प्रचार हुआ और पीड़ित व्यक्तियों को राहत दी गई। इन दोनों गुटों में समझौता कराने और अनुसूचित जातियों में विश्वास पैदा करने के लिए प्रयत्न किए गए।

जोगिन प्रथा

20. फरवरी 1986 में समाचारपत्रों में इस बात की व्यापक सूचना प्रसारित की गई कि आन्ध्र प्रदेश के निज़ामाबाद जिले में अनुसूचित जातियों की लगभग 10,000 "जोगिनें" थीं। इन अभागी युवतियों की शादी उनके माता-पिताओं द्वारा महाविपत्तियों जैसे सूखा या महामारी से बचाव के लिए बलिदान के रूप में गांव देवता से की जाती है। इसके बाद उनका शोषण काम-तृप्ति के रूप में पहले गांव के ऊंची जातियों के जमींदारों और धनाढ्य व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जिन्होंने अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए "ईश्वरीय विवाह" की यह प्रक्रिया आरम्भ की थी। प्रायः पहले वे इन लड़कियों को मादक द्रव्यों की लत में फंसाते हैं और फिर अपनी काम वासना तृप्ति के रूप में उनका शोषण करते हैं। वेश्यावृत्ति की यह प्रणाली तेलंगाना के विस्तृत क्षेत्र में विद्यमान है जो कर्नाटक से लगा हुआ है जहां देवदासियों की इसी प्रकार की प्रथा विद्यमान है। परन्तु जोगिनों की प्रथा इन देवदासियों की प्रथा से भी बदतर है जो एक देवता के प्रति समर्पित होती हैं और मंदिर की देखभाल करती हैं। देवदासियों के विपरीत, जो मन्दिर में रहती हैं, जोगिनें अपने माता-पिता के साथ अपनी झुग्गी में रहती हैं जहां पर जमीदार उनके पास आते हैं। वे अपने सम्भोग से उत्पन्न होने वाले बच्चों के लिए कोई जिम्मेदारी नहीं लेते हैं और लड़कियों के लिए जोगिनें बनने के सिवाय और कोई विकल्प नहीं होता। ये लड़कियां दुबारा शादी नहीं कर सकती, गांव से बाहर नहीं जा सकती और उनकी स्थिति बंधुआ मजदूरों से अच्छी नहीं होती। यह "स्वीकृत वेश्यावृत्ति" विशेष रूप से माला और मडिगा लोगों (अनुसूचित जातियां) में दीर्घ काल से जारी है परन्तु इसकी ओर निजामाबाद की कलेक्टर श्रीमती आशा मूर्ति का ध्यान 1985 में जब वे कुछ गांवों का दौरा कर रही थीं, आकर्षित हुआ था। प्रत्यक्ष रूप से निजामाबाद के और इस राज्य के अन्य स्थानों के सरकारी कर्मचारी इस अत्याचारपूर्ण प्रणाली के बारे में पहले से जानते थे परन्तु श्रेय इस महिला अधिकारी को जाता है जिन्होंने इस बुराई को समाप्त करने और इन अभागी महिलाओं और लड़कियों के लिए एक केन्द्र खोल कर उनका पुनर्वास करने के लिए पहल की थी।

21. जोगिनों/बासवियों/पार्वतियों (देवदासी प्रथा का एक अंश) की प्रथा का प्रचलन आन्ध्र प्रदेश के अनेक क्षेत्रों में देखा गया है। आदिलाबाद, निजामाबाद, मेडक रंगारेड्डी और हैदराबाद जिलों में ये महिलाएं साधारण तौर पर जोगिनों के रूप में जानी जाती हैं। करीमनगर जिले में वे पार्वतियों के रूप में जानी जाती हैं, रायलसीमा में बासवियों के रूप में और निल्लूर और चित्तूर जिलों में मातम्मा या तायम्मा के रूप में जानी जाती हैं। इस राज्य में जोगियों/बासवियों की प्रथा के प्रचलन का सर्वेक्षण जिला कलेक्टरों और आन्ध्र प्रदेश अनुसूचित जाति वित्त निगम द्वारा किया गया था। जनवरी 1986 के अन्त तक इस सर्वेक्षण में 12 जिलों में 15,850 जोगिनों का पता चला (करीमनगर 9664, महबूबनगर 1428, निज़ामाबाद 1251, वारंगल 1241, अनंतपुर 556, कर्नूल 431, हैदराबाद 387, मेडक 365, आदिलाबाद 324, चित्तूर 83, निल्लूर 70, रंगारेड्डी 50)। 8 जिलों में इनकी संख्या शून्य बताई गई। यह पाया गया कि 80 प्रतिशत से अधिक जोगिनें अनुसूचित जातियों की थीं।

22. इस समस्या पर राष्ट्रीय स्तर पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए हैदराबाद के एक संगठन राष्ट्रीय सामाजिक कार्य संस्थान ने 16-17 फरवरी, 1987 को नई दिल्ली में जोगिन कल्याण पर एक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया था। इसकी अध्यक्षता आन्ध्र प्रदेश की राज्यपाल कु० कुमुदबेन जोशी ने की थी। इस सम्मेलन ने कई संकल्प पारित किए थे। राज्य सरकार ने राज्य विधान सभा में आन्ध्र प्रदेश देवदासी (समर्पण निषेध) विधेयक, 1987 प्रस्तुत किया। इसके अतिरिक्त जोगिन महिलाओं की मुक्ति, पुनर्वास और आर्थिक विकास की एक नई योजना आन्ध्र प्रदेश में 1987-88 से आरम्भ की गई है और इस योजना के लिए राज्य की विशेष संघटक योजना में 40 लाख रुपए का प्रावधान किया गया है। निजामाबाद में 10 लाख रुपए की लागत से जोगिन महिलाओं के लिए एक गृह स्थापित करने का प्रस्ताव भी किया गया है। इस प्रकार कुल परिव्यय 50 लाख रुपए होगा। यह सुझाव दिया जाता है कि **इस कुत्सित प्रथा से प्रभावित महिलाओं को नकद क्षतिपूर्ति दी जाय ताकि वे इसे छोड़ दें और किन्हीं अन्य सम्मानजनक और लाभप्रद व्यवसायों में लग जायें। जोगिनों की शादियों का प्रबन्ध करने के लिए स्वैच्छिक संगठनों को प्रोत्साहित किया जाय। राज्य सरकार को उन पंचायतों के लिए भी नकद पुरस्कार देने की वांछनीयता पर विचार करना चाहिए जो अपने गांवों से अपने क्षेत्राधिकार के अधीन इस प्रथा को समाप्त करने के लिए ईमानदारी से प्रयास करती हैं। उन अन्य राज्यों को भी जहां देवदासी प्रथा विद्यमान है उनकी मुक्ति, पुनर्वास और आर्थिक विकास के लिए विशिष्ट योजनाएं अनुसूचित जातियों के लिए अपनी विशेष संघटक योजनाओं में शामिल करनी चाहिए जैसा आन्ध्र प्रदेश में किया गया है।**

अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कल्याण के लिए संसदीय समिति

23. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण की संसदीय समिति ने "अनुसूचित जातियों और जनजातियों

पर अत्याचार" विषय पर अक्तूबर 17--18, 1985 को कल्याण मंत्रालय की जांच की थी और अपनी रिपोर्ट (ग्याहरवीं रिपोर्ट) संसद के दोनों सदनों में 25-4-1986 को प्रस्तुत की थी। सितम्बर 1985 के अन्त में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के कल्याण का विषय गृह मंत्रालय से हटाकर नए पुनर्गठित कल्याण मंत्रालय को दे दिया गया था जिससे स्पष्ट तौर पर यह सुनिश्चित किया जा सके कि अनुसूचित जातियों/जनजातियों के कल्याण के विषय पर सर्वोच्च स्तर पर गहनतर तथा सतत ध्यान दिया जाए। परन्तु इस समिति ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों पर अत्याचारों के विषय को गृह मंत्रालय से कल्याण मंत्रालय को हस्तांतरित करने के सरकार के निर्णय को पसन्द नहीं किया। समिति ने यह विचार व्यक्त किया कि अत्याचारों के मामले कानून और व्यवस्था की समस्या से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं और यदि कल्याण मंत्रालय को सूचना प्राप्त करने या राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्र प्रशासनों को आवश्यक निदेश जारी करने के मामले में गृह मंत्रालय की सहायता की आवश्यकता पड़े तो इसका परिणाम केवल परिहार्य विलम्ब ही होगा। अतः इस समिति ने यह सिफारिश की कि "अनसूचित जातियों और जनजातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए सभी कल्याण कार्यक्रमों के कार्यान्वयन का कार्य कल्याण मंत्रालय में किया जाना चाहिए परन्तु जहां तक अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों के विषय का संबंध है यह उचित रूप से गृह मंत्रालय के सुपुर्द किया जाना चाहिए जिसके नियंत्रण में कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए सभी प्रशासनतंत्र और आज्ञायें तथा हिदायतें जारी करने के साधन हैं"। परन्तु कल्याण मंत्रालय उस सिफारिश से सहमत नहीं हुआ।

अनुलग्नक 1

राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों के विरुद्ध भा० द० सं० के अधीन हुए अपराधों की संख्या दर्शाने वाला विवरणपत्र

वर्ष	हत्या	गम्भीर चोट	बलात्कार	आगजनी	अन्य अपराध	योग
1	2	3	4	5	6	7
1981	493	1492	604	1295	10434	14318
1982	514	1429	635	1035	11441	15054
1983	525	1351	640	993	11440	14949
1984	541	1454	692	973	12327	15987
1985	502	1367	700	980	11824	15373
1986	564	1408	727	1002	11715	15416
योग .	3139	8501	3998	6278	69181	91097

राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में जनजातियों के व्यक्तियों के विरुद्ध भा० द० सं० के अधीन अपराधों की संख्या दर्शाने वाला विवरणपत्र

वर्ष	हत्या	गम्भीर चोट	बलात्कार	आगजनी	अन्य अपराध	योग
1	2	3	4	5	6	7
1981	110	260	259	146	2657	3432
1982	133	320	256	132	3261	4102
1983	161	310	262	238	3163	4134
1984	171	348	312	132	3327	4290
1985	148	323	243	198	3143	4055
1986	160	311	285	232	2957	3945
योग .	883	1872	1617	1078	18508	23958

अनुलग्नक 2

वर्ष 1981, 1982, 1983, 1984, 1985 और 1986 के दौरान विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में गैर-अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों द्वारा अनुसूचित जातियों के सदस्यों के विरुद्ध किए गए अपराधों के मामलों की संख्या दर्शाने वाला विवरण पत्र

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	इन वर्षों में दर्ज मामलों की संख्या						
		1981	1982	1983	1984	1985	1986	योग
1.	आन्ध्र प्रदेश .	206	213	181	190	166	193	1149
2.	बिहार . .	2033	2073	1809	1845	1452	1661	10873
3.	गुजरात .	654	455	476	582	750	649	3566
4.	हरियाणा .	74	144	113	120	121	82	654
5.	हिमाचल प्रदेश. .	69	73	47	60	49	50	348
6.	जम्मू-काश्मीर .	124	45	23	12	53	89	346
7.	कर्नाटक . .	397	363	194	169	294	182	1599
8.	केरल . .	260	145	149	148	300	476	1478
9.	मध्य प्रदेश .	4033	4749	5292	5537	5133	4421	29165
10.	महाराष्ट्र . .	695	680	704	570	428	462	3539
11.	उड़ीसा . .	80	150	147	150	159	183	869
12.	पंजाब . .	51	73	36	47	32	19	258
13.	राजस्थान .	1562	1731	1604	1648	1437	1481	9463
14.	तमिलनाडु . .	199	153	299	689	852	758	2950
15.	त्रिपुरा . .	18	3	—	—	—	—	21
16.	उत्तर प्रदेश .	3825	3977	3851	4200	4135	4697	24685
17.	पश्चिम बंगाल .	23	17	19	18	11	9	97
18.	दिल्ली . .	6	1	1	1	1	—	10
19.	गोआ, दमण और दीव	1	2	1	—	—	—	4
20.	पांडिचेरी .	8	7	3	1	—	4	23
	योग .	14318	15054	14949	15987	15373	15416	91097

टिप्पण — इस छह वर्ष की अवधि में असम में 1983 में हुए केवल एक मामले की रिपोर्ट दी गई थी। दादरा तथा नागर हवेली में कोई भी मामला न होने की रिपोर्ट भेजी गई थी।

अनुलग्नक 3

वर्ष 1981, 1982, 1983, 1984, 1985 तथा 1986 में गैर-अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों द्वारा अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के विरुद्ध हुए अत्याचारों के मामलों की संख्या दर्शाने वाला विवरण पत्र

क्रम स०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	इन वर्षों में दर्ज मामलों की संख्या						
		1981	1982	1983	1984	1985	1986	योग
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	आन्ध्र प्रदेश .	29	31	31	54	22	43	210
2.	असम . .	—	—	—	13	23	19	55
3.	बिहार . .	104	85	116	193	221	154	873
4.	गुजरात . .	95	101	94	114	125	171	700
5.	कर्नाटक . .	5	8	4	1	1	—	19
6.	केरल . .	9	10	18	104	80	85	306
7.	मध्य प्रदेश . .	2524	3110	3119	3144	2955	2721	17573
8.	महाराष्ट्र . .	233	222	240	159	169	221	1244
9.	मणिपुर . .	—	—	—	—	2	17	19
10.	नागालैंड . .	—	—	—	—	—	4	4
11.	उड़ीसा . .	12	43	53	55	46	52	261
12.	पंजाब . .	—	1	—	—	—	—	1
13.	राजस्थान . .	386	472	439	400	379	420	2496
14.	तमिलनाडु . .	2	—	—	4	1	3	10
15.	उत्तर प्रदेश . .	—	—	—	—	4	—	4
16.	पश्चिम बंगाल .	25	19	20	15	16	16	111
17.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह . .	—	—	—	3	—	—	3
18.	अरुणाचल प्रदेश .	8	—	—	30	11	10	59
19.	दादरा और नागर हवेली	—	—	—	1	—	3	4
20.	मिजोरम . .	—	—	—	—	—	6	6
	योग .	3432	4102	4134	4290	4055	3945	23958

टिप्पण — इस छह वर्ष की अवधि में **हिमाचल प्रदेश, मेघालय, सिक्किम**, त्रिपुरा, **गोवा, दमण** और दीव तथा **लक्षद्वीप** से कोई भी मामला न होने की रिपोर्ट भेजी गई थी। यद्यपि **पंजाब** में कोई अनुसूचित जनजातियां नहीं है, तथापि उस राज्य से 1982 में एक मामला होने की रिपोर्ट भेजी गई थी।

अनुलग्नक 4

वर्ष 1981 से 1986 के दौरान राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों के सदस्यों के विरुद्ध भा०द०स० के अधीन हुए अपराधों की संख्या दर्शाने वाला विवरण-पत्र

क्रम सं०	राज्य/अपराध का स्वरूप	1981	1982	1983	1984	1985	1986	योग
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	आन्ध्र प्रदेश							
	हत्या . .	9	16	11	17	12	13	78
	गंभीर चोट . .	9	8	26	8	4	27	82
	बलात्कार . .	22	17	25	14	23	19	120
	आगजनी . .	7	13	5	11	5	6	47
	अन्य अपराध . .	159	159	114	140	122	128	822
	योग .	206	213	181	190	166	193	1149
2.	बिहार							
	हत्या . .	69	72	71	95	54	57	418
	गंभीर चोट . .	188	205	152	179	110	113	947
	बलात्कार . .	80	97	87	83	63	80	490
	आगजनी . .	388	321	267	201	142	177	1496
	अन्य अपराध . .	1308	1378	1232	1287	1083	1234	7522
	योग .	2033	2073	1809	1845	1452	1661	10873
3.	गुजरात							
	हत्या . .	14	13	20	13	22	18	100
	गंभीर चोट . .	75	66	48	63	64	60	376
	बलात्कार . .	3	6	8	10	8	9	44
	आगजनी . .	142	25	22	12	51	18	270
	अन्य अपराध .	420	345	378	484	605	544	2776
	योग .	654	455	476	582	750	649	3566
4.	हरियाणा							
	हत्या . .	—	1	1	3	11	4	20
	गंभीर चोट . .	26	21	1	3	—	4	55
	बलात्कार . .	17	59	23	26	26	12	163
	आगजनी . .	3	7	4	6	3	2	25
	अन्य अपराध . .	28	56	84	82	81	60	391
	योग . .	74	144	113	120	121	82	654

1	2	3	4	5	6	7	8	9
5.	हिमाचल प्रदेश							
	हत्या . .	—	1	2	—	1	1	5
	गंभीर चोट . .	7	2	4	7	9	6	35
	बलात्कार . .	9	2	3	4	3	3	24
	आगजनी . .	2	3	2	2	3	3	15
	अन्य अपराध .	51	65	36	47	33	37	269
	योग .	69	73	47	60	49	50	348
6.	जम्मू--काश्मीर							
	हत्या . .	2	2	1	—	4	3	12
	गंभीर चोट .	18	2	1	—	4	7	32
	बलात्कार . .	4	5	2	1	5	4	21
	आगजनी . .	1	—	—	1	—	2	4
	अन्य अपराध .	99	36	19	10	40	73	267
	योग .	124	45	23	12	53	89	336
7.	कर्नाटक							
	हत्या . . .	24	19	15	16	20	6	100
	गंभीर चोट . .	9	5	5	2	7	1	29
	बलात्कार . .	7	6	9	13	11	6	52
	आगजनी . .	50	46	10	14	49	10	179
	अन्य अपराध . .	307	287	155	124	207	159	1239
	योग .	397	363	194	169	294	182	1599
8.	केरल							
	हत्या . .	4	4	7	8	6	9	38
	गंभीर चोट . .	7	5	1	5	4	4	26
	बलात्कार . .	7	7	18	11	19	18	80
	आगजनी . .	7	7	9	6	10	8	47
	अन्य अपराध . .	235	122	114	118	261	437	1287
	योग .	260	145	149	148	300	476	1478
9.	मध्य प्रदेश							
	हत्या . .	74	88	108	122	75	93	560
	गंभीर चोट .	353	366	323	351	347	220	1960
	बलात्कार . .	134	148	183	213	194	183	1055
	आगजनी . .	249	173	211	192	196	168	1189
	अन्य अपराध .	3223	3974	4467	4659	4321	3757	24401
	योग .	4033	4749	5292	5537	5133	4421	29165

1	2	3	4	5	6	7	8	9
10. **महाराष्ट्र**								
हत्या	. .	24	19	17	10	13	15	98
गंभीर चोट	. .	85	85	73	31	35	36	345
बलात्कार	. .	51	48	35	39	28	29	230
आगजनी	. .	53	28	36	33	20	25	195
अन्य अपराध		482	500	543	457	332	357	2671
योग	.	695	680	704	570	428	462	3539
11. **उड़ीसा**								
हत्या	. .	5	10	9	8	1	4	37
गंभीर चोट	. .	11	16	16	13	19	8	83
बलात्कार	. .	7	11	7	9	12	8	54
आगजनी	. .	11	13	10	12	10	17	73
अन्य अपराध	. .	46	100	105	108	117	146	622
योग	.	80	150	147	150	159	183	869
12. **पंजाब**								
हत्या	. .	9	13	8	6	8	10	54
गंभीर चोट	. .	10	8	9	3	3	1	34
बलात्कार	. .	12	8	7	10	11	4	52
आगजनी	. .	—	3	—	—	1	—	4
अन्य अपराध	. .	20	41	12	28	9	4	114
योग	.	51	73	36	47	32	19	258
13. **राजस्थान**								
हत्या	. .	35	37	35	24	29	43	203
गंभीर चोट	. .	194	174	174	192	167	156	1057
बलात्कार	. .	66	58	75	63	101	106	469
आगजनी	. .	64	63	69	94	66	61	417
अन्य अपराध	.	1203	1399	1251	1275	1074	1115	7317
योग	.	1562	1731	1604	1648	1437	1481	9463

1	2	3	4	5	6	7	8	9
14.	**तमिलनाडु**							
	हत्या . .	2	5	14	6	20	18	65
	गंभीर चोट . .	2	5	7.	13	12	8	47
	बलात्कार . .	7	2	8	16	18	14	65
	आगजनी . .	12	5	2	10	13	16	58
	अन्य अपराध . .	176	136	268	644	789	702	2715
	योग .	199	153	299	689	852	758	2950
15.	**त्रिपुरा**							
	हत्या . .	2	—	—	—	—	—	2
	गंभीर चोट . .	6	2	—	—	—	—	8
	बलात्कार . .	—	1	—	—	—	—	1
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध . .	10	—	—	—	—	—	10
	योग .	18	3	—	—	—	—	21
16.	**उत्तर प्रदेश**							
	हत्या . .	214	208	202	213	223	270	1330
	गंभीर चोट . .	490	457	507	580	582	754	3370
	बलात्कार . .	169	152	148	176	177	229	1051
	आगजनी . .	303	327	344	377	408	489	2248
	अन्य अपराध . .	2649	2833	2650	2854	2745	2955	16686
	योग .	3825	3977	3851	4200	4135	4697	24685
17.	**पश्चिम बंगाल**							
	हत्या . . .	4	6	4	—	3	—	17
	गंभीर चोट . .	2	2	4	4	—	1	13
	बलात्कार . .	7	4	1	4	1	3	20
	आगजनी . .	1	1	2	2	3	—	9
	अन्य अपराध . .	9	4	8	8	4	5	38
	योग .	23	17	19	18	11	9	97
18.	**दिल्ली**							
	हत्या . .	2	—	—	—	—	—	2
	गंभीर चोट . .	—	—	—	—	—	—	—
	बलात्कार . .	2	1	—	—	—	—	3
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध .	2	—	1	1	1	—	5
	योग .	6	1	1	1	1	—	10

1	2	3	4	5	6	7	8	9
19.	गोआ, दमण और दीव							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	—	—
	गंभीर चोट . .	—	—	—	—	—	—	—
	बलात्कार . .	—	1	—	—	—	—	1
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध .	1	1	1	—	—	—	3
	योग .	1	2	1	—	—	—	4
20.	पांडिचेरी —							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	—	—
	गंभीर चोट . .	—	—	—	—	—	2	2
	बलात्कार . .	—	2	1	—	—	—	3
	आगजनी . .	2	—	—	—	—	—	2
	अन्य अपराध . .	6	5	2	1	—	2	16
	योग .	8	7	3	1	—	4	23

अनुलग्नक 5

वर्ष 1981 से 1986 के दौरान राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के विरुद्ध भा० द० सं० के अधीन हुए अपराधों की संख्या दर्शाने वाला विवरण पत्र

क्र० सं०	राज्य/अपराध का स्वरूप	1981	1982	1983	1984	1985	1986	योग
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	**आंध्र प्रदेश**							
	हत्या	—	1	1	2	2	4	10
	गंभीर चोट	--	1	9	5	--	2	17
	बलात्कार	8	11	8	21	9	8	65
	आगजनी	--	1	1	--	--	1	3
	अन्य अपराध	21	17	12	26	11	28	115
	योग	29	31	31	54	22	43	210
2.	**असम**							
	हत्या	—	—	—	--	--	--	--
	गंभीर चोट	—	—	--	2	4	—	6
	बलात्कार	—	--	—	--	1	1	2
	आगजनी	—	--	--	--	--	--	—
	अन्य अपराध	—	—	—	11	18	18	47
	योग	—	—	--	13	12	19	55
3.	**बिहार**							
	हत्या	4	5	9	10	12	10	50
	गंभीर चोट	17	6	10	16	15	8	72
	बलात्कार	44	21	12	37	26	29	169
	आगजनी	13	1	15	8	12	6	55
	अन्य अपराध	26	52	70	122	156	101	527
	योग	104	85	116	193	221	154	873
4.	**गुजरात**							
	हत्या	4	7	8	8	10	12	49
	गंभीर चोट	15	18	30	28	24	39	154
	बलात्कार	8	2	7	9	8	12	46
	आगजनी	5	4	5	1	1	1	17
	अन्य अपराध	63	70	44	68	82	107	434
	योग	95	101	94	114	125	171	700

1 2	3	4	5	6	7	8	9
5. कर्नाटक							
हत्या	1	1	4	1	—	—	7
गंभीर चोट	—	—	—	—	—	—	—
बलात्कार	—	1	—	—	—	—	1
आगजनी	—	3	—	—	—	—	3
अन्य अपराध	4	3	—	—	1	—	8
योग	5	8	4	1	1	—	19
6. केरल							
हत्या	1	2	—	—	2	1	6
गंभीर चोट	—	—	—	1	1	2	4
बलात्कार	2	2	4	14	5	8	35
आगजनी	—	—	—	3	1	3	7
अन्य अपराध	6	6	14	86	71	71	254
योग	9	10	18	104	80	85	306
7. मध्य प्रदेश							
हत्या	67	94	116	124	95	84	580
गंभीर चोट	147	196	175	214	204	169	1105
बलात्कार	143	164	177	172	138	163	957
आगजनी	98	85	188	97	168	197	833
अन्य अपराध	2069	2571	2463	2537	2350	2108	14098
योग	2524	3110	3119	3144	2955	2721	17573
8. महाराष्ट्र							
हत्या	13	6	13	9	9	15	65
गंभीर चोट	32	28	29	17	11	16	133
बलात्कार	30	20	20	24	25	19	138
आगजनी	20	9	7	4	5	9	54
अन्य अपराध	138	159	171	105	119	162	854
योग	233	222	240	159	169	221	1244
9. मणिपुर							
हत्या	—	—	—	—	1	1	2
गंभीर चोट	—	—	—	—	—	3	3
बलात्कार	—	—	—	—	—	1	1
आगजनी	—	—	—	—	—	—	—
अन्य अपराध	—	—	—	—	1	12	13
योग	—	—	—	—	2	17	19

1	2	3	4	5	6	7	8	9
10.	नागालैण्ड							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	1	1
	गम्भीर चोट . .	—	—	—	—	—	3	3
	बलात्कार . .	—	—	—	—	—	—	—
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध . .	—	—	—	—	—	—	—
	योग .	—	—	—	—	—	4	4
11.	उड़ीसा							
	हत्या . .	1	1	1	3	2	1	9
	गम्भीर चोट . .	—	1	4	5	5	—	15
	बलात्कार . .	6	15	8	15	7	12	63
	आगजनी . .	1	1	2	2	—	2	8
	अन्य अपराध . .	4	25	38	30	32	37	166
	योग .	12	43	53	55	46	52	261
12.	पंजाब							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	—	—
	गंभीर चोट . .	—	—	—	—	—	—	—
	बलात्कार . .	—	1	—	—	—	—	1
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध . .	—	—	—	—	—	—	—
	योग .	—	1	—	—	—	—	1
13.	राजस्थान							
	हत्या . .	16	14	9	14	13	25	91
	गम्भीर चोट . .	47	69	53	60	58	67	354
	बलात्कार . .	9	14	19	11	19	27	99
	आगजनी . .	9	27	19	16	11	12	94
	अन्य अपराध . .	305	348	339	299	278	289	1858
	योग .	386	472	439	400	379	420	2496
14.	तमिलनाडु							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	—	—
	गम्भीर चोट . .	—	—	—	—	—	—	—
	बलात्कार . .	—	—	—	1	—	—	1
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	1	1
	अन्य अपराध . .	2	—	—	3	1	2	8
	योग .	2	—	—	4	1	3	10

1	2	3	4	5	6	7	8	9
15.	उत्तर प्रदेश							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	—	—
	गम्भीर चोट . .	—	—	—	—	—	—	—
	बलात्कार . .	—	—	—	—	—	—	—
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध . .	—	—	—	—	4	—	4
	योग .	—	—	—	—	4	—	4
16.	पश्चिम बंगाल							
	हत्या . .	3	2	—	—	2	3	10
	गम्भीर चोट . .	2	1	—	—	—	1	4
	बलात्कार . .	9	5	7	8	5	4	38
	आगजनी . .	—	1	1	—	—	—	2
	अन्य अपराध . .	11	10	12	7	9	8	57
	योग .	25	19	20	15	16	16	111
17.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	—	—
	गम्भीर चोट . .	—	—	—	—	—	—	—
	बलात्कार . .	—	—	—	—	—	—	—
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध . .	—	—	—	3	—	—	3
	योग .	—	—	—	3	—	—	3
18.	अरुणाचल प्रदेश							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	—	—
	गम्भीर चोट . .	—	—	—	—	1	1	2
	बलात्कार . .	—	—	—	—	—	—	—
	आगजनी . .	—	—	—	1	—	—	1
	अन्य अपराध . .	8	—	—	29	10	9	56
	योग .	8	—	—	30	11	10	59

1	2	3	4	5	6	7	8	9
19.	दादरा और नागर हवेली							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	—	—
	गम्भीर चोट . .	—	—	—	—	—	—	—
	बलात्कार . .	—	—	—	—	—	—	—
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध . .	—	—	—	1	—	3	4
	योग .	—	—	—	1	—	3	4
20.	मिजोरम							
	हत्या . .	—	—	—	—	—	3	3
	गम्भीर चोट . .	—	—	—	—	—	—	—
	बलात्कार . .	—	—	—	—	—	1	1
	आगजनी . .	—	—	—	—	—	—	—
	अन्य अपराध . .	—	—	—	—	—	2	2
	योग .	—	—	—	—	—	6	6

अनुलग्नक 6

उड़ीसा में अनुसूचित जातियों/जनजातियों पर अत्याचार तथा उनके कारण

क्रम सं० कारण	1982	1983	1984	1985 (जून तक)	योग	प्रतिशत
अनुसूचित जातियां						
1. अचानक झगड़ा . . .	67	51	56	31	205	39.20
2. पुरानी रंजिश . . .	47	53	51	24	175	33.46
3. भूमि विवाद . . .	19	23	21	11	74	14.15
4. कामवासना . . .	11	7	9	5	32	6.12
5. दूषित भावना से शील भंग . .	3	6	5	5	19	3.63
6. जादू-टोना/अंधविश्वास . .	2	5	3	—	10	1.91
7. अप्राकृतिक अपराध . . .	1	—	5	—	6	1.15
8. पानी पर विवाद . . .	—	2	—	—	2	0.35
योग .	150	147	150	76	523	100.00
अनुसूचित जनजातियां						
1. अचानक झगड़ा . . .	8	16	19	8	51	28.98
2. कामवासना . . .	15	8	15	4	42	23.86
3. पुरानी रंजिश . . .	9	15	11	6	41	23.30
4. भूमि विवाद . . .	7	8	8	4	27	15.34
5. दूषित भावना से शील भंग . .	3	3	2	3	11	6.25
6. अंध विश्वास . . .	1	2	—	—	3	1.70
7. छल-कपट	—	1	—	—	1	0.57
योग .	43	53	55	25	176	100.00

अनुलग्नक 7

बिहार के गया जिले में स्थिति पर एक संक्षिप्त टिप्पण

(डॉ० ब्रह्मदेव शर्मा, अनसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त द्वारा जहानाबाद जिले के अरवल गांव में अनुसूचित जातियों पर अत्याचारों के मामले के संबंध में 8-5-86 को प्रधान मंत्री को प्रस्तुत किया गया)

मैंने पुलिस द्वारा 19-4-1986 को अरवल में गोली चलाए जाने के बाद पिछले सप्ताह कुछ दिन जहानाबाद, गया के गांवों में व्यतीत किए थे। मैं पटना में अधिकारियों और मुख्य मंत्री तथा अन्य राजनीतिक नेताओं से भी मिला था। पुलिस द्वारा 19-4-1986 को अरवल में गोली चलाए जाने के बाद पिछले सप्ताह कुछ दिन मैंने जहानाबाद गया के गांवो मे व्यतीत किए थे। मैं पटना मे अधिकारियों और मुख्य मंत्री तथा अन्य राजनितिक नेताओं से भी मिला था। यह दुर्भाग्य की बात है कि इस मामले में एक वर्ग द्वारा पुलिस की छवि तथा कथित नक्सलवादियों से दृढ़ता से निपटने के लिए राज्य के दृढ संकल्प के प्रतीक के रूप में उभारी जा रही है। साथ ही चेष्टा की जा रही है कि ऊपर से अस्पष्ट निदेशों के कारण पुलिस में व्याप्त मनोबल की कमी को दूर करने के लिए उनके सामने एक मिसाल पेश की जाय। इसके विपरीत एक प्रबल मत है, जिसे संवेदनशील प्रशासक भी स्वीकार करते है कि यदि इस लीकाण्ड को उपर्युक्त आधारों पर उचित ठहराया गया तो उसका अनुचित प्रयोग पुलिस के कट्टरपंथी अधिकारी गरीबों को दबाने और उनके नेताओं को समाप्त करने के लिए कर सकते हैं। भूस्वामी और उनकी सेनाएं पुलिस में अपने नातेदार व्यक्तियों की छत्रछाया में निर्धन मजदूरों पर पकड़ की पुनः प्राप्त करने के लिए बाजी लगा देंगे। ऐसी मनोवैज्ञानिक धारणा अहितकर है और इसका प्रतिकार फौरन समझदारी के साथ किया जाना चाहिए।

बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत प्रश्न यह है कि वहां राज्य की नीतियों और सामान्य तौर से उसके कार्यान्वयन तथा विशिष्ट तौर से न्यूनतम मजदूरी और सरकारी भूमि वितरण के बीच भारी अन्तर है। गांवों में कृषि भूमि का अधिकांश भाग उच्च जातियों के व्यक्तियों के स्वामित्व में है। परन्तु वे उस पर खेती के लिए मजदूरों पर निर्भर रहते हैं जो निचली जातियों के होते हैं और भूमिहीन हैं। उनकी मजदूरी बहुत थोड़ा है। भूस्वामी इन मजदूरियों को पर्याप्त रूप से बढ़ाने के लिए सहमत नहीं हैं। इन भूस्वामियों ने चालाकी से या जबरदस्ती सरकारी परती भूमि के अधिकांश भाग पर कब्जे भी कर लिए हैं जबकि कानून के अनुसार ऐसी भूमियों पर प्रथम अधिकार अनुसूचित जातियों के सदस्यों और उनके बाद अन्य पिछड़े वर्गों का होता है। बिहार में प्रशासन और राजनीतिक नेतृत्व पक्षपातपूर्ण कहा जाता है क्योंकि इनमें अधिकांश व्यक्ति उच्च जातियों के हैं और उनका **यथावत स्थिति** में स्वार्थ निहित है।

बिहार के इस भाग में ऐसे उग्रवादी आन्दोलनों की एक लंबी कहानी है जो करहाती निर्धनता, क्रूर शोषण और निर्बलतर वर्गों पर अवर्णित अत्याचारों के कारण स्थायी हो चुके हैं। तथापि, 1975 में 20-सूत्री कार्यक्रम और उसका उत्साहपूर्वक कार्यान्वयन किए जाने की घोषणा के साथ गरीबों के इस संघर्ष में एक और नया पहलू जुड़ गया था। यह प्रथम अवसर था जब जनता को अपने अधिकारों और उनके प्रति राज्य के निश्चित वायदे के बारे में ज्ञात हुआ था। यह उल्लेखनीय है कि जे० पी० आन्दोलन ने इस क्षेत्रीय प्रश्न की उपेक्षा की थी। जहां तक बंधुआ मजदूर, न्यूनतम मजदूरी इत्यादि का प्रश्न है, ये 1977 में कष्टप्रद रूप से पिछड़े थे। चाहे जो भी हो, इस क्षेत्र में इसका बीज बोया जा चुका था और कुछ सक्रियतावादियों द्वारा इसे सींचा गया था।

किसान मजदूर संग्राम समिति, जो इस संबंध में अग्रणी बनी हुई है, कुछ उग्रवादी समूहों का मोर्चा संगठन होना बताई जाती है। चूंकि यह समिति कुछ क्षेत्रों में रियायतों की प्राप्त करने में सफल हुई थी, इसका प्रभाव बढ़ना आरम्भ हो गया था। भूस्वामियों ने अपनी ओर से मुख्यतः जाति के आधार पर **सेनाएं** बनाकर संगठित होना आरम्भ किया था, जैसे भूमिहारों द्वारा ब्रह्मर्षि सेना, ठाकुरों द्वारा कुंवर सेना, कुर्मियों द्वारा भूमि सेना और यादवों द्वारा लोरिक सेना बनाई गई थी। इस प्रकार लगभग सभी स्थानों पर विरोध की स्थिति विद्यमान थी। बहुत से सशस्त्र संघर्ष हुए थे जिनमें यह आरोप लगाया गया है कि पुलिस ने खेतिहर मजदूरों का दमन करने के लिए, जिन्हें **नक्सलिया** नाम दिया गया है, जमींदारों का पक्ष लिया था।

गया में तीन संवेदनशील प्रशासकों—उपखंड अधिकारी, जिला मजिस्ट्रेट और आयुक्त की नियुक्ति से गया जिले के जहानाबाद उप-खण्ड में भारी बदलाव आया। मई 1985 में एक नए जिला मजिस्ट्रेट ने ग्रामीण विकास कार्यक्रमों और लोक वितरण प्रणाली का भी कारगर रूप से कार्यान्वयन करना आरम्भ किया था। इससे अपेक्षाकृत रूप से प्रशासन तथा राजनीति दोनों के निहित स्वार्थों का सख्त रूप से दमन हुआ था। जिस समय वे इसके प्रभाव के अधीन लड़खड़ा रहे थे उसी समय सितम्बर, 1985 में जहानाबाद में एक युवा उप-खण्ड अधिकारी ने कार्यभार ग्रहण किया था। इस सम्बन्ध में कार्यवाही को नई दिशा देने के लिए समारंभ उसी के समय से हुआ था और उसने इस किसान मजदूर संग्राम समिति, जो एक विधि-सम्मत संगठन है, द्वारा एक जन सभा बुलाने के लिए उनके औपचारिक निवेदन को स्वीकार किया था। उन्होंने पहले चल रही प्रथा ग्रहण नहीं की थी और उनके निवेदन को अस्वीकार नहीं किया था और

लोगों को इकट्ठे होने से रोकने के लिए बल का प्रयोग नहीं किया था बल्कि राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन के साथ जन सभा बुलाने की अनुमति दी थी। उस जन सभा में लगभग 50,000 लोग जहानाबाद में इकट्ठे हुए थे और यद्यपि, अन्य समूहों की ओर से गंभीर छेड़खानी की गई थी परन्तु वह जन सभा शान्तिपूर्वक सम्पन्न हुई थी। प्रशासन ने सरकारी परती भूमि के वितरण के कार्य को भी गंभीर रूप से लिया और उसे दृढ़ रूप से कानून के अनुसार किया था। उक्त उप-खण्ड अधिकारी ने न्यूनतम मजदूरी विवादों को व्यक्तिगत तौर पर तय करना आरम्भ किया था। चूंकि लोगों ने इससे कुछ परिवर्तन अनुभव किया था अतः जहानाबाद में अक्तूबर, 1985 के बाद शान्ति स्थापित हो गई थी।

इस संबंध में निहित स्वार्थों की प्रतिक्रिया होना निश्चित था। उन्होंने प्रशासन के विरुद्ध निन्दापूर्ण भाषण करने आरम्भ कर दिये थे। और उन्होंने उस उप-खण्ड अधिकारी को नक्सलियों के सहानुभूतिकर्त्ता की उपाधि दी थी। यह कहा जाता है कि स्थानीय विधायकों ने उसके स्थानांतरण के लिए दबाव डाला था और यह धमकी दी थी कि यदि उनकी मांग स्वीकार न की गई तो वे विरोधियों के साथ मिल जायेंगे। उक्त उप-खण्ड अधिकारी को फरवरी, 1986 में स्थानान्तरित कर दिया गया था और यह इस बात के होते हुए भी किया गया था कि उसे जिला मजिस्ट्रेट और आयुक्त का भारी समर्थन और विश्वास प्राप्त था। इस स्थानान्तरण को "असंगतियां" दूर करने के लिए नई शैली के प्रशासन और कानूनों के प्रभावी कार्यान्वयन के विरुद्ध यथापूर्व स्थिति रखने के लिए एक विजय के रूप में माना गया है। चूंकि इन जमींदारों ने पुनः अपनी रिवाजी प्रथा स्थापित करना आरम्भ कर दिया है अतः इन दो समूहों के बीच संघर्षों का होना एक बार पुनः आज के समय की एक चाल-ढाल बन गया है।

संग्राम समिति का तर्क यह है कि चूंकि प्रशासन कानूनों को लागू कराने में असमर्थ है अतः उन्हें लागू कराने की जिम्मेदारी उसे स्वयं लेनी है। तदनुसार वह संबंधित पक्षकारों को नोटिस देती है और जन अदालतों में सुनवाई की व्यवस्था करती है और उपयुक्त निर्णय कराती है जिसका लोगों द्वारा पालन किया जाता है। उन्होंने सभी गांवों के लिए 5-सूत्री कार्यक्रम बनाया है, अर्थात (1) न्यूनतम मजदूरी का कार्यान्वयन, (2) कानून के अनुसार सरकारी भूमि का वितरण, (3) हरिजनों के विरुद्ध अत्याचारों को रोकना, (4) सभी प्रकार के अपराधों जैसे चोरी, डाका और बलात्कार को समाप्त करना (5) मद्य-निषेध।

इन उद्देश्यों के अनुसरण में जन अदालतें संग्राम समिति के प्रभाव वाले क्षेत्रों में नियमित रूप से हो रही हैं। इस संबंध में 1986 के दो मामले उल्लेखनीय हैं। यह कहा जाता है कि इस संग्राम समिति ने एक व्यक्ति श्री रामानन्द यादव को एक नोटिस दिया था जिस पर डाकू होने का आरोप था। उससे यह कहा गया था कि वह अपनी समाज-विरोधी गतिविधियों को बन्द करे। चूंकि उस नोटिस का उसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं हुआ था, अतः एक बड़ी संख्या में लोगों ने जन अदालत के निदेशों के अधीन उसके मकान को तोड़ दिया था। रामानन्द यादव ने लोरिक सेना की सहायता से इसका बदला लिया है और लगातार घटनाओं में निचली जातियों के बहुत से लोगों की हत्या गई की है। वह संग्राम जारी है। अरवल में विवादग्रस्त भूमि का निर्धारण किया जाना एक दूसरा मामला है जिसमें संग्राम समिति का एक बड़ा समूह आया था। उसने दीवार तोड़ दी थी और भूमि पर कब्जा कर लिया था। बाद में पुलिस स्टेशन के निकट पुलिस द्वारा गोली चलाने की घटना हुई थी।

इस संबंध में संग्राम समिति के नेता यह दावा करते हैं कि वे उस कानून की परिधि से बाहर नहीं गए हैं जिसे भा० द० सं० के अपराधों के संबंध में पूर्ण रूप से कार्यान्वित किया जाता है और आंशिक रूप से कार्यान्वित नहीं किया जाता है। तथापि, संग्राम समिति की यह रूप-प्रस्तुति संदिग्ध है। उसका यह तर्क जन-साधारण को मान्य है कि चूंकि कानूनों का कार्यान्वित न किया जाना एक स्वच्छन्द हुकमनामा है और उच्च जाति समूहों को ज्यादतियां बे-रोकटोक जारी हैं।

यद्यपि, किसी भी नाम से एक "समानान्तर सरकार" की बात का यहां कोई प्रसंग नहीं है, तथापि, लोग केवल मात्र उद्घोषणाओं से अधिक देर तक सन्तुष्ट नहीं रह सकते हैं। उन सभी गांवों में जिनमें मैंने दौरा किया था लोग कानूनों का कार्यान्वयन न करने के बारे में ही सीधे प्रश्न पूछ रहे थे और कोई बात नहीं थी। प्रशासन लोगों का विश्वास प्राप्त करने में असमर्थ था और उस क्षेत्र में एक थोड़े समय के लिए ही शान्ति बहाल हुई थी क्योंकि उन्होंने कानूनों को लागू करने के लिए और ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को लागू करने के लिए प्रभावी कदम उठाने आरम्भ कर दिए थे। इस तथ्य से यह उपदर्शित होता है कि राज्य को किस दिशा में चलना है। सही कार्यवाही करने के लिए क्षेत्र अधिकारियों को राज्य सरकार का समर्थन सुस्पष्ट होना चाहिए। जो असंख्य सेनाएं निर्मित हो गई हैं उन्हें गैर-कानूनी घोषित किया जाना चाहिए। समाज के निर्बलतर वर्गों के लिए पुलिस की सहायता सुनिश्चित की जानी चाहिए।

तनाव वाले क्षेत्रों में विशेष रूप से चयनित अधिकारियों को तैनात किया जाना चाहिए जिन्हें पर्याप्त विवेकाधिकार प्रदान किया जाना चाहिए ताकि वे निर्धनों को राहत दे सकें और निहित स्वार्थों को खत्म कर सकें। जैसे-जैसे वातावरण बदलता है प्रशासन में अन्य व्यक्ति भी उनका अनुकरण करते हैं। इस संबंध में यह आवश्यक होगा कि दो मूलभूत प्रश्नों अर्थात् न्यूनतम मजदूरी और भूमि के वितरण के संबंध में निर्णय लिए जाने में विलम्ब को दूर करने के लिए एक उपयुक्त कार्य-विधि विकसित की जाए। राज्य सरकार छोटे क्षेत्रों के लिए लोक अदालतें स्थापित करने पर विचार कर सकती है जिसमें चयनित अधिकारी और जनता के प्रतिनिधि शामिल हों ताकि मामले उसी समय तय किए जा सकें और कार्यान्वित किए जा सकें और निर्धनों को न्याय अविलम्ब प्राप्त हो सके।

अध्याय 3

भूमि, कृषि तथा आवास

खेती बाड़ी वाली जोतें

सन् 1981 में हुई कार्य चलन (खेती बाड़ी वाली) जोतों की गणना के अनुसार 2 हेक्टेयर से कम की जोतों की संख्या उत्तराधिकार के हस्तांतरण तथा भूमि के पुर्नवितरण के कारण इन वर्षों में बढ़ गई है। परन्तु जोतों के अलग-अलग आकारों में भूमि का असमान वितरण अभी विद्यमान है। 2 हेक्टेयर से कम की जोतों की संख्या 1970-71 की 496.3 लाख से बढ़कर 1980-81 में 666 लाख हो गई। यह संख्या 1970-71 में कुल जोतों की संख्या के 69.9 प्रतिशत की तुलना में 1980-81 में कुल जोतों की संख्या का 74.5 प्रतिशत हो गई थी परन्तु इसमें केवल 427.6 लाख हेक्टेयर भूमि खेती वाली थी अर्थात 1970-71 में कुल खेती बाड़ी वाले क्षेत्रफल के 20.9 प्रतिशत की तुलना में 1980-81 में ऐसा कुल क्षेत्रफल 26.3 प्रतिशत भूमि थी। इसके विपरीत 10 हेक्टेयर से ऊपर की जोतों की संख्या 1970-71 की 27.7 लाख से घटकर 1980-81 में 21.5 लाख रह गई। यह संख्या 1970-71 में कुल जोतों की 3.9 प्रतिशत की तुलना में 1980-81 में कुल जोतों की 2.4 प्रतिशत रह गई थी परन्तु इसमें 371.3 लाख हेक्टेयर भूमि खेती बाड़ी वाली होती थी अर्थात् 1970-71 में कुल खेती के क्षेत्र के 30.9 प्रतिशत की तुलना में 1980-81 में कुल खेती के क्षेत्रफल के 22.8 प्रतिशत भूमि खेती की थी।

2. सन् 1980-81 में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य वर्गों द्वारा खेती बाड़ी का कुल क्षेत्रफल नीचे की सारणी में दिया गया है—

सारणी 1

सामाजिक समूह	जनसंख्या का प्रतिशत	क्षेत्रफल लाख हेक्टेयरों में	प्रतिशत
अनुसूचित जातियां	15.46	115.22	7.0
अनुसूचित जन-जातियां	7.85	167.04	10.2
अन्य वर्ग	76.69	1355.71	82.8
योग	100.00	1637.97	100.00

3. अनुसूचित जातियों, जनजातियों तथा अन्य वर्गों में वितरित बड़े आकारों की कार्यचलन जोतों का प्रतिशत नीचे की सारणी में प्रस्तुत किया गया है —

सारणी 2

आकार समूह	अनुसूचित जातियां	अनुसूचित जन-जातियां	अन्य वर्ग	योग
सीमान्त (1 हेक्टेयर से कम)	13.8	5.4	80.8	100
छोटे (1 से 2 हेक्टेयर के बीच)	10.2	9.7	80.1	100
अर्ध मध्यम (2 से 4 हेक्टेयर के बीच)	7.6	11.3	81.1	100
मध्यम (4 से 10 हेक्टेयर के बीच)	5.4	11.6	83.0	100
बड़े (10 हेक्टेयर और उससे ऊपर)	4.4	10.8	84.8	100
सभी आकार समूह	11.3	7.7	81.0	100

उपर्युक्त सारणी से यह ज्ञात होगा कि सीमान्त जोतों में अनुसूचित जातियों का भाग 13.8 प्रतिशत था और बड़े आकार की जोतों में उनका भाग केवल 4.4 प्रतिशत था जबकि अन्य समुदायों का भाग 84.8 प्रतिशत था। यह भी पता चलता है जब कि देश की ग्रामीण जनसंख्या में अनुसूचित जातियों का अनुपात 17.34 प्रतिशत था, जोतों की कुल संख्या में उनका भाग केवल 11.3 प्रतिशत था। इसी प्रकार यद्यपि ग्रामीण जनसंख्या में अनुसूचित जनजातियों का अनुपात 9.5 प्रतिशत था, जोतों का कुल संख्या में उनका भाग 7.7 प्रतिशत ही था।

4. अनुसूचित जातियों, जनजातियों और अन्य समुदायों में बड़े आकार समूह की जोतों का वितरण नीचे की सारणी में दर्शाया गया है —

सारणी 3

आकार समूह	अनुसूचित जातियां		अनुसूचित जन जातियां		अन्य समुदाय		सभी सामाजिक समूह	
	संख्या लाखों में	प्रतिशत	संख्या लाखों में	प्रतिशत	संख्या लाखों में	प्रतिशत	संख्या लाखों में	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8	9
सीमान्त	69.23	69.9	27.28	39.8	404.71	56.2	501.22	56.4
छोटे	16.44	16.3	15.51	22.6	128.77	17.9	160.72	18.1
अर्ध-मध्यम	9.52	9.5	14.05	20.5	100.98	14.0	124.55	14.0
मध्यम	4.38	4.4	9.36	13.7	66.94	9.3	80.68	9.1
बड़े	0.95	0.9	2.34	3.4	18.37	2.6	21.66	2.4
सभी आकार समूह	100.52	100.0	68.54	100.0	719.77	100.0	888.83	100.0

उपर्युक्त सारणी से यह ज्ञात होगा कि अनुसूचित जातियों की भूमि जोतों का अधिकांश भाग (69.9 प्रतिशत) सीमान्त जोतों का है अर्थात् 1 हेक्टेयर से कम वाली जोतों का है जबकि अनुसूचित जन जातियों के मामले में यह प्रतिशत 39.8 है।

भूमि सुधार

5. राष्ट्रीय भूमि सुधार नीति के उद्देश्य ये हैं : (1) बिचौलिए भूधारियों की समाप्ति, (2) भूमि सुधारों का लक्ष्य पट्टेदारों या असामियों की सुरक्षा, भू-राजस्व का विनियमन और भूधारियों को स्वामित्व अधिकार प्राप्त कराना, (3) भूमि जोतों पर अधिकतम सीमा लगाना और फालतू भूमि का वितरण करना, (4) जोतों की चकबन्दी करना, (5) भूमि अभिलेखों को संकलित करना तथा उन्हें अद्यतन बनाना। छठी योजना में यह प्रावधान किया गया था कि भू-धारियों को स्वामित्व का अधिकार प्रदान करने के लिए सभी राज्यों में 1981-82 तक विधायी कानून बनाए जायेंगे। भूमि की अधिकतम सीमा से बची फालतू भूमि का अधिग्रहण और वितरण करने का कार्यक्रम 1982-83 तक पूरा किया जाना था। भूमि अभिलेखों को संकलित तथा अद्यतन करने का कार्य 1985 तक होना था और भूमि की चकबन्दी सभी राज्यों में इस उद्देश्य के साथ आरम्भ की जानी थी कि उसे सिंचाई परियोजनाओं वाले क्षेत्रों को प्राथमिकता देते समय हुए दस वर्षों के अन्दर पूरा किया जाएगा। प्राप्त सूचना के अनुसार भूमि सुधार उपायों पर छठी योजना में रखे गए लक्ष्यों में से एक भी पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हुआ है। यद्यपि अधिकांश बिचौलिए भू-धारी समाप्त कर दिए गए हैं कुछ थोड़े से राज्य ऐसे बचे हैं जिनमें भूधारियों और बटाईदारों को स्वामित्व के अधिकार देने के लिए कोई विधायी प्रावधान विद्यमान नहीं है। कुछ राज्यों में जमींदारों को दिया जाने वाला किराया राष्ट्रीय नीति में यथा निश्चित सीमा, कुल उत्पादन के पांचवे या चौथे भाग से अधिक है। निजी खेती के ढोंग के रूप में खेतीकर्त्ता कब्जा रखते हुए मौखिक और अनौपचारिक रूप में किराए-दारी प्रथा अभी भी जारी है। अधिकांश राज्य सरकारों द्वारा कृषि भूमि पर अधिकतम सीमा लगाने के लिए कानून बना दिए जाने के बावजूद अधिकतम सीमा से फालतू भूमि का कब्जा लेने और उसका वितरण करने का कार्यक्रम अभी पूरा होने में बहुत देर है। चकबन्दी के कार्यों के बारे में भी यह रिपोर्ट दी गई थी कि उनमें बहुत सारे राज्यों में अधिक प्रगति नहीं हुई है क्योंकि यह भय है कि किराएदार तथा बटाईदार विस्थापित होंगे और यह लाभ है कि बाढ़ और अन्य प्राकृतिक आपदाओं के समय में अन्य सुरक्षित स्थानों पर उनके पास भूमि बनी रहेगी और यह आशंका है कि इससे बड़े कृषकों को ही लाभ होगा।

6. सातवीं पंचवर्षीय योजना में भूमि सुधार के कार्यान्वयन को निर्धनता निवारण कार्यक्रमों के साथ जोड़कर एक नया निदेश दिया गया था। यद्यपि भूमिहीनों को भूमि वितरण करना 20-सूत्री कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग सदैव रहा है परन्तु पुनरीक्षित 20-सूत्री कार्यक्रम में विकास की कार्यनीति में इस कार्य को उच्च प्राथमिकता दी गई है। 20-सूत्री सूची की मद 5 के अन्तर्गत भूमि सुधार लागू करने में भूमि अभिलेखों को संकलित करना, कृषि भूमि की अधिकतम-सीमा निर्धारण का कार्यान्वियन करना और फालतू भूमि का भूमिहीनों को वितरण करना भी शामिल है। इसके अतिरिक्त मद सं० 11 की उप मद (2) और (3) अनुसूचित जातियों तथा जन जातियों के व्यक्तियों को आबंटित भूमि के कब्जे दिलाने और भूमि आवंटन करने के कार्यक्रम की पुनः सुनिश्चित करने से संबंधित हैं।

भूमि अभिलेख

7. भूमि सुधार के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए विशेष रूप से भू-धारण और भूमिधारियों तथा बटाईदारों की सुरक्षा और जोतों की चकबंदी के लिए भूमि अभिलेखों का सही और अद्यतन होना एक अनिवाय पूर्वअपेक्षित शर्त है। भूमि और फस्ल के अभिलेख विभिन्न विकासीय कार्यकलापों के लिए आधारभूत हैं, चाहे ये कार्यकलाप छोटे और सीमान्त कृषकों की पहचान करने के लिए हों चाहे सामाजिक वानिकी के लिए बंजर भूमि खोजने, फस्ली क्षेत्रफल का संकलन करने के लिए हो या कृषि गणना के लिए अथवा कृषि ऋण के मुक्त प्रवाह के लिए उत्पादन के आंकड़े निकालने या खेती वाली जोतों इत्यादि के आंकड़े निकालने के लिए हो। कृषि और ग्रामीण विकास योजनाओं और उनके कार्यान्वयन से संबंधित विभिन्न स्कीमों को कार्यरूप में परिणित करना ऐसे विश्वसनीय तथा अद्यतन भूमि अभिलेखों के उपलब्ध होने पर निर्भर करता है जो भूमि में सभी के हितों की सही स्थिति प्रतिबिम्बित करते हैं और उन विवादों, मुकदमों और तनावों को खत्म करते हैं जो उनसे उत्पन्न होते हैं। केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग के अनुसार सर्वेक्षण और बंदोबस्त भूमि अभिलेखों और निचले स्तरों पर राजस्वतंत्र का पुनरावलोकन 1984 में किया गया था। उस विभाग में प्राप्त सूचना के अनुसार मार्च 1986 में **आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, जम्मू-काश्मीर, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल** में अभिलेख पर्याप्त रूप से अद्यतन थे तथापि कई राज्यों में नामान्तरण और उप-विभाजन के मामले बकाया पड़े बताए गए थे। अधिकांश राज्यों में अभिलेख वार्षिक फस्ल रजिस्टरों के माध्यम से अद्यतन किए गए थे। **आन्ध्र प्रदेश**, असम, **बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, केरल, मध्य प्रदेश, मेघालय, उड़ीसा सिक्किम, त्रिपुरा और पश्चिम बंगाल** में पुनरीक्षण संबंधी सर्वेक्षण तथा बंदोबस्त के प्रचालन कार्य हो रहे थे। 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग ने राज्यों से आग्रह किया था कि भूमि अभिलेखों को समयबद्ध कार्यक्रम अपनाते हुए सर्वाधिक तात्कालिकता के आधार पर अद्यतन करने के लिए सभी उपाय किए जाएं। उक्त विभाग ने राज्यों से कहा था कि भूमि अभिलेखों को अद्यतन करने तथा तहसील स्तर पर मिलान करने के लिए कार्यचलन जोतों का एक रजिस्टर लागू करने के लिए भी 1985-86 को भूमि अभिलेख वर्ष के रूप में माना जाए। उस विभाग ने संबंधित राज्यों में राजस्व प्रशासन को मजबूत करने तथा भूमि अभिलेखों को अद्यतन करने के लिए सातवीं योजना में केन्द्र द्वारा प्रायोजित एक योजना लागू करने का प्रस्ताव किया था और इसके लिए ऐसे राज्यो तथा संघ शासित राज्य क्षेत्रों पर बल दिया गया था जिनमें ऐसी भूमि थी जिसका सर्वेक्षण नहीं हुआ था और जिनके पास भूमि तथा फस्ल पर आधारित अभिलेख नहीं थे।

8. नवम्बर 1986 में हुए राजस्व मंत्रियों के सम्मेलन में यह सुझाव दिया गया था कि जहां पर उस समय कोई भी भूमि अभिलेख नहीं रखा गया था, सर्वेक्षण और बन्दोबस्त कार्य को पूरा करने के लिए शीघ्र कदम उठाए जायंगे। सर्वेक्षण तकनीक में कार्मिकों के प्रशिक्षण के लिए सर्वे आफ इंडिया द्वारा उपलब्ध कराई गई सुविधाओं का पूरा पूरा लाभ उठाया जाएगा। इसी प्रकार राज्य सरकारें भी अपने अधिकारियों को उन्हें ऐसी नवीनतम तकनीकों से परिचित कराने के लिए, जो भविष्य में ऐसे प्रयोग के लिए आवश्यक समझी जाएंगी, राष्ट्रीय दूर संवेदी अभिकरण इत्यादि में तैनात करने के लिए विचार करेंगी। इसके लिए प्राथमिकता उन 430 ब्लॉकों को दी जानी थी जो पूर्वी भारत चावल कार्यक्रम के लिए तथा पूर्वोत्तर राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों और अन्य आदिवासी बहुल क्षेत्रों में चुने गए थे जिनमें सर्वेक्षण तथा बन्दोबस्त पूरा करना था, भूमि अभिलेख रखने की प्रणाली का निर्माण किया जाना था, उनको आवधिक रूप से अद्यतन किया जाना था तथा राजस्व तंत्र को मजबूत बनाया जाना था।

अधिकतम सीमा से फालतू बची भूमि का अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को आबंटन

9. राष्ट्रीय भूमि सुधार नीति में निजी भूमि जोतों पर अधिकतम सीमा लागू करने की परिकल्पना की गई थी ताकि ग्रामीण भूमिहीनों को बांटने के लिए पर्याप्त फालतू भूमि उपलब्ध हो सके। कई राज्यों में कृषि जोतों पर अधिकतम सीमा लागू करने के कानून 1950 और 1960 के दशकों में बनाए गए थे और विभिन्न राज्यों में उनके प्रभावकारी कार्यान्वयन में अन्तर था। उक्त कानूनों द्वारा विहित की गई अधिकतम सीमा कई मामलों में उच्च थी और कानून के प्रवर्तन से छूटें भी बहुत दी गई थीं। उक्त कानूनों में कुछ बचाव के रास्ते भी थे जिनके कारण उन कानूनों को कार्यान्वित करना कठिन हो गया था। देश के विभिन्न भागों में लागू की गई अधिकतम सीमा में एक निश्चित विस्तार तक समानता लाने और बचाव के रास्तों को रोकने की दृष्टि से भूमि की अधिकतम सीमा पर राष्ट्रीय मार्ग निर्देश मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन में 1972 में तैयार किए गए थे। विभिन्न राज्यों में इन मार्ग निर्देशों के अनुरूप कानून बनाए गए थे। तथापि **मेघालय, नागालैण्ड** और **मिजोरम** में अधिकतम सीमा के कोई कानून नहीं थे। चूंकि इन में भूमि का स्वामित्व मुख्य रूप से सामुदायिक है। **अंडमान** तथा **निकोबार द्वीप समूह, गोवा, दमण और दीव** तथा **लक्षद्वीप** में भी अधिकतम सीमा का कोई कानून नहीं है। 1980-81 के कृषि गणना आंकड़ों से हुए इस रहस्योद्घाटन की दृष्टि से कि कृषि जोतों का असमान वितरण अभी भी जारी है, केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग ने अधिकतम सीमा से फालतू भूमि की उपलब्धता में वृद्धि करने की दृष्टि से अधिकतम सीमा के पुनर्निर्धारण पर विचार करने के लिए राज्य सरकारों को परामर्श दिया था। प्रत्येक राज्य में 1972 के राष्ट्रीय

मार्ग निर्देशों और केन्द्रीय सरकार द्वारा सुझाई गई उससे कम अधिकतम सीमा की तुलना में 1986-87 में अधिकतम भूमि सीमा की स्थिति अनुलग्नक 1 में दर्शाई गयी है।

10. अधिकतम भूमि सीमा कानून लागू करने के कारण इस योजना के प्रारम्भ से 31-3-87 तक विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में फालतू घोषित की गई भूमि का क्षेत्रफल और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों और अन्य लाभभोगियों को आबंटित भूमि का क्षेत्रफल अनुलग्नक 2 में दर्शाया गया है। उससे यह प्रकट होगा कि फालतू घोषित किए गए 76.33 लाख एकड़ के कुल क्षेत्रफल में से 59.54 लाख एकड़ क्षेत्रफल का कब्जा लिया गया था जो फालतू घोषित कुल क्षेत्रफल का 78 प्रतिशत था। इसके समक्ष 44.09 लाख एकड़ भूमि आबंटित की गई थी जो कब्जा प्राप्त की गई भूमि का 74.06 प्रतिशत थी और 57.76 प्रतिशत क्षेत्रफल फालतू घोषित किया गया था और इस प्रकार इसके बाद भी कब्जा लिए गए क्षेत्रफल में से लगभग 26 प्रतिशत भूमि तथा फालतू घोषित क्षेत्रफल में से लगभग 42.24 प्रतिशत भूमि आबंटित किए जाने के लिए शेष बची रह गई। आबंटित कुल क्षेत्रफल में से 15.07 लाख एकड़ (34.18 प्रतिशत) भूमि अनुसूचित जातियों को 5.81 लाख एकड़ (13.18 प्रतिशत) भूमि जन जातियों को तथा 23.21 लाख एकड़ (52.64 प्रतिशत) भूमि अन्य लाभभोगियों को आबंटित की गई थी। लाभभोगियों की कुल संख्या 40.67 लाख में से भूमि आवंटित किए गए अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों की संख्या 14.15 लाख (34.79 प्रतिशत) थी। अनुसूचित जन जातियों की यह संख्या 5.63 लाख (13.83 प्रतिशत) और अन्य लाभभोगियों की संख्या 20.89 लाख (51.37 प्रतिशत) थी।

11. मई 1985 और नवम्बर 1986 में हुए राजस्व मंत्रियों के सम्मेलनों में अधिकतम भूमि सीमा से फालतू भूमि के वितरण के मामले पर विचार किया गया था। उससे पूर्व के सम्मेलन द्वारा की गई कुछ महत्वपूर्ण सिफारिशें नीचे दी गई हैं :—

(क) (1) अधिकतम भूमि सीमा के यथापुनरीक्षण पूर्व और पुनरीक्षित दोनों ही प्रकार के विद्यमान कानूनों के कार्यान्वयन की मानीटरिंग राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा दृढ़ता से की जानी चाहिए। राज्य ऐसे कारणों का विश्लेषण करें और सूचित करें जिन कारणों से इतने वर्षों के बाद भी विवरणों की संवीक्षा का प्रारम्भिक प्रक्रम भी पूरा नहीं किया गया है।

(2) उपाय के तौर पर कार्यवाही करने के लिए अनुमानित फालतू भूमि और घोषित फालतू भूमि, घोषित फालतू भूमि और कब्जा ली गई भूमि तथा कब्जा ली गई भूमि और आबंटित भूमि के बीच रहे अन्तर का विश्लेषण किया जाए। विवरणों, विभिन्न न्यायालयों में बकाया पड़े मामलों, वापस किए गए तथा पुनः आरम्भ किए गए दोनों ही प्रकार के फालतू घोषित क्षेत्रफल का कब्जा लेने और उसका वितरण करने तथा तत्पश्चात् शीघ्र नामान्तरण करने, प्रमाण-पत्र / पट्टे जारी करने, स्थान विशेष पर हदबन्दी करने और कब्जे देने इत्यादि कार्यों को निपटाने की ओर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

(3) यथा पुनरीक्षण पूर्व और पुनरीक्षित अधिकतम भूमि सीमा कानूनों के अधीन मार्च 1985 तक अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को आबंटित भूमि के लाभभोगियों की पृथक से संख्या का विस्तृत विवरण केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग को 30-6-1985 तक सूचित किया जाए। इसी प्रकार इन दोनों कानूनों के अधीन पृथक मुकदमों में विभिन्न स्तरों पर अन्तर्ग्रस्त भूमि, कृषि के लिए अनुपयुक्त भूमि, वन रोपण और अन्य सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए अलग छोड़ी गई भूमि के विस्तृत विवरण भी बताए जायें।

(ख) (1) न्यायालयों के निर्णयों के परिणामस्वरूप **आन्ध्र प्रदेश, बिहार, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल** राज्यों में फालतू भूमि के कुल परिमाण में से काफी बड़ा क्षेत्रफल निकल गया है। यहां तक कि बहुत सारे मामलों में पहले से आबंटित भूमि अनधिसूचित करनी पड़ी थी जिससे आबंटियों को भारी परेशानी हुई थी क्योंकि वे उस पर अपने संसाधन लगा चुके थे। राज्य सरकारों को ऐसे मामलों की संवीक्षा करनी चाहिए और उन्हें यह सुनिश्चित करने के लिए कि ऐसे निर्णयों की पुनरावृत्ति न हो विधायी संशोधनों सहित आवश्यक कदम उठाने चाहिएं।

(2) अधिकतम भूमि सीमा के मामलों के शीघ्र निपटारे के लिए संविधान के अनुच्छेद 323 (8) के अधीन न्यायाधिकरणों की स्थापना और/अथवा उच्च न्यायालयों के परामर्श से संबंधित उच्च न्यायालयों में विशेष न्यायालय/शाखाएं स्थापित करने पर विचार किया जाए।

(3) राज्य यह सुनिश्चित करें कि अधिकतम भूमि सीमा के मामलों का निपटान करने से संबंधित कार्मिकों के पद राजस्व तथा न्यायिक दोनों में, खाली न रहें। इस सामान्य धारणा का निवारण यथासंभव शीघ्र किए जाने की आवश्यकता है कि अधिकतम भूमि सीमा के कार्य के लिए कार्मिकों की तैनाती दण्ड के रूप में की जाती है और इन पदों

पर अनुभवी तथा सक्षम अधिकारियों को तैनात किए जाने की आवश्यकता है ।

(4) जो भूमि फालतू घोषित की जा चुकी है और जिस पर कोई मुकदमा नहीं है, वह अविलंब अधिकार में ले ली जानी चाहिए ।

(5) राज्य/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा ऐसे मामलों में फालतू भूमि अपने अधिकार में लेने के लिए प्रावधान बनाने पर विचार किया जाए जिनमें पक्ष सहमत हैं और कार्यवाहियां पूरी हो जाने का पूर्वानुमान है ।

(6) जहां अभी तक अधिवक्ताओं को अधिकतम भूमि सीमा के मामलों में पक्षकारों का प्रतिनिधित्व करने से रोकने के लिए कानून नहीं बना है वहां इसके लिए विधायी प्रावधान किया जायें ।

(ग) (1) राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा अपवंचन (बच निकलने) के मामलों का पता लगाने और विद्यमान कानूनों का पुनरवलोकन करने के लिए एक अभियान आरम्भ किया जायें ।

(2) अपवंचन और कानून से बचाव के मामलों में गंभीरतापूर्वक कार्यवाही किए जाने की आवश्यकता है । **बेनामी** हस्तांतरणों और कानून से प्रवंचना के प्रकारों का पता लगाने और अवधारित करने के लिए दृढ़तापूर्वक कार्यवाही की जानी है और तत्पश्चात् उसके उपचार स्वरूप ठोस कदम, विधायी और अन्यथा जैसा आवश्यक हो, उठाए जाने चाहिएं।

(3) राज्यों द्वारा इस बात की जांच के लिए सर्वेक्षण किए जाने की आवश्यकता है कि जो फालतू भूमि कृषि के लिए अनुपयुक्त बताई गई थी वह वास्तव में वैसी है और क्या यह भी सच है कि ऐसी भूमि को लेने वाला कोई नहीं था ।

(घ) (1) यह सुनिश्चित करने के लिए भी कार्यवाही की जानी चाहिए कि अधिकतम भूमि सीमा कानून के अधीन किया गया भूमि का वर्गीकरण और भूमि अभिलेखों में किया गया वर्गीकरण एक समान है ।

(2) सर्वप्रथम भूमि अभिलेखों में भूमि के वर्गीकरण को, विशेष रूप से सिंचाई के अन्तर्गत नए रूप से ली गई भूमि के क्षेत्रफल की दृष्टि से, उपयुक्त रूप से पुनरीक्षित किए जाने की आवश्यकता है ।

(3) परियोजनाओं और लोक वित्त से पोषित योजनाओं द्वारा सिंचित नए क्षेत्रों में अधिकतम भूमि सीमा कानूनों को लागू करने का पुनरावलोकन किया जाना चाहिए ताकि इन क्षेत्रों को समुचित अधिकतम भूमि सीमा के अधीन लाया जा सके ।

(ङ) (1) जहां संभव हो, अधिकतम भूमि सीमाओं को नीचे लाने के प्रयास किए जायें ।

(2) मई 1985 के सम्मेलन की कार्य-सूची में दिए गए सुझाव के अनुसार परिवार की परिभाषा में वयस्क पुत्र को सम्मिलित करने के लिए राज्यों द्वारा इस समय विचार किया जाये ।

(च) राज्यों द्वारा धार्मिक तथा परोपकारी संस्थाओं की भूमि को भी अधिकतम भूमि सीमा कानूनों की परिधि में लाने के लिए विचार किया जायें ।

(छ) फालतू भूमि के आबंटियों को उस भूमि से बेदखल करने से सुरक्षा प्रदान करने के लिए और पहले से बेदखल किए गए मामलों में भूमि शीघ्रता से पुन: दिलाने के लिए सुदृढ़ विधायी प्रावधान किया जायें ।

(ज) ऊपर उल्लिखित प्रावधान ऐसे अन्य प्रावधानों सहित जो अधिकतम भूमि सीमा के विद्यमान कानून में संशोधन के रूप में किए जायें, शीघ्रातिशीघ्र किए जायें ।

(झ) जिन मामलों में भूमि सरकार द्वारा या ग्राम सभा द्वारा आबंटित की जाती है, वहां परिवार के मुखिया और उसकी पत्नी के नाम में संयुक्त पट्टा देने के लिए राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा विधायी प्रावधान किया जायें ।

12. राजस्व मंत्रियों के नवम्बर, 1986 में हुए सम्मेलन ने अधिकतम भूमि सीमा से फालतू भूमि के वितरण की समीक्षा की और यह देखा कि मई 1985 में हुए राजस्व मंत्रियों के सम्मेलन की अधिकांश सिफारिशों को कार्यान्वित करने के लिए प्रभावी कदम नहीं उठाए गए थे और यह सुझाव दिया कि ऊपर वर्णित इससे पूर्व के सम्मेलन की सभी सिफारिशों को 31-3-1988 तक पूर्ण रूप से कार्यान्वित किया जाना चाहिए।

फालतू भूमि के आबंटियों को वित्तीय सहायता

13. चूंकि अधिकतम भूमि सीमा से फालतू भूमि के आबंटन के लाभभोगी अधिकांशत: निर्धन हैं और फालतू भूमि अधिकतर घटिया किस्म की है, इसे कृषि योग्य बनाने के लिए इसका विकास किए जाने की आवश्यकता है। इसके लिए केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग का भूमि सुधार प्रभाग 1975-76 से एक केन्द्रीय प्रायोजित योजना अर्थात् अधिकतम भूमि सीमा से फालतू भूमि के आबंटियों को वित्तीय सहायता का कार्यान्वयन कर रहा है। इस योजना के अधीन अधिकतम भूमि सीमा से फालतू भूमि के आबटियों को वितरण के लिए राज्यों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है । अनुदान के रूप में सहायता विभिन्न प्रयोजनों जैसे भूमि विकास निवेश तथा तत्काल उपभोग आवश्यकताओं के प्रावधान के लिए 2,500 रुपए प्रति हेक्टेयर की दर से दी जाती है। इस व्यय को केन्द्र और राज्य सरकारें बराबर बराबर

बांट लेती हैं। इस योजना के प्रारम्भ से 1984-85 तक अनुदान के रूप में 22.43 करोड़ रुपए की राशि दी गई थी। छठी योजना में केन्द्र सरकार द्वारा 10.34 करोड़ रुपए की राशि दी गई थी जबकि राज्यों द्वारा 10.88 करोड़ रुपए की राशि खर्च की गई थी। 1985-86 में 3.10 करोड़ रुपए की राशि दी गई थी। सातवीं योजना के लिए 15.60 करोड़ रुपए का परिव्यय रखा गया था। केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग ने इस योजना को ग्रामीण विकास की अन्य योजनाओं जैसे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के साथ एकीकृत करने और इसके कार्यान्वयन का कार्य जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों (डी० आर० डी० ए०) को सौंपे जाने की सिफारिश की है। यह अपेक्षा की जाती है कि एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधीन लाभ-भोगियों की नामावली में फालतू भूमि के आबंटियों को प्राथमिकता दी जाएगी और उन्हें प्रति परिवार सभी स्रोतों से 8,000 रुपए की कुल सहायता दी जाएगी। फालतू भूमि के आबंटियों को ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों से सहायता इस प्रकार क्रमबद्ध की जाएगी ताकि वह उनकी भूमि को खेती के प्रयोजनों या सहयुक्त कार्यकलापों के लिए विकसित करने में सहायक हो सके और वे उस पर विभिन्न आर्थिक कार्य कर सकें जो उनके लिए पूरे वर्ष स्थायी आय का साधन बन सकें। इस संबंध में अनुसूचित जातियों के विकास पर सातवीं योजना के कार्यकारी-दल ने यह बताया कि अधिकतम भूमि सीमा से फालतू भूमि साधारणतया सीमान्त और उप-सीमान्त किस्म की थी और जब कोई भूमि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को आबंटित की जाए तो उस भूमि के पर्याप्त विकास के लिए आवश्यक धन-राशि आबंटी को उसी समय मंजूर की जानी चाहिए। इसके साथ ही उन्हें सभी आवश्यक वस्तुएं जैसे बीज, खाद और सिंचाई का पानी उपलब्ध कराई जानी चाहिए। उक्त कार्यकारी दल ने यह सुझाव भी दिया कि अनुसूचित जातियों को भूमि का आबंटन प्राथमिक रूप से उनके ही इलाके में किया जाना चाहिए ताकि वे अपनी सामुदायिक सुविधाओं का लाभ उठा सकें जो अन्यथा उपलब्ध नहीं होती हैं। इस प्रकार से समूहों में आबंटन से अनुसूचित जातियों का संगठन बनाने में भी सहायता मिलेगी जिससे भ्रष्टाचार की गुंजाइश कम हो जायगी।

भूमि-अभिधारी सुधार

14. भूमि-अभिधारी सुधार की राष्ट्रीय नीति का उद्देश्य खेती करने वाले किसान को उसका स्वामी बनाना है। बहुत सारे राज्यों में भूमिधारियों को स्वामित्व के अधिकार प्रदान करने के लिए विधायी प्रावधान बनाये गए थे। कुछ राज्यों में यह अधिकार जमींदारों को युक्तियुक्त क्षतिपूर्ति का भुगतान करके अर्जित किया जाता है। कुछ राज्यों ने जमींदारों से स्वामित्व के अधिकार अर्जित कर लिए हैं और भूमि-धारियों को दे दिए गए हैं जिनसे क्षतिपूर्ति वसूल की जाती है। **आन्ध्र प्रदेश (तेलंगाना क्षेत्र) गुजरात, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश महाराष्ट्र, मणिपुर, उड़ीसा, राजस्थान, त्रिपुरा और उत्तर प्रदेश** ऐसे राज्य हैं जहां पर भूमिधारियों के संगठनों को स्वामित्व के अधिकार दिए गए हैं। 1985-86 तक लगभग 77 लाख भूमिधारियों को लाभ पहुंचा था और उन्हें 56 लाख हेक्टेयर के कुल क्षेत्रफल से अधिक भूमि पर स्वामित्व के अधिकार दिए गए थे। चूंकि बटाईदारों और भूमिधारियों की अधिक संख्या अनुसूचित जातियों और जनजातियों की है अतः उन्हें औपचारिक रूप से मान्यता दिया जाना, सरकारी अभिलेखों में दर्ज किया जाना और उन्हें उनके कानूनी अधिकार तथा स्वामित्व दिया जाना इन समुदायों के आर्थिक विकास में बहुत सहायक होगा। **आन्ध्र प्रदेश (आन्ध्र क्षेत्र), बिहार, हरियाणा, पंजाब, तमिलनाडु** और **पश्चिम बंगाल** में भूमिधारियों और बटाईदारों को स्वामित्व के अधिकार देने के लिए कोई विधायी प्रावधान नहीं हैं तथापि भूमिधारियों या भूमिस्वामियों की सुरक्षा की गई है। इसके अतिरिक्त **जम्मू-काश्मीर, कर्नाटक, केरल, उत्तर प्रदेश** और **दिल्ली** में पट्टे देना निषिद्ध किया गया है। तथापि, देश में बहुत से क्षेत्रों में निजी खेती का बहाना बनाकर बिना किसी अभिलेख के अपने खेतीकर्ता कब्जे के साथ अलिखित तथा अनौपचारिक रूप में भूमि किरायेदारी प्रथा अभी भी विद्यमान है। इस संबंध में नवम्बर 1986 में हुए राजस्व मंत्रियों के सम्मेलन में अन्य बातों के साथ साथ निम्नलिखित सिफारिशें की गई थीं -

(1) जैसा कि इससे पूर्व सुझाव दिया गया है अनौपचारिक और गुप्त किराएदारी के विस्तार और फैलाव का पता लगाने के लिए अभियान जहां पहले ही आरम्भ किया जा चुका है वह जारी रहना चाहिए और जहां अभी आरम्भ नहीं हुआ है वहां नये रूप से आरम्भ किया जाना चाहिए। इसके पश्चात् ऐसे मामलों को छोड़कर जो विशेष रूप से छूट प्राप्त वर्ग के हैं बटाईदारों सहित सभी वर्गों के भूमिधारियों को स्वामित्व के अधिकार दिए जाने चाहिएं। तथापि, छूट प्राप्त वर्गों की भूमि पर काश्त करने वाले भूमिधारियों के नाम भी अधिकार के अभिलेख में दर्ज होने चाहिएं और उन्हें भू-धारण की सुरक्षा प्रदान की की जानी चाहिए।

(2) इस अभियान के परिणामों का प्रबोधन या जांच (मौनीटरिंग) संबंधित राज्य सरकारों द्वारा उच्च स्तर पर नियमित रूप से और दृढ़तापूर्वक की जानी चाहिए।

(3) अनौपचारिक और मौखिक किराएदारी प्रथा के चलन को रोकने की दृष्टि से निजी खेती की पहले से सख्त परिभाषा, जहां पहले से लागू नहीं की गई है, लागू करने के लिए कदम उठाए जायें।

(4) विकलांग व्यक्तियों और विशेष अधिकार प्राप्त भूमिधारियों की विद्यमान परिभाषा तथा धार्मिक संस्थानों सहित छूट प्राप्त अन्य वर्गों के बारे में छूट के प्रावधानों की समीक्षा की जानी चाहिए। विद्यमान कानूनी प्रावधानों को राष्ट्रीय नीति मार्ग-निर्देशों के अनुरूप बनाने की दृष्टि से बचाव के रास्तों को खत्म करने के लिए आवश्यक कार्यवाही की जानी चाहिए।

(5) भूमिधारियों को स्वामित्व के अधिकार देने से संबंधित कार्यवाहियों से अधिवक्ताओं को वर्जित करने की संभावना की जांच करने के लिए सहमति दी गई थी। यदि एक ऐसा प्रावधान बनाने में कोई अंतर्निहित कानूनी कठिनाइयां हैं तो राज्य सरकारों को भूमिधारियों को निःशुल्क कानूनी सहायता प्रदान करनी चाहिए ताकि वे न्यायालयों में अपने अधिकारों की रक्षा कर सकें।

15. राष्ट्रीय नीति के अनुसार रक्षा सेवाओं के व्यक्ति, विधवाएं, अविवाहित महिलाएं, अवयस्क और शारीरिक तथा मानसिक विकलांगता से ग्रस्त व्यक्ति भूमिधारियों के छूट प्राप्त वर्ग में आते हैं जिन्हें अपना स्वामित्व अधिकार खोयें बिना अपनी भूमि भूमिधारियों को पट्टे पर देने की अनुमति दी गई थी। परन्तु कुछ राज्यों में देयताओं को शाश्वत अवयस्कों के रूप में माना गया है। अतः केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग ने संबंधित राज्यों को यह सुझाव दिया है कि धार्मिक संस्थानों से संबंधित ऐसे उपबंधों की समीक्षा की जाए। यह सुझाव भी दिया गया है कि उपयुक्त कानून बनाकर भूमि की संभावित हानि की क्षतिपूर्ति करने के लिए एक युक्तियुक्त आय के स्रोत के रूप में वार्षिकी की व्यवस्था करने के बाद उनके भूमिधारियों को स्वामित्व के अधिकार देने के लिए भी विचार किया जायें।

आदिवासीयों की भूमि का हस्तांतरण

16. आदिवासी व्यक्तियों की भूमि का गैर-आदिवासी लोगों को हस्तांतरण रोकने के लिए विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा विधायी तथा कार्यान्वयन संबंधी उपाय किए जाने के बावजूद आदिवासीयों की भूमि का हस्तांतरण जारी रहा है। ऐसे प्रावधान राजस्व कानूनों में या संविधान की पांचवीं अनुसूची के अधीन बने विनियमनों में किए गए थे। यह समस्या **आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश, और पश्चिम बंगाल** के आदिवासी क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न परिमाणों में विद्यमान रही। संबंधित राज्य सरकारों से अनुरोध किया गया था कि आदिवासियों की भूमि के हस्तांतरण के बारे में आंकड़े भेजे जायें और इस समस्या से निपटने के लिए उन्होंने ने जो उपाय किए हैं उनके बारे में सूचना दी जाए। आठ राज्यों से प्राप्त हुए आंकड़े नीचे दिए गए हैं —

सारणी 4

क्रम सं०	राज्य	1985-86 के अंत में बकाया रहे मामलों की संख्या	1986-87 में दर्ज हुए नए मामले	स्तम्भ 3 और 4 का योग	वर्ष 1986-87 में निपटाये गये मामलों की संख्या	वर्ष 1986-87 में वापस दिलाई गई भूमि (एकड में)	वर्ष 1986-87 के अन्त में बकाया मामलों की संख्या
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	आंध्र प्रदेश	—	—	40414	35998	74120.78	4416
2.	असम	उपलब्ध नहीं	2756	2756	2554	2062.00	202
3.	बिहार	5261 (1984-85)	7482 (1985-86)	12743	8292 (1985-86)	7278.76 (1985-86)	4451 (1985-86)
4.	गुजरात	2012	2477	4489	1462	4476.00	3027
5.	महाराष्ट्र	548	52	600	163	949.00	437
6.	उड़ीसा	2918	1877	4795	1009	479.30	3786
'	तमिलनाडु	76 (1984-85)	107 (1985-86)	183	63 (1985-86)	121.97 (1985-86)	120 (1985-86)
8.	त्रिपुरा	1345	1640	2985	1220	205.38	1765

17. **आन्ध्र प्रदेश** में अनुसूचित क्षेत्रों में आदिवासियों की भूमि का गैर-आदिवासियों को हस्तान्तरण आन्ध्र प्रदेश भूमि हस्तान्तरण विनियम, 1959 के अधीन निषिद्ध किया गया था। तथापि, 1969 में राज्य सरकार द्वारा यह आदेश जारी किया गया था कि अनुसूचित क्षेत्रों में ऐसी सरकारी भूमि के मामले में जिन पर गैर-आदिवासियों द्वारा पहले से ही कब्जा किया हुआ था भूमिहीन निर्धन व्यक्तियों से भिन्न व्यक्तियों को उक्त भूमि से सीधे बेदखल कर दिया जाए जिस पर उन्होंने कब्जा किया हुआ है, परन्तु भूमिहीन निर्धन व्यक्तियों को उनके द्वारा कब्जा की हुई भूमि और ऐसी अन्य भूमि को मिलाकर यदि कोई हों, जो पहले से उनके स्वामित्व में हैं सिंचित भूमि की दशा में 2.5 एकड़ अथवा असिंचित भूमि की दशा में 5 एकड़ भूमि की अधिकतम सीमा तक की भूमि से तब तक बेदखल नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि ऐसी भूमि की आवश्यकता आदिवासियों को आबंटित करने के लिए नहीं थी। 1971 में जारी किए एक अन्य आदेश में राज्य सरकार ने निर्णय लिया था कि राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों में गैर-आदिवासी निर्धन व्यक्तियों को उनके कब्जे वाली भूमि से ऊपर विनिर्दिष्ट सीमा तक, यदि ऐसी भूमि कम से कम दस वर्ष की अवधि से उनके कब्जे में थीं, बेदखल नहीं किया जाना चाहिए। तथा आदिवासी आवेदकों को उसी गांव या पड़ौस के गांवों में अन्य भूमि आवंटित की जा सकती थी। 1974 में राज्य सरकार ने यह निर्णय लिया था कि अनुसूचित जातियों के भूमिहीन निर्धन व्यक्तियों के मामले में दस वर्ष की अवधि की शर्त पर आग्रह नहीं किया जाना चाहिए और यदि ऐसी भूमि पर 1969 से उनका कब्जा था तो उन्हें बेदखल न किया जाए। 1979 में राज्य सरकार से अपने पहले आदेशों में आंशिक संशोधन करते हुए इस प्रभाव का एक अन्य आदेश जारी किया था कि गैर-आदिवासी भूमिहीन निर्धनों को जिनके कब्जे में अनुसूचित क्षेत्रों में सिंचित भूमि की दशा में 5 एकड़ अथवा असिंचित भूमि क दशा में 10 एकड़ भूमि है ऊपर वर्णित 1959 के विनियम के प्रावधानों के अधीन फिलहाल बेदखल न किया जाए। इस आदेश को राज्य के उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई थी। और यह 5-12-84 को रद्द कर दिया गया था। यद्यपि, उच्च न्यायालय का यह निर्णय सूचना के लिए अनुसूचित क्षेत्रों के सभी कलेक्टरों को 7-2-85 को परिचालित कर दिया गया था, तथापि यह आदेश तब राज्य सरकार द्वारा औपचारिक रूप से वापस नहीं लिया गया था। इस प्रकार यद्यपि राज्य सरकार का 1979 का आदेश नाकारा हो गया था परन्तु इस तथ्य के कारण कि इसे तब भी वापस नहीं लिया गया था, इसका एक यह प्रभाव हुआ कि भूमि हस्तांतरण के मुद्दे को गंभीरता से नहीं लिया जा रहा था और यदि क्षेत्र के अधिकारी इस महत्वपूर्ण विनियम के कार्यान्वयन की उपेक्षा करते भी थे तो सरकार द्वारा इस चूक को गंभीर समझे जाने की संभावना नहीं थी। 12-9-87 को मैंने आंध्र प्रदेश के मुख्य मंत्री को लिखा और अनुरोध किया कि राज्य सरकार द्वारा तत्काल सरकार के 1979 के आदेश को वापस लेते हुए, एक औपचारिक अधिसूचना जारी की जाए ताकि उपर्युक्त प्रभाव को समाप्त किया जा सके। इसके उत्तर की प्रतीक्षा की जा रही है।

18. **केरल** में राज्य सरकार ने केरल अनुसूचित जनजाति (भूमि हस्तान्तरण पर प्रतिबन्ध तथा हस्तान्तरित भूमियों का पुनर्ग्रहण) अधिनियम, 1975 बनाया था किन्तु इसे राष्ट्रपति की अनुमति केवल नवम्बर 1985 में प्राप्त हुई। राज्य सरकार ने सूचित किया कि यह अधिनियम जनवरी 1986 में सरकारी अधिसूचना जारी होने पर 1-1-82 से पूर्व प्रभाव से लागू किया गया था। इस अधिनियम के अधीन बने आवश्यक नियम जिन्हें केरल अनुसूचित जनजाति (भूमि हस्तान्तरण पर प्रतिबन्ध तथा हस्तान्तरित भूमि का पुनर्ग्रहण) नियम 1986 कहा गया है, 18-10-86 को राज्य सरकार की अधिसूचना जारी होने पर लागू हुए थे।

19. **महाराष्ट्र** : महाराष्ट्र में भू-राजस्व कोड तथा भूधारण कानून (संशोधन) अधिनियम, 1974 में यह प्रावधान किया गया था कि यदि 6-7-1974 से पूर्व किसी समय किसी आदिवासी की कृषि भूमि किसी गैर-आदिवासी को अवैध रूप से हस्तान्तरित हो गई थी तो वह उसे पुनः दिलाई जायें। इसी प्रकार महाराष्ट्र अनुसूचित जनजातियों को भूमि पुनर्ग्रहण अधिनियम, 1974 में यह प्रावधान किया गया था कि यदि 1-4-57 तथा 6-7-74 के बीच किसी आदिवासी कृषि भूमि किसी गैर-आदिवासी को विक्रय, गिरवी, उपहार, इत्यादि के रूप में विधितः हस्तान्तरित हो गई थी तो वह उसे पुनः दिलाई जाये। राज्य सरकार ने यह सूचित किया कि उन्हें उपर्युक्त कानूनों के कार्यान्वित किए जाने से, विशेष रूप से दूसरे अधिनियम से प्रभावित व्यक्तियों के अभ्यावेदन प्राप्त हुए थे जिनमें यह कहा गया था कि आदिवासियों को भूमि वापस दिलाने की प्रक्रिया में बड़ी संख्या में गैर-आदिवासी भूमिहीन हो गए थे। यह भी बताया गया था कि इसके परिणामस्वरूप इनमें से कुछ गैर-आदिवासियों के निर्वाह के साधन खत्म हो गए थे। प्रभावित गैर-आदिवासियों को राहत पहुंचाने के लिए राज्य सरकार ने 31-7-86 को इस प्रभाव का एक परिपत्र जारी किया था कि उपर्युक्त दो अधिनियमों के अंतर्गत कोई नई कार्यवाहियां आरम्भ न की जाएं। तथापि, इन अनुदेशों को जारी किए जाने से पहले जो मामले प्रारंभ हो चुके थे उन्हें जारी रखा जाना था। चूंकि इन अनुदेशों से उन आदिवासियों के हित प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुए थे, जिनकी भूमि हस्तान्तरित हो गई थीं, मैंने यह मामला राज्य सरकार के पास इस अनुरोध के साथ भेजा कि इन अनुदेशों को अन्तर्विष्ट करने वाले उपर्युक्त परिपत्र को वापस लिया जाए। राज्य सरकार ने मेरा अनुरोध स्वीकार किया और 4-6-87 को परिपत्र वापस ले लिया और उपर्युक्त दो अधिनियमों का कार्यान्वयन तत्काल पुनः आरंभ हो गया था। कलेक्टरों को भी यह निदेश दिया गया कि वे संबंधित राजस्व अधिकारियों को आवश्यक अनुदेश

जारी करें कि उक्त वों अधिनियमों के अधीन मामलों को शीघ्र निपटाया जाये।

20. मई 1985 तथा नवम्बर 1986 में राज्य के राजस्व मंत्रियों के सम्मेलन में आदिवासियों की भूमि के हस्तान्तरण के मुद्दे पर चर्चा की गई। इन सम्मेलनों में लिए गए निर्णयों के अनुसरण में भारत सरकार ने राज्य सरकारों को यह परामर्श दिया था कि विधि के विद्यमान प्रावधानों में बचाव के रास्तों को रोका जाए, उनके शीघ्र तथा प्रभावी कार्यान्वयन के लिये पर्याप्त प्रशासनिक प्रबन्ध किए जाएं और आदिवासियों को इन विधिक प्रावधानों का लाभ उठाने में समर्थ बनाने के लिए उनमें यथेष्ट जागरूकता उत्पन्न की जाए। मई 1985 में हुए उपर्युक्त सम्मेलन में निम्नलिखित सिफारिशें की गई थीं --

1. आदिवासियों की भूमि के गैर-आदिवासियों को हस्तान्तरण पर रोक संबंधी विद्यमान प्रावधानों की संवीक्षा तथा निम्नलिखित के प्रति विशेष प्रसंग से उनका कार्यान्वयन --
   - (क) स्व- प्रेरित कार्यवाही,
   - (ख) सीमा अवधि बढ़ाना,
   - (ग) न्यायालय के सामने कार्यवाहियों में किसी भी अवस्था पर दलील प्रस्तुत करना,
   - (घ) सिविल कार्यवाहियों में राज्य को एक पार्टी बनाना,
   - (ङ) उल्लंघन के मामलों की कानून के अन्तर्गत लाना और ऋण भारों से मुक्त भूमि का भौतिक रूप से पुनर्ग्रहण कार्य 31-12-85 तक पूरा किया जाए तथा
   - (च) इनके लिए और बचाव के रास्तों को रोकने के लिए आवश्यक कानून 31-12-86 तक बना लिए जायें।
2. ऐसे पुराने मामलों का पता लगाने के लिए सर्वेक्षण किया जाए, जिन्हें कानून के अन्तर्गत लिया जा सकता था।
3. विधायी तथा कार्यकारी उपायों की निरन्तर समीक्षा की जाए।
4. सातवीं योजना के अन्त तक अनुसूचित क्षेत्रों के भूमि अभिलेखों को चरण रीति से अद्यतन किया जाना।
5. संबंधित राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त की सिफारिशों पर पूरी रिपोर्ट भेजी जानी चाहिए ताकि वे केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग के पास 30-6-88 तक पहुंच जायें।

21. नवम्बर 1986 में हुए राजस्व मंत्रियों के सम्मेलन में निम्नलिखित सिफारिशें की गई थीं।

(1) भूमि पर आदिवासियों के अधिकारों के संबंध में संरक्षण देने के बारे में मई 1985 में दिए गए सुझावों को यदि पहले ही कार्यान्वित न किया गया हो तो बिना विलम्ब के कार्यान्वित किया जाना चाहिए।

(2) विद्यमान कानूनों के अन्तर्गत हस्तान्तरण के मामलों का पता लगाने तथा इनके शीघ्र निपटान के लिए क्रमशः प्रशासनिक तथा न्यायिक तन्त्र को उपयुक्त रूप से मजबूत किया जायें।

(3) यह सुनिश्चित करने के लिए कि आदिवासियों को वापस दिलाई गई भूमि से उन्हें बेदखल न किया जाए, निवारक विधिक प्रावधानों सहित प्रभावी प्रबन्ध किए जाने चाहिएं। सुरक्षात्मक उपबन्ध होने के बावजूद आदिवासी भूमियों के बढ़ते हस्तान्तरण के बारे में बताई गई बढ़ती हुई शिकायतों के संदर्भ में आदिवासियों में उनके विधिक अधिकारों के बारे में आवश्यक रूप से यथेष्ट जागृति उत्पन्न की जानी चाहिए।

(4) आदिवासियों को वह भूमि पुनः दिलाने के लिए जिस पर से उनके कब्जे खत्म कर दिए गए हैं, कार्यवाही करते समय परिसीमा के कानून तथा ऐसे अन्य कोई कानून लागू नहीं किए जाने चाहिएं जो संरक्षणात्मक उपबन्धों को निष्प्रभावी करते हैं। ऐसे प्रभावी उपबन्धों के लिए राज्यों को उपयुक्त विधायी प्रस्ताव अवश्य करने चाहिएं।

(5) आदिवासियों की भूमि के हस्तान्तरण के संबंध में उत्पन्न मामलों के शीघ्र निपटान के लिए सभी कदम उठाए जाने चाहिएं ताकि विद्यमान विधिक प्रावधानों के अधीन ऐसी भूमियों को उन्हें पुनः वापस दिलाया जा सके और वापस दिलाई गई भूमियों पर आदिवासियों के कब्जों का प्रभावी रूप से संरक्षण किया जा सके। अधिकांश राज्यों ने विशेष न्यायालय की स्थापना आवश्यक नहीं समझी है क्योंकि ऐसे मामलों का निपटान राजस्व न्यायालयों द्वारा किया जाता है तथापि, जहां ऐसे प्रबन्ध विद्यमान नहीं हैं और ये मामले न्यायिक न्यायालयों द्वारा विचारणीय होते हैं, वहां विशेष न्यायालयों की स्थापना की जा सकती है। आदिवासियों के हित में संरक्षणात्मक

कानूनों के शीघ्र कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए अपील तथा पुनरीक्षण न्यायालयों का सहारा कम लिया जाये।

वृक्ष पट्टा योजना

22. मई 1985 में हुए राजस्व मंत्रियों के सम्मेलन की सिफारिशों के अनुसरण में सरकारी, पंचायती तथा सड़कों और नहरों के किनारों सहित सामुदायिक कृषि के लिए अनुपयुक्त बंजर भूमि पर लगे हुए पेड़ों पर उपभोग अधिकार देने के लिए वृक्ष पट्टा योजना के लिए मार्गनिर्देश तैयार करने हेतु केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग ने एक दल गठित किया था ताकि उसमें व्यक्तियों के हित की रक्षा की जा सके और मुख्यतः ईंधन की लकड़ी, फल तथा चारे के पेड़ उगाने और उनके संरक्षण के लिए प्रोत्साहन दिया जा सके। इस दल की रिपोर्ट, जिस में मार्गनिर्देश, नियम तथा शर्तें, आदर्श प्रपत्र तथा विधान का आदर्श प्रारूप अन्तर्विष्ट थे, उस विभाग द्वारा सभी राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों को भेजी गई थी और यह सिफारिश की गई थी कि उसे ऐसे संशोधनों के साथ अपना लिया जाए जिनका स्थानीय स्थिति के लिए उपयुक्त होना आवश्यक समझा जाए।

23. केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग द्वारा जारी किए गए मार्गनिर्देशों के अनुसार वृक्ष पट्टा योजना की मुख्य विशेषताएं नीचे दी गई हैं —

(1) यह योजना भूदान-भूमि, अधिकतम सीमा से फालतू भूमि, जो छोटे टुकड़ों में बिखरी पड़ी है और सड़कों तथा नहरों के किनारों वाली भूमि सहित, ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी पंचायती अथवा समुदाय की बंजर भूमि पर पेड़ उगाने पर लागू होगी। यह योजना ऐसी सरकारी पंचायती अथवा सामुदायिक भूमि पर पेड़ उगाने के लिए लागू नहीं होगी जो पट्टे पर दी हुई है या जिनमें किसी निजी व्यक्ति का नाम या हक है।

(2) खेती योग्य अथवा उपजाऊ कृषि भूमि को पेड़ उगाने के लिए प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिए।

(3) केन्द्र सरकार की भूमि के मामले में केन्द्र सरकार की पूर्व अनुमति प्राप्त की जानी चा ए।

(4) यह योजना वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के अन्तगत आने वाली भूमि पर लागू नहीं होगी।

(5) लाभभोगियों में ग्रामीण निर्धन, अर्थात् एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में यथा परिभाषित भूमिहीन खेतिहर मजदूर, तथा छोटे और सीमान्त किसान शामिल होंगे।

(6) आबंटियों में से पचास प्रतिशत अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के होंगे और 30% आबंटी स्त्रियां होंगी।

(7) खंड स्तरीय समितियां लाभभोगियों का चयन ग्राम स्तरीय समितियों की सिफारिश पर करेंगी।

(8) एक लाभभोगी को अधिक से अधिक 1 हेक्टेयर या 1 कि० मीटर भूमि आवंटित की जाएगी।

(9) समुचित प्राधिकारी द्वारा वृक्षारोपण परमिट लाभभोगियों को जारी किए जाएंगे जिन्हें उस पर दो वर्ष की अवधि के अन्दर पेड़ लगा लेने चाहिएं और भूमि पर पौधों की सही जांच के बाद, पेड़ की संवर्धन आयु के साथ समाप्त होने वाली अवधि तक के लिए वृक्ष पट्टा प्रदान किया जाएगा।

(10) वृक्षारोपण परमिट या वृक्ष पट्टों की किसी भी शर्त का उल्लंघन करने पर लाभभोगी दण्ड का भागी होगा जैसे जुर्माना, साधारण कारावास तथा बेदखली।

(11) पट्टेदार को केवल पेड़ों के उपयोग का अधिकार होगा, परन्तु भूमि पर किसी प्रकार अन्य अधिकार नहीं होगा।

(12) ऋण लेने के लिए पेड़ों को किसी बैंक/वित्तीय संस्थान के पास बन्धक रखा जा सकता है।

(13) उचित कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न स्तरों पर निम्नलिखित जिम्मेदार एजेन्सियां स्थापित करने के लिए सिफारिशें की गई हैं —

(क) भारत सरकार के स्तर पर ग्रामीण विकास विभाग जिम्मेदार एजेंसी हो,

(ख) संयोजक के रूप में सचिव, ग्रामीण विकास तथा सदस्यों के रूप में राजस्व, वन तथा लोक निर्माण विभागों के सचिवों से मिलकर बनी राज्य स्तरीय समिति हों,

(ग) प्रधान के रूप में कलेक्टर तथा सदस्यों के रूप में जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना के परियोजना निदेशकों तथा अन्य सरकारी विभागों के प्रतिनिधियों से मिलकर बनी जिला स्तरीय समिति हो,

(घ) सभी विभागों तथा पंचायत राज संस्थानों के प्रतिनिधियों से मिलकर बनी खंड स्तरीय समिति हो,

(ङ) इस योजना के कार्यान्वयन के लिए खण्ड विकास अधिकारी के पास एक राजस्व अधिकारी रखा जाए और कार्य की अधिकता को देखते हुए खंड स्तर पर एक वन अधिकारी भी रखा जा सकता है।

24. पर्यावरण तथा वन मंत्रालय द्वारा भेजी गई सूचना के अनुसार यह योजना **बिहार, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश** में आरंभ की गई है। **तमिलनाडु** में राजस्व कोड के अधीन जून 1986 में एक संशोधन लागू करके वृक्ष पट्टे के समान अधिकार दिए गए हैं। **जम्मू-कश्मीर, केरल तथा पश्चिमी बंगाल** की सरकारों तथा **अरुणाचल प्रदेश, दिल्ली** और **लक्षद्वीप** के प्रशासनों ने भूधृति संबंधी समस्याओं तथा भूमि की अनुपलब्धता के कारण इस योजना को अपनाने में अपनी असमर्थता व्यक्त की थी।

खेतिहर मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी

25. खेतिहर मजदूर असंगठित सेक्टर में होने और पूरे ग्रामीण क्षेत्रों में बिखरे होने के कारण किसी स्थायी संगठन के अभाव में उनमें मोल-भाव करने की क्षमता बहुत कम होती है। अतः उनमें से अधिकांश न्यूनतम मजदूरी इत्यादि के नियतीकरण के रूप में लाभों के लिए सरकारी तंत्र पर निर्भर करते हैं। 1981 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जातियों के कुल मजदूरों में से 48.2% तथा जनजातियों के कुल मजदूरों में से 32.6% खेतिहर मजदूर थे। देश में खेतिहर मजदूरों की कुल संख्या में से अनुसूचित जाति तथा जनजाति के खेतिहर मजदूरों का प्रतिशत क्रमशः 32.88% तथा 12.93% था। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के खेतिहर मजदूरों की न्यूनतम मजदूरी के भुगतान पर मतभेद इन जातियों के व्यक्तियों पर अत्याचार का एक महत्वपूर्ण कारण बन गया है। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अधीन संबंधित राज्य सरकारों को अपने-अपने राज्यों में मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करनी होती थी। इस अधिनियम की धारा 3 के अधीन राज्य सरकारों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे ऐसे अन्तरालों के बाद जिसे वे उचित समझें किन्तु जो पांच वर्ष से अधिक न हो, मजदूरी की न्यूनतम दरों की समीक्षा करें और यदि आवश्यक हो तो उन्हें पुनरीक्षित करें। श्रम मंत्रालय द्वारा भेजी गई 20-5-87 को यथास्थिति अकुशल मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी के संबंध में सूचना राज्यवार दर्शाते हुए एक सारणी अनुलग्नक 3 में देखी जा सकती है।

26. मजदूरी में असमानता तथा राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी/क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी तय किए जाने के बारे में गत काल में विभिन्न सम्मेलनों में चर्चा की गई थी। राष्ट्रीय श्रम आयोग, 1969 के इस सुझाव के अनुसरण में कि पूरे देश के लिए पारिश्रमिक की एक समान मुद्रा-दर न तो उपयुक्त है न ही वांछनीय और प्रत्येक राज्य में विभिन्न समान क्षेत्रों में क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने के प्रयास किए जाने चाहिए, इस मामले पर बाद में नवम्बर 1985 में हुए भारतीय मजदूर सम्मेलन के 28वें सत्र में चर्चा की गई थी। इसने यह सिफारिश की थी कि उस समय तक जब तक कि राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी संभव न हो जाए, तब तक क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी रखना वांछनीय होगा जिसके लिए केन्द्रीय सरकार मार्गनिर्देश विहित कर सकती है। इस मामले पर अप्रैल 1987 में हुई राज्य श्रम सचिवों की बैठकों तथा मई 1987 में हुए श्रम मंत्रियों के सम्मेलन में विचार किया गया था। श्रम मंत्रियों के सम्मेलन के निष्कर्षों के प्रकाश में श्रम मंत्रालय द्वारा क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी के मार्गनिर्देश परिचालित किए गए थे। तथापि इन्हें कोई कानूनी समर्थन प्राप्त नहीं था क्योंकि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 में क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी के निर्धारण का प्रावधान नहीं था। ये मार्गनिर्देश नीचे दिए गए हैं—

(क) कोष्ठों में दिये गए राज्यों में छह क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी सलाहकार बोर्ड होंगे—पूर्वी क्षेत्र (पश्चिम बंगाल), उत्तर-पूर्वी क्षेत्र (असम), दक्षिणी क्षेत्र (तमिलनाडु), उत्तरी क्षेत्र (हरियाणा), पश्चिमी क्षेत्र (महाराष्ट्र) और मध्य क्षेत्र (उत्तर प्रदेश)। इन बोर्डों की बैठकों की अध्यक्षता उन राज्यों के श्रम सचिव करेंगे जिनमें वे आयोजित की जायेंगी। इस बोर्ड में छह प्रतिनिधि होंगे जिनमें मालिकों और मजदूरों का एक-एक प्रतिनिधि, प्रत्येक राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का एक-एक प्रतिनिधि और भारत सरकार का संबंधित निदेशक/उप सचिव।

(ख) किसी क्षेत्र में न्यूनतम मजदूरी चयनित रोजगारों के लिए रोजगार-वार तय की जाय। ये क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी सलाहकार बोर्ड ऐसे रोजगारों का चयन करें जो एक क्षेत्र में दो से अधिक राज्यों में उपलब्ध हों अथवा ऐसे रोजगार जो विभिन्न उद्योगों तथा व्यवसायों में व्यापक अन्तर के कारण एक राज्य से हट कर किसी दूसरे राज्य में उपलब्ध हो गए हों।

(ग) क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी के आरंभिक निर्धारण के बाद ये बोर्ड स्थिति की समीक्षा करने के लिए वर्ष में कम से कम दो बार बैठकें आयोजित करें।

(घ) इन बोर्डों को क्षेत्रीय न्यूनतम मजदूरी निर्धारण करने में क्षेत्र के विभिन्न राज्यों में और पड़ोसी क्षेत्रों में रोजगार विशेष में प्रचलित मजदूरी दरों, भुगतान क्षमता, उस रोजगार के लिए

कुशलता की आवश्यकता, उसमें अन्तर्ग्रस्त जोखिमों को भी ध्यान में रखना चाहिए।

(ङ) ये बोर्ड न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करते समय निर्धनता रेखा के प्रत्यय को भी ध्यान में रखें।

(च) ये न्यूनतम मजदूरी श्रम कार्यालय, शिमला द्वारा संकलित अखिल भारतीय उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के किसी विशिष्ट स्तर से सुसंगत हों। तथापि राज्य, जब इस मूल्य सूचकांक में 50 अंकों की वृद्धि हो जाय, उस मजदूरी को बढ़ाएं। मजदूरी का निर्धारण तथा पुनरीक्षण बोर्ड की सिफारिशों को दृष्टि में रखते हुए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अधीन सामान्य कार्यविधि का पालन करते हुए प्रत्येक राज्य सरकार द्वारा किया जाय।

27. श्रम मंत्रियों के उपर्युक्त सम्मेलन ने अन्य बातों के साथ साथ यह सिफारिश भी की थी कि असंगठित श्रम की स्थिति सुधारने की दृष्टि से यह अनिवार्य है कि उन श्रम कानूनों को कार्यान्वित किया जाय जो उनसे सर्वाधिक रूप से संबंधित हैं। ये कानून हैं न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948, अन्तरराज्यिक प्रवासी कर्मकार (नियोजन का विनियमन और सेवा शर्त) अधिनियम, 1979, ठेका श्रम (विनियमन और उत्सादन) अधिनियम, 1970, बंधित श्रम पद्धति (उत्सादन) अधिनियम, 1976, बीड़ी तथा सिगार कर्मकार (नियोजन की शर्तें) अधिनियम, 1986 इत्यादि। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के कार्यान्वयन में बाधक कठिनाइयों को दूर करने के लिए उक्त सम्मेलन ने केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा निम्नलिखित कार्यवाही किए जाने की सिफारिश की थी --

(क) केन्द्र और राज्य सरकारें दोनों एक अनवरत प्रचार अभियान द्वारा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और असंगठित श्रम को प्रभावित करने वाले अन्य अधिनियमों के उपबन्धों के बारे में श्रमिकों और उनके नियोजकों को अनभिज्ञता को दूर करें।

(ख) केन्द्र सरकार की यथावांछित सहायता से राज्य सरकारों के लागू करने वाले तंत्र को सुदृढ़ और उन्नत करना।

(ग) निरीक्षण कार्मिकों के कार्यों में, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और खेतिहर श्रमिकों और अन्य श्रमिकों को प्रशासित करने वाले अन्य कानूनों को लागू कराना शामिल है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में उनके कार्य के दौरान उन्हें परिवहन की सुविधा और सुरक्षा प्रदान करना चाहिए जिससे आवश्यक गति-शीलता बनी रहे। इसके लिए केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों को उपयुक्त सहायता प्रदान करने पर विचार करे।

(घ) ऊपर वर्णित कानूनों को प्रभावी रूप से लागू करने और कार्यान्वयन के लिए अलग-अलग राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में विद्यमान परिस्थितियों के अनुसार राज्य सरकार के अन्य विभागों जैसे राजस्व विभाग, ग्रामीण विकास विभाग तथा कल्याण विभाग की सहायता भी ली जानी चाहिए।

भूमि संबंधी तनावों के कारण अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचार

28. ग्रामीण क्षेत्रों में गम्भीर सामाजिक और आर्थिक असमानताएं विद्यमान होने के कारण विभिन्न वर्गों के बीच तनाव पैदा हो गए हैं। यद्यपि विभिन्न राज्यों ने आदिवासियों की भूमियों के गैर-आदिवासियों को हस्तान्तरण को रोकने और हस्तान्तरित भूमियों को आदिवासियों को वापस दिलाने के लिए विधायी तथा कार्यकारी उपाय किए हैं, तथापि उन्हें आबंटित भूमियों के वास्तविक कब्जे प्राप्त करने में बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के व्यक्तियों को इन कारणों से तथा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी का भुगतान न किए जाने के कारण निहित स्वार्थों की ओर से बहुत अत्याचारों का सामना करना पड़ता है। ऐसे अत्याचारों के शिकार हुए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के व्यक्तियों से बड़ी संख्या में अभ्यावेदन इस कार्यालय में प्राप्त हुए थे। ऐसे मामले समाचारपत्रों में भी छपे थे। दृष्टांत के रूप में 58 मामलों की राज्यवार सूची अनुलग्नक 4 में दी गई है और इसके साथ प्रत्येक मामले का सार भी दिया गया है।

भूमिहीन कर्मकारों को गृह प्लॉटों का आबंटन

29. राष्ट्रीय आवास नीति में इस बात पर जोर दिया गया है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों, मुक्त बंधुआ मजदूरों तथा कारीगरों सहित खेतिहर मजदूरों को गृह प्लॉट देने और उन्हें गृह निर्माण के लिए ऋण-एवं-सहायता के आधार पर वित्तीय सहायता देने के लिए प्रावधान किया जाय। भूमिहीन कर्मकारों के लिए गृह प्लॉट एवं निर्माण सहायता के आबंटन की इस योजना के अधीन सातवीं योजना अवधि के लिए 576.90 करोड़ रुपए की राशि रखी गई थी। सातवीं योजना के पहले दो वर्षों में 245.10 करोड़ रुपए व्यय हुए थे। 1986-87 के अंत तक विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा कुल 148.47 लाख परिवारों को गृह प्लॉट दिए गए थे। इस योजना के अधीन विभिन्न राज्यों में जिनके बारे में सूचना प्राप्त है, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के ऐसे परिवारों की संख्या जिन्हें 1983-84 से

1985-86 तक तथा 1986-87 में गृह प्लॉट दिए गए थे नीचे की सारणी में दर्शाई गई हैं :—

सारणी—5

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	अ० जा० तथा अ०ज०जा० के ऐसे परिवारों की संख्या जिन्हें इन वर्षों में गृह-प्लॉट दिए गए			
		1983-84 से 1985-86 तक		1986-87	
		अ० जा०	अ०ज०जा०	अ० जा०	अ०ज०जा०
1	2	3	4	5	6
1.	आन्ध्र प्रदेश	2,59,341	1,17,206	60,311	18,138
2.	असम	शून्य	1,733	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं
3.	बिहार	37,673	6,035	6,577	666
4.	गुजरात	7,163	5,727	6,174	7,427
5.	हरियाणा	36,981	*	1,290	*
6.	हिमाचल प्रदेश	शून्य	शून्य	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं
7.	जम्मू और काश्मीर	94	*	प्राप्त नहीं	*
8.	कर्नाटक	1,75,021	शून्य	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं
9.	केरल	6,760	972	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं
10.	मध्य प्रदेश	47,558	49,127	3,368	3,708
11.	महाराष्ट्र	5,420	1,950	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं
12.	उड़ीसा	34,808	16,864	16,105	प्राप्त नहीं
13.	पंजाब	शून्य	*	शून्य	*
14.	राजस्थान	36,248	16,836	21,395	9,227
15.	तमिलनाडु	1,95,252	2,803	1,13,131	प्राप्त नहीं
16.	त्रिपुरा	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं
17.	उत्तर प्रदेश	1,33,038	4,287	48,988	53
18.	पश्चिम बंगाल	12,115	5,908	2,795	788

*लागू नहीं

इन्दिरा आवास योजना

30. इन्दिरा आवास योजना के नाम से यह योजना ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के एक भाग के रूप में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों और ग्रामीण क्षेत्रों में मुक्त बंधुआ मजदूरों के लिए गृह निर्माण करने हेतु सातवीं योजना में आरम्भ की गई थी। इस योजना के अधीन सातवीं योजना में 10 लाख गृहों का निर्माण करने की परिकल्पना की गई थी। इस योजना पर सातवीं योजना के प्रथम दो वर्षों में 195.04 करोड़ रुपए व्यय किए गए थे। दिसम्बर 1986 तक भारत सरकार ने विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में बिखरे लगभग 3.50 लाख गृह मंजूर किए थे। केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग द्वारा जारी किए गए मार्गनिर्देशों के अनुसार लाभभोगियों की पहचान उनकी आर्थिक स्थिति के आधार पर होनी चाहिए ताकि ग्राम सभा की खुली बैठकों में इस योजना के लिए निर्धन व्यक्तियों में से सर्वाधिक निर्धन का चयन किया जा सके। गृह निर्माण का कार्य यथासंभव स्वयं लाभभोगियों द्वारा किया जाना है जिस पर तकनीकी पर्यवेक्षण राज्य सरकार द्वारा प्रदान किया जायगा। यदि गृह का निर्माण करना लाभभोगी के लिए संभव न हो तो निर्माण राज्य सरकार के ग्रामीण अभियांत्रिकी संगठन इत्यादि द्वारा किया जा सकता है। परन्तु ऐसे मामलों में भी लाभभोगियों को गृह निर्माण के कार्य में कर्मकार के रूप में यथासंभव अधिकतम सीमा तक लगाना चाहिए। इस योजना के कार्यान्वियन में प्राकृतिवास (हैबिटैट) के प्रत्यय का अनुसरण किया जाना है जिसका आशय है डिजाइन और निर्माण लागत में बचत के लिए उपलब्ध स्थल पर उपयुक्त संकेन्द्रण और

गृहों की व्यवस्था जिसमें झरोखों, प्राकृतिक प्रकाश इत्यादि और दूसरी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे जलनिकासी के लिए नालियां, शौचालय, टांड (स्टोर के लिए लाफ्ट) कूड़े कचरे के निपटान के साधन, पेड़ लगाना, मुख्य मार्ग से गांव तक बारह-मासी पहुंच मार्ग आदि को ध्यान में रखा जाता है।

31. प्रत्येक क्षेत्र के लिए गृहों के प्रकार और डिज़ाइन राज्य सरकारों द्वारा तैयार किए जाते हैं। केन्द्रीय सरकार, गैर–मजदूरी व्यय की 50 प्रतिशत की अधिकतम सीमा के लिए ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के मार्ग-निर्देशों के अधीन रहते हुए, प्रति इकाई 7,200 रुपए की अधिकतम सीमा तक निधि प्रदान करती है। तथापि ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम की केन्द्रीय समिति के पूर्व अनुमोदन से पर्वतीय क्षेत्रों, दुर्गम और दूरस्थ क्षेत्रों, कपास की काली मिट्टी वाले क्षेत्रों इत्यादि में गृह निर्माण के लिए सहायता की इकाई लागत 9,000 रुपए तक बढ़ाई जा सकती है। गृह निर्माण के लिए अथवा गैर-मजदूरी घटक (यदि कोई हो) के लिए 50 प्रतिशत से ऊपर निधि की उपर्युक्त अतिरिक्त आवश्यकता राज्य सरकारों द्वारा अपनी निधि, लाभभोगियों के अंशदान, शहरी आवास विकास निगम अथवा ग्रामीण आवास के लिए राज्य के अन्य निगमों से ऋणों द्वारा पूरी की जाती है। अवस्थापना संबंधी विकास जैसे भूमि को समतल बनाना, नाले का प्रावधान करना, स्थल का विकास, अन्दरूनी सड़कों का निर्माण, जल आपूर्ति इत्यादि के लिए निधि, गृह इकाई की ऊपर वर्णित लागत के अतिरिक्त 3,000 रुपए की सीमा तक अथवा ग्रामीण आवास की प्रति इकाई के लिए शहरी आवास विकास निगम द्वारा अनुमोदित अधिकतम सीमा के 50 प्रतिशत तक ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा न्यूनतम मजदूरी व्यय के लिए 50 प्रतिशत भाग के अधीन रहते हुए राशि उपलब्ध कराई जाती है। यह अपेक्षा कि मजदूरी पर व्यय कुल व्यय के 50 प्रतिशत से कम न हो, गृह निर्माण और अवस्थापना संबंधी विकास की लागत, पर खण्ड (ब्लॉक) के वार्षिक कार्यक्रम के लिए व्यय को सम्मिलित करके, लागू होती है। इसलिए राज्य की परियोजनाएं खण्डवार योजना के आधार पर और विभिन्न क्षेत्रों के लिए प्रकार/डिज़ाइन को ध्यान में रखते हुए तैयार की जाती हैं। इकाई की लागत, उसका प्रकार, डिज़ाइन, अवस्थापना इत्यादि का अनुमोदन ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम की केन्द्रीय समिति द्वारा राज्य की ओर से प्रस्तुत किए जाने वाले ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के एक भाग के रूप में किया जाता है। निधियों की अतिरिक्त आवश्यकता और राज्यों द्वारा निधियों के प्रबंध पर भी केन्द्रीय समिति द्वारा विचार किया जाता है।

32. इस योजना का कार्यान्वियन थोड़े से राज्यों को छोड़ कर अधिकांश राज्यों में जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों द्वारा किया जा रहा है। **आंध्र प्रदेश** में इस योजना का कार्यान्वियन आवास निगम द्वारा किया जा रहा है जबकि **उत्तर प्रदेश** में ग्रामीण आवास बोर्ड यह कार्य कर रहा है। **कर्नाटक में** इस योजना का कार्यान्वियन भूमि विकास विभाग द्वारा किया जा रहा है। इस योजना के कार्यचालन की समीक्षा केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग द्वारा इस विभाग के निरीक्षण अधिकारियों द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्टों के आधार पर की गई थी। इन रिपोर्टों के आधार पर उक्त विभाग द्वारा पाई गई कमियां ये थीं—(1) नियोजन की कमी, (2) संकेन्द्रण समूह की रूपरेखा का अनुपयुक्त होना, (3) संरचना आधारसंबंधी सुविधाओं की कमी, (4) शौचालयों/चूल्हों/स्टोरों की सुविधा की कमी, (5) कुछ शौचालयों में दो गड्ढों के बजाय केवल एक गड्ढा बनाया जाना, (6) रसोई और स्नानागार के लिए पानी भरने के गड्ढों का अभाव, (7) रोशनदानों और खिड़कियों की कमी, (8) घटिया कारीगरी और किस्म, (9) कुछ संकेद्रण समूहों में टाइल की नई छतें पहले से ही झुकी हुई हैं और ठीक तरह नहीं लगाई गई हैं, (10) धुंआरहित चूल्हों के अनुपयुक्त डिज़ाइन, (11) लाभभोगियों को भी कार्य में न लगाना, (12) सीमेंट और लोहे के अत्यधिक प्रयोग के साथ निर्माण की अनुपयुक्त तकनीक का होना, (13) अपनी बनाई विधि के बजाय क्रय की गई विधि का अपनाया जाना जिसके परिणामस्वरूप कम लागत वाली स्थानीय सामग्री की अपेक्षा अधिक लागत वाली सामग्री प्रयोग में ली गई जिसे दूर के स्थानों से लाया गया, (14) रोजगार पहलू में त्रुटि होना, (15) सामाजिक वानिकी, मत्स्य विकास कार्य के लिए शेड की सुविधा, पहुंचने के मार्ग इत्यादि के द्वारा संपर्क जोड़ कर विशेष प्रकार के निवासस्थानों का विकास न किया जाना।

अनुलग्नक 1

सन् 1972 के राष्ट्रीय मार्गनिर्देशों और भारत सरकार द्वारा सुझाई गई उससे कम सीमाओं के समक्ष भूमि की राज्यवार अधिकतम सीमायें

	दो फस्ली सिंचित	एक फस्ली सिंचित	शुष्क भूमि
1972 के राष्ट्रीय मार्गनिर्देशों में सुझाई गई सीमायें	4.05 से 7.28	10.93	21.85
सुझाई गई न्यूनतर सीमायें	5.00	7.5	12
वास्तविक अधिकतम सीमायें			
आन्ध्र प्रदेश	4.05 से 7.28	6.07 से 10.93	14.16 से 21.85
असम	6.74	6.74	6.74
बिहार	6.07 से 7.28	10.12	12.14 से 18.21
गुजरात	4.05 से 7.29	6.07 से 10.93	8.09 से 21.85
हरियाणा	7.25	10.9	21.8
हिमाचल प्रदेश	4.05	6.07	12.14 से 28.33
जम्मू-काश्मीर	3.6 से 5.06	--	5.95 से 9.20 लद्दाख में 7.7 हेक्टे०
कर्नाटक	4.05 से 8.10	10.12 से 12.14	21.85
केरल	4.86 से 6.07	4.86 से 6.07	4.86 से 6.07
मध्य प्रदेश	7.28	10.93	21.85
महाराष्ट्र	7.28	10.93	21.85
मणिपुर	5.00	5.00	6.00
उड़ीसा	4.05	6.07	12.14 से 18.21
पंजाब	7.00	11.0	20.50
राजस्थान	7.28	10.93	21.85 से 70.82
तमिलनाडु	4.86	12.14	24.28
सिक्किम	5.06	--	20.23
त्रिपुरा	4.00	4.00	12.00
उत्तर प्रदेश	7.30	10.95	18.25
पश्चिम बंगाल	5.00	5.00	7.00

टिप्पणी : (1) कर्नाटक और उत्तर प्रदेश में क्रमश: दो फस्ली और एक फस्ली सिंचित भूमि की वास्तविक अधिकतम भूमि सीमायें भूमि के वर्गीकरण के कारण थोड़ी अधिक है।

(2) हिमाचल प्रदेश और राजस्थान में शुष्क भूमि की वास्तविक अधिकतम भूमि सीमायें भी क्रमश: पर्वतीय क्षेत्र होने और मरु भूमि होने के कारण अधिक हैं।

(3) पश्चिम बंगाल में अधिकतम भूमि सीमायें फस्ल की क्षमता पर आधारित नहीं हैं। ये परिवार के आकार पर आधारित हैं और सिंचित तथा असिंचित भूमि के लिए भिन्न हैं।

अनुलग्नक

दिनांक 31-3-1987 को समाप्त होने वाली अवधि के दौरान अधिकतम भूमि सीमा कानून लागू किए जाने के कारण फालतू घोषित की गई भूमि का

क्षेत्रफल एकड़ में

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	फालतू घोषित क्षेत्रफल			कब्जा लिया गया क्षेत्रफल			व्यक्तियों को आबंटित क्षेत्रफल		
	पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग	पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग	पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
आंध्र प्रदेश . .	उ० नहीं	766531	766531	उ० नहीं	482862	482862	उ० नहीं	362180	362180
असम . .	उ० नहीं	604172	604172	उ० नहीं	527023	527023	उ० नहीं	389164	389164
बिहार . .	उ० नहीं	448190	448190	उ० नहीं	334371	334371	उ० नहीं	217739	217739
गुजरात . .	45956	194021	239977	44699	100485	145184	44304	63363	107667
हरियाणा . .	351734	31698	383432	9218	21264	110482	89038	21273	110311
हिमाचल प्रदेश . .	उ० नहीं	284046	284046	उ० नहीं	281454	281454	उ० नहीं	3340	3340
जम्मू-काश्मीर . .	450000	6000	456000	उ० नहीं	450000	450000	उ० नहीं	450000	450000
कर्नाटक . .	उ० नहीं	295950	295950	उ० नहीं	152891	152891	उ० नहीं	114695	114695
केरल . .	उ० नहीं	126241	126241	उ० नहीं	88881	88881	उ० नहीं	59383	59383
मध्य प्रदेश . .	75062	223028	298090	66376	141986	208362	40787	95277	136864
महाराष्ट्र . .	319193	389512	708705	272520	334964	607484	179520	328981	508501
मणिपुर . .	--	1652	1652	--	1632	1632	--	1632	1632
उड़ीसा . .	उ० नहीं	183504	183504	उ० नहीं	155404	155404	उ० नहीं	144270	144270
पंजाब . . .	246036	49670	295706	89130	14310	103440	86289	13330	99619
राजस्थान . .	363281	248458	611739	314363	228154	542517	239284	156378	395662
तमिलनाडु . .	68170	98587	166757	64621	92771	157392	उ० नहीं	124275	124275
त्रिपुरा . . .	--	2012	2012	--	1929	1929	--	1521	1521
उत्तर प्रदेश . .	198780	309304	508084	198392	284597	482939	141154	202898	344052
पश्चिम बंगाल . .	1048848	191039	1239887	965814	143771	1109585	740209	92982	833191
दादरा और नागर हवेली .	--	8953	8953	--	7524	7524	--	4952	4952
दिल्ली . . .	377	776	1153	377	764	1141	210	102	312
पांडिचेरी . .	--	2353	2353	--	1195	1195	--	935	935
योग .	3167437	4465697	7633134	2105510	3848232	5953742	1560795	2848670	4409465

टिप्पण : आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल और उड़ीसा के बारे में पुराने कानून के अधीन फालतू घोषित भूमि की संबंधित राज्यों ने सूचना नहीं भेजी है। आन्ध्र प्रदेश के बारे में एकड़ों में आंकड़े 37.1 एकड़ भूमि को एक मानक जोत मान कर निकाले गए हैं ।

2

क्षेत्रफल और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों और दूसरे लाभभोगियों को आबंटित की गई भूमि का क्षेत्रफल दर्शाने वाला विवरण पत्र

22-7-1987 को यथा संकलित

			अनुसूचित जातियों के लाभभोगी					
लाभभोगियों की संख्या			क्षेत्रफल (एकड़)			लाभभोगियों की संख्या		
पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग	पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग	पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग
11	12	13	14	15	16	17	18	19
उ० नहीं	308756	308756	उ० नहीं	171411	171411	उ० नहीं	137348	137348
उ० नहीं	358697	358697	उ० नहीं	31527	31527	उ० नहीं	31027	31027
उ० नहीं	243669	243669	उ० नहीं	123881	123881	उ० नहीं	145131	145131
14784	9935	24719	6313	54158	60471	1534	7878	9412
30949	6059	37008	33186	9698	42884	11474	2832	14306
उ० नहीं	4400	4400	उ० नहीं	2305	2305	उ० नहीं	2934	2934
उ० नहीं	450000	450000	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
उ० नहीं	26437	26437	उ० नहीं	59629	59629	उ० नहीं	15258	15258
उ० नहीं	117034	117034	उ० नहीं	23162	23162	उ० नहीं	49196	49196
10830	37958	48788	9335	24038	33373	2979	11430	14409
34635	91580	126215	36193	110634	146827	7494	29876	37370
--	326	326	--	5	5	--	3	3
--	120744	120744	--	46177	46177	--	41653	41653
22134	3494	25628	34246	6618	40864	8134	1636	9770
38649	33825	72474	77748	51531	129279	13839	12872	26711
उ० नहीं	97785	97785	--	47946	47946	उ० नहीं	43324	43324
--	1317	1317	--	211	211	--	241	241
70490	217102	287592	89735	145955	235690	43226	154687	197913
1429467	282122	1711589	उ० नहीं	310505	310505	520477	117380	637857*
--	2282	2282	--	38	38	--	17	17
364	290	654	202	80	282	253	242	495
--	1134	1134	--	581	581	--	723	723
1652302	2414946	4067248	286958	1220090	1507048	609410	805688	1415098

*पश्चिम बंगाल से अ० जा०, अ० ज० जा० तथा अन्यों को आबंटित भूमि की सूचना नहीं भेजी गई है। इसकी गणना उस राज्य में एक व्यक्ति को आबंटित औसत क्षेत्रफल के आधार पर की गई है।

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	अनुसूचित जनजातियों के लाभभोगी						अन्य		
	क्षेत्रफल एकड़ों में			लाभभोगियों की संख्या			क्षेत्रफल एकड़ों में		
	पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग	पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग	पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग
1	20	21	22	23	24	25	26	27	28
आन्ध्र प्रदेश . .	उ० नहीं	63970	63970	उ० नहीं	57609	57609	उ० नहीं	126799	126799
असम . .	उ० नहीं	42113	42113	उ० नहीं	28624	28624	उ० नहीं	315524	315524
बिहार . .	उ० नहीं	26590	26590	उ० नहीं	26376	26376	उ० नहीं	67268	67268
गुजरात . .	19260	7644	26904	9940	1662	11602	18731	1561	20292
हरियाणा . .	--	--	--	--	--	--	55852	11575	67427
हिमाचल प्रदेश .	उ० नहीं	139	139	उ० नहीं	261	261	उ० नहीं	896	896
जम्मू-काश्मीर .	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	450000	450000
कर्नाटक . .	उ० नहीं	3860	3860	उ० नहीं	940	940	उ० नहीं	51206	51206
केरल . .	उ० नहीं	4926	4926	उ० नहीं	6629	6629	उ० नहीं	31295	31295
मध्य प्रदेश . .	16454	44004	60458	3989	14987	18976	15144	27089	43233
महाराष्ट्र . .	26661	58835	85496	7021	18043	25064	116665	159513	276178
मणिपुर . .	--	25	25	--	15	15	--	1602	1602
उड़ीसा . .	--	60113	60113	--	44776	44776	--	37980	37980
पंजाब . .	--	--	--	--	--	--	52043	6712	58755
राजस्थान . .	21597	18130	39727	5415	4843	10258	139939	86717	226656
तमिलनाडु . .	उ० नहीं	127	127	--	84	84	--	76202	76202
त्रिपुरा . .	--	426	426	--	314	314	--	884	884
उत्तर प्रदेश . .	294	1749	2043	102	1409	1511	51125	55194	106319
पश्चिम बंगाल .	--	159376	159376	270037	57363	327400	268616	94694	363310
दादरा और नागर हवेली .	--	4912	4912	--	2264	2264	--	2	2
दिल्ली . .	--	--	--	--	--	--	10	20	30
पांडिचेरी . .	--	--	--	--	--	--	--	354	354
योग .	842266	496939	581205	296504	266199	562703	718125	163087	2321212

*जम्मू-काश्मीर के बारे में उस राज्य ने लाभभोगियों को वितरित क्षेत्रफल की सूचना नहीं दी है, अतः कुल क्षेत्रफल अन्यों को वितरित रूप में दिखाया गया है।

(क्षेत्रफल एकड़ में)

लाभभोगियों की संख्या			फालतू घोषित भूमि परन्तु वितरित नहीं की गई (स्तंभ 4 से स्तंभ 10)	निम्नलिखित कारणों से जो भूमि वितरण के लिए प्राप्त नहीं हुई				वितरण के लिए उपलब्ध न हुआ कुल क्षेत्रफल (स्तंभ 33 से स्तंभ 36 का योग)	वितरण के लिए उपलब्ध शुद्ध क्षेत्रफल (स्तंभ 32 से स्तंभ 37 घटा कर)
पुनरीक्षण से पूर्व	पुनरीक्षित	योग		मुकदमे के अधीन क्षेत्रफल	सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए आरक्षित क्षेत्रफल	खेती के लिए अनुपयुक्त क्षेत्रफल	जो क्षेत्रफल विविध कारणों से उपलब्ध नहीं हुआ		
29	30	31	32	33	34	35	36	37	38
उ० नहीं	113799	113799	404351	300856	4773	65479	--	371100	33243
उ० नहीं	299046	299046	215008	76000	56397	18423	59600	210420	4588
उ० नहीं	72162	72162	230451	150173	--	13345	51119	214637	15814
3310	395	3705	132310	94793	25524@	--	8993	129310	3000
19475	3227	22702	273121	8748	180	--	264193*	273121	शून्य
उ० नहीं	1205	1205	280706	2591	50928	136220	16048	205787	74919
उ० नहीं	450000	450000*	6000	--	--	--	--	--	6000
उ० नहीं	10239	10239	181255	169744	10295	338	878	181255	शून्य
उ० नहीं	61209	61209	66858	28827	19900	--	16450	65185	1673
3822	11581	15403	162026	93942	11719	26819	18127	150607	11419
20120	43661	63781	200204	53727	90204	26471	21022	192224	7980
--	308	308	20	5	--	--	--	5	15
उ० नहीं	34315	34315	39234	20076	2675	2154	12662	37567	1667
14000	1858	15858	196087	36189	--	--	159308	195497	590
19395	16110	35505	216077	109012	46329	8744	5701	169786	46291
उ० नहीं	54377	54377	42482	26804	14017	--	--	40821	1661
--	762	762	491	64	269	45	18	396	95
27162	61006	88168	164032	45256	113529	93	2758	161636	2396
638958	107374	746332	406696	181195	44000	121000	1934	348129	50567
--	1	1	4001	1429	927	1225	--	3581	420
112	47	159	841	169	123	--	491	773	68
--	411	411	1418	1156	--	--	--	1156	262
746354	1343093	2089447	3223669	1400756	491789	420356	640100	2953001	270668

@नर्मदा परियोजना के लिए आरक्षित क्षेत्रफल

*विरासत के कारण छूट के अधीन आया क्षेत्रफल

अनुलग्नक 3

यथा 20-5-1987 की स्थिति केन्द्रीय सरकार द्वारा तय की गई तथा राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा सूचित की गई कृषि में न्यूनतम मजदूरी दर्शाने वाला विवरणपत्र

क्रम सं०	राज्य	जिस तारीख से प्रभावी है	मजदूरी की दर (रुपयों में)	अभ्युक्ति
1	2	3	4	5
1.	केन्द्रीय सरकार	12-2-85	8.50 से 12.75 क्षेत्रों के अनुसार	
2.	आन्ध्र प्रदेश . . .	9-2-87	11.00 प्रतिदिन	15 वर्ष से 18 वर्ष तक के बच्चों के लिए 80 प्रतिशत
3.	असम	22-2-85	12.50 प्रतिदिन	
4.	बिहार . . .	16-10-85	10.00 प्रतिदिन	
5.	गुजरात . . .	2-10-82	11.00 प्रतिदिन	न्यूनतम मजदूरी पुनरीक्षित करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं।
6.	हरियाणा . . .	23-4-82	19.25 प्रतिदिन	न्यूनतम मजदूरी उपभोगता मूल्य सूचकांकों के साथ जोड़े गए हैं।
7.	हिमाचल प्रदेश . . .	4-1-87	15.00 प्रतिदिन	कर्मकार कुछ मामलों में 12-1/2 प्रतिशत से 25 प्रतिशत तक अधिक मजदूरी के लिए हकदार हैं।
8.	जम्मू-काश्मीर . . .	7-7-84	10.50 प्रतिदिन	
9.	कर्नाटक . . .	31-1-85	9.50 से 14.00 प्रतिदिन कार्य की श्रेणी और भूमि की किस्म के अनुसार	
10.	केरल . . .	1-6-84	12.00 प्रतिदिन हल्के काम के लिए और 15.00 प्रतिदिन कठिन काम के लिए	कोई पृथक दैनिक भत्ता नहीं।
11.	मध्य प्रदेश . . .	1-1-82	10.49 प्रतिदिन	विशेष भत्ते की दर उपभोगता मूल्य सूचकांक के औसत में 449 (1960=100) से ऊपर प्रत्येक अंक की वृद्धि के लिए प्रति अंक प्रति माह 45 पैसे है।
12.	महाराष्ट्र . . .	1-2-83	6.00 प्रतिदिन	
13.	मणिपुर . . .	2-3-83	10.00 से 10.50 प्रतिदिन क्षेत्रों के अनुसार	
14.	मेघालय . . .	1-10-85	11.00 प्रतिदिन	
15.	नगालैण्ड . . .	1-2-84	15.00 प्रतिदिन	
16.	उड़ीसा . . .	15-7-86	10.00 प्रतिदिन	
17.	पंजाब . . .	1-4-87	18.48 प्रतिदिन	
18.	राजस्थान . . .	16-1-85	14.00 प्रतिदिन	
19.	सिक्किम . . .	1-4-85	11.00 प्रतिदिन	न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 का अभी इस राज्य पर विस्तार नहीं किया गया है। कार्यपालिका आदेशों द्वारा न्यूनतम मजदूरी नियत की गई है।
20.	तमिलनाडु . . .	5-4-83	12.00 प्रतिदिन	
21.	त्रिपुरा . . .	12-3-84	12.00 प्रतिदिन	
22.	उत्तर प्रदेश . . .	13-7-83	11.50 प्रतिदिन	
23.	पश्चिम बंगाल . . .	31-10-85	16.34 प्रतिदिन	
24.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	15-8-86	19.00 प्रतिदिन	
25.	अरुणाचल प्रदेश	1-9-86	16.00 प्रतिदिन	
26.	चंडीगढ़	1-1-86	17.25 प्रतिदिन	
27	दादरा और नागर हवेली	3-9-83	9.00 प्रतिदिन	
28.	दिल्ली . . .	16-10-85	18.90 प्रतिदिन	
29.	गोवा, दमण और दीव . .	2-10-83	12.00 प्रतिदिन	
30.	मिजोरम . . .	कोई खेतिहर संगठित मजदूर नहीं है। विद्यमान दर रु० 16.00 प्रतिदिन है।		
31.	पांडिचेरी . . .	28-11-85	8.00 प्रतिदिन	

अनुलग्नक 4

भूमि से संबद्ध समस्याओं के कारण अनुसूचित जातियों और जनजातियों पर हुए अत्याचारों के कुछ मामलों का संक्षिप्त विवरण

आंध्र प्रदेश

(1) गांव होथी 'के०' जहीराबाद मंडल, जिला मेडक के अनुसूचित जनजातियों के कुछ निवासियों से मार्च 1987 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह बताया गया था कि कुछ सरकारी परती भूमि उन्हें आवंटित की गई थी और 1965 में उनके नाम दर्ज की गई थी। यह आरोप लगाया गया था कि कुछ गैर-आदिवासी जमींदारों ने इस भूमि की जमानत पर अनुसूचित जनजातियों के इन व्यक्तियों को ऋण दिया था और बाद में कपटपूर्वक कोरे कागजों पर उनके हस्ताक्षर करवा कर उन्हें इस भूमि से बेदखल कर दिया था। यह मामला मेडक के कलैक्टर को भेजा गया था उसका उत्तर आना शेष था।

बिहार

(2) गांव जेलगढ़ा, जिला धनबाद के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से फरवरी 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि एक भूखंड जो उसे पंचायत द्वारा लगभग 30 वर्ष पूर्व आवंटित किया गया था गैर-अनुसूचित जाति के एक जमींदार द्वारा जबरदस्ती छीन लिया गया था। यह मामला धनबाद के कलैक्टर को भेजा गया था। उसका उत्तर आना बाकी था।

(3) गांव सुभानीपुर, जिला समस्तीपुर, के अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से मई 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह बताया गया था कि उसके चाचा ने कृषि योग्य भूमि के दो भूखण्ड एक जमींदार को क्रमश: 28 रुपये और 15 रुपये में गिरवी रखे थे। नियत समय बीतने पर वे उस जमींदार से ऋण के रुपये वापस लेकर उनकी गिरवी भूमि को वापस करने के लिए अनुरोध करते रहे थे। परन्तु 30 से 35 वर्ष के बाद भी वह भूमि वापस नहीं की गई थी। यह मामला समस्तीपुर के कलैक्टर को भेजा गया था। उसका उत्तर आना बाकी था।

(4) गांव पतरा, डाकघर बोहटा, जिला पटना के निवासी अनुसूचित जाति के कुछ सदस्यों से जून 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उनकी भूमियों के कुछ हिस्से पर कुछ गांव वालों ने कब्जा कर लिया था। उन्होंने यह अनुरोध किया था कि उनके कब्जे को हटाया जाए। यह मामला पटना के जिला मजिस्ट्रेट को भेजा गया था। इसका उत्तर आना बाकी था।

(5) गांव हिनू, दोरंडा, रांची के निवासी अनुसूचित जनजाति के एक व्यक्ति से अगस्त 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह कहा गया था कि 1946 में उसके पिता द्वारा खरीदी गई कुछ भूमि जो राजस्व अभिलेख में उसके नाम में दर्ज थी वह गैर-कानूनी रूप से एक गैर-आदिवासी व्यक्ति द्वारा हथिया ली गयी थी। यह मामला रांची के कलैक्टर को भेजा गया था जिसने यह सूचित किया था कि उस बीच उस भूमि का कब्जा अभ्यावेदनकर्ता को पुन: दिला दिया गया था।

हरियाणा

(6) गांव काशीपुर, तहसील अतरचाता, जिला फरीदाबाद के अनुसूचित जातियों के कुछ व्यक्तियों से जुलाई 1985 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उन्हें आवंटित की गई कृषि भूमि पर उस गांव के कुछ प्रमुख और धनाढ्य व्यक्ति जबरदस्ती खेती कर रहे थे जो उस भूमि को बेचने के लिए षड्यंत्र कर रहे थे। यह मामला फरीदाबाद के उपायुक्त को भेजा गया था। इसका उत्तर आना बाकी था।

(7) गांव खेरहर, तहसील बहादुरगढ़, जिला रोहतक के निवासी अनुसूचित जातियों के कुछ व्यक्तियों से जुलाई 1985 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन उन्हें आवंटित भूखंडों पर गैर-अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों ने जबरदस्ती कब्जा कर लिया था। वे व्यक्ति इन्हें धमकी भी दे रहे थे। यह मामला रोहतक के उपायुक्त को भेजा गया था जिसने यह सूचित किया था कि यह मामला विचाराधीन था और अन्तिम निष्कर्ष की प्रतीक्षा थी।

(8) गांव पैलक, तहसील पलवल, जिला फरीदाबाद के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से अगस्त 1985 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन स्थानीय सरपंच द्वारा उसे आवंटित भूमि से उसे जबरदस्ती बेदखल कर दिया गया था जिसे वह अनुसूचित जाति के कुछ दूसरे व्यक्तियों को बेच चुका था। यह आरोप लगाया गया था कि जिला प्राधिकारियों को भेजी गई उसकी शिकायतों के बावजूद कोई कार्यवाही नहीं की गई थी। उसने यह अनुरोध किया था कि वह भूमि उसे वापस दिलवाई जाए। यह मामला फरीदाबाद के उपायुक्त को भेजा गया था। उसका उत्तर आना बाकी था।

(9) गांव बहादुरगढ़, जिला रोहतक निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से अगस्त, 1985 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गैर-अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति ने उसकी भूमि पर जबरदस्ती कब्जा कर लिया था । उसने इसके बारे में तहसीलदार से बहुत बार शिकायत की थी परन्तु कोई कार्यवाही नहीं की गई थी । यह मामला रोहतक के उपायुक्त को भेजा गया था। इसका उत्तर आना बाकी था ।

(10) गांव दाबोदा खुर्द, जिला रोहतक निवासी अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों से अगस्त 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन उन्हें ग्राम पंचायत द्वारा आबंटित कुछ भूमियां उस गांव के कुछ गैर-अनुसूचित जाति के व्यक्तियों ने सरपंच से मिलकर गैर-कानूनी रूप से हथिया ली थी। यह मामला रोहतक के उपायुक्त को भेजा गया था । उनका उत्तर आना शेष था ।

(11) अध्यक्ष अखिल भारतीय अनुसूचित जाति तथा पिछड़ा वर्ग सेवा दल, निलोखेरी, जिला करनाल से अगस्त 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गांव शाहपुर सिरसी, जिला करनाल के अनुसूचित जाति के निवासियों को 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन आवंटित भूमियों पर उस गांव के गैर-अनुसूचित जाति के व्यक्तियों ने कब्जा कर लिया था । यह मामला करनाल के उपायुक्त के पास भेजा गया था । उन्होंने यह सूचित किया था कि यह मामला **विचाराधीन** था तथा अन्तिम निष्कर्ष की प्रतीक्षा थी ।

(12) गांव लाढूवास अहीर, डाकघर साहारनवास, जिला महेन्द्रगढ़ निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से जनवरी 1987 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि 1979 में उसे आबंटित 5 बीघा फालतू बची भूमि गैर-अनुसूचित जाति के भू-स्वामी द्वारा उससे बलपूर्वक हथिया ली गई थी । यह मामला उपायुक्त महेन्द्रगढ़ के पास भेजा गया था जिसने बताया था कि विवाद-ग्रस्त कब्जे वाली भूमि अभ्यावेदनकर्ता को लौटा दी गई है।

मध्य प्रदेश

(13) गांव मंगरोल जिला मुरैना निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से फरवरी 1987 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसकी पैतृक भूमि का कुछ भाग जो राजस्व अभिलेख में उसके नाम से दर्ज है गैर-अनुसूचित जाति के व्यक्ति ने गांव के पटवारी के साथ मिलकर गैर-कानूनी रूप से हथिया लिया था । यह मामला मुरैना के कलैक्टर को भेजा गया था । उसका उत्तर आना शेष था ।

उड़ीसा

(14) गांव सिरीपुर, जिला केंदूझर के निवासी अनुसूचित जनजाति की एक महिला से फरवरी 1987 में एक अभ्यावेदन आया था जिसमें यह आरोप लगाया था कि अभिलेख में यथा दर्ज 4 एकड़ माप की भूमि सन् 1922 के बन्दोबस्त प्रवर्तन के समय से बानीयापत मौजा में उसके पिता के अधिकार में थी तथा उनके पिता की मृत्यु के पश्चात वह भूमि उसे तथा उसकी बहन को हस्तान्तरित कर दी गई थी । वह भूमि मई 1984 में एक गैर-आदिवासी द्वारा गैर-कानूनी ढंग से हथिया ली थी । उसने उस भूमि पर एक मकान भी बना लिया था । यह मामला क्योंझर के कलेक्टर को भेजा गया था । उसका उत्तर आना शेष था ।

राजस्थान

(15) गांव दुल्लापुरा, तहसील रामगढ़, जिला सीकर के निवासी अनुसूचित जाति के व्यक्ति से मई 1985 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह मामला उठाया था कि कुछ गैर-अनुसूचित जाति के व्यक्तियों ने बलपूर्वक उसकी भूमि हथिया ली थी । उसने एक प्रार्थना-पत्र ग्राम पंचायत को भेजा था जिसने उसके हक में फैसला दिया था । किन्तु फैसला स्वीकार करने के बजाए इन कथित लोगों ने उसे पीटा। पुलिस ने भी इन लोगों के विरुद्ध कोई मामला दर्ज नहीं किया। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, सीकर को भेजा गया था जिसका उत्तर आना बाकी था ।

(16) बाड़मेर निवासी अनसूचित जाति के एक व्यक्ति से एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि 17-9-85 को गैर-अनुसूचित जाति के कुछ लोग रात के समय उसके घर के अन्दर घुसे, उसे तथा उसके परिवार के सदस्यों को पीटा गया तथा उनकी हत्या करने की भी कोशिश की गई थी । उन लोगों ने उसकी भूमि पर भी कब्जा किया हुआ था । उसने स्वयं तथा उसके परिवार के सदस्यों के बचाव तथा भूमि वापस दिलाने की प्रार्थना की थी । यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, बाड़मेर को भेजा गया था । उन्होंने सूचित किया था कि सभी अभियुक्त पकड़ लिए गए थे तथा उन्हें आरोप पत्र भेजा गया था । यह मामला **विचाराधीन** है तथा अन्तिम निष्कर्ष की प्रतीक्षा है ।

(17) गांव कुलमा, तहसील कामा, जिला भरतपुर के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से अक्तूबर 1985 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गांव के गैर-अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों ने उसे आबंटित गृह-स्थल के एक भाग पर कब्जा कर लिया था। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट भरतपुर को भेजा गया था जिसका उत्तर आना अभी बाकी था ।

(18) गांव घुमा, तहसील सापोतरा, जिला सवाई माधोपुर के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से

जनवरी 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि भूतपूर्व सरपंच ने बलपूर्वक उसकी भूमि हथिया ली थी जिस पर न्यायालय ने पहले ही उसके हक में निर्णय दिया था । यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, सवाईमाधोपुर को भेजा गया, जिसने यह सूचित किया था कि यह मामला **विचाराधीन** है तथा अन्तिम निष्कर्ष आना बाकी था ।

(19) डा० अम्बेडकर सेवा समिति धनकिया, जयपुर से एक अभ्यावेदन मार्च 1986 में प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गांव सिनवार, जिला जयपुर निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति को जून 1965 में गैर-अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों ने उसे आवंटित भूमि से बलपूर्वक बेदखल कर दिया था । यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, जयपुर को भेजा गया था जिसका उत्तर आना शेष था ।

(20) गांव पादूस, जिला पाली निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से दिसम्बर 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसकी 5 बीघा जमीन जो कि राज्य सरकार द्वारा उसे आवंटित की गई थी, गैर-अनुसूचित जाति के कुछ लोगों द्वारा गैर-कानूनी रूप से हथिया ली गई थी । यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, पाली को भेजा गया था जिसका उत्तर आना बाकी था ।

तमिलनाडु

(21) नवम्बर 1985 में समाचार पत्र में यह बताया गया था कि जिला कोयम्बतूर में 'सीमान्त आदिवासी किसानों' को भूमि के बड़े क्षेत्र बाहर के गैर-आदिवासी व्यक्तियों द्वारा खरीदे जा रहे थे जिसके परिणामस्वरूप आदिवासी किसान खेतिहर मजदूरों की स्थिति में परिवर्तित हो रहे थे। यह मामला राज्य सरकार तथा जिला कोयम्बतूर के कलैक्टर के पास भेजा गया था जिसका उत्तर आना बाकी था ।

उत्तर प्रदेश

(22) गांव सिहोरवा, जिला गोरखपुर के निवासी अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों से मई 1985 में एक शिकायत प्राप्त हुई थी जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि कुछ प्रभावशाली तथा शक्तिशाली लोगों ने जोतों की चकबन्दी के समय उन पर अत्याचार किए थे । यह आरोप लगाया गया था कि अनुसूचित जाति के लोगों को यह धमकी दी गई थी कि अगर वे अपना नाम भूमि के सरकारी अभिलेखों में दर्ज करवाने की कोशिश करेंगे तो उन्हें इसके गंभीर परिणाम भुगतने पड़ेंगे। यह मामला कलैक्टर, गोरखपुर को भेजा गया था जिसका उत्तर आना बाकी था ।

(23) गांव खालिकपुर खुर्द, डाकघर मुस्तफाबाद, जिला रायबरेली निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से जनवरी 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि राज्य सरकार द्वारा उसे आवंटित कृषि भूमि गैर-अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति द्वारा हथिया ली गई थी । उसने अपनी भूमि वापस दिलाने और अपने जीवन की सुरक्षा के लिए अनुरोध किया था । यह मामला रायबरेली के जिला मजिस्ट्रेट को भेजा गया था जिसने यह उत्तर दिया है कि यह मामला सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार में आता है और आवेदक को उस न्यायालय में ही एक मामला दाखिल करना चाहिए । उस आवेदक को इसके अनुसार ही सूचित किया गया था ।

(24) गांव माजरा मोहम्मद अली, जिला नैनीताल के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से जनवरी 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गैर-अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति ने उसकी भूमि बलपूर्वक छीन ली थी । उसने उसकी हत्या करने की भी धमकी दी थी । अभ्यावेदनकर्ता ने अपने जीवन की सुरक्षा करने तथा भूमि वापस दिलाने की प्रार्थना की थी । यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, नैनीताल को भेजा गया था जिसका उत्तर आना बाकी था ।

(25) गांव हरिपुरा हरसन, तहसील बाजपुर, जिला नैनीताल के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से फरवरी 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसे आवंटित भूमि का कुछ भाग बलपूर्वक कुछ लोगों ने हथिया लिया है तथा वे उसे जान से मारने की भी धमकी देते हैं। उसने अपनी जीवन रक्षा तथा भूमि वापस दिलाने की प्रार्थना की थी । यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, नैनीताल को भेजा गया था जिसका उत्तर आना बाकी था ।

(26) गांव पकरी बुजुर्ग, जिला आजमगढ़ के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से फरवरी 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसी गांव के कुछ लोगों ने उसकी भूमि बलपूर्वक हथिया ली थी । यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, आजमगढ़ को भेजा गया था जिसका अन्तिम उत्तर आना बाकी था ।

(27) गांव खम्बारी, डाकघर बाजपुर, जिला नैनीताल निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से मार्च 1986 में एक अभ्यावेदन आया था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसके पिता की मृत्यु के पश्चात् कुछ लोगों ने उसकी भूमि हथिया ली थी तथा पुलिस की सहायता से उसने अपनी भूमि पर वापस कब्जा कर लिया था । इन कथित लोगों ने कई बार उस पर हमला किया तथा उसकी हत्या करने की भी कोशिश की गई थी । उसने अपनी जीवन रक्षा के लिए प्रार्थना की । यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, नैनीताल को भेजा गया था जिसका उत्तर आना बाकी था ।

(28) गांव सेरावल, जिला इलाहाबाद निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से मार्च 1986 में एक अभ्या-

वेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि ग्राम सभा द्वारा उसके पिता को आबंटित भूमि पर गैर-अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति ने कब्जा कर लिया था। आवेदक को यह भी आशंका थी कि उसकी हत्या कर दी जाएगी। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, इलाहाबाद को भेजा गया था जिसका उत्तर आना शेष था।

(29) गांव लोगावा, तहसील मंझनपुर, जिला इलाहाबाद निवासी अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों से मार्च 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उस गांव के कुछ धनी भू-स्वामी उनको अपने खेतों में अल्प मजदूरी पर काम करने के लिए बाध्य कर रहे थे। उन्होंने यह भी आशंका व्यक्त की थी कि अगर वे ऐसा नहीं करते हैं तो वे उन्हें गांव से भगा देंगे। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, इलाहाबाद को भेजा गया था जिसने यह सूचित किया था कि यह मामला **विचाराधीन** था।

(30) ऑल इंडिया सफाई मजदूर कांग्रेस, दिल्ली के महासचिव ने गांव पोपली, तहसील खैर, जिला अलीगढ़ के निवासी अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों की मार्फत मार्च 1986 में एक अभ्यावेदन भेजा था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उन्हें 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन आबंटित भूमि पर कुछ सवर्ण हिन्दू भू-स्वामियों ने गैर-कानूनी रूप से कब्जा कर लिया था। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, अलीगढ़ को भेजा गया था जिसका उत्तर आना शेष था।

(31) गांव पड़ैनिया (भगत टोला), थाना गोला बाजार, जिला गोरखपुर के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से अप्रैल 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गैर-अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों ने उसकी वह भूमि, जिस पर वह गत 15 वर्षों से अपने तीन भाईयों के साथ रहता था, बलपूर्वक हथिया ली थी। इन लोगों ने उसके घर को गिरा देने की भी धमकी दी थी। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, गोरखपुर को भेजा गया था जिसका उत्तर आना शेष था।

(32) गांव हरिपुरा, तहसील बाजपुर, जिला नैनीताल के निवासी अनुसूचित जाति के दो व्यक्तियों से अप्रैल 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि कुछ लोगों ने बलपूर्वक उनकी भूमि हथिया ली थी, तथापि, न्यायालय ने अनुसूचित जाति के उन लोगों में से एक के पक्ष में फैसला दिया था। उन्होंने अपनी भूमि पर कब्जा दिलाने तथा मुफ्त कानूनी सहायता दिलाने की प्रार्थना की थी। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, नैनीताल को भेजा गया था। उन्होंने सूचित किया था कि यह मामला **विचाराधीन** था तथा अन्तिम निष्कर्ष आना शेष था।

(33) गांव रूद्रगढ़ नौसी, जिला गोंडा के निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से मई 1986 में एक अभ्यावेदन आया था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गैर-अनुसूचित जाति के कुछ लोगों ने उसकी पैतृक भूमि का एक भाग बलपूर्वक हथिया लिया था तथा भूमि के बाकी बचे भाग को भी हथियाना चाहते थे। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट गोंडा को भेजा गया था। उन्होंने बताया था कि यह मामला **विचाराधीन** था तथा अन्तिम निष्कर्ष की प्रतीक्षा की जा रही थी।

(34) उत्तर प्रदेश अनुसूचित तथा दलित वर्ग कल्याण समिति, भगतपुर टांडा, जिला मुरादाबाद से जून 1986 में एक अभ्यावेदन आया था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गांव अक्का फाटू हाफिजपुर, जिला मुरादाबाद के अनुसूचित जातियों के निवासियों को 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन आबंटित भूमि को गैर-अनुसूचित जाति के कुछ लोगों ने बलपूर्वक हड़प लिया था। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, मुरादाबाद को भेजा गया था जिसका उत्तर आना शेष था।

(35) अखिल भारतीय हरिजन तथा शोषित वर्ग उत्थान समिति, बाजपुर से जुलाई 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि रामपुर जिले के गांव दढ़ियाल निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से गैर-अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति ने कृषि भूमि को हथिया लिया था। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, रामपुर को भेजा गया था जिसने यह सूचित किया था कि इस बीच भूमि का कब्जा आवेदक को दिला दिया गया था।

(36) अखिल भारतीय हरिजन तथा शोषित वर्ग उत्थान समिति, बाजपुर, जिला नैनीताल से अगस्त 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गांव रफतपुर, तहसील बिलासपुर, जिला रामपुर के अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति को 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन आबंटित लगभग 0.87 एकड़ भूमि एक सवर्ण हिन्दू ने गैर-कानूनी रूप से हथिया ली थी। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, रामपुर को भेजा गया था। जिन्होंने यह सूचित किया था कि इस बीच हथियाई गयी भूमि पर अभ्यावेदनकर्ता को कब्जा दिला दिया गया था।

(37) गांव छितौना, तप्पा निकोड़ी, जिला गोरखपुर निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से सितम्बर 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसकी भूमि, जो उसकी पैतृक सम्पत्ति थी, उसी गांव के कुछ लोगों ने बलपूर्वक हथिया ली थी। वे उसकी हत्या करने की भी धमकी दे रहे थे। उसने अपनी भूमि वापिस दिलाने की प्रार्थना की थी। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, गोरखपुर को भेजा गया था। अन्तिम निष्कर्ष की प्रतीक्षा थी।

(38) गांव नागसर (मीर राय), तहसील जमनिया, जिला गाजीपुर निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से

अक्तूबर, 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसकी 1.5 एकड़ पैतृक भूमि को गैर-अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों ने बलपूर्वक हथिया लिया था। उसने यह मामला दीवानी न्यायालय में दर्ज कराया था जिसने उसके हक में फैसला दिया था। किन्तु वह उस भूमि पर कब्जा नहीं ले सका। यह मामला जिला प्राधिकारियों के साथ उठाया गया था जिसका उत्तर आना शेष था।

(39) गांव गुरवलिया टोला, बनजारा पट्टी, जिला देवरिया निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से अक्तूबर 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसके द्वारा खरीदी गई तथा राजस्व अभिलेख में उसके नाम से दर्ज 0.7 एकड़ भूमि गैर-अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति ने पटवारी के साथ मिलकर कपटपूर्वक अपने नाम में हस्तांतरित करवा ली थी। बाद में आवेदक को उस भूमि से बेदखल कर दिया गया था। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, देवरिया के साथ उठाया गया था जिसका उत्तर आना शेष था।

(40) गांव ढिढाला, जिला मेरठ निवासी अनुसूचित जातियों के कुछ व्यक्तियों से अक्तूबर 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उन्हें आवंटित भूमि तथा उनका पट्टा उनके नाम पर भूमि को गैर-अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों ने बलपूर्वक हथिया लिया था। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, मेरठ के साथ उठाया गया था जिसका उत्तर आना शेष था।

(41) गांव जितियापुर, तहसील हर्रैया, जिला बस्ती, निवासी अनुसूचित जाति के कुछ व्यक्तियों से दिसम्बर 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह बताया गया था कि उनकी पैतृक भूमि को गैर-अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति ने बलपूर्वक तथा गैर-कानूनी रूप से हथिया लिया था। यह मामला जिला मजिस्ट्रेट, बस्ती को भेजा गया था जिन्होंने यह सूचित किया था कि यह मामला **विचाराधीन** था तथा अन्तिम निष्कर्ष की प्रतीक्षा थी।

पश्चिम बंगाल

(42) गांव चिकनामाटी, डाकघर हरदीगाछ, जिला दार्जीलिंग निवासी अनुसूचित जातियों के 26 तथा अनुसूचित जनजातियों के 12 व्यक्तियों से अप्रैल 1985 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गांव में सरकारी भूमि जिसमें वह लगभग 30 वर्षों से खेती कर रहे थे, पिछले बंदोबस्त प्रवर्तन के दौरान पश्चिमी दीनाजपुर जिले में सम्मिलित कर ली गई थी। उन्होंने पश्चिमी दीनाजपुर जिले के प्राधिकारियों को कई अर्जियां दी थीं कि उस भूमि के पट्टे उनके नाम में जारी किए जाएं, लेकिन तब तक कोई कार्यवाही नहीं की गई थी। नेपाल, भूटान, बंगलादेश और बिहार से आए कुछ बाह्य व्यक्ति जो अब उनके गांव में रह रहे थे उस भूमि के पट्टे अपने नाम में प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे थे और उस भूमि पर उनके कानूनी दावों और अधिकार से उन्हें वंचित किया जा रहा था। यह मामला दार्जीलिंग के उपायुक्त और पश्चिमी दीनाजपुर के जिला मजिस्ट्रेट को भेजा गया था जिनके उत्तर आने बाकी थे।

(43) अठारो खाई, थाना सिलिगुड़ी, जिला दार्जीलिंग निवासी अनुसूचित जनजाति के एक व्यक्ति से अगस्त 1985 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि गैर-आदिवासी व्यक्ति उसे तथा उसके पिता को उत्पीड़ित कर रहे थे और वे उसकी उस भूमि को हथियाना चाहते थे जिस पर उसका पिछले 50 वर्षों से पट्टा अधिकार था। यह भी बताया गया था कि आवेदक को कोर्ट के झूठे मामलों में फंसाया जा रहा था। यह मामला दार्जीलिंग के उपायुक्त के साथ उठाया गया था जिसका उत्तर आना बाकी था।

(44) थाना फलाकाटा/बीरपारा, जिला जलपाईगुडी निवासी अनुसूचित जनजातियों के कुछ व्यक्तियों से अक्तूबर 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उनकी भूमि पर ईंटों के भट्टों के कुछ मालिकों ने कब्जा कर लिया था। उन्होंने यह अनुरोध किया था कि उनकी भूमि उन्हें वापस दिलाई जाए। यह मामला जलपाईगुडी के जिला मजिस्ट्रेट के पास भेजा गया था जिन्होंने यह सूचित किया था कि अनाधिकृत ईंटों के भट्टों के विरुद्ध कार्यवाही की गई थी और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण अधिकारी, अलीपुरद्वारास से यह कहा गया था कि वह उन्हें भूमि वापस दिलाने के लिए पश्चिम बंगाल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1986 की धारा 14 ङ के अधीन कार्यवाही करें।

पांडिचेरी

(45) पद्मिनी नगर, पांडिचेरी निवासी अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से अक्तूबर 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसकी पैतृक भूमि का एक भाग गैर-अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति ने स्थानीय पुलिस से मिलकर गैर-कानूनी रूप से जबरदस्ती छीन लिया था। उसने इस मामले की रिपोर्ट पुलिस में की थी लेकिन वह इस भूमि का कब्जा नहीं ले सका था। यह मामला उस संघ राज्य क्षेत्र के प्रशासन के साथ उठाया गया था जिन्होंने यह सूचित किया था कि यह मामला **विचाराधीन** था और अन्तिम निष्कर्ष आना शेष था।

अध्याय 4

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का शैक्षिक विकास

परम्परागत समाजों में शिक्षा का कार्य अधिकांश तौर पर सांस्कृतिक कार्यों को पूरा करने तक सीमित होता था। तथापि, इससे धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक मामलों में भी शक्ति प्राप्त होती थी। प्रौद्योगिकी की बढ़ती महत्ता के कारण, जिसका विकास बहुत तेज गति से होता रहा है, शिक्षा आर्थिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण पूंजी के रूप में स्वीकार की गई है। जीवन के प्रथम चरण में ज्ञान अर्जन किया जाना और उसके बाद भी उसे प्राप्त करने के लिए प्रयास जारी रखा जाना किसी व्यक्ति के जीवन में उन्नति के लिए निर्णायक पहलू है। इसके अतिरिक्त समाज के निर्बलतर वर्गों के लिए शिक्षा का एक दूसरा महत्वपूर्ण कार्य भी है। किसी परम्परागत समाज के एक आधुनिक समाज में बदलाव के दौरान परम्परागत संस्थाओं के स्थान पर धीरे-धीरे औपचारिक संस्थाएं बन जाती हैं। शक्ति का केन्द्र परिचित अनौपचारिक परम्परागत प्रणालियों से हट कर, यद्यपि यह एक अन्याय है, ऐसी औपचारिक प्रणालियों के हाथों में चला जाता है जो चिरकाल से अपरिचित हैं तथा समानता और न्याय के सिद्धान्त पर आधारित है। इससे लोगों के सामने भारी असुविधा होती है क्योंकि उन्हें उन प्रणालियों के कार्यचालन के बारे में ज्ञान नहीं होता है और यह पता नहीं होता है कि उक्त नई प्रणाली पर जिन लोगों का नियंत्रण है वे किस चरित्र-वर्ग के हैं। इस सन्दर्भ में निर्बलतर वर्गों के लोगों की इस प्रणाली के बारे में अज्ञानता सबसे बड़ी कमजोरी है और इसीलिए शिक्षा की एक महत्वपूर्ण भूमिका है और वही इन संस्थाओं के बारे में ज्ञान कराती है। उससे ही उन्हें यह ज्ञान भी प्राप्त होता है कि वे एक लोकतांत्रिक समाज के सदस्य के नाते अपने अधिकारों की मांग करें। आधुनिक संसार में निर्धनों की मुक्ति के लिए शिक्षा अनिवार्य है।

2 इस सामाजिक और आर्थिक रूप से गतिशील समाज ने यह अनुभव किया था कि 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए सर्वत्र और अनिवार्य शिक्षा दिया जाना संविधान में निर्देशक सिद्धान्तों के रूप में प्रतिष्ठित किया जाये। यह आशा की गई थी कि राष्ट्र के सामाजिक और आर्थिक जीवन में असमानता के पहले स्रोतों को संविधान की भावना के अनुसार उपयुक्त उपाय अपना कर समाप्त किया जाएगा और लोगों को राष्ट्रीय जीवन में नए अवसर चाहे उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति कुछ भी हो, उनके अपने निजी गुणों के अनुसार समानता के आधार पर उपलब्ध कराए जाएंगे। शिक्षा को सार्वजनीन बनाना क्रमागत पंचवर्षीय योजनाओं सहित सभी औपचारिक क्षेत्रों में एक लक्ष्य के रूप में स्वीकार किया गया है। उपर्युक्त किसी बात के होते हुए भी शिक्षा को सार्वजनीन बनाने के कार्य की गति, सामाजिक समानता और न्याय में शिक्षा के महत्वपूर्ण स्थान और संविधान में दिए गए उद्देश्यों की तुलना में अत्यधिक धीमी रही है।

3. शिक्षा केवल किसी व्यक्ति की जीवन स्थिति को उठाने का साधन ही नहीं है यह किसी समूह अथवा समाज की सामाजिक और आर्थिक स्थिति का सूचक भी है। अतः शैक्षिक उन्नति किसी समाज के विकास का सर्वोत्तम सूचक माना जा सकता है। इस सम्बन्ध में सबसे अधिक महत्वपूर्ण एकल सूचक साक्षरता दर है जिसका अनुमान प्रत्येक दस वर्ष में एक बार जनगणना में लगाया जाता है।

साक्षरता की स्थिति

4. सन् 1981 की जनगणना के अनुसार सभी समुदायों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अ० जा० एवं अ० ज० जा० को छोड़कर बाकी सभी समुदायों की साक्षरता दरें अनुलग्नक 1 में दी गई हैं। इससे यह देखा जा सकता है कि अनुसूचित जातियों के अखिल भारतीय प्रतिशत की तुलना में **बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान** और **उत्तर प्रदेश** में अनुसूचित जातियों की साक्षरता का प्रतिशत कम है। परन्तु यदि हम इसकी तुलना इस अनुलग्नक के स्तम्भ 6 (अनुसूचित जाति एवं जनजाति को छोड़कर सभी समुदाय) के साथ करें, तो हमें यह ज्ञात होगा कि इन राज्यों में अनुसूचित जातियों की साक्षरता का प्रतिशत खेदजनक है। अनुसूचित जनजातियों की अखिल भारतीय साक्षरता की तुलना में, अनुसूचित जनजातियों के मामले में स्थिति **आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल** और **अरुणाचल** प्रदेश के मामलों में नीची है। अनुसूचित जनजाति की साक्षरता के आंकड़ों की तुलना इस अनुलग्नक के स्तम्भ 6 से करने पर हमें यह ज्ञात होगा कि ऊपर वर्णित राज्यों में साक्षरता दर अत्यधिक नीची है। कुल मिलाकर स्तम्भ 6 के साथ तुलना करने पर भी अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर बहुत पिछड़ी है।

5. सन् 1961 से 1971 तथा सन् 1971 से 1981 तक अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों में साक्षरता की प्रगति सारणी 1 में दर्शाई गई है—

सारणी 1

	साक्षरता दरें			विकास दर	
	1961	1971	1981	1961–71	1971–81
सामान्य	24.00	29.45	36.23	22.71	23.02
अनुसूचित जातियां	10.27	14.67	21.38	42.84	45.74
अनुसूचित जनजातियां	8.54	11.29	16.35	32.20	44.82
अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को छोड़कर सभी समुदाय	27.91	33.80	41.30	21.10	22.19

यद्यपि साठ के दशक की तुलना में सत्तर के दशक में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों में साक्षरता के विकास की दर तेज रही, तथापि, यह बहुत धीमी है। जैसा कि निम्नलिखित आंकड़ों से प्रकट होगा, साक्षरता में प्रगति होते हुए भी, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों और दूसरे समुदायों के बीच साक्षरता दर का अन्तर बढ़ गया है :—

	1961	1971	1981
अनुसूचित जातियों तथा गैर अ०जा०/अ०ज०जा० समुदायों के बीच साक्षरता दरों में अन्तर	17.64	19.13	19.92
अनुसूचित जनजातियों तथा गैर अ०जा०/अ०ज०जा० समुदायों के बीच साक्षरता दरों में अन्तर	19.37	22.51	24.95

उपर्युक्त स्थिति यह दर्शाती है कि इस क्षेत्र में बहुत अधिक संगठित प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

6. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की साक्षरता के कुल आंकड़ों से बहुत-सारे समुदायों की वास्तविक स्थिति, जिनकी ये दरें बहुत नीची हैं, ज्ञात नहीं होती है। 1981 की जनगणना के आधार पर अनुसूचित जातियों के लिए जाति-वार आंकड़े देते हुए विशेष सारणियां भारत के महा-पंजीकार के कार्यालय द्वारा अब तक केवल 15 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के बारे में ही प्रकाशित की गई हैं। वैसी ही विशेष सारणियां, अनुसूचित जनजातियों के लिए 11 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के बारे में प्रकाशित की गई हैं। इन विशेष सारणियों में अन्य बातों के साथ-साथ साक्षरता दरों से संबंधित सूचना भी दी गई है। एक ही राज्य के विभिन्न अनुसूचित जातियों के बीच साक्षरता दरों में भी बड़ा अन्तर है जो निम्नलिखित सारणी से स्पष्ट है —

सारणी 2

1981 की जनगणना के आधार पर साक्षरता दरें (अनुसूचित जातियां)

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	गैर अ०जा०/ज०जा० के समुदाय	अनुसूचित जातियां	अधिकतम साक्षरता दर वाली अनुसूचित जाति का नाम (तथा साक्षरता दर)	न्यूनतम साक्षरता दर वाली अनुसूचित जाति का नाम (तथा साक्षरता दर)
1	2	3	4	5	6
1.	हरियाणा . .	30.90	20.14	पासी (33.6)	ढेहा, ढैया, ढेआ (2.3)
2.	हिमाचल प्रदेश . .	47.37	31.50	कमोह, डगोली (61.9)	बराड़, बुराड़, बेराड़ (14.4)
3.	जम्मू-काश्मीर . .	27.05	22.44	बसीठ (29.1)	ध्यार (11.6)
4.	मणिपुर . .	42.11	33.63	धुपी, धोबी (58.1)	यैथिबि (21.2)
5.	मेघालय . .	44.97	25.78	कवत, जालिया (59.2)	बांसफोड़ (7.1)

1	2	3	4	5	6
6.	उड़ीसा . . .	44.22	22.41	मादिगा (50.2)	मुंडपोट्टा (3.9)
7.	सिक्किम . . .	34.84	28.06	दमाई (नेपाली) (31.0)	सरकी (नेपाली) (16.6)
8.	त्रिपुरा . . .	53.93	33.89	महिष्यदास (42.0)	चमार, मूची (2.1)
9.	अरुणाचल प्रदेश . . .	36.39	37.14	सूत्रधार (48.0)	धुपी, धोबी (19.4)
10.	चण्डीगढ़ . . .	69.33	37.07	आदिधर्मी (66.2)	सिरकीबन्द (0.6)
11.	दादरा और नागर हवेली . .	64.41	51.20	माहयावंशी, ढेड (61.1)	चमार (40.5)
12.	दिल्ली . . .	66.44	39.30	आदिधर्मी (70.0)	सिंगीवाला, कालबेलिया (3.1)
13.	गोवा, दमण और दीव . .	57.38	38.38	माहयावंशी, (59.2)	महार (25.6)
14.	पांडिचेरी . . .	60.32	32.36	वल्लुवान (49.2)	वेतन (3.9)

स्रोत—स्तम्भ 3 और 4 के लिये अनुसूचित जातियों पर चयनित सांख्यिकी, गृह मंत्रालय, जून 1984 ।

टिप्पण—जिन समुदायों की जनसंख्या 100 से कम है वे इस सारणी के प्रयोजन के लिये छोड़ दिये गये हैं। अतः मिजोरम को छोड़ दिया गया है।

7. इसी तरह एक ही राज्य के विभिन्न अनुसूचित जनजातियों के बीच साक्षरता दरों में बड़ा अन्तर है जो निम्न-लिखित सारणी में देखा जा सकता है —

सारणी 3

1981 की जनगणना के आधार पर साक्षरता दरें (अनुसूचित जनजातियां)

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	गैर अ० जा०/अ० ज० जा० के समुदाय	अनुसूचित जनजातियां	अनुसूचित जन-जाति का नाम जिसमें अधिकतम साक्षरता दर है (तथा साक्षरता दर)	अनुसूचित जनजाति का नाम जिसमें कम-से-कम साक्षरता दर है (तथा साक्षरता दर)
1	2	3	4	5	6
1.	हिमाचल प्रदेश	47.37	25.93	भोट, बोध (56.3)	गुज्जर (18.9)
2.	मणिपुर	42.11	39.74	कोइराओ (64.2)	मरम (14.6)
3.	मेघालय	44.97	31.55	नगा जनजातियां (81.9)	मिकिर (13.4)
4.	उड़ीसा	44.22	13.96	कुलीस (36.4)	मांकिरडिआ (1.1)
5.	सिक्किम	34.84	33.13	भुटिया (32.6)	लेपचा (30.2)

1	2	3	4	5	6
6.	त्रिपुरा	53.93	23.07	लुशाई (68.1)	मुन्डा, कौर (8.0)
7.	अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह	54.31	31.11	निकोबारी (31.5)	शोम्पेन (2.7)
8.	अरूणाचल प्रदेश	36.39	14.04	खमियांग (57.9)	पन्चेन मोंपा (0.8)
9.	दादरा और नागर हवेली	64.41	16.86	धोडिया (38.8)	कौलो ढोर (कोलघा सम्मिलित है) (8.7)
10.	गोवा, दमण तथा दीव	57.38	26.48	सिद्दी (40.6)	वरली (12.5)
11.	मिजोरम	63.53	59.63	मिजो जनजातियां (67.8)	चकमा (14.7)

स्रोत—स्तम्भ 3 और 4 के लिये अनुसूचित जातियों पर चयनित सांख्यिकी, गृह मंत्रालय, जून, 1984।

टिप्पण—जिन समुदायों की जनसंख्या 100 से कम है उन्हें इस सारणी के प्रयोजन के लिये छोड़ दिया गया है।

8. महिलाओं में साक्षरता का स्तर अत्यधिक नीचा है। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की महिलाओं की साक्षरता में प्रगति नीचे की सारणी में दर्शाई गई है—

सारणी 4

महिलाओं की साक्षरता दरें

	साक्षरता दर		विकास दर
	1971	1981	1971–81
अनुसूचित जातियां	6.44	10.93	69.72
अनुसूचित जनजातियां	4.85	8.04	65.77
अनुसूचित जातियों और जनजातियों को छोड़कर सभी समुदाय	22.25	29.43	32.27

यद्यपि, अनुसूचित जातियों और जन जातियों की महिलाओं की साक्षरता में विकास की झलक मिलती है तथापि, अनुसूचित जातियों और जनजातियों तथा अन्य समुदायों के बीच महिला साक्षरता दर का अन्तर बढ़ा है जो निम्नलिखित आंकड़ों से स्पष्ट है:—

	1971	1981
अनुसूचित जातियों और गैर अ० जा०/अ० ज० जा० के समुदायों में महिला साक्षरता दरों में अन्तर	15.81	18.50
अनुसूचित जनजातियों और गैर अ० जा०/अ० ज० जा० के समुदायों में महिला साक्षरता दरों में अन्तर	17.40	21.39

महिला साक्षरता के सम्बन्ध में विभिन्न अनुसूचित जातियों और जनजातियों में भी बड़ा अन्तर है। उत्तर-पूर्व में कुछ आदिवासी समुदायों में पुरुषों और महिलाओं में साक्षरता का स्तर लगभग एक ही है परन्तु राजस्थान के मामले में आदिवासी महिलाओं में से मात्र 1.2 प्रतिशत ही साक्षर होने के कारण उन्हें अभी भी साक्षरतापूर्व के स्तर पर होना ही कहा जा सकता है। इसी प्रकार बिहार में अनुसूचित जातियों की महिलाओं में साक्षरता की स्थिति अत्यधिक नीची है (2.5 प्रतिशत)। कुछ राज्यों में साधारण तौर पर अनुसूचित जातियों और जनजातियों की नीची साक्षरता और विशेष तौर पर अनुसूचित जनजातियों की महिलाओं की नीची साक्षरता यह प्रकट करती है कि इन क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के व्यक्तियों को शिक्षा पर पूंजी निवेश से न केवल विशेष लाभ ही प्राप्त नहीं हुआ है वरन् वे सर्वाधिक गम्भीर प्रकार की उपेक्षाओं का सामना भी करते रहे हैं। अत: यह सुझाव दिया जाता है कि संबंधित राज्यों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों दोनों में महिला साक्षरता को बढ़ाने के लिए विशेष उपाय अपनाये जाने चाहियें और साधारण तौर पर ऐसे समुदायों के लिये जिनमें अनुसूचित जातियों/जनजातियों की साक्षरता, औसत साक्षरता से बहुत नीचे है।

दाखिले

9. दाखिलों के आंकड़े मुख्य रूप से प्राथमिक स्तर पर और ग्रामीण तथा आदिवासी क्षेत्रों के बारे में सदैव ही वास्तविक स्थिति नहीं दर्शाते हैं। शिक्षा मंत्रालय और राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद भी प्राथमिक कक्षाओं में

दाखिल हुए बच्चों की संख्या तथा 6–11 वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों की संख्या के आधार पर दाखिलों के अनुपात देते हैं। चूंकि पहले वाली संख्या में 6–11 वर्ष के आयु वर्ग से कम या अधिक आयु वर्ग के बच्चे भी शामिल होते हैं, इस कारण कभी कभी इन दाखिलों का अनुपात बहुत अधिक होता है। यह बताया गया है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के बच्चों का प्राथमिक कक्षाओं में दाखिले का अनुपात 1985–86 में सामान्य जनसंख्या के 93.38 प्रतिशत की तुलना में क्रमश: 95.46 प्रतिशत और 91.58 प्रतिशत हो गया था। प्रत्यक्ष रूप से ये आकड़े सराहनीय है। परन्तु विभिन्न राज्यों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के दाखिलों में बहुत अन्तर है। उदाहरण के तौर पर **जम्मू-कश्मीर** में अनुसूचित जातियों के दाखिले का प्रतिशत केवल 57.70 है तथा **बिहार राजस्थान** और **उत्तर प्रदेश** में यह क्रमश: 68.61 प्रतिशत, 69.36 प्रतिशत तथा 64.65 प्रतिशत है। इन तीनों राज्यों में लड़कियों की दाखिला स्थिति निराशाजनक है जो कि क्रमश: 35.91% 31.36% तथा 38.84% है। इन आंकड़ों की संवीक्षा से भी यह प्रकट होता है कि ये विवरण बहुत विश्वसनीय नहीं हैं। उदाहरण के रूप में **मेघालय** में अनुसूचित जातियों के छात्रों के प्राथमिक स्तर पर दाखिलों का अनुपात 239.13 प्रतिशत था तथा महाराष्ट्र में अनुसूचित जातियों का कुल मिलाकर अनुपात 236.96 प्रतिशत था जबकि अनुसूचित जाति के लड़कों का 265.67 प्रतिशत था। इस बड़े प्रतिशत के लिये एक सीमा तक यह स्पष्टीकरण दिया जा सकता है कि प्राथमिक कक्षाओं में 6 वर्ष की आयु से कम तथा 11 वर्ष की आयु से अधिक आयु के बच्चों के दाखिले भी शामिल है, परन्तु इस स्पष्टीकरण से इतने बड़े प्रतिशत का समाधान नहीं किया जा सकता है, विशेषकर उस समय जब यह मालूम होता है कि 11–14 वर्ष के आयु वर्ग में भी दाखिलों का अनुपात 119.99 प्रतिशत बताया गया है। इससे यह स्पष्ट है कि काफी बड़ी संख्या में ऐसे बच्चों को अनुसूचित जातियों का बताया जा रहा है जो वास्तव में अनुसूचित जातियों के नहीं हैं। इसी प्रकार की विसंगतियां ऐसे अन्य राज्यों में भी हो सकती हैं जो अनुसूचित जातियों के दाखिले 100 प्रतिशत से अधिक बता रहे हैं।

10. आदिवासियों के दाखिलों के बारे में भी स्थिति काफी बेमेल है, परन्तु अनुसूचित जातियों के मुकाबले में कम बेमेल है। प्राथमिक स्तर पर दाखिलों का अनुपात, **बिहार, मध्य प्रदेश** और **उड़ीसा** में, (ये तीन राज्य कुल आदिवासी जनसंख्या का 44 प्रतिशत से अधिक का जोड़ दर्शाते हैं), क्रमश: 88.37 प्रतिशत, 74.33 प्रतिशत और 78.38 प्रतिशत है। इन राज्यों में लड़कियों के दाखिले क्रमश: 59.91 प्रतिशत, 48.93 प्रतिशत और 49.41 प्रतिशत हैं, जो काफी नीचा प्रतिशत है। दाखिलों का बहुत ऊंचा प्रतिशत **गोवा, दमण और दीव** (177.35 प्रतिशत) तथा **मणिपुर** (160.58 प्रतिशत) है। यह उल्लेखनीय है कि दाखिलों के अनुपात के रूप में दाखिलों का विवरण देने की पद्धति साधारण आदमी को स्पष्ट तस्वीर नहीं देती। इसके लिये यह बेहतर होगा कि शैक्षिक सर्वेक्षण के आंकड़े इस प्रकार एकत्र किये जायें कि आयु वर्ग (6-11 वर्ष) से नीचे के बच्चों की संख्या और उस आयु वर्ग के ऊपर के बच्चों की संख्या पृथक रूप से दी जाये ताकि प्राथमिक स्तर पर 6-11 वर्ष के आयु वर्ग में बच्चों का स्पष्ट परिवेश दर्शाया जाना संभव हो सके।

11. विद्यालय स्तर पर शिक्षा की प्राथमिक, मिडिल, हाई और हायर सैकेण्डरी कक्षाओं में छात्रों की कुल वास्तविक संख्या और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के छात्रों की संख्या उनके संबंधित प्रतिशत सहित नीचे की सारणी में दी गई है--

सारणी 5

क्रम सं०	स्तर	छात्रों की कुल संख्या	अ० जा० के छात्रों की संख्या	अ० ज० जा० के छात्रों की संख्या
1	2	3	4	5
1.	प्राथमिक/जूनियर बेसिक (कक्षा 1 से 5) . .	8,64,65,189	1,39,21,012 (16.10%)	65,80,004 (7.61%)
2.	मिडिल/सीनियर बेसिक (कक्षा 6 से 8) . .	2,81,24,756	36,18,480 (12.87%)	12,82,644 (4.56%)
3.	हाई/पोस्ट बेसिक (कक्षा 9–10) . .	1,16,17,262	13,96,712 (12.02%)	4,38,742 (3.78%)
4.	हायर सैकेण्डरी 10+2 नई+पुरानी पद्धति .	34,88,672	4,13,096 (11.84%)	1,46,144 (4.19%)

स्रोत--मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग के योजना, प्रबोधन और सांख्यिकीय प्रभाग द्वारा प्रकाशित चयनित शैक्षिक सांख्यिकीय आंकड़े 1985–86

विद्यालयों की उपलब्धता

12. चौथे अखिल भारतीय सर्वेक्षण के अनुसार बस्तियों के अन्दर के अथवा उनके 1 कि० मी० दूरी के अन्दर के प्राथमिक विद्यालयों द्वारा आदिवासी जनता के केवल 83 प्रतिशत भाग का ही समावेश हुआ था। इस प्रकार लगभग 17 प्रतिशत आदिवासी जनसंख्या ऐसे प्राथमिक विद्यालयों पर निर्भर रही थी जो उनकी बस्तियों से 1 कि० मी० से अधिक दूरी पर थे। इस में से 13.96 प्रतिशत जनता के लिये 1.5 कि. मी० की दूरी तक और 8.37 प्रतिशत जनता के लिये 2 कि० मी० की दूरी तक कोई विद्यालय नहीं था। यह स्थिति उस सामान्य स्थिति के विपरीत है जिसमें 92.82 प्रतिशत जनसंख्या का समावेश उनकी बस्तियों के अन्दर के या उससे 1 कि० मी० की दूरी के अन्दर के स्कूलों द्वारा किया गया है। आदिवासियों की 25,000 से अधिक बस्तियों में शिक्षा की सुविधा उपलब्ध नहीं थी। माध्यमिक स्तर पर यह स्थिति और भी विपरीत हो जाती है। जहां सामान्य रूप से 82.18 प्रतिशत जनसंख्या के लिये 8 कि० मी० तक की दूरी के अन्दर एक माध्यमिक विद्यालय था। आदिवासी जनसंख्या के मामले में यह सुविधा केवल 51.89 प्रतिशत जनता के लिये उपलब्ध थी। हायर सैकेण्डरी स्तर पर 8 कि० मी० तक की दूरी के अन्दर के विद्यालयों द्वारा जहां सामान्य जनसंख्या के 41.08 प्रतिशत भाग का समावेश किया गया था यह सुविधा आदिवासी जनसंख्या के केवल 18.8 प्रतिशत भाग के लिये उपलब्ध हुई थी।

13. उपर्युक्त तुलना से पूर्ण रूप में वास्तविक स्थिति प्रतिपादित नहीं होती है। मैदानी भागों के उन क्षेत्रों में, जिनमें संचार साधनों का विकास हो चुका है, उपर्युक्त दूरी कोई गम्भीर अड़चन नहीं है परन्तु आदिवासी क्षेत्रों में जिनमें पर्वत, वन और बहते झरने हैं एक कि० मी० की दूरी भी एक लम्बी दूरी हो सकती है और शिक्षा की सुविधा वास्तव में उपलब्ध नहीं हो सकती है। अखिल भारतीय शैक्षिक सर्वेक्षण जैसे विस्तृत सर्वेक्षण, ने भी इन विशेषताओं को ध्यान में नहीं रखा है और वह केवल इस दूरी को भौतिक रूप से लेकर ही चला है। इसके परिणामस्वरूप यह कहना कठिन है कि शिक्षा के लिये उस सर्वेक्षण द्वारा जैसा दर्शाया गया उक्त लक्ष्य वास्तविक है अथवा नहीं। प्राथमिक शिक्षा सुविधा की उपलब्धता के बारे में केवल एक यही निश्चित तथ्य है कि उस बस्ती के अन्दर एक विद्यालय विद्यमान हो। इसके परिणामस्वरूप प्रभावी रूप से समाविष्ट की गई जनसंख्या का प्रतिशत सभी स्तरों पर बहुत थोड़ा है।

14. उक्त शिक्षा सुविधाओं को बढ़ाने के लिये अब तक किया गया उपाय केवल आवासीय विद्यालयों की स्थापना करना ही रहा है। यह महसूस नहीं किया गया है कि किसी समुदाय के लिये, विशेष तौर पर एक कृषि समुदाय के लिये, सम्पूर्ण विस्तार आवासीय संस्थानों के माध्यम से नहीं किया जा सकता है। कोई किसी ऐसे गांव के बारे में सोच भी नहीं सकता है जिसमें 6–11 वर्ष की आयु वर्ग के सभी बच्चे आवासीय संस्थानों में केवल अपना अध्ययन करने के लिये समाज से दूर रह रहे हों। इस सामाजिक वास्तविकता की मान्यता के अभाव के कारण कुछ राज्यों ने छितरी जनसंख्या के क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा के लिये सामान्य प्राथमिक स्कूलों को बन्द करके समग्र रूप से आवासीय संस्थानों पर निर्भर किया जिससे स्थिति बिगड़ गई। प्राथमिक विद्यालय स्तर पर प्रभावी परिवेश के लिये यह अपेक्षित है कि पूर्ण रूप से परम्परा से भिन्न एक उपाय किया जाये जिसमें इस स्पष्ट उद्देश्य के साथ कि प्रत्येक बच्चे को शिक्षा की सुविधा दी जानी है सभी उपाय अपनाए जाएं। चौथे शैक्षिक सर्वेक्षण में औपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत केवल 'पाठशाला रहित बस्तियों' को शामिल करने की बात की गई है। इस सम्बन्ध में इस बात को महसूस नहीं किया गया है कि किसी ऐसे व्यक्ति को प्राप्त करना संभव नहीं होगा जो कि परम्परागत शिक्षा की अपेक्षा अधिक कठिन अनौपचारिक पद्धति से पढ़ा सकता हो। इन क्षेत्रों में शैक्षिक संस्थानों का एक ढांचा रखना आवश्यक होगा जिसमें साधारण विद्यालय, एकल शिक्षक विद्यालय, उपविद्यालय या पूर्व प्राथमिक एवं प्राथमिक संस्थान और विस्तार केन्द्र समाविष्ट हो सकते हैं जो सभी स्वतन्त्र संस्थान न होकर एक प्रारम्भिक स्कूल परिसर में समाविष्ट किये जा सकते हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि ढांचे को परिभाषित करने के बजाय उद्देश्य को ही स्पष्ट किया जाना अपेक्षित है। राष्ट्रीय लक्ष्य के अनुसार शिक्षा प्राप्त करने के लिये स्कूल जाने वाली उस जनसंख्या का समावेश करने के लिये पद्धति विकसित करने की जिम्मेदारी प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय परिसर को ही दी जानी चाहिये। नई शिक्षा नीति में एक सूक्ष्म नियोजन की प्रक्रिया की परिकल्पना की गई थी। सूक्ष्म नियोजन को सफल होने के लिये ऐसी कार्य पद्धति अपनानी चाहिये जिसमें निचली सतह से कार्य आरंभ किया जाये और उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये आवश्यक संस्थानों का निर्माण किया जाये।

प्राथमिक, मिडिल और माध्यमिक स्तरों पर पढ़ाई छोड़ने वाले

15. कक्षा 1 और 2 में दाखिले शिक्षा के क्षेत्र में उपलब्धियों के वास्तविक सूचक नहीं हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि कितने बच्चे मिडिल स्तर (कक्षा VI-VIII) तक पहुंचते हैं और उत्तीर्ण होते हैं। अनुसूचित जातियों और जन जातियों में कक्षा I-V से कक्षा VI-VIII में दाखिले में बहुत तेजी से गिरावट आती है। **बिहार** में प्राथमिक कक्षाओं में अनुसूचित जातियों का दाखिला 68.18 प्रतिशत से घटकर मात्र 21.30 प्रतिशत हो गया है। **मध्य प्रदेश** में यह 98.95 प्रतिशत से घट कर मात्र 40.75 प्रतिशत रह गया है। यह आश्चर्य की बात है कि **कर्नाटक** में जो प्राथमिक कक्षाओं में दाखिले 92.06 प्रतिशत बताता है माध्यमिक कक्षाओं में दाखिला 36.35 प्रतिशत है। यह

राजस्थान में 69.36 प्रतिशत से गिर कर 29.60 प्रतिशत हुआ है। यह खेद की बात है कि **पश्चिम बंगाल,** जो प्रत्यक्ष रूप से अपने पड़ौसी राज्यों **बिहार** और **उड़ीसा में** प्रचलित अस्पृश्यता की प्रथा से मुक्त है, का स्थान अनुसूचित जातियों के दाखिलों के मामले में नीचे से दूसरे नम्बर पर है। (22.03 प्रतिशत)। इस आयु-वर्ग में अनुसूचित जातियों के लड़कों के दाखिलों का अनुपात 29.73 प्रतिशत है जो देश के सभी राज्यों से निम्नतम है। आदिवासियों के दाखिलों में भी गिरावट अत्यधिक आई है। **बिहार** में यह 88.37 प्रतिशत से गिर कर 23.19 प्रतिशत, **मध्य प्रदेश में** 74.33 प्रतिशत से गिर कर 21.41 प्रतिशत और **उड़ीसा** में 78.38 प्रतिशत से गिरकर 21.60 प्रतिशत हुआ है। **मिडिल** स्तर पर दाखिले का प्रतिशत **आन्ध्र प्रदेश** में 19.06 प्रतिशत और **पश्चिम बंगाल** में उससे थोड़ा अधिक 20.08 प्रतिशत है।

16. वर्ष 1981–82 में विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों के प्राथमिक, मिडिल और माध्यमिक स्तरों पर पढ़ाई छोड़ने वालों के प्रतिशत के बारे में सूचना अनुलग्नक 2 में दी गई है और आदिवासियों के बारे में इसी प्रकार की सूचना अनुलग्नक 3 में दी गई है। पढ़ाई छोड़ने वालों की राष्ट्रीय दरें और शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर प्रत्येक तीन राज्यों में जिनमें प्रगति सर्वोत्तम और निकृष्ट है, पढ़ाई छोड़ने वालों की दरें नीचे की सारणी में दर्शाई गई है—

सारणी 6

अनुसूचित जातियाँ

	प्राथमिक स्तर (कक्षा I से V)		मिडिल स्तर (कक्षा VI से VIII)		माध्यमिक स्तर (कक्षा I से X)
		(आंकड़े प्रतिशत में)			
मणिपुर	(90.45)	उड़ीसा	(90.71)	उड़ीसा	(93.80)
पश्चिम बंगाल	(75.72)	मणिपुर	(88.81)	मणिपुर	(93.00)
पंजाब	(72.53)	मेघालय	(84.25)	मध्य प्रदेश	(92.99)
भारत	(59.21)	भारत	(74.76)	भारत	(85.72)
हिमाचल प्रदेश	(29.10)	हरियाणा	(57.37)	गुजरात	(75.51)
हरियाणा	(28.12)	हिमाचल प्रदेश	(55.46)	असम	(69.80)
केरल	(0.0)	केरल	(23.71)	केरल	(49.80)
		अनुसूचित जनजातियाँ			
मणिपुर	(85.36)	उड़ीसा	(91.23)	मध्य प्रदेश	(97.13)
बिहार	(80.58)	मणिपुर	(90.84)	उड़ीसा	(94.04)
उड़ीसा	(77.99)	असम	(88.37)	त्रिपुरा	(93.93)
भारत	(74.00)	भारत	(84.99)	भारत	(91.65)
तमिलनाडु	(37.59)	उत्तर प्रदेश	(53.69)	असम	(71.34)
केरल	(37.16)	केरल	(45.10)	केरल	(69.50)
उत्तर प्रदेश	(0.0)	कर्नाटक	(26.98)	कर्नाटक	(45.53)

17. **महाराष्ट्र** में अनुसूचित जातियों और जनजातियों में शिक्षा में अपव्यय और अवरुद्धता का अध्ययन सामाजिक विज्ञान के टाटा संस्थान, बम्बई ने किया था। यह अध्ययन मानव संसाधन विकास के केन्द्रीय मंत्रालय के अनुरोध पर किया गया था। इस सम्बन्ध में सांख्यिकी आंकड़े सितम्बर से दिसम्बर 1984 तक एकत्र किये गये थे और रिपोर्ट 1985 में प्रस्तुत की गई थी। महाराष्ट्र में प्राथमिक और मिडिल स्तर की शिक्षा में अनुसूचित जातियों/जनजातियों के छात्रों में अपव्यय और अवरुद्धता की दर गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों की अपेक्षा अधिक बताई गई है। इस अध्ययन के लिए महाराष्ट्र के तीन जिलों अर्थात उस्मानाबाद, धुले और शोलापुर में से 60 विद्यालय बेतरतीब चुने गये थे। कुल 482 नियमित छात्रों, 182 पढ़ाई छोड़ने वाले छात्रों और उनके अभिभावकों, उक्त 60 विद्यालयों के 135 प्रधानाध्यापकों व अध्यापकों से साक्षात्कार किया गया था और इसके अतिरिक्त अधिकारियों और जनता के व्यक्तियों से भी साक्षात्कार किया गया था। इस अध्ययन में छात्रों के चार "कोहर्ट" पूरे किये गये थे। पहले "कोहट"

में 1346 छात्र समाविष्ट किये गये थे जिनकी परख जून 1977 में कक्षा-I में उनके दाखिले से लेकर 7 वर्ष की अवधि तक की गई थी। दूसरे "कोहर्ट" में 808 छात्र समाविष्ट किये गये थे जिनकी परख कक्षा I--IV में दाखिले से लेकर 4 वर्ष की अवधि तक की गई थी। तीसरे "कोहर्ट" में 700 छात्र शामिल किये गये थे जिनकी परख जून 1981 में कक्षा-V मे उनके दाखिले से लेकर 3 वर्ष की अवधि तक की गई थी। चौथे "कोहर्ट" में 376 छात्रों की परख जून 1978 में कक्षा-V में उनके दाखिले से लेकर 6 वर्ष की अवधि तक की गई थी। इस अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष और सिफारिशें नीचे दी गई हैं —

(1) चयनित विद्यालयों में से 50 विद्यालयों में जून 1977 में कक्षा-I में दाखिल हुए 1346 छात्रों में से 213 अनुसूचित जाति के और 509 अनुसूचित जनजाति के थे। चार वर्ष की समाप्ति पर इनमें से उत्तीर्ण होने वालों का प्रतिशत अनुसूचित जातियों का 15 प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों का 16 प्रतिशत था जबकि गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों का 2.3 प्रतिशत था। इस अध्ययन में शामिल किये गये 50 विद्यालयों में से दो विद्यालय ऐसे थे जिनमें कक्षा-IV को पूरा करने से पहले ही सभी छात्रों ने पढ़ाई छोड़ दी थी।

(2) इस अध्ययन में शामिल किये गये 60 विद्यालयों में से केवल 9 विद्यालयों में कक्षा-I सभी छात्रों ने उत्तीर्ण की थी। पांच विद्यालयों में आधे से अधिक छात्रों ने कक्षा-I उत्तीर्ण नहीं की थी। यह समस्या एकल-शिक्षक विद्यालयों और विद्यालय रजिस्टरों में दर्ज अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों की बहुत बड़ी संख्या वाले विद्यालयों में और भी अधिक थी। इन स्कूलों में कक्षा-I उत्तीर्ण करने वाले छात्रों का प्रतिशत बहुत नीचा था और कक्षा-IV उत्तीर्ण करने वाले छात्रों का प्रतिशत इससे भी नीचा था। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के छात्रों के भारी बहुमत वाले 16 विद्यालयों में से 9 विद्यालयों में एक भी छात्र ने कक्षा-IV उत्तीर्ण नहीं की थी।

(3) मिडिल स्तर की पढ़ाई में जून, 1981 में कक्षा-V में दाखिल हुए छात्रों में से 67 प्रतिशत छात्रों ने तीन वर्षों में कक्षा-VII उत्तीर्ण की थी। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के छात्रों तथा गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के समुदायों के छात्रों की प्रगति में कोई अन्तर नहीं था। मिडिल स्तर की पढ़ाई पूर्ण करने वाली लड़कियों का प्रतिशत लड़कों की अपेक्षा कम था।

(4) प्रारम्भिक शिक्षा के स्तर पर (कक्षा-I से-VII) छात्रों की प्रगति निराशाजनक है। 9 प्रतिशत छात्रों ने जून 1977 में कक्षा-I में अपने दाखिले से लेकर सात वर्ष में कक्षा-VII उत्तीर्ण की थी। इसके अतिरिक्त 14 प्रतिशत छात्र मिडिल स्तर पर थे। ऐसे छात्रों का प्रतिशत जिन्होंने कक्षा-VII उत्तीर्ण की थी अथवा जो एक या दो और वर्षों में उत्तीर्ण करने वाले थे, जून 1977 में कक्षा I में दाखिल हुए छात्रों का 22 प्रतिशत बनता था। इस प्रकार कक्षा-VII उत्तीर्ण करने से पूर्व लगभग दो-तिहाई छात्रों ने पढ़ाई छोड़ दी थी। गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों में पढ़ाई छोड़ने की दर अनुसूचित जाति/जनजाति की तुलना में कम थी। लड़कियों की अपेक्षा लड़कों की पढ़ाई छोड़ने की दर बहुत नीची थी।

(5) विभिन्न विद्यालयों में अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों की प्रगति की जांच करने पर ज्ञात होता है कि 14 विद्यालयों में अनुसूचित जाति/जनजाति के सभी छात्रों ने कक्षा-I उत्तीर्ण की थी और पांच विद्यालयों में अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों के पूरे बैच ने कक्षा IV उत्तीर्ण की थी। दूसरी और 15 विद्यालयों में जून, 1977 में कक्षा I में दाखिल हुए अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों के बैच में से एक भी छात्र ने कक्षा-IV उत्तीर्ण नहीं की थी। कक्षा-I के स्तर पर अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों की प्रगति की तुलना गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों से करने पर यह ज्ञात होता है कि 22 प्रतिशत विद्यालयों में अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों की प्रगति गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों की प्रगति से कम थी। तथापि, 36 प्रतिशत विद्यालयों में अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों की प्रगति गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों से बेहतर थी।

(6) हाई स्कूल स्तर पर, जून, 1978 में कक्षा-V में दाखिल हुए 324 छात्रों में से 21 प्रतिशत छात्रों ने सीनियर सेकेंडरी सर्टिफिकेट परीक्षा प्रथम प्रयास में ही उत्तीर्ण की थी। पढ़ाई छोड़ने वाले छात्रों की तुलना में विद्यालयों में नियमित रहने वाले बच्चों की पृष्ठभूमि अधिक अनुकूल होती है जिसका कारण यह है कि उनके माता-पिता अपेक्षाकृत से उच्च सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले वर्ग के होते हैं, आधुनिकीकरण के लिये अधिक तत्पर होते हैं, राजनैतिक रूप से ऊंचे स्तर के होते हैं और अपने बच्चों के लिये अधिक आकांक्षा रखते हैं। इसके अतिरिक्त पढ़ाई छोड़ने वालों की अपेक्षा नियमित छात्र अपने माता-पिता की सहायता में कम लगे रहते थे।

(7) पढ़ाई छोड़ने वाले छात्रों के माता-पिताओं के अनुसार उनके पढ़ाई छोड़ने के तीन मुख्य कारण थे, अर्थात् (क) बच्चे से घर में सहायता की अपेक्षा, (ख) शिक्षा व्यय वहन करने के लिये निर्धनता और असमर्थता, (ग) शिक्षा में उनकी रुचि की कमी। पढ़ाई पुन: आरम्भ करने में, जैसा कि पढ़ाई छोड़ने वाले छात्रों के माता-पिताओं ने बताया है, शिक्षण पढ़ाई की सामग्री और भोजन तथा आवास का खर्च अधिक आता है। पढ़ाई छोड़ने वाले बहुत थोड़े छात्रों के माता-पिताओं ने यह बताया कि यदि कक्षायें प्रात: या रात्रि को लगाई जातीं तो वे अपने बच्चों को विद्यालय में भेज सकते थे।

(8) विद्यालयों के साधनों और कार्य-चालन, विशेष तौर से उन विद्यालयों के जिनमें अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों का प्रतिशत बहुत बड़ा था, की गुणवत्ता में बड़ी कमी थी॥ ऐसे तालुकों में जिनमें जनसंख्या मुख्य रूप से आदिवासी थी, केवल एकल-शिक्षक विद्यालयों का प्रतिशत ही अधिक नहीं था, परन्तु विद्यालय में उपलब्ध शिक्षण-पढ़ाई की सामग्री जैसी भौतिक सुविधाएं भी केवल अपर्याप्त ही नहीं वरन् बहुत घटिया किस्म की भी थीं। इससे भी अधिक दु:ख की बात यह थी कि काफी विद्यालय, विशेष रूप से आदिवासी क्षेत्रों में, कुछ समय की अवधि तक बन्द रहे थे और काफी मामलों में इन विद्यालयों ने शिक्षा वर्ष के शुरू से ही कार्य करना आरम्भ नहीं किया था। "दण्डित" किए जाने वाले शिक्षकों को आदिवासी क्षेत्रों के विद्यालयों में स्थानांतरित करने की नीति को तत्काल बन्द किए जाने की आवश्यकता है। इसके विपरीत आदिवासी क्षेत्रों में स्थित विद्यालयों में कार्य कर रहे शिक्षकों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

(9) शिक्षकों के चयन में अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्तियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। यदि जरूरी हो, इनके उपयुक्त उम्मीदवार उपलब्ध न होने की स्थिति में, विहित अर्हताएं, उनके लिए कम की जाएं। यदि न्यूनतम अर्हताएं कम करने पर भी अनुसूचित जाति/जनजाति के शिक्षक न मिलें तो, शिक्षक के पदों के लिए ऐसे व्यक्तियों का पता लगाने और उन्हें प्रशिक्षण देने के लिए शिक्षा विभाग द्वारा प्रयास किए जाने चाहिएं।

(10) यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से कि शिक्षक नियमित रूप से विद्यालय में उपस्थित हों, विशेष रूप से आदिवासी क्षेत्रों में, ऐसे शिक्षकों को क्वार्टरों के रूप में आवास या मकान किराया भत्ता दिया जाए। ऐसे क्षेत्रों में कार्य कर रहे शिक्षकों को विशेष प्रोत्साहन और मान्यता दी जानी चाहिए।

(11) शिक्षा का माध्यम, विशेष तौर पर कक्षा-I और कक्षा-II के स्तर पर छात्र की मातृ-भाषा होनी चाहिए और आदिवासी क्षेत्रों में इसे तत्काल कार्यान्वित किया जाना चाहिए।

(12) शिक्षण-पढ़ाई की सामग्री की मात्रा और किस्म में सुधार करने के अतिरिक्त, विशेष तौर पर एकल शिक्षक और अनुसूचित जाति/जनजाति के बहुमत वाले विद्यालयों में, शिक्षकों को शिक्षण-पढ़ाई की अपनी ही सामग्री, उपलब्ध स्थानीय सामग्रियों का प्रयोग करके, तैयार करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

मैट्रिक-पूर्व छात्रवृत्तियां :

18. छात्रवृत्तियों और वजीफों का कार्यक्रम बहुत काफ़ी विकसित हो चुका है तथापि, इसमें कुछ कमजोरियां हैं जिन पर ध्यानपूर्वक विचार किया जाना है। जैसे-जैसे कोई व्यक्ति शिक्षा की सीढ़ी पर ऊपर पहुंचता जाता है, सहायता कार्यक्रम के अधीन परिवेश बढ़ता जाता है। इस प्रकार अनुसूचित जातियों और जनजातियों का प्रत्येक छात्र कतिपय शर्तों के अधीन रहते हुए मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति के लिए पात्र है। परन्तु माध्यमिक स्तर पर परिवेश बहुत छोटा है और प्रारम्भिक स्तर पर कोई सहायता नहीं है। इससे एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें वे लोग, जो प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर आरंभिक बाधा को पार करने में सफल हो गए हैं, तुलनात्मक रूप से आसानी के साथ ऊपर पहुंचने में समर्थ हैं परन्तु वे लोग, जो पहली बाधा को पार करने में भी असमर्थ हैं, उनका जीवन हमेशा के लिए अंधकार मय है। उपर्युक्त विश्लेषण से एक दूसरे तथ्य का भी पता चलता है। वह यह है कि 11–14 वर्ष की आयु-वर्ग के स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या तेजी से घटी है। बहुत सारे मामलों में जहां हायर सेकेन्डरी विद्यालयों में बच्चों का परिवेश बेहतर है, मिडिल विद्यालय स्तर पर सुविधाओं की संगति 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए शिक्षा को सार्वजनीन बनाने के उद्देश्य के अनुसार नहीं हैं। बहुत सारे बच्चे किसी न किसी तरह प्राथमिक विद्यालय को इसलिए पार करने में समर्थ होते हैं कि वह आसानी से उनकी पहुंच के अन्दर होता है। परन्तु एक माध्यमिक विद्यालय आधे से अधिक आदिवासी बच्चों के लिए उनके घर से 8 कि० मी० से अधिक दूर होता है। इस प्रकार बच्चों के लिए अपने घरों में रहते हुए इन विद्यालयों में उपस्थित होना संभव नहीं है, विशेष तौर से

जबकि रास्ते ऊबड़-खाबड़ होते हैं । इस कारण से कक्षा-VI से ऊपर की शिक्षा उन बच्चों की पहुंच से बाहर है और इस स्तर पर राज्य द्वारा उपलब्ध सहायता भी अल्प है । यह कारण अनुसूचित जातियों और जनजातियों के अधिकांश छात्रों के लिए शैक्षिक सीढ़ी पर चढ़ने में समर्थ न होने के लिए जिम्मेदार है ।

19. जो कुछ भी थोड़ी-सी सहायता प्राथमिक, मिडिल और माध्यमिक स्तर पर बच्चों को प्राप्त होती है, बहुत देर से मिलती है । यह आवश्यक है कि एक मामूली घर से बच्चे को जो सहारा मिलता है, छात्रवृत्तियों और वजीफों द्वारा उसी को उभारा जाना चाहिए । एक ऐसी पद्धति बनाई जानी चाहिए जिसके द्वारा कोई छात्र उसी दिन से सहायता का दावा कर सके जिस दिन से वह स्कूल में दाखिल होता है । राज्यों को एक पात्रता-कार्ड तैयार करना चाहिए जो छात्रों को उन संस्थानों के प्रधान द्वारा उस समय दिया जा सकता है जब वे प्राथमिक विद्यालय, मिडिल विद्यालय, माध्यमिक विद्यालय, जैसी स्थिति हो, की समाप्ति पर अपने स्कूल छोड़ने के प्रमाण-पत्र लेते हैं । इस पात्रता-कार्ड के आधार पर वे दाखिला लेने में और देर से पहुंचने वाली औपचारिक मंजूरी की प्रतीक्षा किए बिना ही राज्य की देय सहायता प्राप्त करने में समर्थ होने चाहिएं । इसके अतिरिक्त छात्रों को सभी छात्रवृतियां महीने की समाप्ति पर देने की बजाय उस महीने की प्रथम तारीख को देय होनी चाहिएं क्योंकि छात्रवृति का आशय बच्चे को आगामी माह में सहायता देना है ।

विद्यालय छात्रों के लिए विज्ञान की शिक्षा में सुधार

20. आधारभूत अनुसंधान के टाटा संस्थान, बम्बई के एक संघटक के रूप में 1974 में विज्ञान की शिक्षा के लिए स्थापित होमी भाभा केन्द्र कई प्रकार की कार्यात्मक अनुसंधान परियोजनाएं आयोजित करता रहा है । इन अनुसंधान परियोजनाओं का उद्देश्य देश में विज्ञान की शिक्षा में प्रगति करना था और इन प्रयासों का सम्बन्ध मुख्य रूप से सामाजिक-आर्थिक, सांस्कृतिक, भाषाई और शिक्षण-प्रशिक्षण के साधनों की पहचान करने मे है जो समाज के सामाजिक रूप से उपेक्षित वर्गों की प्रथम पीढ़ी के शिष्यों और छात्रों की प्रगति रोकते हैं और उन्हें शिक्षा की औपचारिक धारा में जारी रहने से रोकते हैं । इन कार्यात्मक अनुसंधान कार्यक्रमों में से एक कार्यक्रम बम्बई नगर निगम के माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ रहे अनुसूचित जातियों के छात्रों की अध्येता उपलब्धियों में वृद्धि करने से सम्बन्धित है । इस कार्यक्रम में यह जांच करने के लिए एक यह प्रयास किया गया है कि घर की बहुत घटिया पृष्ठभूमि वाले अनुसूचित जाति के छात्रों की स्कूलों में प्रगति इतनी खराब क्यों होती है । उनके सामने आने वाली विशिष्ट बाधाओं का पता लगाने के लिए और उन बाधाओं पर काबू पाने के लिए समाधानकारी उपाय तैयार करने के लिए भी एक प्रयत्न किया गया है । यह बताया गया है कि इस कार्यक्रम का परिणाम अच्छा हुआ है और उसमें जिन छात्रों ने भाग लिया उनके बारे में यह बताया गया है कि उन्होंने सीनियर सेकेन्डरी सर्टिफिकेट परीक्षा में बहुत अच्छी प्रगति की है । इस प्रयोग के विस्तृत विवरण, प्रो० वी० जी० कुलकर्णी और डा० एस० सी० आगरकर द्वारा तैयार किए गए विशेषाधिकार-विहीन वर्गों में प्रतिभा खोज और प्रशिक्षण (अक्तूबर, 1985) शीर्षक नामक एक सराहनीय मोनोग्राफ में शामिल किये गये हैं ।

अनुसूचित जाति की लड़कियों के लिए एक विद्यालय के कार्य-चालन के बारे में केरल उच्च न्यायालय के निदेश

21. केरल में एक शिक्षा संस्थान, जिसमें अनुसूचित जाति की लड़कियों का बाहुल्य है, जिस प्रकार चलाया जा रहा है वह प्रशासन की ओर से उदासीनता की एक अच्छी बानगी प्रस्तुत करता है । यह विशिष्ट मामला हमें केरल उच्च न्यायालय, एर्नाकुलम के रजिस्ट्रार ने 1986 में बताया था । इस मामले में उच्च न्यायालय के आदेश ओ० पी० नं० 4630/86 में सी० एम० पी० नम्बर 15081/86 और 15082/86 में विशिष्ट रूप से यह उल्लेख किया गया था कि इस मामले का हवाला अनुसूचित जातियों और और जनजातियों के आयुक्त की रिपोर्ट में किया जाए । इडुक्की जिले के मुन्नार से लगभग 18 मील दूर गुडेराले में गवर्नमेंट हाई स्कूल का व्यापक रूप से समाचार पत्रों आदि में यह प्रचार हुआ था कि एस० एस० एल० सी० परीक्षा में उस विद्यालय की प्रगति लगातार दो वर्षों तक शून्य थी । इस सम्बन्ध में लॉ सोसायटी ऑफ इंडिया, कोचीन मे हाई कोर्ट में एक रिट पेटीशन दाखिल की थी जिसने इस मामले का उस स्थान पर जाकर अध्ययन करने और उस विद्यालय की परिस्थितियों के बारे में रिपोर्ट देने के लिए एक आयुक्त नियुक्त किया था । उच्च न्यायालय के एक अधिवक्ता ने इस कार्य को किया था और एक विस्तृत तथा उपयोगी रिपोर्ट प्रस्तुत की थी । रिपोर्ट में यह बताया गया था कि टाटा टी कम्पनी द्वारा 4 दशक से अधिक समय पहले निर्मित किए गए एक शेड का एक भाग इस विद्यालय के भवन के रूप में प्रयोग में लाया जा रहा था। उसमें कक्षा चलाने के लिए उपलब्ध क्षेत्रफल 19.7 मीटर लम्बा और 5.6 मीटर चौड़ा था । इस विद्यालय में 400 छात्र थे जिनके लिए केवल 25 बैंच और 25 डेस्क थे । अधिकांश छात्र सीमेंट के ठंडे और सीलनयुक्त फर्श पर बैठने के लिए बाध्य थे । छात्रों के लिए कोई स्नानागार, शौचालय या पेशाबघर नहीं था । छात्रों में लगभग 50 प्रतिशत लड़कियां थीं जिनमें से कुछ वयस्क थीं । उक्त कमिश्नर (अधिवक्ता) ने रिपोर्ट में यह भी बताया था कि पाठ्य-पुस्तकों और अभ्यास-पुस्तकों की आपूर्ति भी काफी अपर्याप्त थी । इस विद्यालय के लिए कुल 12 पद स्वीकृत थे जबकि केवल 5 पद ही भरे गए थे और जांच के समय

दो शिक्षक छुट्टी पर थे । विद्यालय में कोई प्रधानाध्यापक नहीं था । वरिष्ठ सहायक अध्यापक ही प्रधानाध्यापक का चार्ज ग्रहण किए हुए था । इस विद्यालय का पर्यावरण बहुत प्रदूषित बताया गया था क्योंकि वहां की जमीन सीलन-युक्त थी और गायों के गोबर के ढेर और ईंधन की लकड़ी के स्टाक सारे क्षेत्र में जमा थे। ऊपर वर्णित निराशा-जनक विवरणों के अतिरिक्त उस आयुक्त द्वारा पाई गई अन्य कमियां भी थीं । उसकी रिपोर्ट के आधार पर उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निदेश दिए थे --

(1) सभी 400 छात्रों को सुरक्षित रूप से और स्वास्थ्य की दृष्टि से स्थान उपलब्ध कराने के लिए अस्थायी शैडों का निर्माण करें ;

(2) यह सुनिश्चित करें कि फ़र्श सीलन वाले न हों और हवा तथा वर्षा से पर्याप्त सुरक्षा हो ;

(3) विद्यालय को निम्नलिखित फर्नीचर दें 50 बैंच, 50 डेस्क और शिक्षकों के लिए 8 और कुर्सियां तथा 8 और मेजें;

(4) खाली पदों पर तत्काल शिक्षक नियुक्त करें और उन्हें मुन्नार में किसी स्थान पर कम से कम अस्थायी आवास उपलब्ध कराएं और उनके लिए सवारी की सुविधा का प्रबंध करें ताकि वे समय पर विद्यालय पहुंचने और छात्रों को प्रभावी और नियमित रूप से शिक्षा देने में समर्थ हो सकें;

(5) विद्यालय में स्थायी प्रधान अध्यापक नियुक्त करें;

(6) सभी छात्रों को पाठ्य-पुस्तकें और अभ्यास-पुस्तकें उपलब्ध कराएं;

(7) ईंधन की लकड़ी के स्टाक और गोबर के ढेर विद्यालय के परिसर से हटाएं और क्षेत्र को बच्चों के प्रयोग के लिए सुरक्षित और उपयुक्त बनाएं; और

(8) छात्रों के लिए पेशाबघर बनवाएं ।

उच्च न्यायालय ने मद संख्या 1 में वर्णित निर्देशों का अनुपालन करने के लिए एक महीने का समय दिया था। दूसरे निदेशों को अधिक से अधिक तीन सप्ताह के अन्दर कार्यान्वित किया जाना था। उस आदेश की एक एक प्रति, सचिव केरल सरकार, शिक्षा विभाग तथा निदेशक, लोक अनुदेश तथा जिला शिक्षा अधिकारी, कट्टापाना, जिला इडुक्की को भी भेजी गई थी । मेरे कार्यालय ने इस विषय को राज्य सरकार के साथ उठाया था और उच्च न्यायालय द्वारा जारी किए गए निदेशों पर की गई कार्यवाही के बारे में पूछा था । एक अनुस्मारक भी जारी किया गया था परन्तु राज्य सरकार से कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ था ।

पिछड़े वर्ग क्षेत्र के कल्याण के लिए केन्द्रीय प्रायोजित योजना

22. निम्नलिखित सारणी छठी योजना, 1985-86 तथा 1986-87 के दौरान विभिन्न केन्द्रीय प्रायोजित योजनाओं के अधीन पिछड़े वर्ग क्षेत्र के कल्याण के लिए किए गए आबंटन और व्यय दर्शाती है --

सारणी 7

(रुपये करोड़ में)

क्रम सं०	योजना	छठी योजना		सातवीं योजना के लिए	1985-86		1986-87	
		आबंटन	व्यय	आबंटन	आबंटन	व्यय	आबंटन	व्यय (अनुमानि
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	अ० जा०/अ० ज० जा० के छात्रों के लिए मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियां	130.00	140.94	114.57	10.00	10.00	11.00	18.9
2.	मट्रिक-पूर्व छात्रवृत्तियां उनके बच्चों के लिए जो अस्वच्छ व्यवसाय में लगे हैं	8.00	1.78	10.32	2.50	0.25	1.82	1.8
3.	अ० जा०/अ० ज० जा० के इंजीनियरिंग/मेडिकल कालेज के छात्रों के लिए बुक-बैंक	3.00	0.96	2.25	0.55	0.31	0.50	0.5
4.	अ० जा०/अ० ज० जा० की लड़कियों के लिए छात्रावास	13.00	14.06	32.05	5.00	3.02	4.55	4.5

मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियां

23. इन वर्षों में इस सर्वाधिक महत्वपूर्ण योजना के विकास का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि वह योजना लागू किए जाने के प्रथम वर्ष 1944-45 में इस योजना के अधीन अनुसूचित जातियों के छात्रवृत्ति पाने वालों की संख्या केवल 114 थी। आदिवासियों के छात्रवृत्ति पाने वालों की संख्या 1948-49 में, जब यह योजना उनके लिए प्रथम बार लागू की गई थी, 84 थी। अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों के लिए 1986-87 के दौरान मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियों की संख्या 10.89 लाख होने का अनुमान था। छठी योजना के अंत में इस योजना पर कुल खर्च 88.53 करोड़ रुपए हुआ था जो सातवीं योजना के दौरान बचनबद्ध व्यय बन गया था। इसके सिवाय केन्द्रीय सहायता इस व्यय के अतिरिक्त होगी। 1985-86 के दौरान 10 करोड़ रुपए का परिव्यय रखा गया था जिसके बारे में यह बताया गया है कि वह पूरा उपयोग में लाया जा चुका है। 1986-87 के दौरान योजना आयोग ने इस योजना के लिए केवल 11 करोड़ रुपए का आबंटन किया है। तथापि उस वर्ष के दौरान इस योजना के अधीन निधि की कुल आवश्यकता 18.90 करोड़ रुपए होना बताई गई थी। इस योजना के अधीन छात्रवृत्तियां भारत सरकार द्वारा विहित विनियमों के अनुसार, जो इस योजना के लिए 100 प्रतिशत निधि प्रदान करती है, राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा पात्र छात्रों को दी जाती है। कोई उम्मीदवार यह छात्रवृत्ति, चाहे वह किसी भी स्थान पर पढ़ता हो, उस राज्य की सरकार की मार्फत दी जाती है जिससे वह संबंधित है। यह उत्साहप्रद बात है कि छात्रवृत्तियों की राशि बढ़ाने और आय की अधिकतम सीमा को बढ़ाने के लिए कल्याण मंत्रालय में एक प्रस्ताव विचाराधीन है।

24. मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति योजना, जो एक उदाराशय योजना है, के संवितरण के बारे में बहुत कुछ सुधार किया जाना अपेक्षित है। कभी-कभी ऐसा होता है कि छात्रवृत्ति की पहली किस्त सत्र के मध्य तक भी नहीं मिल पाती और कुछ मामलों में छात्र पूरे सत्र की समाप्ति के बाद ही कुल राशि प्राप्त कर पाते हैं। इसके परिणामस्वरूप केवल वही छात्र अपनी शिक्षा जारी रख सकते हैं जो इसका निभाव कर सकते हैं या जिन्हें बीच की अवधि के दौरान किसी स्वैच्छिक संगठन से सहायता मिल सकती है। यह विडम्बना की बात है कि कुछ संस्थाएं इन बच्चों को अपनी पहल पर अपनी निधि से सहायता देती हैं और उसके बाद उनकी ओर से छात्रवृत्तियों को वह राशि सरकार से प्राप्त कर लेती हैं। निःसंदेह यह एक अमूल्य सेवा है परन्तु इस प्रक्रिया में ये छात्र उन संस्थाओं पर आश्रित हो जाते हैं और उस सहायता का दावा एक अधिकार के रूप में राज्य से नहीं कर सकते हैं। इस तरह से जिन्हें ऐसी सुविधा प्राप्त नहीं है, उन्हें सहायता के लिए पात्र होते हुए भी शिक्षा से वंचित रहना पड़ता है।

25. छठी योजना के दौरान गृह मंत्रालय ने मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति योजना के कार्यचालन को मोनीटर करने का कार्य राष्ट्रीय शिक्षा योजना और प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली के सुपुर्द किया था। उस समय सरकार का आशय यह था कि केन्द्रीय प्रायोजित अन्य शिक्षा योजनाओं के प्रबोधन का कार्य भी राष्ट्रीय शिक्षा योजना और प्रशासन संस्थान को सौंपा जाए। राष्ट्रीय शिक्षा योजना और प्रशासन संस्थान ने 1984-85 में मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति योजना के कार्यचालन, प्रबन्ध और उपयोग पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी और एक रिपोर्ट उच्च शिक्षा में "निरुद्धता, असफलता, पुनरावृत्ति और पढ़ाई छोड़ना : अ० जा०/अ० ज० जा० छात्रों का एक कोहर्ट विश्लेषण" नामक रिपोर्ट भी प्रस्तुत की थी। तथापि, उसके पश्चात् यह कार्य बंद कर दिया गया था।

अनुसूचित जातियों, जनजातियों, विमुक्त (डिनोटीफाइड) जनजातियों और घुमन्तु/अर्ध-घुमन्तु जनजातियों के लिए विदेशों में राष्ट्रीय छात्रवृत्तियां

26. भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों, जनजातियों, विमुक्त (डिनोटीफ़ाइड) जनजातियों घुमन्तु/अर्ध-घुमन्तु जनजातियों और आर्थिक रूप से पिछड़े अन्य वर्गों के लिए विदेशों में ऐसे विषयों में स्नातकोत्तर अध्ययन और अनुसंधान करने के लिए, जिनके लिए भारत में उपयुक्त सुविधाएं उपलब्ध नहीं थीं, विदेशों में राष्ट्रीय छात्रवृत्तियां देने के लिए एक योजना 1954-55 में आरम्भ की थी। यह योजना एक गैर-प्लान योजना है। प्रति वर्ष दो जाने वाली छात्रवृत्तियों की कुल संख्या 21 है। 1985-86 में भारत सरकार ने पूर्व के वर्षों की शेष रही 8 छात्रवृत्तियों सहित 29 छात्रवृत्तियां देने का प्रस्ताव किया था। तथापि 1985-86 में 25 अध्येताओं का चयन किया गया था। यह बताया गया था कि 1986—88 की चयन-अवधि के लिए ये छात्रवृत्तियां देने के लिए चयन प्रक्रिया चल रही थी।

लड़कियों के छात्रावास

27. यह योजना तीसरी पंचवर्षीय योजना के समय से चालू है। इस योजना पर व्यय केन्द्र और राज्यों द्वारा समान आधार (50:50) पर किया जाता है। इस योजना में प्रारम्भ में छात्रावास भवनों के निर्माण के लिए व्यवस्था की गयी थी। उसके बाद इस योजना में सहायक सुविधाओं और अनावर्ती मदों का प्रावधान जोड़कर इसके विस्तार को बढ़ाया गया था। छठी योजना अवधि में इस योजना के अधीन अनुसूचित जातियों और जनजातियों दोनों की लड़कियों के लिए छात्रावासों के निर्माण के लिए 13 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया था। इसके लिए सातवीं योजना अवधि में 31.95 करोड़ रुपए का आबंटन किया गया था। इसके लिए 1985-86 में 162 अनुसूचित जाति छात्रावासों के निर्माण के लिए 1.67 करोड़ रुपए का केन्द्रीय अनुदान राज्यों को मंजूर किया गया था। उस वर्ष में आदिवासी लड़कियों के छात्रावास

के लिए 1.50 करोड़ रुपए की राशि आबंटित की गई थी और वास्तविक व्यय 1.35 करोड़ रुपए हुआ था। इस योजना के अधीन 1986-87 में 4.55 करोड़ रुपए का आबंटन किया गया था। उस वर्ष के व्यय के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। यह उत्साह-वर्धक बात है कि भारत सरकार ने मूल्य सूचकांक बढ़ जाने के साथ इस योजना के अधीन छात्रावासों के निर्माण के लिए लागत की अधिकतम सीमा 1985 में बढ़ा दी थी। लागतों की यथा अनुमोदित पुनरीक्षित अधिकतम सीमा इस प्रकार हैं —

सारणी 8

आवास का प्रकार	प्रति छात्र लागत की पुरानी दरें		प्रति छात्र लागत की पुनरीक्षित दरें	
	मैदानी क्षेत्र रु०	पर्वतीय क्षेत्र रु०	मैदानी क्षेत्र रु०	पर्वतीय क्षेत्र रु०
1	2	3	4	5
केवल आवास के लिए	5,200	5,680	9,235	12,380
आवास जमा सहायक सुविधाओं जैसे भोजन कक्ष, रसोई घर, जन-सुविधा ब्लॉक इत्यादि के लिए	7,150	7,790	12,775	17,125

सातवीं योजना में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास पर कार्यकारी दल ने यह सिफारिश की थी कि इस योजना के लिए केन्द्रीय अनुदान 100 प्रतिशत होना चाहिए और इस योजना का विस्तार लड़कों के छात्रावासों के लिए भी किया जाना चाहिए। उन्होंने यह सुझाव भी दिया था कि देश के प्रत्येक जिले के मुख्यालय में कम से कम लड़कों के लिए दो छात्रावास और लड़कियों के लिए एक छात्रावास स्थापित किया जाना चाहिए।

बुक-बैंक

28. यह योजना मेडिकल/इंजीनियरिंग के पाठ्यक्रमों में अध्ययन कर रहे अनु० जाति/जन जाति के छात्रों के लिए 1978-79 में आरम्भ की गई थी। इस समय पाठ्य-पुस्तकों का एक सेट खरीदने के लिए कुल लागत के रूप में 5,000 रुपए निश्चित किए गए हैं। पुस्तकों का एक सेट चार छात्रों द्वारा प्रयोग के लिए रखा गया है। पुस्तकों के एक सेट की आयु-अवधि 3 वर्ष तय की गई है जिसका अर्थ यह है कि प्रत्येक तीसरे वर्ष पुस्तकों के नए सेट खरीदने के लिए निधि उपलब्ध कराई जाएगी। यह योजना मेडिकल और इंजीनियरिंग पाठ्यक्रमों में अध्ययन कर रहे अ० जा०/अ० ज० जा० के छात्रों के लिए बहुत लाभप्रद सिद्ध हुई है। छठी योजना में इस योजना के लिए 3 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया था। परन्तु दुर्भाग्यवश इस अवधि में व्यय केवल 0.96 करोड़ रुपए ही हुआ था। सातवीं पंचवर्षीय योजना में इस योजना के लिए 2.25 करोड़ रुपए के परिव्यय का प्रावधान किया गया है। वर्ष 1985-86 में 0.55 करोड़ रुपए का आबंटन किया गया था जिसमें से केवल 0.31 करोड़ रुपए का व्यय किया गया था। उस वर्ष इस योजना के अधीन अ० जा०/अ० ज० जा० के लाभभोगियों की संख्या 16,822 थी। 1986-87 में 0.5 करोड़ रुपए का आबंटन किया गया था। यह बताया गया था कि अन्य विषयों के पाठ्यक्रमों जैसे कृषि और विधि का समावेश करने और अ० जा०/अ० ज० जा० के प्रत्येक छात्र को पाठ्य-पुस्तकों का सेट उपलब्ध कराने के लिए प्रस्ताव योजना आयोग को अनुमोदन के लिए भेजे गए हैं।

अस्वच्छ व्यवसायों में लगे व्यक्तियों के बच्चों के लिए मैट्रिक-पूर्व छात्रवृत्तियां

29. इस योजना का मुख्य उद्देश्य यह है कि जो व्यक्ति अस्वच्छ व्यवसायों जैसे मल-सफाई कार्य, चमड़ा उतारने और रंगने के कार्य, में लगे हुए हैं उनके बच्चों के लिए उन्हें गंदगीपूर्ण और अस्वास्थ्यकर वातावरण, जिसमें उनके माता-पिता रह रहे हैं, से दूर रखकर अच्छे किस्म की शिक्षा उपलब्ध कराई जाए। इस योजना में कतिपय अन्तर्निहित दोष थे और इसलिए इसकी तरफ राज्य सरकारों का रुख संतोषजनक नहीं था। इस योजना में 1986-87 में उपयुक्त रूप से रूप-भेद किया गया था। इस योजना में 1986-87 से सफाई कर्मचारियों के ऐसे परिवारों के बच्चों को भी शामिल किया गया है जो मेहतर के कार्य से परम्परागत रूप से जुड़े हुए हैं। इस योजना में किए गए अन्य संशोधन नीचे दिए गए हैं —

(1) छात्रवृत्ति की राशि 145 रुपए प्रति माह से बढ़ाकर कक्षा 6 से 8 तक के लिए 200 रुपए प्रति माह और कक्षा 9 से 10 तक के लिए 250 रुपए प्रति माह करना।

(2) आय की अधिकतम सीमा 500 रुपए प्रति माह से बढ़ाकर 1000 रुपए प्रति माह करना।

(3) जहां छात्रावास सुविधाएं उपलब्ध न हों, छात्रावास भवन के लिए किराए की व्यवस्था करना।

(4) जहां बच्चों की बड़ी संख्या हो वहां एक पूर्ण-कालिक छात्रावास वार्डन की नियुक्ति करने के लिए प्रबन्ध करना, अन्यथा कुछ अतिरिक्त पारिश्रमिक देकर विद्यालय के किसी एक शिक्षक को छात्रावास के वार्डन के रूप में नियुक्त करना ।

30. यह बताया गया है कि जैसी राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में परिकल्पना की गई है इस योजना का विस्तार, कक्षा 1 से 5 तक के बच्चों की शामिल करके और इस योजना के अधीन विद्यमान अध्येताओं की भी शामिल करके, बढ़ाने का प्रश्न योजना आयोग के पास भेजा गया है । इस योजना के अधीन कक्षा 1 से 5 तक के बच्चों को शामिल किया जाना योजना आयोग द्वारा पहले ही अनुमोदित किया जा चुका था परन्तु इसे वित्त मंत्रालय से सहमति प्राप्त नहीं हुई थी । सातवीं पंचवर्षीय योजना में इस योजना के अधीन 10.32 करोड़ रुपए का परिव्यय अनुमोदित किया गया है । वर्ष 1985-86 में इस योजना पर 2.50 करोड़ रुपए के आबंटन के समक्ष केवल 0.25 करोड़ रुपए व्यय किए गए थे और इससे लाभ प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या 9,286 थी । वर्ष 1986-87 में इस योजना में संशोधनों के साथ 1.82 करोड़ रुपए का कुल आबंटन किए जाने और लाभ प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या 8,948 होने की आशा थी ।

विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में दाखिले

31. शिक्षा मंत्रालय (अब मानव संसाधन विकास मंत्रालय) द्वारा पहले जारी किए गए मार्ग-निर्देशों के अनुसार राज्य सरकारों ने अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत और जनजातियों के लिए 5 प्रतिशत के एक सुस्पष्ट आरक्षण के अतिरिक्त सभी शैक्षिक और तकनीकी संस्थानों में 20 प्रतिशत स्थान आरक्षित किए थे । ये आरक्षण इन दो वर्गों के उम्मीदवारों के बीच अदला-बदली किए जाने योग्य हैं । उस मंत्रालय ने यह सुझाव भी दिया था कि यदि उनके लिए आरक्षित स्थान बिना भरे शेष रहते हैं तो उन्हें प्राप्त अंकों में और छूट दी जा सकती थी । अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सत्ताईसवीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की गई थी कि देश की जनसंख्या में अनुसूचित जातियों के अनुपात के अनुसार विभिन्न शैक्षिक और तकनीकी संस्थानों में उनके लिए आरक्षित स्थानों की संख्या 5 प्रतिशत से बढ़ाकर 7.5 प्रतिशत की जानी चाहिए । यह प्रसन्नता की बात है कि अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण का प्रतिशत बढ़ाकर अगस्त 1982 में 7.5 प्रतिशत कर दिया गया था ।

32. जनवरी, 1979 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा एक अनुसूचित जाति, जनजाति प्रकोष्ठ स्थापित किया गया था । यह प्रकोष्ठ अन्य बातों के साथ-साथ शिक्षण और शिक्षण से इतर पदों पर आरक्षण द्वारा अनुसूचित जाति/जनजाति के उम्मीदवारों के विषय-वार दाखिलों/नियुक्तियों के बारे में सूचना वार्षिक आधार पर नियमित रूप से एकत्र करता है । वास्तविक स्थिति के बारे में ऐसी सूचना 1977-78 से लेकर आगे के वर्षों में एकत्र की गई थी और उसका विश्लेषण किया गया था । विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने जनवरी 1985 में "विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए सुविधाएं" नामक एक दस्तावेज प्रकाशित किया था । इस दस्तावेज में 1978-79 में विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के वास्तविक दाखिले और भर्ती की स्थिति पर एक विश्लेषण दिया गया था ।

33. 1978-79 में स्नातक-पूर्व/स्नातकोत्तर स्तरों पर और व्यावसायिक पाठ्य-क्रमों में छात्रों की कुल वास्तविक संख्या और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के छात्रों की संख्या उनके संबंधित प्रतिशत सहित नीचे दी गई है —

सारणी 9

क्रम सं०	पाठ्यक्रम	कुल	अनुसूचित जाति (प्रतिशत)	अनुसूचित जनजाति (प्रतिशत)
1	2	3	4	5
स्नातक-पूर्व				
1.	कला	9,37,028	91,721(9.85)	23,124(2.48)
2.	विज्ञान	4,36,000	19,369(4.44)	3,559(0.83)
3.	वाणिज्य	4,53,472	21,398(4.76)	5,722(1.27)
स्नातकोत्तर				
4.	कला	1,36,004	13,797(10.54)	2,526(1.93)
5.	विज्ञान	47,359	1,342(2.93)	365(0.79)
6.	वाणिज्य	32,449	1,676(5.42)	372(1.29)

(जारी)

1	2	3	4	5
शिक्षा				
	7. स्नातक-पूर्व	63,660	3,782(6.24)	789(1.30)
	8. स्नातकोत्तर	4,139	136(3.42)	27(0.68)
इंजीनियरिंग/तकनीकी				
	9. स्नातक-पूर्व	99,569	5,454(6.16)	1,061(1.20)
	10. स्नातकोत्तर	5,151	84(1.92)	8(0.18)
चिकित्सा				
	11. स्नातक-पूर्व	95,289	7,266(9.98)	1,324(1.82)
	12. स्नातकोत्तर	10,305	287(3.69)	39(0.50)
कृषि				
	13. स्नातक-पूर्व	27,102	1,993(8.39)	160(0.71)
	14. स्नातकोत्तर	6,018	201(4.48)	39(0.87)
पशु चिकित्सा विज्ञान				
	15. स्नातक-पूर्व	5,589	266(7.02)	44(1.14)
	16. स्नातकोत्तर	1,002	9(1.37)	—
विधि				
	17. स्नातक-पूर्व	1,65,317	10,475(7.47)	1,851(1.32)
	18. स्नातकोत्तर	3,085	95(3.97)	4(0.17)
अन्य				
	19. स्नातक-पूर्व	11,361	671(5.93)	48(0.42)
	20. स्नातकोत्तर	3,550	126(3.56)	20(0.56)
	योग .	25,43,449	1,80,058(7.08)	41,082(1.62)

34. सभी स्नातक-पूर्व, स्नातकोत्तर, व्यावसायिक और तकनीकी पाठ्यक्रमों के लिए दाखिलों के राज्यवार संयुक्त आंकड़े अनुलग्नक 4 में देखे जा सकते हैं। 1977-78 और 1978-79 के आंकड़ों से तुलना के आधार पर स्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति/जनजाति के दाखिलों में वृद्धि अनुलग्नक 5 में और स्नातकोत्तर स्तर पर वृद्धि अनुलग्नक-6 में दर्शाई गई है। अनुलग्नक 5 से यह ज्ञात होगा कि स्नातक स्तर पर (व्यावसायिक और तकनीकी पाठ्यक्रमों सहित) अनुसूचित जाति के छात्रों का प्रतिशत पूरे देश का मिलाकर 1977-78 में 7.50 प्रतिशत से घट कर 1978-79 में 7.33 प्रतिशत हो गया था। दूसरी ओर अनुसूचित जनजातियों का प्रतिशत 1977-78 में 1.57 प्रतिशत से थोड़ा सा बढ़कर 1978-79 में 1.70 प्रतिशत हो गया था। अनुलग्नक 6 यह दर्शाता है कि स्नातकोत्तर स्तर (व्यावसायिक और तकनीकी पाठ्यक्रमों सहित) अनुसूचित जातियों के छात्रों का प्रतिशत 1977-78 में 7.53 प्रतिशत से थोड़ा बढ़कर 7.62 प्रतिशत हो गया था। अनुसूचित जनजातियों के मामले में भी प्रतिशत 1977-78 में 1.28 प्रतिशत से बढ़ कर 1978-79 में 1.46 प्रतिशत हो गया था। यह सुझाव दिया जाता है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का अनुसूचित जाति और जनजाति प्रकोष्ठ दाखिलों के आंकड़े अधिक तत्परता से संकलित करने और प्रकाशित करने का प्रयास करें, क्योंकि इस समय किसी एक शैक्षिक वर्ष से सांख्यिकीय आंकड़ों में समय का अन्तराल अपेक्षाकृत अत्यधिक है। भारत सरकार, राज्य सरकारों और विश्वविद्यालयों को अध्ययन के विभिन्न स्तरों और विभिन्न पाठ्यक्रमों में अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों की संख्या बढ़ाने के लिए भी आवश्यक कदम उठाने चाहिएं।

अनुलग्नक 1

1981 की साक्षरता दरें

सभी समुदायों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन जातियों तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को छोड़ कर शेष सभी समुदायों के लिए

क्रम सं०	भारत/राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र	सभी समुदाय	अनुसूचित जातियां	अनुसूचित जन जातियां	अ०जा० तथा अ० ज० जा० को छोड़कर शेष समुदाय
1	2	3	4	5	6
	भारत	36.23	21.38	16.33	41.30
	राज्य				
1.	आन्ध्र प्रदेश	29.94	17.64	7.82	33.91
2.	असम	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
3.	बिहार	26.20	10.40	16.99	30.17
4.	गुजरात	43.70	39.78	21.14	48.14
5.	हरियाणा	36.14	20.14	—	30.90
6.	हिमाचल प्रदेश	42.48	31.50	25.93	47.37
7.	जम्मू-काश्मीर	26.69	22.44	—	27.05
8.	कर्नाटक	38.46	20.59	20.14	42.05
9.	केरल	70.74	55.96	31.79	75.32
10.	मध्य प्रदेश	27.87	18.97	10.68	36.15
11.	महाराष्ट्र	47.18	35.55	22.29	51.55
12.	मणिपुर	41.35	33.63	39.74	42.11
13.	मेघालय	34.08	25.78	31.55	44.97
14.	नगालैण्ड	42.57	—	40.31	54.30
15.	उड़ीसा	34.23	22.41	13.96	44.22
16.	पंजाब	40.86	23.86	—	47.11
17.	राजस्थान	24.38	14.04	10.27	29.31
18.	सिक्किम	34.05	28.06	33.13	34.84
19.	तमिलनाडु	46.76	29.67	20.46	34.84
20.	त्रिपुरा	42.12	33.89	23.07	53.93
21.	उत्तर प्रदेश	27.16	14.96	20.45	30.45
22.	पश्चिम बंगाल	40.94	24.37	13.21	48.12
	संघ राज्य क्षेत्र				
23.	अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह . .	51.56	—	31.11	54.31
24.	अरुणाचल प्रदेश	20.79	37.14	14.04	36.39
25.	चण्डीगढ़	64.79	37.07	—	69.33
26.	दादरा तथा नागर हवेली	26.67	51.20	16.86	64.41
27.	दिल्ली	61.54	39.30	—	66.44
28.	गोवा, दमण और दीव	56.66	38.38	26.48	57.38
29.	लक्षद्वीप	55.07	—	53.13	84.57
30.	मिजोरम	59.88	84.44	59.63	63.53
31.	पांडिचेरी	55.85	32.36	—	60.32

अनुलग्नक 2

अनुसूचित जाति के छात्रों की पढ़ाई छोड़ने की दरें 1981-82

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	प्राथमिक स्तर (कक्षा 1—5)			मिडिल स्तर (कक्षा 6—8)	माध्यमिक स्तर (कक्षा 1-10)
		लड़के	लड़कियां	योग	योग	योग
1	2	3	4	5	6	7
राज्य						
1.	आन्ध्र प्रदेश . .	63.14	68.17	65.14	81.66	85.91
2.	असम . . .	56.96	61.76	58.93	78.99	69.80
3.	बिहार . . .	70.38	77.70	72.07	83.01	89.92
4.	गुजरात . .	55.18	61.09	57.47	67.06	75.51
5.	हरियाणा . .	23.50	40.52	28.12	57.37	78.89
6.	हिमाचल प्रदेश . .	28.98	29.29	29.10	55.46	80.91
7.	जम्मू-काश्मीर . .	51.77	45.91	49.84	69.09	79.35
8.	कर्नाटक . .	67.83	75.12	70.98	71.17	88.77
9.	केरल . . .	0.0	0.0	0.0	23.71	49.80
10.	मध्य प्रदेश . .	51.91	65.83	56.13	69.13	92.99
11.	महाराष्ट्र . .	54 89	68.02	60.50	67.86	78.61
12.	मणिपुर . .	89.44	91.52	90.45	88.81	93.00
13.	मेघालय . . .	75.63	63.38	70.69	84.25	86.73
14.	नागालैण्ड . .	—	—	—	—	—
15.	उड़ीसा . . .	69.53	77.27	72.37	90.71	93.80
16.	पंजाब . . .	69.08	76.57	72.53	68.84	84.46
17.	राजस्थान . .	63.60	77.86	65.94	78.88	83.14
18.	सिक्किम . . .	66.97	67.02	66.99	—	—
19.	तमिलनाडु . .	32.53	45.88	38.54	72.55	84.89
20.	त्रिपुरा . .	61.10	63.60	62.61	83.80	92.04
21.	उत्तर प्रदेश . .	44.88	58.58	48.33	76.98	86.95
22.	पश्चिम बंगाल . .	74.36	78.41	75.72	83.95	91.81
संघ राज्य क्षेत्र						
23.	अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह	—	—	—	—	—
24.	अरुणाचल प्रदेश . .	93.51	96.07	94.42	—	—
25.	चण्डीगढ़ . .	0.0	0.0	0.0	0.0	70.69
26.	दादरा एवं नागर हवेली .	28.12	47.94	38.68	71.42	91.56
27.	दिल्ली . . .	32.58	55.68	42.63	62.99	51.10

(जारी)

1	2	3	4	5	6	7
28.	गोवा, दमण और दीव .	42.47	47.25	44.43	69.27	81.93
29.	लक्षद्वीप . . .	—	—	—	—	—
30.	मिज़ोरम . .	—	—	—	—	—
31.	पांडिचेरी . .	1.38	27.89	14.17	63.26	83.68
	भारत .	56.43	64.24	59.21	74.76	85.72

स्रोत --मानव संसाधन विकास मंत्रालय (शिक्षा विभाग)

$$\text{प्राथमिक स्तर पर पढ़ाई छोड़ने की दर} = \frac{\left\{\begin{array}{l}\text{पूर्व के 4 वर्षों के दौरान कक्षा 1 में दाखिलों की संख्या—उस}\\ \text{वर्ष के दौरान कक्षा 5 में दाखिलों की संख्या}\end{array}\right\} \times 100}{\text{पूर्व के 4 वर्षों के दौरान कक्षा 1 में दाखिलों की संख्या}}$$

अनुलग्नक 3

अनुसूचित जनजाति के छात्रों की पढ़ाई छोड़ने की दरें 1981-82

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	प्राथमिक स्तर (कक्षा 1-5)			मिडिल स्तर (कक्षा 1-8)	माध्यमिक स्तर (कक्षा 1-10)
		लड़के	लड़कियां	योग	योग	योग
1	2	3	4	5	6	7
राज्य						
1.	आन्ध्र प्रदेश . .	64.83	73.81	68.10	85.40	91.01
2.	असम . .	73.53	79.83	76.22	88.37	71.34
3.	बिहार . . .	78.89	83.91	80.58	86.06	92.66
4.	गुजरात . .	69.35	78.27	72.94	77.11	85.79
5.	हरियाणा . .	--	--	--	--	--
6.	हिमाचल प्रदेश . .	39.97	49.28	43.05	61.99	80.45
7.	जम्मू-काश्मीर . .	--	--	--	--	--
8.	कर्नाटक . .	48.14	48.09	48.12	26.98	45.53
9.	केरल . . .	39.04	34.64	37.16	45.10	69.50
10.	मध्य प्रदेश . .	66.46	80.39	70.65	84.53	97.13
11.	महाराष्ट्र . .	70.41	80.18	74.22	85.08	90.55
12.	मणिपुर . . .	85.69	84.89	85.36	90.84	91.82
13.	मेघालय . . .	76.86	76.62	76.74	84.75	89.81
14.	नगालैण्ड . .	75.09	76.59	75.75	87.84	91.04
15.	उड़ीसा . . .	75.39	83.36	77.99	91.23	94.04
16.	पंजाब . . .	--	--	--	--	--
17.	राजस्थान . .	69.35	84.90	71.48	82.80	86.07
18.	सिक्किम . . .	--	--	--	--	--
19.	तमिलनाडु . .	34.68	41.68	37.59	72.01	85.43
20.	त्रिपुरा . . .	67.61	73.80	69.76	87.97	93.93
21.	उत्तर प्रदेश ! . .	0.0	5.62	0.0	53.69	82.02
22.	पश्चिम बंगाल . .	70.84	65.64	69.27	87.04	93.33
संघ राज्य क्षेत्र						
23.	अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह	50.10	39.17	45.74	43.64	74.91
24.	अरुणाचल प्रदेश . .	77.22	78.18	77.53	87.91	92.93
25.	चण्डीगढ़ . . .	--	--	--	--	--
26.	दादरा एवं नागर हवेली .	73.60	81.65	76.43	93.64	98.17
27.	दिल्ली . . .	--	--	--	--	--
28.	गोवा, दमण और दीव .	63.19	73.33	66.38	87.31	91.80
29.	लक्षद्वीप . . .	1.03	16.25	8.01	51.20	66.39
30.	मिजोरम . .	61.61	64.13	62.83	67.86	80.63
31.	पांडिचेरी . .	--	--	--	--	--
	भारत .	71.57	78.43	74.00	84.99	91.65

स्रोत--मानव संसाधन विकास मंत्रालय (शिक्षा विभाग)

अनुलग्नक 4

वर्ष 1978-79 के दौरान अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के छात्रों के स्नातक से नीचे, स्नातकोत्तर, व्यावसायिक तथा तकनीकी स्तर के सभी पाठ्यक्रमों में दाखिले के राज्यवार आंकड़े

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	स्नातक + स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम				
		कुल	अ० जा०	अ० जा० का प्रतिशत	अ० ज० जाति	अ० ज० जाति का प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7
राज्य						
1.	आन्ध्र प्रदेश . .	1,36,490	11,595	8.64	1,306	0.97
2.	असम . . .	46,703	1,859	4.81	1,570	4.66
3.	बिहार . . .	1,25,679	4,270	3.57	6,425	5.37
4.	गुजरात . .	1,69,546	10,692	6.31	5,556	3.28
5.	हरियाणा . .	58,723	3,217	5.48	33	0.06
6.	हिमाचल प्रदेश . .	11,118	541	4.87	232	2.09
7.	जम्मू-काश्मीर . .	18,087	203	1.14	1	0.01
8.	कर्नाटक . . .	1,71,878	10,624	6.18	1,816	1.06
9.	केरल . . .	97,539	4,600	4.72	461	0.47
10.	मध्य प्रदेश . .	1,93,901	11,396	5.94	6,500	3.39
11.	महाराष्ट्र . .	3,24,704	27,624	8.81	5,699	1.82
12.	मणिपुर . .	6,140	36	0.62	334	5.78
13.	मेघालय . . .	4,873	145	2.98	2,504	51.39
14.	नगालैंड . .	830	—	—	680	81.93
15.	उड़ीसा . . .	45,798	1,433	3.13	866	1.89
16.	पंजाब . . .	93,120	7,810	8.39	39	0.04
17.	राजस्थान . .	1,34,996	4,903	4.39	3,001	2.68
18.	सिक्किम . .	102	—	—	—	—
19.	तमिलनाडु . .	1,62,285	12,357	7.62	201	0.12
20.	त्रिपुरा . . .	4,458	312	7.10	285	6.39
21.	उत्तर प्रदेश . .	4,06,747	44,232	11.46	988	0.26
22.	पश्चिम बंगाल . .	2,29,155	17,708	8.29	1,396	0.65
संघ राज्य क्षेत्र						
23.	अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह	419	—	—	13	3.10
24.	अरुणाचल प्रदेश . .	222	—	—	171	77.03
25.	चंडीगढ़ . .	15,397	744	4.83	117	0.76
26.	दादरा व नागर हवेली .	—	—	—	—	—
27.	दिल्ली . . .	74,291	3,621	4.88	164	0.22
28.	गोवा, दमण तथा दीव .	6,928	32	0.46	11	0.16
29.	लक्षद्वीप .	—	—	—	—	—
30.	मिजोरम . .	835	8	0.96	713	85.39
31.	पांडिचेरी . .	2,485	96	3.86	—	—
	भारत .	25,43,449	1,80,058	7.36	41,082	1.68

अनुलग्नक 5

वर्ष 1978–79 के दौरान स्नातक स्तर पर अनुसूचित जातियों/जनजातियों के दाखिले में वृद्धि

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	कुल से अ० जा० के दाखिलों का प्रतिशत			कुल से अ० ज० जा० के दाखिलों का प्रतिशत		
		1977–78	1978–79	दाखिले में वृद्धि	1977–78	1978–79	दाखिले में वृद्धि
1	2	3	4	5	6	7	8
	राज्य						
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	7.08	8.49	+1.41	0.71	0.96	+0.25
2.	असम	5.03	4.74	–0.29	6.93	3.89	–3.04
3.	बिहार	3.61	3.62	+0.01	3.13	5.71	+2.58
4.	गुजरात . . .	6.00	6.49	+0.49	3.88	3.32	–0.56
5.	हरियाणा . . .	4.63	5.65	+1.02	0.09	0.06	–0.03*
6.	हिमाचल प्रदेश . . .	4.06	5.03	+0.97	2.89	1.92	–0.97
7.	जम्मू-काश्मीर . . .	1.95	1.11	–0.84	0.03	0.01	–0.02*
8.	कर्नाटक	5.86	6.23	+0.37	0.62	1.07	+0.45
9.	केरल	3.85	4.84	+0.99	0.48	0.48	शून्य
10.	मध्य प्रदेश . . .	5.95	6.00	+0.05	1.10	3.46	+2.36
11.	महाराष्ट्र . . .	9.45	8.43	–0.99	1.96	1.79	–0.17
12.	मणिपुर . . .	1.95	0.62	–1.33	10.91	5.78	–5.13
13.	मेघालय	2.59	3.16	+0.57	56.28	50.59	–5.69
14.	नागालैंड . . .	—	—	—	85.40	81.93	–3.47
15.	उड़ीसा . . .	3.45	3.12	–0.33	3.13	1.97	–1.16
16.	पंजाब	8.69	8.64	–0.05	0.03	0.05	+0.02*
17.	राजस्थान . . .	4.77	4.38	–0.39	2.79	2.62	–0.17
18.	सिक्किम . . .	—	—	—	—	—	—
19.	तमिलनाडु . . .	7.37	7.69	+0.32	0.53	0.13	–0.40
20.	त्रिपुरा	6.29	7.00	+0.71	5.11	6.39	+1.28
21.	उत्तर प्रदेश . . .	10.80	11.41	+0.61	0.18	0.25	+0.07
22.	पश्चिम बंगाल . . .	10.98	8.52	–2.46	1.21	0.69	–0.52
	संघ राज्य क्षेत्र						
23.	अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह .	—	—	—	उ० नहीं	3.40	उ० नहीं
24.	अरुणाचल प्रदेश . . .	—	—	—	84.34	77.03	–7.31
25.	चंडीगढ़ . . .	3.89	5.16	+1.27	0.63	0.82	+0.19
26.	दादरा व नागर हवेली . .	—	—	—	—	—	—
27.	दिल्ली	5.01	5.08	+0.07	0.52	0.15	–0.37
28.	गोवा, दमण तथा दीव . .	0.71	0.46	–0.25	0.05	0.18	+0.13
29.	लक्षद्वीप	—	—	—	—	—	—
30.	मिजोरम . . .	उ० नहीं	0.96	उ० नहीं	उ० नहीं	85.39	उ० नहीं
31.	पांडिचेरी . . .	उ० नहीं	4.15	उ० नहीं	—	—	—
	भारत .	7.50	7.33	–0.17	1.57	1.70	+0.13

स्रोत– विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए सुविधाओं पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की रिपोर्ट 1985, पृष्ठ 50–51

*अनुसूचित जनजातियों की कोई जनसंख्या नहीं है।

अनुलग्नक 6

वर्ष 1978-79 के दौरान स्नातकोत्तर स्तर पर अनुसूचित जातियों/जनजातियों के दाखिले में वृद्धि

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	कुल में अ० जा० के दाखिलों का प्रतिशत			कुल में अ० ज० जा० के दाखिलों का प्रतिशत		
		1977-78	1978-79	दाखिले में वृद्धि	1977-78	1978-79	दाखिले में वृद्धि
1	2	3	4	5	6	7	8
	राज्य						
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	7.07	8.54	+1.47	0.42	0.93	+0.51
2.	असम	4.52	3.26	—1.26	5.56	5.47	-0.09
3.	बिहार	1.46	3.22	+1.76	उ० नहीं	4.93	—
4.	गुजरात . . .	2.39	2.49	+0.10	1.50	2.28	+0.78
5.	हरियाणा . . .	4.63	3.55	+1.08	1.58	—	-1.58
6.	हिमाचल प्रदेश . . .	उ० नहीं	2.51	—	उ० नहीं	4.46	—
7.	जम्मू-काश्मीर . . .	1.06	0.76	—0.30	—	—	—
8.	कर्नाटक . . .	4.25	5.26	+1.01	0.50	0.87	+0.37
9.	केरल	6.43	3.74	—2.69	0.49	0.39	-0.10
10.	मध्य प्रदेश . . .	5.46	5.52	0.06	2.19	2.87	+0.68
11.	महाराष्ट्र . . .	11.67	12.41	+0.74	2.46	2.06	-0.40
12.	मणिपुर . . .	—	—	—	—	—	—
13.	मेघालय . . .	0.51	1.26	+0.75	35.75	59.62	+23.87
14.	नागालैंड . . .	—	—	—	—	—	—
15.	उड़ीसा	3.46	3.25	-0.21	2.11	1.62	-0.49
16.	पंजाब	4.26	5.60	+1.34	—	—	—
17.	राजस्थान . . .	5.19	4.47	-0.72	4.93	3.24	-1.69
18.	सिक्किम . . .	—	—	—	—	—	—
19.	तमिलनाडु . . .	6.48	6.87	+0.39	0.80	0.01	-0.79
20.	त्रिपुरा	—	—	—	—	—	—
21.	उत्तर प्रदेश . . .	10.93	11.73	+0.80	0.24	0.27	+0.03
22.	पश्चिम बंगाल . . .	6.20	3.92	-2.28	0.10	0.04	-0.06
	संघ राज्य क्षेत्र						
23.	अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह .	—	—	—	—	—	—
24.	अरुणाचल प्रदेश . . .	—	—	—	—	—	—
25.	चंडीगढ़ . . .	10.06	3.62	-6.44	—	0.55	+0.55
26.	दादरा व नागर हवेली . .	—	—	—	—	—	—
27.	दिल्ली	3.27	3.15	-0.12	1.13	0.86	-0.27
28.	गोवा, दमण तथा दीव . .	—	1.25	+1.25	—	—	—
29.	लक्षद्वीप	—	—	—	—	—	—
30.	मिजोरम . . .	—	—	—	—	—	—
31.	पांडिचेरी . . .	—	—	—	—	—	—
	भारत .	7.53	7.62	+0.09	1.28	1.46	+0.18

स्रोत– विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए सुविधाओं पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की रिपोर्ट 1985, पृष्ठ 52-53

अध्याय 5

अनुसूचित जातियों का आर्थिक विकास

अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना

अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 1971 में लगभग 8.60 करोड़ की तुलना में 1981 की जनगणना के अनुसार लगभग 10.80 करोड़ थी और यह देश की कुल जनसंख्या का 1971 के 14.60 प्रतिशत की तुलना में 1981 में 15.47 प्रतिशत थी। ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली अनुसूचित जातियों की जनसंख्या का अनुपात 1971 में 88 प्रतिशत की तुलना में 1981 में 84 प्रतिशत था। शहरी क्षेत्रों में रहने वाली अनुसूचित जातियों का अनुपात उन्हीं वर्षों के दौरान 12 प्रतिशत से बढ़कर 16 प्रतिशत हो गया था जो देश की कुल जनसंख्या में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में प्रवास के स्तर की तुलना में अनुसूचित जातियों के प्रवास का उच्च स्तर होने का सूचक है (शहरी जनसंख्या का अनुपात 1981 में 20 प्रतिशत की तुलना में 1981 में 23.7 प्रतिशत)।

2. इस अवधि के दौरान अनुसूचित जातियों के व्यावसायिक विभाजन में भी कुछ परिवर्तन हुआ है। मजदूरों का अनुपात 1971 में 36.14 प्रतिशत की तुलना में 1981 में 39.58 प्रतिशत था। तथापि, इस तथ्य की दृष्टि से कि स्त्रियों के जनसंख्या के वर्गीकरण के आधार में परिवर्तन होता रहा है और उनके आंकड़े तुलना करने योग्य नहीं हो सकते हैं। उक्त परिवर्तन को पुरुष मजदूरों की संख्या के विश्लेषण द्वारा अधिक अच्छी तरह समझा जा सकता है। विभिन्न श्रेणियों के अनुसार 1981 में पुरुष मजदूरों का विभाजन नीचे की सारणी में दिया गया है —

सारणी 1

1981 की जनगणना में अनुसूचित जाति के पुरुष मजदूरों (मुख्य+सीमांत) का व्यावसायिक विभाजन

कुल ग्रामीण शहरी	कृषक	खेतिहर मजदूर	घरेलू उद्योग*	अन्य मजदूर	योग
1	2	3	4	5	6
कुल	32.12	41.75	3.20	22.93	100
ग्रामीण	36.88	46.67	3.00	13.45	100
शहरी	4.16	12.87	4.35	78.62	100

*निर्माण, संसाधन, सेवा तथा मरम्मत के घरेलू उद्योग।

+अन्य मजदूरों में फैक्टरी मजदूर, वन रोपण मजदूरों, वाणिज्य व्यापार, परिवहन, खनन, भवन निर्माण, राजनीतिक अथवा सामाजिक सेवा, सरकारी सेवा, नगर पालिका सेवा, अध्यापन, पुरोहितार्थ, मनोरंजन कला आदि के व्यवसाय शामिल हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों में पुरुष कृषकों की संख्या 1971 के 35.39 प्रतिशत से बढ़कर 1981 में 36.88 प्रतिशत हो गई थी जो उन संचित लाभों की सूचक है जो अनुसूचित जाति व्यक्तियों को भू-धारण अधिकार प्रदान किए जाने, भूमि वितरण आदि के कारण प्राप्त हुए थे इसकी पुष्टि उसी अवधि के दौरान खेतिहर मजदूरों का अनुपात 49.65 प्रतिशत से बढ़कर 46.67 प्रतिशत हो जाने की उल्लेखनीय गिरावट से भी होती है। घरेलू उद्योग में लगे लोगों का अनुपात 1971 के 3.2 प्रतिशत से थोड़ा सा घटकर 1981 में 3 प्रतिशत हुआ था। अन्य व्यवसायों पर निर्भर मजदूरों का अनुपात 1971 के 11.76 प्रतिशत से बढ़कर 1981 में 13.45 प्रतिशत हो गया था। शहरी क्षेत्रों में यह प्रवृत्ति अधिक मुख्य है, जिनमें घरेलू उद्योग पर निर्भर अनुसूचित जातियों का अनुपात 5.3 प्रतिशत से काफी गिरकर 4.35 प्रतिशत हो गया था जबकि अन्य व्यवसायों पर निर्भर रहने वालों का अनुपात 76.67 प्रतिशत से बढ़कर 78.62 प्रतिशत हो गया था।

3. अनुसूचित जातियों में निर्धनता रेखा से नीचे के लोगों का अनुपात सामान्य जनसंख्या में कुल मिलाकर औसत 1977-78 में 48 प्रतिशत की तुलना में लगभग 70 प्रतिशत आंका गया था। अनुसूचित जातियों का एक बहुत बड़ा अनुपात खेतिहर मजदूर होने के अतिरिक्त देश में लगभग सभी प्राथमिक चर्म कर्मकार तथा कुछ राज्यों में लगभग सभी मछुआरे अनुसूचित जातियों के हैं। इसी प्रकार लगभग सभी सिविल सफाई कर्मकार (सफाई कर्मचारी तथा मेहतर) और चमड़ा उतारने वाले तथा चर्मशोधक भी अनुसूचित जातियों के हैं। ऊपर वर्णित श्रेणियों में जो निर्धनता रेखा के नीचे की जनसंख्या में सर्वाधिक निर्धन हैं अधिकाँश भाग देश में अनुसूचित जातियों का है।

4. 1978-79 के अन्त तक अनुसूचित जाति के विकास के लिए प्राप्त निधि केवल राज्यों की वार्षिक योजना में पिछड़े वर्ग क्षेत्र के कल्याण के अंतर्गत दी गई थी जो समस्या के आकार की तुलना में बहुत थोड़ी थी। इस क्षेत्र को उन लाभों के पूरक के रूप में माना गया था जो सामान्य विकासीय कार्यक्रमों से अनुसूचित जातियों को प्राप्त होने थे। परन्तु भारत सरकार द्वारा बार-बार अनुदेश दिए जाने के बावजूद सामान्य विकासीय कार्यक्रमों से अनुसूचित जातियों को प्राप्त होने वाले लाभों का निर्धारण करना संभव नहीं था। पांचवीं पंचवर्षीय योजना की समाप्ति पर यह अनुभव किया गया था कि अनुसूचित

जातियों के विकास के लिए कार्यनीति आर्थिक तथा मानव संसाधन विकास के व्यापक प्रयासों पर आधारित करनी होगी ताकि वे समानता के आधार पर भाग ले सकें और सामान्य आर्थिक विकास के लाभों का युक्तियुक्त भाग प्राप्त कर सकें। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान परिवार तथा लाभभोगी अभिमुख विकासीय योजनाओं पर बल देते हुए विशेष संघटक योजना की कार्यनीति बनाई गई थी। विशेष संघटक योजना के लिए निधि चार स्रोतों अर्थात् (1) राज्य योजना से दी जाने वाली राशि, (2) केन्द्रीय क्षेत्र तथा केन्द्रीय प्रायोजित योजना से दी जाने वाली राशि, (3) विशेष केन्द्रीय सहायता और (4) संस्थागत वित्त से उपलब्ध कराई जाती थी। विशेष संघटक योजना में यह परिकल्पना की गई थी कि विकास के सामान्य क्षेत्रों में ऐसी योजनाओं का पता लगाया जाए जो अनुसूचित जातियों के लिए लाभदायक हों, प्रत्येक क्षेत्र के अधीन सभी कार्यक्रमों से निधि की मात्रा तय की जाए और ऐसे परिवारों की संख्या के रूप में विशिष्ट लक्ष्य निर्धारित किए जाएं जिन्हें निर्धनता रेखा पार करने में समर्थ बनाने के लिए प्रत्येक क्षेत्र के अधीन इन कार्यक्रमों से लाभ पहुंचाया जाना है। अनुसूचित जातियों की अधिक जनसंख्या वाले 20 राज्यों तथा 4 संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा विशेष संघटक योजनाएं बनाई गई थीं। कुल योजनाएं परिव्यय के परिप्रेक्ष्य के सम्बन्ध में विशेष संघटक योजना के लिए दी गई राशि तथा छठी योजना के दौरान विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में योजना अवधि के लिए किया गया वर्ष-वार तथा कुल व्यय अनुलग्नक 1 में देखा जा सकता है। अनुसूचित जातियों की जनसंख्या के प्रतिशत से विशेष संघटक योजना के प्रतिशत का राज्य-वार अनुपात (परिव्यय का अनुपात) भी उस अनुलग्नक में देखा जा सकता है।

5. उस अनुलग्नक से यह ज्ञात होगा कि छठी योजना के दौरान इन 20 राज्यों तथा 4 संघ राज्य क्षेत्रों में विशेष संघटक योजना के लिए दी गई राशि कुल मिलाकर 3614.66 करोड़ रुपए थी (इन राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के एक साथ मिलाकर कुल योजना परिव्यय का 7.67 प्रतिशत) / 15 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों, अर्थात् **असम, बिहार, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, सिक्किम, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, चंडीगढ़** और **दिल्ली** में परिव्यय का अनुपात 60 प्रतिशत से कम था। सातवीं योजना में अनुसूचित जातियों के विकास के कार्यकारी दल ने यह बताया था कि राज्यों के प्रमुख विभाग, धनराशियां चिह्नित करने के परिश्रम साध्य कार्य को टाल रहे थे, विशिष्ट रूप से अनुसूचित जातियों के विकास के लिए, और यह मुख्यत: उनकी अकर्मण्यता के कारण था। कार्यकारी दल ने इसे "मनोवृत्ति सम्बन्धी समस्या—उपयुक्त अनुकूलन की कमी" के रूप में परिभाषित किया था। सम्बद्ध राज्य सरकारों द्वारा अनुसूचित जातियों को जनसंख्या के प्रतिशत के अनुपात में विशेष संघटक योजना के अधीन धनराशि चिह्नित न किए जाने का मुख्य कारण यह बताया गया था कि राज्य योजना के कुल परिव्यय का एक बड़ा भाग विद्युत, सिंचाई, संचार मार्ग, परिवहन आदि क्षेत्रों में अविभाज्य था जो प्राय: कुल योजना परिव्यय के लगभग 60 प्रतिशत के बराबर था। कार्यकारी दल ने प्रासंगिक रूप से यह बताया था कि इन क्षेत्रों से लाभ, विशेष रूप से आर्थिक लाभ, स्वयमेव अथवा उल्लेखनीय रूप से अनुसूचित जातियों को इस कारण नहीं पहुंचते थे कि उनके पास बहुत ही अल्प साधन थे और इसलिए वे अपना उत्पादन बढ़ाने के लिए अथवा बाजार भेजकर बेचने के लिए अतिरिक्त उत्पादन करने के लिए इन आधारिक संरचनाओं का उपयोग करने में असमर्थ थे। दूसरी तरफ अनुसूचित जातियों के सदस्य इन क्षेत्रों के लाभों का उपयोग जिस सीमा तक भी करने की स्थिति में थे उनकी भी उपेक्षा की गई थी, क्योंकि विकासीय अधिकारियों की ओर से इस पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था। अत: कार्यकारी दल ने यह सुझाव दिया था कि इन क्षेत्रों के लाभों को अनुसूचित जातियों तक पहुंचाने के आशय से उपाय किया जाना आवश्यक था। यह केवल तभी संभव होगा जब इन क्षेत्रों से भौतिक तथा वित्तीय रूप में लाभों को चिह्नित कर दिया जायें। यह कहना सही नहीं था कि ये क्षेत्र कुल मिलाकर अविभाज्य थे। इसके विपरीत इन क्षेत्रों में ऐसी योजनाएं भी थीं जो विभाज्य थीं। इसके अतिरिक्त यदि इन क्षेत्रों के सम्बन्ध में अनुसूचित जातियों की आवश्यकताएं स्वीकार की गई होतीं तो इन क्षेत्रों में नई विभाज्य योजनाएं बनाना भी संभव था। यदि ऐसा प्रत्येक बड़े आधारिक संरचना क्षेत्र में अनुसूचित जातियों की आवश्यकताओं को तथा भौतिक और वित्तीय रूप में आवश्यकताओं की सीमा को ध्यानपूर्वक तय करके और उसी आधार पर इन क्षेत्रों से लाभों और परिव्ययों को विशेष संघटक योजना के लिए चिह्नित करके ईमानदारी और सहानुभूति के साथ किया जाता तो प्रत्येक राज्य की विशेष संघटक योजना को इस तथ्य के बावजूद भी आगे बढ़ाना संभव हो सकता था कि राज्य योजना परिव्यय का एक बड़ा भाग मुख्य बड़े अवस्थापन क्षेत्रों के लिए रखा गया था।

6. विभिन्न राज्यों में विशेष संघटक योजना के लिए जो परिव्यय दिया गया था वह भी पूर्ण रूप से उपयोग में नहीं लाया गया था। छठी योजना के दौरान इन 24 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में विशेष संघटक योजना पर पूरे देश के लिए कुल मिलाकर 2978.40 करोड़ रुपए व्यय हुआ था (विशेष संघटक योजना परिव्यय का 82.41 प्रतिशत)। सात राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों, अर्थात् **बिहार, जम्मू-काश्मीर, मणिपुर सिक्किम, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल** तथा **गोवा, दमण** और **दीव** में व्यय में काफी अपूर्णताएं थीं (20 प्रतिशत से अधिक)। ऊपर वर्णित कार्यकारी दल के अनुसार ऐसा विभिन्न कार्यक्रमों के अधीन बड़ी धनराशियों को खपाने में कार्यान्वियन में लगे अभिकरणों के संरचनात्मक रूप से कमजोर होने के कारण हुआ था। राज्य भी वित्तीय तथा अन्य दबावों के कारण प्रबोधन तंत्र को उपयुक्त रूप से मजबूत करने में कुछ धीमे थे। कुछ राज्यों में जिला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर, विशेष संघटक योजनाओं से सीधे, या तो उन्हें तैयार करने के स्तर पर अथवा

उनके कार्यान्वयन के स्तर पर संलग्न नहीं किए गए थे जिसके परिणामस्वरूप लक्ष्य अस्पष्ट हो गया था।

7. अनुसूचित जातियों के विकास पर सातवीं योजना के कार्यकारी दल द्वारा दी गई कुछ अन्य निम्नलिखित उल्लेखनीय बातें थीं——

(1) बहुत से राज्यों में विशेष संघटक योजना के कार्यान्वयन में पर्याप्त प्रगति नहीं हुई थी क्योंकि सम्बद्ध विभागों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों के अधीन भौतिक तथा वित्तीय लक्ष्यों को जिला तथा खण्ड स्तरों के लिए अलग अलग नहीं किया गया था और उन्हें सूचित नहीं किया गया था, जिसके लिए भारत सरकार द्वारा बार बार जोर दिया गया था।

(2) छठी योजना के अनुभव के आधार पर व्यवसाय की विभिन्न श्रेणियों के विकास पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए, विशेष रूप से खेतिहर मजदूर और सीमान्त कृषक, चर्म कर्मकार, मछुआरे तथा असुरक्षित समूहों पर। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर संकेन्द्रण समूह एवं संतृप्ति नीति का कार्यान्वयन, जो छठी योजना के दौरान तैयार की गई थी, अनुसूचित जातियों की जनसंख्या के आकार के आधार पर पहचान किए गए गांवों के संकेन्द्रण समूहों में कुल पात्र परिवारों का समावेश सुनिश्चित करने के लिए गहन रूप से किया जाना चाहिए।

(3) विभिन्न राज्यों में कृषि क्षेत्र में विशेष संघटक योजनाओं द्वारा बहुत बड़ी संख्या में लघु योजनाएं, जैसे लघु औजार (मिनी-किट) का वितरण, बीजों का वितरण, पौधों का वितरण, भूमि समतल करने, भूमि बांध, लघु सिंचाई, आदि सम्मिलित की गई थीं। परन्तु इसके लिए कोई एकीकृत योजना नहीं थी। बहुत से राज्यों में अनुसूचित जातियों की जोत के ढांचे की पूरी जानकारी नहीं थी। इस मूलभूत सांख्यिकीय आंकड़े के अभाव में ऐसे प्रयोजनयुक्त कार्यक्रमों को तैयार किया जाना कठिन होगा जिनका प्रभाव अनुसूचित जातियों के भूमि रखने वाले परिवारों पर पड़ सके।

(4) अनुसूचित जातियों के अधिकांश कृषकों के पास थोड़ी भूमि थी, जो छोटे-छोटे बहुत से भूखण्डों में बिखरी थी। कृषि विकास के लिए अभी तक अपनाए गए कार्यक्रमों में किसी बात के होते हुए भी अनुसूचित जाति के लघु तथा सीमांत कृषक अभी भी कृषि क्षेत्र में अपनाए गए बहुत से कार्यक्रमों की परिधि से बाहर थे। इस विशिष्ट क्षेत्र में विशेष संघटक योजना के लिए चिह्नित की गई निधि बहुत थोड़ी थी और क्षेत्रीय अभिकरणों द्वारा सुविचारित एकीकृत आयोजना तथा कार्यान्वयन के अभाव में इसका अभी तक वांछित प्रभाव उत्पन्न नहीं हुआ था। अधिकतम सीमा से फालतू बची भूमि के नए आबंटियों के मामलों में भी भूमि वितरण को प्रयोजनयुक्त योजनाओं के साथ नहीं जोड़ा गया था। प्रायः ऐसी अधिकतम सीमा से फालतू बची भूमि सीमान्त अथवा उप-सीमान्त किस्म की होती थी जिसे उपयुक्त रूप से आर्थिक कार्य के प्रयोग में लाए जाने से पूर्व विकसित किए जाने की आवश्यकता थी।

सातवीं योजना के दौरान विशेष संघटक योजना की कार्यनीति

8. सातवीं योजना के दौरान निर्धनता रेखा के नीचे रह रहे अनुसूचित जातियों के 50 प्रतिशत परिवारों की निर्धनता रेखा पार करने के लिए सहायता की जानी है। सहायता की योजना इस प्रकार तैयार की जानी है कि जिससे उतनी अतिरिक्त आय मिल सके जितनी सहायता पहुंचाए गए प्रत्येक परिवार को निर्धनता रेखा पार करने के लिए आवश्यक है। परिवारोन्मुख कार्यक्रमों का उद्देश्य अनुसूचित जातियों के सहायता पहुंचाए गए परिवारों को केवल निर्धनता रेखा से ऊपर उठाना नहीं है परन्तु यथासंभव लाभभोगियों को उनके पारंपरिक व्यवसायों से दूसरे व्यवसायों में हस्तांतरण में मदद करना भी है। छठी योजना के दौरान तैयार की गई संकेन्द्रण समूह योजना में सुधार किया जाना है ताकि उसमें अनुसूचित जातियों की बहु जनसंख्या वाले पहचान किए गए कुल संकेन्द्रण समूहों का समावेश सुनिश्चित किया जा सके। ऐसी संकेन्द्रण एवं संतृप्ति नीति में व्यक्तिगत परिवारों के तथा अनुसूचित जातियों की बस्तियों की आधारिक संरचना के विकास के लिए निवेश एकीकृत रीति से किया जाना है ताकि उसका प्रयोजनयुक्त प्रभाव हो सके। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए विकासीय कार्यकलापों में तेजी लाने के लिए इन समुदायों के लिए न्याय को 20-सूत्री कार्यक्रम 1986 में 11वें सूत्र के रूप में जोड़ा गया है।

सातवीं योजना के दौरान परिव्यय तथा व्यय

9. सातवीं पंचवर्षीय योजना में और 1985-86 तथा 1986-87 में विशेष संघटक योजना के अधीन किए गए परिव्यय के अनुपात (अनुसूचित जातियों की जनसंख्या के प्रतिशत से विशेष संघटक योजना के प्रतिशत का अनुपात) और 1985-86 तथा 1986-87 के दौरान विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में किए गए व्यय अनुलग्नक 2 में देखे जा सकते हैं। उससे यह ज्ञात होगा कि सातवीं योजना के दौरान इन 24 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में कुल मिलाकर विशेष संघटक योजना के लिए प्रस्तावित राशि 6205.67 करोड़ रुपए थी (इन राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को एक साथ मिलाकर कुल योजना परिव्यय का 7.76 प्रतिशत)। सातवीं योजना में 16 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों अर्थात, **असम, बिहार, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश,** महाराष्ट्र, उड़ीसा, **पंजाब, सिक्किम, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, चण्डीगढ़, दिल्ली** तथा **गोआ दमण** और **दीव** मे परिव्यय अनुपात 60 प्रतिशत से कम था। 1985-86 के दौरान 11 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों

अर्थात् बिहार, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, पंजाब, सिक्किम, उत्तर प्रदेश, दिल्ली तथा गोवा, दमण और दीव में परिव्यय अनुपात 60 प्रतिशत से कम था। जबकि वर्ष 1986-87 के दौरान 11 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों अर्थात् गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, पंजाब, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, दिल्ली तथा गोवा, दमण और दीव में परिव्यय अनुपात 60 प्रतिशत से कम था।

विशेष केन्द्रीय सहायता

10. विशेष केन्द्रीय सहायता की परिकल्पना राज्यों को विशेष संघटक योजनाओं के लिए एक पूरक के रूप में की गई थी और योजनाबद्ध ढांचे के आधार पर विशिष्ट योजनाओं से सहबद्ध नहीं की गई थी। पूरक के रूप में होने के कारण इसका लक्ष्य राज्य सरकारों को अपनी विशेष संघटक योजनाओं के लिए उससे बड़े परिव्यय की व्यवस्था करने के लिए प्रेरणा देना था। यह अनुसूचित जातियों के विकास के लिए राज्यों के प्रयासों की सम्पूर्णता के लिए आशयित थी और इसके लिए केवल यह शर्त रखी गई थी कि राज्यों द्वारा इस निधि का प्रयोग केवल आय उत्पन्न करने वाली विकास योजनाओं के लिए किया जाना था जिसमें उसी से सीधे सुसंगत प्रशिक्षण, सीधे सुसंगत सहायक सेवाएं तथा कार्यान्वियन, पर्यवेक्षण, प्रबोधन और मूल्यांकन के लिए प्रबन्ध भी शामिल था। विशेष केन्द्रीय सहायता राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों की जन-संख्या, राज्यों का पिछड़ापन और राज्य सरकारों की वार्षिक विशेष संघटक योजनाओं में यथा प्रतिबिम्बित उनके प्रयासों आदि के आधार पर वितरित की गई थी। इसके अधीन 1979-80 के दौरान 5 करोड़ रुपए का एक सांकेतिक प्रावधान किया गया था। छठी योजना के दौरान 600 करोड़ रुपए की धनराशि दी गई थी और सातवीं योजना के लिए 930 करोड़ रुपए का अस्थायी आवंटन किया गया था। छठी योजना अवधि, 1985-86 तथा 1986-87 के दौरान दी गई तथा उपयोग में लाई गई विशेष केन्द्रीय सहायता और सातवीं योजना में विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के लिए किया गया आवंटन अनुलग्नक 3 में देखा जा सकता है। छठी योजना के दौरान विशेष केन्द्रीय सहायता के अधीन कुल व्यय 553 करोड़ रुपए था। छठी योजना की समाप्ति पर बिहार, जम्मू-काश्मीर, राजस्थान, सिक्किम, चण्डीगढ़, गोवा, दमण और दीव तथा पांडिचेरी राज्यों में विशेष केन्द्रीय सहायता की 10 प्रतिशत से अधिक राशि अप्रयुक्त शेष रह गई थी। 1985-86 के लिए केवल 18 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों से सूचना उपलब्ध थी। उनमें से जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, पंजाब, सिक्किम, चण्डीगढ़, दिल्ली तथा गोवा, दमण और दीव में विशेष केन्द्रीय सहायता की 10 प्रतिशत से अधिक राशि अप्रयुक्त शेष रह गई थी। इसी प्रकार 1986-87 के लिए केवल 10 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के लिए सूचना उपलब्ध थी। उनमें से हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, चण्डीगढ़ और गोवा, दमण और दीव में विशेष केन्द्रीय सहायता की 10 प्रतिशत से अधिक राशि अप्रयुक्त शेष रह गई थी।

11. अनुसूचित जातियों के विकास पर सातवीं योजना के कार्यकारी दल ने यह देखा था कि छठी योजना के दौरान विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा विशेष केन्द्रीय सहायता का बहुत बड़ा हिस्सा सहायिकी के रूप में उपयोग में लाया गया था, जिसका उपयोग या तो इसे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के उपबंध से जोड़कर सहायिकी की कुल दर 50 प्रतिशत तक बढ़ाने के लिए अथवा इसे एकीकृत् ग्रामीण विकास कार्यक्रम से बाहर की योजनाओं को देने के लिए किया गया था। कुछ राज्यों में कुछ योजनाओं के बारे में यह बताया गया था कि सहायिकी की दर 75 प्रतिशत तक पहुंची थी और सहायिकी की राशि का अधिकांश भाग विशेष केन्द्रीय सहायता से बाहर खर्च किया गया था। कुछ राज्यों में राज्य सरकारों ने विशेष केन्द्रीय सहायता की धनराशियां राज्य अनुसूचित जाति विकास निगमों को हस्तान्तरित कर दी थी जहां ये बिना उपयोग किए शेष रह गई थी। कार्यकारी दल ने यह सिफारिश की थी कि विशेष केन्द्रीय सहायता का उपयोग नाजुक अन्तरों को पूरा करने के लिए इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि इससे अनुसूचित जातियों के परिवारों के लिए आर्थिक विकास कार्यक्रमों को संयुक्त तथा समेकित रूप दिया जा सके।

अनुसूचित जाति विकास निगम

12. छठी योजना के आरम्भ होने से पहले आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, केरल, पंजाब, तमिलनाडु, तथा पश्चिम बंगाल, में अनुसूचित जाति विकास निगम विद्यमान थे। छठी योजना के दौरान जब अनुसूचित जातियों के विकास के लिए कार्य नीति तैयार की जा रही थी, इन विशिष्टीकृत निगमों की उपयोगिता स्वीकार की गई थी और भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों की अधिक संख्या वाले राज्यों को परामर्श दिया था कि वे निर्धनता रेखा से नीचे रह रहे अनुसूचित जातियों के परिवारों के आर्थिक विकास के कार्यों को उत्साहपूर्वक करने के लिए अपने राज्यों में ऐसे निगमों की स्थापना करें। अब तक ऐसे निगम 18 राज्यों तथा 3 संघ राज्य क्षेत्रों में स्थापित किए गए हैं। इन निगमों की स्थापना जिन वर्षों में हुई थी, और ये जिन अधिनियमों के अधीन पंजीकृत किए गए थे, नीचे दिए गए हैं—

सारणी 2

क्रम सं०	क्षेत्र/राज्य	स्थापना का वर्ष	अधिनियम जिसके अधीन पंजीकृत किया गया
1	2	3	4
	उत्तरी क्षेत्र		
1.	हरियाणा	1971	भा० कं० अ०
2.	पंजाब	1971	रा० अ०

अर्थात् **बिहार, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, पंजाब, सिक्किम, उत्तर प्रदेश, दिल्ली** तथा **गोवा, दमण** और **दीव** में परिव्यय अनुपात 60 प्रतिशत से कम था। जबकि वर्ष 1986–87 के दौरान 11 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों अर्थात् **गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, पंजाब, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, दिल्ली** तथा **गोवा, दमण और दीव** में परिव्यय अनुपात 60 प्रतिशत से कम था।

विशेष केन्द्रीय सहायता

10. विशेष केन्द्रीय सहायता की परिकल्पना राज्यों को विशष संघटक योजनाओं के लिए एक पूरक के रूप में की गई थी और योजनाबद्ध ढांचे के आधार पर विशिष्ट योजनाओं से सहबद्ध नहीं की गई थी। पूरक के रूप में होने के कारण इसका लक्ष्य राज्य सरकारों को अपनी विशेष संघटक योजनाओं के लिए उससे बड़े परिव्यय की व्यवस्था करने के लिए प्रेरणा देना था। यह अनुसूचित जातियों के विकास के लिए राज्यों के प्रयासों की सम्पूर्णता के लिए आशयित थी और इसके लिए केवल यह शर्त रखी गई थी कि राज्योंद्वारा इस निधि का प्रयोग केवल आय उत्पन्न करने वाली विकास योजनाओं के लिए किया जाना था जिसमें उसी से सीधे सुसंगत प्रशिक्षण, सीधे सुसंगत सहायक सेवाएं तथा कार्यान्वयन, पर्यवेक्षण, प्रबोधन और मूल्यांकन के लिए प्रबन्ध भी शामिल था। विशेष केन्द्रीय सहायता राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों की जन-संख्या, राज्यों का पिछड़ापन और राज्य सरकारों की वार्षिक विशेष संघटक योजनाओं में यथा प्रतिबिम्बित उनके प्रयासों आदि के आधार पर वितरित की गई थी। इसके अधीन 1979–80 के दौरान 5 करोड़ रुपए का एक सांकेतिक प्रावधान किया गया था। छठी योजना के दौरान 600 करोड़ रुपए की धनराशि दी गई थी और सातवीं योजना के लिए 930 करोड़ रुपए का अस्थायी आबंटन किया गया था। छठी योजना अवधि, 1985–86 तथा 1986–87 के दौरान दी गई तथा उपयोग में लाई गई विशेष केन्द्रीय सहायता और सातवीं योजना में विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के लिए किया गया आबंटन अनुलग्नक 3 में देखा जा सकता है। छठी योजना के दौरान विशेष केन्द्रीथ सहायता के अधीन कुल व्यय 553 करोड़ रुपए था। [illegible] योजना की समाप्ति पर **बिहार, जम्मू-काश्मीर, राजस्थान, सिक्किम, चण्डीगढ, गोवा, दमण** और **दीव** तथा **पांडिचेरी** राज्यों में विशेष केन्द्रीय सहायता की 10 प्रतिशत से अधिक राशि अप्रयुक्त शेष रह गई थी। 1985–86 के लिए केवल 18 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों से सूचना उपलब्ध थी। उनमें से **जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, पंजाब, सिक्किम, चण्डीगढ़, दिल्ली** तथा **गोवा, दमण** और **दीव** में विशेष केन्द्रीय सहायता की 10 प्रतिशत से अधिक राशि अप्रयुक्त शेष रह गई थी। इसी प्रकार 1986–87 के लिए केवल 19 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के लिए सूचना उपलब्ध थी। उनमें से **हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, चण्डीगढ़** और **गोवा, दमण** और **दीव** में विशेष केन्द्रीय सहायता की 10 प्रतिशत से अधिक राशि अप्रयुक्त शेष रह गई थी।

11. अनुसूचित जातियों के विकास पर सातवीं योजना के कार्यकारी दल ने यह देखा था कि छठी योजना के दौरान विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा विशेष केन्द्रीय सहायता का बहुत बड़ा हिस्सा सहायिकी के रूप में उपयोग में लाया गया था, जिसका उपयोग या तो इसे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के उपबंध से जोड़कर सहायिकी की कुल दर 50 प्रतिशत तक बढ़ाने के लिए अथवा इसे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम से बाहर की योजनाओं को देने के लिए किया गया था। कुछ राज्यों में कुछ योजनाओं के बारे में यह बताया गया था कि सहायिकी की दर 75 प्रतिशत तक पहुंची थी और सहायिकी की राशि का अधिकांश भाग विशेष केन्द्रीय सहायता से बाहर खर्च किया गया था। कुछ राज्यों में राज्य सरकारों ने विशेष केन्द्रीय सहायता की धनराशियां राज्य अनुसूचित जाति विकास निगमों को हस्तान्तरित कर दी थी जहां ये बिना उपयोग किए शेष रह गई थीं। कार्यकारी दल ने यह सिफारिश की थी कि विशेष केन्द्रीय सहायता का उपयोग नाजुक अन्तरों को पूरा करने के लिए इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि इससे अनुसूचित जातियों के परिवारों के लिए आर्थिक विकास कार्यक्रमों को संयुक्त तथा समेकित रूप दिया जा सके।

अनुसूचित जाति विकास निगम

12. छठी योजना के आरम्भ होने से पहले **आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, केरल, पंजाब, तमिलनाडु,** तथा **पश्चिम बंगाल,** में अनुसूचित जाति विकास निगम विद्यमान थे। छठी योजना के दौरान जब अनुसूचित जातियों के विकास के लिए कार्य नीति तैयार की जा रही थी, इन विशिष्टीकृत निगमों की उपयोगिता स्वीकार की गई थी और भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों की अधिक संख्या वाले राज्यों को परामर्श दिया था कि वे निर्धनता रेखा से नीचे रह रहे अनुसूचित जातियों के परिवारों के आर्थिक विकास के कार्यों को उत्साहपूर्वक करने के लिए अपने राज्यों में ऐसे निगमों की स्थापना करें। अब तक ऐसे निगम 18 राज्यों तथा 3 संघ राज्य क्षेत्रों में स्थापित किए गए हैं। इन निगमों की स्थापना जिन वर्षों में हुई थी, और ये जिन अधिनियमों के अधीन पंजीकृत किए गए थे, नीचे दिए गए हैं —

सारणी 2

क्रम सं०	क्षेत्र/राज्य	स्थापना का वर्ष	अधिनियम जिसके अधीन पंजीकृत किया गया
1	2	3	4
	उत्तरी क्षेत्र		
1.	हरियाणा	1971	भा० कं० अ०
2.	पंजाब	1971	रा० अ०

1	2	3	4
3.	उत्तर प्रदेश	1975	भा० कं० अ०
4.	हिमाचल प्रदेश	1979	रा० अ०
5.	जम्मू-काश्मीर	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं
पूर्वी क्षेत्र			
6.	असम	1975	भा० कं० अ०
7.	पश्चिम बंगाल	1976	रा० अ०
8.	बिहार	1978	स० स० अ०
9.	उड़ीसा	1979	स० स० अ०
10.	त्रिपुरा	1979	स० स० अ०
पश्चिमी क्षेत्र			
11.	गुजरात	1975	भा० कं० अ०
12.	मध्य प्रदेश	1978	स० स० अ०
13.	महाराष्ट्र	1979	भा० कं० अ०
14.	राजस्थान	1980	स० स० अ०
दक्षिणी क्षेत्र			
15.	केरल	1972	भा० कं० अ०
16.	आन्ध्र प्रदेश	1974	स० स० अ०
17.	तमिलनाडु	1974	भा० कं० अ०
18.	कर्नाटक	1975	भा० कं० अ०
संघ राज्य क्षेत्र			
19.	चण्डीगढ़	1979	उपलब्ध नहीं
20.	दिल्ली	1983	भा० कं० अ०
21.	पांडिचेरी	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं

टिप्पण : भा० कं० अ०—भारतीय कम्पनी अधिनियम
रा० अ०—राज्य अधिनियम
स० स० अ०—सहकारी समिति अधिनियम

भारत सरकार ने इन निगमों को पहले ही 1978—79 से सहायता देना आरम्भ कर दिया था और उनकी शेयर पूंजी में राज्य सरकार के समकक्ष 49:51 के अनुपात से अंशदान कर रही थी। उसके बाद में यह छठी योजना की एक अनिवार्य विशेषता बन गई थी।

13. इन निगमों के प्रमुख कार्य, अनुसूचित जातियों के उद्यमियों की आर्थिक विकास योजनाओं के लिए संस्थागत ऋण जुटाना था जिसके लिए ये एक प्रेरक प्रोन्नतकर्त्ता तथा जमानती के रूप में कार्य करते थे। इनके प्रोन्नतिकारक कार्यों में विशेष सर्वेक्षणों द्वारा अनुसूचित जातियों के संकेन्द्रण समूहों की पहचान करना, अनुसूचित जातियों के पात्र लाभभोगियों की पहचान तथा उन्हें प्रेरणा देना उनकी जरूरतों और वित्तीय आवश्यकताओं का निर्धारण करना, अनुसूचित जातियों के विभिन्न व्यावसायिक समूहों के लिए उपयुक्त आर्थिक विकास योजनाएं तैयार करना, अनुसूचित जातियों को वित्तीय संस्थाओं तथा सरकारी विकास अभिकरणों के संपर्क में लाना आदि शामिल थे। इन निगमों का प्रेरणादाता तथा जमानती संबंधी कार्य इन संस्थाओं तथा अभिकरणों के साथ परस्पर सम्पर्क रखने तथा लक्ष्य समूहों के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक बड़े निवेश प्रदान करने के महत्वपूर्ण विषय में हस्तक्षेप करना था। इन निगमों ने सीमान्त ऋण कार्यक्रम की योजना का कार्यान्वयन करके तथा इस प्रकार व्यक्तिगत लाभभोगी योजना की इकाई लागत के एक भाग की राशि ब्याज की कम दर पर देकर, अनुसूचित जातियों के उद्यमियों के वित्त पोषण में बैंकों के साथ साथ भागीदार के रूप में अपनी भूमिका निभाई। इस प्रकार ऋण, सहायिकी तथा सीमान्त ऋण एक ही माध्यम की मार्फत, अधिमानतः बैंक से दिए जाने थे।

14. वर्ष 1978—79 से 1986—87 तक विभिन्न राज्य सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुसूचित जाति विकास निगमों को दी गई कुल धनराशि नीचे की सारणी में देखी जा सकती है —

सारणी 3

(रु० लाखों में)

वर्ष	राज्य सरकारों द्वारा दिया गया अंशदान	भारत सरकार द्वारा दी गई राशि
1978—79	710.55	50.00
1979—80	703.10	1,224.00
1980—81	1,403.00	1,300.97
1981—82	1,367.66	1,332.37
1982—83	1,364.40	1,350.00
1983—84	1,866.02	1,400.00
1984—85	1,454.21	1,500.00
1985—86	1,755.21	1,500.00
1986—87	1,982.15	1,458.56
योग	12,606.30	11,115.90

छठी योजना के दौरान इन निगमों ने अनुसूचित जातियों के लगभग 28.65 लाख परिवारों को 106.59 करोड़ रुपए के बराबर सीमान्त ऋण देकर आर्थिक सहायता प्रदान की थी जिसके परिणामस्वरूप बैंक से 370.84 करोड़ रुपये की अतिरिक्त निधि दिए जाने का प्रावधान किया जा सका था। इन निगमों ने 100.53 करोड़ रुपए की आर्थिक सहायता भी वितरित की थी।

15. छठी योजना के दौरान इन निगमों के कार्य चालन में निम्नलिखित अवरोध देखे गए थे --

(1) आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, केरल, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु तथा उत्तर प्रदेश में इन अनुसूचित जाति विकास निगमों को सम्बन्धित राज्य सरकारों को दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता में से एक बड़ा भाग प्राप्त हो रहा था। इन निगमों में से अधिकांश इस राशि का प्रयोग व्यक्तिगत

लाभभोगियों को इमदाद देने के लिए कर रहे थे। तथापि, **आन्ध्र प्रदेश**, और **तमिलनाडु** में तथा कुछ सीमा तक **उड़ीसा** में इसका प्रयोग सामूहिक योजनाओं के लिए संयुक्त कार्यशाला शेडों और मशीनरी के रूप में आधारिक संरचना प्रदान करने के लिए किया गया था। यह बताया गया था कि **आन्ध्र प्रदेश** में इन अवस्थापनाओं के निर्माण के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता का 90 प्रतिशत भाग उपयोग में लाया गया था। उस राज्य को दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता की कुल राशि अनुसूचित जाति विकास निगम को मिली थी।

(2) यह बताया गया था कि **असम, केरल, गुजरात, पंजाब, राजस्थान,** तथा **तमिलनाडु** में अनुसूचित जाति विकास निगम अपनी शेयर पूंजी का बड़ा भाग अनुसूचित जातियों के लिए सहायता कार्यक्रमों में प्रयोग करने में असमर्थ थे। **गुजरात** तथा **राजस्थान** में कुछ निगम आवधिक जमा में रखी गई शेयर पूंजी राशि से बड़ी मात्रा में ब्याज कमा रहे थे। **असम, कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान,** तथा **दिल्ली** के निगमों के बारे में यह बताया गया था कि वे अपनी शेयर पूंजी का एक बहुत बड़ा भाग प्रशासनिक खर्चों को पूरा करने के लिए व्यय कर रहे थे। मार्ग-निर्देशों के अनुसार इन धनराशियों का प्रयोग अनुसूचित जातियों के परिवारों को सहायता देने के लिए बक टाइ-अप योजनाओं के लिए किया जाना चाहिए था।

(3) यह बताया गया था कि सीमांत ऋण की वसूली के संबंध में स्थिति **आन्ध्र प्रदेश**, (7 प्रतिशत), **असम** (2 प्रतिशत), तथा **उत्तर प्रदेश** (8.5 प्रतिशत) में अत्यन्त असंतोषजनक थी। वसूली की अच्छी स्थिति **हिमाचल प्रदेश**, (36.5 प्रतिशत) **उड़ीसा** (54.8 प्रतिशत), तथा **पश्चिम बंगाल** (35.7 प्रतिशत) के निगमों की थी। कुछ निगमों को सीमान्त ऋण की वसूली करने में बैंकों से बहुत कम सहयोग मिला था। **आन्ध्र प्रदेश** तथा **महाराष्ट्र** में निगमों को अपने सीमान्त ऋण की वसूली स्वयं करनी पड़ी थी और **बिहार** तथा **पश्चिम बंगाल** में बैंक अपने भागों की वसूली करने के बाद सीमान्त ऋण की वसूली करने पर सहमत हुए थे। **गुजरात, केरल** तथा **मध्यप्रदेश** में निगमों में सीमान्त ऋण की वसूली के लिए कोई समस्या नहीं थी चूंकि उन्होंने बैंकों को सीमान्त धन जमा किया था और ऋण के रूप में नहीं दिया था। अन्य निगमों के मामलों में यह बताया गया था कि बैंक अपने ऋणों की वसूली के साथ-साथ सीमान्त ऋणों की वसूली करने पर भी सहमत हो गए थे। वाणिज्य बैंकों के अनुसार निगमों द्वारा पहचान किए गए तथा प्रायोजित किए गए लाभभोगियों की काफी बड़ी संख्या के बारे में सत्यापन करने पर यह पाया गया था कि वे या तो निर्धनता रेखा के बहुत ऊपर थे या भुगतान न करने के आदी थे अथवा सहायिकी योजनाओं को आरम्भ करने में उनकी रुचि नहीं थी, जिसके फलस्वरूप परियोजनाओं की मंजूरी में विलम्ब हुआ था।

(4) निगमों के अनुसार बैंकों में विशेष रूप से क्षेत्र स्तर पर अनुसूचित जातियों को ऋण देने के लिए बहुत उत्साह नहीं था, इसका कारण संभवत: यह था कि उन्हें उनसे ऋण की वसूली न होने का डर था या उनका यह विश्वास था कि निर्धन उद्यमी स्थायी नहीं थे। उनका यह मत भी था कि बकों ने 5,000 रु० से कम के ऋणों के लिए प्रतिभूति तथा जमानत के लिए आग्रह न किए जाने संबंधी भारतीय रिजर्व बैंक के निर्देश का प्राय: उल्लंघन किया था।

सातवीं योजना के दौरान कार्य-नीति

16. चूंकि सीमान्त ऋण कार्यक्रम से उसमें अन्तर्निहित संकल्पना तथा कार्यचालन संबंधी समस्याओं के कारण अपेक्षित मात्रा में संस्थागत वित्त उत्पन्न नहीं हो सका था, गृह मंत्रालय द्वारा 1984 में एक स्थायी समिति गठित की गई थी जिसे एक ऐसी वैकल्पिक योजना का सुझाव देना था जो कम श्रमसाध्य तथा कार्य चालन की दृष्टि से उससे आसान हो। इस समिति ने सभी अनुसूचित जाति विकास निगमों द्वारा अपनाए जाने के लिए "अनुसूचित जातियों के परिवारों के लिए अनुसूचित जाति विकास निगमों की मार्फत सहायता का नया ढांचा" नामक एक इस कार्यक्रम की सिफारिश की थी। इस कार्यक्रम की प्रमुख विशेषताएं नीचे दी गई हैं —

(1) ग्रामीण क्षेत्रों में 6,400 रु० या उससे कम तथा शहरी क्षेत्रों में 7,200 रु० या उससे कम की वार्षिक आय वाले किसी परिवार को निर्धनता रेखा के नीचे वाला परिवार माना जाएगा। निर्धनता रेखा के नीचे वाले परिवारों को निम्नलिखित प्राथमिकता क्रम में तीन अवस्थाओं में समाविष्ट किया जाएगा :—

प्रथम अवस्था —ग्रामीण क्षेत्रों में 3,500 रु० और शहरी क्षेत्रों में 4,300 रु० की वार्षिक आय सीमा वाले परिवार "सर्वाधिक निधन"

द्वितीय अवस्था—ग्रामीण क्षेत्रों में 3,501 रु० से से 4,800 रु० तक तथा शहरी क्षेत्रों में 4,301 रु० से 5,500 रु० तक की वार्षिक आय सीमा वाले परिवार "बहुत निर्धन"

तृतीय अवस्था—ग्रामीण क्षेत्रों में 4,801 रु० से 6,400 रु० तक तथा शहरी क्षेत्रों में 5,501 से 7,200 रु० तक की वार्षिक आय सीमा वाले परिवार "निर्धन"

(2) इस कार्यक्रम का उद्देश्य यह था कि उपर्युक्त लक्ष्य को स्वरोजगार तथा मज़दूरी रोजगार योजनाओं को मिलाकर प्राप्त किया जाए। इसमें (क) "सर्वाधिक निर्धन" परिवारों में से प्रत्येक के एक सदस्य को स्व-रोजगार के लिए साधन प्रदान करना तथा इन परिवारों के अन्य स्वस्थ सदस्यों को मजदूरी-रोजगार प्रदान करना, (ख) "बहुत निर्धन" तथा "निर्धन" परिवारों को स्व-रोजगार के लिए केवल साधन प्रदान करना सम्मिलित था।

(3) आय निर्धारण के लिए लाभभोगी बनने वाले का व्यवसाय प्रमुख कसौटी के रूप में लिया जाना था। उदाहरण के लिए, भूमिहीन खेतिहर मजदूरों, सीमान्त कृषकों, एक मानक हेक्टर से कम भूमि जोतने वाले बटाईदारों, कृषि-इतर मजदूरों, दैनिक मजदूरी श्रमिकों, चर्म कर्मकारों (चमड़ा, हड्डी, आदि एकत्र करने वाले), जूता-चप्पल मरम्मत करने तथा बनाने वालों (मजदूरी कामगार रखने वाले नहीं), अनुसूचित जातियों के रूप में सूचीबद्ध घुमन्तु जनजातियों, अधिकतम सीमा से फालतू भूमि के आबंटियों जो पूर्णतया भूमि या मजदूरी पर निर्भर हों, स्व-रोजगार (5,000 रुपए तक के निवेश की आवश्यकता वाले) के उद्योग के कर्म-कार आदि को यथा सर्वाधिक "निर्धन" माना जाना था। इसी प्रकार छोटे कृषकों, कारीगरों, चर्म कर्मकारों, घरेलू उद्योग (7,500 रुपए तक के निवेश की आवश्यकता वाले) के अन्य कर्मकारों को "बहुत निर्धन" माना जाना था। तीसरी "निर्धन" श्रेणी के लिए आय प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करना अनिवार्य किया जाना था।

(4) सीमान्त ऋण कार्यक्रम बन्द किया जाना था। इसके विपरीत निगमों द्वारा वित्तदाता संस्थाओं को योजनाओं की परियोजना लागत के 25 प्रतिशत के बराबर मूल राशि जमा कराई जानी थी। तथापि, जमा की गई राशियां प्रत्येक व्यक्तिगत खाते में नहीं जोड़ी जानी थी परन्तु दी गई अवधि के दौरान केवल कुल वितरण के रूप में दिखाई जानी थी। इस प्रकार निगमों को वित्तदाता संस्थाओं के साथ साथ उन्हें धारणाधिकार तथा एक सीमित सीमा तक जोखिम की सुरक्षा प्रदान करके विकास कार्य के लिए उधार देने में भागीदार बनना था।

(5) विभिन्न स्रोतों से आर्थिक सहायता प्राप्त करना बन्द किया जाना था। जो व्यक्ति एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रमों अथवा अन्य अभिकरणों से सहायिकी प्राप्त कर रहे थे उन्हें इस कार्यक्रम से अलग किया जाना था।

(6) अनुसूचित जातियों के ऐसे लाभभोगियों को, जिन्होंने नियत अवधि के भीतर अपना ऋण चुका दिया था, परियोजना लागत के 5 प्रतिशत के बराबर राशि, किसी भी मामले में 600 रु० से कम, प्रोत्साहन के रूप में दी जानी थी।

(7) परियोजना की लागत कार्यशील पूंजी तथा साधनों के बीमे की लागत सहित 12,000 रुपए से अधिक नहीं होनी थी।

(8) प्रत्येक पात्र परिवार की सहायता की अधिकतम सीमा 4,000 रु० होनी थी। सीमान्त कृषकों, खेतिहर मजदूरों तथा गैर खेतिहर मजदूरों को परियोजना लागत के $33\frac{1}{3}$ प्रतिशत की सीमा तक, अन्य श्रेणियों जैसे लघु कृषक, कारीगर तथा अन्य को एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अनुसार 25 प्रतिशत की सीमा तक सहायिकी दी जानी थी। शहरी क्षेत्रों में सहायिकी एक समान परियोजना मूल्य की 25 प्रतिशत होनी थी।

(9) योजना के अधीन दिए गए ऋण पर 10 प्रतिशत वार्षिक की रियायती दर से ब्याज लगना था। 5000 रु० तक के निवेश ऋण के लिए उस ऋण द्वारा सृजित संपत्ति को बंधक रखने के सिवाय और कोई जमानत नहीं दी जानी थी। सामान्यत: ऋण की वापसी की अवधि 3 से 5 वर्ष की होनी थी।

(10) इस कार्यक्रम के अधीन प्राथमिक, द्वितीयक अथवा तृतीयक क्षेत्र में कोई भी आर्थिक रूप से स्थायी योजना आरंभ की जा सकती थी। कृषि क्षेत्र पर दबाव कम करने की आवश्यकता को ध्यान में रख कर स्थानीय परिस्थितियों के साथ सामंजस्य रखते हुए द्वितीयक तथा तृतीयक क्षेत्र के क्रियाकलापों की ओर मुड़ने के लिए प्रयत्न किए जाने थे। तथापि, ग्रामीण कारीगरों को अपने पारंपरिक व्यवसायों में आधुनिक तकनीकों को अपनाने के लिए प्रोत्साहन दिया जाना था।

17. अनुसूचित जातियों के विकास पर सातवीं योजना के कार्यकारी दल के अनुसार उप-योजना अवधि के दौरान अनुसूचित जातियों के किसी परिवार को निर्धनता रेखा पार करने के लिए 10,000 रु० की सहायता पर्याप्त होनी

चाहिए । गत समय में यह अनुमान किया गया था कि अनुसूचित जाति का एक परिवार अनुसूचित जाति विकास निगम से औसत रूप से अधिक से अधिक 3,000 रु० तक की सहायता प्राप्त कर चुका है । अतः यह माना जाएगा कि सातवीं योजना के दौरान उस परिवार को पूरक सहायता के रूप में औसत रूप से 7,000 रु० की अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता होगी ।

केन्द्रीय मंत्रालयों की विशेष संघटक योजनाएं

18. छठी योजना के आरम्भ में योजना आयोग तथा गृह मंत्रालय (अब कल्याण मंत्रालय) द्वारा सभी केन्द्रीय मंत्रालयों को यह मार्ग-निर्देश जारी किए गए थे कि वे प्रत्येक क्षेत्र के अधीन ऐसी योजनाओं का पता लगाएं जिनका अनुसूचित जातियों के विकास से सीधा सम्बन्ध है और उनके लिए मंत्रालयों की योजनाओं से लक्ष्य समूहों की जनसंख्या के अनुपात में धनराशि चिह्नित करें । सम्बन्धित मंत्रालयों से उनके द्वारा तैयार की गई विशेष संघटक योजनाओं की प्रगति के सम्बन्ध में सूचना भेजने के लिए अनुरोध किया गया था । यह सूचना केवल आठ मंत्रालयों से प्राप्त हुई थी और उसका विवेचन नीचे किया गया है :—

(1) श्रम मंत्रालय

श्रम मंत्रालय ने सूचित किया था कि विशेष संघटक योजना के लिए अनन्य रूप से कोई योजना राशि चिह्नित नहीं की गई थी । तथापि, योजना की कुछ स्कीमों का पता लगाया गया था जिनसे एक बड़ी हद तक अनुसूचित जातियों को लाभ होगा । इनमें से दो स्कीमें जिनसे इस मंत्रालय का सम्बन्ध था और जो अनुसूचित जातियों के लिए विशेष महत्व की थीं, बंधुआ मजदूरों का पुनर्वास तथा खेतिहर मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी का कार्यान्वयन थीं । बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास के लिए केन्द्रीय प्रायोजित योजना मई, 1978 में आरंभ की गई थी । इस योजना में प्रति बंधुआ मजदूर 4,000 रु० की अधिकतम सीमा तक वित्तीय सहायता के प्रावधान की परिकल्पना की गई थी जिसका आधा भाग केन्द्रीय भाग के रूप में दिया गया था। 1-2-1986 से यह राशि बढ़ा कर 6,250 रु० कर दी गई थी । 31-5-1987 तक पहचाने गए तथा मुक्त किए गए बंधुआ मजदूरों की कुल संख्या 2.19 लाख थी जिनमें से 1.85 लाख का पुनर्वास किया गया था । मंत्रालय द्वारा लाभभोगियों की सही संख्या नहीं बताई गई थो, तथापि, यह बताया गया था कि पहचान किए गए बंधुआ मजदूरों में से 54 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के थे । सातवीं योजना में इस योजना के अधीन 15 करोड़ रुपये के कुल परिव्यय में से योजना अवधि के दौरान विशेष संघटक योजना/आदिवासी उप-योजना के लिए दी जाने वाली प्रस्तावित राशि 8.10 करोड़ रु० (54 प्रतिशत) है । 1985-86 तथा 1986-87 के दौरान विशेष संघटक योजना/आदिवासी उपयोजना के अधीन प्रत्येक वर्ष के दौरान 5 करोड़ रुपए के कुल परिव्यय में से प्रत्येक के लिए आबंटन 3.30 करोड़ रुपये था । इन दो वर्षों के दौरान विशेष संघटक योजना/आदिवासी उपयोजना के अधीन वास्तविक व्यय क्रमशः 260.60 लाख रु० तथा 388.25 लाख रु० था ।

योजना आयोग द्वारा खेती में न्यूनतम मजदूरी लागू करने के लिए कार्यान्वियन तंत्र को मजबूत करने के लिए केन्द्रीय प्रयोजित योजना प्रायोगिक आधार पर चार राज्यों अर्थात **मध्य प्रदेश**, **मणिपुर**, **उड़ीसा** तथा **राजस्थान** में लागू करने के लिए जून, 1984 में अनुमोदित की गई थी । इस योजना में खेती में न्यूनतम मजदूरी को लागू करने के लिए 200 ग्रामीण श्रम निरीक्षकों की नियुक्ति की परिकल्पना को गई थी । ग्रामीण श्रम निरीक्षकों की नियुक्ति ऐसे प्रत्येक विकास खण्ड में की जानी थी जिसमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के खेतिहर मजदूरों की संख्या 70 प्रतिशत से अधिक थी । योजना आयोग ने इस बात पर जोर दिया कि नियुक्त किए जाने वाले निरीक्षकों की रूचि, सामाजिक पृष्ठभूमि और अर्हताओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए तथा अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए । कुल 154 ग्रामीण श्रम निरीक्षक नियुक्त किए गए थे जिनमें से **मध्य प्रदेश** में 42, **मणिपुर** में 13, **उड़ीसा** में 65 तथा **राजस्थान** में 34 थे ।

(2) कृषि तथा सहकारिता विभाग

सातवीं योजना के दौरान कुल 805.15 करोड़ रुपये के विभाज्य परिव्यय में से कृषि तथा सहकारिता विभाग की केन्द्रीय तथा केन्द्रीय प्रयोजित योजनाओं के बारे में विशेष संघटक योजना के लिए 119.94 करोड़ रुपये (14.90 प्रतिशत) को राशि चिह्नित की गई थी । 1985-86 के दौरान 165.76 करोड़ रुपये के कुल विभाज्य परिव्यय के मुकाबले विशेष संघटक योजना के अधीन 25.08 करोड़ रुपये व्यय हुए थे । जो मंत्रालय के कुल परिव्यय का 15.13 प्रतिशत बनता है । 1986-87 के दौरान 159.90 करोड़ रुपये के कुल परिव्यय में से विशेष संघटक योजना के लिए दी गई राशि 25.97 करोड़ रुपये (16.24 प्रतिशत) थी जिसमें से 21.34 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान लगाया गया था । ऐसी मुख्य योजनाओं में जिनके लिए विशेष संघटक योजना में यह परिव्यय चिह्नित किया गया था, फसल अभिमुख कार्यक्रम, वनस्पति संरक्षण, डेरी विकास, पशु पालन, उद्यान कृषि, भूमि तथा जल संरक्षण, मत्स्य पालन, कृषि ऋण, कृषि जनगणना तथा सहकारिता सम्मिलित थीं ।

(3) स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण मंत्रालय

सातवीं योजना के दौरान कुल 439 करोड़ रुपये के विभाज्य परिव्यय में से विशेष संघटक योजना के लिए

47.34 करोड़ रुपये का परिव्यय चिह्नित किया गया था। 1985–86 के दौरान कुल 105 करोड़ रुपये के विभाज्य परिव्यय में से विशेष संघटक योजना के अधीन परिव्यय 14.23 करोड़ रुपये था जो 11.9 प्रतिशत बनता है। इसके मुकाबले उस वर्ष के दौरान 13.35 करोड़ रुपये की राशि व्यय हुई। 1986-87 से सम्बन्धित सूचना आनी शेष थी। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अधीन राज्य सेक्टर में सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा उप-केन्द्रों का एक ढांचा स्थापित किया जा रहा था। उप-केन्द्रों की स्थापना के लिए राज्यों को परिवार कल्याण निधि से केन्द्रीय सहायता दी जा रही थी। यद्यपि, विशेष संघटक योजना के लिए कोई धनराशि चिह्नित नहीं की गई थी, तथापि, राज्यों को लक्ष्यों की सूचना देते समय उन्हें यह परामर्श दिया गया था कि कम से कम 10 प्रतिशत उपकेन्द्र अनुसूचित जातियों की 20 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या वाली बस्तियों/गांवों में अथवा कम से कम गांवों में अनुसूचित जातियों के मोहल्ले में स्थापित किए जाएं। छठी योजना की अवधि समाप्त होने तक अनुसूचित जातियों की 20 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या वाली अनुसूचित जातियों की बस्तियों/गांवों में अथवा उनके समीप 96 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 2,060 उप-केन्द्र स्थापित किए जा चुके थे। राष्ट्रीय मलेरिया नियन्त्रण कार्यक्रम, राष्ट्रीय फाइलेरिया नियन्त्रण कार्यक्रम, अंध नियन्त्रण कार्यक्रम आदि जैसे कार्यक्रमों का कार्यान्वियन करते समय अनुसूचित जातियों की 20 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या वाली बस्तियों/गांवों में इन कार्यक्रमों के अधीन सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए केन्द्रीय सहायता दी गयी थी। विशेष संघटक योजना सम्बन्धी कार्य का समन्वय करने के लिए मंत्रालय में एक पृथक प्रकोष्ठ स्थापित किया गया था। अनुसूचित जातियों से सम्बन्धित अधिकांश योजनाओं के बारे में अलग बजट उप-शीर्ष पहले से ही आरंभ किए जा चुके थे।

(4) औद्योगिक विकास विभाग

औद्योगिक विकास विभाग ने सूचित किया था कि उनके विभाग में अनन्य रूप से अनुसूचित जातियों को लाभ पहुंचाने वाली कोई योजना नहीं थी। इसके अतिरिक्त उस विभाग ने बताया कि खादी तथा ग्रामोद्योग, नारियल जटा, लघु उद्योग, आदि के अधीन आने वाली योजनाएं प्रोत्साहन-जनक प्रकृति की थीं और धन राशि चिह्नित किए जाने के लिए उपयुक्त नहीं थीं। तथापि, इन योजनाओं के अधीन चलाए जा रहे प्रशिक्षण कार्यक्रमों में कुछ प्रतिशत स्थान अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए आरक्षित किए गए थे। इसी प्रकार नारियल जटा उद्योग को सहकारी क्षेत्र में लाने की केन्द्रीय प्रायोजित योजना के अधीन ऐसी सहकारी समितियों को जिनमें अनुसूचित जातियों का काफी बड़ा वर्ग शामिल था उन्नत प्रकार के उपकरण वितरित करने के लिए सहायता का एक अधिक उदार ढांचा अपनाया जा रहा था। मंत्रालय में विशेष संघटक योजना के लिए अलग कक्ष बनाने के लिए प्रस्ताव अभी भी विचाराधीन था। पृथक परिव्यय का आबंटन सीमित होने तथा योजना की प्रकृति उत्साहजनक होने के कारण विशेष संघटक योजना के लिए कोई पृथक बजट उप-शीर्ष आरंभ नहीं किया गया था।

(5) खाद्य विभाग

खाद्य विभाग ने सूचित किया था कि उनके द्वारा कार्यान्वित की जा रही योजनाओं की प्रकृति ऐसी थी कि विशेष संघटक योजना के लिए दी गई राशि पृथक से दिखाना संभव नहीं था क्योंकि ये विभाज्य नहीं थीं। अत: विभाग की योजना स्कीमों के बारे में अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना की पहचान करना उनके लिए संभव नहीं था। तथापि, कुछ विद्यमान योजनाओं का इस प्रकार अनुकूलन किया गया था ताकि उनमें अनुसूचित जातियों को अधिक लाभ मिल सके।

(6) ऊर्जा मंत्रालय

अपरंपरागत ऊर्जा स्रोत विभाग ने सूचित किया था कि उनके द्वारा कार्यान्वित किए जा रहे कार्यक्रम विशिष्ट स्थान सम्बन्धी होने और उनका स्वरूप अलग-अलग होने और कार्यान्वियन करने वाले अभिकरणों की विविधता के कारण इन कार्यक्रमों के अधीन परिव्यय चिह्नित किया जाना कठिन था और उनके लिए अनन्य रूप से अनुसूचित जातियों के लाभ के लिए विशेष संघटक योजना तैयार करना संभव नहीं होगा। तथापि, अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों के हितों का संरक्षण करने की दृष्टि से कार्यान्वियन कर रहे सभी अभिकरणों को यह अनुदेश जारी किए गए थे कि यह सुनिश्चित किया जाए कि विभाग के कार्यक्रमों से होने वाले लाभों में अनुसूचित जातियों/जनजातियों को उचित तथा पर्याप्त हिस्सा दिया जाए, बशर्ते कि वे अन्यथा पात्र हों। इन अभिकरणों को यह परामर्श भी दिया गया था कि सहायिकी की 10 प्रतिशत से 15 प्रतिशत तक राशि का उपयोग अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों के लाभ के लिए करने के लिए संगठित प्रयास किए जाएं। इन समुदायों के लाभ-भोगियों को बायोगेस संयन्त्र तथा उन्नत चूल्हे अपनाने के लिए सहायिकी की अधिक मात्रा भी स्वीकृत की जा रही थी। इसके अतिरिक्त यह भी बताया गया था कि कुछ राज्य सरकारें अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों के लिए राज्य योजनाओं से अतिरिक्त सहायिकी दे रही थीं।

ग्रामीण विद्युतीकरण निगम लिमिटेड द्वारा प्रस्तुत की गई सूचना के अनुसार उन्होंने सीधे विशेष संघटक योजना के अधीन परिव्यय तथा खर्च के लिए प्रावधान नहीं किया था। यह राज्य विद्युत बोर्डों द्वारा राज्य सरकारों के परामर्श से किया गया था। तथापि,

ग्रामीण विद्युतीकरण निगम ने अनुसूचित जातियों की बस्तियों में बिजली लगाने के लिए योजनाएं स्वीकृत करने के लिए निधियां, योजना आयोग द्वारा उसके सामान्य तथा न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के लिए किए गए आबंटन में से अलग रखी थीं। छठी योजना अवधि के दौरान अनुसूचित जातियों की 27,524 बस्तियों के विद्युतीकरण के लिए 586 परियोजनाएं मंजूर की गई थीं जिनमें 36.48 करोड़ रुपये की ऋण सहायता अपेक्षित थी। इस अवधि के दौरान संवितरित की गई राशि 23.71 करोड़ रुपये थी। 1985-86 के दौरान निगम द्वारा अनुसूचित जातियों की 636 बस्तियों के विद्युतीकरण के लिए 27 परियोजनाएं स्वीकृत की गई थीं। इस वर्ष के दौरान संवितरित की गई राशि 4.17 करोड़ रुपये थी। अनुसूचित जातियों की बस्तियों में बिजली लगाने के लिए ऋण सहायता अन्य क्षेत्रों के लिए 9.5 प्रतिशत से 10.25 प्रतिशत की ब्याज दर के बजाय रियायती ब्याज दर (6 प्रतिशत) पर दी गई थी। एक नीति के रूप में यह सुनिश्चित किया गया था कि स्वीकृत परियोजनाओं के अधीन सम्मिलित गांवों से सटी हुई अनुसूचित जातियों की बस्तियों का विद्युतीकरण भी मुख्य गांव के साथ ही कर दिया जाए।

(7) वाणिज्य मंत्रालय

वाणिज्य मंत्रालय द्वारा भेजी गई सूचना के अनुसार अनुसूचित जातियों के लिए कोई विशेष संघटक योजना तैयार नहीं की गई थी। मंत्रालय ने कॉफी बोर्ड तथा रबड़ बोर्ड की मात्र गतिविधियों का ही वर्णन किया था।

(8) शिक्षा विभाग

शिक्षा विभाग द्वारा प्रस्तुत की गई सूचना के अनुसार 1986-87 के लिए कुल 116.46 करोड़ रुपए के विभाज्य परिव्यय में से विशेष संघटक योजना के लिए 23.40 करोड़ रुपये की राशि दी गई थी जो कुल विभाज्य परिव्यय का 20.1 प्रतिशत बनती थी। विशेष संघटक योजना में शामिल की गई कुछ महत्वपूर्ण योजनाएं औपचारिकता से इतर शिक्षा, प्रारम्भिक शिशु शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, कालेजों में अनुसूचित जातियों/जनजातियों के छात्रों के लिए उपचारी पाठ्यक्रम, विश्वविद्यालयों में अनुसूचित जाति/जनजातियों के लिए कक्ष, छात्रावास, ग्रामीण क्षेत्रों के प्रतिभाशाली बच्चों को माध्यमिक स्तर पर राष्ट्रीय छात्रवृत्ति, कोचिंग द्वारा अनुसूचित जातियों/जनजातियों के छात्रों की गुणवत्ता का उन्नयन किया जाना आदि थीं।

विशेष संघटक योजना पर क्षेत्र अध्ययन

19. इस कार्यालय ने अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना के अधीन कुछ योजनाओं के कार्यान्वियन का अध्ययन करने के लिए उत्तर प्रदेश के आगरा तथा कानपुर जिलों में सितम्बर, 1983 में क्षेत्रीय अध्ययन किया था। आगरा जिले में बरौली अहीर खण्ड को जिसमें अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 23 प्रतिशत थी, अध्ययन के लिए चुना गया था और कानपुर जिले में घाटमपुर खण्ड को चुना गया था। उस अध्ययन के दौरान निम्नलिखित महत्वपूर्ण बातें सामने आई हैं —

(1) पशुपालन योजना के अधीन अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों के लिए दुधारू पशु खरीदते समय क्रय समिति द्वारा यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त ध्यान नहीं रखा गया था कि पशु अच्छी नस्ल तथा कोटि के खरीदे जाएं। आगरा जिले में यह देखा गया कि एक मामले में लाभभोगी द्वारा खरीदी गई एक भैंस उसके खरीदने के थोड़े समय बाद ही मर गई बताई गई थी जबकि अन्य दो मामलों में भैंस ने दूध देना बन्द कर दिया था और जिस अवधि में उन्होंने दूध दिया था उसमें भी दूध की मात्रा खरीदते समय प्रदर्शित की गई दूध की मात्रा से बहुत कम थी। स्पष्ट है कि बेईमान पशु विक्रेता अपने घटिया पशु बेचने के लिए उन स्थानों पर आगे आए थे जहां बड़ी संख्या में लाभभोगियों के लिए पशु खरीदे गए थे। प्रदर्शन से एक दो दिन पहले पशुओं को बिना दुहे रख कर दूध की अधिक मात्रा प्रदर्शित की गई थी। कानपुर जिले में भी अनुसूचित जातियों के दो लाभभोगियों के लिए खरीदी गई भैंसों ने लगभग दो महीने बाद ही दूध देना बन्द कर दिया था और उनमें से एक भैंस डेढ़ वर्ष बाद मर गई थी। ऐसे मामलों में अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों को दी गई सहायता से उनकी आय में वृद्धि होने के बजाय वास्तव में उनकी जिम्मेदारियों में वृद्धि हुई थी और इस प्रकार यह अलाभकर प्रमाणित हुई थी। यह अनुभव किया गया था कि ऐसे पशु-चिकित्सकों को, जिनकी उपस्थिति में पशु खरीदे गए थे, पशु की नस्ल तथा किस्म के लिए जिम्मेवार ठहराया जाना चाहिए।

(2) आगरा जिले में कलाल खेरिया गांव के अधिकांश हिस्से में बिजली लगा दी गई थी परन्तु गांव में हरिजन बस्तियों में बिजली नहीं लगाई गई थी। कानपुर जिले के घाटमपुर गांव में अनुसूचित जातियों से इतर सभी परिवारों को बिजली के कनेक्शन दिए गए थे परन्तु अनुसूचित जातियों के अधिकांश परिवारों की उपेक्षा की गई थी। इस बात के स्पष्ट अनुदेश थे कि गांव का विद्युतीकरण करते समय अनुसूचित बस्तियों को यदि कोई हों, प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

20. इस कार्यालय द्वारा अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना के अधीन विभिन्न योजनाओं के कार्यान्वियन की जांच करने के लिए एक अध्ययन महाराष्ट्र

के पूना जिले से जन, 1984 में किया गया था । अध्ययन के दौरान किए गए महत्वपूर्ण संप्रेक्षण नीचे दिए गए हैं :—

(1) निर्धनता रेखा से नीचे के लाभभोगियों का चयन करने के लिए ग्राम सभाओं की साधारण सभाओं की बैठक नहीं हुई थी ।

(2) संकेन्द्रण समूह नीति को लागू नहीं किया गया था ।

(3) पूरे जिले में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधीन सहायता दिए गए लाभभोगियों में 29.4 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के थे । तथापि, चूंकि लक्ष्य समूहों में सम्मिलित किए गए चर्म कर्मकारों, टोकरी/रस्सी बुनने वालों आदि के परिवारों की बड़ी संख्या अनुसूचित जातियों की थी, राज्य सरकार को इस कार्यक्रम के अधीन अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों की संख्या में कम से कम 50 प्रतिशत तक की वृद्धि करने की वांछनीयता पर विचार करना चाहिए ।

(4) महात्मा फूले पिछड़ा वर्ग विकास निगम लिमिटेड द्वारा अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों को ऋण स्वीकृत करने के लिए भेजे गए प्रस्तावों को एक बड़ी संख्या में वाणिज्य बैंकों द्वारा थोथे आधारों पर अस्वीकृत कर दिया गया था ।

(5) राज्य कृषि विभाग ने विशेष संघटक योजना के अधीन कार्यान्वित की गई विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों को नोंद पुस्तिकाएं जारी की गई थीं जिसमें उस विभाग द्वारा दी गई सहायता का अभिलेख रखा गया था । विशेष संघटक योजना के अधीन एक ही लाभभोगी को सहायता देने वाले विभिन्न विभागों में समन्वय सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक लाभभोगी को केवल एकल पुस्तिका अर्थात् विकास पत्रिका दी जानी चाहिए । इससे किसी लाभ-भोगी द्वारा कपटपूर्वक ऐसी सहायता प्राप्त कर लेने की संभावनाएं भी दूर हो जाएंगी जिसके लिए वह पात्र नहीं हो सकता था ।

(6) खेड तथा हवेली खण्डों में साक्षात्कार किए गए पांच लाभभोगी अभी भी निर्धनता रेखा के नीचे थे और उन्हें निर्धनता रेखा पार करने में समर्थ बनाने के लिए पेकेज कार्यक्रम के अधीन और सहायता देने की आवश्यकता थी ।

(7) महात्मा फूले पिछड़ा वर्ग निगम द्वारा अनुसूचित जातियों के मिट्टी का तेल बेचने वाले फेरीवालों को दी गई सहायता सुनियोजित थी चूंकि मिट्टी का तेल बेचने में कोई समस्या नहीं थी और यदि राज्य नागरिक आपूर्ति विभाग द्वारा उनके मिट्टी के तेल के कोटे में वृद्धि कर दी जाती तो इन लाभभोगियों की आय में और भी वृद्धि हो सकती थी ।

21. इस कार्यालय द्वारा अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना के अधीन कुछ महत्वपूर्ण कार्यक्रमों तथा जिला अंत्यावसायी सहकारी विकास समिति के कार्यचालन की जांच करने के लिए एक अध्ययन **मध्य प्रदेश** के विदिशा जिले में नवम्बर, 1985 में किया गया था । इस अध्ययन के लिए दो खण्ड अर्थात् विदिशा और लाटेरी चुने गए थे जिनमें अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 20 प्रतिशत से अधिक थी । अध्ययन के दौरान किए गए महत्वपूर्ण संप्रेक्षण नीचे दिए गए हैं :—

(1) विदिशा खण्ड में साक्षात्कार किए गए अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों में 87.5 प्रतिशत चमार समुदाय के थे । निःसंदेह इस जिले में यह समुदाय अनुसूचित जातियों में प्रमुख समूह है जो इस जिले की अनुसूचित जाति जनसंख्या का 75 प्रतिशत है । तथापि, यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि इस कार्यक्रम के अधीन निर्धनों में सर्वाधिक निर्धन की सहायता पहले की जाए, चाहे वह किसी भी समुदाय अथवा समूह का हो ।

(2) कार्यक्रम के अधीन सहायता प्राप्त करने के बाद भी अनुसूचित जातियों के 85 प्रतिशत नमूना परिवार निर्धनता रेखा के नीचे रह गए थे । उन्हें निर्धनता रेखा से ऊपर उठाने के लिए सातवीं योजना के दौरान सहायता की एक और मात्रा देनी पड़ेगी ।

(3) 60 प्रतिशत से अधिक मामलों में अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों को ऋण का संवितरण योजनाएं स्वीकृत किए जाने के एक माह से लेकर एक वर्ष बाद तक किया गया था ! परियोजानाएं स्वीकृत होने के बाद सम्बन्धित बैंकों द्वारा ऋणों का संवितरण यथा संभव शीघ्र किए जाने के लिए प्रयास किए जाने चाहिए ।

(4) विदिशा खण्ड में लाभभोगियों को दिए गए पशुओं में से 14 प्रतिशत खरीदने के एक वर्ष के अन्दर ही मर गए थे जबकि लटेरी खण्ड में यह प्रतिशत 69.6 प्रतिशत था । इनमें से 52 प्रतिशत पशु चिकित्सा प्राप्त करने के बाद भी जीवित न रह सके । 23 प्रतिशत मामलों में पशुओं के लिए चिकित्सा प्राप्त नहीं की गई थी जब कि ऐसे पशुओं के 25 प्रतिशत मामलों में पशु-चिकित्सक उपलब्ध नहीं था ।

(5) मरने वाले पशुओं में 48 प्रतिशत पशुओं की शव-परीक्षा पशु-चिकित्सक द्वारा नहीं की गई थी, इसके परिणामस्वरूप लाभभोगी अपनी क्षतिपूर्ति का दावा सम्बन्धित बीमा कंपनी को प्रस्तुत नहीं कर सके थे। चूंकि राज्य के अन्य भागों में भी यह समस्या विद्यमान हो सकती है, यह सुझाव दिया जाता है कि राज्य सरकार को इस मामले में सुधारक उपाय करने चाहिएं।

(6) कार्यक्रम के अधीन पशुओं की खरीद की पद्धति में सुधार किया जा सकता था, यदि अच्छी नस्ल के पशुओं की खरीद के लिए पशु-चिकित्सक को जिम्मेदार ठहराया जाता जो अपने माध्यम से खरीदे गए पशुओं के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए भी जिम्मेदार होना चाहिए।

(7) पशुपालन योजनाओं जैसे पशु, सूअर यूनिट, बकरी यूनिट, आदि पर अत्यधिक जोर दिया गया था जो कि सुचारू रूप से कार्य नहीं कर रही थीं। भूमि तथा कृषि और कुटीर उद्योगों से सम्बन्धित योजनाओं पर और अधिक बल दिया जाए।

(8) साक्षात्कार किए गए लाभभोगियों के 87 प्रतिशत को विकास पत्रिकाएं जारी की गई थीं। तथापि ये पुस्तकें अद्यतन नहीं रखीं गई थीं।

(9) बैंकों से ऋण प्राप्त करने के कुछ मामलों में, भारतीय रिजर्व बैंक के इन स्पष्ट अनुदेशों के बावजूद कि 5,000 रु० तक के ऋणों के मामलों में निजी जमानत के अतिरिक्त किसी अन्य जमानत के लिए आग्रह नहीं किया जाना चाहिए, सम्बन्धित बैंकों द्वारा अचल सम्पत्ति की जमानत के लिए आग्रह किया गया था।

(10) इस कार्यक्रम के अधीन नमूना लाभभोगियों में से 78 प्रतिशत से अधिक ने उनके द्वारा प्राप्त किए गए ऋण का 50 प्रतिशत से 100 प्रतिशत तक अभी तक वापस नहीं किया था।

(11) राज्य सरकार को एकीकृत ग्रामीण विकास योजना के कार्य के लिए खण्ड कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि करने की वांछनीयता पर विचार करना चाहिए ताकि खण्ड कार्यालय इस कार्यक्रम के अधीन सहायता के मामलों का उपयुक्त रूप से प्रबोधन करने में समर्थ हो सकें।

(12) लटेरी खण्ड में मस्सोदी तथा जवाती गांवों में हरिजन बस्तियों में बिजली नहीं दी गई थी यद्यपि गांवों में बिजली दे दी गई थी।

(13) लटेरी खण्ड में मस्सोदी तथा मुरारिया गांवों में अनुसूचित जातियों के लोगों का मन्दिरों में निर्बाध प्रवेश नहीं था। उन्हें इन गांवों में मन्दिरों के बाहर से केवल प्रार्थना करने की अनुमति दी गई थी।

(14) अंत्यावसायी सहकारी विकास सोसाइटी, विदिशा के एक लाभभोगी ने प्राप्त सहायता का उपयोग उस प्रयोजन के भिन्न कार्य के लिए किया था जिसके लिए उसने सहायता प्राप्त की थी, अर्थात् बैलगाड़ी खरीदने के लिए। लाभभोगियों द्वारा प्राप्त की गई सहायता के मामले में उपयुक्त रूप से अनुवर्ती कार्यवाही किया जाना अनिवार्य हैं।

(15) ग्रामीण आवास योजना के अधीन लटेरी खण्ड के मस्सोदी गांव के मकानों में वर्षा के दौरान घरों में बरसात का पानी तथा भूमिगत पानी आ जाता था। यदि इन मकान-प्लाटों के तल ऊंचे बनाए जाते तो इस स्थिति से बचा जा सकता था।

(16) लटेरी खण्ड के बेरखेडा घोसी गांव में अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों को आबंटित किए गए 16 में से 9 मकानों का अभी तक भी कब्जा नहीं लिया गया था तथा वे उपेक्षित पड़े हुए थे। इसके परिणामस्वरूप इनमें से एक मकान गिर गया था और शेष आठ मकानों की स्थिति भी खराब हो गई थी। स्पष्ट रूप से ही कुछ आवंटियों के पास गांव में पहले से ही रिहायशी मकान थे और वे अपने नए मकानों में आना नहीं चाहते थे। ये मकान अनुसूचित जातियों के अधिक बाचाल व्यक्तियों को आबंटित किए गए थे, जो निर्धनता रेखा के नीचे के प्रतीत नहीं होते थे। योजना के अधीन मकानों का आबंटन उनके लिए वास्तव में जरूरतमंद व्यक्तियों को, जिनके पास गांव में अपना दूसरा रिहायशी मकान न हो, विशेषरूप से अनुसूचित जातियों के अधिक पिछड़े समुदायों के व्यक्तियों को जो निर्धनता रेखा के नीचे हों, किया जाना चाहिए। लाभभोगियों द्वारा धनराशि का दुरुपयोग किए जाने से बचने के लिए उन्हें मकानों की कीमत नक़द देने के बदले खण्ड प्राधिकारियों द्वारा मकानों का निर्माण करके लाभभोगियों को आबंटित किए जाने चाहिए।

(17) चिरखेड़ा, मुरारिया, मस्सोदी और बेरखेड़ा घोसी गांवों के सभी चारों प्राथमिक विद्यालयों में, विशेषरूप से अनुसूचित जातियों के छात्रों पर शिक्षा में बहुत फिजूल-खर्ची होती थी।

(18) इन दोनों खण्डों में विशेषरूप से लटेरी खण्ड में संपर्क सड़कों की स्थिति अत्यधिक खराब थी। इस खण्ड के लगभग 74 प्रतिशत गांव वर्षा ऋतु के लगभग चार महीनों तक शेष जिले से कटे

हुए रहते थे जो कि विकास कार्य के मार्ग में बहुत गंभीर बाधा थी। जिले में गांवों को जोड़ने वाली संपर्क सड़कों तथा पुलियाओं का निर्माण अविलंब किया जाना चाहिए।

पिछड़े वर्ग क्षेत्र का कल्याण

22. छठीं योजना के शुरू में अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना आरभ किए जाने के साथ ही विभिन्न राज्य सरकारों की विशेष संघटक योजनाओं में इन समुदायों के लिए मुख्य विकासीय प्रयास शामिल किए गए थे। तथापि, विशेष संघटक योजना के अधीन इन कार्यक्रमों में रही कमियों को पूरा करने के लिए पिछड़े वर्ग क्षेत्र के कल्याण की आवश्यकता बनी रही थी। यह परिकल्पना की गई थी कि ऐसे कार्यक्रम बनाने होंगे जो अनुसूचित जातियों के त्वरित विकास के लिए सामान्य क्षेत्र के कार्यक्रमों में पूरक हो सकते थे और विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के पिछड़े वर्ग क्षेत्र के कल्याण में शामिल करने होंगे।

अनुसूचित जातियों के लिए केन्द्रीय प्रायोजित योजनाएं

23. कल्याण मंत्रालय के पिछड़ा वर्ग कल्याण क्षेत्र में शामिल की गई केन्द्रीय प्रायोजित योजनाओं में उच्च प्राथमिकता वाली स्कीमें शामिल थीं जैसे अनुसूचित जातियों/जनजातियों के छात्रों को मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियां देना, अस्वच्छ व्यवसायों में लगे व्यक्तियों के बच्चों को मैट्रिक-पूर्व (केवल 6 से 10 कक्षा तक) छात्रवृत्तियां देना, अनुसूचित जातियों/जनजातियों के मेडिकल तथा इंजीनियरी विषयों के छात्रों के लिए पुस्तक बैंक, अनुसूचित जातियों/जनजातियों की लड़कियों के लिए छात्रावास, कोचिंग तथा सहबद्ध स्कीमें, स्वैच्छिक संगठनों को सहायता, नागरिक अधिकार सरक्षण अधिनियम के कार्यान्वयन के लिए तंत्र, अनुसंधान तथा प्रशिक्षण तथा अनुसूचित जाति विकास निगमों को विशेष केन्द्रीय सहायता। सातवीं योजना के दौरान, वर्ष 1986-87 से कुछ नई स्कीमें भी जैसे अवसर लागत के लिए क्षतिपूर्ति, अनुसूचित जातियों के लड़कों के लिए छात्रावास तथा कक्षा 9 से कक्षा 12 तक के कमजोर छात्रों के लिए विशेष कोचिंग आरंभ की गई थी। नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के कार्यान्वयन के लिए तंत्र के सिवाय इन सभी स्कीमों के अधीन नव-बौद्धों को भी हक़दार रखा गया है। 1978-79 तक इन सभी स्कीमों के लिए 100 प्रतिशत आधार पर निधि भारत सरकार द्वारा दी गई थी। 1979-80 से मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियां तथा स्वैच्छिक संगठनों को सहायता की योजना को छोड़कर ऊपर की सभी स्कीमों को केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा भागतः 50: 50 के समान अनुपात के आधार पर पोषित योजनाओं में परिवर्तित कर दिया गया था। यह ज्ञात हुआ था कि राज्य सरकारों की वित्तीय सहायता देने का यह ढांचा सुचारू रूप से कार्य नहीं कर रहा था और राज्य सरकारें यह तर्क प्रस्तुत कर रही थीं कि उनके लिए समान आधार पर इन स्कीमों के लिए पर्याप्त धन देना कठिन था। इसलिए अनुसूचित जातियों के विकास पर सातवीं योजना के कार्यकारी दल ने सिफारिश की थी कि इन योजनाओं के अधीन विकास की गति को तेज करने के लिए इन स्कीमों के बारे में वित्तीय सहायता 100 प्रतिशत आधार पर दी जानी चाहिए जैसी कि 1978-79 तक दी जा रही थी। छठी योजना के दौरान स्कीम-वार परिव्यय तथा व्यय, सातवीं योजना के लिए परिव्यय तथा 1985-86 तथा 1986-87 के दौरान का परिव्यय तथा व्यय नीचे की सारणी में देखा जा सकता है—

सारणी 4

क्रम सं०	स्कीम का नाम	छठी योजना 1980—85		सातवीं योजना 1985—90	1985-86		1986-87	
		परिव्यय	व्यय	परिव्यय	परिव्यय	व्यय	परिव्यय	व्यय
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियां .	130.00	140.94	114.57	10.00	10.00	11.00	11.50
2.	अस्वच्छ व्यवसायों में लगे व्यक्तियों के बच्चों के लिए मैट्रिक-पूर्व छात्रवृत्तियां .	8.00	1.79	10.32	2.50	0.25	1.82	0.13
3.	मेडिकल तथा इंजीनियरी कालेजों में अध्ययन कर रहे अनुसूचित जातियों/जनजातियों के छात्रों के लिए पुस्तक बैंक . .	3.00	0.96	2.25	0.55	0.31	0.50	0.47

1	2	3	4	5	6	7	8	9
4.	अनुसूचित जातियों/जनजातियों की लड़कियों के लिए छात्रावास . .	13.00	13.43	24.55	5.00	3 02	4.55	4.63
5.	अनुसूचित जातियों/जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए कोचिंग तथा सहबद्ध स्कीमें . .	3.50	1.47	2.66	0.70	0.30	0.46	0.35
6.	अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए स्वैच्छिक संगठनों को सहायता .	7.50	2.66	8.59	1.75	1.33	1 59	1.60
7.	नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम का कार्यान्वयन/मेहतरों की मुक्ति .	6.00	15.14	44.07	5.50	5.50	8.57	8.57
8.	अनुसूचित जाति विकास निगम . .	65.00	68 84	69.75	15.00	15.00	12.25	14 58
9	अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए अनुसंधान तथा प्रशिक्षण .	4.00	2.67	4.46	1.00	0.73	0.76	0.61
	कुल योग .	240.00	247.90	281.22	42 00	36.44	41.50	42.44

ऊपर की सारणी से यह ज्ञात होगा कि कुछ महत्वपूर्ण स्कीमों, जैसे अस्वच्छ व्यवसायों में लगे व्यक्तियों के बच्चों के लिए मैट्रिक-पूर्व छात्रवृत्तियां, मेडिकल तथा इंजीनियरी कालेजों में अध्ययन कर रहे अनुसूचित जातियों/जनजातियों के छात्रों के लिए पुस्तक बैंक और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण तथा विकास के लिए कार्य कर रहे स्वैच्छिक सगठनों को सहायता में बहुत भारी कमियां थीं। यह भी उल्लेखनीय है कि **नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के कार्यान्वयन को मेहतरों के मुक्ति की योजना के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए और इन योजनाओं के अधीन परिव्यय तथा व्यय पृथक रूप से दिखाए जाने चाहिए ।**

चमड़ा कर्मकार

24. अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना के अधीन विभिन्न योजनाओं द्वारा समाविष्ट किए जाने वाले लक्ष्य समूहों में चमड़ा कर्मकार, जिनमें से लगभग सभी अनुसूचित जाति के हैं, विशेष महत्व रखते हैं। उनमें से चमड़ा उतारने वाले और उसका परिशोधन करने वालों को अस्वच्छ व्यवसाय में माना जाता है। वे, मल कूड़ा उठाने वाले मेहतरों के साथ अस्पृश्यता को प्रथा से सर्वाधिक पीड़ित हैं। वे अत्यधिक अस्वास्थ्यकर परिस्थितियों में कार्य करते हैं और गावों में उनकी सामाजिक स्थिति, जहां वे अपरिहार्य रूप से मुख्य गांव से दूर पृथक हेमलेट या बस्तियों में रहते हैं, निम्नतम स्तर पर हैं। इन चमड़ा शोधकों द्वारा चमड़ा शोधन को पुरानी तकनीक ही अपनाई जा रही है और चमड़ा उतारने वालों और परिशोधकों की कार्य करने की परिस्थितियों में सुधार करने के लिए केन्द्र या राज्य सरकारों द्वारा कोई भी कारगर प्रयास नहीं किए गए हैं। इस दौरान चमड़ा उद्योग की विभिन्न समस्याओं की देखभाल के लिए 13 राज्यों में चमड़ा विकास निगमों की स्थापना की गई है परन्तु प्राथमिक चमड़ा कर्मकार अधिकांश रूप से उपेक्षित रहा है। अनुसूचित जातियों के विकास पर सातवीं योजना के कार्यकारी दल ने बिखरे प्राथमिक चमड़ा कर्मकारों के लिए एक विकास आयुक्त का कार्यालय स्थापित किए जाने का सुझाव दिया है ताकि उनकी समस्याओं को कुल मिलाकर एक राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में लाया जा सके। उक्त कार्यकारी दल ने एक बड़ी संख्या में प्राथमिक चमड़ा कर्मकारों के उत्थान के लिए निम्नलिखित सुझाव भी दिए हैं—

(1) प्राथमिक चमड़ा कर्मकारों को विशेष रूप से ध्यान में रखकर एक निश्चित और विस्तृत कार्यक्रम बनाए जाने की आवश्यकता है।

(2) प्रत्येक राज्य में प्राथमिक चमड़ा कर्मकारों की घनी बस्तियों का पता लगाना चाहिए और ये परियोजनाएं विशेष संघटक योजना के अधीन आरम्भ की जानी चाहिएं।

(3) वाणिज्य मंत्रालय को घरेलू मांग के लिए कच्चे माल की आवश्यकता को ध्यान में रखकर अपनी निर्यात नीति को पुनरीक्षित करना चाहिए।

(4) उद्योग मंत्रालय को उत्पादन चक्र के प्रत्येक प्रक्रम में लगे चमड़ा कर्मकारों की आवश्यकताओं और हितों को ध्यान में रखकर एक नीति तैयार करनी चाहिए।

(5) मृत पशुओं को उठाने, चमड़ा उतारने और उसका परिशोधन करने तथा हड्डियां एकत्र करने से लेकर तैयार माल के प्रक्रम तक की सभी गतिविधियों को संगठित किया जाना चाहिए।

(6) चमड़ा उतारने वालों और परिशोधन करने वालों द्वारा अपनाई गई परम्परागत तकनीकों का गहरा अध्ययन किया जाना चाहिए। गावों में इन परम्परागत चमड़ा उतारने वालों और परिशोधन करने वालों द्वारा प्राप्त की जा रही आय और विभिन्न स्तरों पर उत्पादनों का बाजार मूल्य ज्ञात करने के लिए भी एक आर्थिक सर्वेक्षण किया जाना चाहिए।

(7) अनुसंधान संस्थानों में इस समय उपलब्ध तकनीक का हस्तांतरण करके गावों में चमड़े के परिशोधन का आधुनिकीकरण करने के लिए एक योजना तैयार की जानी चाहिए।

(8) आपूर्ति मंत्रालय और सार्वजनिक क्षेत्र के संगठनों तथा राज्य विभागों के प्रभारी अन्य मंत्रालयों द्वारा खरीदारियों के संबंध में, ऐसी खरीदारियां सीधे चमड़े के माल के अनुसूचित जातियों के उत्पादकों से किए जाने के लिए एक खरीदारी प्राथमिकता नीति अपनाई जानी चाहिए।

25. इस कार्यालय द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ प्राथमिक चमड़ा कर्मकारों की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए **उत्तर प्रदेश** के आगरा जिले में सितम्बर 1983 में एक अध्ययन किया गया था। इस अध्ययन के लिए बरोली अहीर खंड को चुना गया था जिसमें अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 23 प्रतिशत थी। इस अध्ययन के दौरान किए गए महत्वपूर्ण सम्प्रेक्षण नीचे दिए गए हैं—

(1) भारत चमड़ा निगम, उत्तर प्रदेश चमड़ा विकास और विपणन निगम लि० तथा खादी और ग्रामोद्योग कमीशन ने चमड़ा कारीगरों को माल की आपूर्ति के आदेश दिए थे, उन्हें कच्चा माल और दूसरे निवेश दिए गए थे और जूते बनाने के लिए उन्हें तकनीकी मार्ग-दर्शन भी दिया था। तथापि इन संगठनों के सामने बाधा थी क्योंकि उन्हें जूते बनाने के आदेश प्राप्त करने के लिए दूसरे सरकारी अभिकरणों पर निर्भर रहना पड़ता था। इसके परिणामस्वरूप इन कारीगरों को आर्डर के अभाव के कारण वर्ष मे तीन से चार महीने तक के लिए बिना रोजगार के रहना पड़ता था।

(2) पर्चा प्रणाली जिसके अधीन कारीगरों को उनके द्वारा बेचे गए जूतों के लिए कमीशन एजेन्टों द्वारा उधार के आधार पर भुगतान किया जाता है, कारीगरों की मोलभाव करने की क्षमता के लिए एक बड़ी बाधा है। इन कारीगरों को, जिन्हें साधारण तौर पर नकद पैसे की आवश्यकता होती है इस पर्चे का नकदीकरण प्रतिमाह 2 प्रतिशत से 4 प्रतिशत तक की कटौती पर कराना पड़ता है। परिस्थितिवश वे अधिकाशत: कच्चे माल भी इसी पर्चे के आधार पर थोक विक्रताओं के स्वामित्व वाली दुकानों से ही खरीदने के लिए बाध्य होते हैं। इस प्रकार उनके लाभ की मात्रा बहुत अधिक घट जाती है। राज्य सरकार को इस पर्चा प्रणाली को बंद करने के लिए और कारीगरों को उनके उत्पादन की बिक्री के लिए नकद भुगतान सुनिश्चित करने के लिए कुछ प्रभावी उपाय करने चाहिएं।

(3) जूता बनाने के कार्य में लगे चमड़ा कारीगरों ने यह विचार व्यक्त किया था कि जूते बनाने की तकनीक में प्रगति हो जाने से वे संगठित क्षेत्र के साथ मुकाबला करने मे असमर्थ थे और इसलिए वे ऐसे चमड़ा मजदूरों की स्थिति में परिवर्तित हो रहे थे जो जूते के निर्माण में लगे विभिन्न कारखानों में दैनिक मजदूरी के लिए आगरा चले गए थे। भारत चमड़ा निगम ने आगरा के निकट नारायणछ गांव में जूता कारीगरों की सबसे बड़ी एक घनी बस्ती के निकट एक योजना आरम्भ की थी। इस योजना में चमड़ा कारीगरों के प्रशिक्षण और तकनीकी ज्ञान के लिए प्रावधान किया गया था जिन्हें 4 सहकारी समितियों में व्यवस्थित किया जाएगा और उनके तैयार उत्पादनों के लिए 100 प्रतिशत विपणन सहायता दी जाएगी। यह आशा की गई थी कि जब उक्त निगम की इस सहायता योजना के अधीन सहकारी समितियां कार्य करना आरम्भ करेंगी तो कारीगर सभी सुविधाएं प्राप्त करने में समर्थ होंगे और अपने द्वारा निर्मित जूतों की बिक्री हो जाने के लिए आश्वस्त होंगे.

26. यह सुझाव है कि देश के पूरे जूता उद्योग को सहकारी आधार पर संगठित किया जाना चाहिए। इस समय वे चमड़ा कर्मकार जो सहकारी समितियों में सम्मिलित नहीं है बिचौलियों और विभिन्न अभिकरणों द्वारा उनका शोषण किया जा रहा है। जूते के निर्माण में लगे हुए कर्मकारों की सहकारी समितियां वास्तव में सहकारी होनी चाहिएं।

मल उठाने वाले मेहतरों की मुक्ति

27. मेहतरों द्वारा जिनमें लगभग सभी अनुसूचित जाति के हैं, मल हाथों से उठाने की यह अमानवीय और अपमानजनक

प्रथा उनके विरुद्ध अस्पृश्यता को शाश्वत रखने के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार है। मल उठाने की यह बुरी प्रथा देश के बहुत बड़े क्षेत्र में उठाऊ पाखाने विद्यमान होने के कारण जारी रही है। गृह मंत्रालय ने विद्यमान उठाऊ पखाने को कम लागत वाले बहाऊ पखाने में बदलने के उपाय द्वारा और बेरोजगार मेहतरों को वैकल्पिक रोजगार देकर 50:50 के बराबर के खर्चे के आधार पर नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955, की धारा 15(क) के अनुसरण में अस्पृश्यता निवारण के लिए एक उपाय के रूप में और चुने गए कस्बों में सम्पूर्ण कस्बा योजना के आधार पर इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता देने के उपायों द्वारा "मेहतरों की मुक्ति" की केन्द्रीय प्रयोजित योजना आरंभ की थी। इस समय तक विभिन्न राज्यों में 91 कस्बों में यह कार्य आरम्भ किया गया था जिनमें से 8 राज्यों में 18 कस्बे मल उठाने की प्रथा से मुक्त किए जा चुके थे। अन्य कस्बों में इस काम में प्रगति हो रही थी। अनुसूचित जातियों के विकास पर सातवीं योजना के कार्यकारी दल ने यह सिफारिश की थी कि मल उठाने की प्रथा उस योजना अवधि में पूर्णतः समाप्त हो जानी चाहिए। इसने यह सुझाव भी दिया था कि इस प्रकार मुक्त मेहतरों और उनके आश्रितों की अपना निर्वाह करने के लिए आय के साधन ऐसे वैकल्पिक रोजगारों में उपलब्ध कराए जाने चाहिएं जिसमें अस्पृश्यता का लक्षण न हो। इस प्रयास में केन्द्र और राज्य सरकारों को समान रूप से भागीदार होना चाहिए। यह अनुमान लगाया गया था कि देश में लगभग 41 लाख उठाऊ पाखाने थे जिन्हें बहाऊ पाखाने में बदला जाना अपेक्षित था। सातवीं योजना के दौरान इस योजना के लिए अपेक्षित अनुमानित निधि 1,500 करोड़ रुपए के लगभग थी जिसमें विस्थापित मेहतरों के पुनर्वास की लागत भी शामिल थी जिसमें केन्द्रीय भाग 750 करोड़ रुपए का होगा।

28. इस कार्यकारी दल ने केन्द्रीय स्तर पर यह सिफारिश की थी कि यह कुल लागत निर्माण और आवास मंत्रालय (अब शहरी विकास मंत्रालय) और कल्याण मंत्रालय द्वारा बांटी जानी चाहिए। श्रेणी–1 के कस्बों में उठाऊ पाखानों को बहाऊ पाखानों में बदलने की जिम्मेदारी पहले मंत्रालय की होनी चाहिए और दूसरे मंत्रालय को श्रेणी–2 तथा अन्य वर्गों के कस्बों के सम्बन्ध में यह कार्य करना चाहिए। मुक्त सभी मेहतरों को वैकल्पिक व्यवसाय उपलब्ध कराए जाने चाहिएं जिसके लिए आवश्यक प्रशिक्षण राज्य सरकारों द्वारा दिया जाना चाहिए। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम तबदीली से पहले होना चाहिए ताकि एक ओर इस तबदीली और वैकल्पिक रोजगार में कोई अन्तराल न हो तथा दूसरी ओर मेहतर उपलब्ध न रहें और उससे तबदीली की प्रक्रिया की गति तेज हो जाए। 1985–86 और 1986–87 के दौरान शहरी मलवयन प्रणाली कार्यक्रम की प्रगति के संबंध में शहरी विकास मंत्रालय द्वारा यथा प्रस्तुत राज्य–वार सूचना अनुलग्नक 4 में देखी जा सकती है। उस मंत्रालय द्वारा कम लागत के शहरी स्वच्छता कार्यक्रम की प्रगति के बारे में भेजी गई उसी प्रकार की सूचना अनुलग्नक 5 में देखी जा सकती है। कल्याण मंत्रालय द्वारा इस योजना के अधीन छठी योजना के दौरान 19 राज्यों को कुल 1153.11 लाख रुपए की राशि दी गई थी और 1985–86 तथा 1986–87 के दौरान क्रमशः 509.42 लाख रुपए और 800.66 लाख रुपए दिए गए थे। इन राज्यों के नाम और उनके द्वारा केन्द्रीय सरकार से प्राप्त की गई धन राशियां नीचे की सारणी में दी गई हैं—

सारणी 5

(रुपए लाख में)

क्रम सं०	राज्य	छठी योजना 1980–85	1985–86	1986–87
1	2	3	4	5
1.	आंध्र प्रदेश	148.60	63.81	141.61
2.	असम	29.96	8.00	—
3.	बिहार	302.65	88.23	160.74
4.	गुजरात	—	—	—
5.	हरियाणा	21.00	—	—
6.	हिमाचल प्रदेश	83.00	—	35.74
7.	जम्मू–काश्मीर	—	54.00	54.00
8.	कर्नाटक	8.84	8.00	—
9.	केरल	11.13	—	—
10.	मध्य प्रदेश	214.74	115.56	147.98
11.	महाराष्ट्र	30.08	40.22	24.14
12.	मणिपुर	—	—	—

1	2	3	4	5
13.	उड़ीसा	15.08	6.00	70.04
14.	पंजाब	—	—	—
15.	राजस्थान	64.84	51.20	39.43
16.	तमिलनाडु	55.21	20.00	—
17.	त्रिपुरा	75.35	—	—
18.	उत्तर प्रदेश	30.00	20.00	18.72
19.	पश्चिम बंगाल	62.63	34.40	108.26
	योग	1153.11	509.42	800.66

कल्याण मंत्रालय द्वारा मेहतरों की मुक्ति की केन्द्रीय प्रायोजित योजना के अधीन लिए गए कस्बों की सूची अनुलग्नक 6 में देखी जा सकती है।

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को वितरण एजेंसियों का आबंटन

29. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की आर्थिक स्थिति में सुधार करने की दृष्टि से आयुक्त की पूर्व की रिपोर्टों में यह सिफारिश की गई थी कि सार्वजनिक क्षेत्र के विभिन्न उपक्रमों द्वारा वितरण एजेंसियों के आबंटन में कुछ प्रतिशत आरक्षण किया जाना चाहिए। सरकार ने कोटों और परमिटों इत्यादि के आबंटन में आरक्षण को अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सामाजिक आर्थिक स्थिति उन्नत करने की ओर एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में स्वीकार कर लिया है। यह क्षेत्र अपेक्षाकृत कम जोखिम-प्रवृत्त है और राज्य अभिकरणों द्वारा देख भाल तथा प्रबन्ध के अधीन भी है। जब अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कुछ व्यक्ति स्वयं ही इस अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित क्षेत्र में व्यवस्थित हो जाएं हम केवल तभी यह आशा कर सकते हैं कि उनमें से **और** अधिक संख्या में व्यक्ति इस अनिश्चित निजी क्षेत्र में आएं। यदि वे इस में पैर जमाने में असफल रहते हैं तो इस आर्थिक प्रणाली में उनकी आगे प्रगति के लिए कोई अवसर नहीं है। धारणा यह है कि राज्य का एक ऐसा महत्वपूर्ण दायित्व केवल दिखावे की वस्तु नहीं हो सकता है। यदि इसके अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करना है तो परिश्रम के साथ इसकी देख-भाल करनी होगी और इसे स्थिर करना होगा। अतः वास्तविक कार्य सरकार द्वारा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए एक कोटा आरक्षित करने के लिए औपचारिक निर्णय किए जाने के बाद आरंभ होता है। इस संबंध में पहला कदम यह होगा कि यह सुनिश्चित किया जाए कि इन अवसरों की जानकारी तात्विक रूप से लाभभोगी होने वाले व्यक्तियों को कराई जाए। ऐसी संभावना है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के पर्याप्त संख्या में उम्मीदवार आगे न आएं। अतः यह आवश्यक होगा कि उक्त एजेंसी की शर्तों में उपयुक्त रूप से सुधार किया जाए जो एक क्षेत्र से दूसरे में प्रत्येक मामले की सामान्य सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के आधार पर भिन्न-भिन्न हो सकती है ताकि संभावित लाभभोगी उम्मीदवार पर्याप्त संख्या में एजेंसियां लेने के लिए आगे आएं। बहुत से मामलों में विशेष रूप से अधिक पिछड़े क्षेत्रों में, छूट वाली शर्तें भी कठोर रह सकती हैं। अतः इस ओर तीसरा कदम यह होगा कि सहायता की एक योजना सीधे या अन्य संस्थाओं के सहयोग से तैयार की जाए ताकि वे व्यक्ति भी इस व्यवसाय में आ सकें जिनके पास अपने संसाधन नहीं हैं। अन्तिम रूप से, किसी व्यक्ति के इस व्यवसाय के क्षेत्र में प्रवेश कर जाने पर भी उसकी सहायता अवश्य की जानी चाहिए ताकि वह उस क्षेत्र में, जो उसके लिए परदेश और अपरिचित है, स्थिर हो सके। किसी संस्था द्वारा केवल उपर्युक्त चारों कदम पूरे किए जाने के बाद ही यह कहा जा सकता है कि संवैधानिक दायित्वों का पूरी तरह निर्वाह किया गया है।

30. भारत सरकार के संबंधित मंत्रालयों/विभागों से यह अनुरोध किया गया था कि उनके द्वारा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए किए गए आरक्षणों के विस्तृत विवरणों के संबंध में सूचना भेजी जाए। उनसे प्राप्त हुई सूचना इस प्रकार है—

(1) नागरिक आपूर्ति विभाग

नागरिक आपूर्ति विभाग द्वारा अक्तूबर 1986 में भेजी गई सूचना के अनुसार अधिकांश रूप से सभी राज्य/संघ राज्य क्षेत्र उचित दर दुकानों के लिए नए लाइसेंस देते समय अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों को प्राथमिकता दे रहे थे।

(2) उर्वरक विभाग

इस विभाग के प्रशासनिक नियंत्रण के अधीन सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को सितम्बर 1978 में यह अनुदेश जारी किए गए थे कि भविष्य में दी जाने वाली उर्वरकों की कुल एजेंसियों की कम से कम 25 प्रतिशत एजेंसियां अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए आरक्षित की जाए। आरक्षण के इस प्रतिशत का आंकलन राज्य के आधार पर किया जाना था। यदि इन समुदायों के पर्याप्त संख्या में आवेदक या उपयुक्त उम्मीदवार उपलब्ध नहीं थे तो, उस

दशा में अनारक्षण सक्षम प्राधिकारी के विशिष्ट अनुमोदन से किया जाना था। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से उनसे किसी प्रतिभूति निक्षेप की मांग नहीं की जानी थी। इस समूह के एजेंटों द्वारा मांगा गया माल भेजने में भी प्राथमिकता दी जानी थी। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के एजेंटों के लिए, उनकी नियुक्ति होने पर तत्काल, उनके व्यवसाय स्थान के निकट के क्षेत्रीय कार्यालय में दो सप्ताह का गहन प्रशिक्षण आयोजित किया जाना था। ये उम्मीदवार वापसी यात्रा के लिए द्वितीय श्रेणी के किराए और प्रशिक्षण अवधि के दौरान 30 रुपए प्रतिदिन के भत्ते के लिए हकदार होंगे। इन समुदायों के उम्मीदवारों को उनके शोषण से बचाने के लिए उन्हें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के व्यक्तियों के सिवाय किसी अन्य व्यक्ति के साथ साझेदारी के लिए अनुमति नहीं दी जाएगी। उर्वरक निगम के क्षेत्र अधिकारियों की बैंकों के साथ संपर्क बनाए रखना था ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के एजेंटों को बैंकों से अपेक्षित सुविधाएं प्राप्त हों। उन्हें ये रियायतें तीन वर्ष की अवधि के लिए उपलब्ध होंगी और उसके बाद उन्हें अन्य एजेंटों के समकक्ष बरता जाएगा। यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से कि एजेंसी अनुसूचित जतियों तथा जनजातियों के केवल उपयुक्त उम्मीदवारों को ही मिलें राज्य में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कल्याण से संबंधित विभाग का एक प्रतिनिधि चयन में सहयुक्त किया जाएगा।

(3) पैट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस मंत्रालय

सार्वजनिक क्षेत्र की तेल कम्पनियों द्वारा खाना पकाने की गैस की वितरण एजेंसियों सहित पैट्रोलियम की विभिन्न वस्तुओं की एजेंसियों के आवंटन में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए 25 प्रतिशित का आरक्षण किया गया था। तथापि यह देखा गया है कि कुछ मामलों में अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों को आबंटित गैस एजसियां ऐसे कारणों से समाप्त की गई थीं जिन्हें सम्भवतः पूरी तरह से न्यायोचित नहीं कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए मेरे ध्यान में एक मामला आया था जिसमें मध्य प्रदेश के बेतूल जिले के एक आदिवासी निवासी को जिसे हिन्दुस्तान पैट्रोलियम निगम द्वारा एक गैस एजेंसी दी गई थी, उसे समाप्त करने के लिए 1986 के दौरान नोटिस दिया गया था। इस मामले को पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय के साथ सर्वोच्च स्तर पर उठाया गया था। तथापि उस मंत्रालय से इसका अन्तिम उत्तर आना अभी बाकी था। इससे पूर्व इसी प्रकार के अन्य मामले भी हमें सूचित किए गए थे। भारतीय तेल निगम लिमिटेड ने अनुसूचित जातियों की 10 और जनजातियों की 2 गैस वितरण एजेंसियों की एक सूची भेजी है जो 1986–87 तक समाप्त कर दी गई थी।

इन मामलों में उपर्युक्त पैरा 29 के आरम्भ में विवेचित आधारभूत नीति का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है जिसकी जांच पड़ताल तत्काल किए जाने की आवश्यकता है। हमें जिन मामलों की सूचना मिली है वे अनुसूचित जातियों और जनजातियों में अपेक्षाकृत सम्पन्न वर्गों के व्यक्तियों से संबंधित है। यदि आर्थिक रूप से अच्छी पृष्ठभूमि वाले व्यक्तियों के सामने ही समस्याएं आती हैं तब निर्धनतर पृष्ठभूमि वाले व्यक्तियों की क्या स्थिति होगी इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि कुछ समस्याएं अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के विरुद्ध अन्तर्निहित भेदभाव और द्वेष के कारण है। अतः वितरण एजेंसियों के आरक्षण के कार्य चालन का पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय द्वारा सूक्ष्म रूप से पुनरवलोकन किए जाने की आवश्यकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि संवैधानिक अपेक्षाओं की पूर्ति केवल ढांचे के रूप में नहीं बल्कि भावना के रूप में की जाए।

(4) रेल मंत्रालय

इस मंत्रालय द्वारा अक्तूबर 1986 में भेजी गई सूचना के अनुसार एक इकाई वाले केटरिंग फेरी बिक्री के ठेके केवल अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षित किए गए हैं उससे बड़े ठेकों के आबंटन के समय अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों को प्रथम प्राथमिकता दी जाती है।

(5) भू-तल परिवहन विभाग (परिवहन स्कन्ध)

मोटर वाहन अधिनियम, 1939 की धारा 63 (7) के अधीन मंजूर किए जाने वाले संविदा परिवहन परमिटों के बारे में आरक्षण के लिए कोई प्रावधान नहीं है। जहां तक व्यवस्था परिवहन परमिटों का संबंध है अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण उपर्युक्त अधिनियम की धारा 47 (1–क) के अनुसार विनियमित किया जाता है, जो यह उपबंध करता है कि "किसी राज्य की सरकार अनुसूचित जातियों तथा जनाजातियों के लिए उस राज्य में व्यवस्था परिवहन परमिटों का कुछ प्रतिशत आरक्षित करेगी"। उक्त अधिनियम की धारा 47 की उपधारा (1–ख) के अनुसार उपधारा (1–क) के अधीन परमिटों का आरक्षण उसी अनुपात से होना है जिस अनुपात से उस राज्य में लोक सेवाओं में सीधे भर्ती द्वारा नियुक्तियां की जाती हैं। राष्ट्रीय परमिटों की मंजूरी के संबंध में राज्य सरकारों द्वारा ऐसे परमिटों की मंजूरी पर लगाए गए कोटा प्रतिबंधों को हटा दिया गया है और इसलिए इस संबंध में आरक्षण आवश्यक नहीं समझा गया है।

(6) पर्यटक विभाग

अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति से मार्च 1986 में एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि उसने भारतीय पर्यटन विकास निगम के होटल, आगरा अशोक में जो लगभग पूर्ण हो चुका था, एक दुकान के आबंटन के लिए आवेदन किया था, परन्तु उस निगम ने उसका अनुरोध इस तर्क पर नामंजूर कर दिया था कि अनुसूसूचित जातियों/जनजातियों के

आवेदकों के लिए होटलों में दुकानों के आरक्षण के लिए कोई नीति नहीं थी। यह मामला पर्यटक विभाग के पास भेजा गया था जिन्होंने सूचित किया था कि चूंकि भारतीय पर्यटन विकास निगम के होटल वाणिज्यिक आधार पर चलाये जाते थे इसलिए अनुसूचित जातियों/जनजातियों के आवेदकों के लिए इन होटलों में दुकानों के आरक्षण के लिए कोई नीति नहीं बनाई गई थी। होटलों में उक्त दुकानों की संख्या भी बहुत थोडी होती है और ये दुकानें खुली निविदाएं आमंत्रित करने के बाद आबंटित की जाती है।

भारतीय पर्यटन विकास निगम द्वारा दिया गया उक्त तर्क इस संबंध में राज्य की सामान्य नीति के अनुरूप नहीं है विशेष रूप से इसलिए कि इस मामले में खुली निविदा के रूप में एक प्रतियोगिता से भिन्न कोई अन्य कसौटी नहीं अपनाई गई है जो केवल किसी व्यक्ति की वित्तीय क्षमता का सूचक है और इसके अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। यह स्पष्ट है कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों जैसे निर्बलतर वर्गों के व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के साथ मुकाबला नहीं कर सकते हैं, विशेष रूप से इन व्यवसायों में जिनमें लाभ की गुंजाइश अधिक है और जिनके लिए लोग अत्यधिक लालायित रहते हैं। बड़ी मात्रा में धन निवेश करने की उनकी क्षमता के रूप में उनकी सक्षमता उस व्यवसाय में प्रवेश करने के लिए उनकी योग्यता और उस व्यवसाय का नियंत्रण संभाल सकने में उनकी दक्षता का सूचक नहीं हैं। यह वही स्थिति है जिसमें राज्य की भूमिका निर्णायक हो जाती है और जिसे बिना बराबर वालों के साथ ऐसी प्रतियोगिता की स्थिति में ऐसे व्यक्तियों को न केवल उपयुक्त संरक्षण ही प्रदान करना चाहिए बल्कि जहां आवश्यक हो उपयुक्त वित्तीय और तकनीकी सहायता भी प्रदान करनी चाहिए। यह अधिकांश रूप से उस भ्रम के कारण हुआ है जो कि किसी व्यक्ति की स्वाभाविक योग्यताओं और वित्तीय क्षमताओं के बीच जानबूझकर उत्पन्न किया गया है। ऐसा कोई कारण नहीं है जिससे भारतीय पर्यटन विकास निगम को अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आरक्षण के लिए राज्य की सामान्य नीति को स्वीकार न करने के विशेष अधिकार का दावा करना चाहिए। **यह सुझाव है कि भारतीय पर्यटन विकास निगम नये अवसरों की स्थिति और उनमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण, जैसा अन्य सरकारी संगठनों और उपक्रमों में है, के बारे में अपनी पूरी नीति पर पुनर्विचार करे।**

अनुलग्नक 1

कुल योजना परिव्यय के परिप्रेक्ष्य में विशेष संघटक योजना के लिए दी गई राशि तथा छठी योजना के दौरान विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में योजना अवधि के लिये किये गये वर्षवार तथा कुल व्यय को दर्शाने वाला विवरणपत्र

(रुपये करोड़ में)

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	अ० जा० की जनसंख्या का प्रतिशत	कुल योजना परिव्यय	विशेष संघटक योजना के निमित्त राशि	स्तम्भ 4 से स्तंम्भ 5 का प्रतिशत	अ० जा० की जनसंख्या के प्रतिशत से वि० सं० योजना के प्रतिशत का अनुपात (स्तम्भ 3 से स्तम्भ 6)	विशेष संघटक योजना पर कुल व्यय
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	आन्ध्र प्रदेश .	14.87	3091.85	426.63	13.83	93.00	334.61 (87.40%)
2.	असम .	6.24	1089.41	22.61	2.07	33.17	22.52 (99.60%)
3.	बिहार .	14.58	3087.00	262.65	8.51	58.36	190.75 (72.63%)
4.	गुजरात .	7.15	3729.60	112.44	3.01	42.09	102.20 (90.89%)
5.	हरियाणा .	19.07	1687.09	147.11	8.71	45.67	121.15 (82.35%)
6.	हिमाचल प्रदेश .	24.62	612.75	59.80	9.75	39.60	59.03 (98.71%)
7.	जम्मू-काश्मीर .	8.31	901.32	16.50	1.83	22.02	9.25 (56.06%)
8.	कर्नाटक . .	15.07	2471.28	299.13	12.10	80.29	266.20 (88.99%)
9.	केरल . .	10.02	1471.00	104.16	7.08	70.66	88.36 (84.83%)
10.	मध्य प्रदेश .	14.10	3911.05	238.85	6.10	43.26	217.67 (91.13%)
11.	महाराष्ट्र .	7.14	6293.34	171.14	2.72	21.30	153.45 (89.66%)
12.	मणिपुर . .	1.25	242.87	11.18	4.60	301.96	3.02 (27.01%)
13.	उड़ीसा . .	14.66	1404.86	114.34	8.13	55.45	128.48 (112.37%)
14.	पंजाब . .	26.87	1530.64	117.35	7.66	28.50	103.71 (88.38%)
15.	राजस्थान . .	17.04	1841.86	196.83	10.68	62.67	184.94 (93.96%)
16.	सिक्किम . .	5.78	102.39	1.86	1.82	31.48	0.30 (16.13%)
17.	तमिलनाडु . .	18.35	3431.84	451.09	13.14	71.60	264.27 (58.58%)
18.	त्रिपुरा . .	15.12	230.44	23.53	10.21	67.52	22.79 (96.86%)
19.	उत्तर प्रदेश .	21.16	5981.00	538.93	9.01	42.58	488.81 (90.70%)
20.	पश्चिम बंगाल .	21.99	2642.51	204.97	7.76	35.29	121.10 (59.08%)
21.	चंडीगढ़ . .	14.09	96.04	4.69	4.88	34.63	4.14 (88.27%)
22.	दिल्ली . .	18.03	1023.38	66.40	6.48	35.94	78.30 (117.92%)
23.	गोवा, दमण और दीव	2.16	180.68	8.23	4.55	210.64	0.95 (11.54%)
24.	पांडिचेरी .	15.99	95.79	14.24	14.86	92.93	12.90 (90.59%)
	योग .		47149.99	3614.66	7.67		2978.90 (82.41%)

सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान कुल योजना परिव्यय के परिप्रेक्ष्य में विशेष संघटक योजना को दी गई निधि और वर्ष 1985-86 तथा

		सातवीं योजना 1985-90					1985	
क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	अनुसूचित जाति की जनसंख्या का प्रतिशत	कुल योजना परिव्यय	विशेष संघटक योजना के निमित्त राशि	स्तम्भ 4 से स्तम्भ 5 का प्रतिशत	अ० जा० की जनसंख्या के प्रतिशत से वि० सं० योजना के प्रतिशत का अनुपात (स्तम्भ 3 से स्तम्भ 6)	कुल योजना परिव्यय	विशेष संघटक योजना के निमित्त राशि
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	आन्ध्र प्रदेश .	14.87	5200.00	800.41	16.16	108.67	1044.00	120.64
2.	असम . .	6.24	2100.00	66.92	3.19	49.69	198.97	10.44
3.	बिहार . .	14.58	5100.00	330.56	6.48	44.66	851.00	67.27
4.	गुजरात . .	7.15	6000.00	178.09	2.97	41.54	804.37	25.87
5.	हरियाणा . .	19.07	2900.00	179.29	6.18	32.41	480.00	30.33
6.	हिमाचल प्रदेश .	24.62	1050.00	115.50	11.00	44.68	177.00	19.49
7.	जम्मू-काश्मीर .	8.31	1400.00	47.84	3.42	41.16	260.00	9.56
8.	कर्नाटक .	15.07	3500.00	452.86	12.94	85.87	650.56	76.22
9.	केरल .	10.02	2100.00	210.19	10.01	99.90	366.42	29.58
10.	मध्य प्रदेश . .	14.10	7000.00	414.88	5.93	42.06	1105.54	63.32
11.	महाराष्ट्र .	7.14	10500.00	247.89	2.36	18.48	275.58	42.87
12.	मणिपुर . .	1.25	430.00	6.45	1.50	98.03	70.08	1.42
13.	उड़ीसा . .	14.66	2700.00	201.42	7.46	50.88	201.62	36.51
14.	पंजाब . .	26.87	3285.00	181.44	5.52	20.54	506.39	21.87
15.	राजस्थान . .	17.04	3000.00	377.00	12.57	73.77	430.00	52.00
16.	सिक्किम . .	5.78	230.00	2.37	1.03	17.82	41.00	0.39
17.	तमिलनाडु .	18.35	5750.00	686.25	11.93	65.01	960.00	126.16
18.	त्रिपुरा . .	15.12	440.00	42.54	9.67	63.96	54.12	7.55
19.	उत्तर प्रदेश .	21.16	10447.00	1075.00	10.29	48.63	1750.00	172.67
20.	पश्चिम बंगाल .	21.99	4125.00	438.81	10.64	48.39	348.24	65.42
21.	चण्डीगढ़ .	14.09	203.10	8.90	4.38	31.09	6.65	2.35
22.	दिल्ली . .	18.03	2000.00	110.42	5.52	30.62	335.00	13.09
23.	गोवा, दमण और दीव	2.16	360.00	3.43	0.95	43.98	64.00	0.81
24.	पाँडिचेरी .	15.99	170.00	27.21	16.01	100.13	33.00	5.20
	योग .		79990.10	6205.67	7.76		11013.54	1001.03

1986-87 में विशेष संघटक योजना को दी गई निधि और किये गये व्यय की राज्यवार स्थिति को दर्शाने वाला विवरण पत्र

(रुपये करोड़ में)

86	1986-87						
स्तम्भ 8 से स्तम्भ 9 का प्रतिशत	विशेष संघटक योजना पर व्यय ×	अ० जा० की जनसंख्या के प्रतिशत से वि०सं० योजना के प्रतिशत का अनुपात (स्तम्भ 3 से स्तम्भ 10)	कुल योजना परिव्यय	विशेष संघटक योजना के निमित्त राशि	स्तम्भ 13 से स्तम्भ 14 का प्रतिशत	विशेष संघटक योजना पर व्यय × ×	अ० जा० की जनसंख्या के प्रतिशत से वि०सं० योजना के प्रतिशत का अनुपात (स्तम्भ 3 से स्तम्भ 15)
10	11	12	13	14	15	16	17
11.55	109.43 (90.71)	77.67	1210.00	154.50	13.73	135.00 (87.49)	92.33
5.25	10.91(104.50)	84.13	353.42	13.95	3.90	13.95(100.00)	62.50
7.90	54.28 (80.69)	54.45	1150.00	103.59	9.01	76.01 (72.38)	62.09
3.22	24.93 (96.37)	45.03	950.00	29.83	3.14	28.96 (97.08)	43.92
6.32	26.16 (86.25)	33.14	523.00	32.33	6.18	35.30(109.19)	32.40
11.01	16.42 (84.25)	44.72	205.00	22.56	11.00	22.56(100.00)	44.68
3.68	9.56(100.00)	44.28	328.78	10.90	3.32	10.90(100.00)	39.95
11.72	67.17 (88.13)	77.77	750.00	104.13	13.90	87.89 (84.40)	92.23
8.07	29.58(100.00)	80.54	390.00	35.81	9.20	35.01 (97.77)	91.81
5.73	64.85(102.42)	40.64	1240.58	76.66	6.20	74.65 (97.38)	43.97
15.56	63.55(148.24)	121.84	394.18	37.38	9.48	71.04(190.05)	74.24
2.03	0.87 (61.27)	132.68	61.19	1.08	1.76	1.08(100.00)	115.03
18.11	36.01 (98.63)	123.53	368.79	47.07	12.80	44.92 (95.43)	87.31
4.32	18.24 (83.40)	16.07	575.00	24.76	4.30	28.59(115.47)	16.00
12.09	43.83 (84.29)	70.95	525.00	69.28	13.20	37.60 (54.27)	77.46
0.95	0.19 (48.72)	16.44	3.74	0.41	11.20	0.16 (39.02)	193.77
13.14	113.73 (90.15)	71.60	1199.82	128.04	11.00	140.07(109.40)	59.94
13.95	6.86 (90.86)	92.26	105.00	10.71	10.20	10.45 (97.57)	67.46
9.86	175.82(101.82)	46.60	2150.00	199.44	9.20	196.40 (98.48)	43.48
18.79	61.38 (93.82)	85.45	750.00	71.91	9.59	71.14 (98.93)	43.61
35.34	1.57 (66.81)	250.82	6.57	1.83	27.90	1.88(102.73)	198.01
3.91	18.02(137.66)	21.69	400.00	18.50	4.62	20.90(112.97)	25.62
1.27	0.63 (77.78)	58.80	56.74	0.62	1.09	0.71(114.52)	50.46
15.77	4.76 (91.54)	98.62	39.00	6.24	16.00	5.58 (89.42)	100.06
9.09	958.75(95.79)		13735.81	1201.53	8.75	1150.75(95.79)	

×कोष्ठक में दिये गए आंकड़े स्तम्भ 9 से 11 का प्रतिशत दर्शाते हैं।

× ×कोष्ठक में दिये गये आंकड़े स्तम्भ 14 से 16 का प्रतिशत दर्शाते हैं।

अनुलग्नक

विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान दी गई तथा उपयोग में लाई गई विशेष केन्द्रीय सहायता और

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	छठी योजना के दौरान की गई	छठी योजना के दौरान उपयोग में लाई गई	स्तम्भ 3 से स्तम्भ 4 का प्रतिशत	सातवीं योजना के लिये अस्थाई आबंटन (1985-90)
1	2	3	4	5	6
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	4842.35	4734.00	97.76	6645.78
2.	असम	575.82	575.91	100.02	1071.36
3.	बिहार	5659.11	2927.14	51.72	9314.38
4.	गुजरात	1251.24	1251.24	100.00	1943.70
4.	हरियाणा	1237.95	1237.24	99.94	1906.50
6.	हिमाचल प्रदेश	616.39	616.39	100.00	876.06
7.	जम्मू-काश्मीर	127.13	89.30	70.24	414.78
8.	कर्नाटक	3554.60	3537.30	99.51	4687.20
9.	केरल	1395.39	1395.39	100.00	2125.98
10.	मध्य प्रदेश	3824.85	3462.68	90.53	6483.96
11.	महाराष्ट्र	3562.53	3348.58	93.99	6673.63
12.	मणिपुर	13.46	13.46	100.00	18.60
13.	उड़ीसा	2487.93	2487.93	100.00	3364.64
14.	पंजाब	2425.85	2312.02	95.31	3388.92
15.	राजस्थान	3263.41	2410.98	73.88	5061.06
16.	सिक्किम	6.74	4.26	63.20	16.74
17.	तमिलनाडु	4900.65	4848.00	98.93	7477.20
18.	त्रिपुरा	147.58	133.57	90.51	260.40
19.	उत्तर प्रदेश	14055.23	14055.23	100.00	20517.66
20.	पश्चिम बंगाल	5629.74	5502.61	97.74	9768.72
21.	चण्डीगढ़	10.83	6.23	57.53	48.36
22.	दिल्ली	351.70	351.05	99.82	842.58
23.	गोवा, दमण और दीव . . .	5.34	2.76	51.69	16.74
24.	पांडिचेरी	54.28	9.41	17.34	74.40
	योग	60000.10	55312.68	92.19	92999.40

3

पांचवीं योजना और 1985-86 तथा 1986-87 में किये गये आवंटन को दर्शाने वाला विवरण पत्र

(रुपये लाख में)

1985-86			1986-87		
दी गई	उपयोग में लाई गई	स्तम्भ 7 से स्तम्भ 8 का प्रतिशत	दी गई	उपयोग में लाई गई	स्तम्भ 10 से स्तम्भ 11 का प्रतिशत
7	8	9	10	11	12
1444.42	उ० नहीं	--	1340.42	उ० नहीं	—
183.89	उ० नहीं	—	160.55	उ० नहीं	—
1787.86	उ० नहीं	—	1611.10	उ० नहीं	—
319.35	313.09	98.04	346.75	325.94	93.99
345.10	344.80	99.91	297.55	295.05	99.16
177.54	178.26	100.41	155.63	103.00	68.18
79.29	45.99	57.88	58.37	30.69	52.58
902.89	902.89	100.00	1215.81	उ० नहीं	—
347.97	350.19	100.64	342.31	404.02	118.03
1110.54	955.72	86.06	1179.30	161.68	13.71
862.21	1090.26	126.45	1139.49	1348.52	118.34
2.72	3.30	121.32	4.89	4.89	100.00
645.08	643.08	99.69	661.30	661.30	100.00
588.48	523.15	88.90	509.05	490.10	96.28
1098.49	उ० नहीं	—	1342.26	1863.00	138.79
3.78	3.26	86.24	4.02	4.00	99.50
1338.98	उ० नहीं	—	1344.26	700.00	52.07
40.01	48.42	121.02	43.67	47.10	107.88
3334.15	3334.15	100.00	3720.36	3720.36	100.00
1839.58	उ० नहीं	--	1883.62	उ० नहीं	—
6.18	1.60	25.89	38.43	1.02	2.65
121.61	79.75	65.58	81.02	81.02	100.00
5.69	1.48	26.01	5.18	0.56	10.81
14.19	14.19	100.00	14.60	14.60	100.00
16600.00			17499.94		

अनुलग्नक-

शहरी विकास मंत्रालय द्वारा कार्यान्वित की जा रही शहरी मलवहन प्रणाली कार्यक्रम की

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	योजना प्रावधान			मलवहन व्यवस्था से लाभान्वित होने वाले नगरों की प्रस्तावित संख्या		
		7वीं योजना	1985-86	1986-87	7वीं योजना	1985-86	1986-87
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	500.00	—	—	2*	उ० नहीं	उ० नहीं
2.	बिहार . . .	830.00	125.00	202.00	1	उ० नहीं	उ० नहीं
3.	हरियाणा . . .	1930.00	90.00	90.00	10	1	उ० नहीं
4.	जम्मू-काश्मीर . . .	905.00	120.00	141.00	2	2	2
5.	कर्नाटक . . .	1000.00	143.50	118.00	13	3	3
6.	केरल	500.00	250.00	65.00	5	2*	3*
7.	महाराष्ट्र	10503.72	1063.83	1697.49	31	12	5
	(बृ०ब०न०नि०)**		3374.67	6054.52	बृहत्तर बम्बई के सभी क्षेत्र		
8.	पंजाब . . .	1515.00	247.00	330.00	28	8	8
9.	तमिलनाडु (नगर निगम) . . .	3660.00	511.00	588.64	1	उ० नहीं	उ० नहीं
10.	पश्चिम बंगाल . . . (क० म० वि० प्रा०)†	764.11	107.86	110.55	1	उ० नहीं	उ० नहीं
11.	अण्डमान व निकोबार द्वीप समूह .	4.0	1.0	1.0	1	उ० नहीं	उ० नहीं
12.	दादर और नागर हवेली . .	5.0	0.75	0.25	1	शून्य	उ० नहीं
13.	गोवा दमण और दीव . .	420.00	46.00	75.00	2	—	1
	योग	22536.83	6080.61	9473.45	98	28	22

*आंशिक रूप से शामिल

**बृहत्तर बम्बई नगर निगम

†कलकत्ता महानगर विकास प्राधिकरण

4

वर्ष 1985–86 और 1986–87 के दौरान हुई प्रगति

(रु० लाख में)

कितने उठाऊ पाखाने मलवहन से जोड़े गये			कितने नये पाखाने निर्मित किए गए और मलवहन से जोड़े गए		
7वीं योजना	1985–86	1986–87	7वीं योजना	1985–86	1986–87
9	10	11	12	13	14
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
4000	उ० नहीं	1000	विवरण तैयार किया जा रहा है		
20000	1000	उ० नहीं	5000	200	उ० नहीं
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं			लागू नहीं
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
679200	144672	25730	257674	41358	22584
	228	80		531	565
कोई लक्ष्य निर्धारित नहीं किया गया	700	1100	लक्ष्य निर्धारित नहीं	—	—
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
7277	1027	1053	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
25000	2000	2500	5000	1000	500
735477	149627	31463	267674	43089	23649

अनुलग्नक

शहरी विकास मंत्रालय द्वारा कार्यान्वित किए जा रहे कम लागत के शहरी स्वच्छता

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	योजना प्रावधान (रुपए लाखों में)			मलवहन से जोड़ने के लिए प्रस्तावित नगरों की संख्या		
		7वीं योजना	1985-86	1986-87	7वीं योजना	1985-86	1986-87
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	आन्ध्रप्रदेश . . .	3266.02	500.00	550.00	82	28	21
2.	असम	150.00	81.00	45.00	26	26	26
3.	बिहार . . .	2000.00	282.00	400.00	144	32	40
4.	हरियाणा . . .	150.00	10.00	10.00	10*	8*	10
5.	जम्मू-कश्मीर . . .	80.00	1.00	11.00	6	6	6
6.	कर्नाटक . . .	200.00	—	—	6	—	—
7.	केरल	370.00	65.00	44.00	10	10	10
8.	महाराष्ट्र . . .	530.00	110.00	113.00	144	30	31
9.	मणिपुर	350.00	5.00	10.00	20	—	—
10.	मेघालय	200.00	20.50	15.00	3*	3*	3*
11.	नागालैण्ड . . .	50.00	10.00	10.00	7*	7*	7*
12.	पंजाब	87.00	24.97	25.00	6	6	6
13.	राजस्थान . . .	400.00	20.00	20.00	196	—	—
14.	उत्तर प्रदेश . . .	32.00	275.00	500.00	300	160	185
15.	पश्चिम बंगाल . . .	1800.00	150.00	190.00	25	3	5
	(क०म०वि०प्रा०)	894.42	75.25	133.27	37	159	—
16.	अंडमान व निकोबार द्वीप समूह .	25.00	5.00	5.00	1	1	1
17.	दादरा व नागर हवेली . .	5.00	—	0.50	1	—	—
18	गोवा, दमण व द्वीन . . .	30.00	10.00	5.00	2	—	1
19.	मिजोरम		10.00	8.50	—	3	3
20.	पांडिचेरी . . .	10.00	0.53	1.00	4	—	—
	योग	13797.44	1654.75	2096.27	1030	474	355

*आंशिक रूप से समाविष्ट।

5

कार्यक्रम की 1985-86 और 1986-87 के दौरान प्रगति

मलवहन से जोड़े जाने वाले और जोड़े गए उठाऊ पाखानों की संख्या			नए बनाए जाने वाले और मलवहन से जोड़े जाने वाले पाखानों की संख्या		
7वीं योजना	1985-86	1986-87	7वीं योजना	1985-86	1986-87
9	10	11	12	13	14
277780	75867	68548	120700	उ० नहीं	उ० नहीं
4000	2000	1000	3000	1620	900
170941	24102	34102	300	50	100
1500000	1233	1481	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
2400	30	330	1500	20	220
1530	उ० नहीं	उ० नहीं	1874	उ० नहीं	उ० नहीं
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
72000	15000	15500	उ० नहीं	494	525
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	17500	उ० नहीं	500
5000	400	375	5000	400	375
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	1000	200	200
10000	2850	2850	उ० नहीं	उ. नहीं	उ० नहीं
100000	20000	25000	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
100000	34000	45000	5000	500	1000
80000	8000	9000	40000	2000	4000
17360	1867	3486			
5000	500	1000	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं	250	उ० नहीं	25
209	उ० नहीं	75	1189	उ० नहीं	400
उ० नहीं	400	400	उ० नहीं	333	283
666	45	66	उ० नहीं	उ० नहीं	उ० नहीं
23,46,886	186294	208213	197313	5617	8528

अनुलग्नक 6

वर्ष 1980-81 से 1986-87 तक कल्याण मंत्रालय द्वारा मेहतरों के परिमोचन की केन्द्रीय प्रायोजित योजना के अधीन लिए गए कस्बों के नाम

क्रम सं०	राज्य	कस्बा/नगर पालिका	चयन का वर्ष
1	2	3	4
1.	आन्ध्र प्रदेश	1. वारंगल	1981–82
		2. एलुरु	
		3. राजामन्द्री	
		4. सिद्दीपेट	1984–85
		5. करनूल	
		6. हैदराबाद	1985–86
		7. येम्मीगनुर	1986–87
		8. जगतियाल	
2.	असम	9. नलबाड़ी	1981–82
		10. मंगलदोई	
		11. करीमगंज	
		12. हैलाकण्डी	1984–85
3.	बिहार	13. बिहारशरीफ	1980–81
		14. पूर्णिया	
		15. मधुबनी	
		16. डाल्टनगंज	1981-82
		17. चाईबासा	
		18. भागलपुर	
		19. गया	1982–83
		20. छपरा	
		21. मुज्जफ्फरपुर	1983–84
		22. हजारीबाग	
		23. मोतीहारी	
		24. बेतिया	1985–86
		25. आरा	
		26. दरभंगा	
		27. सीतामढ़ी	1986–87
		28. कटिहार	
4.	हरियाणा	29. होडल	1982–83
		30. घरौंदा	
		31. बवाल	
		32. बवानी खेड़ा	1984–85
5.	हिमाचल प्रदेश	33. शिमला	1983–84
		34. मण्डी	
		35. नाहन	1984–85
		36. चम्बा	
		37. सुन्दरनगर	1986–87
		38. कुल्लू	
		39. धर्मशाला	

1	2	3	4
6. जम्मू-काश्मीर	. . . . . .	40. जम्मू	
		41. ऊधमपुर	1985–86
		42. श्रीनगर	
7. कर्नाटक	. . . . . .	43. बासवकल्याण	
		44. नन्जनगुडा	1983–84
		45. कुशाल नगर	
		46. तिप्तूर	
8. केरल	. . . . . .	47. कालीकट	1981–82
		48. कोचीन	
		49. पालघाट	
9. मध्य प्रदेश	. . . . . .	50 रायपुर	1981–82
		51. शाजापुर	
		52. बिलासपुर	
		53. दुर्ग	
		54. सतना	1983–84
		55. जबलपुर	
		56. दतिया	
		57. बुरहानपुर	1984–85
		58. खंडवा	
		59. कटनी	1985–86
		60. सिहोर	
		61. रीवा	
		62. उज्जैन	1986–87
		63. ग्वालियर	
10. महाराष्ट्र	. . . . . .	64. खामगांव	
		65. उदगीर	1981–82
		66. मलकापुर	1983–84
		67. कामटी	
		68. नासिक	1985–86
		69. वर्धा	1986–87
		70. कोल्हापुर	
11. उड़ीसा	. . . . . .	71. भुवनेश्वर	1982–83
		72. कटक	1983–84
		73. भद्रक	1985–86
		74. झार्सुगुडा	
		75. पुरी	

1	2	3	4
		76. खुरंदा	1986–87
		77. तालचेर	
12.	राजस्थान	78. भीलवाड़ा	1981–82
		79. मकराना	
		80. भरतपुर	1982–83
		81. नागौर	
		82. पाली	1984–85
		83. सिरोही	
		84. हनुमानगढ़	
		85. चित्तौड़गढ़	1985–86
		86. सीकर	
		87. टोंक	1986–87
		88. बहरोड़	
13.	तमिलनाडु	89. उडुमाल्पेट	1981–82
		90. अम्बात्तूर	
		91. नागरकोइल	1984–85
		92. विल्लूपुरम	
		93. तिरूचेन्दूर	
		94. तिरुकलुकुंद्रम	1985–86
		95. वीरपंचातम	
14.	त्रिपुरा	96. अगरतला (चरण 1)	1981–82
		97. अगरतला (चरण 2)	1983–84
		98. धर्मनगर	
		99. उदयपुर	1984–85
15.	उत्तर प्रदेश	100. बाराबंकी	1981–82
		101. बदायूं	1985–86
		102. सीतापुर	
		103. जालौन	1986–87
		104. मीरगंज	
16.	पश्चिम बंगाल	105. सोनामुखी	
		106. मुर्शिदाबाद	1982–83
		107. शान्तिपुर	
		108. घाटल	1983–84
		109. बोलपुर	
		110. रामपुरहाट	
		111. मेकलीगंज	1985-86
		112. अलीपुर द्वार	
		113. बर्दमान	
		114. आसनसोल	1986–87
		115. टाकी	
		116. माथाभांगा	

अध्याय 6

आदिवासी विकास

आदिवासी विकास के लिए कार्यनीति

1981 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या 5.38 करोड़ थी (असम के संबंध में प्रक्षेपित आंकड़ों सहित) जो कुल जनसंख्या का लगभग 7.8 प्रतिशत थी। आदिवासी विकास आरंभ से ही दो आयामवाली नीति पर आधारित रहा है, अर्थात् (1) विधिक और प्रशासनिक समर्थन द्वारा उनके हितों का संरक्षण करना तथा उन्हें बढ़ावा देना, और (2) उनके जीवन स्तर को ऊंचा उठाने के लिए विकासीय योजनाओं का कार्यान्वयन करना। पांचवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में विकसित तथा कार्यान्वित आदिवासी उप-योजना की अवधारणा आदिवासियों तथा आदिवासी क्षेत्रों के विकास के लिए अभी भी मुख्य उपकरण बनी है। आदिवासी उप-योजना 17 राज्यों तथा 2 संघ राज्य क्षेत्रों अर्थात् **आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, मणिपुर, उड़ीसा, राजस्थान, सिक्किम, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह और गोवा, दमण और दीव** में कार्यान्वित की जा रही है। इस में देश के 26 जिले पूर्णतः तथा 97 जिले आंशिक रूप से शामिल हैं। यह आदिवासी उप-योजना आदिवासी बहुल राज्यों तथा **मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, अरुणाचल प्रदेश, दादरा और नगरहवेली**, और **लक्षद्वीप** संघ राज्य क्षेत्रों को शामिल नहीं करती क्योंकि उनकी संबंधित योजनाएं मुख्यतः बहुसंख्यक आदिवासी जनसंख्या के लिए ही आशयित हैं। आदिवासी उप-योजना के तीन मुख्य अंग हैं, अर्थात्, (क) एकीकृत आदिवासी विकास योजनाएं जिनमें साधारणतः प्रशासनिक इकाइयां समाविष्ट होती हैं जैसे उप खंड/तहसील/तालुक जिनमें 50 प्रतिशत या उससे अधिक आदिवासी जनसंख्या हो, (ख) आदिवासी संकेन्द्रण के 284 पाकेट (मॉडा पाकेट) जिसमें कुल जनसंख्या 10,000 या उससे अधिक हो और आदिवासी जनसंख्या 50 प्रतिशत या उससे अधिक हो और (ग) 73 आदिम आदिवासी समूह परियोजनाएं। इसके अतिरिक्त, सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान ऐसे संकेन्द्रण समूहों का भी पता लगाया जा रहा है जिनमें कुल जनसंख्या 5,000 है और आदिवासी घनी बस्ती 50 प्रतिशत या उससे अधिक है। 1986-87 तक **बिहार, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र उड़ीसा** तथा **राजस्थान** में 47 संकेन्द्रण समूहों में कार्य चल रहा था। जिनमें 1.76 लाख की कुल आदिवासी जनसंख्या शामिल थी।

छठी पंचवर्षीय योजना

आदिवासी उप-योजना क्षेत्रों में वित्तीय निवेश

2. आदिवासी विकास के लिए उप-योजना बनाते समय छठी योजना में आदिवासियों की गरीबी निवारण कार्यक्रम को इस दृष्टि से मुख्य महत्व दिया गया था कि निर्धनता रेखा के नीचे वाले कम से कम 50 प्रतिशत आदिवासी परिवारों की आर्थिक रूप से सहायता की जाये ताकि वे इस रेखा को पार कर सकें। इस प्रयास के पूरक के रूप में अवस्थापना का निर्माण करके, शोषण को समाप्त करके तथा शिक्षा का प्रसार करके पर्याप्त पूंजीनिवेश किया जाना था। छठी योजना के दौरान आदिवासी विकास के मुख्य लक्ष्य ये थे --

(1) कृषि, बागवानी, पशु-पालन, लघु-उद्योगों इत्यादि के क्षेत्रों में लाभभोगी परिवारों के उत्पादकता स्तर में वृद्धि करके परिवारोंन्मुख लाभभोगी कार्यक्रम आरम्भ किया जाना,

(2) भूमि हस्तान्तरण, ऋणग्रस्तता, ऋण-बंधता व वन इत्यादि के क्षेत्रों में आदिवासियों के शोषण को समाप्त किया जाना,

(3) शिक्षा तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों द्वारा मानव संसाधनों का विकास किया जाना, तथा

(4) अवस्थापना का विकास।

छठी योजना अवधि में आदिवासी उप-योजना के अधीन ऊपर वर्णित 19 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में लगभग 75 प्रतिशत आदिवासी जनसंख्या समाविष्ट की गई थी।

3. निम्नलिखित सारणी में पहली योजना से छठी योजना तक आदिवासी क्षेत्रों में निवेश में वृद्धि दर्शाई गई है --

सारणी-1

(रुपए करोड़ों में)

योजना	योजना का कुल परिव्यय	आदिवासी विकास कार्यक्रम	प्रतिशत
पहली योजना@	1960	19.93	1.0
दूसरी योजना@	4672	42.92	0.9
तीसरी योजना@	8577	50.53	0.6
वार्षिक योजना@ (1966-69)	6756	32.32	0.6
चौथी योजना	15902	75.00	0.5
पांचवीं योजना (1974-79)	39322	1102.00	3.01
1979-80	12601	454.11	3.6
छठी योजना 1980-85	110621	5468.46†	4.93

@व्यय

†संस्थागत वित्त (800 करोड़ रुपए) शामिल है

आदिवासी उप-योजना के लिए निधि निम्नलिखित से प्राप्त संसाधनों के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती रही थी --

(1) राज्य योजनाएं

(2) गृह मंत्रालय की विशेष केन्द्रीय सहायता (अब कल्याण मंत्रालय),

(3) केन्द्रीय तथा केन्द्रीय प्रायोजित कार्यक्रम, तथा

(4) संस्थागत वित्त

राज्य योजनाओं से आदिवासी उप-योजना के लिए राशि

4. राज्य के योजना निवेश में राज्य सरकार की गतिविधि के विभिन्न क्षेत्रों के अधीन प्रस्तावित राशियां शामिल हैं तथा इसमें केन्दीय प्रायोजित योजनाओं में राज्य के भाग के रूप में चिह्नित राशियां भी शामिल हैं। मार्गनिर्देशों के अनुसार आदिवासी उप-योजना के लिए निधि की मात्रा नियत करने के लिए किसी राज्य योजना के कुल परिव्यय को विभाज्य तथा अविभाज्य घटकों में बांटना होता है। अविभाज्य घटकों में वे निवेश होंगे जिनके लाभों के बारे में यह ज्ञात नहीं किया जा सकता है कि वे किस विशिष्ट स्थान, क्षेत्र या किस लक्ष्य समूह को प्राप्त हुए हैं। छठी योजना के दौरान राज्य सरकारों को यह परामर्श दिया गया था कि उन्हें नीचे लिखी बातों को ध्यान में रखते हुए आदिवासी उप-योजना के लिए परिव्यय की राशि चिह्नित करनी चाहिए --

(1) राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र में आदिवासी उप-योजना क्षेत्र का अनुपात,

(2) राज्य के अन्य क्षेत्रों की तुलना में आदिवासी क्षेत्रों के विकास का आनुपातिक स्तर तथा

(3) राज्य की कुल जनसंख्या से आदिवासी जनसंख्या का प्रतिशत।

छठी योजना के दौरान राज्य का योजना परिव्यय, आदिवासी उप-योजना के लिए राशि दिया जाना और पहले से दूसरे का प्रतिशत अनुलग्नक 1 में दिए गए हैं। पूरे देश के लिए आदिवासी उप-योजना को दी गई राशि देश की कुल योजनाओं के परिव्यय की 8.25 प्रतिशत थी (42,390.60 करोड़ रुपए में से 3495.24 करोड़ रुपए) कुछ राज्यों में विभाज्य क्षेत्रों में आदिवासी उप-योजना के लिए राशि उन राज्यों में आदिवासी जनसंख्या के प्रतिशत से अधिक मात्रा में दर्शाई गई है, किन्तु इसका सही तरीका यह होगा कि यह राशि उप-योजना के क्षेत्र की जनसंख्या में आदिवासी जनसंख्या के अनुपात से रखी जाए। इसके अतिरिक्त उप-योजना क्षेत्र के अधीन निधि की मात्रा का तय किया जाना कुछ थोड़े से मामलों में काल्पनिक ही रहा है और ऐसी योजनाओं को जिन्हें विधिवत रूप से आदिवासी उप-योजना को दी गई राशि के रूप में नहीं दर्शाया जा सकता है, वास्तव में उस रूप में ही दर्शाया जाता है। आदिवासी उप-योजना के लिए राशि की मात्रा वास्तविक आधारों पर तय करने के लिए प्रत्येक विकासीय विभाग द्वारा जो विस्तृत योजनाएं तथा विवरण तैयार किए जाने आवश्यक हैं, कभी नहीं किए जाते हैं।

1987 के उत्तरार्ध में कल्याण मंत्रालय के आदिवासी विकास प्रभाग द्वारा बनाए गए 1988-89 के बजट संक्षेप के अनुसार छठी योजना के दौरान पूरे देश के लिए राज्य योजनाओं से आदिवासी उप-योजना को दी गई वास्तविक राशि 3387.89 करोड़ रुपए होती है। किन्तु जैसा कि अनुलग्नक 1 में देखा जा सकता है, कि उक्त बजट संक्षेप में सम्मिलित व्यय के राज्य वार आंकड़ों तथा संबंधित राज्यों के 1985-86 के आदिवासी उप-योजना प्रलेखों से लिए गए योजना अवधि के पहले चार वर्षों के वास्तविक व्यय के आंकड़ों और 1986-87 के आदिवासी उप-योजना प्रलेखों से लिए गए 1984-85 के वास्तविक व्यय के आंकड़ों को जोड़ने पर आए आंकड़ों में त्रुटियां हैं। राज्यों की इन आदिवासी उप-योजना के दस्तावेजों के अनुसार पूरे देश के लिए आदिवासी उप-योजना को दी गई वास्तविक राशि 3219.84 करोड़ रुपए थी।

5. यह सुनिश्चित करने के लिए कि विभिन्न विकासीय विभागों द्वारा आदिवासी उपयोजना के अधीन विनिर्दिष्ट प्रावधान किए जाएं, जो अन्य क्षेत्रों अथवा कार्यक्रमों में पुनर्नियोजित नहीं किए जा सकते हैं, राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्र प्रशासनों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे अपने बजटों में आदिवासी उप-योजना/विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए एक मांग संख्या पृथक से दें। आदिवासी उप-योजना के आबंटनों के लिए एक अलग मांग संख्या देने के संबंध में विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों में विद्यमान स्थिति अनुलग्नक 2 में दी गई है।

6. आदिवासी उप-योजना में विभिन्न क्षेत्रों को मोटे तौर पर निम्नलिखित चार श्रेणियों में समूहीकृत किया जा सकता है --

(क) लाभभोगी परिवारोन्मुख क्षेत्र जैसे कृषि, बागवानी, लघु सिंचाई, पशु चिकित्सा तथा पशुपालन, मत्स्य पालन, सहकारिता, कुटीर उद्योग तथा रेशम उत्पादन,

(ख) संरचना आधार क्षेत्र जैसे बड़े तथा मध्यम उद्योग, सिंचाई तथा विद्युत, खान और सड़कें,

(ग) समाज सेवा क्षेत्र जैसे पीने का पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य, श्रम इत्यादि,

(घ) अन्य क्षेत्र।

विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों में छठी योजना के दौरान इन में से प्रत्येक श्रेणी तथा समूह में तुलनात्मक निवेश अनुलग्नक 3 में दर्शाया गया है। पूरे देश के लिए श्रेणी 'क' क्षेत्रों पर निवेश केवल 16.69 प्रतिशत था जबकि संरचना आधार क्षेत्रों पर 39.44 प्रतिशत तथा समाज सेवा क्षेत्रों पर 21.96 प्रतिशत निवेश किया गया था। यद्यपि श्रेणी 'ख', 'ग' तथा 'घ' के क्षेत्रों से भी अप्रत्यक्ष रूप से और दीर्घकाल में आदिवासी परिवारों का आर्थिक विकास होगा, यह वांछनीय है कि आदिवासी उप-योजना के मुख्य लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए लाभभोगी परिवारोन्मुख योजनाओं में अपेक्षाकृत अधिक निवेश किया जाना चाहिए।

विशेष केन्द्रीय सहायता

7. विशेष केन्द्रीय सहायता पांचवीं योजना अवधि के आरम्भ में लागू की गई थी। विशेष केन्द्रीय सहायता का उद्देश्य यह था कि प्रेरणा और प्रोत्साहन के कार्यों में राज्य सरकारों तथा वित्तीय संस्थानों द्वारा वित्तीय निवेश किया जाना चाहिए। गृह मंत्रालय ने पांचवीं योजना अवधि की विशेष केन्द्रीय सहायता की 1.90 करोड़ रुपए की राशि को बढ़ाकर छठी योजना अवधि में 486.11 करोड़ रुपए कर दिया था। विशेष केन्द्रीय सहायता के अंतर्गत हुआ व्यय 441.51 करोड़ रुपए बताया गया है। छठी योजना के दौरान राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्र प्रशासनों को दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता राशि और उनके द्वारा खर्च की गई राशि, वर्ष वार विस्तृत विवरण सहित अनुलग्नक 4 में दर्शाई गई है। यह विवरण 15-5-87 को यथास्थिति का नवीनतम विवरण है। इससे पूर्व के एक विवरण के अनुसार जिसमें छठी योजना का अनुमानित व्यय दर्शाया गया था और जो अनुलग्नक 5 में दिया गया है, उक्त चार श्रेणियों में किए गए निवेश का तुलनात्मक चित्र यह दर्शाता है कि लाभभोगी परिवारोन्मुख योजनाओं पर निवेश 43.3 प्रतिशत था, और संरचना आधार क्षेत्रों पर 4.21 प्रतिशत तथा समाज सेवा क्षेत्रों पर 31.39 प्रतिशत निवेश किया गया था। किन्तु **महाराष्ट्र** ने लाभभोगी परिवारोन्मुख योजनाओं पर केवल 8.64 प्रतिशत खर्च किया था।

अनुपूरक सिद्धांत के विशेष संदर्भ में अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्यों में छठी योजना में आदिवासी उप-योजना के अंतर्गत हुए व्यय की समीक्षा

8. विशेष केन्द्रीय सहायता तथा अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्यों के व्यय सहित उप-योजना परिव्यय जो देश की आदिवासी जनसंख्या के लगभग 78 प्रतिशत की पूर्ति करता है, की प्रारंभिक जांच की गई थी। विशेष केन्द्रीय सहायता राज्यों को अपने प्रयासों को पूरा करने के लिए पूरक के रूप में दी जाती है और इसके दावे के लिए पात्रता केवल तब होती है जब उस वर्ष में कुल व्यय राज्य योजना से दी गई राशि से अधिक हो जाता है और केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित अधिकतम सीमा के अध्यधीन रहते हुए यह सहायता उतनी राशि तक सीमित होती है जितना वास्तविक व्यय-राज्य योजना से दी गई राशि से अधिक होता है। इसके अतिरिक्त पात्रता का निर्धारण प्रत्येक क्षेत्र में वास्तविक प्रगति के संदर्भ में भी किया जाना है जिसके लिए भारत सरकार विशेष केन्द्रीय सहायता से पूरक राशि दिए जाने के लिए सहमत होती है। उदाहरण के लिए यदि शिक्षा क्षेत्र में व्यय में अपूर्णता हो और विद्युत क्षेत्र में व्यय अधिक हो तो किसी राज्य योजना का कुल व्यय विहित स्तर तक जा सकता है, किन्तु विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता शिक्षा क्षेत्र में प्रगति से संबंधित होगी और अपूर्णता के मामले में विशेष केन्द्रीय सहायता अप्रयुक्त रही मानी जाएगी। अनुसूचित क्षेत्रों वाले प्रत्येक राज्य के संबंध में स्थिति का विवेचन आगे के पैराग्राफों में किया गया है।

आन्ध्र प्रदेश

9. मूल रूप में राज्य योजना परिव्यय (सभी क्षेत्र) 3100 करोड़ रुपए था और आदिवासी उप-योजना के लिए दी गई राशि 139.46 करोड़ रुपए थी (राज्य योजना परिव्यय का 4.5 प्रतिशत)। सातवीं योजना के प्रारूप और 1985-86 की वार्षिक योजना के अनुसार छठी योजना के दौरान आदिवासी उपयोजना के लिए दी गई राशि 106.01 करोड़ रुपए थी। यह राशि प्रशासन पर 4.6 करोड़ रुपए सहित ग्रामीण विकास के परिव्यय से अलग है। आदिवासी उप-योजना (राज्य योजना) के लिए उपलब्ध परिव्यय और व्यय का क्षेत्र वार विस्तृत विवरण यथा निम्नलिखित है :—

सारणी 2

(रुपए करोड़ में)

क्षेत्र		परिव्यय		व्यय
1. कृषि तथा सम्बद्ध सेवाएं		13.86		9.79
2. सहकारिता		0.23		0.22
3. सिंचाई तथा विद्युत मध्यम परियोजनाएं		41.37		32.90
4. उद्योग		2.25		2.48
5. सड़कें तथा पुल		6.64		4.25
6. सामाजिक तथा सामुदायिक सेवाएं :				
(क) शिक्षा	4.30		3.73	
(ख) चिकित्सा तथा स्वास्थ्य	2.65	37.07	1.87	39.11
(ग) पोषण	2.92		2.57	
(घ) अन्य	27.20		30.94	
7. ग्रामीण विकास		उपलब्ध नहीं		10.24
कुल		101.42		98.99

आदिवासी उप-योजना परिव्यय में ही कटौती करना अप्राधिकृत है। किन्तु इस घटे परिव्यय में भी सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों जैसे कृषि तथा सम्बद्ध सेवाएं, शिक्षा, चिकित्सा तथा स्वास्थ्य और पोषण में उल्लेखनीय अपूर्णताएं हैं। किन्तु यह बताया गया है कि विशेष केन्द्रीय सहायता की कुल राशि खर्च हो गई है जिसका अनिवार्य रूप से यह अर्थ होता है कि इन महत्वपूर्ण क्षेत्रों में भी विशेष केन्द्रीय सहायता द्वारा राज्य योजना कार्यक्रमों को मूल रूप से विच्छिन्न कर दिया गया है।

10. छठी योजना के दौरान आदिवासी उप-योजना का कुल व्यय 123.29 करोड़ रुपए है (राज्य योजना के अंतर्गत 98.99 करोड़ रुपए तथा विशेष केन्द्रीय सहायता के अंतर्गत 24.30 करोड़ रुपए)। चूंकि आदिवासी उप-योजना का कुल व्यय राज्य योजना में आदिवासी उप-योजना के परिव्यय से कम है, यह राज्य छठी योजना के दौरान दी गई किसी विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए हकदार नहीं है और 22.50 करोड़ रुपए की कुल राशि उस योजना के अंत में उनके पास शेष बची अप्रयुक्त राशि मानी जाएगी।

बिहार

11. छठी योजना के लिए आदिवासी उपयोजना परिव्यय (राज्य योजना) 625.26 करोड़ रुपए था जिसे उसके बाद में बढ़ाकर 639.34 करोड़ रुपए कर दिया गया था। इस राज्य ने अभी तक बजट में आदिवासी उपयोजना के लिए अलग मांग संख्या लागू नहीं की है, जैसा अन्य बहुत-से राज्यों द्वारा किया गया है। इसके फलस्वरूप आदिवासी उपयोजना और बजट के प्रावधानों के बीच तथा आबंटन और व्यय के आंकड़ों के बीच संबंध ज्ञात करना बहुत कठिन होता है।

12. आदिवासी उप-योजना के परिव्यय तथा व्यय जो छठी योजना, उस अवधि की वार्षिक योजनाओं, सातवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप और 1986-87 की वार्षिक योजना (सातवीं योजना का पहला वर्ष) सहित विभिन्न योजना दस्तावेजों में दिया गया है, की संवीक्षा से यह प्रकट होता है कि वे काफी असंगत हैं। ये आंकड़े एक दस्तावेज में ही अलग अलग स्थानों पर भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। उदाहरण के लिए सार में दर्शाई गई स्थिति और संबंधित क्षेत्रीय विस्तृत विवरणों में कभी-कभी उल्लेखनीय अन्तर होता है। साथ ही उनमें काफी संख्या में त्रुटियां भी हैं। इसके विस्तृत विवरण के लिए अनुलग्नक 6 के दो विवरण पत्र देखे जा सकते हैं। यदि किन्हीं क्षेत्रीय क्रियाकलापों के संबंध में किसी दस्तावेज में किसी स्थान पर प्रस्तुत किए गए सर्वाधिक अनुकूल आंकड़े भी लिए जाएं, तो राज्य के आदिवासी उप-योजना क्षेत्रों का कुल व्यय केवल 599.65 करोड़ रुपए होता है जिसमें विशेष केन्द्रीय सहायता संबंधी 56.27 करोड़ रुपए का व्यय भी शामिल है। यह उल्लेखनीय है कि राज्य योजना व्यय के आंकड़े निकालते समय ऐसे मामलों को जहां व्यय के आंकड़े नहीं दर्शाए गए हैं, यह माना जाता है कि परिव्यय की पूरी राशि खर्च हो गई है।

13. छठी योजना के दौरान अलग-अलग क्षेत्रों के परिव्यय तथा व्यय की समीक्षा करने पर निम्नलिखित स्थिति दिखाई देती है —

सारणी 3

(रुपए करोड़ में)

		परिव्यय		व्यय
1. कृषि तथा सहबद्ध सेवाएं		63.28		58.80
2. ग्रामीण विकास		24.47		30.90
3. सहकारिता		15.21		13.72
4. जल तथा विद्युत विकास				
(क) बड़ी तथा मध्यम सिंचाई	197.12	335.97	148.99	255.42
(ख) लघु सिंचाई	66.62		62.22	
(ग) विद्युत	72.73		44.21	
5. उद्योग तथा खनिज				
(क) ग्रामीण तथा लघु उद्योग	10.11	20.70	10.11	20.04
(ख) बड़े तथा लघु उद्योग और खनिज विकास	10.59		9.93	
6. परिवहन तथा संचार				
(क) ग्रामीण सड़कें	26.65	33.09	28.64	33.89
(ख) शहरी सड़कें, सड़क परिवहन, नागर विमानन	6.44		5.25	

1	2		3	
7. सामाजिक तथा सामुदायिक सेवाएं :				
(क) शिक्षा . . .	40.10		38.13	
(ख) ग्रामीण जल आपूर्ति . . .	22.50	123.87	22.31	109.77
(ग) स्वास्थ्य	18.06		13.81	
(घ) अन्य	43.21		35.52	
8. विविध		4.68		5.48
कुल .		621.27		528.02

यह उल्लेखनीय है कि राज्य योजना परिव्यय का क्षेत्र वार विस्तृत विवरण केवल 621.27 करोड़ रुपए का ही उपलब्ध है जबकि वास्तविक परिव्यय 639.34 करोड़ रुपए था। तदनुसार आनुपातिक आधार पर 639.34 करोड़ रुपए के परिव्यय के मुकाबले 543.38 करोड़ रुपए का व्यय हुआ समझा जा सकता है।

14. यह ध्यान देने योग्य है कि आदिवासी उपयोजना (राज्य योजना) में बड़ी तथा मध्यम सिंचाई पर (197.12 करोड़ रुपए) तथा विद्युत पर (72.23 करोड़ रुपए) के बड़े परिव्यय शामिल थे, जो एक साथ मिलाकर राज्य योजना परिव्यय का 42.13 प्रतिशत बनता था ये परिव्यय आदिवासी विकास के लिए अधिक प्रासंगिक नहीं हैं क्योंकि ये विकास में शिथिलता उत्पन्न करते हैं। यहां तक कि बड़े उद्योगों तथा खनन गतिविधियों पर परिव्यय (10.59 करोड़ रुपए का परिव्यय) भी उससे भिन्न चीजें नहीं हैं। इन क्षेत्रों के बड़े परिव्ययों के अतिरिक्त आदिवासी उप-योजना में और बहुत सी मदें जैसे नागर विमानन तथा पुलिस हाउसिंग भी शामिल थीं जिनका आदिवासी विकास से कोई संबंध नहीं है।

15. यह खेद की बात है कि आदिवासी विकास के लिए महत्वपूर्ण लगभग सभी क्षेत्रों जैसे कृषि तथा सम्बद्ध सेवाएं सहकारिता, लघु सिंचाई, शिक्षा तथा स्वास्थ्य में कमियां हैं। विशेष रूप से स्वास्थ्य क्षेत्र में बहुत बड़ी कमी है। इसका एक अपवाद केवल ग्रामीण विकास, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम है। किन्तु इस तथ्य को देखते हुए कि तय की गई मात्रा काल्पनिक है, इन आंकड़ों का भी कोई विशेष अर्थ नहीं होता है।

16. कुल मिलाकर, आदिवासी उपयोजना (राज्य योजना+विशेष केन्द्रीय सहायता) पर हुए कुल व्यय में, विशेष केन्द्रीय सहायता से प्रत्यक्षत: संबंधित 13.08 करोड़ रुपए की कमी को मिलाकर कुल परिव्यय के मुकाबले 109.04 करोड़ रुपए की कमी रही। तदनुसार यह राज्य विशेष केन्द्रीय सहायता का पात्र नहीं है। तथापि, यदि इसकी और उदार व्याख्या की जाए और दो गैर अनिवार्य मदों—प्रमुख सिंचाई (48.13 करोड़ रुपए) तथा विद्युत (28.02 करोड़ रुपए) पर हुई अपूर्णता को घटा दिया जाए तो अन्य मदों पर कुल कमी 19.81 करोड़ रुपए होगी। तदनुसार **विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए राज्य की पात्रता 36.46 करोड़ रुपए होगी, जिसका यह अर्थ होता है कि छठी योजना के दौरान दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता में से 32.89 करोड़ रुपए राज्य के पास खर्च होने से बचे माने जा सकते हैं।**

गुजरात

17. मूल रूप में राज्य योजना (छठी योजना) 3760 करोड़ रुपए की थी जिसमें से आदिवासी उप-योजना के लिए 484.40 करोड़ रुपए दिए जाने का प्रावधान था। किन्तु तत्पश्चात् राज्य योजना की राशि घटाकर 3680 करोड़ रुपए और आदिवासी उप-योजना की राशि 456 करोड़ रुपए कर दी गई थी। यह कटौती गैर-आनुपातिक थी। आनुपातिक आधार पर राज्य योजना से आदिवासी उप-योजना के लिए दी जाने वाली राशि अधिक से अधिक 474.09 करोड़ रुपए तक घटाई जा सकती थी और 456 करोड़ रुपए तक नहीं की जा सकती थी। विशेष केन्द्रीय सहायता के अंतर्गत खर्च के 40.81 करोड़ रुपए सहित आदिवासी उपयोजना पर कुल व्यय 446.62 करोड़ रुपए आता है। इस प्रकार मूल रूप में आदिवासी उप-योजना परिव्यय (राज्य योजना) की तुलना में व्यय में 37.78 करोड़ रुपए की कमी है और यदि आनुपातिक कटौती को भी विचार में लिया जाए तो कमी 27.47 करोड़ रुपए होती है।

18. क्षेत्र-वार आबंटन तथा व्यय की समीक्षा से पता लगता है कि आदिवासी विकास से थोड़ी सी संगति रखने वाले कुछ क्षेत्रों में बड़ी राशियां आबंटित की गई हैं। उदाहरण के लिए, जल विकास (91.28 करोड़ रुपए) विद्युत विकास (35.61 करोड़ रुपए) तथा बड़े और मध्यम उद्योग और खनन तथा धातु कर्म कार्मिक उद्योगों (5.23 करोड़ रुपए) सब को मिलाकर 132.12 करोड़ रुपए अथवा राज्य योजना परिव्यय का 27.3 प्रतिशत बनता है। इससे आदिवासी उप-योजना परिव्यय का केवल परिमाण बढ़ा है। इन क्षेत्रों को निकाल कर आदिवासी उप-योजना परिव्यय केवल 352.28 करोड़ रुपए है (आदिवासी उप-योजना दस्तावेजों

में दर्शाए गए राज्य योजना परिव्यय के 13.2 प्रतिशत की बजाए 9.6 प्रतिशत)।

19. आदिवासी कल्याण से विशेष संगति रखने वाले क्षेत्रों में परिव्यय तथा व्यय निम्नलिखित है —

सारणी 4

(रुपए करोड़ में)

	परिव्यय	व्यय
कृषि तथा सहबद्ध सेवाएं .	70.62	69.70
सहकारिता . .	8.57	16.44
ग्रामीण विकास . .	37.95	21.75
शिक्षा . . .	26.85	12.60
चिकित्सा तथा जन स्वास्थ्य .	16.00	13.05
पोषण . . .	9.90	6.85

सहकारिता क्षेत्र को छोड़कर इन सभी क्षेत्रों में कमियां हैं। विशेष रूप से यह बड़े दुःख की बात है कि शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र पर व्यय कुल परिव्यय का केवल 46.9 प्रतिशत था। इसकी विडम्बना यह है कि विशेष केन्द्रीय सहायता की पूर्ण राशि जो मुख्य रूप से इन क्रियाकलापों में राज्य के प्रयासों को पूरा करने के लिए पूरक के रूप में आबंटित की जाती है, खर्च हो चुकी बताई गई है। इससे एकमात्र निष्कर्ष यही निकलता है कि उक्त सहायता का प्रयोग इन महत्वपूर्ण क्षेत्रों में राज्य के प्रयासों को बढ़ाने के बजाए उन्हें राज्य द्वारा खर्च की जाने वाली निर्धारित राशि के बदले किया गया है।

20. कुल मिलकर यह राज्य छठी योजना के दौरान किसी विशेष केन्द्रीय सहायता का पात्र नहीं है। और राज्य सरकार को दी गई 40.81 करोड़ रुपए की विशेष केन्द्रीय सहायता की कुल राशि उस योजना अवधि के अन्त में उनके पास खर्च होने से बच रही मानी जा सकती है।

हिमाचल प्रदेश

21. छठी योजना के दौरान 560 करोड़ रुपए के राज्य योजना परिव्यय में से आदिवासी उप–योजना के लिए दी गई राशि 47.47 करोड़ रुपए थी। यह राज्य योजना परिव्यय का 8.48 प्रतिशत होती है। छठी योजना के दौरान आदिवासी उप–योजना के अंतर्गत कुल व्यय 63.17 करोड़ रुपए (राज्य योजना के अंतर्गत 55.29 करोड़ रुपए तथा विशेष केन्द्रीय सहायता के अतर्गत 7.88 करोड़ रुपए) बताया गया था। तथापि, राज्य योजना व्यय में विद्युत पर हुए 1.30 करोड़ रुपए का अतिरिक्त व्यय शामिल है जो वास्तव में आदिवासी विकास के लिए सुसंगत नहीं है। तथापि, इस अतिरिक्त राशि को घटाने के बाद भी आदिवासी उपयोजना का शुद्ध व्यय 61.87 करोड़ रुपए है जो कि उल्लेखनीय रूप से आदिवासी उप-योजना के मूल परिव्यय से अधिक है।

22. क्षेत्र-वार आबंटन तथा व्यय के लिए की गई समीक्षा से यह प्रकट होता है कि 10.26 करोड़ रुपए का एक बड़ा परिव्यय (राज्य योजना परिव्यय का 21.6 प्रतिशत) विद्युत के लिए अलग रखा गया था। यदि यह राशि हटा दी जाए तो आदिवासी उप-योजना का परिव्यय राज्य योजना के परिव्यय के 8.5 प्रतिशत के बजाए केवल 6.6 प्रतिशत ही होगा। आदिवासी विकास से विशेष रूप से सुसंगत स्थिति निम्नलिखित है—

सारणी 5

(रुपए करोड़ में)

	परिव्यय	व्यय
कृषि और सहबद्ध सेवाएं .	6.46	7.29
ग्रामीण विकास और विशेष क्षेत्र कार्यक्रम . .	2.91	4.98
सहकारिता . .	0.81	0.75
लघु सिचाई . .	2.10	4.55
शिक्षा . . .	1.53	2.20
तकनीकी शिक्षा . .	0.10	0.05
स्वास्थ्य . . .	1.04	1.26

यह आशाजनक बात है कि इन मदों में से अधिकांश पर हुआ व्यय उनके परिव्यय से अधिक था। सहकारिता के क्षेत्र में थोड़ी कमी है। तथापि, तकनीकी शिक्षा क्षेत्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिसके लिए परिव्यय केवल 10 लाख रुपए था तो भी उसके व्यय में 50 प्रतिशत की कमी रही। यह मानव संसाधन के विकास के लिए तकनीकी शिक्षा के महत्व की दृष्टि से बेमेल है।

23. निष्कर्ष यह है कि **हिमाचल प्रदेश में विशेष केन्द्रीय सहायता पूर्ण रूप से उपयोग में लाई गई थी। अनुसूचित क्षेत्रों वाले 8 राज्यों में यह एकही मामला था जिसमें लगभग सभी क्षेत्रों में व्यय उनके मूल परिव्यय से अधिक था।**

मध्य प्रदेश

24. इस राज्य योजना में आदिवासी उप योजना का स्वीकृत परिव्यय 629.04 करोड़ रुपए था जो कुल 3800 करोड़ रुपए की राज्य योजना का 16.55 प्रतिशत था। तथापि, चूंकि योजना परिव्यय वर्ष प्रतिवर्ष पुनरीक्षित किया गया था, पांच वर्षो के लिए आदिवासी उप-योजना का कुल मिलाकर परिव्यय 650.3 करोड रुपए होता था। इस अवधि में दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता की कुल राशि 137.72 करोड़ रुपए थी।

25. राज्य योजना से दी गई राशि के बारे में परिव्यय और व्यय की क्षेत्र वार स्थिति इस प्रकार है—

सारणी 6

(रुपए करोड़ में)

		परिव्यय		व्यय
कृषि और सहबद्ध सेवाएं		129.14		111.42
ग्रामीण विकास		85.73		65.66
सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण		147.96		146.34
ऊर्जा		73.73		109.18
उद्योग और खनिज		21.04		19.87
परिवहन		51.19		61.18
सामान्य आर्थिक सेवाए		0.89		0.85
सामाजिक और सामुदायिक सेवाएं				
(क) शिक्षा	30.49		35.98	
(क) स्वास्थ्य	25.25	140.44	26.12	154.53
(ग) अन्य	84.69		92.43	
सामान्य सेवाएं	0.19			0.24
कुल		650.31		669.27

उपर्युक्त से यह प्रकट होगा कि सर्वाधिक परिव्यय सिंचाई पर था तथापि, यह मध्यम और लघु सिंचाई परियोजनाओं से संबंधित है। विद्युत (नर्मदा परियोजना सहित म० प्र० वि० बो०) का परिव्यय बहुत अधिक यानी 73.73 करोड़ रुपए और व्यय 109.18 करोड़ रुपए था (योजना प्रावधान से 35.45 करोड़ रुपए अधिक)। परिवहन और संचार क्षेत्रों का व्यय भी 9.99 करोड़ रुपए अधिक था।

26. यह जानकर संतोष होता है कि राज्य योजना से शिक्षा पर हुआ व्यय मूल परिव्यय से उल्लेखनीय रूप से अधिक था और स्वास्थ्य पर हुआ व्यय भी थोड़ा अधिक था। यह खेद की बात है कि कृषि और ग्रामीण विकास क्षेत्रों में भारी कमी थी।

27. इस राज्य ने यह बताया है कि विशेष केन्द्रीय सहायता से दी गई 137.72 करोड़ रुपए की वास्तविक राशि के मुकाबले कुल व्यय 145.26 करोड़ रुपए हुआ था। विशेष केन्द्रीय सहायता के संबंध में कल्याण मंत्रालय द्वारा यथा स्वीकार्य वास्तविक व्यय केवल 105.23 करोड़ रुपए है जो इस संबंध में 32.49 करोड़ रुपए की कमी उपदर्शित करता है। इसका स्पष्टीकरण इस तथ्य से होता है कि ऐसी बहुत सारी मदें हैं जो विशेष केन्द्रीय सहायता की पात्र नहीं हैं और राज्य द्वारा उनके समक्ष व्यय किया गया बताया गया है। उदाहरण के लिए यह बताया गया है विशेष केन्द्रीय सहायता से वानिकी और वन्य जीवों पर 13.04 करोड़ रुपए की राशि खर्च की गई है, जो स्पष्ट रूप से प्राधिकृत नहीं है। तदनुसार राज्य की पात्रता की कुल राशि निर्धारित करने के प्रयोजन के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता में से हकदारी व्यय 105.23 करोड़ रुपए होना माना जा सकता है।

28. जैसा कि इस राज्य ने दावा किया है, राज्य योजना से आदिवासी उपयोजना के लिए दिया गया कुल व्यय 629.04 करोड़ रुपए के स्वीकृत योजना परिव्यय से 40.24 करोड़ रुपए अधिक था। तथापि, इस व्यय में मूल परिव्यय की तुलना में ऊर्जा पर 35.45 करोड़ रुपए और परिवहन तथा संचार पर 9.99 करोड़ रुपए का अतिरिक्त व्यय भी शामिल है। ऊर्जा विशेष केन्द्रीय सहायता का बिल्कुल भी पात्र नहीं है। विशेष केन्द्रीय सहायता से परिवहन और संचार पर व्यय की अनुमति दृढ़ रूप से विहित सीमा के अन्दर ही दी जाती है ताकि यह अन्य अनिवार्य मदों के व्यय को न बंटा सके। उपर्युक्त विवरण पत्र यह जतलाता है कि इन दो मदों पर किया गया अतिरिक्त व्यय अन्य अनिवार्य मदों, जैसे कृषि और ग्रामीण विकास जिनका राज्य योजना से व्यय उनके परिव्यय की तुलना में बहुत कम था, की जोखिम पर किया गया था। परन्तु ये वे मदें हैं जो लोगों से निकट का संबंध रखते हुए आदिवासी विकास में उच्च प्राथमिकता का दावा करती हैं। इसके परिणामस्वरूप आदिवासी योजना के अधीन राज्य के प्रयासों को पूरा करने के लिए पूरक के रूप में विशेष केन्द्रीय सहायता प्रयोग में लाई जाती है। यह महत्वपूर्ण बात है कि

राज्य ने यह दावा किया है कि उन्होंने विशेष केन्द्रीय सहायता से काफी बड़ी राशि खर्च की है। उदाहरण के लिए, कृषि, बागवानी और कृषि-विपणन का राज्य योजना परिव्यय सबको मिलाकर 84.03 करोड़ रुपए था और इन मदों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता से 25.08 करोड़ रुपए का ऋण लिया गया था। परन्तु इस राज्य में राज्य योजना से किया गया कुल व्यय केवल 66.52 करोड़ रुपए बताया है (परिव्यय से 17.51 करोड़ रुपए कम)। बावजूद इसके उक्त विभागों ने विशेष केन्द्रीय सहायता से 8.71 करोड़ रुपए खर्च कर लेने का दावा किया है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि विशेष केन्द्रीय सहायता के समक्ष दिखाया गया व्यय राज्य के प्रयासों को मूल रूप से कम करने के समान है और वह राज्य यह दावा नहीं कर सकता है कि उन्हें कृषि के लिए दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता का उपयोग कर लिया गया है।

29. इस प्रकार यदि आदिवासी उप-योजना व्यय की कुल राशि को देखा जाए तो ऊर्जा जैसी मदों पर अतिरिक्त व्यय या तो पुनरीक्षित बजट के समय राज्य द्वारा अतिरिक्त प्रावधान करा कर या दूसरे क्षेत्रों से राशि लेकर पूरा किया जाता है। चूंकि आदिवासी उप-योजना जिसमें अन्य मदों के साथ ऊर्जा सम्मिलित है, के लिए एक ही बजट मांग संख्या है, इस मद पर हुआ अतिरिक्त व्यय दूसरी मदों की कमियों के मुकाबले अपने आप ही समायोजित हो जाता है और जितनी राशि इस तरह से समायोजित होने से शेष बच रहती है केवल उसी के लिए अतिरिक्त प्रावधान किया जाना होता है। जैसे ऊपर दृष्टांत दिया गया है विशेष केन्द्रीय सहायता कुछ क्षेत्रीय कार्यक्रमों के लिए इस तरह से प्रयोग की जा सकती है जिससे वह इन क्षेत्रों में राज्य के प्रयासों को मूल रूप से कम कर दे और उसके बदले में इन क्षेत्रों में परिणामी कमी गैर-पात्रता वाली पूंजीगहन मदों पर अतिरिक्त व्यय की पूर्ति के लिए हो जाए। इस प्रकार यह चक्र पूर्ण हो जाता है और इन मदों पर अतिरिक्त व्यय वास्तव में उस विशेष केन्द्रीय सहायता से पूरा होता है जो महत्वपूर्ण क्षेत्रों में राज्य के प्रयासों को पूरा करने के लिए पूरक के रूप में दी जानी होती है।

30. तदनुसार ऊर्जा और परिवहन पर हुआ राज्य योजना के परिव्यय से अधिक व्यय, जो कुल मिलाकर 45.44 करोड़ रुपए आता है, आदिवासी विकास के लिए स्वीकृत परिव्यय के समक्ष राज्य योजना के अधीन देय व्यय के रूप में नहीं माना जा सकता है। अतः इस अतिरिक्त व्यय से अलग राज्य योजना में कुल व्यय केवल 623.84 करोड़ रुपए है जो स्वीकृत परिव्यय से 26.47 करोड़ रुपए कम है। इसके परिणामस्वरूप इस राज्य की विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता की राशि 26.47 करोड़ रुपए कम हो जाती है। यदि यह विशेष केन्द्रीय सहायता (इससे पूर्व संदर्भित 32.49 करोड़ रुपए) के बारे में व्यय की कमी में जोड़ी जाती है तो **केन्द्रीय सहायता के लिए इस राज्य की पात्रता केवल 78.76 करोड़ रुपए होती है और छठी योजना में राज्य द्वारा प्राप्त की गई विशेष केन्द्रीय सहायता में से 58.96 करोड़ रुपए की राशि उस अवधि के अंत में उनके पास खर्च से बची अप्रयुक्त राशि मानी जा सकती है।**

महाराष्ट्र

31. छठी योजना के दौरान महाराष्ट्र की आदिवासी उप-योजना जिसमें राज्य के कुल क्षेत्रफल का 16.5 प्रतिशत और कुल जनसंख्या का 9.2 प्रतिशत शामिल है, का परिव्यय 6175 करोड़ रुपए में से 298.85 करोड़ रुपए था, अर्थात राज्य योजना परिव्यय का 4.84 प्रतिशत। तथापि, राज्य सरकार के अनुसार राज्य योजना के विभाज्य संघटक में केवल 1681.92 करोड़ रुपए की राशि शामिल थी जिसमें से 17.76 प्रतिशत आदिवासी उप-योजना के लिए चिह्नित की गई थी। इस अवधि के दौरान राज्य को विशेष केन्द्रीय सहायता के रूप में 33.27 करोड़ रुपए की राशि प्राप्त हुई थी। छठी योजना के दौरान आदिवासी उप-योजना के अंतर्गत कुल व्यय 321.48 करोड़ रुपए बताया गया है (राज्य योजना के अंतर्गत 287.44 करोड़ रुपए तथा विशेष केन्द्रीय सहायता के अंतर्गत 34.04 करोड़ रुपए)।

32. परिव्यय तथा व्यय की क्षेत्र-वार समीक्षा करने पर एक आशाजनक चित्र प्रस्तुत नहीं होता है। यहां तक कि विभाज्य परिव्यय में से भी एक काफी बड़ा भाग अर्थात 20.8 प्रतिशत बड़ी तथा मध्यम सिंचाई परियोजनाओं और विद्युत ट्रांसमिशनों के लिए दिया गया था। राज्य सरकार ने इस तथ्य को सातवीं योजना बनाते समय देखा और कहा कि इसे कम किया जाना चाहिए। तथापि, सातवीं योजना के आंकड़े यह दर्शाते हैं कि इन दो क्षेत्रों का भाग घटाकर केवल 18.1 प्रतिशत किया गया था।

33. क्षेत्र वार परिव्यय तथा व्यय निम्नलिखित है --

सारणी 7

(रुपए करोड़ में)

	परिव्यय	व्यय
कृषि तथा सहबद्ध सेवाएं	20.78	21.72
ग्रामीण विकास	6.08	7.41
सहकारिता	6.86	5.81
सिंचाई तथा बाढ़ नियंत्रण . . .	70.47	85.59
विद्युत विकास	16.00	23.32

(रुपए करोड़ में)

		परिव्यय		व्यय
उद्योग और खनन		0.31		0.39
परिवहन तथा संचार		40.18		49.82
सामाजिक और सामुदायिक सेवाएं				
शिक्षा	7.75	138.03	10.50	93.38
चिकित्सा तथा जन स्वास्थ्य	10.76		7.29	
पोषण	5.20		4.00	
रोजगार गारंटी योजना	53.97		46.33	
अन्य	60.35		25.26	
कुल		298.71		287.44

यह आशाजनक बात है कि शिक्षा पर व्यय, जो आदिवासी विकास का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है, परिव्यय की तुलना में उल्लेखनीय रूप से अधिक है। कृषि तथा सहबद्ध सेवाओं और ग्रामीण विकास पर भी व्यय थोड़ा सा अधिक है। तथापि, यह खेद की बात है कि चिकित्सा तथा जन स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण क्षेत्र के अन्तर्गत व्यय में बहुत अधिक कमी है। रोजगार गारंटी योजना में भी बहुत अधिक कमी है। सहकारिता तथा पोषण पर भी व्यय उल्लेखनीय रूप से कम है, जबकि लघु सिंचाई पर व्यय थोड़ा सा कम है।

34. अधिक पूंजी वाले कार्यक्रमों के बारे में स्थिति भिन्न है। सिंचाई तथा बाढ़ नियंत्रण तथा साथ ही विद्युत विकास पर व्यय परिव्यय से बहुत अधिक है, जो उस उप योजना के ढांचे में, जिसमें इन क्षेत्रों को मूल रूप में अधिक भाग दिया जाता है, असंतुलन बढ़ाने के लिए उत्तरदायी है।

35. इस स्थिति में यह उल्लेखनीय है कि ऐसा प्रतीत होता है कि आदिवासी विकास के लिए महत्वपूर्ण क्षेत्रों में थोड़े परिव्यय से काम चलाना राज्य के लिए संभव है क्योंकि उन कार्यक्रमों का एक भाग विशेष केन्द्रीय सहायता द्वारा पोषित किया जा सकता है, परन्तु यह विशेष केन्द्रीय सहायता की भावना के विरुद्ध है क्योंकि इसका प्रयोग उन महत्वपूर्ण क्षेत्रों में राज्यों के प्रयासों को पूरा करने के लिए पूरक के रूप में ही किया जाना चाहिए और उसके बदले में नहीं किया जाना चाहिए। विद्युत तथा सिंचाई जैसी मदों पर अधिक व्यय, वास्तव में इन सभी मदों के एक ही बजट मांग में सम्मिलित होने के कारण अन्य क्षेत्रों में कमी रख कर ही किया गया है। इसे चालाकी से कैसे बदले में प्रयुक्त किया जाता है उसकी विस्तार से चर्चा मध्यप्रदेश के मामले में की गई है।

36. महाराष्ट्र सरकार ने विशेष केन्द्रीय सहायता का प्रयोग, चल रहे कार्यक्रमों में, उन्हें यथा आवश्यक सुदृढ़ करने तथा प्रायोगिक आधार पर विशेष कार्यक्रम आरंभ करने के लिए लचीले तौर पर सामान्य ढांचे का अनुसरण नहीं किया है। उन्होंने कुछ ऐसी योजनाओं की पहचान की है जिन्हें पूरी निधि विशेष केन्द्रीय सहायता से दी जाती है जो विशेष केन्द्रीय सहायता की सामान्य योजना के अनुरूप नहीं है*।

37. राज्य सरकार के अनुसार राज्य योजना के संबंध में कुल 298.71 करोड़ रुपए के परिव्यय में से कुल 287.44 करोड़ रुपए व्यय हुए जिसका अर्थ है कि उस में केवल 11.27 करोड़ रुपए की सीमा तक कमी थी। इसके विपरित केन्द्रीय सरकार द्वारा दी गई 33.27 करोड़ रुपए की विशेष केन्द्रीय सहायता के मुकाबले व्यय 34.04 करोड़ रुपए बताया गया है। इन मोटे आंकड़ों के आधार पर विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए राज्य की पात्रता में से केवल 11.27 करोड़ रुपए कम किए जाने हैं। तथापि यदि ऐसी मदों पर, जिनके लिए केन्द्रीय सहायता नहीं दी जा सकती है, हुए 22.44 करोड़ रुपए के अधिक व्यय को घटा दिया जाए, क्योंकि इसका अनिवार्य रूप से अर्थ विशेष केन्द्रीय सहायता द्वारा राज्य के प्रयासों को मूल रूप से विछिन्न किया जाना होता है, तो राज्य योजना परिव्यय से सुसंगत व्यय जिसके मुकाबले विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता का दावा किया जा सकता है, घटाकर केवल 265 रुपए करोड़ रह जाती हैं। इस प्रकार विशेष केन्द्रीय सहायता की मद में व्यय हुए 34.04 करोड़ रुपए के ऋण को शामिल करने के बाद व्यय का संबंधित स्तर केवल 299.04 करोड़ रुपए होता है जो राज्य योजना के अधीन आदिवासी उप-योजना के परिव्यय से 0.19 करोड़ रुपए अधिक है। **अतः विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए राज्य की पात्रता 0.19 करोड़ रु० है और विशेष केन्द्रीय सहायता की 33.08 करोड़ की राशि (33.27 करोड़ रुपए की राशि में से राज्य सरकार को दी गई) इस योजना अवधि के अंत में उनके पास खर्च होने से शेष बच रही मानी जा सकती है।**

उड़ीसा

38. छठी योजना अवधि के लिए राज्य योजना से आदिवासी उप-योजना परिव्यय 533.19 करोड़ रुपए था। तथापि वर्ष प्रतिवर्ष के आधार पर आदिवासी उप-योजना का वास्तविक परिव्यय कम प्रतीत होता है और योजना अवधि के लिए 527.31 करोड़ रुपए बताया गया है। यह कटौती न्यायसंगत नहीं है और इसलिए 533.19 करोड़ रुपए के मूल आंकड़ों को संदर्भ के रुप में लिया गया

है। राज्य योजना परिव्यय से कुल व्यय 463.46 करोड़ रुपए तथा विशेष केन्द्रीय सहायता से संबंधित व्यय 66.52 करोड़ रुपए था।

39. उड़ीसा सरकार ने अब तक आदिवासी उप-योजना के लिए एक पृथक बजट मांग संख्या की प्रणाली नहीं अपनाई है जैसा आदिवासियों के बड़े क्षेत्रों वाले बहुत से अन्य राज्यों में किया जा चुका है जिसके परिणामस्वरुप वास्तविक व्यय और योजना दस्तावेजों में बताए गए व्यय के बीच भिन्नता रहने की सम्भावना को इंकार नहीं किया जा सकता है। इस राज्य द्वारा भी विशेष केन्द्रीय सहायता को परियोजनाओं के लिए निधि उपलब्ध कराने के लिए एक अलग स्रोत के रुप में माना जाना जारी है। यह तथ्य भी कि लगभग उन सभी मदों में जिनके लिए वर्षानुवर्ष विशेष केन्द्रीय सहायता से निधि आवंटित की जाती है, दर्शाया गया व्यय भी ठीक उतना ही है और किसी प्रकार की कोई कमी नहीं है और कोई अधिक व्यय नहीं हुआ है, उस प्रथा का सूचक है जिसमें हस्तांतरित की गई निधि को वास्तविक व्यय माना जाता है। अतः केन्द्र सरकार द्वारा दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता बताई गई मदों पर वास्तव में जिस सीमा तक खर्च की गई है, वह दस्तावेजों से दिखाई नहीं देती है।

40. क्षेत्र-वार परिव्यय तथा व्यय निम्नलिखित है —

सारणी 8

(रुपए करोड़ में)

		परिव्यय		व्यय
कृषि तथा सहबद्ध सेवाएं		25.99		25.58
सहकारिता		9.22		5.16
ग्रामीण विकास		42.08		28.46
सिंचाई तथा बाढ़ नियन्त्रण,				
(क) बड़ी तथा मध्यम सिंचाई . .		140.12		132.09
(ख) लघु सिंचाई		20.23		20.95
विद्युत तथा ऊर्जा		209.63		165.32
उद्योग और खनिज		5.99		12.51
परिवहन		27.92		21.78
सामाजिक तथा सामुदायिक सेवाएं				
(क) शिक्षा	18.91		18.37	
(ख) स्वास्थ्य	6.32	45.63	8.48	51.11
(ग) पोषण	5.40		3.29	
(घ) अन्य	15.00		20.97	
सामान्य सेवाएं		0.50		0.50
कुल		527.31		463.46

उपर्युक्त विवरण पत्र से यह पता लगता है कि आदिवासी उप योजना के लिए राज्य योजना से आबंटन यथार्थ की अपेक्षा काल्पनिक अधिक है और इसका सीधा संबंध आदिवासी लोगों के कल्याण से नहीं है। यह आश्चर्य की बात है कि 527.31 करोड़ रुपए में से 349.75 करोड़ रुपए का परिव्यय अथवा कुल का 66.33 प्रतिशत विद्युत तथा बड़ी और मध्यम सिंचाई परियोजना से संबंधित है जो आदिवासी उपयोजनाओं वाले राज्यों में सर्वाधिक है। एक और उल्लेखनीय तथ्य यह है कि बहुदेशीय नदी घाटी परियोजनाओं के विद्युत खण्ड में आदिवासी उप योजना के अधीन 151.30 करोड़ रुपए का परिव्यय दर्शाया गया है, जो राज्य के कुल परिव्यय का 72.17 प्रतिशत है, जिसका आदिवासी कल्याण के लिए अधिक महत्व नहीं हो सकता है।

41. जिन महत्वपूर्ण क्षेत्रों में कमियां है, उनके लिए केन्द्र विशेष केन्द्रीय सहायता से पूरक के रुप में राशि उपलब्ध कराता है। इस प्रकार एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम में 4.22 करोड़ रुपए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम में 3.04 करोड़ रुपए सूखा प्रवृत्त क्षेत्र कार्यक्रम में 1.89 करोड़ रुपए फसल, संवर्धन पर 1.89 करोड़ रुपए सहकारिता पर 4.05 करोड़ रुपए तथा इ०आर०आर०पी० पर 4.38 करोड़ रुपय, कुल मिलाकर 18.77 करोड़ रुपए की कमी है। इन कार्यक्रमों में कमियां आदिवासी उप-योजना की स्कीम के विरुद्ध हैं जिसके अनुसार इन महत्वपूर्ण क्षेत्रों में राज्य के प्रयासों को विशेष केन्द्रीय सहायता से पूरक के रुप में अतिरिक्त निधि देकर पूरा किया जाने की अपेक्षा की जाती है। इन सभी योजनाओं के अंतर्गत कार्यक्रम थोड़े बहुत अंतर के साथ एक जैसे हैं

यद्यपि उनके नाम अलग-अलग हैं। इसके फलस्वरूप राज्य योजना से इन योजनाओं के अधीन कार्यक्रमों में कमी रहने और उसी प्रकार की दूसरी योजनाओं पर विशेष केन्द्रीय सहायता से व्यय करने का अनिवार्य रूप से अर्थ केन्द्रीय सहायता की मार्फत आदिवासी विकास के लिए उस राज्य के अपने ही प्रयासों को मूल रूप से कम करना है। उस सीमा तक राज्य की विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता घट गई रहती है। आदिवासी उप-योजना (राज्य योजना+विशेष केन्द्रीय सहायता) के अंतर्गत कुल व्यय 529.98 (463.46+66.52) करोड़ रुपए आता है। यदि खनन पर हुए 5.75 करोड़ रुपए के अधिक व्यय को छोड़ दिया जाए और 44.31 करोड़ रुपए की कमी को परिव्यय से निकाल दिया जाए तो वह कुल व्यय जिसके मुकाबले विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए राज्य की पात्रता का निर्धारण किया जाता है 488.88 करोड़ रुपए के घटे हुए परिव्यय के मुकाबले केवल 524.23 करोड़ रुपए होता है। इस प्रकार राज्य की **विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता** 35.35 **करोड़ रुपए है और छठी योजना के दौरान राज्य सरकार को दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता में से** 31.21 **करोड़ रुपए की राशि उस योजना अवधि के अंत में उनके पास खर्च होने से बची शेष राशि मानी जा सकती है।**

राजस्थान

42. छठी योजना के दौरान 2025 करोड़ रुपए के राज्य योजना परिव्यय में से आदिवासी उपयोजना के लिए दी गई राशि 202.66 करोड़ रुपए थी। यह राज्य योजना परिव्यय का 10 प्रतिशत होता है। इसके बाद राज्य योजना का कुल परिव्यय बढ़ाकर 2127.50 करोड़ रुपए किया गया था (5.1 प्रतिशत वृद्धि) किन्तु आदिवासी उपयोजना के लिए दी गई राशि में कोई बढ़ोतरी नहीं की गई थी। आनुपातिक आधार पर राज्य योजना से आदिवासी उपयोजना को दी जाने वाली राशि 202.66 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 212.92 करोड़ रुपए की जानी चाहिए थी। उस योजना अवधि के दौरान राज्य को विशेष केन्द्रीय सहायता के रूप में 33.05 करोड़ रुपए की राशि प्राप्त हुई थी। कुल व्यय, विशेष केन्द्रीय सहायता से संबंधित 32.07 करोड़ रुपए के व्यय को मिलाकर 268.24 करोड़ रुपए बताया गया है।

43. यहां यह उल्लेखनीय है कि राजस्थान आदिवासी उपयोजना क्षेत्र के लिए एक अलग बजट नाम संख्या लागू नहीं की गई है और आदिवासी विकास योजनाएं जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों के माध्यम से कार्यान्वित की जा रही हैं जिसमें बहुत से मामलों में कोई वास्तविक व्यय न होने पर भी निधि का स्थानान्तरण होना अन्तर्ग्रस्त होता है। इस कारण से आदिवासी उपयोजना पर बताया गया व्यय वास्तविक व्यय को प्रतिपादित नहीं कर सकता है।

44. क्षेत्र-वार परिव्यय तथा व्यय निम्नलिखित है—

सारणी 9

(रुपए करोड़ में)

	परिव्यय	व्यय
कृषि तथा सहबद्ध सेवाएं .	12.19	23.73
ग्रामीण विकास . .	12.13	
सहकारिता . .	2.40	0.76
सिंचाई और बाढ़ नियन्त्रण .	68.75	166.55
विद्युत विकास . .	58.23	
उद्योग तथा खनिज . .	10.91	9.99
परिवहन तथा संचार . .	11.65	10.59
सामान्य आर्थिक सेवाएं .	0.09	0.09
सामाजिक और सामुदायिक सेवाएं		
शिक्षा . 10.52	25.94	24.00
स्वास्थ्य . 4.26		
पोषण . 0.23		
अन्य . . 10.93		
सामान्य सेवाएं .	0.37	0.46
कुल .	202.66	236.17

45. उपर्युक्त सारणी से यह पता चलता है कि आदिवासी उपयोजना के ढांचे में बहुत असमानता है। राज्य योजना में सिंचाई तथा विद्युत परियोजनाओं पर परिव्यय 126.98 करोड़ रुपए अथवा कुल परिव्यय का 62.66 प्रतिशत था। इस प्रकार परिव्यय का एक छोटा भाग ही आदिवासी विकास के महत्वपूर्ण क्षेत्रों के लिए छोड़ा गया था। इसके बाद असमानता में और भी वृद्धि हो जाती है क्योंकि पूंजी गहन कार्यक्रमों पर व्यय की प्रवृत्ति मूल परिव्यय से अधिक होने की होती है। उदाहरण के लिए, आदिवासी उप-योजना में सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण के अधीन 68.75 करोड़ रुपए तथा विद्युत विकास के अधीन 58.23 करोड़ रुपए के परिव्यय के मुकाबले इन दोनों क्षेत्रों का सम्मिलित व्यय 166.55 करोड़ रुपए दिखाया गया है अर्थात् व्यय 39.57 करोड़ रुपए अधिक है। तथापि, इस अधिक व्यय के एक भाग का समायोजन आदिवासी उपयोजना का व्यय राज्य योजना में उसके मूल परिव्यय से 33.51 करोड़ रुपए बढ़ाकर किया गया है। परन्तु शेष 6.06 करोड़ रुपए का समायोजन अन्य क्षेत्रों में व्यय की कमी के माध्यम से किया गया है।

46. यहां यह उल्लेखनीय है कि ऐसी महत्वपूर्ण मदों में कमियां रखना जिनके लिए केन्द्र सरकार विशेष केन्द्रीय सहायता उपलब्ध कराती है आदिवासी उप-योजना के सिद्धान्त के विरुद्ध है। जहां एक ओर राज्य क्षेत्र के कार्यक्रमों में कमियां दिखाई गई हैं, दूसरी ओर थोड़े बहुत अन्तर के साथ उसी प्रकार के कार्यक्रमों को विशेष केन्द्रीय सहायता दी गई है।

47. यदि सिंचाई तथा विद्युत पर 39.57 करोड़ रुपए के अधिक व्यय को छोड़ दिया जाए, तो, 202.56 करोड़ रुपए के मूल परिव्यय के संदर्भ में राज्य की विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता 26.01 करोड़ रुपए होगी। तथापि, जैसा पहले बताया गया है राज्य योजना परिव्यय में भारी वृद्धि किए जाने के साथ आदिवासी उपयोजना के लिए परिव्यय भी 202.66 करोड़ रुपए से बढ़कर कम से कम 212.92 करोड़ रुपए से किया जाना चाहिए था। इस प्रकार राशि के संदर्भ में राज्य की विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता समान अनुपातिक रूप से 10.25 करोड़ रुपए घट गई ठहरती हैं। **इस प्रकार केन्द्र सरकार द्वारा दी गई 33.05 करोड़ रुपए की राशि के मुकाबले राज्य की विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता केवल 15.75 करोड़ रुपए है। इसलिए विशेष केन्द्रीय सहायता की 17.30 करोड़ रुपए की राशि छठी योजना के अन्त में उनके पास खर्च होने से बची शेष राशि मानी जानी चाहिए।**

48. निम्नलिखित सारणी में अनुसूचित क्षेत्रों वाले आठ राज्यों में राज्य योजना (आदिवासी उप-योजना) के अधीन स्वीकृत (मूल) और पुनरीक्षित परिव्यय तथा व्यय, दी गई तथा खर्च की गई विशेष केन्द्रीय सहायता, उन मदों के व्यय में अधिकतम कमी, जिनके लिए विशेष केन्द्रीय सहायता के प्रयोग पर पाबन्दी है, अनुपूरक सिद्धांत के अनुसार राज्य की विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता और छठी योजना के अंत में उनके पास खर्च होने से बची शेष राशि दर्शाई गई है —

सारणी 10

अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्यों में छठी योजना के दौरान आदिवासी उपयोजना पर व्यय तथा परिव्यय

(रुपये करोड़ में)

क्र० सं०	राज्य का नाम	योजना आयोग के दिसम्बर, 1984 के दस्तावेजों में दर्शाया गया परिव्यय		1985-86 की आदिवासी उप-योजना के दस्तावेजों में दर्शाया गया आदिवासी उपयोजना का पुनरीक्षित परिव्यय	दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता	स्तम्भ 4 तथा 6 का योग
		राज्य योजना	आदिवासी उप-योजना को दी गई राशि			
1	2	3	4	5	6	7
1.	आन्ध्र प्रदेश	3100	139.46	139.46 (105.96)*	22.50	161.96
2.	बिहार .	3225	625.26	639.34	69.35	694.81
3.	गुजरात .	3680	484.40	474.09 (456.00)*	40.81	525.21
4.	हिमाचल प्रदेश	560	44.91	47.47	7.02	51.93
5.	मध्य प्रदेश	3800	629.04	650.31	137.72	766.76
6.	महाराष्ट्र .	6175	298.85	298.71	33.27	332.12
7.	उड़ीसा .	1500	533.19	533.19 (527.31)	66.56	599.75
8.	राजस्थान	2025 (2127.50)	202.66 (212.92)	202.66	33.05	235.71 (245.97)
	कुल .	24065 (24167.50)	2957.77 (2968.03)	2985.23 (2927.76)	410.28	3368.05 (3378.31)

* घटा हुआ परिव्यय जिसे राज्य सरकार द्वारा माना गया परन्तु जो आदिवासी उप योजना के सामान्य सिद्धांतों के अनुसार स्वीकार्य नहीं है।

(जारी)

सारणी 10

क्रम सं०	राज्य का नाम	बताया गया व्यय			ऐसी मदों के व्यय में अधिकता/अपूर्णता जिनमें विशेष केन्द्रीय सहायता के प्रयोग पर प्रतिबंध है	विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए पात्रता (10–11–4)	विशेष केन्द्रीय सहायता की खर्च होने से बची शेष राशि (6–12)
		राज्य योजना	विशेष केन्द्रीय सहायता	स्तंभ 8 और 9 का योग			
1	2	8	9	10	11	12	13
1.	आन्ध्र प्रदेश	98.99	24.30	123.29	—	शून्य	22.50
2.	बिहार	543.38	56.27	599.65	(—)76.15	36.46	32.89
3.	गुजरात	405.81	40.81	446.62	—	शून्य	40.81
4.	हिमाचल प्रदेश	55.29	7.88	63.17	1.30	14.40	शून्य
5.	मध्य प्रदेश	669.28	105.23	774.51	45.44	78.76	58.96
6.	महाराष्ट्र	287.44	34.04	321.48	22.44	0.19	33.08
7.	उड़ीसा	463.46	66.52	529.98	(—)38.56	35.35	31.21
8.	राजस्थान	236.17	32.07	268.24	39.57	26.01 (15.75)	7.04 (17.30)
	कुल	2759.82	367.12	3126.94		191.17 (180.91)	226.49 (236.75)

टिप्पण—(1) स्तंभ 3 और 4 में यथा निर्दिष्ट योजना आयोग का दस्तावेज 1985–90 की सातवीं योजना में आदिवासी विकास पर कार्यकारी दल की रिपोर्ट है ।

(2) बिहार, हिमाचल प्रदेश और मध्य प्रदेश के सामने स्तंभ 12 में दिए गए आंकड़े स्तंभ (10–11) में से स्तंभ 5 को घटाकर निकाले गए हैं क्योंकि इन राज्यों में राज्य योजना से आदिवासी योजना के परिव्यय में वृद्धि हुई थी ।

(3) राजस्थान के सामने स्तंभ 13 में कोष्ठ में दिए गए आंकड़े स्तंभ (10–11) में से स्तंभ 4 के 202.66 करोड़ रुपए की राशि घटाकर निकाले गए हैं, क्योंकि राज्य योजना के कुल परिव्यय में वृद्धि के परिणामस्वरूप आनुपातिक आधार पर आदिवासी उपयोजना का परिव्यय बढ़ाकर 212.92 किया जाना चाहिए था ।

49. उपर्युक्त सारणी में विशेष केन्द्रीय सहायता की वह राशि दर्शाई गई है, जो उन अनुपूरक सिद्धांतों के अनुसार जिनके अनुसरण में राज्यों को विशेष केन्द्रीय सहायता स्वीकार की जाती है, राज्य सरकारों के पास खर्च होने से शेष बच रही थी। यह राशि राज्यों द्वारा अपने योजना दस्तावेजों में किए गए इस दावे के तथ्य के बावजूद आती है कि उन्होंने योजना दस्तावेजों में दिखाई गई कुछ योजनाओं के कार्यान्वियन के लिए दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता खर्च कर ली है। संगठित क्षेत्रों की प्रगति में कुल कमी की दृष्टि से कार्यान्वित किया गया पूरा कार्यक्रम राज्य योजना परिव्यय से ही पोषित हुआ समझा जाता है और उस सीमा तक विशेष केन्द्रीय सहायता अप्रयुक्त रहती है और अगले वर्ष में योजना तथा उप-योजना के लिए विहित अधिकतम सीमाओं से ऊपर निवेश के लिए उपलब्ध हो जाती है जिसे योजना आयोग द्वारा दर्शाया जा सकता है। चूंकि यह अग्रेणन वर्ष प्रतिवर्ष किया गया है, आदिवासी विकास के लिए सुनियोजित प्रयासों का पता लगाने के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता के लाभप्रद उपयोग के लिए छठी योजना में इस अवसर को खो दिया गया है। **प्रारम्भिक जांच के अनुसार इन आठ राज्यों में अप्रयुक्त रही कुल राशि 236.75 करोड़ रुपए की सीमा तक है।** यदि पात्रता वर्ष/प्रतिवर्ष के आधार पर क्षेत्र-वार प्रगति के प्रसंग से निर्धारित की जाए तो यह राशि पर्याप्त रूप मे बढ़ सकती है।

50. आदिवासी उपयोजना के लिए कुल परिव्यय ऐसे क्षेत्रों में पूंजी निवेश का स्वरूप नहीं दर्शाते हैं, जो आदिवासी लोगों के लिए लाभदायक हैं। यह प्रतीत होता है कि इस तथ्य के होते हुए भी कि अब उप-योजना के कार्य एक दशक से भी अधिक पुराने हो गए हैं, सभी राज्य एक समान ढांचा नहीं अपना रहे हैं। इसके लिए बड़ी और मध्यम सिंचाई योजनाएं विद्युत और बड़े पैमाने के उद्योग सर्वाधिक स्पष्ट उदाहरण हैं, जिनमें निवेश का परिणाम प्राय: आदिवासी लोगों के लिए भारी पिछड़ापन लाना ही होता है और उसके लाभ लोगों को न मिलकर भागत: उस क्षेत्र को ही मिलते हैं। विद्युत परियोजनाएं चाहे आदिवासी क्षेत्रों में स्थापित की जाएं परन्तु उनके लाभ पूरे राज्य को मिलते हैं। अत: कुछ राज्यों में बड़ी तथा मध्यम सिंचाई परियोजनाएं और विद्युत परियोजनाएं आदिवासी उप-योजना परिव्यय में शामिल नहीं की जाती है। कुछ मामलों में इन परियोजनाओं के परिव्यय का आनुपातिक भाग, जो उन लाभों की मात्रा पर आधारित होता है जिनकी उस उप-योजना क्षेत्र को मिलने की संभावना होती है, उस उप-योजना के नाम में डाल दिया जाता है। परन्तु कुछ राज्यों में उनके साथ ऐसा कोई विचार अपनाया गया प्रतीत नहीं होता है और ऐसी परियोजनाओं पर कुल परिव्यय उप-योजना में दर्शाया जाता है जिससे जैसा कि पहले कहा गया है आदिवासी विकास के लिए पूंजी निवेश के आंकड़े जिनका वास्तविक दृष्टि से कोई अर्थ नहीं होता है या इनका प्रतिकूल प्रभाव ही होता है, अत्यधिक बढ़ जाते हैं।

51. ऐसे मिश्रित कार्यों में कुल परिव्यय और व्यय पर आधारित प्रगति भ्रामक होती है। इससे भी अधिक यह बात है कि भारी पूंजी निवेश वाले आधारिक संरचना के कार्यक्रम, जिनमें बड़े ठेके शामिल होते हैं, बड़े स्पंज सिद्ध होते हैं जो उस सभी कुछ को सोख लेते हैं जो उनके मार्ग में आता है। इस का प्रभाव अपरिहार्य रूप से शिक्षा, स्वास्थ्य और कृषि जैसे महत्वपूर्ण कार्यक्रमों पर पड़ता है, जिनका कार्यान्वियन अन्यथा भी कठिन होता है और ऐसी पूंजी गहन परियोजनाओं द्वारा संसाधनों पर पड़ने वाले भार के कारण धन का अभाव कार्य न करने के लिए एक आसान बहाना बन जाता है।

केन्द्रीय मंत्रालयों की आदिवासी उपयोजना, केन्द्रीय क्षेत्र और केन्द्रीय प्रायोजित योजनाएं

52. केन्द्र सरकार राष्ट्रीय महत्व की कुछ योजनाओं को पूर्ण रूप से धन प्रदान करती है और ये योजनाएं केन्द्रीय क्षेत्र योजनाएं कहलाती हैं। इसके अतिरिक्त अधिकांश योजना क्षेत्रों में कुछ केन्द्रीय प्रायोजित योजनाएं हैं जो सामान्य रूप से सभी राज्यों में एक समान हैं और जिनके लिए निधि केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार द्वारा साधारण तौर पर 50 : 50 के अनुपात से दी जाती हैं। ये योजनाएं भी राष्ट्रीय महत्व की समझी जाती हैं। इनमें से अधिकांश योजनाएं निर्धनता निवारण लक्ष्य से संबंधित हैं और इनका व्यय भागत: राज्य और केन्द्र योजनाओं से ली जाने वाली सहायिकी और भागत: वित्तीय संस्थानों से लिए जाने वाले ऋण से पूरा किया जाता है। सहायिकी और ऋण का अनुपात साधारण तौर पर बराबर होता है। यह विषय कि केन्द्रीय प्रायोजित योजनाओं के अधीन निधि चिह्नित किया जाना भी आदिवासी उप-योजना के अधीन होना चाहिए, पांचवीं योजना की अवधि में उठाया गया था। परन्तु इस बारे में प्रगति सन्तोषप्रद नहीं थी। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार केवल 6 राज्य अर्थात् **आंध्र प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान और तमिलनाडु** छठी योजना अवधि में अपनी केन्द्रीय प्रायोजित योजनाओं से 197.49 करोड़ रुपए चिह्नित कर सके थे। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य राज्यों ने भी अपनी केन्द्रीय प्रायोजित योजनाओं से आदिवासी क्षेत्रों को लाभ पहुंचाया होगा, परन्तु उसके बारे में कोई स्पष्ट सूचना प्राप्त नहीं है।

53. पिछड़ी जातियों के कल्याण पर केन्द्रीय समन्वय समिति की 5-8-1978 को हुई बैठक में केन्द्रीय मंत्रालयों से यह कहा गया था कि वे (क) आवंटन का प्रतिशत निर्धारण जो आदिवासी क्षेत्रों को दिया जाना चाहिए और (ख) आदिवासी क्षेत्रों के लिए केन्द्रीय कार्यक्रमों और केन्द्रीय प्रायोजित कार्यक्रमों के अनुकूलन के संबंध में विस्तृत कार्यक्रम आरम्भ करें। उस समिति ने यह सिफारिश की थी कि केन्द्रीय मंत्रालयों को 10 प्रतिशत से 15 प्रतिशत की सीमा तक निधि निश्चित करनी चाहिए। योजना आयोग द्वारा केन्द्रीय

मंत्रालयों को मार्ग-निर्देश जारी किए गए थे जिन्हें निम्नलिखित आधारों पर कार्यवाही करने के लिए कहा गया था—

(i) उपयुक्त कार्यक्रम तैयार करना,

(ii) चल रहे कार्यक्रमों को उपयुक्त रूप से अपनाना,

(iii) आदिवासी क्षेत्रों के लिए निधि निश्चित करना, और

(iv) अपने-अपने मुख्य बजट शीर्षों के अधीन पृथक् उप-शीर्षों को अपनाना जिससे आदिवासी क्षेत्रों के लिए निधि दिया जाना प्रकट हो।

पांचवीं योजना अवधि में आदिवासी क्षेत्रों के लिए निधियां चिह्नित करने में विभिन्न मंत्रालयों द्वारा कोई अधिक प्रगति नहीं दिखाई गई थी, और 1978–79 तथा 1979–80 में केवल 0.75 करोड़ रुपए की राशि का ही निवेश हुआ था। छठी योजना अवधि में 14 केन्द्रीय मंत्रालयों ने 911.70 करोड़ रुपए का कुल आबंटन चिह्नित किया था। छठी योजना का परिव्यय और आदिवासी उपयोजना के लिए चिह्नित आबंटन और छठी योजना में प्रत्येक वर्ष के लिए आबंटन और संबंधित मंत्रालयों के कार्यक्रम भी अनुलग्नक 7 में दिखाए गए हैं। सात मंत्रालयों अर्थात् कृषि सहकारिता, संचार, शिक्षा और संस्कृति, वित्त (आर्थिक कार्य), स्वास्थ्य और परिवार कल्याण, सूचना तथा प्रसारण और सिंचाई ने छोटी निधियां देने और आदिवासी क्षेत्रों में कार्यक्रमों का कार्यान्वयन करने के लिए विशेष प्रकोष्ठ स्थापित किये थे। शेष मंत्रालयों को भी इसका अनुसरण करना चाहिए। जिन मंत्रालयों ने अपने कार्यात्मक मुख्य बजट शीर्षों के अधीन पृथक बजट उप-शीर्ष नहीं खोले हैं उन्हें इस पर विचार करना चाहिए।

संस्थागत वित्त

54. छठी योजना में आदिवासी विकास पर कार्यकारी दल की रिपोर्ट में यह देखा गया था कि कार्यक्रम तैयार करने में प्रत्येक क्षेत्र की विशिष्ट समस्याओं और परिवार के रूप में लक्ष्य समूह की स्पष्ट रूप से परिभाषा की जानी चाहिए और ऐसी योजनाओं को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए जिनसे आदिवासी परिवारों को सीधे लाभ पहुंचता है। कृषि के क्षेत्र में एक आदिवासी परिवार को 50 प्रतिशत सहायिकी और 50 प्रतिशत ऋण दिया जाता है। तथापि विभिन्न राज्यों में और एक ही राज्य की विभिन्न योजनाओं में सहायिकी और ऋण घटकों का प्रतिशत अलग-अलग हो सकता है। ऋण-एवं-विपणन के क्षेत्र में संस्थागत वित्त द्वारा अदा की जाने वाली भूमिका महत्वपूर्ण है। आदिवासी अर्थ-व्यवस्था के विकास में उत्पादन और उपभोग दोनों प्रकार के ऋणों ने एक आधारभूत स्थान प्राप्त कर लिया है। इस प्रकार लाभभोगी-उन्मुख पूरे कार्यक्रम में संस्थागत वित्त एक महत्वपूर्ण घटक है। जहां सहायिकी केन्द्रीय और राज्य निधियों से प्राप्त होती है, ऋण वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिया जाता है।

55. मोटे तौर पर संस्थागत वित्त के तीन स्रोत हैं सहकारिता क्षेत्र, वाणिज्यिक बैंक और सम्मिलित क्षेत्र। उपर्युक्त तीन में से एक सहकारिता क्षेत्र ही आदिवासी विकास के क्षेत्र में विभिन्न योजनाओं से सर्वाधिक घनिष्ठता से संबंधित रहा है। आदिवासी क्षेत्रों में छठी योजना अवधि से बृहदाकार बहुद्देशीय समितियों (लैम्पस) की स्थापना हो जाने पर सहकारी समितियों की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। आदिवासी क्षेत्रों में वाणिज्यिक बैंकों का प्रतिशत अपेक्षाकृत बहुत थोड़ा रहा है परन्तु जहां पर भी इनकी शाखाएं विद्यमान हैं उनकी गतिविधियां अपेक्षाकृत एक नियंत्रित क्षेत्राधिकार तक ही सीमित हैं। वास्तव में यह देखा गया है कि वाणिज्यिक बैंकों की शाखाएं कर्मचारियों, आवास, संगठन कार्य-विधि इत्यादि के संबंध में कठिन परिस्थितियों में कार्य करती रही हैं। यह भी देखा गया है कि राज्य विकास अभिकरणों और वाणिज्यिक बैंक अधिकारियों के बीच समन्वय कारगर स्तर पर नहीं पहुंचा है। जहां तक सम्मिलित क्षेत्र का संबंध है आदिवासी व्यक्तियों को सीधे ऋण दिया जाना एक या दो आदिवासी विकास निगमों तक सीमित किया गया है। पांचवीं योजना अवधि में संस्थागत वित्त से निवेश लगभग 150 करोड़ रुपए था। छठी योजना अवधि में आदिवासी उपयोजना के सभी दस्तावेजों में वित्तीय संस्थाओं द्वारा अदा की जाने वाली भूमिका के लिए कोई विवरण नहीं दिए गए थे। तथापि ऐसी धारणा थी कि आदिवासी कार्यक्रमों में वित्तीय संस्थाओं का योगदान 800 करोड़ रुपए के लगभग होगा। इस प्रकार, सब मिलाकर आदिवासियों के विकास कार्यक्रम में संस्थागत वित्त ने भारी वित्तीय सहायता के रूप में भूमिका नहीं निभाई है। आदिवासियों की ओर से इस मामले में संकुचित रहने की बात विचारणीय है चूंकि उन्हें महाजनों का कटु अनुभव हुआ था जिन्होंने उनसे अत्यधिक दर से ब्याज वसूल किया था और उन्हें ऋणग्रस्त बना दिया था। बहुत सारे मामलों में भूमि का हस्तांतरण और बंधुआ होने की तह में भी महाजनों से ऋण लेना ही पाया जा सकता है। अतः सामान्य रूप से लोग ऐसी योजनाओं में लगने में अनिच्छुक हैं जिनमें ऋण लेना शामिल है। जब तक आदिवासियों में प्रबुद्धता और जागृति वांछित सीमा तक उत्पन्न होती है, हमें ऋण से जुड़ी उन योजनाओं को सावधानीपूर्वक चलाना होगा। हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि जिन योजनाओं में ऋण का मामला है उनसे आदिवासियों की आर्थिक स्थिति में गिरावट न आने पाए।

छठी योजना में विकास के चयनित क्षेत्रों में भौतिक उपलब्धियां

56. प्राप्त सूचना के आधार पर छठी योजना में कुछ राज्यों में चयनित क्षेत्रों/कार्यक्रमों में प्राप्त की गई भौतिक उपलब्धियां अनुलग्नक 8 में दर्शाई गई हैं। उक्त अनुलग्नक

में सम्मिलित ये नयनित क्षेत्र/कार्यक्रम और राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों की संख्या निम्नांकित है--

(1)	लघु सिंचाई के अधीन क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	13 राज्य
(2)	दुधारू पशु (संख्याओं के रूप में)	9 राज्य
(3)	वन रोपण (हेक्टेयर में)	11 राज्य, 1 संघ रा० क्षे०
(4)	जल आपूर्ति (गांवों की संख्या के रूप में)	11 राज्य, 1 संघ रा० क्षे०
(5)	अधिक उपज वाली किस्मों के अधीन क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	10 राज्य, 1 संघ रा० क्षे०
(6)	वापस दिलाई गई हस्तांतरित भूमि (हेक्टेयर में)	7 राज्य
(7)	विद्युतीकृत गांव (संख्याओं के रूप में)	14 राज्य, 1 संघ रा० क्षे०
(8)	भूमि संरक्षण के अधीन क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	10 राज्य
(9)	उद्यान खेती के अधीन क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	9 राज्य; 1 संघ रा० क्षे०

57. नए 20-सूत्री कार्यक्रम के संदर्भ में छठी योजना में 23 लाख आदिवासी परिवारों की सहायता किए जाने का लक्ष्य रखा गया था। 19 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों की आदिवासी उप-योजनाओं के बारे में लक्ष्य तथा उपलब्धियां अनुलग्नक-9 में दर्शाई गई हैं। उससे यह प्रकट होगा कि छठी योजना में सहायता पहुंचाए गए आदिवासी परिवारों की संख्या 39.67 लाख थी। एक परिवार को एक से अधिक बार गिनने की छूट दी गई है क्योंकि बहुत सारे व्यक्ति विभिन्न कार्यक्रमों के अधीन लाभभोगियों के रूप में एक से अधिक बार गिने जाते हैं और विकास पत्रिकाओं के अभाव में अधिक बार गिन जाने को रोकना संभव नहीं है। तथापि विभिन्न संगठनों द्वारा किए गए नमूना मूल्यांकन अध्ययनों से पता चला है कि केवल लगभग 20 प्रतिशत लाभभोगी निर्धनता रेखा पार कर सके थे और इसलिए शेष लाभभोगियों को निर्धनता रेखा पार करने के लिए सातवीं योजना में दूसरी मात्रा और सहायता पैकेज दिए जाने की आवश्यकता होगी।

प्रबोधन (मानीटरिंग) और मूल्यांकन

58. देश में आदिवासी क्षेत्रों में बढ़ते निवेश से जनसंख्या के लिए विशेष तौर पर लक्ष्य समूह के लिए उपयोगी परिणाम सामने आने चाहिएं। केन्द्र में गृह मंत्रालय में (अब कल्याण मंत्रालय) अनुसंधान, प्रबोधन और मूल्यांकन निदेशालय को आदिवासी विकास कार्यक्रमों के प्रबोधन में लगा हुआ बताया गया है। इस निदेशालय के लिए मंजूरी भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय आदिवासी अनुसंधान संस्थान के एवज में दी गई थी जिसका प्रस्ताव काफी समय पहले किया गया था। यहां यह उल्लेख करना उपयोगी होगा कि यह निदेशालय प्रभावी रूप से कार्य नहीं कर सका है क्योंकि इसके निदेशक का पद कभी भी नियमित आधार पर नहीं भरा गया था। यह प्रबल रूप से अनुभव होता है कि मंत्रालय को इस संगठन को सुदृढ़ करना चाहिए। केन्द्र में विशद प्रबोधन प्रणाली से मंत्रालय राज्यों से पुनः संभरण के लिए सामग्री प्राप्त करने में समर्थ होगा। छठी योजना में कल्याण मंत्रालय के आदिवासी विकास प्रभाग ने भी कुछ विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थानों और अन्य संगठनों को अनुलग्नक 10 के अनुसार अनुसंधान और मूल्यांकन अध्ययन आयोजित करने के लिए अनुदान मंजूर किए थे। यह ज्ञात नहीं है कि यदि उस मंत्रालय ने इन अध्ययनों के परिणामों से कोई लाभ प्राप्त किया था तो वह क्या था। कुछ संगठनों के प्राधिकार क्षेत्र भी, जिन्हें अनुदान दिए गए थे, ज्ञात नहीं हैं।

59. राज्यों में विभिन्न स्तरों पर प्रबोधन के प्रबंध हैं, जिनका विस्तृत विवरण अनुलग्नक 11 में देखा जा सकता है। कुछ राज्य सरकारों ने समेकित आदिवासी विकास कार्यक्रमों का मूल्यांकन अध्ययन उनके अपने आदिवासी अनुसंधान संस्थानों द्वारा किए गए कुछ अध्ययनों के अतिरिक्त विश्वविद्यालयों और अन्य स्वतंत्र अनुसंधान संगठनों द्वारा करवाया था। कल्याण मंत्रालय को विभिन्न संगठनों द्वारा किए गए मूल्यांकन अध्ययनों के आधार पर एक अखिल भारतीय रिपोर्ट प्रकाशित करनी चाहिए।

छठी योजना अवधि में आदिवासी उप-योजना के कार्यान्वयन में खामियां

60. छठी योजना में आदिवासी विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में पाई गई कुछ खामियां नीचे दी गई हैं--

(1) लक्ष्यों पर अत्यधिक बल दिया गया था और संगठित प्रयास नहीं किए गए थे और न ही यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक अनुवर्ती कार्यवाही की गई थी कि जिन परिवारों को आर्थिक सहायता पहुंचाई गई थी वे वास्तव में निर्धनता रेखा पार करने में समर्थ हो गए हैं या नहीं। जब तक ऐसा नहीं किया जाता है सहायता पहुंचाए गए परिवारों के पुनः निर्धनता रेखा से नीचे फिसलने का सदैव खतरा रहेगा। कुछ मामलों से यह बताया गया है कि ऋण घटक और ऋण चुकाने के लिए लाभभोगी की असमर्थता के कारण लाभभोगी की आर्थिक स्थिति उसकी सहायता-पूर्व स्थिति की तुलना में खराब हो गई थी, ऐसे मामले मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में हुए थे।

(2) कई राज्यों में संरक्षण वाले क्षेत्र से विधान बनाए गए हैं या उन्हें बचाव के रास्तों को रोक कर प्रभावी बनाया गया है। परन्तु कई क्षेत्रों में उन्हें कार्यान्वित किए जाने वाले मामलों का पता लगाए

जाने और उनका निपटारा किए जाने के लिए एक ठोस उपाय की आवश्यकता है। परिणाम यह रहा है कि कुछ क्षेत्रों में समस्या का समाधान, विशेष रूप से भूमि हस्तांतरण, उधार लेने और ऋणग्रस्तता के क्षेत्र में, बहुत कम हुआ है। ऐसे क्षेत्रों में भी जहां उपायों का कार्यान्वियन किया गया है, हस्तांतरित भूमि वापस दिलाने और आदिवासी को ऋणग्रस्तता से मुक्त कराने जैसे अंतिम और समाधानकारी कदम नहीं उठाए गए हैं। राष्ट्रीय स्तर के एक आदिवासी विपणन संगठन के अभाव में बृहदाकार बहुद्देशीय समितियों और आदिवासी क्षेत्रों की विपणन सहकारी समितियों की कमजोरियों के कारण आदिवासियों की उपज के क्रय-विक्रय में होने वाले शोषण को समाप्त करने का लक्ष्य अभी एक बहुत बड़ी हद तक प्राप्त किया जाना शेष है। यह जानकर संतोष होता है कि भारत आदिवासी सहकारी विपणन विकास संघ लिमिटेड नाम से एक राष्ट्रीय स्तर के संगठन का इस दौरान 6-8-87 को पंजीकरण किया गया है। यह आशा की जाती है कि यह संघ आदिवासियों की उपजों के विपणन में सुधार करने के लिए नए बाजारों का पता लगाएगा, बिचौलियों को समाप्त करेगा और आदिवासियों की उपजों के लाभकारी मूल्य प्राप्त करेगा।

(3) यह अनुभव किया जा रहा है कि आदिवासी क्षेत्रों में आरंभ की गई आदिवासी उप-योजना राज्य योजनाओं का एक समूह मात्र है। एक एकीकृत रीति से आवश्यकता पर आधारित योजनाएं तैयार करने के लिए बहुत थोड़ा प्रयास हुआ है। कुछ थोड़े से मामलों में राज्य योजना परिव्यय में आदिवासी उपयोजना के लिए राशि का परिमाण निश्चित किया जाना अभी वैचारिक ही है। संबंधित विकास विभागों द्वारा वास्तविक आधारों पर राशि निश्चित करने के लिए विस्तृत प्रयास कभी नहीं किए गए हैं।

(4) कुछ राज्यों को छोड़कर आदिवासी उप-योजना के आधारभूत मार्ग-निर्देशों के अधीन यथा अपेक्षित निधियों को संगृहीत नहीं किया जाता है।

(5) एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रमों में इकहरा प्रशासन लागू नहीं किया गया था और यह इन कार्यक्रमों के कार्यान्वियन में खामियों के लिए एक मुख्य कारण था।

(6) इन योजना कार्यक्रमों के अधीन आदिवासी जनसंख्या के कतिपय वर्गों जैसे झूम (चालित) खेती करने वालों और वन-ग्रामवासियों की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। उनके पुनर्वास तथा बंदोबस्त के लिए विशेष योजनाएं बनाना वांछनीय है। परियोजनाओं से विस्थापित हुए आदिवासियों की समस्या भी जो मुख्यतः राष्ट्रीय स्तर पर एक पुनर्वास नीति के अभाव में उत्पन्न होती है, कम गंभीर नहीं है।

(7) राज्यों में प्रबोधन प्रणाली पर्याप्त रूप से प्रभावशील नहीं थी। जिम्मेदार विभाग इस मामले में अन्य विभागों के संबंध में कुछ नहीं कर सकता था और वह इन विभागों द्वारा जो भी रिपोर्टें भेजी जाती थीं उन्हें स्वीकार करने के लिए बाध्य था। प्रबोधन के परिणामस्वरूप इन कार्यक्रमों के कार्यान्वियन की गुणवत्ता में हुए सुधार के बारे में कोई ठोस प्रमाण नहीं था।

(8) आदिम जातियों पर जो आदिवासी जनसंख्या का सर्वाधिक पिछड़ा वर्ग है, उनके प्रत्येक समूह के आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के स्तर और उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया था। चूंकि इनमें से अधिकांश समूह छोटे हैं, अतः कार्यक्रम के अन्दर एक समूह के सभी परिवारों अथवा बड़े समूहों के मामले में काफी बड़ी संख्या में परिवारों को सम्मिलित करके उनके आर्थिक विकास के लिए एक 'संतृप्त प्रयास' अपनाना संभव होना चाहिए।

सातवीं पंचवर्षीय योजना

61. सातवीं योजना में आदिवासी उप-योजना के अधीन मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

(1) कृषि, उद्यान, पशु-पालन, लघु उद्योगों इत्यादि के क्षेत्रों में लाभभोगी परिवारों के उत्पादकता-स्तर में वृद्धि करने के लिए लाभभोगी परिवारोन्मुख कार्यक्रम आरंभ करना,

(2) भूमि हस्तांतरण, रुपया उधार लेने, ऋणग्रस्तता, वन, इत्यादि के क्षेत्र में आदिवासियों का शोषण समाप्त करना,

(3) शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रमों के द्वारा मानव संसाधनों का विकास करना,

(4) आधारिक संरचना का विकास करना,

(5) आदिवासियों के असुरक्षित क्षेत्रों और आदिवासी महिलाओं सहित वन-ग्रामवासियों, झूम (चलित) खेती करने वालों, विस्थापित तथा प्रवासी आदिवासियों जैसे समूहों का विकास करना,

(6) आदिवासी क्षेत्रों के पर्यावरण को उन्नत करना।

62. कार्यकारी दल ने सातवीं योजना में निवेश की निम्नलिखित सीमा का सुझाव दिया है––

		(करोड़ रुपए)
(क) राज्य योजना क्षेत्र	7,500	(3,550)
(ख) केन्द्रीय योजना और केन्द्रीय प्रायोजित योजनाएं	1,750	(900)
(ग) विशेष केन्द्रीय सहायता	1,500	(485.5)
(घ) संस्थागत वित्त	2,250	(800)
कुल	13,000	(5,735.5)

कोष्ठों में दिए गए आंकड़े छठी योजना का निवेश दिखाते हैं। जबकि सातवीं योजना का कुल आकार 1,80,000 करोड़ रुपए के लगभग होने का अनुमान है, आदिवासी उप योजना की अनुमोदित राशि 6955.63 करोड़ रुपए है (राज्य योजनाओं के अधीन 6199.63 करोड़ रुपए और विशेष केन्द्रीय सहायता के अधीन 756 करोड़ रुपए)।

आदिवासी उप-योजना की कार्य नीति में परिवर्तन

63. सातवीं योजना में आदिवासी उप-योजना की कार्य नीति में परिवर्तन हुआ है। छठी योजना तक आदिवासी उप योजना में एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रमों, माडा परियोजनाओं और आदिम आदिवासी समूहों के लिए परियोजनाओं को शामिल किया जाना था। सातवीं योजना के अन्तर्गत और अधिक आदिवासी जनसंख्या को लाने के लिए आदिवासी उप योजना के क्षेत्र से बाहर के संकेंद्रण (आदिवासियों की घनी आबादी) समूहों का पता लगाना था। कल्याण मंत्रालय ने 17-2-86 के अपने परिपत्र सं० 11036/7/85-टी० डी० (आर०) में यह स्पष्ट किया था कि आदिवासी उप योजना में संबंधित राज्य में आदिवासियों की कुल जनसंख्या को सम्मिलित किया जाएगा, अर्थात्––

(क) विशिष्ट परियोजनाओं जैसे एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रमों, माडा परियोजनाओं, आदिम आदिवासी परियोजनाओं के क्षेत्र और पहचान किए गए संकेंद्रण समूह क्षेत्रों के अन्दर आने वाले आदिवासियों, और

(ख) संबंधित राज्य में उक्त क्षेत्रों/परियोजनाओं से बाहर कहीं भी रह रहे आदिवासियों को।

उक्त मंत्रालय ने यह भी स्पष्ट किया था कि सातवीं योजना का एक उद्देश्य यह था कि औद्योगिक प्रभाव वाले क्षेत्रों में रह रहे आदिवासियों के असुरक्षित समूहों को शामिल किया जाये और इसलिए शहरी क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी भी सहायता की परिधि में आयेंगे। तथापि, आदिवासियों से संबंधित परिवारोन्मुख कार्यक्रमों और आधारिक संरचना के विकास के अधीन निधि आवंटित करते समय निम्नलिखित सिद्धांत ध्यान में रखे जाने थे––

परिवारोन्मुख कार्यक्रम

(क) विशेष केन्द्रीय सहायता आवंटित करते समय लाभभोगियों को चिन्हित करने और एक ओर पहचान की गई आदिवासी क्षेत्र इकाइयों जैसे एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रमों, माडा परियोजनाओं, आदिम आदिवासी परियोजनाओं और संकेन्द्रण-समूहों में आदिवासियों के लिए और दूसरी ओर शेष बिखरी हुई आदिवासी जनसंख्या के लिए उपयोग में ली जाने वाली राशि चिन्हित करने में सावधानी बरती जानी चाहिए।

(ख) एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण योजना कार्यक्रम, विभिन्न क्षेत्रीय विभागों की राज्य की योजनाओं के अधीन क्षेत्रीय आबंटनों सहित राज्य योजना निधियों के अधीन परिवारोन्मुख योजनाओं के लिए निधियों और लाभभोगियों को चिन्हित करने के लिए भी उपर्युक्त ढांचे को ही ध्यान में रखा जाना चाहिए।

संरचना आधार कार्यक्रम

64. तथापि उक्त संकल्पना आदिवासी क्षेत्रों में संरचना आधार के विकास के लिए दी जाने वाली निधियों की मात्रा निश्चित करने या उसका विशिष्ट रूप दर्शाने के लिए भी सुसंगत रहेगी। विशेष केन्द्रीय सहायता और राज्य योजना दोनों के अधीन संरचना आधार के लिए निधियां, केवल पहचान के क्षेत्रों (एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रमों, माडा परियोजनाओं, आदिम आदिवासी परियोजनाओं और संकेन्द्रण समूहों) के लिए चिन्हित करते समय ही, आदिवासी उप योजना के लिए दी गई राशि के रूप में दर्शाई जानी चाहिए। संरचना आधार की मदों के अधीन निधियों का उपयोग जो आदिवासी उप योजना को दी गई राशि के रूप में दर्शाई गई हैं केवल इन विशिष्ट क्षेत्रों के लिए ही किया जाना चाहिए। बिखरी हुई आदिवासी जनसंख्या के लिए संरचना आधार पर व्यय का ध्यान अवश्य ही इस रूप में रखा जाना चाहिए कि वह सामान्य संरचना आधार के विकास के कार्यक्रम का एक भाग है और उसे आदिवासी उप योजना के लिए दी जाने वाली राशि के रूप में चिन्हित नहीं किया जाना चाहिए।

65. एक राज्य सरकार ने आदिवासी उप योजना की कार्य नीति में इस परिवर्तन का विरोध किया था और जून, 1986 में भारत सरकार को लिखा था कि किए गए संशोधन वस्तुतः उप योजना की संकल्पना का परित्याग किए जाने के समान थे। उनका विचार था कि दिनांक 17-2-86 को भारत सरकार द्वारा जारी स्पष्टीकरणों से आदिवासी उप योजना की संपूर्ण संकल्पना विलीन हो गई थी और आदिवासी विकास संबंधी सिद्धांत पूर्णतः छोड़ दिए गए मालूम होते थे।

इन संशोधनों से आदिवासियों के, विशेष रूप से पिछड़े क्षेत्रों में कठोर सामाजिक आर्थिक अवरोधों के अधीन रहने वाली आदिम आदिवासी जनसंख्या तथा पर्वतीय क्षेत्रों के आदिवासियों के हितों के लिए जोखिम उत्पन्न हो जाएगा। चूंकि अनुसूचित क्षेत्रों तथा आदिवासी क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में संविधान की पांचवीं तथा छठी अनुसूचियों के अधीन विशेष प्रावधान थे, आदिवासियों की घनी आबादी के क्षेत्रों को भिन्न क्षेत्रों के रूप में माना जाना था जिनके लिए विशेष प्रावधान, विशेष कानून तथा विनियम तथा प्रशासन का विशेष ढांचा अपनाया जाना था। दूसरे शब्दों में अनुसूचित क्षेत्रों के रूप में ज्ञात इन संकेन्द्रणों में रहने वाले आदिवासियों और उक्त अनुसूचित क्षेत्रों के बाहर रहने वाले आदिवासियों के बीच एक स्पष्ट भिन्नता रखी गई थी। पहले वाले आदिवासियों को अधिक पिछड़े हुए माना गया था और यह माना गया था कि सरकार द्वारा उन पर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता थी। परियोजना क्षेत्र में एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम योजना विकास के कुल प्रयासों का द्योतक था और यह सोचा गया था कि वह अपने सभी आयामों, जैसे कार्यक्रमों का समेकन, क्षेत्रों का समेकन, क्षेत्रीय परिव्यय का समेकन तथा संगठनात्मक समेकन आदि का एकीकरण सुनिश्चित करेगा। उप योजना क्षेत्र के बाहर चार आयामी समेकन संभव नहीं था। बिखरे हुए आदिवासियों के विकास के लिए कार्य नीति तथा योजना मुख्यतः आदिवासी क्षेत्रों के लिए विकसित आदिवासी उपयोजना से भिन्न थी। उप योजना कार्य नीति का विस्तार बिखरी हुई आदिवासी जनसंख्या के लिए करके इसका किसी प्रकार का विलीनीकरण न केवल गलत होगा अपितु इसके परिणामस्वरूप आदिवासी उप योजना के अंतर्गत उपलब्ध सीमित संसाधन भी बिखर जाएंगे। इसके परिणामस्वरूप खतरा यह था कि आदिवासी संकेन्द्रण वाले क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी वंचित रह जाते जबकि इसके लाभभोगी मैदानी क्षेत्रों में रहने वाले होते जिनमें गैर-आदिवासी भी होते। उस राज्य सरकार के अनुसार आदिवासी उप योजना की मूल संकल्पना को विलीन या उसमें कोई अंतर नहीं किया जाना चाहिए और विशेष केन्द्रीय सहायता का उपयोग केवल उप योजना क्षेत्र के लिए ही किया जाना चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि भारत सरकार ने राज्य सरकार को भेजे गए अपने उत्तर में राज्य सरकार द्वारा उठाए गए मूल प्रश्नों पर चर्चा करने के बजाए केवल अपने पहले पत्र की बातों को ही दोहराया है।

66. जहां सातवीं योजना के दौरान बिखरे हुए आदिवासी को गहन आदिवासी विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत लाने के लिए भारत सरकार के निर्णय का स्वागत किया जाता है यह सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है कि आदिवासी विकास के लिए निधि उपलब्ध कराने के लिए, संवैधानिक प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए विकसित की गई योजना का पूर्ण रूप से पालन किया जाता है और ऐसे प्रभाव के लिए एक उपयुक्त प्रशासनतंत्र उपलब्ध कराया जाता है। अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त ने "आदिवासी विकास के लिए निधि देने और अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन का स्तर उठाने के लिए संवैधानिक प्रावधानों के कार्यकरण पर एक टिप्पण" कल्याण राज्य मंत्री को लिखे अपने अ० शा० पत्र संख्या 34/22/86-अनु० एकक-2 दि० 25-7-86 के साथ भेजा था जिसे अनुलग्नक 12 में दोहराया गया है। उस नोट में निम्नलिखित महत्वपूर्ण तथ्यों पर विचार किया गया है

(1) ऐसा प्रतीत होता है कि विशेष केन्द्रीय सहायता में वृद्धि राष्ट्रीय योजना परिव्यय की सामान्य वृद्धि से कम है और विशेष केन्द्रीय सहायता की मात्रा निर्धारित करने के लिए संबंधित राज्यों में आदिवासी जनसंख्या के लगभग 72 प्रतिशत से 100 प्रतिशत तक बढ़ी हुई आबादी को भी ध्यान में नहीं रखा गया है। यदि इन दोनों तथ्यों पर पूरी तरह ध्यान दिया जाता तो सातवीं योजना के दौरान विशेष केन्द्रीय सहायता केवल मात्र 756 करोड़ रुपए की तुलना में 1700 करोड़ रुपए होती, जिसका अर्थ आबंटन में ही लगभग 55 प्रतिशत तक कमी है।

(2) राज्य योजना से दिए गए मूल निवेश से ऊपर विशेष केन्द्रीय सहायता से पूरक के रूप में राशि दिए जाने के सिद्धांत का विस्तार, जिसका कार्यान्वयन आदिवासी उप योजना के अधीन पूर्ण रूप से किया जा चुका है, बिखरे आदिवासियों के लिए कार्यक्रमों के लिए भी उन्हीं समान आधारों पर किए जाने की आवश्यकता है जो अनुसूचित जातियों के लिए विशेष संघटक योजना के अधीन विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए अपनाए गए हैं।

(3) यद्यपि आदिम आदिवासी समूहों तथा आदिवासी उप योजना क्षेत्रों और माडा योजनाओं के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता के आबंटन के सिद्धांत बनाए जा चुके हैं, तथापि बिखरे आदिवासियों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता के आबंटन के लिए कोई सिद्धांत नहीं बनाया गया है। यह आवश्यक है कि इस संबंध में लक्ष्य निर्धारित किए जायें।

67. छठी योजना के दौरान की गई प्रगति के आधार पर गृह मंत्रालय ने उन योजनाओं की समीक्षा की थी जिन्हें विशेष केन्द्रीय सहायता से निधि दी जानी थी। यह आवश्यक समझा गया था कि इसमें कुछ नई मदें शामिल की जायें, जैसे विकास परियोजनाओं द्वारा विस्थापित आदिवासियों, औद्योगिक दबाव के क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों के लिए परिवारोन्मुख योजनाएं, आदिवासी शिल्प संवर्धन, आदिवासी स्त्रियों के लिए परिवारोन्मुख योजनाएं, पारिस्थितिकी तथा पर्यावरण में सुधार इत्यादि। विभिन्न विकास क्षेत्रों के अधीन ऐसी मदों की एक सूची दृष्टान्त के रूप में, जिन्हें विशेष केन्द्रीय सहायता से निधि दी जा सकती थी, कल्याण मंत्रालय द्वारा राज्य सरकारों को दिनांक 18-9-1985 को परिचालित की गई थी (अनुलग्नक-13)

1985–86 तथा 1986–87 के लिए आदिवासी उप योजना

68. 19 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में सातवीं योजना के परिव्यय और राज्य योजना के अधीन आदिवासी उप योजना को दी गई राशि, सातवीं योजना के दौरान विशेष केन्द्रीय सहायता का परिव्यय, राज्य योजना से आदिवासी उप योजना को दी गई राशि और 1985–86 और 1986–87 के दौरान किया गया व्यय और 1985–86 तथा 1986–87 के दौरान दी गई और व्यय की गई विशेष केन्द्रीय सहायता के संबंध में सूचना अनुलग्नक 14 में दी गई है। उस से यह प्रकट होगा कि उक्त 19 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के लिए 1985–86 और 1986–87 के दौरान आदिवासी उप योजना (राज्य योजना) के अधीन आवंटन क्रमशः 1045.96 करोड़ रुपए और 1225.68 करोड़ रुपए था। इन वर्षों के दौरान इन आवटनों के मुकाबले उक्त राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा किया गया व्यय क्रमशः 997.11 करोड़ रुपए तथा 1137.89 करोड़ रुपए था। जहां तक विशेष केन्द्रीय सहायता का संबंध है, 1985–86 और 1986–87 के दौरान दी गई राशि 140 करोड़ रुपए तथा 155 करोड़ रुपए थी किन्तु व्यय क्रमशः केवल 130.54 करोड़ रुपए तथा 151.41 करोड़ रुपए था।

1985–86 तथा 1986–87 के दौरान केन्द्रीय मंत्रालयों की आदिवासी उप योजना

69. 1985–86 तथा 1986–87 के दौरान अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त के कार्यालय ने सभी विकासीय मंत्रालयों को पत्र भेजे थे कि वे हमें ऐसे प्रत्येक मंत्रालय/विभाग द्वारा आदिवासियों के कल्याण के लिए आरंभ किए गए कार्यक्रमों के बारे में जानकारी दें। कल्याण मंत्रालय द्वारा प्रत्येक संबंधित मंत्रालय से यह अपेक्षा की गई थी कि वे केन्द्रीय परिव्ययों के अन्दर ही आदिवासियों के विकास के लिए कार्यक्रम बनाएं और निवेश की मात्रा तय करें और अपने कार्यक्रमों से अनुसूचित क्षेत्रों को होने वाले लाभों का निर्धारण करें। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य आदिवासी परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार करना था, तथा ये आदिवासी उप योजना का ही एक अंग बनने थे। मंत्रालयों/विभागों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे आदिवासियों तथा आदिवासी क्षेत्रों के लिए विशिष्ट कार्यक्रम तैयार करें तथा अलग दस्तावेजों में अपने सामान्य कार्यक्रमों में आदिवासी संघटक को दर्शाएं। अधिकतर मामलों में यह देखा गया था कि एकीकृत जनजाति विकास कार्यक्रमों में परियोजना अधिकारियों को केन्द्रीय मंत्रालयों द्वारा आरम्भ किए गए कार्यक्रमों की कोई स्पष्ट जानकारी नहीं थी। एक बार प्रत्येक मंत्रालय/विभाग की केन्द्रीय क्षेत्र/केन्द्रीय प्रायोजित कार्यक्रमों की आदिवासी संघटक योजना तैयार हो जाने और कल्याण मंत्रालय तथा संबंधित राज्य सरकारों को भेजे जाने के बाद, क्षेत्र एककों के लिए इन कार्यक्रमों को अधिक स्पष्ट रूप से समझना सरल होगा, जिससे एक अधिक स्थायी क्षेत्र विकास योजना बनाई जा सकेगी। 1985–86 तथा 1986–87 के दौरान संबंधित मंत्रालयों/विभागों से अपर्याप्त सूचना प्राप्त हुई थी। केन्द्रीय मंत्रालयों द्वारा आदिवासी उप-योजना क्षेत्रों के लिए तय की गई निधि की मात्रा के बारे में सूचना आठ मंत्रालयों के संबंध में उपलब्ध थी जिसका विस्तृत विवरण नीचे दिया गया है :—

सारणी 11

(करोड़ रुपये में)

क्र० सं०	मंत्रालय	क्षेत्र/कार्यक्रम	तय की गई निधि की मात्रा 1985–86	1986–87
1	2	3	4	5
1.	कृषि मंत्रालय	(क) कृषि तथा सहकारिता	26.50	27.18
		(ख) ग्रामीण विकास		
		(1) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम	—	—
		(2) ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम (इन्दिरा आवास योजना)	99.00	124.00
2.	वाणिज्य मंत्रालय . . .	—	127.47	—
3.	संचार मंत्रालय	(क) डाक विभाग	0.24	0.50
		(ख) दूर संचार विभाग	9.81	14.46
4.	खाद्य तथा नागरिक आपूर्ति मंत्रालय .	खाद्य विभाग	5.69	3.17
5.	स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण मंत्रालय .	—	12.465	10.10
6.	मानव-संसाधन विकास मंत्रालय . .	शिक्षा विभाग	15.68	13.35
7.	उद्योग मंत्रालय . . .	लघु उद्योग	2.23	2.23
8.	श्रम मंत्रालय	श्रम विभाग	0.98	0.98

अनुच्छेद 275 (1) के अधीन सहायता अनुदान

70. संविधान के अनुच्छेद 275(1) के प्रथम परन्तुक के अनुसरण में भारत सरकार से यह अपेक्षा की जाती है कि वह "भारत की संचित निधि में से राज्य के राजस्वों के सहायता अनुदान के रूप में वैसी मूल तथा आवर्तक राशियां, जैसी कि उस राज्य की उन विकास योजनाओं के खर्चों के उठाने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हों, जो उस राज्य के अन्तर्गत आदिवासियों के कल्याण की उन्नति के प्रयोजन के लिए अथवा उस राज्य के अन्तर्गत अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन स्तर को उस राज्य के शेष क्षेत्रों के प्रशासन-स्तर तक उन्नत करने के प्रयोजन के लिए उस राज्य ने भारत सरकार के अनुमोदन से हाथ में ली हों, दें।" यद्यपि, भारत सरकार पंचवर्षीय योजनाओं के ढांचे के अंतर्गत राज्य सरकारों को अनुदान मंजूर करती रही थी तथापि, इस सांविधिक उपबन्ध का आशय यह है कि ऊपर वर्णित प्रयोजनों के लिए अनुदान योजना के बाहर भी दिया जा सकता था। यह देखा गया था कि केन्द्र तथा राज्य सरकारें अनुसूचित क्षेत्रों में प्रशासनिक स्तर को ऊंचा उठाने के मामले पर पर्याप्त ध्यान नहीं दे रहीं थी और अधिकांश तौर पर यह सांविधिक प्रावधान कार्यान्वित नहीं हुआ था।

71. गृह मंत्रालय के आदिवासी विकास खंड ने सातवें वित्तीय आयोग को एक विस्तृत ज्ञापन दिया था जिसमें ऐसी योजनाएं दिखाई गई थीं, जिनके लिए इस सांविधिक प्रावधान के अधीन राज्य सरकारों को विशेष सहायता अनुदान स्वीकृत किया जाना चाहिए। सातवें वित्त आयोग ने 1979–84 के दौरान 13 राज्यों के पक्ष में आदिवासी क्षेत्रों में कार्य कर रहे स्थानान्तरणीय सरकारी कर्मचारियों को प्रतिकर (क्षतिपूर्ति) भत्ते के भुगतान के लिए 30.71 करोड़ रुपए तथा आदिवासी क्षेत्रों में तैनात सरकारी कर्मचारियों के लिए रिहायशी आवास के निर्माण के लिए 11.92 करोड़ रुपए देने का अधिनिर्णय किया था। इन उद्देश्यों के लिए वस्तुतः दी गई राशियां क्रमशः 19.76 करोड़ तथा 22.55 करोड़ रुपए थीं। तथापि, पहली योजना के अंतर्गत किया गया व्यय केवल 14.79 करोड़ रुपए था और दूसरी योजना के अंतर्गत 24.73 करोड़ रुपए था। इसी प्रकार आठवें वित्त आयोग ने 1984–89 (5 वर्ष) की अवधि के लिए 97.19 करोड़ रुपए की राशि की सिफारिश की थी किन्तु भारत सरकार ने 1985–89 (4 वर्ष) की अवधि के लिए 13 राज्यों के पक्ष में 88.70 करोड़ रुपए का प्रावधान किया था। इस प्रावधान की अलग-अलग राशियां प्रतिकर (क्षतिपूर्ति) भत्ते के लिए 19.27 करोड़ रुपए, 7,675 आवासीय क्वार्टरों के लिए 30.97 करोड़ रुपए तथा 769 आदिवासी गांवों के अवस्थापना विकास के लिए 38.45 करोड़ रुपए थीं। आदिवासी प्रशासन के उन्नयन के लिए आठवें वित्तीय आयोग के अधिनिर्णय के कार्यान्वयन की प्रगति अनुलग्नक 15 में दी गई है।

वृहदाकार बहुद्देशीय सहकारी समितियों (लैम्पस) की भूमिका तथा कार्य-चालन

72. पहली पंचवर्षीय योजना से आदिवासी क्षेत्रों में कुछ सहकारी समितियों का ढांचा रहा है। यह ग्रेन गोला सहकारी समितियां, वन श्रमिक सहकारी समितियों, बहुद्देशीय सहकारी समितियों इत्यादि के रूप में था। इस सहकारी ढांचे का आदिवासी अर्थव्यवस्था पर कोई उल्लेखनीय प्रभाव नहीं हुआ था। जून 1961 में भारत सरकार, गृह मंत्रालय ने श्री एम० पी० भार्गव की अध्यक्षता में पिछड़े वर्गों के लिए सहकारिता पर विशेष कार्यकारी दल गठित किया था जिसे आदिवासी क्षेत्रों में सहकारी समितियों की घटिया प्रगति के लिए जिम्मेदार कारणों का पता लगाने और पिछड़े वर्गों, विशेष रूप में अनुसूचित जन जातियों की प्रगति का अध्ययन करने और उस प्रगति को तेज करने के उपाय सुझाने का काम करना था। यह दल इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि वहां पर संरचनात्मक कमजोरियां, कार्यचालन संबंधी त्रुटियां, प्रबन्धात्मक समस्याएं, दोषपूर्ण कार्य-विधियां तथा सभी प्रकार की कार्य पद्धतियों और प्रणालियों का अपनाया जाना, आदि बातें थीं, जो आदिवासियों के लिए उपयुक्त नहीं थी। उस दल ने यह सुझाव दिया था कि आदिवासियों के बीच सहकारी आन्दोलन को उन्नत करने के लिए एक पृथक् संगठनात्मक ढांचा स्थापित किया जाए ताकि उन्हें ऐसी सेवाएं उपलब्ध कराई जा सकें जैसी व्यापारियों तथा महाजनों द्वारा की जा रही थीं।

73. भारत सरकार ने दिसम्बर 1971 में श्री के० एस० बावा की अध्यक्षता में आदिवासी विकास अभिकरणों के परियोजना क्षेत्रों में सहकारी संगठन के कार्यचालन की जांच करने और इन परियोजना क्षेत्रों में सहकारी ढांचे को मजबूत करने के लिए सिफारिशें करने के लिए एक अध्ययन दल नियुक्त किया था। इस अध्ययन दल ने आदिवासी क्षेत्रों में बृहदाकार बहुद्देशीय सहकारी समितियां (लैम्पस) स्थापित किए जाने की सिफारिश की थी जो आदिवासियों को उत्पादन तथा साथ ही उपभोग ऋण उपलब्ध कराएं तथा कृषि उत्पाद और छोटे वन उत्पाद का क्रय बिक्रय आरंभ करें और कृषि निवेश और उपभोक्ता वस्तुएं वितरित करें ताकि आदिवासियों को एक ही स्रोत से सभी सुविधाएं मिल सकें और उन्हें अपनी आवश्यकताओं के लिए बहुत सारी संस्थाओं के पास न जाना पड़े। यद्यपि बावा समिति की सिफारिशें केवल आठ आदिवासी विकास अभिकरणों के लिए थीं, भारत सरकार ने पांचवीं योजना के दौरान इस योजना को आदिवासी उप-योजना के अधीन एक सामान्य योजना के रूप में अपनाने का निर्णय किया था। आदिवासी क्षेत्रों में लैम्प्स इन उद्देश्यों से स्थापित किए जाने थे: (1) सामाजिक दायित्वों तथा उपभोक्ता आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऋण सहित सभी प्रकार के ऋण एक ही स्थान से उपलब्ध कराना, (2) कृषि के गहन विस्तार तथा आधुनिकीकरण के लिए तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करना और (3) आदिवासियों के अन्य सहायक व्यवसायों के उत्पादनों के अतिरिक्त कृषि उत्पादनों तथा लघु वन उत्पादनों के क्रय-विक्रय के लिए प्रबन्ध करना। उपर्युक्त निर्णय के अनुसरण में राज्य सरकारों ने प्राथमिक स्तर पर समेकित ऋण तथा क्रय-विक्रय सहकारी समितियां स्थापित करने के लिए कार्यवाही आरंभ की थी

ताकि आदिवासी जनसंख्या की ऋण संबंधी तथा अन्य आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। लैम्प्स की स्थापना या तो विद्यमान कार्यरत प्राथमिक कृषि समितियों को परिवर्तित करके अथवा ब्लाक स्तरों अथवा उससे नीचे के स्तरों पर नई समितियां गठित करके की गई थी। ऐसी प्रत्येक समिति से ग्रामों के एक संहत समूह में 10,000 से 20,000 तक की जनसंख्या शामिल करने की अपेक्षा की गई थी और उसे अपने क्षेत्र पर प्रभावपूर्ण ढंग से विस्तार के लिए 3 से 5 तक शाखाएं स्थापित करनी थीं।

74. भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रकाशित आर्थिक समीक्षा 1986-87 (खण्ड I) के अनुसार लैम्प्स मुख्यत: पिछड़े इलाकों अर्थात् पहाड़ी तथा आदिवासी क्षेत्रों में कार्यरत थे। यथा 30-6-1986 की स्थिति लैम्प्स की कुल संख्या 2,961 थी और यह संख्या **मध्य प्रदेश** (1,053), **बिहार** (474), **महाराष्ट्र** (275), **राजस्थान** (268) तथा **उड़ीसा** (223) थी, जो एक साथ मिलाकर कुल का 77.4 प्रतिशत होती थी। इन समितियों की कुल सदस्य संख्या 43.18 लाख थी जिनमें से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की संख्या क्रमश: 6.72 लाख तथा 26.25 लाख थी। लैम्प्स की समादत्त पूंजी 49.76 करोड़ रुपए थी जिसमें सरकार का योगदान 18.07 करोड़ रुपए था। जून 1986 के अंत में लैम्प्स के 85.78 करोड़ रुपए का अति-शोध्य उनके बकाया उधारों का 53.1 प्रतिशत होता था।

75. राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण बैंक तथा सहकारी प्रबंध के वैकुंठ मेहता राष्ट्रीय संस्थान जैसे संगठनों ने गत समय में लैम्प्स की प्रगति का मूल्यांकन किया था। कृषि तथा ग्रामीण विकास के लिए संस्थागत ऋण प्रबंधों की समीक्षा करने वाली रिजर्व बैंक समिति ने श्री बी० शिवरमण की अध्यक्षता में लैम्प्स के कार्य-चालन की समीक्षा की थी और 1981 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। एक अन्य महत्वपूर्ण निकाय, जिसने अन्य आदिवासी विकास कार्यक्रमों के साथ लैम्प्स के कार्य-चालन का अध्ययन किया था, श्री बी० शिवरमण की अध्यक्षता में योजना आयोग द्वारा नियुक्त पिछड़े क्षेत्रों के विकास पर राष्ट्रीय समिति थी। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट जून 1981 में प्रस्तुत की थी। इस रिपोर्ट में आदिवासी क्षेत्रों में सहकारिता के विषय में 42 सिफारिशें शामिल हैं। इस समिति के कुछ महत्वपूर्ण संप्रेक्षण इस प्रकार हैं--

(1) यद्यपि लैम्प्स प्राथमिक स्तर पर स्थापित हुए हैं, तथापि, गैर-लैम्प्स प्राथमिक समितियां (पुरानी या नई) अब भी लैम्प्स के साथ ही साथ अस्तित्व में हैं जो भ्रम उत्पन्न करती हैं। इससे आदिवासी क्षेत्रों में लैम्प्स का वह प्रयोजन ही समाप्त हो गया है।

(2) हर लैम्प्स की प्रगति गैर-आदिवासी क्षेत्रों में कार्य कर रही सेवा सहकारी समितियों से बहुत पीछे है। उड़ीसा में 1977-78 के दौरान लैम्प्स के माध्यम से दिए गए ऋण उस वर्ष के दौरान राज्य द्वारा दिए गए कुल ऋण का 15 प्रतिशत थे जबकि आदिवासी उप-योजना क्षेत्र की जनसंख्या कुल जनसंख्या का लगभग 50 प्रतिशत थी। इनमें आदिवासी व्यक्तियों का समावेश अब भी अपर्याप्त है।

(3) मानदण्ड के अनुसार प्रत्येक लैम्प्स के लिए नियत दो लाख रुपए की औसत कार्यकारी पूंजी के समक्ष औसत कार्यकारी पूंजी **कर्नाटक** (0.21 लाख रुपए), **केरल** (0.13 लाख रुपए) तथा **उत्तर प्रदेश** (0.13 लाख रुपए) राज्यों में बहुत कम थी।

लैम्प्स को अपने बहु-आयामी कार्य को निभाने के लिए अभी बहुत कुछ करना है और राज्यों को उपर्युक्त रिपोर्टों में की गई सिफारिशों को तत्परता से कार्यान्वित करना चाहिए। सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) के दौरान आदिवासियों के विकास पर कार्यकारी दल की रिपोर्ट में भी आदिवासी क्षेत्रों में सहकारी ऋण तथा क्रय-विक्रय को पर्याप्त रूप से बढ़ाने के लिए 13 सिफारिशें निहित हैं।

आदिम जनजातियां और उनकी समस्याएं

76. आदिवासियों में ऐसे समुदाय भी हैं जिनकी जीवन शैली भिन्न है और जो कुछ कम या अधिक एकाकी स्थिति में रहते हैं, जिसमें प्रागैतिहासिक काल से बहुत कम परिवर्तन हुआ है। इन आदिम समूहों की पहचान करने के लिए सामान्य रूप से जिन कसौटियों का अनुसरण किया गया था वे ये हैं--(1) तकनीक का कृषि-पूर्व का स्तर, (2) साक्षरता का निम्न स्तर, (3) अवरुद्ध तथा ह्रासमान जनसंख्या। पांचवीं योजना अवधि के दौरान गृह मंत्रालय ने 52 आदिवासी समूहों की पहचान आदिम समूहों के रूप में की थी और उनकी अनुमानित जनसंख्या 10 लाख थी। छठी योजना अवधि के दौरान इनमें 20 आदिवासी समूह और जोड़े गए थे जिससे आदिम आदिवासी समूहों की संख्या बढ़कर 72 हो गयी थी, जिनकी अनुमानित जनसंख्या 14 लाख हो गई थी। सातवीं योजना के पहले दो वर्षों के दौरान एक और समुदाय जोड़ा गया, जिसमें ये संख्या बढ़कर 73 हो गई थी। भारत सरकार 1975-76 से इन समूहों के विकास के लिए राज्य सरकारों को 100 प्रतिशत आधार पर वित्तीय आबंटन उपलब्ध कराती रही थी। 1975-76 से 1984-85 की अवधि के दौरान इन समूहों के विकास के लिए भारत सरकार से राज्यों को 22.93 करोड़ रुपये की राशि स्थानान्तरित की गई थी। अनुलग्नक 16 में छठी योजना के दौरान इन समूहों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता के अधीन वर्ष 1985-86 तथा 1986-87 में 14 राज्यों तथा 1 संघ राज्यक्षेत्र को दिए गए वित्तीय आवंटन का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया गया है।

77. कुछ आदिम समूहों में स्वास्थ्य तथा आनुवंशिक असामान्यता सम्बन्धी विशेष समस्याएं हैं, जैसे सिकिल-सैल, रक्त अल्पता तथा मैथुन से उत्पन्न रोग उन में फैले हुए थे। गंदगीपूर्ण स्थितियां, शारीरिक सफाई का अभाव तथा स्वास्थ्य, शिक्षा की कमी तथा अनभिज्ञता उनके खराब स्वास्थ्य के लिए उत्तरदायी मुख्य कारण हैं। छठी योजना अवधि के दौरान सम्बन्धित राज्यों को यह सुझाव दिया गया था कि आदिम समूहों के लिए कार्यक्रमों को उच्च प्राथमिकता दी जाए और परियोजना रिपोर्टों में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित

अनिवार्य लक्षण सम्मिलित किए जाने चाहिएं:—

(क) प्रत्येक समूह के लिए एक पृथक कायक्रम होना चाहिए।

(ख) कार्यक्रम में पारिस्थितिकी की प्रणाली का विशेष रूप से ध्यान रखा जाना चाहिए।

(ग) विकास के पहले चरण का लक्ष्य, उस समूह के परम्परागत कौशल का संरक्षण तथा पुनर्गठन करना होना चाहिए।

(घ) दूसरे चरण में कार्यक्रम की योजना तैयार की जानी चाहिए।

78. छठी योजना के अन्त तक विशेष केन्द्रीय सहायता में प्रत्येक राज्य का हिस्सा तदर्थ आधार पर निर्धारित किया जाता था। सातवीं योजना से आदिम आदिवासी समूहों के विकास के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता में प्रत्येक राज्य का हिस्सा निम्नलिखित आधार पर निर्धारित किया गया है:—

(क) निधि का 40 प्रतिशत समुदाय के सांख्यिकी आकार के आधार पर,

(ख) निधि का 30 प्रतिशत विभिन्न व्यवसायों पर निर्भर जनसंख्या के अनुसार, जैसे (1) खाद्य पदार्थ संग्रह या शिकार, (2) झूम चलित खेती, (3) स्थायी खेती तथा (4) अन्य; 5:3:1:1 के अनुपात के अनुसार,

(ग) निधि का 15 प्रतिशत राज्य/संघ राज्यक्षेत्र में आदिम आदिवासी समूहों की संख्या के अनुसार (स्थापना लागत की पूर्ति के लिए), तथा

(घ) निधि का 15 प्रतिशत राज्य के प्रति व्यक्ति घरेलू उत्पादन के विलोम अनुपात के अनुसार आदिम आदिवासी जनसंख्या को महत्व देते हुए।

79. सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–90) के दौरान आदिवासी विकास के कार्यकारी दल ने आदिम आदिवासी समूहों के विकास के लिए कतिपय लाभप्रद सिफारिशें की थीं। यह महसूस किया गया है कि कुछ मामलों में भारत सरकार द्वारा समय-समय पर जारी किए गए मार्ग-निर्देशों के आधार पर विस्तृत परियोजना रिपोट तैयार नहीं की गई थीं और जहां पर तैयार की गई थीं, आरंभ किए गए विकास कार्यक्रमों के अनुभव के संदर्भ में पुनरीक्षित तथा अद्यतन नहीं की गई थीं। रिपोर्ट वर्ष के अंत तक कल्याण मंत्रालय ने कार्यक्रमों की कोई व्यापक समीक्षा नहीं की थी जबकि सामान्य तौर पर इन पर आदिवासी उपयोजना की वार्षिक बैठकों में चर्चा की जाती रही थी।

बड़ी परियोजनाओं के कारण विस्थापित आदिवासियों का पुनर्वास

80. पहली पंचवर्षीय योजना से देश में बड़ी संख्या में परियोजनाएं इस उद्देश्य से आरंभ की गई थीं कि देश के विकास को त्वरित करने के लिए विपुल संसाधनों का लाभ उठाया जाए। केन्द्र/राज्य सरकारों द्वारा आरंभ की जाने वाली सभी परियोजनाओं या कार्यों, जिनमें इन बड़ी परियोजनाओं को स्थापित करने के लिए कुछ भूमि की आवश्यकता होती है, के परिणामस्वरूप लोगों की जीविका समाप्त हो जाती है और वे अपने परम्परागत घरों से उजड़ जाते हैं, इन परियोजनाओं से विस्थापित व्यक्ति विभिन्न अचल सम्पत्तियों पर अपने अधिकार को छोड़ने के लिए बाध्य हो जाते हैं। मोटे तौर पर एक मूल्यांकन यह उपदर्शित करता है कि लगभग 119 परियोजनाओं के कार्यान्वियन से लगभग 17 लाख व्यक्ति विस्थापित हुए हैं। इन में से अनुमानतः 8.1 लाख विस्थापित लोग आदिवासी हैं।

81. **गुजरात** में सरदार सरोवर परियोजना के मामले में तीन राज्यों **गुजरात, मध्य प्रदेश** तथा **महाराष्ट्र** से विस्थापित हुई जनसंख्या 67,000 होने का अनमान लगाया गया है। सरदार सरोवर परियोजना की अनुमानित लागत 1983 में तकनीकी सलाहकार समिति द्वारा यथा अनुमोदित 4,240 करोड़ रुपये थी, जिसे गजरात सरकार ने बढ़ा कर 5,800 करोड़ रुपये कर दिया था। भूमि अधिग्रहण तथा पुनर्वास की अनन्तिम अनुमानित लागत 71.65 करोड़ रुपये होगी। मध्य प्रदेश में नर्मदा सागर परियोजना के मामले में बेदखलों की कुल संख्या लगभग 90,000 होगी। बाणसागर परियोजना, जो **उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश** तथा **बिहार** की अंतर्राज्यीय परियोजना है, के मामले में 258 गांवों का उस जलाशय में डूब जाना संभव हैं जिसमें 35,534 हेक्टेअर निजी भूमि, 14,777 हेक्टेअर सरकारी भूमि तथा 4,478 हेक्टेअर वन भूमि शामिल है। लगभग एक लाख व्यक्तियों को डूबे हुए क्षेत्रों से हटाना पड़ेगा। इस परियोजना की कुल लागत 371.39 करोड़ रुपये होने का अनुमान लगाया गया है जिसमें से भूमि अधिग्रहण तथा पुनर्वास पर लागत केवल एक यूनिट के लिए ही 1.85 करोड़ रुपये होगी (1984 के मूल्य स्तर पर)।

82. इस देश में सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए भूमि अर्जन के बारे में भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 आधारभूत कानून है। इस अधिनियम में भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण के लिए प्रावधान है जिसमें खाली तथा निर्माणों वाली संपत्तियां भी शामिल हैं। भारत के संविधान के अधीन संपत्ति का अधिग्रहण तथा अर्जन सातवीं अनुसूची की सूची 3 की प्रविष्टि सं० 42 के अनुसार एक समवर्ती विषय है। इसके फलस्वरूप, विभिन्न राज्यों में मूल अधिनियम को स्थानीय स्थितियों के अनुसार समायोजित करने के लिए काफी संशोधित किया गया है। इस अधिनियम के विद्यमान प्रावधानों के अधीन नकद क्षतिपूर्ति ही एकमात्र राहत है जो देने के लिए विहित की गई और वह भी उन व्यक्तियों को जो उस भूमि या गृहस्थान पर स्वामित्व का कानूनी अधिकार रखते हैं। यह अधिनियम उस भूमिहीन वर्ग के व्यक्तियों पर विचार नहीं करता है, जिनका सामान्य तौर पर बेदखल होने वालों में बहुमत होता है। पुनर्वास की व्यवस्था करने वाले किसी प्रावधान की अनुपस्थिति में गत समय में यह बात पूर्ण रूप से बेदखल होने वालों पर ही छोड़ दी गई थी कि वे उन्हें दी गई नकद क्षतिपूर्ति से अपने लिए

व्यवस्था कर लें । इसके परिणामस्वरूप दो कारणों से विस्थापित व्यक्तियों में असंतोष की भावना उत्पन्न हुई है

(क) दिया गया मुआवजा अत्यधिक अपर्याप्त था तथा उसमें विलंब किया गया था, और

(ख) उत्पादन प्रयोजनों के लिए संभावित निवेश से अनभिज्ञ होने के कारण उनकी प्रवृति इस नकद मुआवजे से सामाजिक आवश्यकताएं पूरी करने अथवा साहूकारों, बैंकों इत्यादि का ऋण चुकाने की ओर हो गई थी । जिससे उनके पास अपने खोए हुए आय के साधनों/संपत्तियों के प्रतिस्थापन के लिए कुछ नहीं बचा था ।

83. राज्य सरकारों द्वारा संतोषप्रद समाधानों के विकसित किए जाने की आवश्यकता पर जोर देने की दृष्टि से सिंचाई मंत्रालय ने मई, 1980 में जलाशय परियोजनाओं के कारण विस्थापित व्यक्तियों के लिए पुनर्वास के उपयुक्त उपायों के विषय पर राज्य सरकारों के सिंचाई सचिवों को पत्र लिखा था । उसमें अन्य बातों के साथ-साथ सुझाव दिया गया था कि कमांड क्षेत्र में बंजर भूमियां तथा सरकारी भूमियां विस्थापित व्यक्तियों को दी जाएं । अक्तूबर 1984 में सचिव (व्यय) के नेतृत्व में सचिवों की एक समिति गठित की गई थी जिसमें श्रम, सिंचाई, कोयला, ग्रामीण विकास तथा विद्युत मंत्रालय/विभागों के सचिव तथा वन महा-निरीक्षक और प्रधानमंत्री के अपर सचिव सम्मिलित किए गए थे । इस समिति द्वारा ऐसी ठोस विशिष्ट योजनाएं बनाई जानी थीं, जो विभिन्न एजेंसियों द्वारा सिंचाई, औद्योगिक तथा अन्य परियोजनाओं के लिए जिन परिवारों को भूमियों की आवश्यकता थी, उनके मुआवजे तथा पुनर्वास के लिए आरंभ की जानी चाहिएं । सचिवों की इस समिति में किए गए विचार-विमर्श के आधार पर लोक उद्यम ब्यूरो ने फरवरी, 1986 में विभिन्न केन्द्रीय मंत्रालयों/विभागों को कुछ मार्ग-निर्देश जारी किए थे जिनमें मोटे तौर पर बड़ी परियोजनाओं में भूमि अधिग्रहण, क्षतिपूर्ति तथा पुनर्वास के प्रश्नों की व्याख्या की गई थी ।

84. यद्यपि गत समय में बहुत-सी समितियों ने बेदखल होने वालों के पुन:स्थापन के प्रश्न पर विचार किया है, तथापि, इस समस्या के लिए योजना के बारे में अभी एकरूपता नहीं है । पुनर्वास पर एक राष्ट्रीय नीति के निर्माण में अब बहुत विलम्ब हो गया है । अनुसूचित क्षेत्रों में आरम्भ की गई परियोजनाओं के संबंध में वहां रहने वाले आदिवासियों के हितों की रक्षा करने के लिए विशेष कानूनों की भी आवश्यकता है । इस नीति का उद्देश्य बेदखल होने वालों का सामाजिक-आर्थिक तथा सांस्कृतिक पुनर्वास करना, बेदखल होने वालों की आवश्यकताओं को पूरा करना तथा पुन:स्थापन की प्रक्रिया में उनको सक्रिय रूप से सहभागी बनाना होना चाहिए । आदिवासी क्षेत्रों में बढ़ते हुए असन्तोष की दृष्टि से यह अत्यावश्यक हो गया है जिसका एक मुख्य कारण विस्थापित व्यक्तियों का असंतोषप्रद पुनर्वास है ।

क्षेत्र के अध्ययन

एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम, सिमडेगा (बिहार) के कार्यचालन का अध्ययन

85. इस कार्यालय ने जून, 1984 में एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम, सिमडेगा, जिला रांची (बिहार), की कुछ महत्वपूर्ण योजनाओं का क्षेत्र में जाकर अध्ययन किया था । यह परियोजना 1976 में आरंभ हुई थी । अध्ययन दल द्वारा देखी गई मुख्य बातें नीचे दी गई हैं --

(1) विभिन्न तकनीकी प्रमुखों तथा उप-खण्ड अधिकारी के स्तर पर प्रशासन और परियोजना अधिकारी के बीच समन्वय का अभाव था । परियोजना अधिकारी ने बताया था कि वह उप-खण्ड में एक वरिष्ठ अधिकारी था किन्तु उप-खण्ड अधिकारी, जो उससे कनिष्ठ था, उस उप-खण्ड की योजनाओं का सारा प्रशासनिक नियन्त्रण संभाले हुए था । स्वीकृत 9 पदों में से दो पद रिक्त पड़े थे । योजनाओं को तैयार करने और वास्तविक रूप से आवंटन करने तथा विभिन्न विभागों के माध्यम से उनका कार्यान्वयन कराने के बीच कोई तालमेल नहीं था ।

(2) प्रतिष्ठापूर्ण भारत-जर्मन परियोजना 1968 में सिमडेगा ब्लॉक में पालमार नदी पर ग्राम बुड़ो-कुतांग में आरंभ की गई थी । यह उस क्षेत्र में रहने वाले आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों को बदलने में सहायक हुई थी । 1971-72 तक इस परियोजना का कुल सिंचित क्षेत्रफल खेती योग्य कुल क्षेत्रफल का मात्र 0.9 प्रतिशत था । 1971-72 के बाद बड़ी संख्या के बड़े व्यास के कुएं बनाए गए थे । बुढ़ी-कुतांग, नादीटोली परसा बेड़ा तथा बांगरू गांवों में नदी से पानी खींचकर खेतों में सिंचाई करने के प्रयास भी किए गए थे जिसके परिणामस्वरूप कमांड क्षेत्र में 2,210 एकड़ भूमि में सिंचाई हुई थी। इससे लाभान्वित कुल 306 परिवारों में से 247 परिवार अनुसूचित जनजातियों के और 27 अनुसूचित जातियों के थे । इस परियोजना द्वारा पंपिंग सेट, तालाबों/बांधों की मरम्मत तथा खाद और उन्नत बीज भी उपलब्ध कराए गए थे । नदी के किनारे पर **एक पक्का कुआं तथा एक हाल** बनवाया गया था जहां 75-75 हॉ०पा० की बिजली की तीन मोटरें लगाई गई थीं । इन मोटरों में जंग लग रहा था और एल्युमीनियम के कई सौ पाइप बिना इस्तेमाल किए गांव के एक कोने में पड़े हुए थे । इसी प्रकार सिमडेगा ब्लाक के तमारा गांव में बड़े व्यास के 5 कुएं

मोटर पंप न होने के कारण प्रयोग में नहीं लाये जा रहे थे । परियोजना प्राधिकारियों से निधि न मिलने के कारण इस योजना को बंद कर दिया गया था । इस ब्लॉक में भारत-जर्मन परियोजना द्वारा उपलब्ध कराई गई कई लाख रुपये की संपत्ति को ठीक से उपयोग में लाया जाना चाहिए और लिफ्ट सिंचाई योजना या तो बिहार पहाड़ी क्षेत्र लिफ्ट सिंचाई निगम द्वारा अथवा राज्य के लघु सिंचाई विभाग द्वारा आरम्भ की जानी चाहिए।

(3) सिमडेगा तथा थेथाईतांगर ब्लॉक के लाभाभोगी खड़िया, मुण्डा, ओरांव जो आदिवासियों के अन्य वर्गों की अपेक्षा अधिक पढ़े लिखे, मुखर तथा प्रभावशाली थे, एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रमों तथा अन्य कार्यक्रमों से अधिकतम लाभ प्राप्त कर रहे थे। कोई ऐसा उपाय किया जाना चाहिए ताकि बहुत निर्धन तथा लघुतर जन जातियां जैसे चिक बैरक, गोंड, लोहरा तथा बिझिया भी विकास योजनाओं में अपना हक का भाग प्राप्त कर सकें।

(4) मुक्त बंधुआ मजदूरों की आधारभूत न्यूनतम आवश्यकताएं भी पूरी नहीं की गई थीं उन्हें केवल भैंस, बैल तथा गाय दिए जाने से उनकी सहायता नहीं हो सकेगी । उन्हें चारा तथा अन्य निवेश भी उपलब्ध कराए जाने चाहिएं तथा उनके दूध के क्रय-विक्रय का पर्याप्त प्रबन्ध भी किया जाना चाहिए ।

(5) वन विकास निगम को लघु वन उपज केवल लैम्पूस के माध्यम से ही प्राप्त करनी चाहिए और वैयक्तिक अभिकरणों से नहीं क्योंकि निर्धन आदिवासी उनसे ठगे जा रहे थे ।

(6) गोदामों (वेयरहाउस) तथा परिवहन सुविधाओं की कमी थी, जिसके परिणामस्वरूप दूरवर्ती क्षेत्रों में अनिवार्य उप-भोक्ता वस्तुएं लैम्प्स को नहीं दी जा सकी थीं ।

(7) लैम्प्स के सुचारू रूप से कार्य चालन के लिए सदस्य-सचिव की सहायता के लिए एक सहायक उपलब्ध कराया जा सकता है ।

(8) खरीददारी के मुख्य कार्य अब तक साहूकार तथा व्यापारी ही कर रहे थे । क्रय-विक्रय का मुख्य कार्य लैम्प्स द्वारा स्वयं ही किया जाना चाहिए। सरकार का शेयर अंशदान उपयुक्त रूप से बढ़ाया जाना चाहिए ।

(9) बिरहोड़, एक आदिम आदिवासी समूह, सिमडेगा ब्लॉक में रह रहे हैं । 1976-77 से 1982-83 के दौरान केवल 39,891 रुपये की राशि इस ब्लॉक में इस आदिम जनजाति के विकास के लिए प्राप्त हुई थी और इसमें से उनके कल्याण तथा विकास के लिए विभिन्न योजनाओं पर कुल 19,600 रुपये की अल्प-सी राशि व्यय की गई थी । स्कूल जाने वाले बच्चे स्कूल नहीं भेजे जा रहे थे और उन्हें पीने के पानी और आवास जैसी सुविधाएं उपलब्ध नहीं कराई गई थीं ।

एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम, बांसवाड़ा (राजस्थान) के कार्यचालन का अध्ययन

86. इस कार्यालय ने सितम्बर, 1985 में एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम, बांसवाड़ा (**राजस्थान**) के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण योजनाओं का क्षेत्र अध्ययन आयोजित किया था। इसके लिए एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम में 8 पंचायत समितियों में से 2 पंचायत समितियों अर्थात् गढ़ी तथा आनन्दपुरी का चयन किया गया था। इस अध्ययन के लिए नमूने में 11 गांवों से 33 आदिवासी लाभभोगी शामिल थे । इस जिले में भारी सूखे की स्थिति के कारण काफी संख्या में आदिवासी पड़ौस के राज्यों को प्रवास कर गए थे और इस लिए मूल रूप से निर्धारित गांवों की संख्या की अपेक्षा अधिक संख्या में गांवों को आदिवासी लाभभोगियों से संपर्क करने के लिए समाविष्ट करना पड़ा था । इस अध्ययन के कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष नीचे दिए गए हैं —

(1) एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम के परियोजना अधिकारी तथा उप-परियोजना अधिकारी को जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के नियंत्रण के अधीन रखा गया था । किन्तु परियोजना अधिकारी का पद रिक्त पड़ा था । परियोजना अधिकारी एक वरिष्ठ अधिकारी होना चाहिए और उसका कार्यालय स्वतंत्र होना चाहिए । उसे जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के परियोजना निदेशक के प्रशासनिक नियंत्रण के अधीन नहीं होना चाहिए । खण्ड विकास अधिकारियों तथा खण्ड स्तर के अधिकारियों को परियोजना अधिकारी के सीधे नियंत्रण में रखा जाना चाहिए ।

(2) यह सुनिश्चित करने के लिए तत्काल कदम उठाया जाना आवश्यक था कि सातवें वित्त आयोग तथा आठवें वित्त आयोग के अधि-निर्णयों के अधीन उपलब्ध निधियों का प्रयोग प्राथमिकता आधार पर ऐसे क्षेत्रों में किया जाए जिनमें उनकी सबसे अधिक आवश्यकता थी ।

(3) 1981 में बांसवाडा जिले की साक्षरता दर पूरे राज्य के 24.38 प्रतिशत के मुकाबले केवल 16.85 प्रतिशत थी । सर्वेक्षण किए गए लाभ-भोगियों में 12.37 प्रतिशत निरक्षर थे, 24.24 प्रतिशत पढ़ तथा लिख सकते थे, 15.15 प्रतिशत प्राथमिक स्तर तक पढ़े थे, 33.33 प्रतिशत मिडिल स्तर तक तथा 15.15 प्रतिशत माध्यमिक स्तर तक पढ़े थे । इन व्यक्तियों के परिवारों

में 65.9 प्रतिशत लड़के तथा 90.5 प्रतिशत लड़कियां निरक्षर थीं।

(4) सर्वेक्षित ग्यारह गांव एक निराशाजनक चित्र प्रस्तुत करते थे। इन गांवों में कोई कृषि प्रदर्शन फार्म या उद्यान फार्म या गोदाम नहीं था। वहां कोई साप्ताहिक बाजार नहीं था और इससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि वहां कोई उचित दर दुकान भी नहीं थी। पूछताछ किए गए लाभभोगियों में 18.2 प्रतिशत भूमि-विहीन थे, 63.2 प्रतिशत के पास 2.5 से 12 बीघे तक भूमि थी और केवल 3 प्रतिशत के पास 25 बीघे से अधिक भूमि थी। अधिकांश आदिवासी छोटे सीमान्त कृषक थे, जिन्हें अपनी भूमियों से पर्याप्त उपज नहीं मिलती थी। अधिकतर सुकाय आदिवासी पड़ोस के राज्यों में मजदूरों के रूप में कार्य करने के लिए प्रवास कर गए थे और यह बताया गया था कि वहां पर भी उनका शोषण हो रहा था।

(5) सिंचाई और पीने के पानी के प्रयोजनों के लिए कुंए तथा तालाब प्रमुख स्रोत थे। केवल दो गांवों, समालिया और माडाल्डा में पानी की आपूर्ति पाइप द्वारा होती थी, और वह भी लगभग एक घंटे के लिए। सर्वेक्षित गांवों में 20 सार्वजनिक कुंए और 20 निजी कुंए थे। इनमें से 22 कुओं में पानी नहीं था। केवल 3 गांवों में 5 सार्वजनिक तालाब थे, जिनमें से 3 सूखे थे। उपकरणों की सहायता से कुओं की खुदाई तथा कुओं को गहरा करने के कार्य को उन गांवों में प्राथमिकता के आधार पर किया जाना चाहिए जहां उसकी तत्काल आवश्यकता है। सिंचाई तथा पीने के पानी की विद्यमान सुविधाओं के स्रोतों का विस्तृत सर्वेक्षण तत्काल किया जाना चाहिए।

(6) बार-बार होने वाले सूखे के कारण जिले में पशुधन की सामान्य स्थिति बहुत खराब थी। उक्त लाभभोगियों के पास केवल 25 दुधारू पशु, 36 बैल तथा 16 बकरियां थीं। सूखा-ग्रस्त क्षेत्रों में प्राथमिकता के आधार पर प्रत्येक ब्लाक में चारा केन्द्र स्थापित किए जाने चाहिएं।

(7) दल ने 1984-85 दौरान एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधीन आरंभ किए गए विभिन्न कार्यक्रमों की प्रगति का अध्ययन किया था। गढ़ी तथा आनन्दपुरी पंचायत समितियों में कृषि योजनाओं के अन्तर्गत लाभभोगियों में आदिवासियों की संख्या क्रमशः 88.2 तथा 100 प्रतिशत थी और पशुपालन योजनाओं के अन्तर्गत यह क्रमशः 55.3 प्रतिशत तथा 84.9 प्रतिशत थी। अन्य योजनाओं में आदिवासियों की संख्या जिले की जनसंख्या में उनके अनुपात से कम थीं। इस सूखा-प्रवृत्त क्षेत्र से आदिवासियों के अपने पड़ौसी राज्यों में प्रवास को रोकने के लिए वहां लघु अथवा कुटीर उद्योग स्थापित किए जाने तथा रोजगार के पर्याप्त अवसर उत्पन्न किए जाने की तत्काल आवश्यकता थी। एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 36 प्रतिशत लाभभोगियों को बैल, 22 प्रतिशत को बिजली के पंप/मोटरें प्राप्त हुए थे किन्तु लगभग सभी मामलों में यह देखा गया था कि उत्पन्न की गई अतिरिक्त आय उन्हें निर्धनता रेखा से ऊपर उठाने के लिए पर्याप्त तथा स्थायी नहीं थी।

(8) चूंकि उत्पन्न हुई अतिरिक्त आय अपर्याप्त थी, 33 परिवारों द्वारा लिए गए 71,195.50 रुपए के ऋण में से केवल 11.7 प्रतिशत ही वापस किया जा सका था। किसी भी लाभभोगी को "विकास पत्रिका" अथवा बैंक की पास बुक नहीं दी गई थी।

(9) माही बजाज सागर जलाशय परियोजना के कारण स्थापित हुए परिवारों के सम्बन्ध में जानकारी एकत्र की गई थी। यह सूचना एकत्रित की गई थी कि इस बांध के निर्माण के कारण 9,675 परिवार विस्थापित हुए थे जिनमें 5,321 आदिवासी परिवार थे। दिनांक 9-8-84 को यथा-स्थिति की सूचना से यह पता चलता था कि 5,576 गैर आदिवासी तथा 4,076 आदिवासी परिवारों का पुनर्वास किया गया था। उनमें से 1,107 गैर-आदिवासी तथा 348 आदिवासी परिवारों ने उस भूमि पर कब्जा ले लिया था जिसपर वे पुनः स्थापित किए गए थे। जिन्होंने भूमि पर कब्जा नहीं लिया था उनकी संख्या क्रमशः 3,117 तथा 2,627 थी। इस बांध से बेदखल हुए व्यक्तियों को क्षतिपूर्ति तथा पुनर्वास का भुगतान करने के लिए कसौटियां राज्य सरकार द्वारा 1974 में अनुमोदित की गई थीं। परन्तु एक दशक से अधिक बीत जाने के बाद भी अब तक पूर्ण रूप से पुनर्वास नहीं किया गया था। बेदखल होने वालों की कुल संख्या में से 3,913 परिवारों को बांसवाड़ा जिले में 36 पुनर्वास कालोनियों में बसाया गया था। पुनर्वास तथा बन्दोबस्त की समस्या का गहराई से अध्ययन किया जाना अपेक्षित था।

अनुलग्नक 1

वर्ष 1980-85 के दौरान राज्य योजना से आदिवासी उपयोजना क्षेत्रों को दी गई राशि

(रुपए करोड़ में)

क्र० सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र (अनुसूचित जनजाति जनसंख्या के 1971 की जनगणना के प्रतिशत सहित)		राज्य योजना परिव्यय	आदिवासी उप-योजना को दी गई राशि	प्रतिशत	व्यय	
						जैसा 1985-86 और 1986-87 के आदिवासी उपयोजना के दस्तावेजों में दर्ज है	जैसा कल्याण मंत्रालय के बजट संक्षेप 1988-89 में दर्ज है
1	2		3	4	5	6	7
	राज्य						
1.	आन्ध्र प्रदेश	(5.12)	3100.00	139.46	4.50	98.99	107.90
2.	असम	(10.99)	1115.00	120.15	10.78	124.53	134.48
3.	बिहार	(8.75)	3225.00	625.26	19.39	543.38	532.12
4.	गुजरात	(14.07)	3680.00	484.40	13.16	405.81	425.07
5.	हिमाचल प्रदेश	(4.10)	560.00	44.91	8.48	55.29	54.15
6.	कर्नाटक	(0.89)	2265.00	23.80	1.05	16.85	18.42
7.	केरल	(0.90)	1550.00	19.35	1.25	25.27*	23.73
8.	मध्य प्रदेश	(23.56)	3800.00	629.04	16.55	669.28	669.29
9.	महाराष्ट्र	(7.62)	6175.00	298.85	4.84	287.44	381.22
10.	मणिपुर	(31.13)	240.00	76.37	31.82	87.37	86.82
11.	उड़ीसा	(23.13)	1500.00	533.19	35.55	453.46	508.64
12.	राजस्थान	(12.17)	2025.00	202.66	10.01	236.17	229.49
13.	सिक्किम	(24.53)	122.00	15.06	12.34	2.94+	12.65
14.	तमिलनाडु	(1.09)	3150.00	16.98	0.54	19.36	20.25
15.	त्रिपुरा	(28.98)	245.00	65.23	28.40	85.91	78.72
16.	उत्तर प्रदेश	(0.23)	5850.00	3.49	0.06	2.52@	2.52
17.	पश्चिमी बंगाल	(5.87)	3500.00	180.33	5.15	80.79	87.62
	संघ राज्य क्षेत्र						
18.	अंडमान और नीकोबार द्वीपसमूह	(15.65)	96.60	15.48	16.02	13.85	13.85
19.	गोवा, दमण और दीव	(0.82)	192.00	1.23	0.64	0.63	0.95
	कुल	(7.58)	42390.60	3495.24	8.25	3219.84	3387.89

*वर्ष 1984-85 के दौरान 6.45 करोड़ रुपए का अनुमानित व्यय भी शामिल है। यहां दर्शाया गया छठी योजना अवधि का कुल व्यय 23.73 करोड़ रुपए के योजना परिव्यय के समक्ष है। किन्तु आदिवासी उपयोजना का स्वीकृत परिव्यय भारत सरकार द्वारा 19.35 करोड़ रुपए दर्शाया गया है।

+सिक्किम के 1985-86 और 1986-87 के आदिवासी उपयोजना दस्तावेजों पर आधारित जिनमें अधूरे आंकड़े हैं।

@स्तंभ 3, 5 और 6 के नीचे दिए गए आंकड़ों का संबंध केवल मैदानी क्षेत्र से है (खीरी और गोंडा)।

अनुलग्नक 2

आदिवासी उपयोजना आबंटनों के लिए एक अलग बजट मांग बनाने के संबंध में विभिन्न राज्यों में स्थिति दर्शाने वाला विवरणपत्र

राज्य का नाम	क्या अलग मांग बनाई गई है	क्या मुख्य/लघु शीर्ष बनाया गया है	अभ्युक्तियां
1	2	3	4
1. आन्ध्र प्रदेश	हां	--	आदिवासी विकास पर 14-6-86 को मुख्य मंत्री द्वारा की गई बैठक में यह निर्णय लिया गया था कि आदिवासी उपयोजना के लिए निधि को समूहीकृत किया जाना चाहिए और अनुसूचित जनजातियों के लिए पूर्ण विकास के लिए आदिवासी कल्याण के आयुक्त द्वारा उपयोग किए जाने के लिए निर्धारित की जानी चाहिए। यह निर्णय लिया गया था कि उपयोजना के लिए प्रावधान को 1987-88 के लिए बजट में एक मांग के अधीन ही दर्शाया जाएगा।
2. असम	नहीं	--	अनन्य रूप से आदिवासी उपयोजना के लिए राज्य योजना से आबंटन के लिए अलग से कोई मांग सं० नहीं है और विभिन्न विभागों द्वारा विशेष केन्द्रीय सहायता दो अलग मुख्य शीर्षों के अधीन दर्शाई जाती हैं।
3. बिहार	नहीं	मुख्यशीर्ष	प्रत्येक विभाग में आदिवासी उपयोजना के लिए एक अलग मुख्यशीर्ष है।
4. गुजरात	हां	--	आदिवासी क्षेत्र उपयोजना के लिए राज्य बजट से एक अलग एकल मांग के अधीन मंजूरी दी जा रही है। विकास के विभिन्न क्षेत्रों को विशेष केन्द्रीय सहायता के आबंटन का संचालन आदिवासी विकास विभाग द्वारा किया जाता है।
5. हिमाचल प्रदेश	हां	--	आदिवासी उपयोजना क्षेत्रों के लिए एक अलग मांग (सं०--35) 1981-82 से बनाई गई है।
6. कर्नाटक	नहीं	शीर्ष	राज्य योजना निधियों और विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए एक अलग बजट शीर्ष खोला गया है। समाज कल्याण और श्रम विभाग, कार्यक्रमों के कार्यान्वियन के लिए संबंधित विभागों को निधियां आबंटित करते हैं।
7. केरल	नहीं	लघुशीर्ष	आदिवासी उपयोजना के लिए कोई अलग मांग नहीं है। राज्य योजना से आदिवासी उपयोजना को दी गई राशि संबंधित विभागों की अपनी अपनी मांगों में लघु उप-शीर्षों के अधीन दिखाई जाती है।
8. मध्य प्रदेश	हां	--	राज्य बजट में अलग मांग सं० 41, 42, और 67 बनाई गई है। मांग संख्या 41 के अधीन लोक निर्माण विभाग को छोड़कर सभी संबंधित विभागों के प्रावधान शामिल किए गए हैं। मांग संख्याओं 42 और 67 के अधीन लोक निर्माण विभाग के माध्यम से क्रमश: सड़कों तथा भवनों के लिए प्रावधान शामिल किए गए हैं।

1	2	3	4
9. महाराष्ट्र	नहीं	लघुशीर्ष	आदिवासी क्षेत्र उपयोजना के अधीन (1) राजस्व लेखा, (2) पूंजी लेखा और (3) ऋण लेखा के अधीन विभिन्न मुख्य शीर्षों के लिए एक एकल मांग संख्या दी गई है और प्रत्येक क्रियात्मक मुख्य शीर्ष के अधीन एक अलग लघु शीर्ष "आदिवासी क्षेत्र उपयोजना" भी खोला गया है।
10. मणिपुर	नहीं	—	आदिवासी उपयोजना के लिए कोई अलग मांग संख्या नहीं है। विशेष केन्द्रीय सहायता एक अलग मांग के अधीन रखी जाती है। 1977–78 से विशेष केन्द्रीय सहायता योजनाओं को एक मांग के अधीन समूहीकृत किया गया है और योजनायें आदिवासी विकास विभाग द्वारा कार्यान्वित की जाती हैं।
11. उड़ीसा	नहीं	लघु	प्रत्येक विभाग का अपनी मांग में "आदिवासी क्षेत्र उपयोजना" के नाम से एक लघु शीर्ष है। विशेष केन्द्रीय सहायता और राज्य योजना से दी गई राशि अपने–अपने लघु शीर्षों के अधीन अलग उपशीर्षों के अधीन दर्शायी जाती हैं।
12. राजस्थान	हां	—	विशेष केन्द्रीय सहायता और राज्य योजना से दी गई राशि के संयुक्त प्रावधान राज्य द्वारा मांग संख्या 30 के अधीन दर्शाए जाते हैं।
13. सिक्किम	नहीं	—	
14. तमिलनाडु	नहीं	शीर्ष	विभागों के अपने–अपने मुख्य क्रियात्मक शीर्ष के अधीन अलग शीर्ष खोले गए हैं।
15. त्रिपुरा	नहीं	लघुशीर्ष	आदिवासी उपयोजना के लिए कोई अलग मांग नहीं है किन्तु आदिवासी उपयोजना के लिए निधियों की मात्रा तय करने के लिए प्रत्येक क्षेत्रीय शीर्ष के अधीन एक अलग लघुशीर्ष है। विशेष केन्द्रीय सहायता की राशि आदिवासी कल्याण विभाग के बजट में एक पृथक लघु शीर्ष के अधीन रखी जाती है और विभिन्न विभागों को दी जाती है।
16. उत्तर प्रदेश	नहीं	उपशीर्ष	आदिवासी उपयोजना के लिए एक अलग उपशीर्ष बनाया गया है और इस राज्य में विभिन्न विभागों को विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए कोई आवंटन नहीं किया जाता है। विशेष केन्द्रीय सहायता का प्रयोग केवल एकीकृत जनजाति विकास परियोजनाओं द्वारा किया जाता है।
17. पश्चिम बंगाल	हां	[illegible]	विशेष केन्द्रीय सहायता के लिए विभिन्न सेक्टरों के विभागों के आदिवासी उपयोजना परिव्यय एक एकल मांग शीर्ष में समूहीकृत किए जाते हैं।
18. अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह	—	—	निधि गृह मंत्रालय की मांग संख्या 54 में रखी जाती है। आदिवासी क्षेत्र उपयोजना का प्रावधान इस मांग के अधीन आने वाले विभिन्न मुख्य शीर्षों के अधीन दर्शाया जाता है। विशेष केन्द्रीय सहायता के अधीन निधियां विभिन्न विभागों के नियन्त्रण में रखी जाती हैं।
19. गोवा, दमण और दीव	नहीं	—	आदिवासी उपयोजना के लिए कोई अलग मांग आरम्भ नहीं गई है। तथापि मुख्य शीर्ष "288"—समाज सुरक्षा के अधीन विनियोजन की एक अलग यूनिट आरंभ की गई है।

अनुलग्नक 3

वर्ष 1980—85 के दौरान आदिवासी उपयोजना के तुलनात्मक निवेश—परिवारोन्मुख, अवस्थापना, समाज सेवा और अन्य सेक्टर—कुल का प्रतिशत

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	लाभभोगी परिवारोन्मुख सेक्टर (क)	अवस्थापना सेक्टर (ख)	समाजसेवा सेक्टर (ग)	अन्य सेक्टर
1	2	3	4	5	6
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	6.09	27.21	39.67	27.03
2.	असम	31.88	32.16	26.78	9.18
3.	बिहार	18.26	47.07	21.60	13.07
4.	गुजरात	19.60	35.48	22.67	22.25
5.	हिमाचल प्रदेश . . .	17.50	40.41	19.25	22.84
6.	कर्नाटक	47.64	9.40	26.17	16.79
7.	केरल	17.46	20.06	40.45	22.03
8.	मध्य प्रदेश . . .	21.38	29.98	18.60	30.04
9.	महाराष्ट्र	12.74	41.38	44.79	1.09
10.	मणिपुर	16.11	41.18	29.82	12.89
11.	उड़ीसा	9.49	43.88	9.63	37.00
12.	राजस्थान	5.80	69.57	11.42	13.21
13.	सिक्किम	12.55	27.14	——	60.31
14.	तमिलनाडु	30.30	26.92	22.49	20.29
15.	त्रिपुरा	18.56	23.25	41.31	16.88
16.	उत्तर प्रदेश . . .	32.70	13.40	16.25	37.65
17.	पश्चिम बंगाल . . .	15.04	40.57	14.08	30.31
18.	अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह .	4.82	71.16	14.00	10.02
19.	गोवा, दमण और दीव . .	20.57	16.33	17.26	45.84
	कुल योग	16.69	39.44	21.96	21.91

(क)

1. कृषि
2. उद्यान कृषि
3. लघु सिंचाई
4. पशुचिकित्सा और पशुपालन
5. मत्स्यपालन
6. सहकारिता
7. कुटीर उद्योग
8. रेशम उद्योग

(ख)

1. बड़े तथा मध्यम उद्योग
2. सिंचाई और विद्युत
3. खनन
4. सड़कें

(ग)

1. पीने का पानी
2. शिक्षा
3. स्वास्थ्य
4. श्रम
5. समाज सेवा के अन्तर्गत अन्य सेक्टर

अनुलग्नक 4

आदिवासी उपयोजना के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता के रूप में दी गई राशि और छठी योजना अवधि के दौरान राज्य सरकारों द्वारा बताए गए व्यय को दर्शाने वाला विवरणपत्र

15-5-1987 को यथास्थिति
(रुपए लाख में)

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	1980-81		1981-82		1982-83		1983-84		1984-85		कुल	
	दी गई राशि	व्यय	दी गई राशि	व्यय	दी गई राशि	व्यय	दी गई राशि	व्यय	दी गई राशि	व्यय	दी गई राशि	व्यय
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
1. आन्ध्र प्रदेश	337.22	305.75	383.00	422.58	428.41	472.15	511.52	607.44	589.40	622.18	2249.55	2430.10
2. असम	319.01	250.38	367.00	275.90	411.00	337.31	477.33	445.78	539.58	809.33	2113.92	2118.70
3. बिहार	973.98	821.84	1212.28	966.05	1349.28	1127.82	1566.89	1223.85	1832.47	1487.25	6934.90	5626.81
4. गुजरात	568.64	568.64	718.26	718.26	798.26	798.26	908.26	908.26	1087.62*	1087.62	4081.04	4081.04
5. हिमाचल प्रदेश	81.22	119.21	121.94	99.82	140.20	143.22	158.27	133.58	200.51	292.51	702.14	788.34
6. कर्नाटक	17.17	19.48	61.00	41.06	68.00	43.58	77.98	54.78	122.61	110.53	346.76	269.43
7. केरल	57.00	65.11	48.00	52.36	56.00	47.59	62.51	67.24	64.01	66.67	287.52	298.97
8. मध्य प्रदेश	1923.51	1770.41	2412.83	1463.99	2677.83	1625.44	3104.95	1522.46	3652 52	4140.40*	13771.64	10522.70
9. महाराष्ट्र	544.16	544.16	578.67	578.67	646.00	721.23	758.75	758.75	799.33	801.57	3326.91	3404.38
10. मणिपुर	112.05	130.68	150.00	149.34	171.00	176.36	197.09	196.79	238.94	238.79	869.03	891.96
11. उड़ीसा	886.45	885.89	1166.42	1164.44	1344.42	1344.32	1495.89	1494.81	1763.19	1762.30	6656.37	6651.76
12. राजस्थान .	516.49	501.01	590.79	514.23	636.79	630.50	722.11	697.20	839.30	863.79	3305.48	3206.73
13. सिक्किम .	10.00	10.00	22.00	22.01	25.00	8.50	29.18	32.04	37.17	36.17	123.35	108.72
14. तमिलनाडु . . .	80.87	80.87	95.00	95.60	105.00	105.00	121.88	121.88	135.41	135.41	538.16	538.76
15. त्रिपुरा . .	130.58	119.29	142.00	145.91	159.00	156.95	181.92	181.38	199.34	200.62	812.84	804.15
16. उत्तर प्रदेश . .	19.07	9.22	14.81	24.67	17.81	18.81	24.39	20.22	26.00	18.81*	102.08	91.73
17. पश्चिम बंगाल . .	364.58	366.16	376.00	375.89	421.00	418.17	500.08	527.04	524.60*	493.15	2186.26	2180.41
18. अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह	14.00	9.50	16.53	14.82	40.00	26.20	95.00	25.21	3.00	23.38	168.53	99.11
19. गोवा, दमण और दीव .	12.81	11.60	4.00	5.88	5.00	6.50	6.00	5.99	7.00	6.97	34.81	36.94
कुल . . .	6968.81	6589.20	8480.53	7131.48	9500.00	8207.91	11000.00	9024.70	12662.00	13197.45	48611.34	44150.74

*अन्तरिम

अनुलग्नक 5

छठी योजना के दौरान आदिवासी उपयोजना के अधीन विशेष केन्द्रीय सहायता—लाभभोगी परिवारोन्मुख, अवस्थापना विकास, समाज सेवा और अन्य सेक्टरों में तुलनात्मक निवेश—कुल का प्रतिशत

(रुपए लाख में)

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	लाभभोगी परिवारोन्मुख सेक्टर	अवस्थापना सेक्टर	समाज सेवा सेक्टर	अन्य सेक्टर	कुल
1	2	3	4	5	6	7
1.	आन्ध्र प्रदेश .	1548.58	3.21	143.89	146.86	1842.54
		(84.04)	(0.18)	(7.80)	(7.98)	(100.00)
2.	असम . .	894.87	—	196.00	323.99	1414.86
		(63.26)		(13.85)	(22.89)	(100.00)
3.	बिहार . .	3580.28	304.66	1067.12	884.82	5836.88
		(61.33)	(5.24)	(18.28)	(15.15)	(100.00)
4.	गुजरात . .	1435.43	9.31	375.00	1995.26	3815.00
		(37.62)	(0.24)	(9.82)	(52.32)	(100.00)
5.	हिमाचल प्रदेश .	313.31	5.01	183.31	207.14	708.77
		(44.20)	(0.70)	(25.88)	(29.22)	(100.00)
6.	कर्नाटक . .	214.17	—	24.00	66.00	304.17
		(70.42)		(7.89)	(21.69)	(100.00)
7.	केरल . .	139.33	17.18	188.03	42.36	386.90
		(36.03)	(4.44)	(48.59)	(10.94)	(100.00)
8.	मध्य प्रदेश .	6496.12	725.74	7293.29	3010.18	17525.33
		(37.06)	(4.14)	(41.61)	(17.19)	(100.00)
9.	महाराष्ट्र .	271.53	547.35	2272.97	49.87	3141.72
		(8.64)	(17.44)	(72.34)	(1.58)	(100.00)
10.	मणिपुर . .	168.98	77.94	437.08	176.68	860.68
		(19.63)	(9.05)	(50.78)	(20.54)	(100.00)
11.	उड़ीसा . .	2979.11	171.67	1163.20	1303.30	5617.28
		(53.03)	(3.05)	(20.72)	(23.20)	(100.00)
12.	राजस्थान . .	618.78	10.60	778.05	604.23	2011.66
		(30.75)	(0.52)	(38.57)	(30.06)	(100.00)
13.	सिक्किम . .	64.20	—	30.71	18.00	112.91
		(56.86)		(27.20)	(15.94)	(100.00)
14.	तमिलनाडु . .	338.20	4.00	102.85	81.00	526.05
		(64.29)	(0.76)	(19.55)	(15.40)	(100.00)
15.	त्रिपुरा . .	262.09	5.49	453.43	9.80	730.80
		(35.86)	(0.76)	(62.04)	(1.34)	(100.00)

(जारी)

1	2	3	4	5	6	7
16.	उत्तर प्रदेश .	26.05 (41.17)	—	3.39 (5.36)	33.84 (53.47)	63.28 (100.00)
17.	पश्चिम बंगाल .	1138.68 (47.59)	95.52 (3.99)	116.80 (4.88)	1041.26 (43.54)	2392.36 (100.00)
18.	अण्डमान और निकोबार द्वीपसमूह . .	8.17 (18.31)	0.80 (1.79)	35.66 (79.90)	--	44.63 (100.00)
19.	गोआ, दमण और दीव . .	15.73 (39.19)	15.43 (38.44)	7.37 (18.36)	1.61 (4.01)	40.14 (100.00)
	कुल . .	20513.61 (43.30)	1993.91 (4.21)	14872.14 (31.39)	9996.20 (21.10)	47375.86 (100.00)

टिप्पण—1. उपर्युक्त में उन आदिम (प्रिमिटिव) आदिवासी कार्यक्रमों पर व्यय शामिल नहीं है जो अधिकांशत: लाभभोगीउन्मुख अथवा समाज सेवा सेक्टरों के अन्तर्गत आते हैं। आदिम आदिवासी कार्यक्रमों के लिए छठी योजना के दौरान कुल विशष केन्द्रीय सहायता 1850 लाख रुपए थी।

2. कोष्ठक के अन्दर की संख्यायें कुल से प्रतिशत दर्शाती हैं।

अनुलग्नक 6

विवरण पत्र संख्या 1

बिहार में छठी योजना अवधि के दौरान आदिवासी उपयोजना (राज्य योजना) के अधीन परिव्यय तथा व्यय को दर्शाने वाला विवरण पत्र

(रुपए लाख में)

क्र० सं०	सेक्टर	यथा 1985-86 के आदिवासी उपयोजना दस्तावेज के अध्याय 2 प्रगति का पुनरावलोकन में			जैसा 1985-86 के आदिवासी उपयोजना दस्तावेज संबंधित अध्यायों में			
		पृष्ठ सं०	परिव्यय	व्यय	अध्याय	पृष्ठ सं०	परिव्यय	व्यय
1	2	3	4	5	6	7	8	9
I	**कृषि तथा सम्बद्ध सेवायें**							
1	फसल कृषि	xxiii	915.00	856.90	VIII	26	915.00	856.90
2.	भूमि संरक्षण	xxviii	953.60	951.40	XIX	112	643.00	506.71
3.	पशुपालन	xxviii	952.06	850.43	XX	122	952.06	850.43
4.	मत्स्य पालन	xxix	185.00	154.53	XXII	156	212.00	148.40
5.	डेयरी विकास	xxix	307.00	308.25	XXI	143	119.00	119.00
6.	कृषि विपणन	xxx	454.00	445.50	X	57	485.00	367.88
7	वन	xxx	1391.00	1361.93	XXIII	165	1380.00	1272.00
	उप-योग		5157.66	4928.94			4606.66	4121.32
II	**ग्रामीण विकास**							
1	राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम	xxxiv	1761.11	1447.44	XIII	77	1275.00	1447.44
2.	एकीकृत ग्रामीण विकास परियोजना	xxxiv	1747.00	1643.06	XIV	79	1172.00	1643.00
	उप-योग II		3508.11	3090.50			2447.00	3090.44
III	सहकारिता	xxxi	1520.50	1372.34	XXV		1520.50	1372.34
IV	**जल तथा विद्युत विकास**							
1	बड़ी तथा मध्यम सिंचाई	xxvi	19711.80	14898.66	XXVI	235	19711.80	14898.66
2.	लघु सिंचाई	xxvii	7092.00	6271.50	XVIII	98	6662.00	6222.05
3.	विद्युत	उ० नहीं	7223.00	4420.91	XXVII	244	7223.00	4420.91
	उप-योग IV		34026.80	25591.07			33596.80	25541.62

(जारी)

1	2	3	4	5	6	7	8	9
V	उद्योग तथा खनिज							
	ग्रामीण और लघु उद्योग .	xxxiv	2015.00	1941.23	XXIX	277	1011.00	1011.00
IV	परिवहन और संचार							
	ग्रामीण सड़कें .	xxxii	2939.00	3087.55	XXXI	312	2665.00	2864.00
	समाज तथा सामुदायिक सेवायें							
1.	शिक्षा . .	xxxiii	4578.95	3973.17	XXXV	325	4010.00	3813.00
2.	ग्रामीण जल प्रदाय .	xxxiv	2397.50	2395.50	XXXVIII	362	2250.00	2230.50
3.	स्वास्थ्य .	xxxii	2353.94	2266.56	XXXIX	368	1806.00	1381.00
	उप-योग VII .		9330.39	8635.23			8066.00	7424.50
	कुल योग . .		58497.46	48646.86			53912.96	45425.22

स्रोत—सातवीं पंचवर्षीय योजना और वार्षिक योजना 1985–86 के लिए प्राप्त उपयोजना

टिप्पण (1) स्तंभ 5 और 9 के अधीन व्यय के आंकड़ों में छठी योजना अवधि के पहले चार वर्षों का वास्तविक व्यय और वर्ष 1984–85 का अनुमानित व्यय शामिल है। 1986–87 का आदिवासी उपयोजना दस्तावेज राज्य योजना (आदिवासी उपयोजना) के अधीन छठी योजना का कुल व्यय 569.34 करोड़ रुपए बताता है किन्तु उसमें सेक्टर-वार विस्तृत विवरण नहीं दिया गया है।

(2) दस्तावेज एक स्थान पर सभी सेक्टरों के बारे में पूरी तथा सही सूचना नहीं देता है। कुल परिव्यय जैसा कि अध्याय 2 (प्रगति का पुनरावलोकन) में दिया गया है, 584.97 करोड़ रुपए आता है जबकि वस्तुतः कुल परिव्यय 639.34 करोड़ रुपए था। इन सेक्टरों में से भी कुछ के संबंध में परिव्यय के विभिन्न आंकड़े संबंधित अध्यायों में दिए गए हैं, जैसा स्तम्भ 8 में दर्शाया गया है। स्तम्भ 8 का कुल 523.92 करोड़ रुपए आता है जिसमें सहकारिता पर परिव्यय शामिल नहीं है जो संबद्ध अध्याय में दर्शाया नहीं गया है। बहरहाल विश्लेषण के प्रयोजन के लिए स्तंभ 8 और 9 के आंकड़े ले लिए गए हैं।

(3) सहकारिता के अध्याय में परिव्यय और व्यय के आंकड़े नहीं दर्शाए गए थे। इसलिए स्तंभ 4 और 5 के आंकड़े क्रमशः स्तंभ 8 और 9 में दोहराए गए हैं।

(4) डेयरी विकास और ग्रामीण तथा लघु उद्योग के समक्ष संबंधित अध्यायों में व्यय के आंकडे नहीं दर्शाए गए थे। इसलिए स्तंभ 8 के आंकड़ों को स्तंभ 9 में दोहराया गया है।

(5) स्तंभ 4 में दर्शाए गए कुल परिव्यय के अतिरिक्त आदिवासी उपयोजना परिव्यय संबंधित अध्यायों में कुछ सेक्टरों/कार्यक्रमों में भी दर्शाया गया है और उनका योग 82.13 करोड़ रुपए बनता है। किन्तु ये सेक्टर/कार्यक्रम अध्याय 2 (प्रगति का पुनरावलोकन) में नहीं दर्शाए गए हैं। संबंधित अध्यायों में कतिपय कार्यक्रमों के समक्ष व्यय के आंकड़े नहीं दर्शाए गए हैं और व्यय के आंकड़ों का योग 73.76 करोड़ रुपए आता है। बहरहाल विश्लेषण के लिए परिव्यय/व्यय के उन आंकड़ों को लिया गया है जिन्हें अध्याय 2 में शामिल नहीं किया गया है। विस्तार के लिए इस अनुलग्नक का विवरणपत्र संख्या 2 देखा जा सकता है।

अनुलग्नक 6

विवरण पत्र संख्या 2

सातवीं पंचवर्षीय योजना के लिए बिहार की प्रारूप उपयोजना और राज्य योजना की वार्षिक योजना 1985-86 के सेक्टर कार्यक्रम, जो प्रगति के पुनरावलोकन से संबंधित अध्याय 2 में शामिल नहीं किए गए हैं, किन्तु विभिन्न सेक्टरों से संबंधित अन्य अध्यायों में दर्शाए गए हैं।

(रुपए लाख में)

अध्याय	पृष्ठ संख्या	सेक्टर/कार्यक्रम	परिव्यय	व्यय
1	2	3	4	5
		कृषि और संबद्ध सेवायें		
VII	1	(i) कृषि शिक्षा और अनुसंधान	336 50	344 50
IX	55	(ii) लाह विकास	40.00	24.15
XI	68	(iii) भण्डारण और भाण्डागार	2 00	2.00
XII	70	(iv) सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम	270.00	305.00
XV	84	(v) सामुदायिक विकास	302 00	322.00
XVI	87	(vi) पंचायतें	65 00	50 00
XVII	92	(vii) भूमि सुधार	706.00	700.00
			1721.50	1758.65
		उद्योग तथा खनिज		
XXVIII	263	(i) बड़े तथा मध्यम उद्योग	747.00	747.00
XXX	301	(ii) खनिज विकास	312.00	245.58
			1059.00	992 58
		परिवहन और संचार		
XXXI	314	(i) शहरी सड़कें	109.00	97 00
XXXII	316	(ii) सड़क परिवहन	495.00	393.72
XXXIII	317	(iii) नागर विमानन	40.00	34.13
			644 00	524.85
		समाज तथा सामुदायिक सेवायें		
XXXVI	345	(i) कला और संस्कृति	30.00	20.00
XXXVII	348	(ii) विज्ञान और तकनीकी	205.00	166 00
XXXVIII	357	(iii) नगर जलप्रदाय और मलवहन	734 00	511.00
XL	391	(iv) आवास	414.00	414.00
XLI	394	(v) पुलिस आवास	100.00	93.00
XLII	395-97	(vi) नगर विकास	223.00	223 00
XLIII	399	(vii) सूचना तथा प्रचार	14.00	14 00
XLIV		(viii) मजदूर और मजदूर कल्याण		
	403-407	मजदूर और मजदूर प्रशासन	17 76	17.76
	409-413	शिल्पी और ऐप्रेंटिस प्रशिक्षण	194 39	135.42
	415-418	रोजगार सेवा	11.65	12.61

जारी

1	2	3	4	5
XLV	421	(ix) पिछड़े वर्गों का कल्याण . . .	1719.71	1430.89
XLVI	447	(x) समाज कल्याण	75.00	51.50
XLVII	453	(xi) पोषण	582.00	463.00
			7745.01	6828.26
		अन्य		
XLVIII	456	(i) पर्यावरण सुरक्षा और विकास . .	3.00	3.00
XLIX	459	(ii) मूल्यांकन	2.50	3.15
L	460	(iii) सांख्यिकी आंकड़े . . .	18.00	9.11
LI	463	(iv) जन शक्ति प्रशिक्षण . . .	10.00	10.00
LII	465	(v) योजना मशीनरी . . .	14.00	13.80
LIII	468	(vi) भवन	90.70	95.78
LIV	469	(vii) मुद्रणालय	21.55	21.55
LV	471	(viii) स्वायत्त विकास प्राधिकरण . .	178.80	202.80
LVI	475	(ix) परियोजना प्रशासन . . .	125.00	185.00
LVII	481	(x) 20-सूत्री कार्यक्रम का प्रबोधन . .	4.00	4.00
			467.55	548.19
	कुल		8212.56	7376.45

नोट — (1) दस्तावेज में आवास के समक्ष परिव्यय नहीं दर्शाया गया था। यहां व्यय को ही परिव्यय के रूप में भी दर्शाया गया है।

(2) दस्तावेज में 5 सेक्टरों/कार्यक्रमों के समक्ष व्यय के आंकड़े नहीं दर्शाए गए थे। इन मामलों में यहां संशोधित परिव्यय को व्यय के रूप में दर्शाया गया है। ये 5 सेक्टर/कार्यक्रम ये हैं—(i) भण्डारण और भाण्डागार (ii) बड़े तथा लघु उद्योग, (iii) शहरी विकास, (iv) मजदूर और मजदूर प्रशासन और (v) पर्यावरण संरक्षण और विकास।

(3) इस विवरण में दर्शाए गए कुछ सेक्टर/कार्यक्रम जैसे नागरविमानन, पुलिस आवास, प्रिंटिंग प्रेस, इत्यादि आदिवासी विकास में शामिल किए जाने के लिए हकदार नहीं हैं।

अनुलग्नक

छठी योजना के दौरान केन्द्रीय मंत्रालयों द्वारा आदिवासी

मंत्रालय/विभाग का नाम	छठी योजना 1980-85		1980-81		1981-82	
	कुल परिव्यय	आदिवासी उपयोजना के लिए परिमाणन	कुल परिव्यय	आदिवासी उपयोजना के लिए परिमाणन	कुल परिव्यय	आदिवासी उपयोजना के लिए परिमाणन
1	2	3	4	5	6	7
1. कृषि और सहकारिता मंत्रालय .	83095.10	8069.10 (9.07)	15326.74	266.16 (1.73)	17779.52	754.33 (4.24)
2. वाणिज्य मंत्रालय . .	—	—	—	—	—	90.39
3. संचार मंत्रालय . . .	281000.00	16000.00 (5.70)	41842.37	2487.63 (5.94)	47088.57	3051.15 (6.47)
4. शिक्षा और संस्कृति मंत्रालय .	55872.00	3662.26 (6.55)	उ० नहीं	127.00	8436.50	463.43 (5.49)
5. खाद्य तथा नागरिक आपूर्ति मंत्रालय						
(i) खाद्य विभाग . .	—	—	—	—	—	—
(ii) नागरिक आपूर्ति विभाग .	3500.00	500.00 (5.71)	—	—	600.00	41.45 (6.90)
6. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय	36695.21	3745.48 (10.20)	8284.55	1009.44 (12.18)	10587.84	907.81 (8.57)
7. उद्योग विकास मंत्रालय . .	11600 00	930.00 (8.00)	उ० नहीं	131.10	उ० नहीं	133.10

7

उप योजना क्षेत्रों के लिए निधि की मात्रा नियत किया जाना

(रुपए लाख में)

	1982–83		1983–84		1984–85		
	कुल परिव्यय	आदिवासी उपयोजना के लिए परिमाणन	कुल परिव्यय	आदिवासी उपयोजना के लिए परिमाणन	कुल परिव्यय	आदिवासी उपयोजना के लिए परिमाणन	अभ्युक्ति
	8	9	10	11	12	13	14
	20141.05	1143.54 (5.67)	21069.35	1289.55 (6.12)	27185.21	1765.97 (6.5)	फसलोन्मुख कार्यक्रम, भूमि तथा जल संरक्षण, पशु चिकित्सा, डेरी विकास, मत्स्यपालन, वानिकी, सहकारिता
	—	74.19	—	—	—	—	आदिवासी क्षेत्रों में बादाम नर्सरी, बीजों की आपूर्ति, पौधों की सुरक्षा, पिछड़े हुए पर्वतीय भूखण्डों में काफी की खेती का उपकरण और विस्तार
	49722.61	3068.39 (6.21)	76000.00	4140.00 (5.45)	84550.00	4640.00 (5.49)	नए डाकघर खोलना, आदिवासी क्षेत्रों में डाकघर भवनों और क्वार्टरों का निर्माण
	10360.90	1104.55 (10.66)	9155.00	1222.75 (13.35)	13983.54	1533.40 (10.97)	स्कूल शिक्षा, विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, कला और संस्कृति
(1)	—	—	—	—	5500.00	345.00 (6.3)	
(2)	485.00	71.00 (14.63)	715.00	123.00 (17.20)	680.00	150.00 (22.10)	तिलहन के बीजों पेड़ों के तेल और वन मूल का विकास, ग्रामीण/आदिवासी क्षेत्रों में उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण के लिए सहकारी समितियों के लिए सीमान्त धन
	12430.32	1109.89 (8.92)	9993.58	977.71 (9.78)	13854.50	1160.93 (8.37)	मलेरिया, कोढ़, अन्धापन और तपेदिक नियंत्रण योजनाएं, आदिवासियों के लिए चिकित्सा अनुसंधान, आयुर्वेदिक, सिद्धा और यूनानी दवाई में सी० सी० आर०
	उपलब्ध नहीं	172.60	2394.00	193.50 (8.0)	16900.50	2813.70 (16.65)	जिला उद्योग केन्द्र, प्रायोगिक केन्द्र और क्षेत्र प्रायोगिक केन्द्र, उत्पादन और प्रक्रिया विकास केन्द्र, ई०डी०पी० व्यवस्था और प्रशिक्षण

1	2	3	4	5	6	7
8. सूचना और प्रसारण मंत्रालय .	24033.00	2028.69 (8.44)	—	57.76	—	94.07
9. सिंचाई मंत्रालय . .	—	—	उ० नहीं	16.70	उ० नहीं	89.00
10. श्रम मंत्रालय . . .	200.00	9.45 (4.8)	20.50	1.00 (4.87)	30.00	1.47 (4.90)
11. पुनर्वास विभाग . . .	—	—	—	—	—	—
12. ग्रामीण विकास विभाग . .	176000.00	33800.00 (+) (19.20)	44498.00	6713.00 (+) (15.08)	32797.00	6337.00 (+) (19.32)
13. जहाजरानी तथा परिवहन मंत्रालय . .	78850.00	12303.00 (9.50)	11400.00	1350.00 (11.84)	11940.00	1280.00 (10.72)
14. समाज कल्याण मंत्रालय . .						
(1) एकीकृत बाल वि० यो० } आदिवासी बाहुल क्षेत्रों के लिए	उ० नहीं	9885.00	उ० नहीं	544.00	उ० नहीं	767.00
(2) प्रौ० म० का० सा०* } आदिवासी बाहुल क्षेत्रों के लिए	उ० नहीं	237.00	उ० नहीं	237.00	उ० नहीं	300.00
कुल . . .	750845.31	91169.98 (12.10)	121372.16	12940.79 (10.66)	129259.43	14310.20 (11.06)

(कोष्ठक के आंकड़े कुल परिव्यय से आदिवासी उपयोजना निधि का प्रतिशत दर्शाते हैं)

@दृढ़ रूप से आदिवासी उपयोजना क्षेत्रों के लिए ही नहीं बल्कि इसमें उत्तर पूर्वी राज्यों के आदिवासी बाहुल क्षेत्र भी शामिल हैं।

+अजा और अजजा के संयुक्त आंकड़े शामिल हैं।

*प्रौढ़ महिलाओं के लिए कार्यात्मिक साक्षरता।

(लाख रु० में)

8	9	10	11	12	13	14
—	20244.00	5000.00	482.00 (9.64)	9640.00	541.59 (5.44)	आकाशवाणी, दूरदर्शन, क्षेत्रप्रचार, ड्रामा
—	—	—	—	—	—	भूमिगत पानी के लिए विदोहन
45.00	1.86 (4.13)	50.00	2.40 (4.8)	70.00	14.91 (21.3)	कर्मकारों की शिक्षा
—	3.73*	—	5.00	—	—	आदिवासी परिवारों को व्यवस्थित करने के लिए सहायता
38197.00	7757.00(+) (20.30)	41550.00	8613.00(+) (20.72)	—	—	ए० ग्रा० वि० कार्यक्रम, रा० ग्रा०रोज० कार्यक्रम, विशेष पशुपालन कार्यक्रम
13100.00	1364.00 (10.41)	15539.00	2041.00 (13.13)	18250.00	2334.00 (12.78)	आदिवासी क्षेत्रों में सड़कों का निर्माण
—	1110.00	—	2750.00	—	3600.00	आदिवासी बाहुल क्षेत्रों में योजना/ परियोजनाएं
—	460.00	—	535.00	—	540.00	
144481.88	17663.19 (12.23)	181457.93	22474.91 (12.38)	190613.75	19439.50 (10.20)	

*1981–82 और 1982–83 के लिए संयुक्त ।

(+) अ०जा० और अ०ज०जा० के लिए संयुक्त आंकड़े शामिल हैं ।

अनुलग्नक 8

छठी योजना के दौरान आदिवासी उपयोजना के चुने हुए क्षेत्रों में भौतिक उपलब्धियां

क्रम सं०	राज्य/कार्यक्रम	लक्ष्य	भौतिक उपलब्धियां
1	2	3	4
I	लघु सिंचाई के अधीन क्षेत्र (हैक्टेयर में)		
1.	आन्ध्र प्रदेश	—	2772
2.	असम	—	13800
3.	गुजरात	13990	14690
4.	हिमाचल प्रदेश . . .	1500	1772
5.	मध्य प्रदेश . . .	—	1107503
6.	महाराष्ट्र . . .	12720	12680
7.	मणिपुर	—	2710
8.	उड़ीसा	30512	39814
9.	राजस्थान	3876	1761*
10.	तमिल नाडु . . .	325	575
11.	त्रिपुरा	4730	3082
12.	उत्तर प्रदेश . . .	—	937
13.	पश्चिम बंगाल . . .	—	2287
II	दुधारू पशु (संख्याएं)		
1.	आन्ध्र प्रदेश	—	5791
2.	असम	1434	723
3.	गुजरात	32270	43057
4.	हिमाचल प्रदेश . . .	—	3600
5.	कर्नाटक	616	1153
6.	महाराष्ट्र	3436	1765
7.	तमिल नाडु . . .	15473	6736
8.	त्रिपुरा	1600	12800
9.	उत्तर प्रदेश . . .	100	210
III	वनरोपण (हैक्टेयर में)		
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	—	18504
2.	असम	522	2480
3.	बिहार	—	27014
4.	गुजरात	65416	55050
5.	हिमाचल प्रदेश . .	7660	3750
6.	मणिपुर	—	9915
7.	उड़ीसा	22500	24216
8.	तमिल नाडु . . .	8500	3909
9.	त्रिपुरा	13382	12450
10.	उत्तर प्रदेश . . .	25	41
11.	पश्चिम बंगाल . . .	—	75777
12.	अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह	308	216

(जारी)

1	2	3	4
IV	**जल आपूर्ति (गावों की संख्या)**		
1.	आन्ध्र प्रदेश	—	396
2.	असम	2636	988
3.	गुजरात	2210	1325
4.	हिमाचल प्रदेश . . .	139	115
5.	मध्य प्रदेश . . .	21257	20101
6.	मणिपुर	—	370
7	उड़ीसा . . .	7394	7394
8.	राजस्थान . . .	1650	2202
9.	तमिल नाडु . . .	610	370
10.	त्रिपुरा	1275	1239
11.	उत्तर प्रदेश	25	45
12.	अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह .	46	33
V	**अधिक उत्पादन की किस्म वाले क्षेत्र (हैक्टेयर में)**		
1.	आन्ध्र प्रदेश . .	—	35345
2.	असम	405000	258900
3.	बिहार	—	700000
4.	हिमाचल प्रदेश . . .	39000	41800
5.	मणिपुर	—	11400
6.	उड़ीसा	461200	492100
7.	राजस्थान	115150	73360
8.	तमिल नाडु	6932	7032
9.	त्रिपुरा	—	22000
10.	उत्तर प्रदेश	—	877
11.	अंडमान और नीकोबार द्वीप समूह	5610	3229
VI	**पुनः दिलाई गई भूमि (हैक्टेयर में)**		
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	—	23055
2.	बिहार	—	10313
3.	गुजरात	—	8893
4.	मध्य प्रदेश . . .	—	487
5.	उड़ीसा	—	2920
6.	तमिल नाडु . . .	—	536
7.	त्रिपुरा	—	1391.50
VII	**जिन गांवों में बिजली आ गई (संख्याएं)**		
1.	आन्ध्र प्रदेश	—	1025
2.	असम	739	651
3.	बिहार	—	2161
4.	गुजरात	811	519
5.	हिमाचल प्रदेश . . .	145	141
6.	कर्नाटक	185	114
7.	महाराष्ट्र . . .	—	4455

1	2	3	4
8.	मणिपुर	—	87
9.	उड़ीसा	6444	1971
10.	राजस्थान	520	1261
11.	तमिल नाडु . . .	101	.64
12.	त्रिपुरा	250	222
13.	उत्तर प्रदेश	7	23
14.	पश्चिम बंगाल . .	—	813
15.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह .	31	22
VIII	**भूमि संरक्षण के अधीन क्षेत्र (हैक्टेयर में)**		
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	—	24269.29
2.	असम	24200	15569
3.	हिमाचल प्रदेश . . .	1500	1300
4.	कर्नाटक	5186	2797.61
5.	मणिपुर	—	11340
6.	उड़ीसा	80000	73000
7.	राजस्थान . . .	10650	7555
8.	त्रिपुरा . . .	14500	14282
9.	तमिल नाडु . . .	1885	1206
10.	पश्चिमी बंगाल . . .	—	3875
IX	**उद्यान कृषि के अधीन क्षेत्र (हैक्टेयर में)**		
1.	आन्ध्र प्रदेश	—	11129
2.	असम	42500	28300
3.	हिमाचल प्रदेश . . .	2000	2683
4.	मणिपुर	—	1040
5.	उड़ीसा	16073.21	7307.30
6.	राजस्थान	1160	1158
7.	तमिल नाडु . . .	6932	8247
8.	त्रिपुरा	3940	622
9.	उत्तर प्रदेश	4	1.5
10.	अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह	565	471

अनुलग्नक 9

छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85) के लक्ष्य और 20–सूत्री कार्यक्रम की मद 7 (ख) के अधीन निर्धनता रेखा के नीचे के अनुसूचित जातियों के परिवारों को आर्थिक सहायता सम्बन्धी उपलब्धियां दर्शाने वाला विवरण पत्र

क्र०स०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	लक्ष्य (1980–85)	के दौरान उपलब्धियां					
			1980–81	1981–82	1982–83	1983–84	1984–85	1980–85 (कुल)
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	आन्ध्र प्रदेश	118000	9227	13092	56214	52166	69865	200564
2.	असम	200429	16519	48605	54619	71857	75954	267554
3.	बिहार	200000	*	*	109557*	123370	166548	399475
4.	गुजरात	350000	74784	76580	89048	85779	78904	405095
5.	हिमाचल प्रदेश	43749	4046	4737	16423	5372	5218	35796
6.	कर्नाटक	15500	3392	3397	5596	3299	9113	24797
7.	केरल	16000	2545	2545	4969	7091	6157	23307
8.	मध्य प्रदेश	618000	@	240747@	94515	254563	254515	844340
9.	महाराष्ट्र	497332	*	*	484039*	79601	93269	656909
10.	मणिपुर	22915†	*	*	7143*	13584	10429	31156
11.	उड़ीसा	514794	57285	83700	97673	118066	134239	490963
12.	राजस्थान	50000	11000	12662	53588	61081	67372	205703
13.	सिक्किम	4400†	@	1060@	2561	2400	1938	7959
14.	तमिलनाडु	19000	3000	3050	5621	5978	11235	28884
15.	त्रिपुरा	36338†	*	*	14335*	10738	18750	43823
16.	उत्तर प्रदेश	3100	500	650	4129	2598	3155	11032
17.	पश्चिम बंगाल	108275	@	41447@	91364	72867	72555	278233
18.	अण्डमान और निकोबार द्वीपसमूह	3700	*	*	6087*	810	896	7793
19.	गोवा, दमण और दीव	1500	150	272	931	897	976	3226
	कुल	2823032	182448	532544	1198412	972117	1081088	3966609

उपलब्धियों का प्रतिशत = 140 51%

*1980–81 1981–82 और 1982- 83 के लिये संयुक्त उपलब्धियां

@1980- 81 और 1981- 82 के लिये संयुक्त उपलब्धियां

†1982–83 1983–84 और 1984–85 के लिये लक्ष्य

अनुलग्नक 10

छठी योजना के दौरान गृह मंत्रालय के आदिवासी विकास प्रभाग द्वारा प्रायोजित अनुसन्धान/मूल्यांकन अध्ययन (जैसा दिसम्बर 1984 में बताया गया है)

क्र० सं०	संगठन का नाम	परियोजना का नाम
1.	लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली	एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं के प्रशासनिक ढांचे का मूल्यांकन अध्ययन
2.	सहकारी व्यवस्था वैकुंठ मेहता राष्ट्रीय संस्थान, पुणे	बिहार, गुजरात, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और राजस्थान में लैम्पस का मूल्यांकन अध्ययन
3.	मानवविज्ञान विभाग, रांची विश्वविद्यालय, रांची	@मध्य भारत की जनजातियों पर औद्योगीकरण का प्रभाव
4.	सामाजिक अध्ययन का केन्द्र, दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय कैम्पस, सूरत	आदिवासियों का विद्यालयों में नामांकन न होना, गैर हाजिरी, अपव्यय और गतिरोध—एक अन्तर्राज्यीय अध्ययन
5.	जिज्ञासु आदिवासी अनुसन्धान केन्द्र, जे-21, हौज खास, नई दिल्ली	विकास का सामाजिक सांस्कृतिक प्रभाव उड़ीसा की साओरा जनजाति पर प्रदर्शन
6.	सामाजिक अनुसन्धान और अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान, संस्थान कलकत्ता	वनों और पठारों की चेंचू जनजातियां—भोजन संग्रह करने वाली जनजातियों में विकास और प्रगति
7.	मानवविज्ञान विभाग, रांची विश्वविद्यालय, रांची	विश्वविद्यालय शिक्षा और आदिवासी समाज—एक सम्बन्धित दृष्टिकोण
8.	प्रगतिशील कृषि-औद्योगिक सलाहकार, चितरंजन पार्क, नई दिल्ली	उड़ीसा में विकास की आरम्भिक अवस्था से संबंधित चुने हुए क्षेत्रों में आदिवासी विकास के लिये उपयुक्त नीतियां
9.	अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसन्धान राष्ट्रीय परिषद, नई दिल्ली	रेशम की खेती के माध्यम से आदिवासी जनसंख्या का विकास
10.	मानवनृविज्ञान विभाग, रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर	*मध्य प्रदेश के दक्षिण-पूर्वी जिलों में औद्योगिकरण का प्रभाव
11.	भारतीय अर्थव्यवस्था संस्थान, हैदराबाद	एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम का मूल्यांकन
12.	गृह विज्ञान संकाय कालेज, बड़ौदा	गुजरात में सरकार और स्वयंसेवी अभिकरणों द्वारा आदिवासियों के लिये बनाये गये कार्यक्रमों और सेवाओं के उपयोग का एक अध्ययन शिशुओं और स्कूल जाने से पूर्व वाले बच्चों के विशेष संदर्भ में
13.	जिज्ञासु आदिवासी अनुसन्धान केन्द्र, नई दिल्ली	प्रवासी श्रमिकों का अध्ययन (बिहार और उड़ीसा)
14.	सामाजिक अनुसन्धान और कार्य एसोसिएशन, नई दिल्ली	@स्थाई व्यावसायिक शिल्पों की पहचान
15.	उत्तर बंगाल विश्वविद्यालय राजाराम मोहनपुर, दार्जिलिंग	@आदिवासी शिल्प—आदिवासियों के आर्थिक विकास के लिये उनके विकास की समस्याओं और संभावनाओं का अध्ययन
16.	हिमालय पर्यावरण अनुसन्धान और शिक्षा संस्थान, अल्मोड़ा	@भोटियाओं के कुटीर उद्योगों की अर्थव्यवस्था

@रिपोर्ट प्राप्त नहीं हुई हैं

*आंशिक रिपोर्ट प्राप्त हुई है

अनुलग्नक 11

आदिवासी विकास परियोजनाओं के लिये राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में प्रबोधन (मानीटरिंग) के प्रबन्ध

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	प्रबोधन के प्रबन्ध
1. आन्ध्र प्रदेश . .	मुख्य सचिव की अध्यक्षता में आदिवासी विकास के लिये राज्य स्तरीय समिति आवधिक रूप से आदिवासी कल्याण कार्यक्रम के कार्यान्वयन का पुनरावलोकन करती है। मुख्य मंत्री आदिवासी कल्याण कार्यक्रमों सहित सामान्य सेक्टर कार्यक्रमों के अधीन प्रगति का आवधिक पुनरावलोकन करते हैं। आदिवासी कल्याण के निदेशक जिला स्तर पर बैठकें आयोजित करके जिलों में आदिवासी विकास कार्यक्रमों की प्रगति का हर महीने पुनरावलोकन करते हैं। 20-सूत्री कार्यक्रम के अधीन उपलब्धियां योजना विभाग द्वारा प्रबोधित की जाती हैं। आदिवासी कल्याण के निदेशक, उस सीमा तक 20-सूत्री कार्यक्रमों की प्रगति का भी पुनरावलोकन करते हैं जिस सीमा तक आदिवासी कल्याण विभाग द्वारा निधि उपलब्ध कराई जाती है।
2. असम . .	मैदानी जनजातियों और पिछड़े वर्गों के कल्याण का विभाग अनुसूचित जनजातियों के लिये राज्य स्तर पर कार्यक्रमों का प्रबोधन करता है। परियोजना कार्यान्वयन समिति, परियोजना स्तर पर अध्यक्ष के रूप में उपायुक्त/उप खण्ड अधिकारी और सदस्यों के रूप में स्थानीय सेक्टर अधिकारियों और स्थानीय आदिवासी प्रतिनिधियों सहित योजना कार्यक्रमों का पुनरावलोकन करती है।
3. बिहार . .	वर्ष 1985-86 के दौरान रांची में शाखा सचिवालय में क्षेत्रीय विकास आयुक्त के अधीन एक प्रबोधन और मूल्यांकन एकक राज्य में एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम क्षेत्र में कार्यान्वित कार्यक्रमों का समुचित रूप से प्रबोधन और मूल्यांकन करने की दृष्टि से बनाया गया था।
4. गुजरात . .	आदिवासी क्षेत्र उपयोजना की योजना और प्रबोधन की व्यवस्था यथा निम्नलिखित है :— (1) आदिवासियों में अशान्ति के संभव कारणों के अध्ययन और साथ ही उसके लिए उपचारी उपाय सुझाने तथा साथ ही आदिवासियों के लिये आरम्भ किए गये विकास कार्यक्रमों के पुनरावलोकन के लिये मुख्य मंत्री की अध्यक्षता में एक समिति बनाई गई है। यह समिति जहां तक संभव होगा, हर महीने बैठक करेगी। (2) एक उच्च स्तरीय समिति जिसमें अध्यक्ष के रूप में मुख्य मंत्री और सदस्यों के रूप में संबंधित विभागों के मंत्री और सचिव हों, प्रगति को देखने और पुनरावलोकन करने के लिये बनाई गई है। यह समिति कम से कम वर्ष में एक बार मिलती है। (3) आदिवासी कल्याण के प्रभारी मंत्री की अध्यक्षता के अधीन जनजाति सलाहकार परिषद, जिसमें 12 विधान सभा सदस्य, सदस्य के रूप में होते हैं, आवधिक रूप से आदिवासी विकास की प्रगति का पुनरावलोकन करती है। (4) प्रत्येक विकासीय विभाग की विभागीय पुनरावलोकन समिति, आदिवासी विधान सभा सदस्यों के प्रतिनिधियों सहित आवधिक रूप से आदिवासी क्षेत्रों में विभिन्न योजनाओं के अधीन किए गए काम का, और आदिवासी क्षेत्र उपयोजना में दी गई निधियों के उपयोग का भी पुनरावलोकन करती है। (5) जिला स्तरीय समन्वय और सलाहकार समितियां जिसमें संसद सदस्य, विधान सभा सदस्य, आदिवासी पंचायत अध्यक्ष और चुने हुए आदिवासी नेता शामिल होते हैं, सामान्यतः तीन महीने में एक बार प्रगति का पुनरावलोकन करती है।

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	प्रबोधन के प्रबन्ध
	(6) निदेशकों की समिति जिसमें कलैक्टर, जिला विकास अधिकारी और परियोजना प्रशासक शामिल है, नियमित समयावधि में केन्द्रीय बजट के अधीन योजनाओं को स्वीकृत करती है और उनका पुनरावलोकन करती है। (7) एक परियोजना कार्यान्वयन समिति जिसमें परियोजना क्षेत्र के अधिकारी और गैर-अधिकारी शामिल है प्रत्येक एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना का मासिक पुनरावलोकन करती है। (8) परियोजना स्तर पर जनता की हिस्सेदारी को सूचीबद्ध करने के और प्रत्येक आदिम आदिवासी समूह परियोजना के लिए कार्यक्रम बनाए जाने और उनके कार्यान्वयन के लिये एक आदिम आदिवासी समूह परिषद बनाई गई है।
5. हिमाचल प्रदेश	आदिवासी उपयोजना कार्यक्रमों का मासिक पुनरावलोकन आरम्भ किया गया है। एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना स्तर पर परियोजना सलाहकार समिति द्वारा आदिवासी उपयोजना योजनाओं का और राज्य स्तर पर एक रूप से आदिवासी उपयोजना के लिये मुख्य सचिव द्वारा और उनके संबंधित विभागों के लिये प्रशासनिक सचिवों द्वारा तिमाही पुनरावलोकन किया जाता है। अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लिये उच्चस्तरीय समन्वयन और पुनरावलोकन समिति और जनजाति सलाहकार परिषद जिसकी अध्यक्षता मुख्य मंत्री द्वारा की जाती है, वे पुन: देखते हैं आदिवासी उपयोजना के कार्यान्वयन और उन दोनों निकायों की बैठक सामान्य रूप से वर्ष में दो बार होती है।
6. कर्नाटक	राज्य स्तर पर मुख्य मंत्री की अध्यक्षता में एक उच्चस्तरीय समिति तीन महीनों में एक बार विकास विभागों द्वारा कार्यान्वित कार्यक्रमों का पुनरावलोकन करने के लिए है। तालुका स्तर पर आदिवासी उपयोजना कार्यक्रमों का प्रत्येक महीने की 5 तारीख को पुनरावलोकन किया जाता है, और जिला स्तर पर उपायुक्त द्वारा हर महीने की 10 तारीख को इन पुनरावलोकनों पर आधारित सूचना हर महीने की 16 तारीख को होने वाली बैठक में सचिवों और विकास विभागों के प्रमुखों द्वारा मुख्य सचिव के सामने रखी जाती है।
7. केरल	योजना प्रबोधन और योजना विभाग का सूचना विभाग विभिन्न स्तरों पर पुनरावलोकन कार्य का समन्वय करता है। आदिवासी परियोजनाओं के कार्यान्वयन का मासिक पुनरावलोकन जिला कलैक्टरों, अनुसूचित जनजातियों के विकास के निदेशक और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के विकास विभाग के सचिव द्वारा किया जाता है। मुख्य मंत्री, आदिवासी परियोजनाओं सहित योजनाओं का भी तिमाही पुनरावलोकन करते ह।
8. मध्य प्रदेश	मुख्य मन्त्री की अध्यक्षता में एक मंत्रिमण्डलीय उप-समिति आदिवासी उपयोजना क्षेत्र में विभिन्न विभागों के प्रदर्शन का लेखा रखती है। जगदलपुर, रीवा, जबलपुर, बिलासपुर और इन्दौर में क्षेत्रीय अधीक्षण विकास प्राधिकरण विभिन्न विकासीय योजनायें, निधियों का प्रयोग और अन्य विभिन्न आयाम बनाते और प्रबोधित करते हैं। अन्य पुनरावलोकन समितियां, जैसे उच्चस्तरीय पुनरावलोकन समिति जिसमें मुख्य सचिव अध्यक्ष होता है और जिला स्तरीय सलाहकार बोर्ड, परियोजना कार्यान्वयन समिति ब्लाक स्तरीय निरीक्षण समिति भी क्रमश: राज्य जिला परियोजना और ब्लाक स्तरों पर विभिन्न विकासीय कार्यकलापों को भी देखती हैं।
9. महाराष्ट्र	जिला स्तर पर जिला योजना और विकास परिषद की विशेष कार्यकारी समिति जिसमें जिले का प्रभारी मंत्री अध्यक्ष के रूप में महीने में एक बार मिलता है और कार्यक्रमों का पुनरावलोकन करता है। जिला योजना और विकास परिषद की एक उप समिति कार्यक्रमों का प्रबोधन करती है। आयुक्त स्तर पर प्रबोधन कक्ष, आदिवासी विकास पर सूचना एकत्र करता है और उसकी संवीक्षा करता है।

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	प्रबोधन के प्रबन्ध
10. मणिपुर	जिला योजना अधिकारी योजना कार्यक्रमों को प्रबोधित करता है। एक पहाड़ी क्षेत्र समिति भी है जिसमें आदिवासी विकास के प्रभारी मंत्री सहित सभी आदिवासी विधान सभा सदस्य शामिल हैं। समिति पहाड़ी क्षेत्रों में हुए वास्तविक कार्यों की प्रगति का आवधिक पुनरावलोकन आयोजित करती है जो की राज्य में आदिवासी उप योजना क्षेत्रों के साथ समाप्त होते हैं।
11. उड़ीसा	हरिजन और आदिवासी कल्याण विभाग का प्रबोधन अनुभाग अनियमित रूप से योजनाओं के कार्यान्वियन का पुनरावलोकन करता है। एकीकृत आदिवासी विकास अभिकरणों के परियोजना प्रशासक वित्तीय और भौतिक उपलब्धियों की मासिक रिपोर्ट प्रबोधन अनुभाग को भेजते हैं। जिला स्तर पर कलैक्टर की अध्यक्षता में एक परियोजना स्तरीय समिति, परियोजना स्तर पर हुए विकास की प्रगति का पुनरालोकन करती है।
12. राजस्थान	कलैक्टर हर महीने कार्यक्रमों का पुनरावलोकन करता है। मुख्य सचिव दो महीने में एक बार कार्यक्रमों का पुनरावलोकन करता है। मंत्री, तिमाही पुनरावलोकन करते हैं। मुख्य मंत्री अर्द्ध वार्षिक रूप से प्रगति का पुनरावलोकन करते हैं। इसके साथ साथ आदिवासी क्षेत्र विकास विभाग के आयुक्त और सचिव भौतिक प्रगति का मासिक पुनरावलोकन और विभागीय क्षेत्र अधिकारियों के साथ तिमाही पुनरावलोकन करते हैं।
13. सिक्किम	मुख्य मंत्री प्रत्येक तिमाही में प्रगति की समीक्षा करते हैं। जिला समन्वय समिति के अध्यक्ष के रूप में मंत्री तथा सचिव के रूप में जिला कलैक्टर इसकी मासिक बैठकों में विकासीय क्रियाकलापों की प्रगति की समीक्षा करते हैं। अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति कल्याण विभाग की राज्य स्तर तथा जिला स्तर पर अधिकारियों का एक अतिरिक्त प्रबोधन कक्ष दे कर मजबूत किया गया है।
14. तमिलनाडु	प्रत्येक एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना में संबंधित कलैक्टर की अध्यक्षता में प्रत्येक वर्ष स्वीकृत की गई आदिवासी उप योजना स्कीमों की समीक्षा करने के लिये एक जिला आदिवासी विकास प्राधिकारी उप समिति होती है। राज्य स्तर पर आयुक्त तथा सरकार के सचिव, समाज कल्याण विभिन्न विभागों के कार्य का समन्वय करते हैं तथा मंजूरी आदेश अपने अपने विभाग के प्रमुख कार्य शीर्ष के अधीन उपशीर्ष के नामे डाले जाते हैं। सरकार के सचिव आदि द्रविड़ तथा आदिवासी कल्याण की मदद से प्रति माह योजना स्कीमों की समीक्षा करते हैं। प्रत्येक तीन महीने में एक बार योजना की समीक्षा तथा प्रबोधन करने और योजनाओं के उपयुक्त कार्यान्वियन की त्वरित कार्यवाही के लिये मुख्य मंत्री की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय समिति है। मुख्य मंत्री की अध्यक्षता में यहां पर एक राज्य स्तरीय "आदिवासी कल्याण प्राधिकरण" भी है जो प्रत्येक छमाही में एक बार मिलता है और उप योजना क्षेत्रों में आदिवासी लोगों के लिये स्वीकृत योजना स्कीमों की समीक्षा करता है। आदिवासी उप योजना स्कीमों के प्रबोधन के लिये अनुसन्धान सहायक का एक पद स्वीकृत किया गया है।
15. त्रिपुरा	राज्य स्तर पर मुख्य मंत्री की अध्यक्षता में राज्य योजना बोर्ड विभिन्न विकासीय कार्यक्रमों, विशेष रूप से लोगों के निर्बलस्तर वर्गों के लिये कार्यक्रमों के सन्दर्भ में कार्यान्वियन की प्रगति की समान्यतः वर्ष में दो बार समीक्षा करता है। योजना तथा समन्वय के आयुक्त और सचिव के नेतृत्व में राज्य योजना तन्त्र विभिन्न विभागों से प्रगति रिपोर्टें एकत्र करता है। मुख्य मंत्री नियमित अन्तराल पर आदिवासी कल्याण योजनाओं के कार्यान्वयन की प्रगति की समीक्षा करता है। मुख्य मंत्री की अध्यक्षता में आदिवासी परामर्श समिति जिसमें विधान सभाओं के सदस्य तथा अन्य गैर-सरकारी सदस्य शामिल हैं विभिन्न आदिवासी कल्याण कार्यक्रमों के कार्यान्वियन की समीक्षा करती है। आदिवासी कल्याण विभाग में प्रबोधन तथा मूल्यांकन कक्ष है। जिला कार्यालय में भी एक प्रबोधन कक्ष है।

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	प्रबोधन के प्रबन्ध
	जिला स्तर पर अनुसूचित जनजातियों के कल्याण निदेशक जिला आदिवासी कल्याण अधिकारियों और कभी कभी उपखंड आदिवासी कल्याण अधिकारियों के साथ मासिक समीक्षा बैठकें करते हैं। जिला मजिस्ट्रेट और कलैक्टर विकास विभाग के जिला स्तर के अधिकारियों, उप खण्ड अधिकारियों और विकास खण्ड अधिकारियों के साथ मासिक समीक्षा बैठकें करते हैं जिनमें आदिवासी कल्याण योजनाओं के कार्यान्वयन की प्रगति का पुनरावलोकन किया जाता है। खण्ड स्तर पर खण्ड विकास समिति जिसमें मुख्यतः निर्वाचित सदस्य अर्थात् विधान सभा सदस्य, क्षेत्र विकास समिति के सदस्य तथा प्रधान शामिल होते हैं। आदिवासी कल्याण योजनाओं के कार्यान्वयन की प्रगति की समीक्षा करने के लिये प्रति माह बैठक करते हैं। यह समिति पंचायतों की सिफारिशों पर विभिन्न योजनाओं के अधीन लाभभोगियों का अन्तिम रूप से चयन भी करती है।
16. उत्तर प्रदेश	परियोजना स्तर पर परियोजना अधिकारी ग्राम और समूह स्तर के कर्मचारों के साथ क्रमशः पाक्षिक और मासिक बैठकों में एकीकृत आदिवासी विकास कार्यक्रम योजनाओं की प्रगति का पुनरावलोकन और प्रबोधन करते हैं। इसकी बाबत वह जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता वाली परियोजना विकास समिति के अनुमोदन के लिये प्रति माह उसके सामने प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। राज्य स्तर पर अनुसूचित जनजाति विकास निगम का प्रबन्ध निदेशक परियोजना अधिकारियों की मासिक बैठकों में आदिवासी उपयोजना की प्रगति प्राप्त करता है और प्रबोधन करता है। अनुसूचित जनजाति विकास निगम का निदेशक बोर्ड प्रबन्ध मण्डल बोर्ड की बैठकों में आदिवासी उपयोजना कार्यक्रमों की तिमाही समीक्षा करता है। आदिवासी कल्याण निदेशक भी आदिवासी उपयोजना की प्रगति और कार्य की गुणवत्ता तथा दी गई निधियों के उपयोग का पुनरावलोकन और प्रबोधन करता है। सरकार के स्तर पर एक आदिवासी उपयोजना समिति है जिसमें कृषि उत्पादन आयुक्त वित्त तथा आयोजना विभाग, आदिवासी विकास और प्रबन्ध निदेशक और अनुसूचित जनजाति विकास निगम के प्रतिनिधि शामिल होते हैं। यह समिति हरिजन और समाज कल्याण विभाग के सचिव की अध्यक्षता में प्रगति का पुनरावलोकन और प्रबोधन करने के लिये अपनी बैठकें करती है। यह समिति मंत्रिमण्डलीय समिति के पास महत्वपूर्ण मामले भी भेजती है।
17. पश्चिम बंगाल .	राज्य सरकार ने पश्चिम बंगाल अनुसूचित जाति तथा जनजाति विकास और वित्त निगम के माध्यम से कार्यान्वित होने वाली योजनाओं के बारे में प्रबोधन कार्ड लागू किये हैं।
18. अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह	आदिवासी उप योजना कार्यक्रमों के कार्यान्वयन का प्रबोधन करने के लिये एक समिति कार्य करती है जिसमें अण्डमान और निकोबार प्रदेश परिषद का पार्षद (टी० डब्ल्यू०) अध्यक्ष होता है और विभिन्न विभागों/कार्यालयों के अध्यक्ष सदस्य होते हैं। यह समिति हर तिमाही में एक बार अपनी बैठक करती है। इसके अतिरिक्त, जिला स्तर पर उपायुक्त द्वारा एक मासिक बैठक में आदिवासी उपयोजना के कार्यान्वयन का पुनरावलोकन किया जाता है।
19. गोवा, दमण और दीव .	संघ राज्य क्षेत्र स्तर पर एक विशेष प्रबोधन समिति बनाई गई है जिसमें (ग्रामीण विकास) का सचिव अध्यक्ष होता है और कलैक्टर (दमण) और आदिवासियों का प्रतिनिधि सदस्य होते हैं और खण्ड विकास अधिकारी उसका संयोजक होता है। इस प्रबोधन समिति से तीन महीने में कम से कम एक बैठक करने की अपेक्षा की जाती है जिसमें वह दमण की आदिवासी उपयोजना के कार्य चालन की समीक्षा करती है। जिला स्तर पर कलैक्टर मासिक बैठक करता है और प्रगति का पुनरावलोकन करता है। इस के अतिरिक्त मुख्य सचिव और मुख्य मंत्री भी योजना की समीक्षा के लिए बैठक करते हैं।

अनुलग्नक 12

आदिवासी विकास के लिए वित्तीय प्रावधान करने और अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन का स्तर ऊंचा करने के लिए संवैधानिक उपबन्धों के कार्यचालन पर एक टिप्पण

संविधान के उपबन्धों के अधीन आदिवासियों के विकास और आदिवासी क्षेत्रों के अच्छे प्रशासन के लिए जिम्मेदारी राज्य और केन्द्र सरकार द्वारा वहन की जाती है। संघ सरकार द्वारा उपयुक्त निदेश जारी करने के लिए एक उपबन्ध किया गया है और विकास के कार्य की देखभाल के लिए तथा आवश्यक वित्तीय प्रावधान करने के लिए केन्द्रीय सरकार जिम्मेदार है। इस सीमा तक राज्य की कार्यपालिका शक्ति सीमित है। पिछले तीन दशकों में संविधान के इन उपबन्धों के अनुसरण में विकसित हुई आदिवासी विकास की योजना के अधीन तीन आधारभूत सिद्धान्त स्वीकार किए गए हैं--

(1) आदिवासी विकास को एक ऐसे व्यापक ढांचे के अन्दर ग्रहण किया जाना है जो प्रत्येक क्षेत्र अथवा व्यक्ति समूह के लिए उनकी विशिष्ट स्थिति को ध्यान में रखते हुए विशेष रूप से तैयार किया जायें।

(2) आदिवासी लोगों की समस्याओं की ओर विशेष ध्यान देने के लिए और यह सुनिश्चित करने के लिए कि उनके विकास के लिए उपयुक्त कार्यक्रम बनाए जाएं और उनके लिए पर्याप्त वित्तीय आबंटन किया जाए, हरेक राज्य और उस राज्य के क्षेत्र प्राधिकारी तथा केन्द्र जिम्मेदार होंगे।

(3) जहां उपर्युक्त सिद्धांत के अनुसरण में आदिवासी विकास के लिए आधारभूत निवेश राज्य योजना से दिए जाएंगें, वहीं राज्यों में आदिवासी विकास कार्यक्रमों के लिए आवश्यक सीमा तक पूरक निधि केन्द्र सरकार द्वारा दी जाएगी जो उन लाभों के अतिरिक्त होगी जो आदिवासी लोगों और आदिवासी क्षेत्रों को अन्य स्रोतों से प्राप्त होंगे।

2. यद्यपि संविधान के उपबन्धों के अधीन राज्य सरकार और संघ सरकार द्वारा आदिवासी विकास के संबंध में कोई विभाजन नहीं किया जा सका था तथापि. आदिवासी विकास के विशेष कार्यक्रमों के अधीन आदिवासी जनता का परिवेश केवल धीरे धीरे बढ़ाया गया है। चौथी पंचवर्षीय योजना के अंत तक आदिवासी जनता का लगभग 40 प्रतिशत भाग आदिवासी विकास खण्डों के अधीन शामिल किया गया था। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में इस परिवेश में आदिवासी जनसंख्या का लगभग 65 प्रतिशत भाग शामिल किया गया था क्योंकि ऐसे सभी क्षेत्रों के लिए पृथक योजनाएं बनाई गई थीं जिनमें 50 प्रतिशत से अधिक आदिवासी जनसंख्या थी। कुल राज्यों में आदिवासी जनसंख्या का परिवेश कम था क्योंकि उनके कार्यक्रम विस्तृत रूप से फैलाव वाले थे और बिखरे आदिवासियों के लिए तैयार किए गए थे जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि प्रत्येक राज्य में आदिवासी जनसंख्या का 40 प्रतिशत भाग शामिल किया जाए। यह परिकल्पना की गई थी कि आदिवासी विकास के गहन कार्यक्रमों का विस्तार दूसरे चरण में पूरे देश में बिखरे आदिवासियों पर किया जाए। तथापि, छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान यह परिवेश केवल सीमान्त रूप से बढ़ाया जा सका था। सरकार का यह निर्णय स्वागत के योग्य है कि सातवीं पंचवर्षीय योजना में देश की पूरी आदिवासी जनसंख्या को आदिवासी विकास की गहन योजनाओं के अधीन शामिल करने का निश्चय किया गया है।

3. पूरी आदिवासी जनसंख्या को शामिल करने के इस नीति निर्णय की पुष्टि कुछ महत्वपूर्ण प्रशासनिक उपायों द्वारा की जानी है। प्रथम रूप से, छठी योजना में आदिवासी विकास के लिए उपयोजना द्वारा समाविष्ट ऐसे लक्ष्य समूह के लिए आबंटन किए गए थे जिनमें संबंधित राज्यों की कुल आदिवासी जनसंख्या का 72.75 प्रतिशत शामिल था। विशेष केन्द्रीय सहायता की राशि छठी योजना के दौरान 485.50 करोड़ रुपए से बढ़कर सातवीं योजना में 756 करोड़ रुपए हो गई है जो 55.7 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाती है। यह वृद्धि उसी अवधि के दौरान राष्ट्रीय योजना के कुल परिव्यय में वृद्धि अर्थात् 80.6 प्रतिशत की वृद्धि से कम है। इसके अतिरिक्त यदि लक्ष्य समूह 72.75 प्रतिशत से बढ़ाकर 100 प्रतिशत के समावेश तक किया गया है तो विशेष केन्द्रीय सहायता से आबंटन भी आनुपातिक रूप से बढ़ाया जाना चाहिए था। ऐसी वृद्धि के अभाव में लाभभोगी समूहों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता की प्रति व्यक्ति राशि छठी योजना के 130.70 रुपए से बढ़कर सातवीं योजना में केवल 148.05 रुपए हुई है। यदि विशेष केन्द्रीय सहायता की राशि आदिवासी जनसंख्या के बढ़े परिवेश को शामिल करने के बाद और राष्ट्रीय योजना परिव्यय में सामान्य वृद्धि को भी ध्यान में रखते हुए तय की गई होती तो सातवीं योजना के दौरान प्रति व्यक्ति विशेष केन्द्रीय सहायता मात्र 148.05 रुपए की तुलना में 331.65 रुपए के लगभग होती। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह है कि इससे विशेष केन्द्रीय सहायता के कारण उद्देश्य के विचारों से आदिवासी विकास के लिए राशि में

55.4 प्रतिशत की कटौती हुई है। भारत सरकार इस असंगति को दूर करने के लिए विचार कर सकती है और विशेष केन्द्रीय सहायता से अधिक प्रावधान कर सकती है ताकि प्रति व्यक्ति पूरक राशि सातवीं योजना के दौरान देश के शेष भागों के बराबर हो जायें।

4. एक दूसरा महत्वपूर्ण प्रश्न राज्यों को विशेष केन्द्रीय सहायता के वितरण के आधार से संबंधित है। आदिवासी विकास के लिए विशेष संवैधानिक ढांचे की दृष्टि से केन्द्रीय सरकार द्वारा समान अंशदान का साधारण सूत्र लागू किए जाने योग्य नहीं है। संविधान में यह परिकल्पना की गई है कि आदिवासी विकास की पूरी आवश्यकता के लिए उपबंध किया जाएगा। इसके परिणामस्वरूप राज्यों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे योजनाओं पर विस्तृत विचार विमर्श के दौरान उप-योजनाओं के आकार निर्धारित करते समय राज्य योजनाओं से अधिकतम अंशदान करें। इस संबंध में उनके पास कोई विकल्प नहीं है। विशेष केन्द्रीय सहायता राज्यों के प्रयासों के लिए पूरक के रूप में दी जाती है और इसके लिए राज्यों की हकदारी संबंधित वर्ष में राज्य योजना के कुल मिलाकर परिव्यय से ऊपर और अधिक व्यय से संबंधित है और कुल अधिकतम सीमा की शर्त के अधीन होता है जो विशेष केन्द्रीय सहायता के बारे में उन्हें बताई जाती है। विशेष केन्द्रीय सहायता मोटे तौर से तीन भागों में विभक्त की जाती है, अर्थात् आदिम आदिवासी समुदायों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता, बिखरी आदिवासी जनसंख्या वाले राज्यों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता और क्षेत्रों पर आधारित आदिवासी उपयोजनाओं वाले राज्यों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता। इस अन्तिम श्रेणी के राज्यों के मामले में जिनमें सभी बड़े आदिवासी राज्य शामिल हैं यह सहायता जिन आधारों पर निर्धारित की जाती है वे हैं--(1) आदिवासी उपयोजना क्षेत्र में आदिवासी जनसंख्या, (2) आदिवासी उपयोजना का भौगोलिक क्षेत्र और (3) उस राज्य की प्रति व्यक्ति कुल आय। अतः इससे यह स्पष्ट है कि यदि सातवीं योजना के दौरान पूरी आदिवासी जनसंख्या समाविष्ट की जाती हैं तो उसे केन्द्रीय सरकार द्वारा अतिरिक्त निधियों से पुष्ट किया जाना है। यदि आन्ध्र प्रदेश जैसे राज्यों को आबंटन आदिवासी उप-योजना क्षेत्र में आदिवासी जनसंख्या के आधार पर किया गया है तो इस निर्णय से कि इस सहायता का प्रयोग बिखरे आदिवासी समुदायों के लिए कार्यक्रमों में भी किया जा सकता है, इस बात की जरूरत कम हो जाएगी कि इसका लेखा रखने की जिम्मेदारी महालेखाकार द्वारा वहन की जाए और इस प्रकार व्यय का लेखाजोखा स्वचालित हो जाता है।

हस्ता०

(ब्रह्म देव शर्मा)

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त

25 जुलाई 1986

(अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त की ओर से डॉ० श्रीमती राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी, कल्याण राज्य मंत्री, भारत सरकार को भेजे गए अ० शा० पत्र सं० 34/22/86-अनु० ए०-2, दिनांक 25-7-86 का संलग्नक)

अनुलग्नक 13

आदिवासी उपयोजना के अधीन जिन योजनाओं को विशेष केन्द्रीय सहायता दी जा सकती है उनके दृष्टान्त की सूची

(कल्याण मंत्रालय के दिनांक 18–9–85 के पत्र संख्या 11036/1/85–टी० डी० (जी०) द्वारा परिचालित)

परिवारोन्मुख एवं आय उत्पन्न करने वाली योजनाएं

क्र० सं०	योजना का नाम
1	2

1. कृषि

(क) आदिवासी किसानों का प्रशिक्षण एवं निर्देशन ।

(ख) आदिवासी परिवारों को कृषि विभाग के अन्य सामान्य कार्यक्रमों के अतिरिक्त बीज, खाद, छोटे औजार और कीटनाशकों का वितरण ।

(ग) आदिवासी किसानों के खेतों में व्यावसायिक फसल कार्यक्रम ।

(घ) कृषि विभाग के सामान्य कार्यक्रम सहित आदिवासी किसानों के खेतों में अधिक उपज देने वाले विभिन्न कार्यक्रम ।

(ङ) आदिम आदिवासी क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा खेतों सहित भूमि का विकास ।

2. उद्यान कृषि

(क) आदिवासी लाभभोगी परिवारों में फलों तथा सब्जियों की खेती आरम्भ करना ।

(ख) आदिवासियों को सब्जियों और फलों की फसलें उगाने, पकाने और विपणन करने के लिए प्रशिक्षण ।

(ग) उपर्युक्त कार्यक्रमों से प्रासंगिक, छोटी पौधघर और बीज फार्म ।

3. भूमि सुधार

(क) आदिम जनजातियों के लिए भूमि अभिलेख तैयार करना ।

1	2

(ख) आदिवासियों को पुन: वापिस दिलाई गई भूमियों पर खेती करने के लिए सहायता ।

4. लघु सिंचाई

(क) आदिवासी समूहों/समुदायों के लिए नियन्त्रण बांध, मार्गों की दिशा बदलना, पानी की फसलों के ढांचे, कूएं खोदना, नलकूप लगाना, सहकारी उत्थान कार्यक्रम ।

(ख) कूएं खोदने, नलकूप लगाने, सिंचाई के पंप सैटों, फार्म तालाबों के अधीन लाभभोगियों को सहायिकी/सहायता ।

5. भूमि संरक्षण

आदिवासी भूमियों में भूमि संरक्षण के उपायों के एक अंग के रूप में खाद्यान्नों और फलों की किस्मों की फसल रोपण ।

6. पशु पालन

(क) आदिवासियों को दुधारू पशुओं, मुर्गियों, बकरी, भेड़, सूअर, और बतखों का प्रदाय किया जाना ।

(ख) आदिवासी क्षेत्रों में पर्याप्त आदिवासी सदस्यों वाली डेरी और मुर्गी सहकारी समिति को सहायता ।

7. वन

(क) आदिवासी क्षेत्रों में लघु वन रोपण ।

(ख) लघुवन उत्पाद एकत्र करने और विपणन में लगी समितियों को अनुदान ।

(ग) लघुवन उत्पाद सहकारी समितियों को सहायता ।

(घ) लैम्पस टी० डी० सी० सी० और अन्य आदिवासी सहकारी समितियों के माध्यम से आरंभ किए गए लघु वन उत्पाद कार्य प्रक्रिया एकक ।

1	2

(ङ) टी० डी० सी० सी०/आदिवासी सहकारी समितियों के माध्यम से वन आधारित लघु उद्योगों की स्थापना ।

8. **शिक्षा**

(क) आदिवासी क्षेत्रों में आवासीय स्कूलों की स्थापना ।

(ख) आदिवासी क्षेत्रों में स्कूलों पर निरीक्षण और उनके सुधार को और सुदृढ़ बनाना ।

9. **सहकारिताएं**

(क) नई सहकारी समितियां लैम्पस बनाना और वर्तमान वालों को सुदृढ़ बनाना ।

(ख) सहकारी समितियों/लैम्पस के सदस्यों के रूप में आदिवासी परिवारों के 100 प्रतिशत नामांकन के लिए सदस्यों को सहायिकी ।

(ग) उपभोक्ता सहकारी समितियों, श्रम सहकारी समितियों और अन्य सहकारी समितियों को सुदृढ़ बनाना जिनमें आदिवासी सदस्यों का पर्याप्त प्रतिशत है ।

(घ) आदिवासी क्षेत्रों के प्राकृतिक उत्पादनों के लिए कार्य प्रक्रिया/विपणन सहकारी समितियां ।

(ङ) आदिवासी उत्पाद के संग्रहण, कार्य प्रक्रिया और विपणन के लिए लैम्पस टी० डी० सी० सी० को कार्यकारी पूंजी की सहायता ।

(च) लैम्पस/टी० डी० सी० सी०/आदिवासी क्षेत्र सहकारी समितियों में काय कर रहे कार्मिकों को आदिवासी उत्पाद के विपणन, प्रबन्ध और कार्य प्रक्रिया में प्रशिक्षण देना ।

10. **मत्स्यपालन**

(क) आदिवासी परिवारों को मत्स्य संवर्धन सहायता ।

1	2

(ख) आदिवासी परिवारों को मत्स्यपालन के लिए सहायता ।

(ग) आदिवासियों को मछली उत्पादन, संग्रहण इत्यादि में प्रशिक्षण ।

(घ) आदिवासी मछुआरों की सहकारी समितियों का विकास ।

11. **ग्रामीण और लघु उद्योग**

(क) व्यापार तथा छोटे और कुटीर उद्योग आरंभ करने के लिए आदिवासी कारीगरों/शिल्पकारों को सहायता ।

(ख) आदिवासी शिल्पों के प्रशिक्षण तथा उत्पादन केन्द्र ।

(ग) कारीगर सहकारी समितियों को विपणन तथा आदिवासी शिल्पों और शिल्प उत्पादों के सुधार आरंभ करने के लिए सहायता ।

(घ) मधुमक्खी पालन ।

(ङ) रेशम की खेती ।

(च) आदिवासी कलाओं और शिल्पों की उपयुक्तता का सर्वेक्षण ।

(छ) आदिवासी परिवारों में नए शिल्प कार्यक्रम आरंभ करना ।

12. **न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम**

(क) गांवों को जोड़ने वाली सड़कों और छोटे सामुदायिक कार्यों का विकास ।

(ख) स्वास्थ्य: (क) औषधालयों/अस्पतालों/होम्योपैथिक, प्रकृति द्वारा इलाज केन्द्र और यौगिक इलाज ।
(ख) आदिवासी क्षेत्रों में दवाई के लिए जड़ी बूटियों के संग्रहण और कार्य–प्रक्रिया केन्द्रों की स्थापना ।

1	2
	(ग) आदिवासी स्कूलों और होस्टलों में पीने के पानी की सुविधाएं ।
13. परियोजनाओं द्वारा विस्थापित आदिवासी	व्यापार आरंभ करने के लिए विस्थापित आदिवासियों को सहायता ।
14. औद्योगिक प्रभाव के क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी	औद्योगिक प्रभाव के क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों के लिए स्व-रोजगार योजनाएं ।

1	2
15. आदिवासी महिलाएं	(क) उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन और विपणन के लिए आदिवासी महिलाओं और उनकी सहकारी समितियों को सहायता ।
	(ख) आदिवासी महिलाओं को उन योजनाओं में प्रशिक्षण जो परिवार की आय बढ़ाने के लिए बनाई गई हैं ।
16. पारिस्थितिकी और पर्यावरण	पारिस्थितिकी और पर्यावरण को सुधारने के कार्यक्रम जिनका रूप परिवारोन्मुख आर्थिक कार्यक्रमों का हो ।

अनुलग्नक

सातवीं योजना में आदिवासी उपयोजना (राज्य योजनाएं और विशेष केन्द्रीय सहायता) और वर्ष आबंटन और किए गए व्यय को

क्र० सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	सातवीं योजना (1985-90)						1985-86 (आबंटन)		
		अ० जा० जनसंख्या का प्रतिशत 1981 जनगणना	कुल राज्य योजना परिव्यय	आदिवासी उपयोजना को दी गई राशि	स्तंभ 5 का स्तंभ 4 से प्रतिशत	विशेष केंद्रीय सहायता परिव्यय	आदिवासी योजना का कुल परिव्यय	राज्य योजना से ली गई राशि	दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता	कुल आदिवासी उप-योजना
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1.	आन्ध्र प्रदेश . .	5.93	5200	216.56	4.16	36.54	253.10	32.61	7.40	40.01
2.	असम . .	10.99	2100	228.94	10.90	31.92	260.86	46.11	6.32	52.43
3.	बिहार . .	8.31	5100	1239.68	24.31	95.89	1335.57	194.13	19.65	213.78
4.	गुजरात . .	14.22	6000	540.01	9.00	56.51	596.52	84.73	11.27	96.00
5.	हिमाचल प्रदेश .	4.61	1050	120.39	11.47	10.14	130.53	18.06	2.05	20.11
6.	कर्नाटक . .	4.91	3500	78.69	2.25	5.03	83.72	4.30	1.48	5.78
7.	केरल . .	1.03	2100	43.12	2.05	3.13	46.25	7.84	0.70	8.54
8.	मध्य प्रदेश . .	22.97	7000	1298.70	18.55	199.07	1497.77	201.47	39.70	241.17
9.	महाराष्ट्र . .	9.19	10500	525.04	5.00	45.17	570.21	89.71	9.51	99.22
10.	मणिपुर . .	27.30	430	169.26	39.36	12.51	181.77	26.13	2.53	28.66
11.	उड़ीसा . .	22.43	2700	1048.94	38.85	93.13	1142.07	149.52	19.15	168.67
12.	राजस्थान . .	12.21	3000	200.43	6.68	47.25	247.68	61.72	9.10	70.82
13.	सिक्किम . .	23.27	230	29.38	12.77	1.77	31.15	0.30	0.39	0.69
14.	तमिलनाडु . .	1.07	5750	50.35	0.88	6.76	57.11	67.62	1.46	69.08
15.	त्रिपुरा . .	28.44	440	152.70	34.70	10.81	163.51	31.27	2.50	33.77
16.	उत्तर प्रदेश . .	0.21	10447	10.00	0.10	0.90	10.90	1.57	0.28	1.85
17.	पश्चिमी बंगाल .	5.63	4125	211.63	5.13	28.33	239.96	24.93	6.16	31.09
18.	अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह . .	11.85	285	34.00	11.93	0.79	34.79	3.54	0.30	3.84
19.	गोवा, दमण और दीव .	0.99	360	1.81	0.50	0.35	2.16	0.40	0.05	0.45
	कुल . .		70317	6199.63	8.82	686.00 +70.00*	6955.63	1045.96	140.00	1185.96

*इस योजना अवधि के लिए 70 करोड़ रुपए की आरक्षित राशि का प्रावधान किया गया था।

14

1985-86 और 1986-87 के दौरान
दर्शाने वाला विवरणपत्र

(रुपए करोड़ में)

क्र० सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	1985-86 (व्यय) राज्य योजना से दी गई राशि	विशेष केन्द्रीय सहायता	कुल आदिवासी उपयोजना (12+13)	1986-87 (आबंटन) राज्य योजना से दी गई राशि	दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता	कुल आदिवासी उपयोजना (15+16)	1986-87 (व्यय) राज्य योजना से दी गई राशि	विशेष केन्द्रीय सहायता	कुल आदिवासी उपयोजना (18+19)
1	2	12	13	14	15	16	17	18	19	20
1.	आन्ध्र प्रदेश . .	25.39	8.03	33.42	50.09	8.50	58.59	39.79	10.79	50.58
2.	असम . .	45.12	4.93	50.05	56.27	7.11	63.38	57.23	6.89	64.12
3.	बिहार . .	216.03	18.62	234.65	259.49	20.66	280.15	258.73	14.40	273.13
4.	गुजरात . .	92.77	11.27	104.04	101.39	12.47	113.86	102.48	12.47	114.95
5.	हिमाचल प्रदेश .	14.67	1.99	16.66	18.45	2.42	20.87	18.96	2.25	21.21
6.	कर्नाटक . .	4.40	1.42	5.82	10.27	1.16	11.43	8.98	1.30	10.28
7.	केरल . .	6.26	0.70	6.96	6.33	0.78	7.11	7.97	0.72	8.69
8.	मध्य प्रदेश . .	201.94	31.81	233.75	242.76	44.00	286.76	243.22	47.02	290.24
9.	महाराष्ट्र . .	104.55	10.29	114.84	113.50	10.72	124.22	100.45	9.15	109.60
10.	मणिपुर . .	21.29	2.53	23.82	27.19	2.81	30.00	27.96	2.81	30.77
11.	उड़ीसा . .	138.47	18.97	157.44	167.58	21.74	189.32	158.93	21.74	180.67
12.	राजस्थान . .	64.36	8.80	73.16	82.34	10.20	92.54	84.49	10.05	94.54
13.	सिक्किम . .	0.30	0.39	0.69	3.43	0.39	3.82	3.43	0.37	3.80
14.	तमिलनाडु . .	6.54	1.45	7.99	7.66	1.62	9.28	8.53	1.56	10.09
15.	त्रिपुरा . .	27.77	2.66	30.43	33.62	2.64	36.26	36.02	2.39	38.41
16.	उत्तर प्रदेश . .	1.37	0.22	1.59	1.59	0.31	1.90	1.21	0.18	1.39
17.	पश्चिमी बंगाल .	24.23	6.17	30.40	25.29	7.01	32.30	23.87	7.02	30.89
18.	अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह . .	1.34	0.24	1.58	17.98	0.40	18.38	5.15	0.25	5.40
19.	गोवा, दमण और दीव . .	0.31	0.05	0.36	0.44	0.06	0.50	0.50	0.05	0.55
	कुल . .	997.11	130.54	1127.65	1225.67	155.00	1380.67	1187.90	151.41	1339.31

अनुलग्नक 15

आदिवासी प्रशासन के उन्नयन के लिए आठवें वित्तीय आयोग के निर्णय के कार्यान्वयन की प्रगति

(रुपए लाख में)

क्र० सं०	राज्य	अंतर मंत्रालय की अधिकृत समिति द्वारा यथा स्वीकृत					31-3-88 तक अंतर मंत्रालय अधिकृत समिति द्वारा स्वीकृत कुल परिव्यय	वर्ष 1985–88 के दौरान वित्त मंत्रालय द्वारा दी गई राशि
		प्रतिकर भत्ता	आवासीय क्वाटर		आदिवासी गांवों के लिए अवस्थापना			
		परिव्यय	क्वाटरों की संख्या	परिव्यय	गांवों की संख्या	परिव्यय		
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	आन्ध्र प्रदेश	*	684	347.28	65	325.00	672.28	518.37
2.	असम	125.52	281	146.40	37	185.00	456.92	198.84
3.	बिहार	300.72	1568	627.20	157	785.00	1712.92	847.32
4.	हिमाचल प्रदेश	*	62	42.16	5	25.00	67.16	43.02
5.	केरल	**	73	38.16	3	15.00	53.16	39.13
6.	मध्य प्रदेश	568.80	1952	858.80	419	1070.00	2497.60	1548.33
7.	मणिपुर	48.00	133	69.16	13	58.28	175.44	104.49
8.	उड़ीसा	276.96	1842	715.20 +21.60@	184	920.00	1933.76	1010.10
9.	राजस्थान	कार्य योजना अभी तक प्राप्त नहीं	419	167.60	42	210.00	377.60	226.56
10.	सिक्किम	कोई राशि नहीं	4	2.60	1	0.86	3.46	4.94
11.	त्रिपुरा	128.40	44	22.88	5	25.00	176.28	29.61
12.	उत्तर प्रदेश	9.12	4	1.60	1	5.00	15.72	3.96
13.	पश्चिम बंगाल	107.76	292	141.48 +25.32@	42	210.00	484.56	217.22
	कुल	1565.28	7358	3227.44	974	3834.14	8626.86	4791.89

*प्रावधान आवासीय क्वार्टरों के लिए दे दिया गया क्योंकि राज्य सरकार की अपनी योजना है।

**प्रावधान आवासीय क्वार्टरों के लिए दे दिया गया था। राज्य सरकार ने योजना को पुनर्जीवित करने का अनुरोध किया था।

@स्टाफ क्वाटरों को पूरा करने के लिए सातवें वित्तीय आयोग के निर्णय से आरम्भ हुआ।

अनुलग्नक 16

आदिम आदिवासी समूहों के लिए दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता

(रुपए लाख में)

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	समुदायों की सं० जिन्हें आदिवासी जातियों के रूप में पहचाना गया है	परिवारों की सं० (लगभग)	दी गई विशेष केन्द्रीय सहायता		
			छठी योजना	1985-86	1986-87
1	2	3	4	5	6
1. आन्ध्र प्रदेश . .	12	21,563	184.64	54.00	59.79
2. बिहार . . .	9	11,809	207.08	56.00	62.00
3. गुजरात . . .	5	12,101	72.30	10.00	11.07
4. मध्य प्रदेश . .	6	103,362	439.62	110.00	121.79
5. महाराष्ट्र . .	3	40,622	193.88	55.00	60.90
6. उड़ीसा . . .	12	36,144	224.08	55.00	60.90
7. मणिपुर . . .	1	908	10.70	5.00	5.54
8. कर्नाटक . .	2	2,652	19.68	5.00	5.54
9. केरल . . .	5	251	39.24	8.00	8.86
10. राजस्थान . .	1	7,000	74.03	8.00	8.85
11. तमिल नाडु . .	6	4,000	49.38	12.00	13.29
12. त्रिपुरा . . .	1	12,935	70.60	16.00	17.72
13. उत्तर प्रदेश . .	2	2,074	24.14	10.00	11.07
14. पश्चिमी बंगाल . .	3	9,378	75.70	25.00	27.68
15. अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह	5	102	119.55	18.00	25.00
कुल . . .	73	264,901	1804.62	447.00	500.00

अध्याय 7

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए निर्धनता निवारण कार्यक्रम

निर्धनता रेखा

निर्धनता रेखा तथा तीन श्रेणियों "सर्वाधिक निर्धन", "अधिक निधन" तथा "निर्धन" जिन्हें सातवीं पंचवर्षीय योजना में सहायता पहुंचाई जानी है, की परिभाषा पांचवे अध्याय के पैरा 16 में पहले ही दी जा चुकी है। प्रथम दो श्रेणियों के परिवारों का काम पूरा कर लेने के बाद ही अन्तिम श्रेणी के परिवारों का काम हाथ में लिया जाना है। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास से संबंधित सातवीं योजना के कार्यकारी दल के अनुसार निम्नलिखित रूप में अनुसूचित जातियों के 150 लाख परिवारों तथा जनजातियों के 85 लाख परिवारों को निर्धनता रेखा से ऊपर उठाने के लिए सहायता दी जानी अपेक्षित होगी—

		अनुसूचित जातियां	अनुसूचित जनजातियां
(क)	सातवीं योजना के दौरान सहायता दिए जाने वाले नए परिवारों की संख्या	53 लाख	40 लाख
(ख)	ऐसे परिवारों की संख्या जिन्हें छठी योजना के दौरान सहायता पहुंचाई गई तथा निर्धनता रेखा पार करने के लिए पूरक सहायता की आवश्यकता है।	73 लाख	उ०न०
(ग)	ऐसे परिवारों की संख्या जिन्होंने निधनता रेखा छठी योजना के दौरान पहले ही पार कर ली है परन्तु सातवीं योजना के दौरान पिछली पूर्ति के लिए सहायता की आवश्यकता है।	24 लाख	उ०न०
		150 लाख	40 लाख

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम

2. यह कार्यक्रम ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा लघु कृषक विकास अभिकरणों, सूखा प्रवृत्त क्षेत्र कार्यक्रम तथा कमांड क्षेत्र विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत आने वाले 2000 विकास खंडों में 1978-79 में आरम्भ किया गया था। अक्तूबर 1980 से इस कार्यक्रम में देश के सभी 5,011 विकास खंड शामिल कर लिए गए थे। उसी तारीख से लघु कृषक तथा सीमांत कृषक विकास अभिकरणों के चल रहे कार्यक्रमों को एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम में विलय कर लिया गया था। प्रत्येक वर्ष में प्रति विकास खंड औसत रूप से निर्धनता रेखा के नीचे के 600 परिवारों को सहायता पहुंचाने का लक्ष्य था। इस प्रकार छठी योजना की अवधि में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रत्येक विकास खंड में 3,000 परिवारों को निर्धनता रेखा से उपर लाना था। पूरे देश में एक वर्ष में लगभग तीस लाख परिवारों का समावेश किया जाना था। छठी योजना का लक्ष्य निर्धनता रेखा से उपर का जीवन स्तर प्राप्त करने के लिए कम से कम 150 लाख परिवारों को मदद पहुंचाना था।

3. छठी योजना की अवधि में इस कार्यक्रम के अधीन 1,500 करोड़ रुपए का आवंटन किया गया था। यह राशि केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा बराबर बराबर दी जानी थी। योजना परिव्यय में आधारभूत रूप से एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लिए सहायिकी और अनिवार्य संरचना आधार के विकास तथा प्रशासनिक लागत के लिए व्यय का प्रतिपादन किया गया था। इस कार्यक्रम के लिए बैंकिंग क्षेत्र द्वारा पर्याप्त ऋण सहायता दी जानी थी। छठी योजना की अवधि के दौरान इस कार्यक्रम के लिए कुल लगभग 3,000 करोड़ रुपए के ऋण की आवश्यकता थी। एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लाभभोगियों को छोटे कृषकों के लिए परियोजना की पूंजी लागत के 25% की दर से और अन्य सभी श्रेणियों के लिए उसके $33\frac{1}{3}\%$ की दर से सहायिकी अनुदान उपलब्ध कराया गया था। तथापि जनजाति के लाभभोगी 50% के सहायिकी अनुदान के लिए हकदार थे। साधारण क्षेत्रों में एक अकेला परिवार 3,000 रुपए की सीमा तक सूखा प्रवृत्त क्षेत्र कार्यक्रम क्षेत्रों में 4000 रुपए की सीमा तक सहायिकी प्राप्त कर सकता था परन्तु एक आदिवासी लाभभोगी 5,000 रुपए की सीमा तक सहायिकी प्राप्त कर सकता था। स्थायी और विश्वसनीय आर्थिक कार्यकलापों के लिए सहायता दी गई थी। जैसे कृषि, पशुपालन, लघु सिंचाई, बुनाई, मत्स्य पालन, लघु तथा कुटीर उद्योग और किसी ऐसे आर्थिक धंधे के लिए जिससे लक्षित परिवारों की आय में वृद्धि होने की संभावना थी।

4. इस कार्यक्रम के अन्तगत सहायता प्रदान करने के लिए लाभभोगियों की पहचान परिवारों के सर्वेक्षण के आधार पर की गई थी। ये सर्वेक्षण सुसंगत मार्गनिर्देशों के अनुसार

ब्लाक अधिकारियों तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा किए जाने थे। सहायता प्रदान करने के लिए चुने गए लक्षित समूहों के परिवारों का सर्वेक्षण करके उनकी आय के आधार पर उनका वर्गीकरण किया जाना था। इस कार्यक्रम के मार्गनिर्देशों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के परिवारों को शामिल करने पर विशेष बल दिया गया था। कार्यक्रम के आरम्भ में यह व्यवस्था की गई थी कि प्रत्येक ब्लाक में सहायता प्रदान करने के लिए चुने गए परिवारों में से कम से कम 20 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के होने चाहिए। यह भी विहित किया गया था कि सहायिकी, ऋण आदि का कम से कम 20 प्रतिशत अनुसूचित जातियों/जनजातियों के परिवारों को मिलना चाहिए। 1981-82 से इस कार्यक्रम के अन्तर्गत शामिल किए जाने के लिए अनुसूचित जातियों/जनजातियों के परिवारों का न्यूनतम लक्ष्य 20% से बढ़ाकर 30% कर दिया गया था। जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों से भी यह अपेक्षा की गई थी कि वे यह सुनिश्चित करें कि सहायिकी तथा ऋणों के रूप में निवेशित सभी संसाधनों का कम से कम 30 प्रतिशत भाग अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लाभभोगियों के लिए मंजूर किया जाए। केन्द्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों से अनुरोध किया गया था कि जहां व्यावहारिक हो उस से भी अधिक विस्तार के लिए प्रयत्न किया जाए।

5. छठी योजना में यह महसूस किया गया कि एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा अन्य निर्धनता निवारण कार्यक्रमों के लाभभोगियों में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लाभभोगियों का अनुपात तथा इन समुदायों को मिलने वाले भौतिक और वित्तीय लाभों का अनुपात कुल जनसंख्या में उनके प्रतिशत के साथ संबंधित नहीं होना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी जनसंख्या का प्रतिशत, जो एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम से सुसंगत था देश की कुल जनसंख्या में उनके प्रतिशत से अधिक था। परन्तु यह संख्या भी खेतीहर मजदूरों में उनके अधिक बड़े अनुपात से कहीं कम थी। बंधुआ मजदूरों की अनुमानित संख्या का एक बड़ा भाग अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का था। यही कारण था कि छठी योजना में लाभ का बहुत बड़ा अनुपात, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात के मुकाबले उन्हें अधिक बड़े अनुपात में लाभ सुनिश्चित करने के लिए प्रयास किए गए थे। काफी राज्यों ने एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के न्यूनतम 50 प्रतिशत लाभभोगियों का लक्ष्य चिह्नित किया था। कुछ राज्यों में यह संख्या 40 प्रतिशत से 60 प्रतिशत तक भिन्न भिन्न थी। इसलिए अनुसूचित जातियों के विकास से संबंधित सातवीं योजना के कार्यकारी दल ने यह सिफारिश की थी कि एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम से कम से कम 50 प्रतिशत लाभ केवल अनुसूचित जातियों को उनके लाभभोगियों की संख्या सहायिकी तथा ऋणों के परिव्यय के रूप में मिलना चाहिए। कार्यकारी दल ने यह सिफारिश भी की थी कि इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों के लिए सहायिकी का प्रतिशत 50 प्रतिशत होना चाहिए जैसा कि अनुसूचित जनजातियों के मामले में है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत छठी योजना के दौरान तथा 1985-86 और 1986-87 में वित्तीय तथा भौतिक प्रगति अनुलग्नक 1 के विवरण पत्र 1 से 3 में देखी जा सकती है।

कार्यक्रम का कार्यान्वयन

6. इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए निम्नलिखित प्रशासनिक तंत्र की व्यवस्था की गई थी--

राज्य-स्तर---राज्य स्तर पर इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन की देखभाल मुख्य सचिव अथवा किसी अन्य अति वरिष्ठ अधिकारी के नेतृत्व में एक समन्वय समिति को करनी होती थी। केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय का एक प्रतिनिधि उक्त राज्य समिति का सदस्य बनाना होता था। इस समिति में विभिन्न संबंधित विभागों के वरिष्ठ अधिकारी भी शामिल करने होते थे। समिति की बैठकें समय-समय पर करनी होती थी जिनमें जिला अधिकारियों और सहकारी तथा वाणिज्यिक बैंकों के प्रतिनिधियों को भी आमंत्रित करना होता था।

जिला-स्तर---जिला स्तर पर कार्यक्रम के कार्यान्वयन का समन्वय जिला कलैक्टर के नेतृत्व में जिला ग्रामीण विकास अभिकरण को करना होता था। इस अभिकरण में पूर्णकालिक आधार पर एक परियोजना निदेशक तथा विभिन्न विभागों के सहायक परियोजना अधिकारी होते थे। जिला ग्रामीण विकास अभिकरण की सहायता के लिए एक आयोजना दल होता था जिसमें एक अर्थशास्त्री एक ऋण योजना अधिकारी तथा ग्रामोद्योग अधिकारी शामिल होते थे।

खंड स्तर---खंड स्तर पर विकास खंड अधिकारी, विस्तार अधिकारियों तथा ग्राम सेवकों ने लाभभोगियों की पहचान करने, लक्षित परिवारों के लिए पूंजी निवेश योजना बनाने, ऋण जुटाने इत्यादि के कामों में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। भारत सरकार ने राज्य सरकारों से अनुरोध किया था कि इस कार्यक्रम की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए खंड स्तर पर प्रशासनिक तंत्र को मजबूत किया जाए। केन्द्र सरकार द्वारा खंड स्तर पर प्रशासनिक तंत्र को मजबूत करने के लिए होने वाले खर्च को 50% की सीमा तक वहन करने का निश्चय किया गया था।

कार्यक्रम का मूल्यांकन

7. छठी योजना के दौरान इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन का मूल्यांकन अन्य संस्थाओं के साथ-साथ भारतीय रिजर्व बैंक, कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन (योजना आयोग) राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक और वित्तीय प्रबन्ध एवं अनुसंधान संस्थान द्वारा किया गया था : ऐसे परिवारों की संख्या जो इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सहायता पाने के लिए पात्र नहीं थे, भारतीय रिजर्व बैंक के सर्वेक्षण के अनुसार 16 प्रतिशत राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक के सर्वेक्षण के अनुसार 15 प्रतिशत और कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन के सर्वेक्षण के अनुसार 25.8 प्रतिशत थी। इन तीन संगठनों के अनुसार क्रमशः 17 प्रतिशत 47 प्रतिशत (22 प्रतिशत प्रचलित मूल्यों पर) और 49.4 प्रतिशत नमूना परिवार निर्धनता रेखा पार कर चुके थे। जहां तक ऋण की अदायगी का संबंध था वित्तीय प्रबंध एवं अनुसंधान संस्थान के अध्ययन के अनुसार 79.6 प्रतिशत परिवारों ने ऋण चुका दिया था। राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक के अध्ययन के अनुसार ऐसे परिवारों की संख्या 69% और कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन के अध्ययन के अनुसार 91 प्रतिशत थी। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए पृथक आंकड़े उपलब्ध नहीं थे।

8. एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के कार्यचालन पर कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन द्वारा मई 1985 में सोलह राज्यों अर्थात् **आन्ध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू काश्मीर, कर्णाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल** में किए गए मूल्यांकन अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष नीचे दिए गए हैं—

(1) कार्यक्रम के मार्गनिर्देशों में यह परिकल्पना की गई थी कि प्रत्येक विकास खंड तथा जिले के परिप्रेक्ष्य वाली योजनाएं 80 दिन की अवधि में पूरी की जानी चाहिए और ऐसी आशा थी कि वार्षिक कार्य योजना में 40 दिन और लग जाएंगे। तथापि यह देखा गया कि ऐसे राज्यों में भी जहां पर यह दावा किया गया था कि ये कार्य आरम्भ कर दिए गए थे, वह कार्य 1982-83 तक पूरा नहीं किया गया था।

(2) किसी भी राज्य सरकार ने लाभभोगी परिवारों की आय, उनकी आर्थिक स्थिति तथा लाभकारी योजनाओं/व्यवसायों के लिए उनकी प्राथमिकताओं को जानने के लिए परिवारों के व्यापक सर्वेक्षण के लिए मार्गनिर्देशों का अनुपालन नहीं किया था। केवल चार राज्यों में प्रत्येक विकास खंड के चुने हुए संकेन्द्रण समूहों में परिवारों के सर्वेक्षण आयोजित किए गए थे। चयनित 16 राज्यों में से 7 में परिवारों के सर्वेक्षण नहीं किए गए थे। तीन राज्यों में परिवार सर्वेक्षण का कार्य इस कार्यक्रम के लागू होने के एक या दो वर्षों के बाद शुरू किया गया था। केवल **कर्नाटक** तथा **पंजाब** ही ऐसे राज्य थे जिन्होंने यह दावा किया था कि उनके पूरे राज्य में परिवारों के सर्वेक्षण किए गए थे।

(3) चुने हुए जिलों में वास्तव में सहायता प्रदत्त परिवारों में से लगभग 22.5 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के और 9.2 प्रतिशत जनजातियों के परिवार थे।

(4) दुधारू पशु की एक यूनिट की व्यवस्था लाभभोगियों को निर्धनता रेखा पार करने के लिए पर्याप्त नहीं थी। केवल एक या दो राज्यों में द्वितीय दुधारू पशु दिए गए थे। बहुत अधिक मांग होने के कारण लाभभोगियों को दिए गए दुधारू पशुओं की किस्म भी वांछित स्तर की नहीं थी, कुछेक ऐसे मामले भी देखने में आए जहां वही पशु एक से अधिक बार बिका। दवाइयों की आवश्यक आपूर्ति तथा पशुओं की समय पर देखभाल के रूप में अपर्याप्त पशुचिकित्सा सहायता के बारे में भी शिकायतें मिली थी।

(5) साधन प्रदान कर दिए जाने के बाद उनके रख-रखाव के बारे में कोई अनुवर्ती कार्यवाही नहीं की गई थी। दुधारू पशुओं के लाभभोगियों के लिए दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां गठित नहीं की गई थीं। विशेष रूप से ऐसे क्षेत्रों में जहां संकेन्द्रण सामूहिक योजना नहीं अपनाई गई थी। ऐसे बहुत से मामले जिनमें लाभभोगियों को विदेशी किस्म के पशु पक्षियों की देखभाल का ज्ञान न होने के कारण वे मर गए थे। अधिकांश लाभभोगियों को इस बात का भी ज्ञान नहीं था कि पशु पक्षियों की मृत्यु के जोखिम की व्यवस्था के लिए बीमा सुविधा दी गई है। ऐसे मामलों में जहां लाभभोगियों ने पशुओं का बीमा करवाया था उनके दावों को निबटाने के लिए लम्बी औपचारिकताएं पूरी करनी होती थीं और इसमें कम से कम चार माह तथा उससे भी अधिक समय लगता था।

(6) यद्यपि मार्गनिर्देशों में विशेषरूप से यह उल्लेख किया गया था कि लाभभोगियों को, जब तक वे निर्धनता रेखा पार न कर जाएं सहायता की अतिरिक्त मात्रा उपलब्ध कराई जानी चाहिए, परन्तु अधिकारियों

की प्रवृत्ति प्रति वर्ष प्रति विकास खण्ड 600 लाभभोगियों के लक्ष्य को प्राप्त करने की तत्परता के कारण उससे पूर्व के लाभभोगियों की उपेक्षा करने की रही।

(7) प्रति लाभभोगी निवेश (ऋण तथा सहायिकी) केवल 2,275 रु० हुआ और सहायिकी एवं ऋण का अनुपात 1:2.2 था। प्रति व्यक्ति पूंजी निवेश और अधिक मात्रा में वांछनीय था।

(8) ऋण की कुल राशि का 6% से कम भाग क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा और लगभग 27% भाग सहकारी बैंकों द्वारा जारी किया गया। अधिकांश ऋण वाणिज्य बैंकों द्वारा दिया गया था जो कुल ऋण का 67% भाग था। इसका कारण सहकारी बैंकों द्वारा लिए जाने वाले ब्याज की दर का अधिक होना था। इस कार्यक्रम में सहकारी बैंकों की भूमिका को कारगर बनाने के लिए उपयुक्त उपाय किए जाने चाहिएं।

(9) कुछ मामलों में सहायिकी के समायोजन में बहुत समय लगा और लाभभोगी को साधनों की लागत में सहायता राशि के भाग पर भी ब्याज देना पड़ा था। कुछेक मामलों में बैंकों तथा खण्ड अधिकारियों की मौन सहमति से सहायिकी राशि के दुरूपयोग की भी सूचना मिली थी। कुछ बैंकों की शाखाएं 1,000 रुपए तक के ऋण पर भी जमानत देने के लिए जोर दे रही थीं। बहुत से मामलों में लाभभोगी अपने ऋण के ब्यौरे से भी अवगत न थे और यहां तक कि उनके पास पासबुक भी नहीं थीं जिन्हें बैंक अपने पास रखते थे।

(10) बैंकों द्वारा एक बड़ी संख्या में ऋण के आवेदन पत्र तुच्छ आधारों पर रद्द किए गए थे। यह बताया गया था कि चुने गए जिलों में से एक में 70% तक आवेदन पत्र रद्द किए गए थे।

(11) बकाया देयों का प्रतिशत बहुत अधिक था और 50% से 60% के बीच था। कुछ जिलों में यह 70% तक था। बकाया देयों के उच्च प्रतिशत को रोकने के लिए बैंकों की ग्रामीण शाखाओं में पर्याप्त कर्मचारी दिए जाने चाहिएं।

(12) मार्ग-निर्देशों में यह प्रावधान किया गया था कि प्रत्येक लाभभोगी को **विकास पत्रिका** नामक प्रबोधन एवं पहचान कार्ड दिया जाए। बहुत से राज्यों में क्षेत्रीय दौरों के समय तक **विकास पत्रिका** लागू नहीं की गई थीं यहां तक कि साधनों के सत्यापन का कार्य भी नहीं किया गया था।

(13) कार्यान्वियन प्राधिकारी आधारभूत क्षेत्र की योजनाओं पर ही अधिक निर्भर रहे। विशेष रूप से दुधारू पशुओं से सम्बन्धित योजना पर आधारभूत, अनुषंगी तथा तृतीय क्षेत्रों में परिवारों की उसी अनुपात में पहचान करने तथा शामिल करने के लिए ध्यान नहीं दिया गया था जिसकी परिकल्पना ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा की गई थी।

(14) अनुसूचित जातियों/जनजातियों दोनों के लाभभोगियों की संख्या नमूना परिवारों की कुल संख्या के 40% से थोड़ी अधिक थी। लगभग 48% नमूना लाभभोगी निरक्षर थे।

(15) चुने गए लाभभोगियों में से लगभग 26% की वार्षिक आय 3,500 रुपए से अधिक थी। उनमें लगभग 30% 2,500 रुपए से 3,500 रुपए की वार्षिक आय समूह के, 29% 1,500 रुपए से 2,500 रुपए आय समूह के थे तथा 15% की आय 1,500 रुपए से कम थी। इस प्रकार इन मार्गनिर्देशों के विपरीत कि निर्धनों में सबसे अधिक निर्धनों को पहले शामिल किया जाए, स्पष्टतया लाभभोगियों के रूप में चुने गए परिवारों की बड़ी संख्या अपेक्षाकृत खुशहाल परिवारों की थी। यदि ग्राम सभा की खुली बैठकों में चयन किया जाता तो इस स्थिति से बचा जा सकता था।

(16) नमूना परिवारों में से लगभग 24% को विशेष ब्याज दर योजना के अंतर्गत 4% ब्याज की दर से ऋण स्वीकृत किया गया था और शेष परिवारों से बैंक द्वारा विहित ब्याज की सामान्य दर से भुगतान करने की अपेक्षा की गई थी।

(17) नमूना लाभभोगियों में से लगभग 29% ने बताया कि उन्हें दी गई वित्तीय सहायता पर्याप्त नहीं थी और उन्हें विवश किया गया था कि बाकी राशि का प्रबंध वे अपने आप और/अथवा अन्य स्रोतों से करें।

(18) 1,500 रुपए तक की आय वाले नमूना लाभभोगियों में से केवल लगभग 8% ने ही निर्धनता रेखा पार की थी। इस समूह के शेष 92% तथा 1,500 से 2,500 रूपए की आय वाले समूह के लगभग 80% लाभ भोगी अभी भी 3,500 रुपए प्रति वर्ष की आय के स्तर तक पहुंचने के लिए संघर्ष कर रहे थे। केवल एक बार सहायता देने की व्यवस्था उन्हें निर्धनता रेखा पार करने में सहायक नहीं हुई।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

9. यह कार्यक्रम अक्तूबर 1980 में आरंभ किया गया था और अप्रैल 1981 से केन्द्र तथा राज्य के बीच 50:50 की साझेदारी के आधार पर केन्द्रीय प्रायोजित कार्यक्रम के रूप में ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा कार्यान्वित किया जा रहा था। इस कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य हैं--(1) ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार तथा अल्परोजगार व्यक्तियों के लिए अतिरिक्त लाभकर रोजगारों का निर्माण, (2) ग्रामीण आर्थिक तथा सामाजिक आधारिक संरचना को मजबूत करने के लिए उत्पादन के सामुदायिक साधनों का निर्माण तथा (3) ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन की कुल गुणवत्ता में सुधार। यह कार्यक्रम पूरे देश में स्थापित जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों द्वारा कार्यान्वित किया जा रहा है। जिन स्थानों पर पंचायत राज संस्थाएं सक्रिय हैं, वहां यह कार्य मुख्यत: उन्हीं की मार्फत किया जाता है। राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को संसाधनों का आबंटन विहित मापदण्ड के आधार पर किया जाता है जिसमें 50 प्रतिशत भाग खेतीहर मजदूरों, सीमांत किसानों तथा सीमांत कर्मकारों का तथा 50% भाग निर्धनता के पहलू का रखा जाता है। संसाधनों का दस प्रतिशत सीधे तथा केवल अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए लाभ के कार्यों के लिए तथा 25% सामाजिक वानिकी के कार्यों के लिए चिह्नित किया जाता है। ये चिह्नित आबंटन अन्य कार्यों में नहीं लगाए जा सकते हैं। पचास प्रतिशत मजदूरी वस्तु के रूप में दी जाती है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत कार्य निष्पादन के लिए ठेकेदारों अथवा बिचौलियों को नियुक्त किए जाने की अनुमति नहीं हैं। साधारणतया इस कार्यक्रम के अन्तर्गत केवल उन्हीं कार्यों को आरंभ किया जाता है जिनके परिणामस्वरूप सामुदायिक साधनों का निर्माण होता है तथापि अनुसूचित जातियों/जनजातियों, बंधुआ मजदूरों, फालतू भूमि, भूदान भूमि और बंजर भूमि के आबंटियों तथा निर्धनता रेखा के नीचे वाले सभी व्यक्तियों के मामलों में एक विशेष मामले के रूप में ऐसे कार्यों को आरंभ करने की अनुमति भी दी जाती है जो लाभभोगी उन्मुख होते हैं।

10. छठी योजना में केन्द्र तथा राज्य दोनों क्षेत्रों में 1,620 करोड़ रुपए के परिव्यय का प्रावधान रखा गया था। तथापि वास्तव में 1,873 करोड़ रुपए की राशि ही दी गई थी। इसके मुकाबले में इस योजना अवधि में 1,834.25 करोड़ रूपए की राशि उपयोग में लाई गई थी। इस अवधि में 20.57 लाख मीटरी टन खाद्यान्न का उपयोग किया गया था जबकि इस अवधि के दौरान 15000-20000 लाख श्रमिक दिवसों के रोजगार का निर्माण करने का लक्ष्य था परन्तु 17,751.80 लाख श्रमिक-दिवसों का निर्माण किया गया था। इस अवधि के दौरान अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए निर्मित रोजगार कुल निर्मित रोजगार का लगभग 45% था।

11. सातवीं योजना की अवधि के लिए राज्य के 1,236.66 करोड़ रुपए के भाग सहित 2,487.47 करोड़ रुपए के परिव्यय का प्रावधान किया गया था। इस योजना अवधि में प्रति वर्ष लगभग 2,900 लाख श्रमिक दिवसों के रोज़गार का निर्माण करने की परिकल्पना की गई थी। इस कार्यक्रम के अधीन 1985-86 के दौरान केन्द्रीय सहायता के लिए 230 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया था। इसमें राज्य के भाग को मिलाकर कुल आबंटन 457.53 करोड़ रुपए था। इसके अतिरिक्त राज्यों को गत वर्ष से अग्रेणीत खर्च होने से शेष बची 92.21 करोड़ रुपए की राशि का उपयोग करने की अनुमति दी गई थी। इस प्रकार कुल 549.75 करोड़ रूपये उपलब्ध थे, जिसमें से मार्च 1986 तक 530.80 करोड़ (96.6%) रुपए खर्च किए गए थे। इस वर्ष के दौरान 2,280 लाख श्रमिक-दिवसों के रोज़गार का निर्माण करने के लक्ष्य के मुकाबले 3,160 लाख श्रमिक दिवसों का निर्माण हुआ जिसमें से अनुसूचित जातियों/जनजातियों तथा भूमिहीन वर्ग के लिए निर्मित रोजगार क्रमश: लगभग 51% तथा 30% था। इस प्रकार यह ज्ञात हो गया, यद्यपि उस वर्ष के दौरान व्यय कम था, तथापि, निर्मित रोज़गार के श्रमिक दिवसों की संख्या उसके लिए निश्चित किए गए लक्ष्य से अधिक थी। इससे यह स्पष्ट है कि जिन व्यक्तियों को रोजगार मिला वे अल्परोज़गार में थे और उन्हें विहित न्यूनतम मजदूरी नहीं दी गई थी। यह दुर्भाग्य की बात है कि सरकारी कार्यक्रमों में भी कुछ मामलों में न्यूनतम मजदूरी नहीं दी जा रही है। ऊपर वर्णित आंकड़ों से केवल यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है। 1986-87 के दौरान केन्द्रीय भाग के रूप में 254 करोड़ रुपये के परिव्यय की व्यवस्था की गई थी। इसके अतिरिक्त राज्य सरकारों को पिछले वर्ष से अग्रेणीत खर्च होने से शेष बची 130.14 करोड़ रुपए की राशि का उपयोग करने की अनुमति दी गई थी। तथापि दिसम्बर 1986 तक 396 करोड़ रुपए व्यय किए गए थे। 2,750.80 लाख श्रमिक दिवसों के रोज़गार का निर्माण करने के लक्ष्य के मुकाबले दिसम्बर 1986 तक 2,563 लाख श्रमिक दिवसों के रोज़गार का निर्माण किया गया था जिनमें से अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा भूमिहीन वर्ग के लिए निर्मित रोजगार क्रमश: लगभग 49% तथा 31% था।

12. योजना आयोग के कायक्रम मूल्यांकन संगठन तथा केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग ने **बिहार, गुजरात, जम्मू-काश्मीर, कर्नाटक, केरल, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश** तथा **पश्चिम बंगाल** में कुछ मूल्यांकन अध्ययन किए थे। केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग में प्राप्त हुई तीन राज्यों की रिपोर्टों के अनुसार इस कार्यक्रम के अधीन उपलब्ध कराया गया रोजगार बहुत कम अवधि के लिए था। ठीक प्रकार से नियोजन नहीं किया गया था

तथा पर्याप्त रूप से समन्वय नहीं किया गया था, लाभभोगियों का चयन न्यायिक नहीं था और कभी-कभी निर्धनों में से सर्वाधिक निर्धनों को जिनके लिए कार्यक्रम तैयार किया गया था, छोड़ दिया गया था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत निर्मित साधनों के रखरखाव के लिए कोई प्रावधान भी नहीं था। अनुसूचित जातियों के विकास से संबंधित सातवीं योजना के कार्यकारी दल के अनुसार अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लाभभोगियों द्वारा किए गए श्रम की सहायता से निर्मित साधनों का लाभ सीधे उन्हें नहीं मिलेगा उन्हें जो कुछ मिला वह मात्र श्रमिकों के रूप में उनकी मजदूरी थी। जबकि निर्मित किए गए स्थायी साधनों जैसे सड़कें, बांध, नहरें आदि के लाभ अन्य समुदायों के सम्पन्न लोगों को मिलेंगे। अत: इस कार्यक्रम के अधीन ऐसे कार्यों का चयन करना संभव होना चाहिए जिनके लाभ अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों सहित निर्धन व्यक्तियों को पहुंचना निश्चित किया गया हो, अन्यथा इस कार्यक्रम से दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य में वास्तव में निर्धनों की पर्याप्त रूप से सहायता न करके, ऐसा करने का केवल भ्रम ही उत्पन्न होगा। कार्यकारी दल ने यह सिफारिश की थी कि यदि कार्यों का कुल लाभ नहीं तो कम से कम 50 प्रतिशत लाभ सीधे तथा अनन्य रूप से अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों को पहुंचना चाहिए।

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम

13. यह कार्यक्रम तीन उद्देश्यों को लेकर अगस्त 1983 में आरंभ किया गया था, अर्थात् (1) इस दृष्टि से कि ग्रामीण भूमिहीन श्रमिकों के प्रत्येक परिवार के कम से कम एक व्यक्ति को एक वर्ष में 100 दिवसों तक के रोजगार की गारन्टी दी जा सके, ग्रामीण भूमिहीनों के लिए रोजगार के अवसरों का सुधार तथा विस्तार करना, (2) ग्रामीण संरचना आधार को सुदृढ़ करने के लिए टिकाऊ साधनों का निर्माण करना जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था का तेजी से विकास होगा तथा (3) ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन की कुल मिलाकर गुणवत्ता में वृद्धि करना। इस कार्यक्रम के लिए पूरी धनराशि केन्द्र द्वारा उपलब्ध कराई गई थी। आबंटन करते समय 50 प्रतिशत वरीयता खेतिहर मजदूरों, सीमांत किसानों तथा सीमांत कर्मकारों को तथा 50 प्रतिशत ग्रामीण निर्धनता को दी गयी थी। (1985–86 तक निर्धनता के पहलू का भाग 25% था)। इस कार्यक्रम के अंतर्गत आने वाले कार्यों को मोटे रूप से चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है—(1) इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों और मुक्त बंधुआ मजदूरों के लिए विशेष प्रकार के निवास स्थानों तथा आवास यूनिटों का निर्माण, (2) सामाजिक तथा कृषि वानिकी के कार्य, (3) ग्रामीण स्वच्छ पाखानों का निर्माण तथा (4) अन्य कार्य जैसे लघु सिंचाई योजनाएं, सड़कें, जल परियोजनाएं, भूमि संबंधी अन्य परियोजनाएं आदि।

14. छठी योजना के दौरान इस कार्यक्रम के लिए 600 करोड़ रुपए की धनराशि का आबंटन किया गया था जिसमें से 500 करोड़ रुपए की राशि जारी की गई थी। इस अवधि के दौरान 384.74 करोड़ रुपए व्यय किए गए थे। 3,000 लाख श्रमिक दिवसों के रोजगार के निर्माण के लक्ष्य के मुकाबले में लगभग 2,627.50 लाख श्रमिक-दिवसों के रोजगार का निर्माण किया गया था। सातवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि के लिए 1,743.78 करोड़ रुपए का परिव्यय रखा गया था। इस अवधि के दौरान 10,130 लाख श्रमिक दिवसों के रोजगार के निर्माण किए जाने की अपेक्षा की गई थी। 1985-86 के दौरान 606.33 करोड़ रुपए का आबंटन किया गया था। इसमें खाद्यान्न का मूल्य शामिल था। इस अवधि में 437.55 करोड़ रुपए व्यय करके 2,057.30 लाख श्रमिक दिवसों का रोजगार निर्माण करने के लक्ष्य के मुकाबले लगभग 2,318.80 लाख श्रमिक दिवसों के रोजगार का निर्माण किया गया था। 1986-87 के दौरान राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को दिए गए दस लाख टन खाद्यान्न के मूल्य जो नकद आबंटन में वृद्धि के रूप में था, को शामिल करके 724.18 करोड़ रुपए का आबंटन किया गया था। दिसम्बर 1986 तक 353.67 करोड़ रुपए की लागत से लगभग 1,751.30 लाख श्रमिक दिवसों के रोजगार का निर्माण किया गया था।

15. यह कार्यक्रम निर्धनों में सर्वाधिक निर्धनों के लिए बनाया गया था। इस श्रेणी में ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता रेखा से नीचे वाले अनुसूचित जाति/जनजाति के भूमिहीन परिवार बहुत बड़ी संख्या में शामिल हैं। इसलिए अनुसूचित जातियों के विकास की सातवीं योजना के कार्यकारी दल ने यह सुझाव दिया था कि ग्रामीण संरचना आधार को सुदृढ़ करने के लिए टिकाऊ साधनों का निर्माण करते समय ऐसे कार्य आरंभ किए जाने चाहिएं जो सीधे तथा अनन्य रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को लाभ पहुंचाने वाले हों ताकि ग्रामीण संरचना आधार के लाभ इन समुदायों को मिलने सुनिश्चित किये जा सकें। कार्यकारी दल ने यह सिफारिश की थी कि इस कार्यक्रम के अंतर्गत कुल परिव्यय का कम से कम 50 प्रतिशत, कार्यक्रम के अंतर्गत निर्मित साधनों के मूल्य के रूप में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लाभ के लिए चिह्नित किया जाना चाहिए। केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग के अनुसार प्रशासनिक जटिलताओं और वित्तीय उलझनों के कारण गारन्टी का प्रावधान अभी भी पूर्ण रूप से कार्यान्वित नहीं हुआ था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत रोजगार का निर्माण, 20–सूत्री कार्यक्रम तथा न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम से सम्बद्ध कार्य परियोजनाओं में किया जा रहा था।

ग्रामीण विकास तथा निर्धनता निवारण कार्यक्रमों के लिए विद्यमान प्रशासनिक व्यवस्था की समीक्षा

16. ग्रामीण विकास तथा निर्धनता निवारण कार्यक्रम के लिए विद्यमान प्रशासनिक व्यवस्था की समीक्षा करने तथा समुचित संरचनात्मक तंत्र की सिफारिश करने के लिए एक समिति की स्थापना केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग द्वारा मार्च 1985 में की गई थी। इस समिति की रिपोर्ट दिसम्बर 1985 में प्रस्तुत की गई थी। समिति के महत्वपूर्ण निष्कर्ष नीचे दिए गए हैं—

(1) निर्धनता निवारण कार्यक्रमों को केवल कुछ थोड़ी सी योजनाओं तक सीमित रखा जाना उपयुक्त नहीं था। इसके विपरीत विभिन्न संगठनों द्वारा क्षेत्र स्तर पर संचालित आर्थिक कार्यकलापों के सभी क्षेत्रों को मिला कर ग्रामीण विकास की कुल धारणा बनाई जानी चाहिए।

(2) पूरे देश के लिए कार्यक्रमों का एक समान ढांचा रखना उपयुक्त नहीं था। इसके विपरीत स्थानीय पहल अवश्य प्रोत्साहित की जानी चाहिए और स्थानीय लोगों और उनके प्रतिनिधियों को शामिल करके विस्तृत कार्य नीति बनाई जानी चाहिए।

(3) पंचायती राज संस्थाओं को सक्रिय किया जाए और इन संस्थाओं के चुनाव नियमित रूप से कराए जाएं।

(4) योजना और विकास के लिए जिला एक उचित इकाई है। अतः जिला परिषद् ऐसे सभी विकास कार्यक्रमों के प्रबंध के लिए, जो उस स्तर पर संचालित किए जा सकते हों, एक प्रधान संस्था होनी चाहिए।

(5) राज्य स्तर पर विकास का प्रशासनिक काम देखने के लिए इतने अधिक अधिकारियों के बजाय मुख्य सचिव के स्तर के एक वरिष्ठ अधिकारी को विकास आयुक्त के रूप में नियुक्त किया जाना चाहिए जिसकी सहायता के लिए कुछ सचिव नियुक्त किए जाने चाहिएं।

(6) जिला स्तर पर एक जिला विकास आयुक्त होना चाहिए जो विकास के सभी विभागों का प्रधान होना चाहिए और उसकी सहायता के लिए अन्य अधिकारियों के साथ साथ एक जिला नियोजन अधिकारी, एक जिला वित्त तथा लेखा अधिकारी और एक अधिकारी अनन्य रूप से निर्धनता निवारण कार्यक्रमों को देखने के लिए होना चाहिए।

(7) कलैक्टर को कार्य करने के लिए बनाए रखा जाए और उसे कानून और व्यवस्था, भू-राजस्व, पंजीकरण, निर्वाचनों इत्यादि का प्रभारी बनाया जाय।

(8) खण्ड स्तर पर एक सहायक विकास आयुक्त होना चाहिए।

(9) निर्धनता निवारण कार्यक्रमों का कार्य देखने वाले विभाग में अधिकारियों की नियुक्ति के लिए दूसरे विभागों से प्रतिनियुक्ति करने की प्रणाली का परित्याग किया जाना चाहिए।

(10) जिला बजट की संकल्पना जो हाल ही में उठाई गई है, यथासंभव शीघ्र अस्तित्व में लाई जानी चाहिए।

(11) जिले की योजना उपयुक्त रूप से तैयार किए जाने की संकल्पना कार्यान्वित की जानी चाहिए।

(12) स्वैच्छिक अभिकरणों को प्रोत्साहित किया जाना अनिवार्य है ताकि कुछ लोग ग्रामीण विकास के लिए नए तरीकों और प्रयोगों के कार्यक्रम आरम्भ कर सकें।

(13) भूमि सुधारों का कार्यान्वयन और अधिक शक्ति के साथ किया जाना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि भूमि खेती करने वाले को ही मिले।

(14) जिले और उससे नीचे के स्तर पर विकास तंत्र की रचना पूर्ण रूप से फिर से की जानी चाहिए। उस की पुनः संरचना करने के लिए प्रस्तावों पर मंजूरी भारत सरकार के सचिवों की समिति द्वारा दी जानी चाहिए। इस पर आने वाली अतिरिक्त लागत भारत सरकार और राज्य सरकार के बीच 2:1 के अनुपात से वहन की जाए।

आयोजना मंत्रालय के अनुसार उपर्युक्त रिपोर्ट राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों के विचार जानने के लिए परिचालित की गई थी।

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा उपलब्ध कराई गई सहायता

17. भारतीय रिजर्व बैंक की ऋण नीति के अनुसार ऋण की राशि बढ़ती मात्रा में समाज के निर्बलतर वर्गों की ओर मोड़नी चाहिए। 'प्राथमिकता क्षेत्र, के अधीन अनुसूचित जातियां और जनजातियां निर्बलतर वर्गों का एक भाग हैं। निर्बलतर वर्गों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों से भिन्न वर्ग अनिवार्य रूप से आर्थिक दृष्टिकोणों के आधार पर लिए गए हैं। बैंकों को यह परामर्श दिया गया था कि वे 'प्राथमिकता वाले क्षेत्र' के लिए अपनी अग्रिम धनराशियों का अनुपात मार्च 1985 तक के कुल ऋण के 40% तक बढ़ा दे। निर्बलतर वर्गों को अग्रिम धनराशियां प्राथमिकता क्षेत्र की अग्रिम धनराशियों के 25% अथवा कुल ऋण के 10% तक की सीमा तक दी जानी थीं। वित्त मंत्रालय के बैंकिंग प्रभाग से प्राप्त सूचना के अनुसार प्राथमिकता क्षेत्र को सार्वजनिक क्षेत्र के सभी बैंकों द्वारा दी गई अग्रिम धन राशि का प्रतिशत दिसम्बर 1985 तक 42.9% तक पहुंच गया था और दिसम्बर 1986 तक 43.6 हो गया था जिसमें से पहले वर्ष में अनुसूचित जातियों के लाभभोगियों को 5% और जनजातियों के लाभभोगियों को 1.5% और बाद वाले वर्ष में अनुसूचित जातियों के लिए 5.1 और जनजातियों के लिए 1.4% अग्रिम धनराशियां दी गई थीं। 1979 से 1986 तक प्राथमिकता क्षेत्र को दी गई अग्रिम धनराशि तथा निर्बलतर वर्गों सहित अनुसूचित जातियों और जनजातियों को दी गई अग्रिम धनराशि के प्रतिशत की वर्ष वार रकम निम्नलिखित सारणी में दर्शाई गई है—

सारणी 1

(लेखों की संख्या लाख में)
(रकम करोड़ रुपये में)

समाप्त हुआ वर्ष	प्राथमिकता क्षेत्र का कुल अग्रिम धन		अ० जा०/अ० ज० जा० का कुल अग्रिम धन		स्तंभ 3 से स्तंभ 5 का प्रतिशत
	लेखों की संख्या	अदत्त रकम	लेखों की संख्या	अदत्त रकम	
1	2	3	4	5	6
दिसम्बर 1979 . .	109.78	6011.48	15.90	250.03	4.2
दिसम्बर 1981 . .	155.30	10268.42	27.44	486.12	4.7
दिसम्बर 1983 . .	185.64	14084.57	39.41	769.31	5.5
दिसम्बर 1985 . .	241.94	20647.81	56.81	1350.29	6.5
दिसम्बर 1986 (अनन्तिम) . .	261.57	23810.91	64.54	1541.23	6.5

ऊपर की सारणी से यह ज्ञात होगा कि दिसम्बर 1986 को समाप्त हुए वर्ष के दौरान प्राथमिकता क्षेत्र के अंतर्गत अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों को दी गई अग्रिम धनराशि कुल अग्रिम धनराशि की 6.5% थी। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी किए गए मार्गनिर्देशों के अनुसार प्राथमिकता क्षेत्र के कुल ऋण का 25% अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों सहित निर्बलतर वर्गों को मिलना चाहिए। यदि यह कल्पना की जाए कि निर्बलतर वर्गों में लगभग 50% अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्ति होते हैं प्राथमिकता क्षेत्र के कुल ऋण का कम से कम 12.5% ऋण अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को मिलना चाहिए। इस प्रकार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को प्राथमिकता क्षेत्र के कुल ऋण में से उनके देय हिस्से का केवल लगभग आधा हिस्सा ही उन्हें मिला। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को प्राथमिकता क्षेत्र के कुल ऋण का 12.5% दिए जाने के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए अभी काफी प्रगति की जानी अपेक्षित है।

ब्याज की विशेष दर योजना के अंतर्गत दी गई अग्रिम धनराशि

18. यह योजना भारत सरकार द्वारा मूलतः निर्बलों में निर्बलतम की ऋण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए और उन्हें छोटे उत्पादन प्रयासों द्वारा अपनी आर्थिक स्थिति को बेहतर करने के प्रयत्नों में सहायता देने के लिए आरंभ की गई थी। इस योजना के अंतर्गत विहित ब्याज की दर 4% थी। मार्गनिर्देशों के अनुसार बैंकों को इस योजना के अंतर्गत पूर्व के वर्ष की समाप्ति पर यथा-स्थिति उनके द्वारा दी गई कुल अग्रिम धनराशि की कम से कम 1% राशि अग्रिम धनराशि के रूप में देनी होती थी। यह सुनिश्चित करने के लिए कि ग्रामीण क्षेत्रों में निर्बलतर वर्गों को इस योजना के अंतर्गत अधिकतम लाभ दिया जा सके तथा अग्रिम धनराशि की अधिकांश रकम शहरी/महानगर क्षेत्रों द्वारा न हथियाई जाए इस योजना का कार्यचालन करने वाले बैंकों को यह देखना था कि इस योजना के अंतर्गत उनकी अग्रिम धनराशियों का कम से कम दो-तिहाई भाग उनकी ग्रामीण तथा अर्धशहरी शाखाओं के माध्यम से दिया जाए। यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से इस योजना के अंतर्गत अनुसूचित जाति/जनजाति समुदायों के व्यक्तियों को लाभ का उनका देय हिस्सा मिल गया है। बैंकों को यह देखना था कि ब्याज की विशेष दर योजना की अग्रिम धनराशियों का 40% अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लाभभोगियों को दिया जाए।

19. भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा सितम्बर 1986 में जारी किए गए मार्गनिर्देशों के अनुसार ब्याज की विशेष दर योजना के अधीन ऋण लेने वालों के परिवारों की आय की अधिकतम सीमा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति वर्ष 2,000/- रुपए से तथा शहरी तथा अर्ध-शहरी क्षेत्रों में 3,000/- रुपए प्रति वर्ष से पुनरीक्षित करके क्रमशः 6,400/- रुपए और 7,200/- रुपए की गई थी। यह भी बताया गया था कि ब्याज की विशेष दर योजना, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा शहरी निर्धनों के लिए स्व-रोजगार कार्यक्रम पारस्परिक रूप से अनन्य होंगे। ब्याज की विशेष दर योजना के अधीन विहित पात्रता कसौटी के अन्दर लाभ केवल उन्हीं ऋण लेने वालों को मिलेगा जिन्हें केन्द्रीय/राज्य सरकारों और राज्य के नियंत्रणाधीन निगमों की सहायिकी से जुड़ी योजनाओं में से किसी के अधीन सहायता प्राप्त नहीं हुई थी। ब्याज की विशेष दर योजना के अधीन धनराशि की राज्यवार रकम, ऐसी रकम का पहले वर्ष के अन्त की कुल अग्रिम धनराशि से प्रतिशत, ब्याज की विशेष दर योजना के अधीन अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को दी गई अग्रिम धनराशियों की कुल रकम और ऐसी रकम का दिसम्बर 1983 को समाप्त वर्ष से दिसम्बर 1986 को समाप्त वर्ष तक सार्वजनिक क्षेत्र के सभी बैंकों द्वारा ब्याज की विशेष दर योजना के अधीन दी गई अग्रिम धनराशियों से प्रतिशत नीचे की सारणी में देखा जा सकता है—

सारणी 2

(लेखों की संख्या लाखों में)
(रकम करोड़ रुपयों में)

समाप्त हुआ वर्ष	विशेष ब्याज दर योजना के अधीन दी गई कुल अग्रिम धन राशि		पूर्व के वर्ष की समाप्ति पर यथास्थिति कुल अग्रिम धनराशि से विशेष ब्याज दर की अग्रिम राशि का प्रतिशत	अ०जा०/अ०ज०जा० को दी गई विशेष ब्याज दर योजना की अग्रिम धन-राशि		विशेष ब्याज दर योजना की कुल अग्रिम धनराशि से अ० जा०/अ० ज० जा० को मिली विशेष ब्याजदर योजना की राशि का प्रतिशत
	लेखों की सं०	अदत्त रकम		लेखों की सं०	अदत्त रकम	
1	2	3	4	5	6	7
दिसम्बर 1983	37.44	367.99	1.1	18.54	184.32	50.1
दिसम्बर 1984	42.72	441.38	1.1	21.28	224.84	50.9
दिसम्बर 1985	43.18	462.70	1.1	21.62	236.73	51.2
दिसम्बर 1986	47.97	560.83	1.2	23.11	282.01	50.3

प्राथमिकता क्षेत्र के अधीन सार्वजनिक क्षेत्र के सभी बैंकों द्वारा दी गई अग्रिम धनराशियों की बैंकवार प्रगति जो

दिसम्बर 1985 को समाप्त अर्ध-वर्ष के लिये अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों को दिये गये उधार (गैर-

विशेष ब्याज दर योजना) को दर्शाती है अनुलग्नक 2 के विवरणपत्र संख्या 1 में देखी जा सकती है। अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों को विशेष ब्याज दर योजना के अधीन दी गई अग्रिम धनराशियों के बारे में वैसी सूचना अनुलग्नक 2 के विवरणपत्र संख्या 2 में देखी जा सकती है और दिसम्बर 1986 को समाप्त अर्ध वर्ष के लिये सूचना अनुलग्नक 3 के विवरणपत्र संख्या 1–2 मे दर्शाई गई है।

20-सूत्री कार्यक्रम

20. 1975 में केन्द्र सरकार द्वारा आरम्भ किये गये 20-सूत्री कार्यक्रम को 14–1–1982 को तत्कालीन प्रधान मंत्री द्वारा 20-सूत्री आर्थिक कार्यक्रम की घोषणा किये जाने के समय पुनर्जीवित किया गया था। उसके 7वें सूत्र में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास के लिये कार्यक्रमों की गति तेज करने के लिये कहा गया था। 1986 में एक पुनरीक्षित 20-सूत्री कार्यक्रम की घोषणा की गई जो 1–4–1987 से प्रभाव में आया। इस पुनरीक्षित कार्यक्रम के 11 वें सूत्र में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिये न्याय का प्रावधान है। इसमें निम्नलिखित लक्ष्यों को प्राप्त करने की परिकल्पना की गई है—

(क) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए सांविधिक प्रावधानों तथा कानूनों के अनुपालन को सुनिश्चित करना,

(ख) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को आबंटित भूमियों के कब्जे सुनिश्चित करना,

(ग) भूमि आबंटन के कार्यक्रम को पुन: जीवित करना,

(घ) शैक्षिक स्तर सुधारने के लिये विशेष शिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना तथा उन्हें सहायता पहुंचाना,

(ङ) टट्टी उठाने की प्रथा का उन्मूलन करना और सफाई कर्मचारियों के पुनर्वास के लिए विशेष कार्यक्रम आरम्भ करना,

(च) विशेष संघटक योजनाओं के लिए सही दिशा तथा पर्याप्त निधि प्रदान करना,

(छ) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की शेष समाज के साथ एकता के लिये कार्यक्रमों को चलाना,

(ज) अपने निवास स्थानों से विस्थापित आदिवासियों का पुनर्वास सुनिश्चित करना।

21. सूत्र 11 के अतिरिक्त निम्नलिखित सूत्रों में भी अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास पर विशेष ध्यान देने के लिये उपबन्ध किया गया है—

(क) सूत्र 7(3)—अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए पानी की आपूर्ति पर विशेष ध्यान दिया जाना।

(ख) सूत्र 14(3)—अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिये घरों के निर्माण पर विशेष जोर दिया जाना।

(ग) सूत्र 16(2)—आदिवासी जनसंख्या तथा स्थानीय समुदायों के वनों से ईंधन की लकड़ी और वन उत्पाद प्राप्त करने के परम्परागत अधिकारों का संरक्षण करना।

22. इस कार्यक्रम में कुछ अन्य सूत्र भी हैं जिनमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास के सम्बन्ध में कोई विशेष वर्णन नहीं किया गया है किन्तु ये इन समुदायों के लिये अप्रत्यक्ष रूप से महत्वपूर्ण हैं क्योंकि काफी संख्या में इन समुदायों के परिवार इन कार्यक्रमों से लाभ उठाते हैं। ये सूत्र हैं—

सूत्र 1(1)—यह सुनिश्चित करना कि निर्धनता निवारण कार्यक्रम का लाभ प्रत्येक गांव में सभी निर्धन व्यक्तियों तक पहुंचे,

सूत्र 1(4)—हथकरघों, शिल्पकलाओं, ग्राम तथा लघु उद्योगों को बढ़ावा देना और स्वरोजगार के लिये कार्य कुशलता में वृद्धि करना,

सूत्र 5(1)—भूमि अभिलेखों के सकलन का काम पूरा करना,

सूत्र 5(3)—फालतू बची भूमि भूमिहीन व्यक्तियों को बांटना,

सूत्र 6(1)—कृषि तथा उद्योग में असंगठित श्रम के लिये न्यूनतम मजदूरी लागू करना,

सूत्र 6(2)—बन्धुआ मजदूरी के उन्मूलन सम्बन्धी कानूनों को पूर्ण रूप मे कार्यान्वित करना,

सूत्र 10(1)—लड़कियों की शिक्षा पर विशेष जोर देते हुए प्राथमिक शिक्षा को व्यापक बनाना,

सूत्र 12(1)—महिलाओं की स्थिति में सुधार करना,

सूत्र 15(2)—विद्यमान गन्दी बस्तियों में आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराना,

सूत्र 18(1)—अनिवार्य उपभोक्ता वस्तुओं को गरीबों के लिये सहज सुलभ बनाना,

सूत्र 19(1)—गांवों में उत्पादन के कार्यों में प्रयोग के लिए विद्युत की आपूर्ति का विस्तार करना।

23. केन्द्र में 20-सूत्री कार्यक्रम का सामान्य प्रबोधन योजना आयोग द्वारा किया जाता है परन्तु 20-सूत्री कार्यक्रम में सम्मिलित अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विकास के लिये विभिन्न कार्यक्रमों की प्रगति के बारे में प्रबोधन कल्याण मंत्रालय करता है। इस प्रयोजन के लिये कल्याण मंत्रालय द्वारा मासिक/त्रैमासिक प्रगति रिपोर्ट तैयार की

जाती हैं और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय तथा प्रधान मंत्री के कार्यालय को भेजी जाती हैं। इन प्रगति रिपोर्टों के अनुसार 1986–87 में नवम्बर और दिसम्बर 1986 तक अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के क्रमशः 11.22 लाख और 5.79 लाख परिवारों की सहायता की गई थी जबकि उक्त वर्ष के लिये लक्ष्य अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के क्रमश. 19.32 लाख और 8.35 लाख परिवारों का था।

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम

24. इस दृष्टि से कि एक विनिर्दिष्ट अवधि के अन्दर सभी क्षेत्रों में सामाजिक उपभोग की आधारभूत सेवाओं और सुविधाओं का एक तन्त्र स्थापित किया जाये, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम पांचवीं पंचवर्षीय योजना के प्रथम वर्ष में आरम्भ किया गया था। यह जीवन स्तर ऊंचा उठाने और विकास में क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने में सहायता करने के लिये बनाया गया था। इस कार्यक्रम के प्रयोजन के लिये ज्ञात की गई लोगों को आधारभूत आवश्यकतायें ये हैं--(1) प्रारम्भिक शिक्षा, (2) प्रौढ़ शिक्षा, (3) ग्रामीण स्वास्थ्य, (4) ग्रामीण जल आपूर्ति, (5) ग्रामीण मार्ग, (6) ग्रामीण विद्युतीकरण, (7) ग्रामीण आवास, (8) शहरी गन्दी बस्तियों में पर्यावरणिक सुधार, (9) पोषण। छठी योजना में 5,807 करोड़ रुपये का परिव्यय रखा गया था। जिसमें से इस कार्यक्रम के लिये राज्य क्षेत्र को 4,924 करोड़ रुपये की राशि और केन्द्रीय क्षेत्र को 883 करोड़ रुपये की राशि आबंटित की गई थी। उपर्युक्त परिव्यय के मुकाबले उक्त योजना अवधि में 6547.05 करोड़ रुपये का अनुमानित व्यय किया गया था जिसमें से राज्य क्षेत्र में 5265.33 करोड़ रुपये और केन्द्रीय क्षेत्र में 1281.72 करोड़ रुपये का व्यय हुआ।

25. सातवीं पंचवर्षीय योजना में यह परिकल्पना की गई है कि इस कार्यक्रम को दूसरे ग्रामीण विकास तथा निर्धनता निवारण कार्यक्रमों के साथ एकीकृत किया जाये ताकि वितरण सेवाओं में आवश्यक ताल मेल पैदा हो सके। इस न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में कार्यकलापों की दो अलग-अलग श्रेणियां शामिल हैं अर्थात् (1) मानव संसाधन विकास कार्यकलाप जिसमें प्रारम्भिक और प्रौढ़ शिक्षा, स्वास्थ्य, पीने के पानी की आपूर्ति, पोषण और ग्रामीण आवास शामिल हैं, (2) क्षेत्र के विकास से सम्बन्धित कार्यकलाप जैसे ग्रामीण मार्ग और ग्राम विद्युतीकरण। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के विभिन्न घटकों का उद्देश्य ग्रामीण विकास के लाभभोगी उन्मुख कार्यक्रमों और क्षेत्र विकास कार्यक्रमों दोनों के प्रभाव में वृद्धि करना है। जबकि न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम अप्रत्यक्ष प्रभाव के द्वारा लोगों की कुल मिलकर उत्पादन क्षमता में वृद्धि करता है, ग्रामीण विकास कार्यक्रम प्रत्यक्ष रूप से और व्यक्तिगत तरीके से लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार करता है। इस प्रकार कार्यक्रमों की उक्त दोनों श्रेणियां आपस में सहायक हैं। सातवीं योजना में यह प्रस्ताव भी किया गया था कि इस कार्यक्रम में कुछ नये घटक जोड़े जायें जैसे घरेलू गैस, ऊर्जा, सार्वजनिक वितरण तथा ग्रामीण सफाई। सातवीं योजना अवधि के लिये इस कार्यक्रम के अधीन 10081.72 करोड़ रुपये का परिव्यय रखा गया था।

26. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के ग्रामीण जनसंख्या में सबसे अधिक उपेक्षित वर्ग होने के कारण यह आशा की जाती है कि ये वर्ग न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के विभिन्न घटकों से पर्याप्त लाभ प्राप्त करेंगे। उदाहरण के लिये, पीने के पानी के साधन प्रदान करने के लिये अनुसूचित जातियों की प्रत्येक बस्ती, जिसे पीने के पानी का सन्तोष प्रद साधन प्राप्त नहीं है, एक "समस्याग्रस्त ग्राम" के रूप में मानी जाती है और प्राथमिकता के आधार पर सुलझाई जाती है। आदिवासी क्षेत्रों के मामले में यह परिकल्पना की गई है कि प्रत्येक टोला से लगभग एक किलोमीटर की दूरी के अन्दर पीने के पानी का कम से कम एक सुबाह्य प्रदान किया जाये। विद्युतीकृत गावों में जहां अनुसूचित जातियों की बस्तियों में सड़कों पर प्रकाश की व्यवस्था नहीं की गई है, वहां पर विद्युतीकरण प्राथमिकता के आधार पर किया जाना है। आदिवासी उपयोजनाओं में सम्मिलित सभी क्षेत्रों और उत्तर-पूर्व के सभी पर्वतीय राज्य/संघ राज्य क्षेत्र अर्थात् **असम, मणिपुर, मेघालय, नागालैंड, सिक्किम, त्रिपुरा, अरुणाचल प्रदेश** और **मिजोरम** भी न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अधीन ग्रामीण विद्युतीकरण के लिये प्राथमिकता क्षेत्रों के रूप में माने जाने हैं। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के ग्रामीण मार्ग घटक को विशिष्ट रूप से पर्वतीय, आदिवासी और रेगिस्तानी क्षेत्रों पर ध्यान देना है। इन क्षेत्रों के लिये लक्ष्य मोटे रूप से निम्नलिखित होंगे--

(1) **पर्वतीय क्षेत्र**

(क) 500 से अधिक जनसंख्या वाले गांवों को 10 वर्ष की अवधि में सड़कों से जोड़ना--100 प्रतिशत लक्ष्य,

(ख) 200 से 500 के बीच जनसंख्या वाले गांवों को 10 वर्ष की अवधि में सड़कों से जोड़ना--50 प्रतिशत लक्ष्य।

(2) **आदिवासी, तटीय और रेगिस्तानी क्षेत्र**

(क) 1000 से अधिक जनसंख्या वाले गांवों को 10 वर्ष की अवधि में सड़कों से जोड़ना--100 प्रतिशत लक्ष्य,

(ख) 500 से 1000 के बीच जनसंख्या वाले गांवों को 10 वर्ष की अवधि में सड़कों से जोड़ना--50 प्रतिशत लक्ष्य।

यह आश्चर्य की बात है कि आदिवासी क्षेत्रों में इस कार्यक्रम के लिये इकाई एक गांव है। चूंकि आदिवासी क्षेत्रों में बस्तियां छोटी होती हैं, पांचवीं पंचवर्षीय योजना के समय से इस प्रयोजन के लिये गांवों के संकेन्द्रण समूह को एक इकाई के रूप में माना गया है। **यह सुझाव दिया जाता है कि मार्ग निर्देशों में "गांवों" शब्द के स्थान पर "गांवों का संकेन्द्रण समूह" शब्द रखे जाएं विशिष्ट रूप से आदिवासी क्षेत्रों के संदर्भ में।** राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम के लिये रखी गई राशि भी न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अधीन ग्रामीण मार्गों के निर्माण के लिए पूरक निधि के रूप में प्रयोग में लाई जायेगी। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में सम्मिलित विभिन्न कार्यक्रमों के अधीन सातवीं योजना के अन्त तक प्राप्त किये जाने वाले उद्देश्य और लक्ष्य अनुलग्नक 4 में दिये गये हैं।

अनुलग्नक

विवरण पत्र

छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) के दौरान एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के

भौतिक लक्ष्य/उपलब्धि (स्तंभ 5 से 9)

क्र० सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	जिलों की संख्या	खण्डों की संख्या	लाभभोगियों की संख्या लक्ष्य	उपलब्धियां	स्तम्भ 5 से 6 का प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7
1.	आन्ध्र प्रदेश	22	330	979200	1212699	123.85
2.	असम	16	134	402000	306641	76.28
3.	बिहार	38	587	1761000	1923135	109.21
4.	गुजरात	19	218	654000	751437	114.90
5.	हरियाणा	12	93	268200	481292	179.45
6.	हिमाचल प्रदेश	12	69	207000	215209	103.96
7.	जम्मू-काश्मीर	14	113	270600	174004	64.30
8.	कर्नाटक	19	175	555000	715101	128.85
9.	केरल	13	151	440400	529979	120.34
10.	मध्य प्रदेश	45	459	1375200	1425993	103.69
11.	महाराष्ट्र	29	296	888000	962515	108.39
12.	मणिपुर	6	26	70200	31149	44.37
13.	मेघालय	5	30	79200	23845	30.11
14.	नगालैण्ड	1	21	63000	47893	76.02
15.	उड़ीसा	13	314	942000	921761	97.85
16.	पंजाब	12	118	352200	395762	112.37
17.	राजस्थान	27	236	700800	710076	101.32
18.	सिक्किम	1	4	12000	9961	83.01
19.	तमिलनाडु	15	378	1131000	1396016	123.43
20.	त्रिपुरा	3	17	51000	52423	102.79
21.	उत्तर प्रदेश	57	887	2641200	3432349	129.95
22.	पश्चिम बंगाल	15	335	1005000	717351	71.38
23.	अंडमान व निकोबार द्वीप समूह . .	2	5	9650	863	8.94
24.	अरुणाचल प्रदेश	11	48	104400	43978	42.12
25.	चण्डीगढ़	1	1	2475	1206	48.73
26.	दादरा व नागर हवेली . . .	1	1	3000	1666	55.53
27.	दिल्ली	1	5	15000	16845	112.30
28.	गोआ, दमण व दीव . . .	1	12	35200	30730	87.30
29.	लक्षद्वीप	1	5	10800	1510	13.98
30.	मिजोरम	3	20	60000	12493	20.82
31.	पांडिचेरी	1	4	12000	16845	140.37
	योग	416	5092	15100725	16562727	109.68

I

सं० 1

अधीन लक्ष्यों के समक्ष प्रगति दर्शाने वाला विवरणपत्र

वित्तीय परिव्यय/व्यय (स्तंभ 10 से 12) (रुपए लाख में)

क्र० सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	समावेशित अ०जा०/ अ०ज०जा० की संख्या	स्तंभ 6 से 8 का प्रतिशत	कुल आवंटन	उपयोग	आवंटन से उपयोग का प्रतिशत	जुटाया गया अवधि ऋण
1	2	8	9	10	11	12	13
1.	आन्ध्र प्रदेश .	619512	51.09	11436.00	13322.31	116.49	24395.94
2.	असम . .	95027	30.99	4690.00	4220.28	89.98	6117.85
3.	बिहार .	721640	37.52	20545.00	17078.81	83.13	30012.40
4.	गुजरात .	262591	34.95	7630.00	7469.55	97.90	13004.14
5.	हरियाणा .	126977	26.38	3141.00	3353.80	106.77	4829.79
6.	हिमाचल प्रदेश .	121240	56.33	2415.00	2318.57	96.01	2861.93
7.	जम्मू-काश्मीर .	20388	11.72	3233.00	2005.35	62.03	2542.47
8.	कर्नाटक .	177482	24.82	6125.00	7922.67	129.35	14935.81
9.	केरल . .	157897	29.79	5152.00	5176.89	100.48	11489.05
10.	मध्य प्रदेश .	658304	46.16	16046.00	15125.49	94.26	33579.29
11.	महाराष्ट्र .	308652	32.07	10360.00	10445.87	100.83	22539.00
12.	मणिपुर .	22732	72.98	910.00	406.24	44.64	22.38
13.	मेघालय .	17250	72.34	936.00	261.41	27.93	—
14.	नागालैण्ड .	47893	100.00	735.00	624.00	84.90	—
15.	उड़ीसा .	410266	44.51	10990.00	8751.86	79.63	12952.04
16.	पंजाब .	202149	51.08	4111.00	4591.38	111.68	7399.57
17.	राजस्थान .	395808	55.74	8184.00	8982.84	109.76	13305.74
18.	सिक्किम .	2555	25.65	140.00	101.90	72.78	111.11
19.	तमिलनाडु .	462828	33.15	13211.00	14662.02	110.98	25727.46
20.	त्रिपुरा .	25057	47.80	595.00	658.01	110.59	1179.90
21.	उत्तर प्रदेश .	1271494	37.04	30836.00	31173.46	99.18	73049.52
22.	पश्चिम बंगाल .	262793	36.63	11725.00	5393.45	46.00	8818.91
23.	अंडमान व निकोबार द्वीप समूह	58	6.72	175.00	10.49	5.99	14.28
24.	अरुणाचल प्रदेश .	43978	100.00	1680.00	761.67	45.34	—
25.	चण्डीगढ़ .	32	2.65	35.00	2.97	8.49	—
26.	दादरा व नागर हवेली	1520	91.24	35.00	28.94	82.68	36.33
27.	दिल्ली .	4834	28.70	175.00	202.00	115.43	405.65
28.	गोवा, दमण व दीव	2633	8.57	420.00	415.45	98.92	591.85
29.	लक्षद्वीप	1510	100.00	175.00	99.85	57.06	—
30.	मिजोरम .	12493	100.00	700.00	410.15	58.59	6.80
31.	पांडिचेरी .	4756	28.23	140.00	138.60	99.00	232.64
	योग .	6462349	39.02	176681.00	166116.28	94.02	310161.85

अनुलग्नक

विवरणपत्र

1985-86 के दौरान एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधीन

क—भौतिक प्रगति (स्तंभ 3 से 17 तक)

क्र० सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	भौतिक लक्ष्य			उपलब्धियां			लक्षित परिवारों का प्रतिशत		
		पुराने परिवार	नए परिवार	योग	पुराने परिवार	नए परिवार	योग	पुराने	नए	योग
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1.	आन्ध्र प्रदेश	54000	90000	144000	17449	162666	180115	32	181	125.08
2.	असम .	13000	48000	61000	शून्य	51843	51843	शून्य	108	84.99
3.	बिहार .	100000	210000	310000	118721	302414	421135	119	144	136.85
4.	गुजरात .	55000	39000	94000	29810	71465	101275	54	183	107.74
5.	हरियाणा	8000	20000	28000	4727	43769	48496	59	219	173.20
6.	हिमाचल प्रदेश	20000	11000	31000	22656	10918	33574	113	99	108.30
7.	जम्मू-काश्मीर	18000	15000	33000		संयुक्त	41329	संयुक्त		125.23
8.	कर्नाटक .	42000	63000	105000	53006	95788	148794	126	152	141.70
9.	केरल .	53000	33000	86000	39272	32104	71376	74	97	83.00
10.	मध्य प्रदेश .	92000	130000	222000	68036	181555	249591	74	140	112.43
11.	महाराष्ट्र .	50000	100000	150000	36549	153625	190174	73	154	126.78
12.	मणिपुर .	2000	4000	6000	1268	6219	7487	63	155	124.78
13.	मेघालय .	3000	5000	8000	शून्य	7129	7129	0	143	89.11
14.	नागालैण्ड	1500	4000	5500	444	7081	7525	30	177	136.82
15.	उड़ीसा .	29400	85000	114400	8536	164891	173427	29	194	151.60
16.	पंजाब .	25000	14000	39000	25016	39596	64612	100	283	165.67
17.	राजस्थान .	39000	44000	83000	12364	128139	140503	32	291	169.28
18.	सिक्किम .	87	760	847	589	1596	2185	677	210	257.97
19.	तमिलनाडु .	118000	68000	186000	127666	82030	209696	108	70	112.74
20.	त्रिपुरा .	5000	5000	10000	1044	13104	14148	21	262	141.48
21.	उत्तर प्रदेश	310000	233000	543000	315881	264921	580802	102	114	106.96
22.	पश्चिम बंगाल	100000	90000	190000	32741	254311	287052	33	283	151.08
23.	अंडमान व निकोबार द्वीप समूह .	237	500	737		संयुक्त	742	संयुक्त		100.68
24.	अरुणाचल प्रदेश	5500	2000	7500	5057	6301	11358	92	315	151.44
25.	चण्डीगढ़ .	100	शून्य	100		संयुक्त	116	संयुक्त		116.00
26.	दादरा व नागर हवेली	200	400	600	231	446	677	116	112	112.83
27.	दिल्ली .	743	550	1293	264	1882	2146	36	342	165.97
28.	गोवा, दमण व दीव	3000	1000	4000	3853	3199	7052	128	320	176.30
29.	लक्षद्वीप .	200	400	600	100	454	554	5	114	92.33
30.	मिजोरम	658	3242	3900		संयुक्त	2623	संयुक्त		67.26
31.	पांडिचेरी	1320	882	2202		संयुक्त	3142	संयुक्त		142.69
	योग	1149945	1320734	2470679			3060678			123.88

1

सं० 2

भौतिक व वित्तीय प्रगति

28-7-86 को यथा स्थिति

(संख्याओं में)

अनुसूचित जातियों के परिवारों की संख्या	स्तम्भ 8 से स्तंभ 12 का प्रतिशत	अनुसूचित जन-जातियों के परिवारों की संख्या	स्तम्भ 8 से 14 का प्रतिशत	महिला गृह-स्वामी परिवारों की संख्या	स्तम्भ 8 से 16 का प्रतिशत	कुल आवंटन	उपयोग	स्तम्भ 18 से स्तम्भ 19 का प्रतिशत
12	13	14	15	16	17	18	19	20
77154	43.83	19729	10.05	23378	12.98	2666.33	3109.28	116.61
4181	8.06	12852	24.79	4524	8.73	1377.20	1244.01	90.33
114161	27.11	51737	12.29	23302	5.53	5248.41	4954.45	94.40
12852	12.69	25121	24.80	12176	12.02	1597.10	1511.05	94.61
17999	37.11	शून्य	0.0	8180	16.87	441.25	804.53	182.33
18136	54.02	2688	8.03	3664	10.91	310.63	552.02	177.71
4297	10.40	शून्य	0.0	654	1.58	549.77	599.80	109.10
32863	22.87	3741	2.51	19136	12.86	1726.56	2043.07	118.33
22672	31.76	2182	3.06	19778	27.71	1341.32	982.65	73.26
57266	22.94	71227	28.54	10941	4.38	3762.82	3688.51	98.02
43025	22.62	30310	15.94	31475	16.55	3057.85	3336.09	109.10
209	2.79	5348	71.43	1945	25.98	126.41	135.21	106.96
2	0.03	7043	98.79	2457	34.46	170.92	177.94	104.10
शून्य	0.0	7525	100.00	128	1.70	100.29	208.30	207.70
37597	21.68	44522	25.67	6313	3.64	2496.40	2245.60	89.95
32379	50.11	शून्य	—	6505	10.07	531.06	872.18	164.23
58446	41.60	21921	15.60	7094	5.05	1587.63	1934.79	121.87
129	5.90	573	26.22	190	8.70	20.07	27.38	136.42
93713	44.69	3283	1.56	62284	29.70	2776.85	2985.89	107.53
1736	12.27	5617	39.70	460	3.25	165.76	236.87	142.90
266624	45.91	2520	0.43	21099	3.63	6827.25	7814.29	114.46
80872	28.17	14712	5.12	30053	10.47	3403.28	4107.11	120.68
शून्य	—	55	7.41	60	8.08	22.32	12.70	56.90
शून्य	—	8795	77.43	2563	22.56	214.26	195.41	91.20
29	25.00	शून्य	—	16	13.79	4.46	प्राप्त नहीं	प्राप्त नही
55	8.12	579	85.52	236	34.86	4.46	7.16	159.82
473	22.04	शून्य	—	107	4.98	22.32	39.38	176.43
235	3.33	61	0.86	3266	46.31	53.56	86.61	161.71
शून्य	—	554	100.00	262	47.29	22.32	33.13	148.43
शून्य	—	2460	93.78	407	15.52	89.28	127.05	142.31
850	27.05	शून्य	—	387	12.32	17.86	37.92	212.32
977955	31.95	345165	11.28	303440	9.89	40736.00	44110.38	108.28

अनुलग्नक 1

विवरणपत्र संख्या 2

1985-86 के दौरान एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधीन

ख--वित्तीय परिव्यय/व्यय (स्तम्भ 18 से 29)

क्रम सं०	राज्य /संघ राज्य क्षेत्र का नाम	केन्द्रीय भाग	केन्द्र से दी गई सहायता	स्तम्भ 21 से स्तम्भ 22 का प्रतिशत	ऋण लक्ष्य	उपलब्धि	
						सहकारी बैंक	वणिज्यिक बैंक
1	2	21	22	23	24	25	26
1.	आन्ध्र प्रदेश. .	1333.16	1333.19	100.00	4266.13	427.07	4340.64
2.	असम . .	688.60	467.42	67.88	2203.52	98.41	1369.73
3.	बिहार . .	2624.20	2477.45	94.41	8397.45	548.26	9182.21
4.	गुजरात . .	798.55	845.97	105.94	2555.36	189.15	1870.60
5.	हरियाणा . .	220.62	372.00	168.62	706.00	57.21	1351.90
6.	हिमाचल प्रदेश .	155.32	215.44	138.71	497.00	1.31	662.16
7.	जम्मू-काश्मीर .	274.89	286.29	104.15	879.63	140.10	549.68
8.	कर्नाटक . .	863.28	863.28	100.00	2762.49	258.91	3465.79
9.	केरल .	670.66	669.94	99.89	2146.11	229.13	1448.10
10.	मध्य प्रदेश .	1881.40	1882.38	100.05	6020.51	774.94	5875.74
11.	महाराष्ट्र . .	1528.93	1526.12	99.82	4892.56	1193.22	4864.87
12.	मणिपुर . .	63.21	77.60	122.77	202.25	1.48	28.58
13.	मेघालय . .	85.46	48.72	57.01	273.47	शून्य	शून्य
14.	नागालैण्ड . .	50.14	84.00	167.53	160.46	0.20	शून्य
15.	उड़ीसा . .	1248.20	1098.11	87.98	3994.24	643.03	2254.58
16.	पंजाब . .	265.53	457.19	172.18	849.69	4.70	1698.66
17.	राजस्थान . .	793.82	868.91	109.46	2540.21	599.15	2344.48
18.	सिक्किम . .	10.04	13.02	129.68	32.11	शून्य	40.99
19.	तमिलनाडु . .	1388.43	1512.08	108.91	4442.96	1472.08	3751.88
20.	त्रिपुरा .	82.88	82.88	100.00	265.21	47.86	514.86
21.	उत्तर प्रदेश .	3413.62	3440.51	100.79	10923.60	2702.27	11617.40
22.	पश्चिम बंगाल .	1701.64	1500.29	88.17	5445.25	165.04	5366.70
23.	अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह	22.32	24.00	107.53	35.71	2.04@	13.20
24.	अरुणाचल प्रदेश .	214.26	187.82	87.66	342.82	1.70	1.00
25.	चण्डीगढ़ . .	4.46	—	—	7.14	शून्य	3.48
26.	दादरा व नागर हवेली	4.46	8.00	179.37	7.17	शून्य	12.94
27.	दिल्ली . .	22.32	39.44	176.71	35.71	शून्य	70.09
28.	गोवा, दमण और दीव	53.56	96.00	179.24	85.70	1.36	170.64
29.	लक्षद्वीप . .	22.32	40.00	179.21	35.71	शून्य	28.65
30.	मिजोरम . .	89.28	160.00	179.21	142.85	शून्य	शून्य
31.	पांडिचेरी . .	17.86	32.00	179.17	28.58	शून्य	78.64
	योग . .	20593.42	20710.04	100.57	65177.60	9561.62	62978.55

@आंकड़े जनवरी 1986 के हैं ।

भौतिक व वित्तीय प्रगति 28-7-86 को यथा स्थिति

ग—प्रति व्यक्ति विशुद्ध निवेश (स्तम्भ 30 से 36) (रुपए लाख में)

योग	स्तम्भ 24 से स्तम्भ 27 का प्रतिशत	सहायिकी ऋण अनुपात	पुराने परिवार प्रति व्यक्ति सहायिकी	पुराने परिवार प्रति व्यक्ति ऋण	पुराने परिवार प्रति व्यक्ति निवेश	नए परिवार प्रति व्यक्ति सहायकी	नए परिवार प्रति व्यक्ति ऋण	नए परिवार प्रति व्यक्ति निवेश	प्रति व्यक्ति निवेश संयुक्त
27	28	29	30	31	32	33	34	35	36
4767.71	111.76	1:2.26				संयुक्त			3817
1497.17	67.94	1:1.68				संयुक्त			4612
9730.47	115.87	1:2.21	1044	2297	3341	1047	2316	3363	3357
2059.75	80.61	1:1.89	937	1561	2498	1137	2231	3368	3111
1409.11	199.50	1:2.20	1112	2961	4073	1344	2900	4244	4227
663.47	133.49	1:1.55	1199	1875	3074	1438	2186	3624	3253
689.78	78.42	1:1.51				संयुक्त			2773
3724.70	134.83	1:2.27	1079	2458	3537	1113	2528	3641	3604
1677.23	78.15	1:2.16				संयुक्त			3436
7100.01*	117.93	1:2.50	1052	2367	3419	1172	2598	3770	प्राप्त नहीं
6058.09	123.82	1:2.16	1116	2600	3716	1556	3325	4881	4657
30.06	14.86	1:0.28				संयुक्त			1818
शून्य	—	—	शून्य	शून्य	शून्य	2235	शून्य	2235	2206
0.20	0.12	1:00.01	2236	शून्य	2236	2379	शून्य	2379	2365
2897.61	72.54	1:1.61	882	1563	2445	1043	1676	2719	2706
1703.36	200.47	1:2.31	795	2286	3081	1359	2857	4216	3777
•2943.63	115.88	1:1.92				संयुक्त			3190
40.99	127.65	1:2.62	671	1885	2556	7321	1873	2605	2591
5223.96	117.58	1:2.12	898	1852	2750	1600	3363	4963	3664
562.72	212.18	1:2.72				संयुक्त			5442
14319.67	131.09	1:2.10	1005	2086	3091	1374	2918	4292	3638
5531.74	101.59	1:1.82							3286
15.24	42.68	1:1.20	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं
2.70	0.79	1:0.02	1236	8	1234	1361	37	1398	1329
3.48	48.74	—	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं
12.94	180.47	1:2.11	801	1714	2515	960	2013	2973	2817
70.09	196.28	1:3.08	1394	4337	5731	1015	3116	4131	4328
172.00	200.70	1:3.50				संयुक्त			3135
28.65	80.23	1:1.14	2960	3550	6510	49[illegible]	5529	10434	9726
शून्य	—	—				संयुक्त			3368
78.64	275.16	1:2.92				संयुक्त			3360
73015.17	112.02	1:2.05							3574

*विस्तृत विवरण कुल के बराबर नहीं होगा क्योंकि सहकारी तथा वाणिज्यिक बैंकों की सूचना अलग-अलग महीनों की है।

अनुलग्नक 1

विवरणपत्र सं० 3

1986-87 के दौरान एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधीन भौतिक तथा वित्तीय प्रगति

21-7-1987 को यथास्थिति

क—भौतिक प्रगति (स्तम्भ 3 से 17) (संख्याओं में)

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	भौतिक लक्ष्य			उपलब्धि		
		पुराने परिवार	नए परिवार	योग	पुराने परिवार	नए परिवार	योग
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	155000	86500	241500	54951	201933	256944
2.	अरुणाचल प्रदेश. . .	3900	12700	16600	7055	6647	13802
3.	असम . . .	40000	30500	70500	3543	64476	68019
4.	बिहार . . .	274000	186000	460000	193804	341351	535155
5.	गुजरात . . .	86000	36500	132500	58447	89080	147527
6.	हरियाणा . . .	36000	18000	54000	14644	35776	50420
7.	हिमाचल प्रदेश . .	23000	8100	31100	25117	11838	36955
8.	जम्मू-काश्मीर . . .	18000	20500	38500	870	25848	26718
9.	कर्नाटक . . .	87000	58500	145500	70305	74970	145275
10.	केरल . . .	93000	35500	128500	93024	50375	143399
11.	मध्य प्रदेश . . .	208000	127000	335000	113967	249615	363582
12.	महाराष्ट्र . . .	120000	100000	220000	108749	129369	238118
13.	मणिपुर . . .	4000	4800	8800	2769	10964	13673
14.	मेघालय . . .	2000	6800	8800	2717	9253	11970
15.	मिजोरम . . .	1500	10600	12100	6784	1654	8438
16.	नगालैंड . . .	7000	6500	13500	336	3982	4318
17.	उड़ीसा . . .	124000	110000	234000	74588	133284	207872
18.	पंजाब . . .	4700	44500	91500	51645	48290	99935
19.	राजस्थान . . .	87000	68900	155900	15554	148918	164472
20.	सिक्किम . . .	1240	1060	2300	806	1922	2728
21.	तमिलनाडु . . .	151000	95500	246500	154489	104334	258823
22.	त्रिपुरा . . .	6000	9000	15000	4424	11355	15889
23.	उत्तर प्रदेश . . .	399000	233000	632000	408974	257500	666474
24.	पश्चिम बंगाल . . .	58000	131500	189500	70925	172996	243921
25.	अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह	100	1700	1800	1945	358	2303
26.	चण्डीगढ़ . . .	100	2400	2500	17	103	120
27.	दादरा और नागर हवेली . .	100	900	1000	366	714	1080
28.	दिल्ली . . .	2200	2900	5100	—	4380	4380
29	गोवा दमण और दीव . .	3100	6200	9300	3474	5576	9050
30.	लक्षद्वीप . . .	100	1200	1300	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	444
31.	पाण्डिचेरी . . .	1900	2100	4000	1910	3765	5875
	अखिल भारत . . .	2040000	1460000	350000	1546199	2200626	3747269

(जारी)

क्रम सं०	राज्य संघ राज्य क्षेत्र का नाम	लक्ष्य से परिवारों का प्रतिशत			अ० जा० के परिवारों की संख्या	कुल परिवारों से प्रतिशत
		पुराने परिवार	नए परिवार	योग		
1	2	9	10	11	12	13
1.	आन्ध्र प्रदेश . .	35.45	233.52	106.40	105764	41.16
2.	अरुणाचल प्रदेश . .	180.90	52.31	82.54	—	0.00
3.	असम . .	8.86	211.40	96.48	5343	7.87
4.	बिहार . .	70.73	183.52	116.34	143771	26.87
5.	गुजरात . .	67.96	244.05	120.43	18511	12.55
6.	हरियाणा . .	40.68	198.76	93.37	18706	37.10
7.	हिमाचल प्रदेश . .	109.20	146.15	118.83	18661	50.50
8.	जम्मू व काश्मीर .	4.83	126.09	69.40	1982	7.42
9.	कर्नाटक . .	80.81	128.15	99.75	35811	24.65
10.	केरल . .	100.03	141.90	111.59	42177	29.41
11.	मध्य प्रदेश . .	54.79	196.55	108.53	80919	22.26
12.	महाराष्ट्र . .	90.62	129.37	108.24	58964	24.76
13.	मणिपुर . .	69.23	227.17	155.00	48	0.36
14.	मेघालय . .	135.85	136.07	136.02	—	0.00
15.	मिजोरम . .	452.27	15.60	69.74	—	0.00
16.	नगालैंड . .	4.80	61.26	31.99	—	0.00
17.	उड़ीसा . .	60.15	121.17	88.83	47631	22.91
18.	पंजाब . .	109.88	108.52	109.22	53035	53.07
19.	राजस्थान . .	17.88	216.14	105.50	55623	33.82
20.	सिक्किम . .	65.00	181.32	73.73	132	4.84
21.	तमिलनाडु . .	102.31	109.25	105.00	113803	43.97
22.	त्रिपुरा . .	73.73	126.17	105.19	2017	12.78
23.	उत्तर प्रदेश . .	102.50	110.52	105.45	318621	47.81
24.	पश्चिम बंगाल . .	122.28	131.56	128.72	75176	30.82
26.	अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह	1945 00	21.06	127.94	—	0.00
26.	चण्डीगढ़ . .	17.00	4.29	4.80	31	25.83
27.	दादरा एवं नागर हवेली	366 00	79.33	108.00	45	4.17
28.	दिल्ली	—	151.03	85.88	996	22.74
29.	गोवा दमण और दीव .	112.06	89.94	97.31	438	4.84
30.	लक्षद्वीप . .	प्राप्त नहीं	प्राप्त नहीं	34.15	—	0.00
31.	पाण्डिचेरी . .	100.53	179.29	141.88	1596	28.12
अखिल भारत	.	75.79	150.73	107.06	1199811	32.02

(जारी)

क्रम सं०	राज्य संघ/राज्य क्षेत्र का नाम	अ० ज० जा० के परिवारों की सं०	कुल परिवारों से प्रतिशत	महिला लाभभोगियों की सं०	कुल परिवारों से प्रतिशत
1	2	14	15	16	17
1.	आन्ध्र प्रदेश	28273	11.00	42631	16.59
2.	अरुणाचल प्रदेश . . .	13702	100.00	2763	20.16
3.	असम	15883	23.35	7798	11.46
4.	बिहार	79328	14.82	53418	9.98
5.	गुजरात	35490	24.06	30176	20.45
6.	हरियाणा	—	0.00	14996	29.74
7.	हिमाचल प्रदेश	4065	11.00	5426	14.68
8.	जम्मू-काश्मीर	—	0.00	1254	4.69
9.	कर्नाटक . . .	4057	2.79	24437	16.82
10.	केरल	4210	2.94	44978	31.37
11.	मध्य प्रदेश	108717	29.90	26595	7.31
12.	महाराष्ट्र	37630	15.80	46297	19.44
13.	मणिपुर	9376	68.57	3032	22.18
14.	मेघालय	11738	98.06	4082	34.10
15.	मिजोरम	8438	100.00	1742	20.64
16.	नागालैंड	4318	100.00	430	9.96
17.	उड़ीसा	53320	25.65	15021	7.23
18.	पंजाब	—	0.00	14039	14.05
19.	राजस्थान	30625	18.62	9138	5.56
20.	सिक्किम	909	33.32	421	15.43
21.	तमिलनाडु	6110	2.36	86921	33.58
22.	त्रिपुरा	5687	36.04	614	3.89
23.	उत्तर प्रदेश	2203	0.33	86813	13.03
24.	पश्चिम बंगाल . . .	14283	5.86	39115	16.04
25.	अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह .	358	15.54	286	12.42
26.	चण्डीगढ़	—	0.00	32	26.87
27.	दादरा और नागर हवेली . .	1004	92.96	314	29.07
28.	दिल्ली	—	0.00	523	11.94
29.	गोवा दमण और दीव . . .	90	0.99	2844	31.43
0.	लक्षद्वीप	444	100.00	51@	11.49
1.	पाण्डिचेरी	1	0.02	873	15.38
	अखिल भारत	480259	12.82	567050	15.13

@अक्तूबर 1986 तक की सूचना

(जारी)

ख. वित्तीय प्रगति (स्तम्भ 18 से 19) (रुपये लाख में)

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	कुल आबंटित	उपयोग	आबंटन से प्रतिशत	केन्द्रीय भाग	केन्द्र से दी गई	केन्द्रीय भागसे प्रतिशत
1	2	18	19	20	21	22	23
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	3739.77	4747.60	126.95	1869.89	1869.78	99.99
2.	अरुणाचल प्रदेश . .	367.15	295.95	80.61	367.15	243.52	66.33
3.	असम . . .	1256.59	1901.34	151.31	628.30	628.30	100.00
4.	बिहार . . .	7097.72	7683.99	108.26	3548.86	3382.51	95.31
5.	गुजरात . . .	1979.67	2324.35	117.41	989.84	989.74	99.99
6.	हरियाणा . . .	691.18	893.43	129.26	345.59	345.39	128.94
7.	हिमाचल प्रदेश . . .	437.76	682.81	155.98	218.88	218.88	100.00
8.	जम्मू-काश्मीर . . .	702.03	558.95	79.62	351.02	348.19	99.19
9.	कर्नाटक . . .	2173.82	2424.80	111.55	1086.91	1086.90	100.00
10.	केरल . . .	1477.97	2382.07	161.17	738.98	1043.98	141.27
11.	मध्य प्रदेश . . .	5073.61	5515.73	108.31	2536.80	2536.89	100.00
12.	महाराष्ट्र . . .	3699.47	4192.98	113.34	1849.73	1732.75	93.68
13.	मणिपुर . . .	154.83	284.51	183.76	77.41	77.41	100.00
14.	मेघालय . . .	208.17	435.08	209.00	104.08	81.55	78.35
15.	मिजोरम . . .	180.68	300.79	166.48	180.68	284.68	157.56
16.	नगालैंड . . .	263.27	145.20	55.15	131.64	126.00	95.72
17.	उड़ीसा . . .	2972.04	2819.17	94.86	1486.02	1238.73	83.29
18.	पंजाब . . .	795.36	1410.48	177.34	397.68	812.49	204.31
19.	राजस्थान . . .	2523.54	2435.50	96.51	1261.77	1185.63	93.97
20.	सिक्किम . . .	86.13	33.39	38.77	43.06	21.05	48.89
21.	तमिलनाडु . . .	3793.53	4322.20	113.94	1896.76	2097.56	110.59
22.	त्रिपुरा . . .	146.75	372.11	253.57	73.38	142.75	194.54
23.	उत्तर प्रदेश . . .	10029.66	11138.60	111.06	5014.83	5014.83	100.00
24.	पश्चिम बंगाल . . .	4001.01	3679.49	91.96	2000.51	1935.15	96.37
25.	अण्डमान और निकोबार दीप समूह .	45.15	49.91	110.54	45.15	45.15	100.00
26.	चण्डीगढ़ . . .	60.73	1.85	3.05	60.73	—	0.00
27.	दादरा और नागर हवेली . .	23.79	19.19	80.66	23.79	23.79	100.00
28.	दिल्ली . . .	100.58	86.19	85.69	100.58	100.58	100.00
29.	गोवा दमण और द्वीव . .	193.36	120.35	62.24	193.36	165.25	85.98
30.	लक्षद्वीप . . .	30.49	9.27@	30.40	30.49	11.09	36.37
31.	पाण्डिचेरी . . .	76.75	70.65	92.05	76.75	76.75	100.00
	अखिल भारत . . .	54382.56	61337.93	112.79	27730.62	27967.47	100.85

@अक्तूबर 1986 तक की सूचना

(जारी)

(रुपये लाख में)

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	ऋण लक्ष्य	उपलब्धि			स्तम्भ 24 से स्तम्भ 27 का प्रतिशत	सहायिकी ऋण अनुपात
			सहकारी बैंक	वाणिज्यिक बैंक	योग		
1	2	24	25	26	27	28	29
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	5983.63	856.93	6241.87	7098.80	118.64	1:1.78
2	अरुणाचल प्रदेश . .	587.44	0.59	15.79	16.38	2.79	1:1.07
3.	असम . . .	2010.54	110.27	2427.61	2537.88	126.33	1:1.72
4.	बिहार . . .	11356.35	625.67	13582.92	14208.59	125.12	1:2.08
5.	गुजरात . . .	3167.47	277.86	2938.60	3216.46	101.55	1:1.87
6.	हरियाणा . . .	1105.89	20.33	1473.84	1494.17	135.11	1:2.08
7.	हिमाचल प्रदेश . . .	700.42	1.81	808.13	809.94	115.64	1:1.57
8.	जम्मू काश्मीर . . .	1123.25	128.99	650.21	779.20	69.37	1:1.94
9.	कर्नाटक . . .	3478.11	227.90	3963.04	4190.94	120.49	1:2.31
10.	केरल . . .	2364.75	591.98	3597.62	4189.60	177.17	1:2.08
11.	मध्य प्रदेश . . .	8117.78	1629.77	10012.19	11641.96	143.41	1:2.55
12.	महाराष्ट्र . . .	5919.15	1206.87	6075.40	7282.27	123.03	1:2.09
13.	मणिपुर . . .	247.73	—	96.52	96.52	38.96	1:0.40
14.	मेघालय . . .	333.07	—	—	—	—	—
15.	मिजोरम . . .	289.09	—	—	—	—	—
16.	नगालैंड . . .	421.23	11.82	47.93	59.75	14.18	1:0.51
17.	उड़ीसा . . .	4755.26	520.95	3227.00	3747.95	78.82	1:1.70
18.	पंजाब . . .	1272.58	9.47	2976.45	2982.92	234.64	1:2.39
19.	राजस्थान . . .	4037.66	650.77	2824.10	3474.87	86.06	1:1.72
20.	सिक्किम . . .	137.81	—	65.59	65.59	47.59	1:2.69
21.	तमिलनाडु . . .	6069.65	2072.94	5342.52	7415.46	122.17	1:2.04
22.	त्रिपुरा . . .	234.80	87.73	568.06	655.79	279.30	1:2.01
23.	उत्तर प्रदेश . . .	16047.46	2999.17	15536.14	18535.31	115.50	1:1.99
24.	पश्चिम बंगाल . . .	6401.62	179.27	6204.95	6384.22	99.73	1:1.87
25.	अण्डमान, निकोबार दीप समूह .	72.24	23.53	50.80	74.33	102.89	1:1.54
26.	चण्डीगढ़ . . .	97.17	—	4.86	4.86	5.00	1:2.81
27	दादरा एवं नागर हवेली . .	38.06	1.09	31.18	32.27	84.79	1:2.11
28.	दिल्ली . . .	160.93	—	192.56	192.56	119.65	1:2.12
29.	गोवा दमण और दीव . .	309.38	1.81	179.52	181.33	58.61	1:2.22
30.	लक्षद्वीप . . .	48.78	—	5.74@	5.74@	11.77	उपलब्ध नहीं
31.	पाण्डिचेरी . . .	122.80	—	109.78	109.78	89.40	1:1.98
	अखिल भारत . .	87012.10	12237.52	89250.92	101488.44	116.64	1:1.98

@अक्तूबर 1986 तक की सूचना

(जारी)

ग—प्रति व्यक्ति विशुद्ध निवेश (स्तम्भ 30 से 36) (रुपये लाख में)

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	पुराने परिवार			नए परिवार			प्रति व्यक्ति निवेश (संयुक्त)
		प्रति व्यक्ति सहायिकी	प्रति व्यक्ति ऋण	प्रति व्यक्ति निवेश	प्रति व्यक्ति सहायिकी	प्रति व्यक्ति ऋण	प्रति व्यक्ति निवेश	
1	2	30	31	32	33	34	35	36
1.	आन्ध्र प्रदेश .	1131	2181	3312	1660	2921	4581	4309
2.	अरूणाचल प्रदेश				संयुक्त			1766
3.	असम				संयुक्त			5900
4.	बिहार .	1199	2544	3743	1320	2718	4038	3931
5.	गुजरात	986	1770	2756	1284	2449	3734	3346
6.	हरियाणा	1330	2815	4145	1468	3024	4492	4392
7.	हिमाचल प्रदेश .	1325	1990	3315	1559	2619	4178	3592
8.	जम्मू-काश्मीर .	1399	2860	4259	1508	2918	4426	4421
9.	कर्नाटक . .	1203	2810	4013	1295	2955	4250	4135
10	केरल . .	1144	2427	3572	1879	3835	5713	4324
11.	मध्य प्रदेश	1187	3049	4236	1289	3272	4561	4459
12.	महाराष्ट्र	1193	2484	3677	1688	3541	5229	4520
13.	मणिपुर				संयुक्त			2452
14.	मेघालय	2182	—	2182	3514	—	3514	3237
15.	मिजोरम	519	—	519	12570	—	12570	2881
16.	नगालैंड . .	1926	—	1926	2787	1501	4288	4104
17.	उड़ीसा . .	917	1611	2528	1142	1911	3052	2864
18	पंजाब . .	1007	2729	3736	1512	3265	4777	4239
19.	राजस्थान . .	1003	1998	3001	1249	2125	3373	3338
20.	सिक्किम . .	680	2022	2702	983	2565	3548	3298
21.	तमिलनाडु .	1132	2344	3476	1803	7471	9274	4268
22.	त्रिपुरा .				संयुक्त			6223
23.	उत्तर प्रदेश .	1264	2539	3803	1617	3165	4782	4181
24.	पश्चिम बंगाल .	1282	2415	3697	1452	2700	4152	4020
25.	अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह .				संयुक्त			5321
26.	चण्डीगढ़ . .				संयुक्त			5442
27.	दादरा और नागर हवेली	1260	2847	4107	1496	3060	4556	4404
28.	दिल्ली . .	—	—	—	1410	4396	5806	5806
29.	गोवा दमन और दीव	417	809	1226	1497	2904	4401	3174
30.	लक्षद्वीप . .				नहीं बताया गया			
31.	पाण्डिचेरी .				संयुक्त			2940
	अखिल भारत	1178	2412	3590	1478	3033	4511	4076

अक्तूबर 1986 तक की सूचना

—शून्य दर्शाता है

अनुलग्नक

विवरण पत्र/

अ०जा०/अ०ज०जा० के व्यक्तियों को प्राथमिकता ऋण क्षेत्र (ब्याज की विशेष दर से अलावा) के अधीन दिसम्बर 1985 को समाप्त हुआ अर्ध वर्ष

क्र०सं०	बैंक का नाम	कुल अग्रिम राशि	प्राथमिकता क्षेत्र का कुल अग्रिम		स्तंभ 3से स्तंभ 5 का प्रतिशत	अ०जा० के लाभ-भोगियों को अग्रिम	
			लेखों की सं०	राशि		लेखों की सं०	राशि
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया . .	1300500.00	6705961	552248.14	42.5	1190881	34681.37
2.	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर और जयपुर	62725.00	251726	27125.11	43.2	61590	1880.63
3.	स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद .	58600.00	507548	27073.41	46.2	87874	1948.05
4.	स्टेट बैंक ऑफ इंदौर . .	30120.00	144673	12843.33	42.6	33384	850.30
5.	स्टेट बैंक ऑफ मैसूर . .	49653.00	297459	22430.45	45.2	53482	899.04
6.	स्टेट बैंक ऑफ पटियाला .	56480.28	178076	24239.80	42.9	42723	1287.01
7.	स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र .	35430.00	135378	15625.24	44.1	20864	547.50
8.	स्टेट बैंक ऑफ त्रावनकोर .	62137.00	539314	27875.41	44.9	52944	725.25
9.	इलाहाबाद बैंक . .	100408.84	490062	41219.02	41.1	124988	2785.40
10.	बैंक ऑफ बड़ौदा . .	276119.00	1202795	113988.10	41.3	205587	4135.03
11.	बैंक ऑफ इंडिया . .	289636.37	1135307	118777.45	41.0	200753	3796.33
12.	बैंक ऑफ महाराष्ट्र . .	95506.00	344864	41556.93	43.5	63310	1493.97
13.	केनरा बैंक . . .	336081.30	1800336	142023.73	42.3	238580	4790.47
14.	सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया . .	333735.91	1582268	138942.14	41.6	316536	7527.25
15.	देना बैंक . . .	94589.22	359923	39607.75	41.9	74325	1709.85
16.	इंडियन बैंक . . ०	129126.19	678062	54448.84	42.2	120351	2570.59
17.	इंडियन ओवरसीज बैंक . .	148121.16	1074728	64309.31	43.4	167754	3329.93
18.	पंजाब नेशनल बैंक . .	308396.62	1131713	131141.49	42.5	311455	7586.36
19.	सिंडिकेट बैंक . . .	213077.77	1391637	96975.20	45.5	163185	3843.48
20.	यूनियन बैंक ऑफ इंडिया .	177580.40	879091	78072.41	44.0	181669	3952.02
21.	यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया .	152018.52	922162	66043.64	43.4	146884	2504.02
22.	यूको बैंक . . .	143154.61	711963	70435.78	41.6	185718	4113.72
23.	आन्ध्रा बैंक . . .	88703.99	655892	37993.88	42.8	99985	1668.54
24.	कॉरपोरेशन बैंक . .	44773.85	204731	21253.66	47.5	29153	674.95
25.	न्यू बैंक ऑफ इंडिया . .	58256.58	124655	26900.51	46.2	27395	1101.84
26.	ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स	54362.00	134157	24528.40	45.1	29113	966.58
27.	पंजाब और सिंध बैंक .	69095.73	163618	29131.54	42.2	46223	1512.03
28.	विजया बैंक . . .	60441.00	294799	25660.95	42.5	30449	695.64
	योग	4828831.53	24042898	2072471.62	42.9	4307195	103577.15

(जारी)

2

सं० 1

सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा दी गई अग्रिम धन राशि

(रुपए लाख में)

क०सं०	बैंक का नाम	स्तंभ 5 से स्तंभ 8 का प्रतिशत	अ०ज०जा० के लाभ भोगियों को अग्रिम: खातों की संख्या	अ०ज०जा० के लाभ भोगियों को अग्रिम: राशि	स्तंभ 5 से स्तंभ 11 का प्रतिशत	प्राथमिकता क्षेत्र के अधीन आवास ऋण (राशि): योग	अ०जा०	स्तंभ 13 से स्तंभ 14 का प्रतिशत	अ०ज०जा०	स्तंभ 13 से स्तंभ 16 का प्रतिशत
1	2	9	10	11	12	13	14	15	16	17
1.	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	6.3	422867	11488.50	2.1	539.84	511.77	94.8	28.07	5.2
2.	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर और जयपुर	6.9	23787	854.84	3.2	162.67	131.73	81.0	30.94	19.0
3.	स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद	7.2	31785	987.74	3.6	23.04	23.04	100.0	--	0.0
4.	स्टेट बैंक ऑफ इंदौर	6.6	12194	361.61	2.8	--	--	--	--	--
5.	स्टेट बैंक ऑफ मैसूर	4.0	13053	226.39	1.0	15.81	12.00	75.9	3.81	24.1
6.	स्टेट बैंक ऑफ पटियाला	5.3	853	20.27	0.1	1.02	1.02	100.0	--	0.0
7.	स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र	3.5	2592	106.94	0.7	17.10	17.07	99.8	0.03	0.2
8.	स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर	2.6	3411	44.85	0.2	2.04	2.04	100.0	--	0.0
9.	इलाहाबाद बैंक	6.8	17376	351.11	0.9	83.00	77.76	93.7	5.24	6.3
10.	बैंक ऑफ बड़ौदा	3.6	119671	2615.03	2.3	224.01	168.86	75.4	55.15	24.6
11.	बैंक ऑफ इंडिया	3.2	131203	1993.91	1.7	35.24	30.96	87.9	4.28	12.1
12.	बैंक ऑफ महाराष्ट्र	3.6	29350	624.81	1.5	3.45	3.41	98.8	0.04	1.2
13.	केनरा बैंक	3.4	41722	640.58	0.5	57.85	55.08	95.2	2.77	4.8
14.	सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया	5.4	91889	1996.81	1.4	114.84	105.12	91.5	9.72	8.5
15.	देना बैंक	4.3	43151	1007.19	2.5	168.47	162.90	96.7	5.57	3.3
16.	इंडियन बैंक	4.7	14151	250.98	0.5	166.82	164.78	98.8	2.04	1.2
17.	इंडियन ओवरसीज बैंक	5.2	14675	213.76	0.3	138.06	137.74	99.8	0.32	0.2
18.	पंजाब नेशनल बैंक	5.8	29376	746.21	0.6	184.18	167.11	90.7	17.07	9.3
19.	सिंडिकेट बैंक	4.0	99133	2368.37	2.4	318.60	187.87	59.0	130.73	41.0
20	यूनियन बैंक ऑफ इंडिया	5.1	36829	685.71	0.9	125.94	120.24	95.5	5.70	4.5
21.	यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया	3.8	113376	1918.88	2.9	39.72	14.92	37.6	24.80	62.4
22.	यूको बैंक	5.8	47308	732.64	1.0	127.20	121.30	95.4	5.90	4.6
23.	आन्ध्रा बैंक	4.4	26231	398.94	1.1	77.71	76.51	98.5	1.20	1.5
24.	कॉर्पोरेशन बैंक	3.2	3089	78.33	0.4	12.30	11.89	96.7	0.41	3.3
25.	न्यू बैंक ऑफ इंडिया	4.1	1568	49.90	0.2	197.91	193.88	98.0	4.03	2.0
26.	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स	3.9	698	22.04	0.1	29.25	29.25	100.0	--	0.0
27.	पंजाब और सिंध बैंक	5.2	988	30.84	0.1	5.15	4.99	96.9	0.16	3.1
28.	विजया बैंक	2.7	5963	309.09	1.2	19.16	18.62	97.2	0.54	2.8
	योग	5.0	1378289	31126.27	1.5	2890.38	2551.86	88.3	338.52	11.7

अनुलग्नक 2

विवरण पत्र सं० 2

अ० जा०/अ० ज० जा० के व्यक्तियों को ब्याज की विशेष दर योजना के अधीन सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा दी गई अग्रिम धनराशि

दिसम्बर, 1985 को समाप्त अर्ध वर्ष

(रूपये लाख में)

क्रम सं०	बैंक का नाम	दिसम्बर 1984 को कुल अग्रिम	कुल अग्रिम		स्तम्भ 3 से स्तम्भ 5 का प्रतिशत
			लेखों की सं०	राशि	
1	2	3	4	5	6
1.	स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया . . .	117100.00	1536927	14380.51	1.2
2.	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर और जयपुर .	57194.15	40335	594.32	1.0
3.	स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद . .	53174.20	70745	458.40	0.9
4.	स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर . . .	24706.43	34069	441.63	1.8
5.	स्टेट बैंक ऑफ मैसूर . . .	42559.00	54292	467.69	1.1
6.	स्टेट बैंक ऑफ पटियाला . . .	51828.00	22915	646.86	1.2
8.	स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र . . .	51248.30	39003	468.00	1.5
8.	स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर . . .	55234.77	69390	585.93	1.1
9.	इलाहाबाद बैंक	36910.63	73712	884.28	1.0
10.	बैंक ऑफ बड़ौदा . . .	229831.00	235392	2565.00	1.1
11.	बैंक ऑफ इण्डिया . . .	248599.49	260792	2527.28	1.0
12.	बैंक ऑफ महाराष्ट्र . . .	87232.00	55160	712.06	0.8
13.	केनरा बैंक	218833.61	262804	2898.97	1.3
14.	सेन्ट्रल बैंक आफ इण्डिया . .	298049.65	327846	3229.81	1.1
15.	देना बैंक . . .	86074.69	80991	892.24	1.0
16.	इण्डियन बैंक	109685.66	87921	936.71	0.9
17.	इण्डियन ओवर सीज बैंक . . .	140529.69	150529	1667.68	1.2
18.	पंजाब नेशनल बैंक . . .	275636.12	182881	2726.05	1.0
19.	सिंडीकेट बैंक	187537.64	199703	2314.24	1.2
20.	यूनियन बैंक आफ इण्डिया . .	166655.00	177284	2128.45	1.3
21.	यूनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया . .	127996.73	1186.20	1315.90	1.0
22.	यूको बैंक	143154.61	175088	1901.95	1.3
23.	आन्ध्रा बैंक	80009.00	94280	813.98	1.0
24.	कारपोरेशन बैंक . . .	40036.80	38733	560.81	1.4
25.	न्यू बैंक ऑफ इण्डिया . . .	48985.09	21740	524.03	1.1
26.	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स . .	39698.00	13846	305.36	0.8
27.	पंजाब और सिन्ध बैंक . .	63266.33	21957	490.86	0.8
28.	विजया बैंक . . .	48721.18	45653	732.63	1.5
	योग . .	4216487.38	4484395	47103.89	1.1

जारी

(रुपये लाख में)

क्रम सं०	बैंक का नाम	अ० जा० को ब्याज की विशेष दर पर अग्रिम		स्तंम्भ 5 से स्तंम्भ 8 का प्रतिशत	अ० ज० जा० को ब्याज की विशेष दर पर अग्रिम		स्तम्भ 5 से स्तंभ 11 का प्रतिशत
		लेखों की सं०	राशि		लेखों की सं०	राशि	
1	2	7	8	9	10	11	12
1.	स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया . .	560562	5161.28	35.9	164829	1715.13	11.9
2.	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर और जयपुर	13920	201.03	33.8	12325	200.32	33.7
3.	स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद . .	30138	165.07	36.0	3736	37.54	8.2
4.	स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर . .	12988	185.42	42.0	3470	52.43	11.9
5.	स्टेट बैंक ऑफ मैसूर .	21374	197.32	42.2	1480	10.52	2.2
6.	स्टेट बैंक ऑफ पटियाला . .	6	298.38	46.1	—	—	0.0
7.	स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र . .	13434	137.35	29.3	1957	78.80	16.8
8.	स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर . .	30624	269.87	46.1	1096	10.94	1.9
9.	इलाहाबाद बैंक . . .	31895	270.98	42.0	5454	80.24	9.1
10.	बैंक ऑफ बड़ौदा . .	86176	916.83	35.7	59132	554.04	21.6
11.	बैंक ऑफ इण्डिया . .	64052	700.54	27.7	59328	307.41	12.2
12.	बैंक ऑफ महाराष्ट्र . .	23105	346.28	48.6	10709	155.94	21.9
13.	केनरा बैंक . . .	101817	1216.42	42.0	34201	215.31	7.4
14.	सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया . .	116340	1321.25	48.9	50183	372.98	11.5
15.	देना बैंक . . .	31642	316.06	35.4	22839	270.32	30.3
16.	इण्डियन बैंक . . .	44189	510.89	54.5	3944	44.66	4.9
16.	इण्डियन ओवर सीज बैंक .	58994	767.87	46.0	5948	56.37	3.4
18.	पंजाब नेशनल बैंक . .	103850	1719.13	63.1	10665	107.16	3.9
19.	सिंडीकेट बैंक . . .	57004	722.14	31.2	32786	373.59	16.1
20.	यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया	72900	890.85	41.9	16941	265.32	12.5
21.	यूनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया .	26622	293.68	22.3	23675	301.02	22.9
22.	यूको बैंक . .	73892	902.02	47.4	17051	271.65	14.3
23.	आन्ध्रा बैंक . . .	33392	356.82	43.7	6301	41.87	5.1
24.	कारपोरेशन बैंक .	13527	204.70	36.5	121	20.76	3.7
25.	न्यू बैंक ऑफ इंडिया . .	5402	611.63	59.5	262	5.80	1.1
26.	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स .	6410	140.25	45.9	125	2.98	1.0
27.	पंजाब और सिन्ध बैंक . .	11073	269.77	55.0	370	4.80	1.0
28.	विजया बैंक . . .	12036	195.72	26.7	3189	33.80	7.3
	योग	1657364	19088.55	40.5	553277	5611.70	11.9

अनुलग्नक 3

विवरण पत्र सं।

अ०जा०/अ० ज० जा० के व्यक्तियों को प्राथमिकता क्षेत्र ऋण (ब्याज की विशेष दर से अलावा) के अधीन सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा दी गई अग्रिम राशि

दिसम्बर, 1986 को समाप्त अर्ध वर्ष (रुपए लाख में)

क्र० सं०	बैंक का नाम	कुल अग्रिम (शुद्ध बैंक ऋण*	प्राथमिकता क्षेत्र का कुल अग्रिम*		स्तंभ 3 से स्तंभ 5 का प्रतिशत	अ०जा० के लाभ भोगियों अग्रिम को**		स्तंभ 5 स्तंभ 8 का प्रतिशत
			लेखों की राशि	संख्या		लेखों की सं०	राशि	
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया . . .	1416300	6591000	623333.00	44.0	1342878	34096.84	6.5
2.	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर और जयपुर .	69888	269000	29372.00	42.0	68380	2297.38	7.8
3.	स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद . . .	77211	545000	34485.00	44.6	93515	1992.00	5.8
4.	स्टेट बैंक ऑफ इंदौर . . .	39586	171000	16867.00	42.6	452.14	1416.47	8.4
5.	स्टेट बैंक ऑफ मैसूर . .	54157	330000	25313.00	46.7	69397	1048.43	4.1
6.	स्टेट बैंक ऑफ पटियाला . . .	71031	188000	29915.00	42.1	36246	906.53	3.0
7.	स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र . . .	38971	144000	16558.00	42.5	26752	604.35	3.6
8.	स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर . . .	74522	621000	34178.00	45.9	59838	945.12	2.8
9.	इलाहाबाद बैंक . . .	111737	541000	4551.00	40.5	134568	3285.04	7.3
10.	बैंक आफ बड़ौदा . . .	318274	1321000	134715.00	42.3	293125	5505.51	4.1
11.	बैंक आफ इंडिया . .	348274	1320000	147643.00	42.4	229428	4912.80	3.3
12.	बैंक आफ महाराष्ट्र . .	113500	379000	50100.00	44.1	75520	1975.90	3.9
13.	केनरा बैंक	390483	2180000	173356.00	44.4	386568	7053.95	4.1
14.	सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया . .	360700	1663000	157200.00	43.6	339752	8574.00	5.5
15.	देना बैंक	100328	450000	43500.00	43.4	81348	2030.55	4.7
16.	इंडियन बैंक	149711	870000	66625.00	44.5	151650	3729.09	5.6
17.	इंडियन ओवरसीज बैंक . .	163675	1073000	70360.00	43.0	181363	3754.57	5.3
18.	पंजाब नेशनल बैंक . . .	358000	1331000	159930.00	44.7	352577	9742.19	6.1
19	सिंडिकेट बैंक	249700	1450000	104000.00	41.6	196420	4910.49	4.7
20	यूनियन बैंक ऑफ इंडिया . . .	194527	955000	85953.00	44.2	204341	4814.12	5.6
21.	यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया . . .	156900	970000	70700.00	45.1	154797	2712.12	3.8
22.	यूको बैंक	172425	934000	71529.00	41.5	186528	3872.10	5.4
23.	आन्ध्रा बैंक	106236	737000	4916.00	42.3	116346	2400.28	5.3
24.	कारपोरेशन बैंक	51246	230000	23861.00	46.6	33495	802.80	3.4
25.	न्यू बैंक ऑफ इंडिया . . .	69534	169000	32323.00	46.5	43834	2010.91	6.2
26.	ओरियंटल बैंक ऑफ कामर्स . .	61092	185000	27652.00	45.3	48963	1721.26	6.2
27.	पंजाब और सिंध बैंक . . .	73119†	176000†	31056.00†	42.5†	56061	2289.79	7.4
28.	विजया बैंक	73107	364000	30400.00	41.6	42455	1087.31	3.6
	योग . .	5464244	26157000	2381091.00	43.6	4966359	120491.90	5.1

*अनन्तिम आंकड़े : स्रोत प्राथमिकता क्षेत्र के अग्रिमों पर तिमाही निवरण तदर्थ (जारी)

**स्रोत : अ०जा०/अ०ज०जा० को ऋण सुविधाओं का अर्ध वार्षिक विवरण

†सितम्बर, 1986 के आंकड़े

क्र०सं०	**ग्र०ज०जा० के लाभभोगियों को अग्रिम राशि		स्तंभ 5 से स्तंभ 11 का प्रतिशत	ग्रावास ऋण (राशि)** स्तंभ 13 से स्तंभ 14 का प्रतिशत				स्तंभ 13 से स्तंभ 16 का प्रतिशत
	लेखों की सं०	राशि		योग	ग्र०जा०		ग्र०ज०जा०	
1	10	11	12	13	14	15	16	17
1. स्टेट बैंक ग्रॉफ इंडिया ** . .	390146	9521.16	1.5	635.48	593.99	93.5	41.49	6.5
2. स्टेट बैंक ग्रॉफ बीकानेर ग्रौर जयपुर .	34447	958.38	3.3	228.48	173.11	75.8	55.37	4.2
3. स्टेट बैंक ग्रॉफ हैदराबाद .	34703	1007.62	6.0	25.02	25.02	100.0	--	0.0
4. स्टेट बैंक ग्रॉफ इन्दौर . .	8341	177.10	1.0	--	--	--	--	—
5. स्टेट बैंक ग्रॉफ मैसूर . .	15011	323.00	1.3	10.96	7.57	69.1	3.39	30.9
6. स्टेट बैंक ग्रॉफ पटियाला . .	9763	464.18	1.6	--	--	--	--	—
7. स्टेट बैंक ग्रॉफ सौराष्ट्र . .	2331	122.28	0.7	87.02	85.59	98.4	1.43	1.6
8. स्टेट बैंक ग्रॉफ ट्रावनकोर . .	3537	56.16	0.2	3.08	2.99	97.1	0.09	2.9
9. इलाहाबाद बैंक . .	21690	529.74	1.2	172.70	162.11	93.9	10.59	6.1
10. बैंक ग्रॉफ बड़ौदा . . .	164220	3247.11	2.4	326.61	269.85	82.6	56.76	17.4
11. बैंक ग्रॉफ इंडिया. . .	146168	2608.05	1.8	59.66	54.86	92.0	4.80	8.0
12. बैंक ग्रॉफ महाराष्ट्र . .	32825	776.80	1.6	5.02	4.96	98.8	0.06	1.2
13. केनरा बैंक . .	48107	870.51	0.5	33.79	30.18	89.3	3.61	11 7
14. सैन्ट्रल बैंक ग्रॉफ इंडिया . .	107868	2472.50	1.6	136.04	118.23	86.9	17.81	13.1
15. देना बैंक . . .	49799	1223.63	2.8	304.88	294.80	96.7	10.08	3.3
16. इंडियन बैंक . . .	22848	537.42	0.8	230.66	208.73	90.5	21.93	9.5
17. इंडियन ग्रोवरसीज बैंक . .	17654	267.48	0.4	138.98	138.98	100.0	-	0.0
18. पंजाबनेशनल बैंक . .	32201	936.19	0.6	369.68	359.07	97.1	10 61	2.9
19. सिंडिकेट बैंक . . .	73396	2018.75	1.9	400.17	272.87	68.2	127.30	13 8
20. यूनियन बैंक ग्रॉफ इंडिया . .	41177	833.38	1.0	34.45	27.83	80.8	6.62	19.2
21. यूनाईटिड बैंक ग्रॉफ इंडिया .	118769	2039.61	2.9	37.88	13.48	35.6	24.40	64.4
22. यूको बैंक . . .	60221	1401.05	2.0	84.63	78.09	92.3	6.54	7.7
23. ग्रान्ध्रा बैंक . . .	32202	465.27	1.0	26.51	25.13	94.8	1.38	5.2
24. कॉरपोरेशन बैंक . . .	3943	99.87	0.4	47.15	46.40	98.4	0.75	1.6
25. न्यू बैंक ग्रॉफ इंडिया . .	2915	115.50	0.4	419.60	416.05	99.2	3.55	0.8
26. ग्रोरियन्टल बैंक ग्रॉफ कामर्स .	816	34.41	0.1	493.04	492.97	99.9	0.07	0.1
27. पंजाब ग्रौर सिंध बैंक . .	909	50.98	0.2	9.71	9·71	100.0	—	0.0
28. विजया बैंक . . .	11504	473.05	1.6	16.12	14.23	88.3	1.69	11.7
योग .	487311	33631.·18	1.4	4337.32	3926.80	90.5	410.52	9.[illegible]

**स्रोत : ग्र०जा०/ग्र०ज०जा० को ऋण सुविधाग्रों का ग्रर्ध-वार्षिक विवरण

(जारी)

अनुलग्नक 3

विवरण पत्र संख्या 2

अ० जा०/अ० ज० जा० के व्यक्तियों को ब्याज की विशेष योजना के अधीन सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा दी गई अग्रिम राशि

दिसम्बर 1986 को समाप्त अर्द्ध वर्ष (रुपए लाख में)

क्र० सं०	बैंक का नाम	कुल अग्रिम शुद्ध बैंक ऋण) राशि@	कुल विशेष ब्याज दर अग्रिम*		स्तंभ 3 से स्तंभ 5 का प्रतिशत	@@ अ० जा० को ब्याज की विशेष दर का अग्रिम		स्तंभ 5 से स्तंभ 8 का प्रतिशत	@@ अ० ज० जा० को ब्याज की विशेष दर का अग्रिम		स्तंभ 5 से स्तंभ 11 का प्रतिशत
			लेखों की सं०	राशि		लेखों की सं०	राशि		लेखों की सं०	राशि	
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
1.	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	1416300	1410544	14455.19	1.0	548274	5321.89	36.8	165200	1875.28	12.9
2.	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर और जयपुर	69888	39697	646.74	0.9	15812	295.33	45.7	10773	147.50	22.8
3.	स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद	77211	89230	720.83	0.9	33121	180.71	25.1	4490	40.79	5.6
4.	स्टेट बैंक ऑफ इंदौर	39586	35369	475.23	1.2	14631	241.83	50.9	5494	47.13	9.9
5.	स्टेट बैंक ऑफ मैसूर	54157	58327	679.00	1.3	17535	227.86	33.6	2601	32.99	4.9
6.	स्टेट बैंक ऑफ पटियाला	71031	18142	579.10	0.8	1106	265.36	45.8	--	--	0.0
7.	स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र	38971	37951	502.82	1.3	14801	139.19	27.7	1618	91.26	18.2
8.	स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर	74522	82212	735.13	1.0	36852	354.53	48.2	1197	11.89	1.6
9.	इलाहाबाद बैंक	111737	82877	1211.97	1.1	35591	458.21	37.8	6297	105.22	8.7
10.	बैंक ऑफ बड़ौदा	318274	285281	3071.00	1.0	117942	1223.15	39.8	49058	471.85	15.4
11.	बैंक ऑफ इंडिया	348284	271796	3012.73	0.9	99602	971.82	32.3	61998	533.83	17.7
12.	बैंक ऑफ महाराष्ट्र	113500	56894	832.24	0.7	22173	308.92	37.1	9639	134.29	16.1
13.	केनरा बैंक	390483	342321	4323.32	1.1	133688	1820.61	42.1	28341	249.65	5.8
14.	सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया	360700	335418	3628.82	1.0	142122	1445.26	39.8	63023	419.84	11.6
15.	देना बैंक	100328	85786	990.00	1.0	31412	343.57	34.7	22673	293.85	29.7
16.	इंडियन बैंक	149711	109728	1437.11	1.0	51379	785.72	54.7	10351	161.32	11.2
17.	इंडियन ओवरसीज बैंक	163675	168564	1770.04	1.1	65855	783.41	44.3	6639	67.27	3.8
18.	पंजाब नेशनल बैंक	358000	201374	3534.79	1.0	117500	2038.06	57.7	11125	140.27	4.0
19.	सिंडीकेट बैंक	249700	203400	2551.61	1.0	56230	715.94	28.1	32241	392.60	15.4
20.	यूनियन बैंक ऑफ इंडिया	194527	181256	2232.88	1.1	72025	917.05	41.1	18028	262.20	11.8
21.	यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया	156900	142780	1750.08	1.1	36693	373.78	21.4	32186	386.64	22.1
22.	यूको बैंक	172425	175920	1952.87	1.1	68066	850.69	43.6	19160	164.85	8.5
23.	आन्ध्र बैंक	106236	114994	1081.07	1.0	28690	365.46	33.8	7332	64.08	5.9
24.	कारपोरेशन बैंक	51246	48600	731.66	1.4	15482	238.68	32.6	1712	23.22	3.2
25.	न्यू बैंक ऑफ इंडिया	69534	25066	819.57	1.2	6406	316.28	38.6	364	5.87	0.7
26.	ओरियंटल बैंक ऑफ कामर्स	61092	22646	599.40	1.0	10341	255.97	42.7	124	2.86	0.5
27.	पंजाब और सिंध बैंक	73119	27155	726.84	1.0	12406	320.50	44.1	285	3.68	0.5
28.	विजया बैंक	73107	64132	1126.23	1.5	17512	309.56	27.5	4257	73.32	6.5
	योग	5464244	4717460	56178.27	1.0	182247	21869.44	38.9	576206	6203.55	11.1

@अनन्तिम आंकड़े स्रोत:– प्राथमिकता क्षेत्र के अग्रिमों पर तिमाही विवरण (तदर्थ)। *स्रोत : के अधीन अग्रिमों पर तिमाही विवरण।

@@स्रोत :–अ० जा०/अ० ज० जा० को ऋण सुविधाओं पर अर्द्ध वार्षिक विवरण।

अनुलग्नक 4

सातवीं पंचवर्षीय योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम

मद	उद्देश्य	1990 तक लक्ष्य
1. प्राथमिक शिक्षा	1. सन् 1990 तक 6–14 वर्ष के आयु वर्ग में 100 प्रतिशत दाखिले। इसे औपचारिक शिक्षा से अनौपचारिक शिक्षा से पूरा किया जाएगा।	औपचारिक शिक्षा के लिए 255.30 लाख बच्चों और औपचारिक शिक्षा से अनौपचारिक शिक्षा के लिए 250 लाख बच्चों का लक्ष्य तय किया गया है।
2. प्रौढ़ शिक्षा	2. सन् 1990 तक औपचारिक शिक्षा से अनौपचारिक माध्यम से 15–35 वर्ष के आयु वर्ग के प्रौढ़ों का 100 प्रतिशत समावेश।	कोई लक्ष्य तय नहीं किया है।
3. ग्रामीण स्वास्थ्य	1. सन् 2000 तक मैदानी भागों में 5000 की जनसंख्या पर और आदिवासी तथा पर्वतीय भागों 3000 की जनसंख्या पर एक उपकेन्द्र	इस उद्देश्य को पूर्ण से प्राप्त करने के लिए 83000 विद्यमान उपकेन्द्रों के अतिरिक्त 5400 उस केन्द्रों की स्थापना करना।
	(2) सन् 2000 तक मैदानी भागों में 30000 की जनसंख्या पर और आदिवासी तथा पर्वतीय भागों में 20000 की जनसंख्या पर एक जन स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित करना।	इस लक्ष्य को पूर्ण रूप से प्राप्त करने के लिए विद्यमान 11000 जन स्वास्थय केन्द्रों के अतिरिक्त 12000 जन स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना करना।
	(3) सन् 2000 तक एक लाख की जनसंख्या पर या एक सामुदायिक विकास खण्ड पर एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित करना।	इस लक्ष्य का 40.65 प्रतिशत भाग प्राप्त करने के लिए विद्यमान 649 सामुयिक स्वास्थ्य केन्द्रों के अतिरिक्त 1553 और सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित किए जाएंगे।
4. ग्रामीण जल आपूर्ति		प्राथमिक मद के रूप में शेष 39,000 समस्याग्रस्त गावों को समाविष्ट करना इसके बाद अन्य गांवों को लिया जाएगा जिनमें पानी की अपर्याप्त आपूर्ति है।
5. ग्रामीण मार्ग	सन् 1990 तक 1500 और अधिक की जनसंख्या वाले शेष सभी गांवों को और 1000 से 1500 तक की जनसंख्या वाले गांवों के 50 प्रतिशत गांवों को सड़को से जोड़ना।	1500 और अधिक की जनसंख्या वाले 20487 गांवों और 1000 से 1500 की जनसंख्या वाले 3851 गांवों का लक्ष्य रखा गया है।
6. ग्रामीण विद्युतीकरण	सन् 1990 तक प्रत्येक राज्य और संघ राज्य क्षेत्र में कम से कम 65 प्रतिशत गांवों का विद्युतीकरण करना।	वर्ष 1989–90 तक सभी राज्यों और संघ राज्य-क्षेत्रों द्वारा न्यूनतम 65 प्रतिशत गांवों को समाविष्ट करने का लक्ष्य बनाया गया है।
7. ग्रामीण भूमिहीन मजदूरों को आवास सहायता	सन् 1990 तक भूमिहीन सभी मजदूरों को आवास सहायता का प्रावधान करना। इसमें एक गृह संकेन्द्रण के लिए गृह निर्माण सामग्री, पीने के पानी का कुंआ और सड़कों को मिलाने के मार्ग शामिल होंगे।	100 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त करने के लिए गृह–भूखण्ड आबंटित करने के लिए शेष 7.20 लाख परिवारों को समाविष्ट करना और पहले से गृह भूखण्ड रखने वाले 27.10 लाख परिवारों को निर्माण सहायता देने का प्रावधान करना।

मद	उद्देश्य	1990 तक लक्ष्य
8. शहरी गंदी बस्तियों का पर्यावरणिक सुधार	सन् 1990 तक शहरी गंदी बस्तियों का 100 प्रतिशत समावेश जिसमें जल आपूर्ति, मलवहन, सड़कें पानी के नाले, सामुदायिक पखाने शामिल होंगे। अनुसूचित जातियों की बस्तियों, विशेष रूप से मेहतरों की बस्तियों को प्राथमिकता दी जाएगी।	इस कार्यक्रम के अधीन शेष 175.00 लाख में से 90 लाख गंदी बस्ती निवासियों का समावेश किया जाएगा।
9. पोषण		110 लाख पात्र व्यक्तियों को पोषण सहायता जारी रखी जाएगी और सभी एकीकृत बाल विकास सेवा परियोजनाओं के लिए **विशेष पोषण कार्यक्रम** का विस्तार किया जाएगा। **दोपहर का भोजन कार्यक्रम** समेकित **किया** जाएगा और स्वास्थ्य, पानी और सफाई के साथ जोड़ा जाएगा।

अध्याय 8

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का सेवाओं में प्रतिनिधित्व

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का सेवाओं और पदों में यथेष्ठ प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 16 (4) तथा 335 में सुरक्षणों के प्रावधान किए गए हैं। इस समय संवैधानिक प्रावधान के अनुसरण में केन्द्रीय सरकार के आधीन सेवाओं में आरक्षण का प्रतिशत अनुसूचित जातियों के लिए 15% तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए 7.5% निश्चित किया गया है। सेवाओं में आरक्षण सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों, राष्ट्रीयकृत बैंकों, सांविधिक तथा स्वायत्तशासी निकायों तथा भारत सरकार से सहायता-अनुदान लेने वाले संस्थानों पर भी लागू कर दिया गया है। दिनांक 1-1-1987 को यथास्थिति भारत सरकार, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों तथा सार्वजनिक सेक्टर/राष्ट्रीयकृत बैंकों के अधीन सेवाओं में अनसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व दर्शाने वाला एक तुलनात्मक विवरणपत्र अनुलग्नक 1 में दिया गया है। इसी प्रकार विभिन्न राज्य सरकारों तथा संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों के अधीन सेवाओं और पदों में भी आरक्षण लागू होता है। राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की जनसंख्या के वास्तविक प्रतिशत के आधार पर सेवाओं में आरक्षण का प्रतिशत भिन्न-भिन्न है।

केन्द्रीय सरकारी सेवाएं

2. दिनांक 1-1-1987 को यथास्थिति केन्द्र सरकार के अधीन विभिन्न पद समूहों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रतिनिधित्व का प्रतिशत, जो कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग द्वारा दिया गया है, दिनांक 1-1-1977 को विद्यमान स्थिति की तुलना में भर्ती में उनकी वृद्धि सहित नीचे दिया गया है—

सारणी 1

पद समूह	अनुसूचित जातियां		अनुसूचित जनजातियां		वृद्धि	
	1-1-1977	1-1-1987	1-1-1977	1-1-1987	अ० जा०	अ० ज०जा०
क.	4.16	8.23	0.77	2.05	4.07	1.28
ख.	6.07	10.40	0.77	1.92	4.33	1.15
ग.	11.84	14.46	2.78	4.23	2.62	1.45
घ.	19.07	20.09	4.35	5.84	1.02	1.49

उपर्युक्त सारणी से संबंधित विस्तृत सूचना अनुलग्नक 2 में देखी जा सकती है। समूह क तथा ख पदों में अनुसुचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व कम होने का कारण साधारण तौर पर वैज्ञानिक तथा तकनीकी पदों के लिए अर्हता प्राप्त उम्मीदवारों का उपलब्ध न होना है। समूह ख से समूह क के निम्नतम पदों पर प्रोन्नति में आरक्षण केवल 1974 में आरम्भ किया गया था और किसी समूह "क" पद से अगले उच्च समूह क पद पर पदोन्नति में कोई आरक्षण विहित नहीं है। जहां तक समूह 'ग' और घ पदों का संबंध है उनमें अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व बिल्कुल संतोषजनक है, किन्तु अनुसुचित जनजातियों का प्रतिनिधित्व बहुत कम है जो खेदजनक है। अनुसचिवीय पदों में भी अनुसूचित जनजातियों का निम्न प्रतिशत, जिसका कारण पर्याप्त संख्या में उनके उपयुक्त उम्मीदवार उपलब्ध न होना बताया गया है, का औचित्य सिद्ध नहीं किया जा सकता है। अत: ऐसे क्षेत्रों में जिनमें मुख्य रूप से जनजातियां रहती हैं, विशेष दलों को भेजकर, जनजातियों के उम्मीदवारों की भर्ती करने के लिए विशेष भर्ती अभियान की आवश्यकता है ताकि कमी को पूरा करने के लिए संबंधित सरकारी एजेन्सियों द्वारा उन्हें रोजगार के अवसरों के बारे में बताया जा सके और उन्हें नियुक्ति का प्रस्ताव उसी स्थान पर दिया जा सके।

अखिल भारतीय तथा अन्य केन्द्रीय सेवायें

3. विभिन्न अखिल भारतीय तथा अन्य केन्द्रीय सेवाओं में 1-1-1986 को यथा स्थिति अनुसूचित जातियों तथा

जनजातियों के प्रतिनिधित्व के बारे में सांख्यिकी सूचना इन सेवाओं का नियंत्रण करने वाले विभिन्न मंत्रालयों/विभागों से मांगी गई थी तथापि केवल 14 सेवाओं के बारे में आवश्यक सूचना प्राप्त हुई है और नीचे सारणी में दी गई है--

सारणी 2

क्र० सं०	सेवा	विद्यमान अधिकारियों की कुल संख्या	अ० जा० की संख्या	प्रतिशत	अ० ज० जा० की संख्या	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7
1.	भारतीय लेखा परीक्षा सेवा . . .	609	45	7.4	19	3.1
	रक्षा मंत्रालय					
2.	सेना के सशस्त्र बल मुख्यालयों और अन्तर-सेवा संगठनों/सेना के सशस्त्र बलों की सिविल सेवा के सहायक सिविलियन स्टाफ अधिकारी . . .	526	105	19.96	4	0.80
3.	भारतीय आयुध निर्माणी सेवा श्रेणी--1 . .	1864	149	8.00	15	0.80
4.	भारतीय रक्षा संपदा सेवा					
	(क) समूह क	100	11	11.0	3	3.0
	(ख) समूह ख	41	5	12.2	--	--
5.	भारतीय नौ सेना आयुद्ध सेवा . . .	24	5	20.8	--	--
	ऊर्जा मंत्रालय					
6.	केन्द्रीय विद्युत अभियांत्रिकी सेवा					
	(क) समूह क	535	48	9.0	5	0.9
	(ख) समूह ख	152	18	11.8	1	0.7
	गृह मंत्रालय					
7.	भारतीय पुलिस सेवा	2367	267	11.3	93	3.97
	उद्योग मंत्रालय					
8.	सहायक विकास अधिकारी (अभियांत्रिकी) सेवा समूह क (महानिदेशक तकनीकी विकास) . .	30	2	6.7	1	3.3
	सूचना और प्रसारण मंत्रालय					
9.	केन्द्रीय सूचना सेवा	845	72	8.5	34	4.0
10.	भारतीय प्रसारण (अभियन्ता सेवा) . .	776	17	2.19	4	0.52
11.	कार्यक्रम संवर्ग	215	30	14.0	15	7.00
	कार्मिक, जन, शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय					
12.	भारतीय प्रशासनिक सेवा	4549	437*	9.60	242*	5.32
	भूतल परिवहन मंत्रालय					
13.	केन्द्रीय अभियन्ता सेवा (मार्ग) समूह क . .	216	15	6.9	2	0.9
	जल संसाधन मंत्रालय					
14.	केन्द्रीय जल अभियन्ता सेवा समूह क . .	623	43	6.6	1	0.2

*कर्नाटक और मणिपुर को छोड़कर (स्रोत: कार्मिक, जन शिकायत तथा पेंशन विभाग की 1987-88 की वार्षिक रिपोर्ट)

4. भारतीय प्रशासनिक सेवा के लिए 1980 से 1986 तक की गई पिछली सात परीक्षाओं में चयनित उम्मीदवारों की संख्या के बारे में सूचना नीचे की सारणी में दर्शाई गई है—

सारणी 3

सिविल सेवा परीक्षा का वर्ष	भरी गई रिक्तियों की संख्या	अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की आरक्षित रिक्तियों की संख्या						वास्तव में जारी की गई रिक्तियों की संख्या			
		चालू		अग्रेणीत		कुल					
		अ० जा०	अ० ज०जा०	अ० जा०	अ० ज० जा०	अ० जा०	अ० ज०जा०	अन्य	अ० जा०	अ० जा० जा०	कुल
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
1980 . .	130	19	10	—	—	19	10	101	19	10	130
1981 . .	145	22	11	—	—	22	11	112	22	11	145
1982 . .	156	24	11	—	—	24	11	121	24	11	156
1983 . .	143	21	12	—	—	21	12	110	21	12	143
1984 . .	160	24	12	—	—	24	12	124	24	12	160
1985 . .	138	21	10	—	—	21	10	106*	20*	10	136
1986 . .	126	19	10	—	—	19	10	97	19	10	126

*एक उम्मीदवार अभी तक नियुक्त नहीं हुआ है। नवीनतम स्थिति उपलब्ध नहीं है।

उपर्युक्त सारणी से यह ज्ञात होगा कि इस प्रमुख सेवा में गत सात वर्षों में से प्रत्येक वर्ष में अनुसूजित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षित रिक्तियों का पूरा कोटा भरा गया है।

समूह ग और घ पदों पर पदोन्नति, जिसके लिए प्रारंभिक भर्ती स्थानीय/क्षेत्रीय आधार पर की जाती है।

5. विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में स्थित सरकार तथा सार्वजनिक क्षेत्र के संगठनों में समूह ग तथा घ में भर्ती स्थानीय अथवा क्षेत्रीय आधार पर की जाती है जिसमें आरक्षण की क्षेत्रीय प्रतिशतता लागू की जाती हैं जो अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की जनसंख्या की समानुपाती होती है। तथापि प्रोन्नति के समय आरक्षण अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत की दर से तथा जनजातियों के लिए 7.5% की दर से एक समान आधार पर लागू करना होता है इसके परिणामस्वरूप कतिपय असंगतियां उत्पन्न हुई हैं। उदाहरण के लिए **मणिपुर** में समूह ग तथा घ पदों के लिए भर्ती स्थानीय/क्षेत्रीय आधार पर की जाती है जहां अनुसूचित जातियों के लिए केवल 1 प्रतिशत जनजातियों के लिए 27 प्रतिशत रिक्तियां आरक्षित की जाती हैं। यदि इस संवर्ग से अगले उच्च ग्रेड में प्रोन्नति की जाती है तो अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण 15 प्रतिशत तथा जनजातियों के लिए आरक्षण 7.5 प्रतिशत होगा। इस प्रकार जब अनुसूचित जातियों के लिए भर्ती केवल 1 प्रतिशत की दर से की गई थी तो उन्हें प्रोन्नति के समय 15 प्रतिशत की दर से आरक्षण देना संभव नहीं हो सकेगा और तब अनुसूजित जातियों के लिए आरक्षित शेष रिक्तियों का अनारक्षण किया जाना आवश्यक होगा। बहुत से अन्य राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के बारे में भी इसी प्रकार की गंभीर असंगतियां है। कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग के दिनांक 24-5-85 के का० ज्ञापन सं० 36013/4/85-स्था० (एस० सी० टी०) के जारी होने के बाद **हरियाणा**, **जम्मू-काश्मीर** तथा **पंजाब** जैसे राज्यों तथा **चंडीगढ़** और **पांडिचेरी** संघ क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों के लिए भर्ती में कोई आरक्षण नहीं है। तथापि, इन राज्यों/संघ राज्यक्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों के लिए प्रोन्नति में आरक्षण का परित्याग करने के लिए कोई आदेश जारी नहीं किए गए हैं। अतः यह सुझाव दिया जाता है कि **जहां ऐसे समूह ग तथा घ पदों से प्रोन्नति की जाती है, जिनके लिए प्रारंभिक भर्ती स्थानीय अथवा क्षेत्रीय आधार पर की जाती है उनमें प्रोन्नति के समय आरक्षण का प्रतिशत प्रारंभिक भर्ती के लिए विहित प्रतिशत के अनुरूप होना चाहिए। कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग द्वारा इन असंगतियों को यथासंभव शीघ्र दूर किया जाए।**

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण

6. केन्द्र/राज्य सरकारों तथा बैंकों के अधीन सेवाओं और पदों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रति-

निधित्व में वृद्धि करने की दृष्टि से भारत सरकार ने विभिन्न राज्य/संघ राज्यक्षेत्रों में परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र खोले हैं जिनमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के ऐसे उपयुक्त उम्मीदवारों को विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है जो संघ लोक सेवा आयोग, कर्मचारी चयन आयोग, राज्य लोक सेवा आयोगों, बैंक भर्ती बोर्डों इत्यादि द्वारा आयोजित होने वाली प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठना चाहते हैं। इस कार्यक्रम के अंतर्गत छठी योजना में पिछड़ी जातियों के कल्याण क्षेत्र के अधीन 3.50 करोड़ रुपए तथा सातवीं योजना में 2.66 करोड़ रुपए की राशि आबंटित की गई थी। इस योजना के अंतर्गत राज्य सरकारों को उपयुक्त आधार पर वित्तीय सहायता दी जाती है ताकि वे ऐसे प्रशिक्षण केन्द्र चला सकें। ऐसे विश्वविद्यालयों, कालेज तथा निजी संस्थाओं को भी सहायता अनुदान दिया जाता है जो इसके लिए पर्याप्त संरचनात्मक सुविधाएं जैसे परिसर कक्षा के कमरे, हॉस्टल, पुस्तकालय तथा 100 प्रतिशत आधार पर शिक्षण स्टाफ उपलब्ध करा सकते हैं।

7. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के ऐसे उम्मीदवारों की संख्या, जिन्हें प्रशिक्षण दिया गया तथा जो परीक्षाओं में बैठे और जिन्हें नियुक्ति के लिए चुना गया, के संबंध में विभिन्न संस्थानों द्वारा भेजी गई सूचना अनुलग्नक 3 में दी गई है। उसका सार नीचे की सारणी में दिया गया है—

सारणी 4

वर्ष	केन्द्रों की संख्या जिनसे सूचना प्राप्त हुई	प्रशिक्षित किए गए उम्मीदवारों की संख्या		परीक्षा में बैठने वालों की संख्या		चुने गए	
		अ० जा०	अ० ज० जा०	अ० जा०	अ० ज० जा०	अ० जा०	अ० ज० जा०
1	2	3	4	5	6	7	8
	(1) अखिल भारतीय सेवाएं						
1983-84 . .	8	113	36	113 (100%)	36 (100%)	2 (1.8%)	4 (11.1%)
1984-85 . .	12	246	63	236 (95.9%)	62 (98.4%)	5 (2.1%)	3 (4.8%)
1985-86 . .	10	226	56	214 (94.7%)	45 (80.4%)	5 (2.3%)	5 (11.1%)
कुल . . .		585	155	563 (96.2%)	143 (92.3%)	12 (2.1%)	12 (8.4%)
	(2) बैंक सेवाएं : परिवीक्षा अधिकारी						
1984-85 . .	4	143	9	141 (98.6%)	9 (100%)	7 (5.2%)	—
1985-86 . .	8	260	21	218 (83.8%)	21 (100%)	1 (0.5%)	1 (4.8%)
कुल . . .		40	30	359 (98.1%)	30 (100%)	8 (2.2%)	1 (3.3%)
	(3) बैंक सेवाएं : लिपिक संवर्ग						
1984-85 . .	7	357	22	357 (100%)	22 (100%)	34 (9.5%)	3 (13.6%)
1985-86 . .	7	466	28	466 (100%)	25 (89.3%)	12 (2.6%)	— —
कुल . . .		823	50	823 (100%)	47 (94%)	46 (5.6%)	3 (6.4%)

1	2	3	4	5	6	7	8
	(4) राज्य सेवाएं						
1984-85 . .	12	1331	76	1126 (81.5%)	55 (72.4%)	94 (8.3%)	11 (20%)
1985-86 . .	14	1097	84	767 (69.9%)	66 (78.6%)	136 (17.7%)	14 (21.2%)
कुल . . .		2478	160	1893 (56.2%)	121 (75.6%)	230 (12.2%)	25 (20.7%)

स्तम्भ 5 तथा 6 में दिए गए प्रतिशत उम्मीदवारों की संख्या के हैं तथा स्तंभ 7 तथा 8 में दिए गए प्रतिशत परीक्षा में बैठने वाले उम्मीदवारों की संख्या के हैं।

8. यह देखा गया है कि अधिकांश केन्द्रों में काफी संख्या में सीटें खाली रहती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि सभी सीटों के भरे जाने में एक आधारभूत बाधा उम्मीदवारों के माता-पिता की विहित आय सीमा का कम होना है अर्थात 1,000 रु० प्रतिमाह की आय। इस समय सबसे कम वेतन पाने वाले कर्मचारी भी लगभग 1,000 रुपए न्यूनतम वेतन लेते हैं। इस अवास्तविक आय सीमा के कारण से अन्यथा उपयुक्त उम्मीदवार दाखिले के लिए अपात्र हो जाते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि पर्याप्त संख्या में उम्मीदवार उपलब्ध नहीं हो पाते हैं और इससे एक बड़ी संख्या में स्थान खाली रह जाते हैं। **यह सुझाव दिया जाता है कि ऐसे केन्द्रों में दाखिले के लिए यह आय सीमा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों के चयन के हित में हटा ली जाए और दाखिले आय वर्ग के आधार पर किया जाए अर्थात 1,000 रुपये के आय वर्ग में पड़ने वाले उम्मीदवारों को प्रथम प्राथमिकता दी जाए और उसके बाद प्रति 500 रुपये प्रति माह अतिरिक्त आय के क्रमांगत वर्ग समूहों के उम्मीदवारों को लिया जाए।** दूसरे प्रचार का अभाव इन संस्थाओं में अनुसूचित जातियों तथा उपयुक्त जनजातियों के उम्मीदवारों के पर्याप्त संख्या में दाखिला न लेने का एक दूसरा कारण दिखाई देता है। चूंकि नगरों तथा शहरों में अपनी उच्च शिक्षा पूर्ण करने के बाद अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवार सामान्यत: अपने अपने घरों को वापस चले जाते हैं, जो अधिकांशत: ग्रामीण क्षेत्रों में होते हैं, उन्हें रेडियो, दूरदर्शन तथा राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और स्थानीय समाचारपत्रों द्वारा ऐसी सभी सुविधाओं के बारे में सूचित किया जाना चाहिए ताकि वे इन संस्थानों में और अधिक संख्या में आ सकें। जिन केन्द्रों की प्रगति घटिया पाई गई थी, उन्हें पुन: सुचारू रूप में लाना आवश्यक है।

रोजगार कार्यालय

9. रोजगार तथा प्रशिक्षण के महानिदेशालय द्वारा भेजी गई वर्ष 1983, 1984 तथा 1985 के लिए सांख्यिकी सूचना, जिसमें पूरे देश में स्थित रोजगार कार्यालयों की प्रगति, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के रोजगार ढूंढने वाले व्यक्तियों का पंजीकरण करने, रिक्तियां अधिसूचित करने और उन पर नियुक्तियां कराने के रूप में दर्शाई गई है, नीचे की सारणी में दी गई है—

सारणी 5

	अनुसूचित जातियां			अनुसूचित जनजातियां		
	1983	1984	1985	1983	1984	1985
1. किए गए पंजीकरण की संख्या . .	780,912	745,860	755,089	202,998	187,663	191,787
2. कराई गई नियुक्तियों की संख्या . .	62,298	62,360	57,914	22,447	21,132	20,954
3. पंजीकरण से नियुक्ति का प्रतिशत .	7.98	8.36	7.67	11.06	11.21	10.93
4. अधिसूचित आरक्षित रिक्तियों की संख्या .	70,065	67,055	63,073	37,738	37,412	37,088
5. भरी गई आरक्षित रिक्तियों की संख्या .	31,631	33,214	31,440	9,671	10,957	10,809
6. उपर्युक्त 4 से 5 का प्रतिशत . .	45.14	49.53	49.85	25.63	29.29	29.14
7. वर्ष के अन्त में पंजीकरण रजिस्टर में दर्ज व्यक्तियों की कुल संख्या . .	2,455,170	2,617,957	3,057,489	663,516	659,606	774,771

10. उपर्युक्त सूचना का विस्तृत विवरण उक्त तीन वर्षों अर्थात् 1983' 1984 तथा 1985 में शैक्षिक स्तरों तथा व्यावसायिक समूहों के विस्तृत विवरण सहित अनुलग्नक 4 में देखा जा सकता है। यह देखा गया है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए यथा आरक्षित रोजगार कार्यालयों को अधिसूचित की गई रिक्तियों में से लगभग क्रमश: 50% तथा 70% रिक्तियां संबंधित समुदायों के उम्मीदवारों के अभाव में भरी नहीं जा सकीं। उसी समय विज्ञान, कॉमर्स, इंजीनियरिंग, चिकित्सा शिक्षा इत्यादि क्षेत्रों में बड़ी संख्या में पंजीकृत स्नातक/स्नातकोत्तर उम्मीदवार रोजगार कार्यालयों के प्रमाणिक रजिस्टरों में बने हुए थे।

आरक्षित रिक्तियों का अनारक्षण

11. सरकार द्वारा अधिकथित कार्य विधि के अनुसार कि जब सीधी तथा भर्ती प्रोन्नति दोनों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षित रिक्तियां संबंधित वर्ग के उम्मीदवारों से नहीं भरी जा सकती हैं तो, उन्हें पश्चात्-वर्ती तीन भर्ती वर्षों तक अग्रेणीत किया जाना अपेक्षित है किन्तु बिना भरी आरक्षित रिक्तियों को अग्रेणीत करने से पूर्व एक पद्धति बनाई गई है जिसके अनुसार सक्षम प्राधिकारी की पूर्व अनुमति लेनी आवश्यक होती है तथा उक्त प्राधिकारी को यह बताना होता है कि आरक्षित रिक्तियों पर नियुक्ति करने के लिए क्या क्या कदम उठाए गए हैं। भारत सरकार के कार्यालयों में सीधी भर्ती तथा स्थायीकरण द्वारा भरे गए पदों के मामले में अनारक्षण की स्वीकृति देने वाला सक्षम प्राधिकारी कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग है। तथापि, प्रोन्नति के ऐसे मामलों में जहां संबंधित सम्भरक ग्रेडों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवार या तो उपलब्ध नहीं हैं या वे प्रोन्नति के लिए पात्र नहीं हैं, आरक्षित रिक्तियों के अनारक्षण का प्राधिकार सरकार के विभिन्न मंत्रालयों/विभागों के संयुक्त सचिव के स्तर के अधिकारी को कर दिया गया है तथापि, इन सभी मामलों में अनारक्षण के प्रस्ताव कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग को भेजे जाने अपेक्षित हैं जिनकी एक प्रति अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त को भी भेजी जाती है। इन प्रस्तावों की स्पेण समीक्षा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त के कार्यालय में की जाती है तथा जिन मामलों में यह पाया जाता है कि भर्ती के लिए भारत सरकार द्वारा यथा विहित सभी आवश्यक कार्यवाहियां नहीं की गई हैं या जिन मामलों में पात्र उम्मीदवार प्रोन्नति के लिए उपलब्ध थे, किन्तु वास्तव में उन्हें प्रोन्नत नहीं किया गया था, वहां सबंधित प्राधिकारियों को आवश्यक स्पष्टीकरण देने के लिए लिखा जाता है। नीचे दी गई सारणी में 1985 तथा 1986 में प्राप्त अनारक्षण प्रस्तावों की कुल संख्या, उनमें से इस कार्यालय द्वारा पूछ--ताछ किए गए मामलों की संख्या, इस कार्यालय द्वारा किए गए प्रेक्षणों के प्रकाश में जिन मामलों में अनारक्षण प्रस्तावों को संशोधित/संशुद्ध किया गया उनकी संख्या तथा ऐसे मामलों की संख्या जिनमें प्राधिकारियों ने अपनी भूल स्वीकार की अथवा अनारक्षण प्रस्तावों को वापस ले लिया गया, दर्शाई गई है--

सारणी 6

वर्ष	प्राप्त हुए अनारक्षण प्रस्तावों की कुल संख्या	उन मामलों की संख्या जिनमें पूछ--ताछ की गई	उन मामलों की संख्या जिनमें अना-रक्षण प्रस्तावों को हमारे प्रेषण के आधार पर संशोधित किया गया	उन मामलों की संख्या जिनमें प्राधिकारियों ने अपनी भूलें स्वीकार कीं अथवा अनारक्षण प्रस्तावों को वापस ले लिया
1	2	3	4	5
1985 .	2099	388	25	51(44)
1986 .	1994	372	17	115(108)

1986 के 115 मामलों में से जिनमें प्राधिकारियों ने अपनी भूलें स्वीकार की थीं, अनारक्षण के 108 मामले सीमा सड़क महानिदेशालय, पोत परिवहन मंत्रालय के थे। इसी प्रकार 1985 के 51 मामलों में से 44 मामले इसी मंत्रालय के थे।

12. अनारक्षण प्रस्तावों के कुछ विशिष्ट प्रकार के मामले जिन पर इस कार्यालय द्वारा कार्यवाही की गई थी अनुलग्नक 5 में दिए गए हैं। यह ज्ञात होगा कि मामला नं० 2 में इस कार्यालय द्वारा दिया गया सुझाव मंत्रिमंडल सचिवालय द्वारा स्वीकार किया गया था और मामला नं०-3 में भी अनारक्षण के प्रस्ताव को वापिस ले लिया गया था। तथापि, मामला नं० 1 में रक्षा मंत्रालय ने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया जबकि विभागीय प्रोन्नति समिति ने उस अनुसूचित जाति के केवल मात्र एक ऐसे उम्मीदवार के मामले पर विचार नहीं किया था जो कि विभागीय प्रोन्नति समिति की बैठक की तारीख के केवल 8 दिनों के बाद प्रोन्नति के पात्र होने वाला था। अत: यह सुझाव दिया जाता है कि कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग इस प्रयोजन के मार्ग निर्देश जारी करे कि जिन मामलों

में पालना के संबंध में विभागीय प्रोन्नति समिति की बैठक बुलाने के लिए कोई निर्णायक तारीख तय नहीं की गई है; ऐसे विशुद्ध व्यक्ति संबंधी मामलों पर सहानुभूतिपूर्वक विचार किए जाने की आवश्यकता है, विशेष रूप से उस स्थिति में जब काफी संख्या में आरक्षित रिक्तियां उपलब्ध हैं और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के पात्र उम्मीदवारों के अभाव में अनारक्षित किए जाने के लिए प्रस्तावित की जाती हैं। इसी प्रकार अनुलग्नक 5 में दिए गए अन्तिम मामले में प्रतिबंध के आदेशों के गलत रूप से केवल आरक्षित रिक्तियों पर लागू किए जाने के कारण अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों के हितों को हानि पहुंची थी। ये आरक्षित रिक्तियां भर्ती पर सामान्य रोक लगाने के आदेश मिलने से पहले ही आरंभ की गई भर्ती प्रक्रिया में बिना भरे रह गई थी। अतः यह सुझाव दिया जाता है कि सरकार एक सामान्य आदेश जारी करने पर विचार करें कि रिक्तियों को भरने पर प्रतिबन्ध का कोई भी आदेश उन आरक्षित रिक्तियों पर लागू नहीं होगा जो उस आदेश के जारी होने की तारीख पर बिना भरे रहीं थी जब तक कि प्रतिबन्ध लगाने वाले आदेश में ही विशिष्ट रूप से उस प्रभाव का कोई उल्लेख न किया जाए।

विदेशों में प्रशिक्षण

13. भारत सरकार ने 15-11-1971 को अनुदेश जारी किए थे कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के श्रेणी 1 के अधिकारियों को भारत में तथा विदेशों में प्रशिक्षण के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान किए जाने चाहिए ताकि वे उच्चदायित्वों को संभालने के लिए विशेष रूप से उन पदों पर जिनमें आरक्षण नहीं थे अपने दृष्टिकोण को उदार बना सकें और अनुभव प्राप्त कर सकें। भारत सरकार के सभी मंत्रालयों विभागों से अनुरोध किया गया था कि विदेशों में प्रशिक्षण के लिए भेजे गए अधिकारियों के बारे में सूचना भेजी जाए जिसमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के अधिकारियों की संख्या कितनी थी यह भी बताया जाए। अपेक्षित सूचना केवल 25 मंत्रालयों/विभागों से प्राप्त हुई है जिनमें से 9 विभागों ने शून्य सूचना भेजी है। यह देखा गया है कि वर्ष 1981-85 की अवधि में कुल 320 अधिकारियों को विदेशों में प्रशिक्षण के लिए भेजा गया था जिनमें से 25 अनुसूचित जातियों के तथा 4 अनुसूचित जनजातियों के थे। इस अपर्याप्त सूचना के आधार पर कोई सामान्य निष्कर्ष निकालना सही नहीं होगा किन्तु ये आंकड़े यह दर्शाते हैं कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के अधिकारियों को पर्याप्त संख्या में इस प्रशिक्षण के लिए नहीं भेजा गया था। यह सत्य है कि कई मामलों में विदेश प्रशिक्षण के लिए अधिकारियों का चयन कार्य अपेक्षाओं के आधार पर किया जाता है किन्तु यह परामर्श दिया जाता है कि **जहां ऐसी अपेक्षाओं को पूरा करने वाले अनुसूचित जातियों/जनजातियों के अधिकारी उपलब्ध हैं, उन्हें प्राथमिकता दी जानी चाहिए क्योंकि ऐसे प्रशिक्षण के विशिष्टीकरण के विभिन्न क्षेत्रों में उनका ज्ञान बढ़ेगा तथा ये उच्चतर दायित्वों को संभालने के लिए उच्चतर श्रेणी के पदों पर उनके चयन के लिए अवसर बढ़ाने में सहायक होंगे।**

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए सेवाओं में आरक्षण के बारे में भारत सरकार द्वारा जारी किए गए कुछ नए आदेश/अनुदेश

14. वर्ष 1979-80 तथा 1980-81 के लिए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त की 27वीं रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए सेवाओं में आरक्षण के संबंध में काफी संख्या में आदेश जारी किए हैं जो कार्मिक, जन शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय द्वारा 1987 में प्रकाशित "अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए सेवाओं में आरक्षण के ब्रोशर" के सातवें संस्करण में सम्मिलित किए गए हैं। कुछ महत्वपूर्ण आदेश ये हैं--

(1) कर्मचारी चयन आयोग के माध्यम से होने वाली भर्ती के लिए रोस्टर लागू होने से संबंधित कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग का का० ज्ञा० सं० 36011/9/82-स्था० (एस० सी० टी०) दिनांक 18-2-83

(2) गोपनीय रिपोर्टें--अनुसूचित जातियों तथा/अथवा जनजातियों के विकास तथा संरक्षण में प्रभावशीलता दर्शाने के लिए एक अलग स्तंभ लागू किए जाने से संबंधित कार्मिक तथा प्रशासनिक सुधार विभाग का का० ज्ञा० सं० 21011/2/83-स्था (ए) दिनांक 8-4-83

(3) **तदर्थ प्रोन्नतियां**--अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के मामलों पर विचार किए जाने से संबंधित कार्मिक तथा प्रशासनिक सुधार विभाग का का० ज्ञा० सं० 36011/14/83-स्था० (एस० सी० टी०) दिनांक 30-4-83 तथा 30-9-83

(4) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए स्थायी बनाने में आरक्षण से संबंधित कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग का का० ज्ञा० सं०-36011/28/83-स्था (एस० सी० टी०) दिनांक 12-3-84

(5) स्थानीय अथवा क्षेत्रीय आधार पर भर्ती में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आरक्षण प्रतिशत का पुनरीक्षण तथा आरक्षण के पुनरीक्षित प्रतिशत को प्रभावी बनाने के लिए माडल रोस्टरों से संबंधित कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग का कार्यालय ज्ञा० सं० 36013/4/85-स्था (एस० सी० टी०) दिनांक 24-5-85

(6) शुल्कों में पूरी छूट से संबंधित कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग का का० ज्ञा० सं०-36013/3/84-स्था० (एस० सी० टी०) दिनांक 1-7-85

(7) अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए आरक्षण के संबंध में आदेश करने के प्रयोजन के लिए इक्के-दुक्के पदों के समूहीकरण से संबंधित कार्मिक तथा

प्रशिक्षण विभाग का का० ज्ञा० सं० 36011/17/85-स्था० (एस० सी० टी०) दिनांक 23-7-85

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व

15. **सेवाओं में प्रतिनिधित्व**—सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के अंतर्गत सेवाओं तथा पदों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आरक्षण के कार्यान्वियन से संबंधित राष्ट्रपति का निदेश प्रथम बार 1969 में जारी किया गया था। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे इन समुदायों के लिए रोजगार के संबंध में आरक्षण लगभग उसी ढांचे पर सुनिश्चित करें जैसा केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों में है। लोक उद्यम कार्यालय द्वारा उपलब्ध कराई गई सूचना के अनुसार 1-1-1987 को यथास्थिति विभिन्न पद समूहों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व 1-1-1977 को विद्यमान स्थिति की तुलना में भर्ती में उनकी वृद्धि दर्शाते हुए नीचे दिया गया है:—

सारणी 7

वर्गीकरण	1-1-1977 को यथास्थिति 126 उपक्रम		1-1-1987 को यथास्थिति 211 उपक्रम		वृद्धि	
	अ० जा०	अ०ज०जा०	अ० जा०	अ०ज०जा०	अ० जा०	अ०ज०जा०
समूह क	1.81	0.43	4.86	1.17	3.05	0.74
समूह ख	3.09	0.55	6.17	1.55	3.08	1.00
समूह ग	16.76	7.68	18.54	8.82	1.78	1.14
समूह घ	22.53	10.32	30.82	17.07	8.29	6.75

उपर्युक्त सारणी से यह प्रकट होता है कि 1-1-1977 की तुलना में 1-1-1987 को यथास्थिति सभी पद समूहों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व काफी बढ़ा है, विशेष रूप से समूह ग तथा घ समूह के पदों में। तथापि, समूह क तथा ख के पदों के बारे में उनके प्रतिनिधित्व की स्थिति बिल्कुल संतोषजनक नहीं है। अतः भर्ती में उनकी वृद्धि के लिए विशेष रूप से समूह क तथा ख पदों में विशेष प्रयास तत्काल किए जाने की आवश्यकता है।

16. **समयबद्ध प्रोन्नतियां** हाल ही में सार्वजनिक क्षेत्र के बहुत से उपक्रमों में यह प्रथा रही है कि वहां रिक्तियों पर आधारित प्रोन्नति प्रणाली के स्थान पर समयबद्ध प्रोन्नति प्रणाली अपना ली गई है। सार्वजनिक क्षेत्र के कुछ उपक्रमों द्वारा यथा अपनाई गई समयबद्ध प्रोन्नति प्रणाली रिक्तियों पर आधारित उस मूल प्रणाली के बदले में अपनाई गई है जिसमें पात्रता की शर्तें सेवा के वर्षों की संख्या के रूप में काफी बढ़ा दी गई है। रिक्ति पर आधारित प्रणाली के अंतर्गत रिक्तियां उपलब्ध होने पर तथा रोस्टर बिन्दुओं के अनुसार आरक्षित होने पर अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के प्रोन्नति से उपेक्षित होने की कोई संभावना नहीं थी जब तक उन्हें विभागीय प्रोन्नति समिति द्वारा अन्यथा अनुपयुक्त न पाया जाए। इसके अतिरिक्त समयबद्ध प्रोन्नति प्रणाली में अधिकतर मामलों में चयन में एक ऐसा तत्व है जो अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के हितों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर रहा है। रिक्ति आधारित प्रणाली में ऐसा कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं था क्योंकि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों को पात्रता की न्यूनतम शर्तें पूरी करने पर ही प्रोन्नति मिल जाती थी बशर्ते कि उन्हें प्रोन्नति के लिए अनुपयुक्त घोषित न किया गया हो। लोक उद्यम कार्यालय में दिनांक 15-12-1986 के अपने का० ज्ञा० सं० 6/27/85-लो० उ० का० (अ० जा०/अ० ज० जा०) द्वारा विभिन्न मंत्रालयों/विभागों को अनुदेश जारी किए थे जिनमें यह कहा गया था कि वे अपने नियन्त्रणाधीन सार्वजनिक क्षेत्र के ऐसे उपक्रमों को जो समयबद्ध प्रोन्नति प्रणाली अपनाने पर विचार कर रहे हैं, यह परामर्श दें कि वे तब तक ऐसा न करें जब तक इस मामले पर लोक उद्यम कार्यालय द्वारा सावधानीपूर्वक विचार न कर लिया जाए। तथापि बाद में लोक उद्यम कार्यालय दिनांक 29-6-1987 के अपने का० ज्ञा० सं० 6/2785-लो० उ० का० (अ० जा० अ० ज० जा० कोष्ठ) के द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र के ऐसे उद्यमों को जो समयबद्ध प्रोन्नति प्रणाली पहले ही अपना चुके थे यह स्पष्ट बताया कि वे यह सुनिश्चित कर ले कि उक्त प्रणाली निम्नलिखित कसौटों को पूरा करती थी —

(1) सभी कर्मचारियों को सेवा की विहित अवधि पूरी कर लेने पर अगले उच्च ग्रेड वेतनमान अथवा स्तर पर प्रोन्नति दे दी जाती है और उनकी प्रोन्नतियां उच्चतर पदों में रिक्तियां उपलब्ध होने की शर्त के साथ नहीं जोड़ी जाती हैं। दूसरे शब्दों में समयबद्ध प्रोन्नति प्रणाली के अंतर्गत प्रोन्नतियां रिक्ति निर्भर नहीं होती हैं।

(2) इस प्रणाली के अंतर्गत प्रोन्नतियों में कोई चयन अथवा व्यक्तियों का गुणवत्ता की आपसी तुलना नहीं की जाती है। तथापि यदि इस प्रणाली में एक

सुस्पष्ट कसौटी के अधीन अनुपयुक्त व्यक्ति को अस्वीकार किया जाता है तो इससे इस प्रणाली में कोई दोषी नहीं आयेगा।

समयबद्ध प्रोन्नतियों के बारे में उपर्युक्त मार्ग निर्देश जारी करते समय लोक उद्यम कार्यालय ने यह भी कहा कि रिक्ति पर निर्भर प्रोन्नतियां पूर्णतः खत्म होनी चाहिएं तथा सभी प्रोन्नतियां किसी भी विशिष्ट छानबीन/गुणवत्ता अथवा रोस्टर उपबंध, विचार क्षेत्र इत्यादि पर विचार किए बिना ही होनी चाहिए क्योंकि ये रिक्ति आधारित प्रोन्नति प्रणाली के घटक होते हैं तथापि, यह देखा गया है कि सार्वजनकि क्षेत्र के कुछ उपक्रम अब भी समयबद्ध प्रोन्नति प्रणाली का अनुसरण कर रहे हैं जिसमें योग्यता के आधार पर व्यक्ति को अस्वीकार किया जाता है। इस प्रकार यहां तक कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के अन्यथा पात्र उम्मीदवार भी जो अपनी उपयुक्तता तथा आरक्षण के आधार पर रिक्ति आधारित प्रणाली के अधीन प्रोन्नत हो जाते, तुलनात्मक योग्यता के आधार पर उपेक्षित हो जाते हैं। **अतः यह आवश्यक है कि प्रोन्नति के लिए योग्यता के आधार पर उम्मीदवारों को अस्वीकार किए जाने के मामले में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए पर्याप्त आरक्षण होना चाहिए। इस बात पर जोर दिया जाये कि जहां भी समयबद्ध प्रोन्नति प्रणाली के अंतर्गत सेवा के पदों की संख्या पूरी करने के रूप में पात्रता की कसौटी को बढ़ाया जाता है, वहां अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के लिए सेवा के वर्षों की संख्या में उपयुक्त छूट दी जानी चाहिए।**

17. **सफाई के लिए ठेके**—यह देखा गया है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बहुत सारे उपक्रम/बैंक कार्यालय परिसरों में या परियो ना बस्तियों में सफाई का काम कराने के लिए ठेकेदारों की मार्फत ठेके के आधार पर सफाई कर्मचारियों को नियुक्त करते हैं। इससे ऐसे कर्मचारी जो अधिकांशत अनुसूचित जातियों के होते हैं एक ओर तो नियमित रोजगार के अवसरों से वंचित रहते हैं तथा दूसरी ओर ठेकेदार उनका शोषण करते हैं। यद्यपि जिन संगठनों से यह प्रणाली अपना ली है, वे इस बात का उचित ध्यान रखते हैं कि ठेकेदारों द्वारा रखे गए कर्मचारियों को भुगतान उपयुक्त रूप से किया जाए और उनकी कार्य करने की परिस्थितियां संतोषप्रद हों, तथापि, इस प्रणाली में ही कुछ कमी अंतर्निहित हैं। इस बात की सदैव संभावना रहती है कि ठेकेदार मानक दरों से कम भुगतान करते हैं, परन्तु रसीद पूरी राशि की प्राप्त कर लेते हैं। कर्मचारी इस डर से कि कहीं उनकी नौकरी न छूट जाए वेतन के लिए लड़ने की स्थिति में नहीं होते हैं। इसमें रोजगार की सुरक्षा तो होती नहीं है, इसके अलावा, नियुक्त कर्मचारियों को वे अन्य लाभ भी नहीं मिल पाते हैं, जिनका दावा वे नियमित कर्मचारी होने पर कर सकते हैं। अतः यह आवश्यक है कि **सफाई कार्य में कोई ठेका प्रणाली नहीं होनी चाहिए क्योंकि यह समाज के निर्बलतम वर्ग को प्रभावित करती है।** ठेका प्रणाली के उन्मूलन से ही सफाई कर्मचारियों का शोषण समाप्त होगा तथा उनके लिए बेहतर तथा लाभदायक रोजगार के अवसर सुनिश्चित होंगे।

18. **सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में अनारक्षण**—जहां तक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों का संबंध है, अनारक्षण का प्राधिकार स्वयं सार्वजनिक क्षेत्र के संगठनों को दे दिया गया है। समूह क तथा ख पदों के लिए आरक्षित रिक्तियों को अनारक्षित करने के लिए सक्षम प्राधिकारी संबंधित संगठन का निदेशक मंडल होता है तथा समूह ग तथा घ श्रेणियों की आरक्षित रिक्तियों को अनारक्षित करने के लिए सक्षम प्राधिकारी अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक होता है। इस कार्यालय के अध्ययन दलों द्वारा किए गए अध्ययन में यह देखा गया है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम अधिकांश रूप से आरक्षित रिक्तियों के अनारक्षण की कार्य विधि का पालन नहीं कर रहे थे। अधिकतर प्राधिकारी इस कार्य विधि का पालन करने के पश्चात् महत्व और आवश्यकता से अवगत नहीं थे। उनका विचार था कि बिना भरी हुई आरक्षित रिक्तियों को पश्चात्वर्ती तीन भर्ती वर्षों तक अग्रणीत कर देना पर्याप्त होगा और यह कि किसी आरक्षित रिक्ति के तीन वर्षों तक पहले ही अग्रणीत हो चुकने के बाद अनारक्षण आवश्यक हो सकता था और यह कि अनारक्षण के लिए अनुमोदन केवल तभी लिया जाना था जब रिक्ति समाप्त होने वाली थी इस संबंध में सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों पर यह बल दिया जाता है कि आरक्षित रिक्तियों को अगले वर्ष में अग्रणीत करने से पूर्व उसका अनारक्षण किया जाना अपेक्षित है। इसके अतिरिक्त अनारक्षण के लिए कार्यविधि का पालन प्रत्येक वर्ष में नई आरक्षित रिक्तियों और अग्रणीत आरक्षणों दोनों के बारे में उस अवस्था में किया जाना है जिसमें आरक्षित रिक्तियों को भरने के लिए कुछ आवश्यक कार्यवाहियां करने के बाद भी ऐसी रिक्तियां खाली रह जाती हैं। यह आवश्यक है कि **आरक्षित रिक्तियों के अनारक्षण के लिए सही कार्य विधि का अनुसरण पूरी तरह से करने के लिए लोक उद्यम कार्यालय सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को स्पष्ट मार्ग निर्देश जारी करें। यह भी वांछनीय होगा कि उन सभी परिस्थितियों को दर्शाने के लिए जिनके कारण आरक्षित रिक्तियों को अनारक्षण आवश्यक है। भारत सरकार द्वारा विहित प्रपत्रों को सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा अपनाया जाए तथा लोक उद्यम कार्यालय जो उन निकायों द्वारा अनारक्षित की जा रही रिक्तियों पर निगरानी रखने के लिए उपयुक्त तंत्र की स्थापना करनी चाहिए।**

19. **राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड के अंतर्गत स्थानान्तरण योजना**
अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण पर सरकार की नीति के कार्यान्वयन के संबंध में राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड की जांच पड़ताल के दौरान यह देखा गया कि प्रबन्ध मंडल विभिन्न स्तरों पर कार्मिकों को भर्ती/प्रोन्नति की रिक्तियों के बदले एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित करने का उपाय अपना रहा था और इससे वह अनुसूचित जातियों तथा

जनजातियों के उम्मीदवारों को आरक्षित कोटे में उनकी प्रोन्नति के अवसरों से वंचित कर रहा था। राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड द्वारा बनाई गई स्थानान्तरण योजना में यह परिकल्पना की गई थी कि जहां कतिपय पदों को भरने के लिए उपयुक्त पद-धारी उपलब्ध नहीं थे विशेष रूप से विशिष्टीकृत संवर्गों में, और उन पदों की कार्य अपेक्षाओं के अनुरूप उन्हें भरना प्रबन्ध मंडल के लिए संभव नहीं था, वे ऐसे पदों को उस संगठन के अन्य विषय क्षेत्रों में कार्य कर रहे उपयुक्त व्यक्तियों को स्थानान्तरित करके भर सकते थे। इन मार्ग निर्देशों के अनुसार ऐसे व्यक्तियों को, जो उसी आधार पर अर्थात् उसी वेतनमान में, जिसमें वे काम कर रहे थे, किसी विषय क्षेत्र में स्थानांतरण के लिए इच्छुक थे, आवेदन देने के लिए आमंत्रित किया गया था। इस प्रकार प्राप्त आवेदन पत्रों की संवीक्षा शैक्षिक अर्हताओं, मूल्यांकन रिपोर्टों की प्रगति तथा कार्य अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए की गई थी। प्रथम दृष्टि में उयुक्त पाए गए व्यक्तियो का मूल्यांकन विधिवत् रूप से गठित चयन समिति द्वारा किया जाना अपेक्षित था ताकि किसी विशिष्ट विषय क्षेत्र में स्थानांतरण के लिए एक चयन सूची बनाई जा सकें। इस योजना में एक विषय क्षेत्र से दूसरे विषय क्षेत्र को स्थानान्तरित व्यक्तियों की वरिष्ठता निर्धारित करने के लिए एक कार्य-विधि का प्रावधान भी किया गया था।

20. जहां तक कर्मचारियों तथा संगठनों के हितों का संबंध है, स्थानान्तरण योजना प्रशंसनीय है। उस स्थिति में जब विशिष्टिकृत विषय क्षेत्र के लिए उपयुक्त व्यक्ति मिलना कठिन हो जाता है, यदि वे अपेक्षित अर्हताएं रखने वाले अपने कर्मचारियों पर, यदि संबंधित कर्मचारी को उस समय अनुभव प्राप्त है, विचार करते हैं तो इसमें कोई आपत्ति नहीं हो सकती है। तथापि, यदि किसी कर्मचारी का स्थानान्तरण संबंधित पद की अपेक्षाओं की तुलना में "निजी अनुरोध" या "प्रशासनिक कारण" के आधार पर किया जाता है तो योजना, का प्रयोजन ही खत्म हो जाएगा। दूसरे शब्दों में इस योजना में "निजी अनुरोध" अथवा "प्रशासनिक कारणों" के रूप में किसी स्वविवेक के अधिकार का प्रावधान नहीं किया गया है क्योंकि स्थानान्तरण एक उपलब्ध पद के समक्ष हैं जारी सरकारी परिपत्र के उत्तर में प्राप्त आवेदन पत्रों से किया जाता है। तथापि, राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड, भटिंडा के अभिलेखों के निरीक्षण के समय यह देखा गया था कि उन सभी कर्मचारियों के मामले जिन्हें इससे पहले प्रशासनिक कारणों पर प्रबन्ध मंडल द्वारा एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र को स्थानान्तरित किया गया था, वस्तुत: प्रशासनिक कारणों के बजाए अन्य कारणों से हुए थे। आधार-भूत अपेक्षाओं के विपरीत, काफी मामलों में भर्ती/प्रोन्नति के लिए अवसरों की समाप्त किए बिना ही अथवा यहां तक कि स्टाफ में पदों को परिचालित किए बिना ही स्थानान्तरण की अनुमति दी गई थी। काफी संख्या में मामलों में अपेक्षित अर्हताओं का भी परित्याग कर दिया गया था, विशेष रूप से समूह क के पदों में; जैसा कि प्राधिकारियों ने यह बताया था कि उसके लिए अर्हताएं किसी प्रकार की रुकावट नहीं थी।

21. चूंकि गत समय में किया गया स्टाफ का स्थानान्तरण पूर्णत: योजना की भावना के अनुसार नहीं था, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों में, जिन्हें सर्वाधिक हानि उठाने वाला बताया गया था, यह अनुभूति बन गई थी कि प्रबन्ध समिति इस योजना का प्रयोग कुछ कृपापात्रों की सहायता के लिए उपकरण के रूप में तथा कर्मचारियों के एक वर्ग को शान्त करने के लिए अथवा औद्योगिक संबंधों की कठिन स्थिति में समझौते के मामले के रूप में कर रही थी, यह बताया गया है कि इस योजना का प्रयोग अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों तथा अन्य कर्मचारियों की प्रोन्नति रोकने के लिए भी किया गया था और इस तरह जब कभी किसी विशिष्ट कर्मचारी की प्रोन्नति का अवसर आता था तो उसे दण्डित करने के लिए स्थानान्तरित कर दिया जाता था। इस स्थाना-न्तरण योजना में परिवर्तन करने के लिए मेरे कार्यालय ने राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड की प्रबन्ध समिति को निम्नलिखित सुझाव दिए --

(1) स्थानान्तरण केवल उपलब्ध रिक्तियों के स्थान पर ही किया जायें।

(2) जहां आरक्षण लागू होता है वहां प्रत्येक रिक्ति को संबंधित रोस्टर में दिखाया जाना चाहिए और तदनुसार रिक्तियां आरक्षित की जानी चाहिएं।

(3) प्रत्येक रिक्ति परिचालित की जानी चाहिए तथा चयन पूरी तरह यथास्थिति वरिष्ठता अथवा योग्यता के आधार पर किया जाना चाहिए।

(4) आवश्यकतानुसार न्यूनतम शैक्षिक अर्हताएं समान रूप में विहित की जानी चाहिएं। जहां अर्हताओं के स्थान पर उस क्षेत्र में प्राप्त प्रशिक्षण रखा गया है, उसे सभी मामलों में वास्तविक स्थानान्तरण से पूर्व एक पूर्व शर्त के रूप में समान रूप से लागू किया जाना है।

(5) यदि किसी कर्मचारी की प्रोन्नति देय है, तो उस ग्रेड में स्थानान्तरण को बचाया जाए।

22. अध्ययन दल की उक्त रिपोर्ट में दिए गए सुझावों के आधार पर राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड की प्रबन्ध समिति ने इस योजना की समीक्षा की तथा व्यक्तिगत अनुरोधों पर स्थानान्तरण बन्द किए जाने का निर्णय किया। प्राधिकारियों ने ऐसे सभी स्थानान्तरणों को भी जो बाध्यकारी परिस्थितियों में अपेक्षित होते थे, विभागीय उम्मीदवारों के लिए सीमित सीधी भर्ती के रूप में माने जाने का निर्णय किया और उसमें नियमानु-सार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए आरक्षण रखा गया तथापि, इसके साथ ही प्रबन्ध समिति ने पुनरीक्षित योजना के अधीन यह अधिकार प्राप्त कर लिया

कि वे अपने विवेक के अनुसार किसी भी कर्मचारी को पार्श्विक स्थानान्तरण के आधार पर कार्य के हित में सीधे स्थानान्तरित कर दें और उसकी वही वरिष्ठता रखें जो उसे अपने मूल विषय-क्षेत्र में प्राप्त थी। ऊपर बताई गई स्थिति की दृष्टि से यह अनुभव किया गया है कि प्राधिकारियों ने प्रबन्ध समिति की योजना की भावना के विरुद्ध स्थानान्तरण के लिए व्यक्तियों को छांटने और चुनने की इस अन्यायसंगत कार्यवाही का निवारण करने के बजाय इस योजना में ही एक ऐसा प्रावधान जोड़कर जो पहले नहीं था, अपनी कार्यवाही को विधिमान्य ठहराया। यहां तक कि प्रबन्ध समिति ने विवेक से किए गए स्थानांतरणों में जो या तो कार्य के हित की दृष्टि से या प्रशासनिक आधार पर किए गए थे, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए वे भी सुरक्षण किए जाने का प्रस्ताव नहीं किया। **यह सुनिश्चित करने के लिए कि विहित प्रतिशत के अनुसार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों के विधिमान्य दावों को पार्श्विक आधार पर स्टाफ के स्थानान्तरण के कारण क्षति न हो, किसी मामले में कार्यवाही आरम्भ करने से पहले सभी रिक्तियों को सबद्ध रोस्टरों पर लाया जाना चाहिए। यह भी सुनिश्चित करना होगा कि जहां प्रोन्नति के लिए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवार उपलब्ध हों, वहां रिक्तियां स्थानान्तरण के माध्यम से न भरी जाएं। राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड तथा अन्य उपक्रम भी तदनुसार अपनी स्थानान्तरण की नीति में संशोधन कर लें।**

23. **संपर्क अधिकारी का कार्य** भारत सरकार के अनुदेशों के अनुसरण में प्रत्येक मंत्रालय/विभाग में प्रशासन का प्रभारी उप सचिव (अथवा कम से कम उप सचिव श्रेणी का कोई अन्य अधिकारी जिसे इस प्रयोजन के लिए नियुक्त किया गया हो) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सेवाओं में प्रतिनिधित्व तथा इस संबंध में विभिन्न छूटों/रियायतों से संबंधी मामलों के बारे में संपर्क अधिकारी के रूप में कार्य करता है। लोक उद्यम कार्यालय द्वारा जारी अनुदेशों के अनुसार सार्वजनिक क्षेत्र के प्रत्येक उपक्रम को भी सेवाओं तथा पदों में आरक्षण के लिए राष्ट्रीय निदेशों के कार्यान्वयन के लिए समुचित रैंक के एक अधिकारी को जो प्रशासन अथवा कार्मिक प्रभारी हों, संपर्क अधिकारी के रूप में नामित करना होता है। इस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र के कई उपक्रमों में उप महाप्रबन्धक (जो तुलना में भारत सरकार के उप सचिव के स्तर के हैं) के रैंक के संपर्क अधिकारी हैं, ताकि वे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आरक्षण आदेशों के कार्यान्वयन संबंधी समस्याओं को प्रभावशाली ढंग से निपटा सकें। तथापि, यह देखा गया है कि काफी संख्या में उपक्रम इस पहलू को अधिक महत्व नहीं देते हैं और अभी भी उप प्रबन्धक/प्रबन्धक अथवा इससे भी नीचे के स्तर के अधिकारियों को जो कार्मिक तथा औद्योगिक संबंधी का कार्य करते हैं, संपर्क अधिकारी के रूप में नामित करते हैं, जिनके लिए इस मामले में कारगर भूमिका निभाना कठिन होता है। कुछ मामलों में अभियन्ता विषय क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कार्यकारी अधिकारियों को ही जिन्हें न तो प्रशासनिक मामलों का और न ही आरक्षण निदेशों का पर्याप्त ज्ञान होता है, संपर्क अधिकारियों के रूप में नामित किया जाता है और यह अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों को यह बताने के लिए किया जाता है कि यह महत्वपूर्ण कार्य केवल अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के अधिकारी को सौंपा गया है। इस प्रवृत्ति को बदलने की आवश्यकता है ताकि **प्रशासनिक तथा कार्मिक मामलों का कार्य करने वाले उप महा प्रबन्धक रैंक के अधिकारियों की सजर्क अधिकारियों के रूप में नियुक्ति से आरक्षण आदेशों का उपयुक्त कार्यान्वयन सुनिश्चित किया जा सके।**

24. **अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के संगठन** सेवा संबंधी मामलों के बारे में अपनी सामान्य शिकायतों को प्रस्तुत करने के लिए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों द्वारा बनाए गए संगठन मान्यता देने के लिए सतत अनुरोध करते रहे हैं ताकि वे सार्वजनिक क्षेत्र के विभिन्न उपक्रमों में आरक्षित कोटे के पदों के विधिमान्य दावों के लिए लड़ सकें। जबकि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त ने अपनी पहले की रिपोर्टों में इस प्रकार के संगठनों को मान्यता देने की मांग का समर्थन किया है, तथापि गृह मंत्रालय ने यह अनुभव किया है कि जाति/धर्म के आधार पर ऐसे संगठनों के मान्यता दिए जाने को हतोत्साहित किया जाना चाहिए। साधारण तौर पर यह देखा गया है कि कर्मचारी संघ (ट्रेड यूनियन) अधिकांशतः सेवा संबंधी मामलों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के दावों का समर्थन करने के लिए अनिच्छुक होते हैं और इसलिए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारी संघ को अपनी मान्यता के अभाव में अपनी शिकायतों का निवारण करने के लिए प्रबन्ध समिति को मनाने में बहुत अधिक कठिनाइयां होती हैं। उसी समय इस कार्यालय के अधिकारियों द्वारा किए गए सार्वजनिक क्षेत्र के कुछ उपक्रमों के निरीक्षण में यह देखा गया था कि काफी उपक्रमों में प्राधिकारियों ने अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के संगठनों को काफी महत्व दिया था और ऐसे संगठनों के साथ पत्राचार तथा बैठकें भी की थीं ताकि संविधान की भावना के अनुसार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए पूर्ण न्याय सुनिश्चित किया जा सके। यह भी देखा गया था कि कुछ प्रशासनिक प्राधिकारियों द्वारा अपनाए गए कठोर रवैये का परिणाम यह हुआ कि ऐसे संगठनों ने अपनी शिकायतों के समाधान के लिए आन्दोलनकारी मार्ग अपना लिया। यह समस्या उस समय और अधिक जटिल हो जाती है जब अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के अपने ही विरोधी संगठन बन जाते हैं। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों की आवाज को और अधिक महत्वपूर्ण बनाने के लिए ऐसे सभी कर्मचारियों के लिए एक संयुक्त मंच बनाने के लिए प्रयास किए जाने चाहिएं। इस संस्था को व्यापक बनाने तथा कर्मचारियों के

सभी वर्गों का सद्भाव तथा समर्थन प्राप्त करने के लिए भी प्रयास किए जाने चाहिएं। ट्रेड यूनियनों को अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के हितों की रक्षा के लिए अपने अनुसूचित जाति/जनजाति कक्ष भी बनाने चाहिएं।

25. सन् 1983 में वित्त मंत्रालय के आर्थिक कार्य विभाग के बैंकिंग प्रभाग ने सभी राष्ट्रीयकृत/सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को यह अनुदेश दिए कि वे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों तथा उनके संगठनों की समस्याओं को निपटाने के लिए निम्नलिखित आधार पर अनौपचारिक व्यवस्थाएं करे—

(1) संपर्क अधिकारी अनौपचारिक रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों तथा उनके प्रतिनिधियों से मिलें और आरक्षण संबंधी नीति के मामलों के संबंध में उनकी शिकायतें सुनें। इन बैठकों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों को नीति निर्णयों सहित वास्तविक स्थिति भी स्पष्ट की जाए ताकि उनके मन की आशंकाओं को दूर किया जा सके। ऐसी बैठकों के औपचारिक कार्यवृत दिए जाने की कोई आवश्यकता नहीं है। तथापि, संपर्क अधिकारी अनुवर्ती कार्यवाही के लिए अभिलेख के रूप में इसका एक नोट रख सकते हैं।

(2) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों की शिकायतों पर गौर की जानी चाहिए तथा जहां कहीं आवश्यक हो, उपाय के तौर पर कार्यवाही शीघ्र की जानी चाहिए।

(3) आरक्षण तथा अन्य संबंधित शिकायतों के बारे में संगठनों से प्राप्त अभ्यावेदनों की प्राप्ति-सूचना भेजी जानी चाहिए।

(4) संगठनों से प्राप्त सभी अभ्यावेदनों को एक रजिस्टर में दर्ज किया जाना चाहिए और प्रत्येक अभ्यावेदन पर की गई कार्यवाही उसमें दर्शाई जानी चाहिए। इस रजिस्टर का निरीक्षण संपर्क अधिकारी द्वारा समय-समय पर किया जाना चाहिए।

यह सुझाव दिया जाता है कि **उपर्युक्त बिन्दुओं पर लोक उद्यम कार्यालय तथा संबंधित मंत्रालयों/विभागों द्वारा उनके अधीन काम कर रहे सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को अनुदेश: जारी किए जाने चाहिए ताकि सेवाओं तथा पदों में आरक्षण संबंधी मामलों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के संगठनों की शिकायतों को दूर किया जा सके।**

26. **सार्वजनिक क्षेत्र के बहु एकक निकायों में स्थानान्तरण नीति की समीक्षा**—सार्वजनिक क्षेत्र के बहु-एकक उपक्रमों जैसे भारतीय खाद्य निगम, राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड, केन्द्रीय भण्डार निगम इत्यादि में प्रचलित औपचारिक प्रथा के अनुसार कर्मचारियों को उनकी प्रोन्नति पर प्रशासनिक आवश्यकताओं के अनुसार तैनात किया जाता है। तथापि, ऐसे सभी मामलों में जिनमें व्यक्तियों की प्रोन्नति के लिए नामिका में अपेक्षाकृत उच्च स्थिति होती है, उन्हें उसी स्थान पर अथवा निकट के स्थानों पर रखने के लिए प्राथमिकता दी जाती है। नामिका में जिन कर्मचारियों के नाम नीचे होते हैं उनकी तैनाती सबसे दूर के स्थान पर होती है तथा सबसे अधिक असुविधाजनक होती है। सार्वजनिक क्षेत्र के ऐसे निकायों में प्राधिकारी अपने विवेक से प्रशासनिक आवश्यकताओं के आधार पर कर्मचारियों को उनकी इच्छा से समय-समय पर स्थानान्तरित करते हैं, ऐसा विशेष रूप से उस समय किया जाता है जब किसी विहित मानदण्ड पर आधारित स्थानान्तरण की कोई घोषित नीति नहीं होती है। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के काफी संख्या में कर्मचारी प्रबन्ध समिति द्वारा अभिकथित पक्षपात के कारण किए गए उनके स्थानान्तरणों के विरुद्ध मेरे कार्यालय में अभ्यावेदन देते हैं। यह समस्या इस सीमा तक बढ़ गई कि 1985 में भारत सरकार को कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग के कार्यालय ज्ञापन सं०-ओ० 36026/3/85-स्था (एस० सी० टी०) दिनांक 24-6-1985 के अनुसार सभी मंत्रालयों/विभागों को अनुदेश जारी करने पड़े जिनमें इस बात पर बल दिया गया कि सरकारी कर्मचारियों को अनुसूचित जाति तथा जनजाति समुदायों के सदस्यों के विरुद्ध उनकी जाति के आधार पर किसी पक्षपातपूर्ण कार्य से दूर रहना चाहिए। इसमें संपर्क अधिकारियों सहित मंत्रालयों/विभागों के वरिष्ठ अधिकारियों पर भी यह जिम्मेदारी आयी है कि वे यह सुनिश्चित करने के लिए सूक्ष्म रूप से गौर करें कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारी के साथ किसी प्रकार का उत्पीड़न अथवा पक्षपात न हो और यह कि इस प्रकार की घटनाएं बिल्कुल घटित न हों। आदेशों में गलती करने वाले अधिकारियों के विरुद्ध कार्यवाही की भी व्यवस्था है।

27. भारतीय खाद्य निगम के मामलों में अगस्त, 1985 में उसके मद्रास के मण्डलीय कार्यालय में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण आदेशों के कार्यान्वयन के संबंध में जांच पड़ताल करते हुए यह देखा गया था कि प्रोन्नतियों के बाद काफी संख्या में कर्मचारियों को उन स्थानों पर जाना पड़ता था जहां रिक्तियां उपलब्ध थीं। निगम की नीति के अनुसार वरिष्ठतम अधिकारियों/कर्मचारियों को उपलब्ध रिक्तियों की सीमा तक उसी स्थान में रखा गया था। इसी रीति से नामिका में बचे हुए कर्मचारियों को उनकी वरिष्ठता के अनुसार निकटतम/सुविधाजनक स्थानों पर नियुक्तियों के लिए अन्यों की अपेक्षा प्राथमिकता दी जा रही थी। नामिका के कनिष्टतम उम्मीदवारों को प्रत्येक मण्डल के दूरवर्ती भागों में या कभी-कभी मण्डल के बाहर भी तैनात किया जा रहा था। अधिकांश मामलों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारी की वरिष्ठता नीचे होने के कारण नामिका में उनकी स्थिति नीचे थी और इसलिए वे प्रोन्नति के बाद तैनातियों के संबंध में सर्वाधिक हानि में रहे। अत: इस कार्यालय के अध्ययन दल की रिपोर्ट में इस बात पर जोर दिया था कि भारतीय खाद्य निगम की स्थानान्तरण नीति पक्षपातपूर्ण प्रकृति की थी और उसके

पुनरावलोकन की आवश्यकता थी ताकि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कर्मचारियों को कम से कम क्रमशः 15 प्रतिशत तथा 7½ प्रतिशत की सीमा तक उसी स्थान अथवा निकटतम स्थानों पर बेहतर युक्तियुक्त रूप से अच्छी नियुक्तियां देने के लिए अवसर प्रदान करने के लिए एक नीति का निर्माण किया जा सके।

28. स्थानान्तरण नीति का एक अन्य पहलू जो अध्ययन दल के सामने आया, वह कर्मचारीवृन्द के यहां तक कि समूह घ कर्मचारियों के भी मुक्त रूप से हो रहे स्थानान्तरण के बारे में था। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों तथा अन्य कर्मचारियों के सामने आई कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए भारतीय खाद्य निगम की प्रबन्ध समिति को यह सुझाव दिए गए––

(1) समूह घ स्टाफ की प्रोन्नतियां तथा स्थानान्तरण उसी जिले के डिपों तक सीमित रखी जाएं।

(2) समूह ग के अन्दर के कर्मचारियों की प्रोन्नतियां तथा स्थानान्तरण उसी क्षेत्र तक सीमित रखी जाएं।

(3) समूह ग के कर्मचारियों से समूह ख में प्रोन्नतियां तथा स्थानवन्तरण उसी मण्डल के अन्दर ही होने चाहिएं।

भारतीय खाद्य निगम ने इन सुझावों पर सक्रिय रूप से विचार करने का आश्वासन दिया।

29. राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड के मामले में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के स्थानान्तरण संबंधी अधिकतर शिकायतें चण्डीगढ़ के केन्द्रीय मार्केटिंग संगठन से संबंधित थीं और उस स्थान पर अध्ययन किया गया था। उन्होंने यह शिकायत की कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों की नियुक्तियां बिना किसी न्यायोचित्य के अलाभकर पदों पर तथा दुर्गम स्थानों पर करके उनके विरुद्ध पक्षपात किया गया। यद्यपि प्राधिकारियों ने स्थानान्तरणों के लिए मुख्यतः कारण प्रशासनिक बताए थे, परन्तु यह देखा गया था कि इस संबंध में प्राधिकारियों द्वारा कोई निश्चित मापदंड नहीं अपनाया गया था और यह कि प्रबन्ध समिति ने स्थानान्तरण का प्रयोग कुछ मामलों में कर्मचारियों को उत्पीड़ित करने अथवा दण्ड देने लिए एक उपकरण के रूप में किया था। **यह वांछनीय है कि सार्वजनिक क्षेत्र के सभी उपक्रम नियुक्तियों/स्थानान्तरणों के संबंध में एक घोषित नीति अपना लें, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों की प्रोन्नति के बाद सामाजिक बाधाओं के कारण उनके सामने आई समस्याओं को ध्यान में रखते हुए।**

राष्ट्रीयकृत तथा सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक

30. **सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व**––अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए सेवाओं तथा पदों में आरक्षण के लिए सरकारी नीति गत 1960 के दशक से सार्वजनिक क्षेत्र के सभी उपक्रमों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों पर लागू की गई थी। समय बीतने के साथ-साथ बैंकिंग क्षेत्र के विभिन्न संवर्गों में सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रतिनिधित्व में काफी सुधार हुआ है। 1-1-1987 को यथा स्थिति इन बैंकों की सेवाओं के विभिन्न समूहों के अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रतिनिधित्व की स्थिति, जैसा कि वित्त मंत्रालय के आर्थिक कार्य विभाग द्वारा दी गई है, 1-1-1976 की स्थिति की तुलना में भर्ती में हुई वास्तविक वृद्धि सहित नीचे दर्शाई गई है––

सारणी 8

वर्गीकरण	1-1-1976 की यथास्थिति		1-1-1987 को यथास्थिति		वृद्धि	
	अ० जा०	अ०ज०जा०	अ० जा०	अ०ज०जा०	अ० जा०	अ० ज०जा०
अधिकारी	0.86	0.13	7.29	1.84	6.43	1.71
लिपिक वर्ग	5.63	0.77	13.77	3.77	8.14	3.00
अधीनस्थ . . . . (सफाई कर्मचारियों को छोड़ कर)	16.41	1.70	22.30	4.61	5.89	2.91

उपर्युक्त सारणी से यह प्रकट होगा कि 1-1-1976 की स्थिति की तुलना में 1-1-1987 को यथा स्थिति अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रतिनिधित्व का प्रतिशत स्थायी रूप से बढ़ा है। तथापि पर्याप्त प्रतिनिधित्व लिपिक तथा अधीनस्थ संवर्गों में केवल अनुसूचित जातियों के मामले में प्राप्त हो सका है। बैंकिंग क्षेत्र में आरक्षण आदेशों के कार्यान्वयन के करीब दो दशकों के बाद भी अनुसूचित जनजातियों का प्रतिनिधित्व सभी संवर्गों में एक निराशाजनक चित्र प्रस्तुत करता है। अनुसूचित जनजातियों के अधिक उम्मीदवारों को सभी पद समूहों में तथा अनुसूचित जातियों के भी और उम्मीदवारों को अधिकारी ग्रेड में भर्ती के लिए संबंधित प्राधिकारियों को तत्काल ही ठोस कदम उठाने चाहिएं।

31. **अधिकारी ग्रेड के भीतर प्रोन्नतियां**––बैंकिंग क्षेत्र में लिपिक से लेकर अधिकारी ग्रेड के निम्नतम स्तर तक के पदों में प्रोन्नतियों में आरक्षण की अनुमति दी गई है। अधिकारी ग्रेड

के भीतर के पदों पर प्रोन्नतियों के मामले में बैंकों में इस आधार पर आरक्षण की अनुमति नहीं दी गई है कि ऐसी सभी प्रोन्नतियां चयन के आधार पर की जाती हैं। यह देखा गया है कि अधिकतर मामलों में, यद्यपि बैंकों में चयन की कार्य-विधि भी परीक्षा, साक्षात्कार, अनुभव इत्यादि पर आधारित है, प्रोन्नतियां पूरी तरह वरिष्ठता के आधार पर की जाती है। बैंकों में अधिकारियों का निम्नतम स्तर समूह के अधिकारियों को माना जाता है, जिसके पदों पर प्रोन्नतियां लिपिक ग्रेड से भी की जाती है जो समूह ग का ग्रेड है। वस्तुतः समूह ग से केवल समूह ख में ही प्रोन्नति संभव है, समूह क में नहीं और इसलिए लिपिक ग्रेड से अधिकारियों के निम्नतम स्तर के पद पर हुई प्रोन्नति को समूह ख में हुई प्रोन्नति मानी जानी चाहिए, जिससे आरक्षण आदेश सुचारु रूप से लागू होंगे तथा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए प्रथम ग्रेड से द्वितीय ग्रेड में अधिकारियों की प्रोन्नति के अवसर सुलभ हो सकेंगे।

32. **भत्ते वाले पद** कुछ बैंकों में यह देखा गया है कि भत्ते वाले पदों में आरक्षण लागू नहीं किया गया है, चाहे कहीं ऐसा भत्ता 400 रु० से 500 प्रति माह तक मिलता हो, क्योंकि इसे प्रोन्नति के रूप में नहीं माना जाता है। आरम्भ में जब ऐसे पदों के लिए भत्ते की राशि थोड़ी होती थी और सभी नियुक्तियां पूरी तरह वरिष्ठता के अनुसार की जाती थीं तो, ऐसे पदों के लिए अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण के कार्यान्वियन की उपेक्षा की जा सकती थी। दूसरे, भत्ते वाले पदों के समक्ष नियुक्तियों में आरक्षण आदेशों के कार्यान्वियन के विरुद्ध तर्क देते हुए प्राधिकारियों ने यह बताया कि लिपिक पदों पर कार्य करने वाले कर्मचारियों तथा भत्ते वाले पदों पर कार्य करने वाले कर्मचारियों को अधिकारी ग्रेड के पदों पर प्रोन्नति के लिए विचार करते समय उन्हें समकक्ष माना गया था और इसलिए भत्ते वाले पदों पर नियुक्तियों को प्रोन्नति नहीं माना जा सकता था तथापि, इलाहाबाद बैंक के अधीन सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण आदेशों के कार्यान्वियन की जांच पड़ताल करते समय यह देखा गया था कि रु० 400 से 500 की सीमा तक भत्तों में भारी वृद्धि होते ही प्राधिकारियों ने भत्ते वाले पदों पर कर्मचारियों की तैनाती के लिए चयन विधि लागू कर दी थी। यह देखा गया कि 1983 से 1985 के दौरान इलाहबाद बैंक द्वारा ऐसे पदों के लिए चयनित 113 लिपिकों में अनुसूचित जाति या जनजाति का कोई कर्मचारी नहीं था, जबकि अधिकारी ग्रेड के प्रोन्नति पदों के 10 प्रतिशत पद पूरी तरह भत्ते वाले पदों पर कार्य कर रहे कर्मचारियों से भरे जा रहे थे। यूनाइटेड कर्माशियल ओवरसीज बैंक के मामले में भी यह देखा गया था कि लिपिक पदों से विशेष सहायक के ग्रेड, भत्ते वाला एक पद, में नियुक्तियों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए कोई आरक्षण इसलिए नहीं दिया गया था कि ये पद लिपिक संवर्ग का ही एक भाग थे। परन्तु उसी समय बैंक के अंतर्गत अधिकारी ग्रेड में प्रोन्नति कोटे का एक भाग पूरी तरह वरिष्ठता के आधार पर विशेष सहायकों से भरा जा रहा था जिसके लिए कोई औचित्य नहीं था क्योंकि उन्हें लिपिक संवर्ग के एक भाग के रूप में माना गया था। **अतः इस वर्ग में भी आरक्षण नीति को लागू करके भत्ते वाले पदों के संबध में अनुचचित जातियों तथा जनजातियों के हितों की रक्षा करने की तत्काल आवश्यकता है।**

33. **नियक्तियाँ/स्थानान्तरण**—बैंकिंग क्षेत्र में प्रोन्नति पर कर्मचारियों की तैनाती के लिए विहित सामान्य कार्य-विधियों के अनुसरण में उम्मीदवारों को स्थानीय रिक्तियां पूरी तरह योग्यता सूची में उनकी स्थिति के अनुसार ही दी जाती हैं। अतः योग्यता सूचक में निम्नतर स्थितियां रखने वाले उम्मीदवारों को सामानयतः सुदूर और ग्रामीण क्षेत्रों में नियुक्तियां मिलती हैं। चूंकि वरिष्ठता नीचे होने के कारण अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारी चयन सूची में साधारण तौर पर निचली स्थिति में होते हैं उनकी नियुक्तियां सबसे खराब स्थानों पर अधिकांशतः ग्रामीण क्षेत्रों में होती हैं। इससे साधारण तौर पर अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों के सामने आने वाली सामाजिक शैक्षिक तथा आवास समस्याओं के कारण उनमें शिकायतें उत्पन्न होती हैं। **अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों की परेशानियों को कम करने के लिए उनको उसी स्थान पर अथवा निकट के स्थान पर कम से कम अनुचचित जातियों तथा जनजातियों के लिए क्रमशः 15 प्रतिशत तथा 7 1/2 प्रतिशत की सीमा तक नियुक्ति करने पर जैसा कि पंजाब नेशनल बैंक ने किया है, विचार करने की अनिवार्य आवश्यकता है।**

34. **बैंकों में सफाई कर्मचारियों के लिए प्रोन्नति के अवसर**—भारत सरकार के आदेशों के अनुसार चपरासी (बैंकों में निम्न स्टाफ) के ग्रेड में 25 प्रतिशत पद ऐसे सफाई कर्मचारियों, फराशों, चौकीदारों इत्यादि के लिए आरक्षित किए जाने तथा उन्हीं से भरे जाने अपेक्षित हैं जिन्होंने कम से कम 5 वर्ष की सेवा पूरी कर ली है। और अंग्रेजी, हिन्दी अथवा कोई भी क्षेत्रीय भाषा पढ़ तथा लिख सकते हों। एक राष्ट्रीयकृत बैंक में इस कार्यालय द्वारा हाल ही में किए गए एक अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि वहां भारत सरकार के अनुदेशों में दी गई शर्त साक्षर होने की अपेक्षित योग्यता लागू करने के बजाय केवल उन उम्मीदवारों पर विचार किया गया था जो कम से कम कक्षा 5 उत्तीर्ण करने का प्रमाण-पत्र रखते थे। **अतः यह सुनिश्चित करना होगा कि राष्ट्रीयकृत/सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक सरकार के मार्ग निर्देश का सही रूप से अनुसरण करें ताकि अधिक से अधिक संख्या में व्यक्तियों को अस्वच्छ कार्यों से स्वच्छ कार्यों पर परिवर्तित करने की सरकार की नीति की भावना को कार्यान्वित किया जा सके। जो उन्हें आगे रोजगार के और अच्छे अवसर प्राप्त करने और अपना उत्थान करने में सहायक हो सकती है।** उस बैंक में, जैसा कि अन्य मामलों में भी था, यह भी देखा गया था कि वहां काफी संख्या में सफाई कर्मचारी या तो समेकित वेतन पर अथवा अंशकालिक आधार पर कार्य कर रहे थे। इस प्रकार उन्हें नियमित रोजगार से वंचित रखा गया था चूंकि सफाई कर्मचारी समाज के निर्धनतम वर्ग से आते हैं, उन्हें नियमित नियुक्ति से संलग्न कोई अन्य लाभ मिलना बहुत कठिन होता है और वे अल्प

रोजगार में रहते हैं। यदि भारत सरकार के अनुदेशों के अनुसार, ऐसे अंशकालिक कर्मचारियों पर, चाहे उनकी अर्हताएं कुछ भी हों निम्न स्टाफ के लिए विचार किया जाए तो यह उनके लिए बहुत लाभप्रद होगा। इससे उन्हें ऐसे पूर्ण रोजगार तथा नियमित रोजगार के साथ जुड़े अन्य लाभों को प्राप्त करने में सहायता मिलेगी और उनकी आर्थिक तथा रहन-सहन की स्थितियों को सुधारने का मार्ग प्रशस्त होगा जिसका दूरगामी प्रभाव उनकी सामाजिक स्थिति पर पड़ेगा।

35. इस संदर्भ में यह भी उल्लेख किया जा सकता है कि अधिकतर बैंकों में निम्न स्टाफ की लिपिक पदों पर प्रोन्नति का प्रावधान है बशर्ते वे अपनी सेवा के दौरान आवश्यक अर्हता प्राप्त करलें जैसे मैट्रिक/हायर सेकेंडरी। इस योजना के अंतर्गत इलाहाबाद बैंक के निम्न स्टाफ के जो कर्मचारी प्रथम श्रेणी में मैट्रिक/हायर सेकेन्डरी परीक्षा उत्तीर्ण कर लेते हैं, उन्हें बिना किसी परीक्षा और साक्षात्कार के तत्काल ही लिपिक पदों पर, प्रोन्नत कर दिया जाता है किन्तु निम्न स्टाफ या सफाई कर्मचारियों के रूप में कार्य कर रहे अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के ऐसे कर्मचारियों को जो उक्त अर्हता प्राप्त कर लेते हैं, कोई छूट नहीं दी जाती है। चूंकि ये कर्मचारी समाज के निर्धनतम वर्ग से आते हैं, वे अपनी हायर सेकेन्डरी परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त करने की स्थिति में बहुत कम होते हैं। अत: अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के निम्न स्टाफ के मामले उक्त अपेक्षाओं की न्यूनतम स्तर तक शिथिल किया जाना चाहिए ताकि उन्हें मैट्रिक/हायर सेकेन्डरी परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए पढ़ने और प्रोन्नति के बेहतर अवसर प्राप्त करने के लिए, प्रोत्साहित किया जा सके, विशेष रूप से इसलिए क्योंकि निचले वर्गों से लिपिक पदों पर प्रोन्नति में कोई आरक्षण नहीं है क्योंकि लिपिक पदों पर सीधी भर्ती की गई नियुक्तियों के 66–2/3 प्रतिशत से अधिक होती है।

36. **राज्य सरकार की सेवाएं** : राज्य सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के वास्तविक प्रतिनिधित्व से संबंधित विभिन्न वर्षों के लिए सांख्यिकी सूचना, केवल 19 राज्यों तथा 9 संघ राज्य क्षेत्रों से प्राप्त हुई है। यह सूचना राज्य की जनसंख्या में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की जनसंख्या के प्रतिशत सहित, तथा सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के बारे राज्य सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण के प्रतिशत अनुलग्नक 6 में देखी जा सकती हैं। उससे यह देखा जा सकता है कि जहां तक समूह क तथा ख सेवाओं का संबंध है कोई भी राज्य अपनी सेवाओं के लिए विहित आरक्षण कोटा प्राप्त नहीं कर सका है। केरल में 10 प्रतिशत (अनुसूचित जातियों के लिए 8 प्रतिशत तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए 2 प्रतिशत) के कुल आरक्षण के मुकाबले अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का वास्तविक संयुक्त प्रतिनिधित्व 8.4 प्रतिशत दर्शाया गया है। हरियाणा, मध्य प्रदेश, पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल राज्यों में अनुसूचित जातियों के मामले में समूह क के पदों में विहित आरक्षण के क्रमश: 20, 15, 25, 18 तथा 15 प्रतिशत के मुकाबले केवल 5.7, 2.1, 8.4, 6.8 तथा 4.6 प्रतिशत प्राप्त किया गया है। अधिकांश राज्यों में समूह ग तथा समूह घ पदों में अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व अभी तक विहित प्रतिशत तक नहीं पहुंचा है सिवाय इसके कि गुजरात में (समूह ग तथा घ दोनों में), हरियाणा में (केवल समूह घ में) केरल, पंजाब में (केवल समूह घ में), उत्तर प्रदेश में (केवल समूह घ में), पश्चिम बंगाल में (केवल समूह घ में) तथा चंडीगढ़ में (केवल समूह घ में) विहित प्रतिशत प्राप्त हुआ है। अनुसूचित जनजातियों का प्रतिनिधित्व कुछ राज्यों में समूह घ के पदों को छोड़कर बिलकुल संतोषजनक नहीं है। **अतः यह अनुभव किया जाता है कि संबंधित राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा आवश्यक उपाय किए जाने चाहिए ताकि सेवाओं में विशेष रूप से क तथा ख समूह के पदों में कमियों को पूरा किया जा सके।**

विश्वविद्यालय सेवाएं

37. केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना करने वाले संसद अधिनियमों में ऐसे कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं हैं जो केन्द्रीय सरकार या विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को यह अधिकार प्रदान करते हों कि वे केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के बारे में कोई नियम बना सकते हैं अथवा केन्द्रीय विश्वविद्यालयों को कोई निदेश जारी कर सकते हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अपने दिनांक अगस्त 26/29, 1975 के एक परिपत्र में, जो केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों को लिखा गया था, उन्हें यह सूचित किया था कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने सिद्धांत रूप से यह स्वीकार किया था कि विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में प्राध्यापकों के पदों पर भर्ती में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण उपलब्ध कराया जाए और ऐसे आरक्षणों के लिए कार्यविधि बनाई जा सकती थी। इसके बाद विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से कई परिपत्र गए। यह ज्ञात नहीं है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अपने मार्गनिर्देशों में आरक्षण का प्रतिशत विशिष्ट रूप से प्रथम बार कब विहित किया था। किन्तु अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए 7.5 प्रतिशत के पुनरीक्षित प्रतिशत (अनुसूचित जनजातियों के लिए यह पहले 5 प्रतिशत था) की सूचना उपकुलपतियों को 25-8-1982 को दी गई थी और उस परिपत्र में यह बताया गया था कि ये प्रतिशत अध्ययन के विभिन्न पाठ्यक्रमों में दाखलों में तथा गैर-अध्यापन पदों में नियुक्तियों पर तथा अध्यापन पदों पर भी प्राध्यापकों/सहायक प्रोफेसर के स्तर तक के पदों पर नियुक्तियों में लागू होंगे। दिनांक 1-1-1987 को यथा-स्थिति विभिन्न केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के अधीन सेवाओं में, अध्यापन तथा गैर-अध्यापन (प्रशासनिक) दोनों पदों में, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रतिनिधित्व के बारे में सूचना जैसा कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा उपलब्ध कराई गई है,

अनुलग्नक 7 में देखी जा सकती है। उससे यह प्रकट होगा कि अध्यापन-पदों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व नगण्य है यहां तक कि प्राध्यापकों के स्तर पर जहां केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में आरक्षण आदेश लागू कर दिए गए हैं, कुल संख्या 1404 में से केवल 16 अनुसूचित जातियों के तथा 50 जनजातियों के प्राध्यापक थे (46 उत्तर पूर्व पर्वतीय विश्वविद्यालय में थे)। गैर-अध्यापन पदों के मामले में भी लगभग सभी केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में समूह घ पदों में आरक्षण का प्रतिशत केवल अनुसूचित जातियों के मामले से पूरा हो सका था।

38. 1-1-1986 को यथा स्थिति विभिन्न राज्य विश्वविद्यालयों के अधीन अध्यापन तथा अनुसूचिवीय (गैर-अध्यापन) पदों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रतिनिधित्व को दर्शाने वाली सांख्यिकी सूचना एकत्र करने के लिए एक प्रयास किया गया है। केवल 41 विश्वविद्यालयों के संबंध में प्राप्त सूचना अनुलग्नक 8 में देखी जा सकती है। सूचना का सार नीचे दिया जा रहा है--

सारणी 9

वर्ग	कुल	अ० जा०	प्रतिशत	अ० ज० जा०	प्रतिशत
अध्यापन पद (41 विश्वविद्यालय)					
प्रोफेसर . . .	2,133	13	0.61	1	0.05
रीडर/सहयुक्त . . .	3,261	34	1.04	5	0.15
प्रोफेसर/प्राध्यापक . .	5,341	169	3.16	32	0.60
अनुसंधान सहायक, इत्यादि .	674	71	10.53	2	0.30
अनुसचिवीय पद (41 विश्वविद्यालय)					
समूह क . . .	3,525	118	3.35	11	0.31
समूह ख . . .	4,833	221	4.57	48	0.99
समूह ग . . .	19,811	1686	8.51	219	1.11
समूह घ . . .	17,607	2628	14.93	616	3.50

अध्यापन पदों में सभी स्तरों पर अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व नगण्य है। अतः यह स्पष्ट है कि प्राध्यापकों के पदों के संबंध में आरक्षण आदेशों का दृढ़ रूप से पालन किए बिना विश्वविद्यालयों/कालेजों में अध्यापन कार्य के लिए पर्याप्त संख्या में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के व्यक्तियों को लेना अत्यधिक कठिन है। प्रशासनिक पदों में भी अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व बहुत असंतोषजनक है। संबंधित प्राधिकारियों द्वारा ठोस कदम उठाए जाने की आवश्यकता है ताकि सभी पद-समूहों में कम से कम अनुसचिवीय वर्ग के अंतर्गत जिसमें आरक्षण बहुत पहले ही लागू कर दिया गया था, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जा सके।

मूल्यांकन/अनुकूलन कार्यक्रम

39. 1970 के दशक के मध्य में इस कार्यालय के अध्ययन दल द्वारा की गई विभिन्न मंत्रालयों/विभागों/सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों तथा बैंक की जांच पड़ताल के समय यह पाया गया था कि सेवाओं में आरक्षण तथा सहबद्ध छूटों/शिकायतों इत्यादि के बारे में सरकारी आदेशों के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार अधिकांश अधिकारी इन आदेशों तथा उनकी व्याख्या से पर्याप्त रूप से परिचित नहीं थे। ऐसे अधिकारियों ने कई अवसरों पर जांच दल द्वारा अनुकूलन/मूल्यांकन कार्यक्रम आयोजित करने की आवश्यकता पर जोर दिया ताकि उन्हें आरक्षण विषय पर उचित प्रशिक्षण दिया जा सके तथा आरक्षण नीति और समय-समय पर इस संबंध में जारी किए गए अनुदेशों के बारे में समझाया जा सके। तदनुसार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त ने अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षण के मामलों को देखने वाले संपर्क अधिकारियों तथा इस विषय से संबंधित अन्य अधिकारियों तथा स्टाफ के लिए ऐसे प्रशिक्षण कार्यक्रम आरंभ करने के लिए भारत सरकार से सिफारिश की थी। सरकार ने यह सिफारिश स्वीकार कर ली थी और कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग के अधीन कार्य कर रहे सचिवालय प्रशिक्षण तथा प्रबन्ध संस्थान ने 1978 से आरक्षण पर अनुकूलन कार्यक्रम आयोजित करना आरंभ किया था।

40. जहां तक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों का संबंध है, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त ने ऐसा ही सुझाव लोक उद्यम कार्यालय को दिया था कि वे आरक्षण आदेशों के कार्यान्वयन से संबंधित सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के अधिकारियों के लिए एक प्रशिक्षण कार्यक्रम अपने आप आरंभ करें। तदनुसार लोक उद्यम कार्यालय ने एक बैठक

बुलाई और अन्ततः सार्वजनिक क्षेत्र के बड़े आकार वाले ऐसे 12 उपक्रमों को चुना जिनमें क्षेत्रीय आधार पर उन्हीं क्षेत्रों में स्थित सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के कर्मचारियों तथा अधिकारियों के लाभ के लिए ऐसे कार्यक्रम आयोजित करने के लिए संरचना आधार की सुविधाएं उपलब्ध थीं। ऐसे कार्यक्रमों की उपयोगिता निश्चित हो जाने के बाद सार्वजनिक क्षेत्र के काफी संख्या में उपक्रमों ने आरक्षण के मामलों से संबंधित अपने स्टाफ/अधिकारियों के ज्ञान को ताजा तथा अद्यतन बनाने के लिए ऐसे कार्यक्रम स्वयं ही आयोजित करने में विशेष रुचि ली। अब तो यह लगभग एक नियमित कार्य बन गया है, विशेष रूप से बड़ी आकार की सरकारी कम्पनियों में कि कम से कम वर्ष में एक बार ऐसे कार्यक्रम आयोजित हों। नीचे की सारणी 1981-86 के दौरान हुए ऐसे मूल्यांकन कार्यक्रमों की संख्या दर्शाती है :-

सारणी 10

वर्ष	सचिवालय प्रशिक्षण तथा प्रबंध संस्थान द्वारा		सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा क्षेत्रीय आधार पर कार्यक्रम	सार्वजनिक क्षेत्र के अन्य संगठनों द्वारा	कुल
	संपर्क अधिकारियों के लिए	सहायकों/अनुभाग अधिकारियों के लिए			
1981 . . .	3	4	--	4	11
1982 . . .	3	4	--	7	14
1983 . . .	3	4	2	10	19
1984 . . .	3	3	3	9	18
1985 . . .	3	3	6	25	37
1986 . . .	1	3	3	20	27

उपर्युक्त प्रशिक्षण कार्यक्रमों में से अधिकांश में इस कार्यालय के आरक्षण विषय में अनुभव प्राप्त अधिकारियों को अतिथि के रूप में बुलाया गया था। यह देखा गया है कि इन कार्यक्रमों का प्रभाव विशेष रूप से आरक्षण आदेशों के अक्षरशः उनकी भावना के अनुरूप कार्यान्वयन के लिए सही मार्ग दर्शन देने के संबंध में महत्वपूर्ण रहा है, विशेष रूप से रोस्टर रखने, आरक्षित रिक्तियों की सीधी भर्ती तथा प्रोन्नति द्वारा भरने अग्रेणन, अनारक्षण तथा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रमाण-पत्रों का सत्यापन करने के संबंध में।

लोक सेवा आयोगों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्य

41. 1985-86/1986-87 के दौरान विभिन्न लोक सेवा आयोगों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रतिनिधित्व के संबंध में संघ लोक सेवा आयोग तथा विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा भेजी गई मासिक सूचना नीचे दी गई है-

सारणी 11

	लोक सेवा आयोग का नाम	अध्यक्ष सहित सदस्यों की कुल संख्या	क्या अध्यक्ष अ० जा० या अ०ज० जा० के हैं	दूसरे सदस्य	
				अ० जा०	अ० ज० जा०
1	2	3	4	5	6
(क)	संघ लोक सेवा आयोग	11	नहीं	1	1
(ख)	कर्मचारी चयन आयोग	3	नहीं	--	—
(ग)	राज्य सेवा आयोग :				
	1. आन्ध्र प्रदेश	8	नहीं	2	--
	2. असम	7	नहीं	—	2
	3. बिहार	11	नहीं	1	1
	4. गुजरात+	3	हां (1अ०ज०जा०)	--	--

1	2	3	4	5
5. हरियाणा	6	नहीं	1	--
6. हिमाचल प्रदेश . . .	4	नहीं	1	--
7. जम्मू काश्मीर*	5	नहीं	--	--
8. कर्नाटक	7	नहीं	1	--
9. केरल*	15	नहीं	1	--
10. मध्य प्रदेश*	7	नहीं	1	--
11. महाराष्ट्र	6	नहीं	--	--
12. मणिपुर	2	नहीं	--	1
13. मेघालय	4	हां (अ० जा० जा०)	--	3
14. नगालैण्ड*	3	नहीं	--	2
15. उड़ीसा	5	नहीं	--	1
16. पंजाब	6	नहीं	--	--
17. राजस्थान	5	नहीं	1	--
18. सिक्किम	1	हां (अ० ज० जा०)	--	--
19. तमिलनाडु	8	नहीं	1	--
20. त्रिपुरा	2	नहीं	--	1
21. उत्तर प्रदेश	9	नहीं	1	--
22. पश्चिम बंगाल . . .	7	नहीं	1	--

सेवा सुरक्षणों के कार्यचालन संबंधी अध्ययन

42. संविधान के अनुच्छेद 338 के खण्ड (2) के अधीन अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए विहित सरक्षणों से संबंधित सभी मामलों की जांच करें। सेवा संबंधी मामलों से सुसंगत सुरक्षण संविधान के अनुच्छेद 16(4) तथा 335 में दिए गए हैं। आयुक्त को प्रदत्त अधिकारों के अनुसरण में 1986 के दौरान 10 अध्ययन किए गए थे। इससे पहले 1981 से 1985 की अवधि के दौरान 46 अध्ययन किए गए थे। अध्ययन दलों द्वारा पाई गई कमियों के बारे में कुछ सामान्य बातें नीचे दी गई हैं —

(1) बहुत सारे मामलों में सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा जारी किए गए विज्ञापनों में आरक्षित रिक्तियों की संख्या तथा अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए अनुमेय विभिन्न छूट/रियायतों के बारे में पूरे विवरण नहीं दिए जाते हैं। कुछ मामलों में आरक्षित रिक्तियों के लिए सामान्य उम्मीदवारों से भी आवेदन पत्र आमंत्रित किए जाते हैं जबकि यह प्रावधान केवल तभी सम्मिलित किया जाना है जब उसी भर्ती वर्ष में दूसरी बार आरक्षित रिक्तियों को विज्ञापित किया जाए। इससे अपेक्षित अर्हताएं पूरी करने वाले अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कई आवेदक प्रथम संवीक्षा में ही बाहर हो जाते हैं।

+प्रारम्भ में गुजरात में अध्यक्ष सहित कुल 5 सदस्य थे। अनुसूचित जाति या जनजाति के नहीं थे। परन्तु अनुसूचित जाति तथा जनजाति का एक एक सदस्य था। अध्यक्ष का पद खाली होने पर यह पद अनुसूचित जाति के सदस्य द्वारा अस्थायी रूप से अतिरिक्त कार्यभार के रूप में संभाला हुआ था तथा तत्पश्चात् यह पद अनुसूचित जनजाति के सदस्य द्वारा 22-8-86 से नियमित आधार पर संभाला गया था। इस प्रकार 1986-87 के अधिकांश समय के लिए अध्यक्ष अनुसूचित जनजाति का व्यक्ति था तथा आयोग में अध्यक्ष सहित केवल 3 सदस्य शामिल थे।

*1985-89 के दौरान नियुक्ति

(2) बहुत सारे मामलों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के अधिकारियों को किसी न किसी कारण से चयन समिति/विभागीय प्रोन्नति समिति में शामिल नहीं किया जाता है। जहां ऐसे किसी अधिकारी को शामि किया जाता है, उसे केवल अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों को साक्षात्कार करते समय ही बैठक में भाग लेने की अनुमति दी जाती है। अतः वह सामान्य उम्मीदवारों का चयन करने में अपनाए गए मानदण्डों से अवगत नहीं हो पाता है जिसकी उसे जानकारी होनी चाहिए ताकि वह अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए आवश्यक छूटों के बारे में सुझाव दे सके।

(3) सीधी भर्ती द्वारा भरे गए पदों के मामले में केवल इक्के दुक्के पदों तथा छोटे संवर्गों के मामले में ही समूहीकरण की अनुमति है। प्रोन्नति द्वारा भरे गए पदों में समूहीकरण की अनुमति नहीं है। यह देखा गया है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों तथा बैंकों में बहुत से मामलों में काफी संख्या में पद वर्गों के लिए केवल एक सामान्य रोस्टर रखा जाता है जबकि ऐसे संवर्गों के बारे में जिनकी संख्या 20 अथवा इससे अधिक हो अलग रोस्टर रखे जाने के लिए निश्चित आदेश हैं। कई बार आदेशों की भावना के विरुद्ध यहां तक कि प्रोन्नति वाले पदों को भी एक साथ समूहीकृत कर दिया जाता है।

(4) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षित रिक्तियों की संख्या निर्धारित करने के लिए गलत आदर्श रोस्टर अपनाए जाते हैं। ऐसा 40—सद वाले दो भिन्न रोस्टर रखा जाना अपेक्षित होने से उत्पन्न भ्रम के कारण होता है, जो ये हैं—(1) अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए 7-1/ प्रतिशत की दर से आरक्षण करते हुए अखि भारतीय स्तर पर खुली प्रतियोगिता द्वारा भत के लिए तथा (2) अनुसूचित जातियों के लिए 16-2/3 प्रतिशत तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए 7-1/2 प्रतिशत की दर से आरक्षण करते हुए अखिल भारतीय स्तर पर खुली प्रतियोगिता से भिन्न रूप से भर्ती के लिए।

(5) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उम्मीदवारों को उनके काल-क्रम में पुराने अग्रेणीत आरक्षणों के समक्ष समायोजित नहीं किया जाता है। चालू आरक्षण का उपयोग किया जाता है जबकि पुराना आरक्षण जो 3 वर्ष पुराना हो जाता है, समाप्त होने दिया जाता है।

(6) ऐसी रिक्तियों के संबंध में जो भर्ती के आरंभिक वर्ष में तथा उसके बाद 3 भर्ती वर्षों में नहीं भरी जा सकी हैं, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के बीच आरक्षण को अदला-बदली का सिद्धांत लागू नहीं किया जाता है। जिसका परिणाम यह होता है कि एक वर्ग में रिक्तियां समाप्त हो जाती हैं, जबकि दूसरे आरक्षित वर्ग में उम्मीदवार उपलब्ध होते हैं।

(7) सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में आरक्षित रिक्तियों के अनारक्षण के लिए अधिकार समूह क तथा ख पदों के लिए निदेशक मंडल को, और समूह ग तथा घ पदों के मामले में मुख्य प्रबन्ध निदेशक को दिया गया है। तथापि, आरक्षित रिक्तियों के समक्ष सामान्य उम्मीदवार की नियुक्ति करने से पूर्व इस कार्य-विधि का अधिकाधिक तौर पर पालन नहीं किया जाता है और बिना भरे आरक्षित पदों को मात्र अग्रेणीत कर दिया जाता है। अनारक्षण की इस कार्य-विधि का सही रूप से पालन न करने की यह प्रवत्ति, आरक्षित रिक्तियों पर भर्ती की सभी विहित कार्य-विधियों का अनुसरण करने के मामले में सक्षम प्राधिकारी को उत्तर देने की जिम्मेदारी से बचने के समान है। कुछ मामलों में अनारक्षण के लिए प्रस्ताव करते समय संपर्क अधिकारी से भी परामर्श नहीं किया जाता है, जबकि ऐसे प्रस्तावों के लिए उसकी पूर्व-सहमति आवश्यक होती है।

(8) सार्वजनिक क्षेत्र के बहुत से उपक्रमों में रोस्टर ठीक तरह नहीं रखे जाते हैं। आरक्षित बिन्दुओं को सही रूप से चिह्नित नहीं किया जाता है। रोस्टर में आरक्षित बिन्दुओं को भरने में रिक्त स्थान छोड़ दिए जाते हैं। रोस्टर के टिप्पणी स्तंभ में, पुराने आरक्षण के समक्ष समायोजन, आरक्षण की अदला-बदली तथा अनारक्षण के संबंध में अभियुक्तियां जहां आवश्यक हों, नहीं दी जाती हैं। रोस्टर में प्रविष्ठियां नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित नहीं की जाती है।

(9) विभागीय प्रोन्नति समिति के लिए कार्य-सूची में रिक्तियों की संख्या, इत्यादि का उल्लेख करते हुए आरक्षण पहलुओं को उपयुक्त रूप से स्पष्ट नहीं किया जाता है।

(10) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के अधिकारियों को प्रशिक्षण के अधिकाधिक अवसर प्रदान किए जाने की आवश्यकता है, ताकि वे अपने ज्ञान तथा उच्चतर पदों पर अपने चयन के लिए अवसरों को बढ़ा सकें, परन्तु देश तथा विदेश

में प्रशिक्षण के लिए अधिकांश मामलों में उनकी उपेक्षा की जाती है।

(11) बड़ी संख्या में उपक्रमों की वार्षिक रिपोर्टों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के प्रतिनिधित्व के संबंध में सांख्यिकी सूचना समाविष्ट नहीं होती है, न ही उनमें आरक्षण आदेशों के अनुपालन के संबंध में ऐसी कम्पनियों की प्रगति दर्शाते हुए अनुसूचित जाति तथा जनजाति प्रकोष्ठ के क्रियाकलापों के बारे में कोई उल्लेख किया जाता है।

(12) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के लिए रिहायशी आवास के आवंटन में आरक्षण के लिए अनुदेश हैं। परन्तु बहुत सारे संगठनों में इन अनुदेशों का पालन नहीं किया जाता और क्वाटरों का आबंटन अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों को आरक्षण का कोई लाभ दिए बिना ही वरिष्ठता के आधार पर किया जाता है।

व्यक्तिगत शिकायतें

43. रिपोर्ट वर्ष के दौरान इस कार्यालय में केन्द्र सरकार/केन्द्रीय सार्वजनिक उपक्रमों/राज्य सरकारों/सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के कर्मचारियों के सेवा संबंधी मामलों में 2,717 व्यक्तिगत शिकायतें प्राप्त हुई थीं। ये मामले नियुक्तियों, प्रोन्नतियों, स्थायीकरणों, स्थानान्तरणों इत्यादि की बाबत विभिन्न प्रकार की शिकायतों से संबंधित थे। इन मामलों में से 175 मामले रिपोर्टाधीन वर्ष की समाप्ति पर लम्बित थे तथा 341 मामले फाइल कर दिए गए थे। शेष बचे 2,201 मामलों में से 93 मामलों में वांछित राहत दिलाने में सफलता प्राप्त की गई थी।

अनुलग्नक 1

दिनांक 1-1-1987 को यथास्थिति केन्द्र सरकार, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों तथा सार्वजनिक सेक्टर/राष्ट्रीयकृत बैंकों के अधीन सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व दर्शाने वाला एक तुलनात्मक विवरण

भारत सरकार

समूह	कुल	अ०जा०	%	अ०ज०जा०	%
क . . .	57,654	4,746	8.23	1,180	2.05
ख . . .	75,419	7,847	10.40	1,447	1.92
ग . .	21,30,453	3,07,980	14.46	90,147	4.23
घ (सफाई कमचारियों को छोड़कर)	11,67,759	2,34,614	20.09	68,206	5.84
कुल . .	34,31,285	5,55,187	16.18	1,60,980	4.69

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम (211 सा० क्षेत्र० उ०)

समूह	कुल	अ०जा०	%	अ०ज०जा०	%
क . . .	1,61,825	7,862	4.86	1,904	1.17
ख . . .	1,62,339	10,010	6.17	2,522	1.55
ग . . .	13,94,015	2,58,500	18.54	1,23,017	8.82
घ (सफाई कर्मचारियों को छोड़कर)	3,99,000	1,23,010	30.82	68,111	17.07
कुल . . .	21,17,179	3,99,382	18.86	1,95,554	9.24
सफाई कमचारी . .	38,900	30,150	77.51	1,311	3.37

सार्वजनिक क्षेत्र तथा राष्ट्रीयकृत बैंक

समूह	कुल	अ०जा०	%	अ०ज०जा०	%
अधिकारी . . .	2,15,805	15,745	7.29	3,986	1.84
लिपिक . . .	4,49,144	61,891	13.77	16,957	3.77
अधीनस्थ कर्मचारी . .	1,67,136	37,272	22.30	7,721	4.61
कुल . .	8,32,085	1,14,908	13.81	28,664	3.44
सफाई कर्मचारी . .	17,794	8,740	49.11	594	3.33

अनुलग्नक 2

दिनांक 1-1-1977 तथा 1-1-1987 को यथास्थिति केन्द्र सरकार के अधीन सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व दर्शाने वाला तुलनात्मक विवरण

समूह	अ०जा० तथा अ०ज०जा०सहित कुल संख्या	अनुसूचित जातियां		अनुसूचित जनजातियां	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
दिनांक 1-1-1977 को यथास्थिति					
क . . .	39,908	1,662	4.16	309	0.77
ख . . .	56,322	3,421	6.07	434	0.77
ग . . .	16,77,256	98,662	11.84	46,603	2.78
घ (सफाई कर्मचारियों को छोड़कर)	12,46,464	2,37,718	19.07	54,206	4.35
दिनांक 1-1-1987 को यथास्थिति					
क . . .	57,654	4,746	8.23	1,180	2.05
ख . . .	75,419	7,847	10.40	1,447	1.92
ग . . .	21,30,453	3,07,980	14.46	90,147	4.23
घ (सफाई कर्मचारियों को छोड़कर)	11,67,759	2,34,614	20.09	68.206	5.84

अनुलग्नक 3

अखिल भारतीय सेवाओं के परीक्षा-पूर्व प्रशिक्षण केन्द्रों की उपलब्धि को दर्शाने वाला विवरण

क्र०सं०	परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र का नाम	वर्ष	प्रशिक्षित किए गए उम्मीदवारों की सं०		परीक्षा में बैठने वाले उम्मीदवारों की संख्या		अन्तिम रूप से चुने गए उम्मीदवारों की संख्या		अभ्युक्ति
			अ०जा०	अ०ज०जा०	अ०जा०	अ०ज०जा०	अ०जा०	अ०ज०जा०	
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
	(क) भारतीय प्रशासनिक सेवाएं तथा सबंद्ध सेवाएं								
1.	अ०जा० अ०ज०जा० के लिए .	1983–84	2	2	12	2	—	—	—
	अखिल भारतीय सेवाओं के	1984–85	10	—	10	—	—	—	—
	परीक्षा–पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय .	1985–86	9	4	9	4	—	—	—
2.	अ०जा०/अ०ज०जा० अखिल भारतीय सेवा परीक्षापूर्व प्रशिक्षण केन्द्र,	1984–85	39	10	39	10	—	—	—
	इलाहाबाद . . .	1985–86	33	6	33	6	3	1	
3.	अखिल भारतीय परीक्षा-पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र गुरुनानक देव, विश्वविद्यालय,	1984–85	19	1	12	—	2	—	[redacted]—
	अमृतसर . .	1985–86	20	1	19	1	उपलब्ध नही	उपलब्ध नहीं	
4.	भारतीय प्रशासनिक सेवा परीक्षा में बैठने वाले अ०जा०/अ०ज०जा०	1984–85	34	1	34	1	—	—	—
	उम्मीदावारों के लिए कोचिंग, केन्द्र औरंगाबाद .	1985–86	23	1	23	1	—	—	—
5.	अ०जा०/अ०ज०जा० के लिए परीक्षा-पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र, मोती लाल नेहरू	1983–84	10	2	10	2	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	लिखित परीक्षा में अर्हित
	इंजीनियरिंग महाविद्यालय, इलाहाबाद	1984–85	25	1	25	1	उपलब्ध	उपलब्ध	
		1985–86	29	3	29	3	नहीं	नहीं	
6.	आन्ध्र प्रदेश अध्ययन मंडल, हैदराबाद	1983–84	13	3	13	3	2	4	भूतपूर्व प्रशिक्षार्थी भी चुने गए
		1984–85	23	7	23	7	1	– 6	वही
		1985–86	27	7	23	6	2	2 3	वही
7.	अ०जा०/अ०ज०जा० के लिए प्रशा–	1983–84	9	7	9	7	—	2	
	सनिक सेवा के परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण	1984–85	10	13	10	13	—	1	
	केन्द्र, जयपुर	1985–86	13	8	13	8	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	
8.	अ०जा०/अ० ज०जा० के उम्मीदवारों	1983–84	16	1	16	1	—	—	
	के लिए भारतीय प्रशासनिक सेवा	1984–85	8	2	8	2	—	—	
	कोचिंग केन्द्र शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर	1985–86	19	1	16	1	—		

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
9.	परीक्षा-पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र, मद्रास	1983-84	48	1	48	1	—	1	भूतपूर्व प्रशिक्षणार्थी चुना गया।
		984-85	49	—	49	—	—	—	
		1985-86	53	1	49	1	—	2	भूतपूर्व प्रशिक्षणार्थी चुने गए
10.	भारतीय प्रशासनिक सेवा परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण आंचलिक केन्द्र, पटियाला	1984-85	28	7	25	7	2		1
11	हिमाचल प्रदेश लोक प्रशासन संस्थान , शिमला	1983-84	4	10	4	10	—	—	4 लिखित परीक्षा में अर्हित
		1984-85	—	10	—	10	—	—	3 भूतपूर्व प्रशिक्षणार्थ चुने गए
12.	अ०जा०/अ०ज०जा० के लिए अखिल भारतीय सेवा परीक्षण -पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र, उत्तर-पूर्व पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग	1983-84	1	10	1	10	1	2	2 भूतपूर्व प्रशिक्षणार्थी भी चुने गए
		1984-85	1	11	1	11	—	1	
		1985-86	—	14	—	14	—	2	2 वही
	योग . . .	1983-84	113	36	113	36	2	4	
		1984-85	246	63	236	62	5	3	
		1985-86	226	56	214	45	5	5	
	कुल योग		585	155	563	143	12	12	

(ख) बैंकों में परिवीक्षा अधिकारी

1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	प्रौढ़ अविच्छिन्न शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय	1984-85	63	4	63	4	7	—
		1985-86	14	3	14	3	1	—
2.	अम्बाला	1985-86	41	—	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं
3.	बंगलूर	1984-85	50	5	50	5	—	—
		1985-86	92	5	92	5	—	—
4.	धारवाड़	1984-85	12	—	10	—	—	—
		1985-86	6	—	5	—	—	—
5.	मैसूर	1984-85	18	—	18	—	—	—
		1985-86	50	—	50	—	—	—
6.	पांण्डिचेरी	1985-86	6	—	6	—	—	—
7.	शिमला	1985-86	—	4	—	4	—	1
8.	उज्जैन	1985-86	51	9	51	9	—	—
	योग	1984-85	143	9	141	9	7	—
		1985-86	260	21	218	21	1	1
	कुल योग		403	30	359	30	8	1

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
	(ग) बैंकों में लिपिक सेवाएं								
1.	दिल्ली . . .	1985–86	39	3	39	—	—	—	
2.	पटियाला . . .	1984–85	16	—	16	—	2	—	
	(पंजाब)	1985–86	22	—	22	—	1	—	
3.	मैसूर . . .	1984–85	65	6	65	6	4	—	
	(कर्नाटक)	1985–86	94	6	94	6	4	—	
4.	गुलबर्गा . . .	1984–85	6	—	6	—	—	—	
	(कर्नाटक)	1985–86	50	—	50	—	3	—	
5.	बंगलूर . . .	1984–85	86	4	86	4	1	—	
	(कर्नाटक)	1985–86	97	3	97	3	—	—	
6.	पांडिचेरी . . .	1984–85	48	—	48	—	—	—	
7.	अम्बाला . . . (हरियाणा)	1984–85	58	—	58	—	18	—	
8.	अम्बाला/ . . . रोहतक (हरियाणा)	1985–86	120	—	120	—	उपलब्ध नहीं	उपलबध नहीं	
9.	उज्जैन . . .	1984–85	78	12	78	12	9	3	
	(मध्य प्रदेश)	1985–86	44	16	44	16	4	—	
	योग . .	1984–85	357	22	357	22	34	3	
		1985–86	466	28	466	25	12	—	
	कुल योग . .		823	50	823	47	46	3	

अनुलग्नक 4

विवरणपत्र नं० 1

रोजगार कार्यालय द्वारा वर्ष 1983, 1984 तथा 1985 के दौरान अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आवेदकों के बारे में किए गए पंजीकरणों तथा की गई नियुक्तियों की संख्या दर्शाने वाला विवरण पत्र

वर्ष 1983, 1984 तथा 1985 के दौरान की गई नियुक्तियां

वर्ष	पंजीकरण	केन्द्र सरकार		संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन		राज्य सरकार		अन्य सभी स्थापनाए		कुल
		संख्या	कुल से प्रतिशत	संख्या	कुल से प्रतिशत	संख्या	कुल से प्रतिशत	संख्या	कुल से प्रतिशत	
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
					अनुसूचित जातियां					
1983	780912	11546	18.5	856	1.4	28620	45.9	21276	34.2	62298
1984	745860	11054	17.7	1462	2.3	29652	47.6	20192	32.4	62360
1985	755089	7787	13.5	1820	3.1	26564	45.9	21743	37.5	57914
					अनुसूचित जनजातियां					
1983	202998	6342	28.2	621	2.8	10330	46.0	5154	23.0	22447
1984	187663	4245	20.1	281	1.3	11143	52.7	5463	25.9	21132
1985	191787	4969	23.7	390	1.9	9781	46.7	5814	27.7	20954

अनुलग्नक 4

विवरणपत्र सं० 2

वर्ष 1983, 1984, तथा 1985 के दौरान रोजगार कार्यालयों के पंजीकरण रजिस्टरों में अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के शिक्षित रोजगार ढूंढने वालों (मैट्रिक पास तथा उससे ऊपर) की संख्या

क्र०सं०	शैक्षणिक स्तर	पंजीकरण रजिस्टरों में संख्या					
		अनुसूचित जातियां			अनुसूचित जनजातियां		
		1983	1984	1985	1983	1984	1985
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	मैट्रिक से कम (निरक्षरों सहित) .	1485552	1551395	1801436	458095	428045	494078
2.	मैट्रिक पास . . .	596396	672834	781662	135919	153330	184488
3.	उच्चतर माध्यमिक पास व्यक्ति (इन में इण्टर मीडिएट/अंडर ग्रेजुएट शामिल हैं) .	252365	262751	322299	47340	53562	67279
4.	स्नातक (स्नातकोत्तर सहित) (कुल) .	120857	130977	152112	22159	24669	28926
	(i) कला . . .	75461	81055	95398	15121	16438	9687
	(ii) विज्ञान . . .	16209	19879	18778	2226	2726	2815
	(iii) वाणिज्य . . .	14769	15346	18857	2333	2980	3432
	(iv) इंजीनियरिंग . .	1166	1474	1989	147	169	330
	(v) आयुर्विज्ञान . .	1337	1411	1474	202	215	246
	(vi) पशुचिकित्सा . .	—	—	68	—	—	8
	(vii) कृषि . . .	1188	1275	1438	100	111	138
	(viii) विधि . . .	624	470	431	50	50	62
	(ix) शिक्षा . . .	9125	9014	11797	1661	1661	1816
	(x) अन्य . . .	978	1053	1882	319	319	392
	कुल . . .	2455170	2617957	3057489	663513	659606	774771

अनुलग्नक 4

विवरणपत्र सं० 3

वर्ष 1983, 1984, तथा 1985 के पंजीकरण रजिस्टरों में विस्तृत व्यावसायिक समूहों में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आवेदकों की संख्या तथा उनकी नियुक्तियों की संख्या

क्र०सं०	व्यावसायिक समूह	वर्ष के अन्त में पंजीकरण रजिस्टर में दर्ज व्यक्तियों की संख्या						वर्ष के अन्त में नियुक्तियों की संख्या					
		अ०जा०			अ०ज०जा०			अ०ज०जा०			अ०ज०जा०		
		1983	1984	1985	1983	1984	1985	1983	1984	1985	1983	1984	1985
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
1.	व्यावसायिक, तकनीकी तथा सम्बद्ध कर्मकार . .	65568	68243	76784	11831	13042	14833	6336	6214	6368	1512	1679	1886
2.	प्रशासनिक, कार्यपालक तथा प्रबन्ध सम्बन्धी कर्मकार .	357	373	364	108	87	89	27	11	45	8	6	14
3.	लिपिक तथा सम्बद्ध कर्मकार .	79015	79878	91283	12598	14232	13945	6653	4948	5735	1411	1192	1410
4.	बिक्री कर्मकार . .	140	245	1177	11	20	9	33	5	15	4	8	5
5.	सेवा कर्मकार . .	223649	221346	231199	10051	6481	9615	11098	8336	8085	704	704	802
6.	कृषक, मछुआरे, शिकारी, लकड़हारे तथा सम्बद्ध कर्मकार . .	8000	7196	12911	952	1002	1779	919	616	544	203	156	254
7.	उत्पादन तथा सम्बद्ध कर्मकार, परिवहन उपकरण कार्य-चालन तथा मजदूर	168711	160910	213056	48089	39736	45162	9755	11090	10328	4465	2750	3531
		1909730	2079766	2430715	579813	585006	689339	27477	31140	26794	14140	14637	13052
8.	काम ढूंढने वाले जो व्यवसाय के आधार पर वर्गीकृत नहीं है .	1101605	1169196	1216573	407892	406826	409544	14015	16311	15878	8919	9572	9866
	(क) मैट्रिक से कम शिक्षित, निरक्षर तथा अन्य लोगों सहित .	715059	808020	1062792	154414	161290	250942	11647	12827	8811	4684	4467	2681
	(ख) मैट्रिक तथा उससे ऊपर लेकिन स्नातकों से कम . .	93066	102550	151350	17567	16890	28853	1815	2002	2105	537	598	505
	(ग) स्नातक तथा उससे ऊपर .	2455170	2617957	3057489	663513	659606	774771	62298	62360	57914	22447	21132	20954

अनारक्षण प्रस्तावों के कुछ विशिष्ट मामले जिन पर अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त के कार्यालय में कार्यवाही की गई।

(1) रक्षा मंत्रालय ने अनारक्षण का एक प्रस्ताव किया था जिसमें निरीक्षण के नियंत्रक (प्रशासन) के कार्यालय, पूना में चयन के आधार पर भरे जाने वाले फोरमैन (समूह-ग) के पदों में अनुसूचित जातियों के लिये आरक्षित 6 रिक्त स्थानों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित 3 रिक्त स्थानों के अनारक्षण की मांग की गई थी। इस प्रस्ताव की संवीक्षा करने पर यह देखा गया था कि अनुसूचित जाति का वरिष्ठतम उम्मीदवार 28-2-1986 को प्रौन्नति के लिए पात्र हो रहा था और विभागीय प्रौन्नति समिति उस तारीख से केवल आठ दिन पहले बुलाई जा रही थी। नियमों में उम्मीदवार की पात्रता अथवा विभागीय प्रौन्नति समति की बैठक करने के बारे में कोई निर्णायक तारीख विहित नहीं की गई थी। इन परिस्थितियों में संबंधित प्राधिकारियों को यह करना चाहिए था कि वे या तो विभागीय प्रौन्नति समिति को स्थागित करते अथवा अनुसूचित जाति के उस उम्मीदवार पर भी विचार करते, जिसकी पात्रता की शर्त पूरी होने में केवल 8 दिन की कमी थी। इस प्रकार की कार्यवाही विशेष रूप से इसलिए सुझाई गई थी क्योंकि नौ आरक्षित रिक्त स्थान उपलब्ध थे और अनुसूचित जाति अथवा जनजाति का एक भी उम्मीदवार उस विभागीय प्रौन्नति समिति में प्रौन्नत नहीं किया जा रहा था और दो रिक्त स्थान (अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों प्रत्येक के लिए एक-एक) समाप्त हो जाने थे क्योंकि वर्ष 1986 में और रिक्त स्थान नहीं हुए थे। परन्तु विभागीय प्रौन्नति समिति की बैठक 20-2-86 को की गई थी और अनुसूचित जाति के उक्त निर्दिष्ट उम्मीदवार पर विचार नहीं किया गया था। यह मामला रक्षा उत्पादन विभाग के साथ इस अनुरोध के साथ उठाया गया था कि वे इस मामले पर पुनः विचार करें। तथापि, रक्षा मंत्रालय (निरीक्षण महानिदेशालय) ने इस मामले पर पुनः विचार करना नामंजूर कर दिया था और यह दलील दी थी कि पात्रता के ऐसे मामले प्रत्येक 15 दिन अथवा एक महीने के बाद हो सकते हैं। तथापि, उनके द्वारा इससे पूर्व यह पुष्टि की गई थी कि अनुसूचित जाति के केवल दो ही उम्मीदवार थे जो उस वर्ष में अर्थात् 28-2-1986 तथा 21-10-1986 को प्रौन्नति के लिए पात्र होने वाले थे।

(2) मंत्रिमण्डल सचिवालय ने अनारक्षण का एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया था जिसमें उन्होंने निदेशक, ए० आर० सी० के कार्यालय में अर्हक टैस्ट पास करके चयन के आधार पर प्रौन्नति द्वारा भरी जाने वाली क्षेत्र अधिकारी (तकनीकी) समूह-ग की अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित 3 रिक्तियों और जनजातियों के लिए आरक्षित दो रिक्तियों को अनारक्षित करने को कहा था। इस चयन के लिए उन्होंने अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के केवल उन्हीं कर्मचारियों पर विचार किया था जो अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति उम्मीदवारों के पक्ष में रिक्तियों की संख्या से 5 गुणे तक बढ़ाए गए विचार-क्षेत्र के अन्तर्गत आते थे, जिसमें अनुसूचित जाति के केवल दो उम्मीदवार शामिल किए जा सकते थे जबकि आरक्षित श्रेणियों के कुछ और उम्मीदवार प्रौन्नति के लिए पात्र थे। अतः मंत्रिमण्डल सचिवालय से यह अनुरोध किया गया था कि वे गृह मंत्रालय के का० ज्ञा० सं० 1/12/67-स्था० (ग), दिनांक 11-7-68 में अन्तर्विष्ट भारत सरकार के अनुदेशों को दृष्टि से इस मामले का पुनरावलोकन करें और अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के ऐसे उम्मीदवारों पर विचार करें जो पात्र थे और जो समूह ग और घ पदों पर चयन द्वारा प्रौन्नति के मामले में लागू पृथक विचार-क्षेत्र में भी आते थे। मंत्रिमंडल सचिवालय ने यह पुष्टि की थी कि इस मामले पर पुनः जांच करने पर ए० आर० सी० निदेशालय ने यह देखा था कि अनुसूचित जातियों के कुछ उप-क्षेत्र अधिकारी (तकनीकी) पृथक विचार-क्षेत्र में उपलब्ध थे और उसका इरादा अगली विभागीय प्रौन्नति समिति में उन पर विचार करने का था। इससे स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता था कि अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के ऐसे पात्र उम्मीदवारों पर विचार करने के लिए जो पृथक विचार-क्षेत्र में

आते थे सरकारी अनुदेशों को लागू नहीं किया गया था जिसके परिणामस्वरूप अनुसूचित जाति के अन्य पात्र उम्मीदवारों को आरक्षित रिक्तियां उपलब्ध होते हुए भी प्रोन्नति से इंकार किया गया था और उक्त आरक्षित रिक्तियों का अनारक्षण किए जाने का प्रस्ताव किया गया था। अतः इस मामले को पुनः मंत्रिमंडल सचिवालय के साथ उठाया गया था और उन्हें यह सुझाव दिया गया था कि इसका पुनरावलोकन करने के लिए विभागीय प्रोन्नति समिति बुलाई जानी चाहिए और पृथक विचार-क्षेत्र के अन्तर्गत उपलब्ध अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के सभी पात्र उम्मीदवारों पर एक नई विभागीय प्रोन्नति समिति बुलाने के बजाय पूर्व वाली विभागीय प्रोन्नति समिति द्वारा विचार किए गए सामान्य श्रेणी के उम्मीदवारों के साथ ही भूतलक्षी प्रभाव से विचार किया जाना चाहिए। इस सुझाव की दृष्टि से अनुसूचित जाति श्रेणी के उप क्षेत्र अधिकारी (तकनीकी) के पात्र व्यक्तियों की क्षेत्र अधिकारी (तकनीकी) के पद पर पदोन्नति के लिए उनके मामलों पर विचार करने के लिए मंत्रिमण्डल सचिवालय द्वारा 16-10-86 को एक पूरक विभागीय प्रोन्नति समिति की बैठक बुलाई गई थी और उस विभागीय प्रोन्नति समिति की सिफारिश पर अनुसूचित जातियों के तीन उप क्षेत्र अधिकारी (तकनीकी) की प्रोन्नति की गई थी और उन्हें उनकी उपयुक्त स्थान पर वैचारिक वरिष्ठता प्रदान की गई थी अर्थात् उन उम्मीदवारों के साथ जो पूर्व वाली विभागीय प्रोन्नति समिति की सिफारिशों पर चयन के आधार पर प्रोन्नत हुए थे।

(3) भारत के नियन्त्रक और महालेखाकार के कार्यालय ने महालेखाकार (ए०ई०) 2 महाराष्ट्र नागपुर में चयन के आधार पर प्रोन्नति द्वारा भरे जाने वाले पर्यवेक्षक (समूह ग) के पदों में अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित 2 रिक्तियों के अनारक्षण की मांग की थी। इसकी संवीक्षा करने पर यह देखा गया था कि उन्होंने अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों पर केवल कार्मिक तथा प्रशासनिक सुधार विभाग के दिनांक 24-12-80 के कार्यालय ज्ञापन में यथा विहित रूप में ही अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के कर्मचारियों के पक्ष में रिक्तियों की संख्या के पांच गुणे तक बढ़े विचार क्षेत्र में ही विचार किया गया था। यह मामला उनके साथ यह स्पष्ट करते हुए उठाया गया था कि समूह ग तथा घ पदों में चयन द्वारा प्रोन्नति के मामले में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के कर्मचारियों के लिए आरक्षित रिक्तियों के लिए पृथक रूप से उसी विस्तार वाला विचार क्षेत्र लागू किया जाना था जिसकी परिकल्पना गृह मंत्रालय के दिनांक 11-7-68 के का० ज्ञा० सं० 1/12/67-स्था० (ग) में की गई है। उन्हें यह बताया गया था कि यह मामला कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग के दिनांक 2-5-83 के कार्यालय ज्ञापन में पहले ही स्पष्ट कर दिया गया है जिसमें यह बताया गया था कि समूह ग तथा घ के पद दिनांक 11-7-68 के कार्यालय ज्ञापन के अनुसार गृह मंत्रालय द्वारा नियन्त्रित किया जाते रहेंगे। इसके बाद भारत के नियन्त्रक तथा महालेखाकार के कार्यालय द्वारा अनुसूचित जनजातियों के 2 कर्मचारियों को जो प्रोन्नति के लिए पात्र थे प्रोन्नत करके भूल सुधारी गई थी और अलग विचार-क्षेत्र में उन्हें शामिल किया गया था। तदनुसार अनारक्षण का प्रस्ताव वापिस ले लिया गया था।

(4) गृह मंत्रालय तथा रक्षा मंत्रालय से संबंधित अनारक्षण के कुछ मामलों में यह देखने में आया था कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षित रिक्तियों सहित कुछ रिक्तियां भरने के लिए कार्यवाही शुरू की गई थी। जबकि सामान्य श्रेणी के कर्मचारी नियुक्ति के लिए उपलब्ध हो गए थे। आरक्षित रिक्तियों को भरने का कार्य प्रगति पर था। इसी दौरान सभी नई भर्तियों के बारे में प्रतिबन्ध आदेश प्राप्त हुए थे। इन मामलों से तीन महत्वपूर्ण बिन्दु उत्पन्न हुए थे। पहला ऐसे मामलों में जिसमें भर्ती की कार्यवाही पहले ही शुरू की जा चुकी थी और कुछ रिक्तियां भरी भी जा चुकी थी, प्रतिबन्ध गलत रूप से लागू किया गया था। वास्तव में प्रतिबन्ध ऐसे मामलों में लागू नहीं किए जाने चाहिए थे, ये तो उन रिक्तियों के बारे में लागू किए जाने थे जो प्रतिबन्ध आदेशों के प्राप्त होने के बाद उत्पन्न हुई थीं अथवा ऐसी रिक्तियों के लिए जिनके लिए भर्ती की कार्यवाही अभी शुरु नहीं की गई थी। दूसरा, ऊपर संदर्भित विशेष मामलों में सामान्य श्रेणी के उम्मीदवारों का उन रिक्तियों के समक्ष जो अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए आरक्षित थी तदर्थ आधार पर नियुक्त करके प्रतिबंध आदेशों का उल्लंघन भी किया गया था। इस प्रकार एक तरफ प्रतिबन्ध आदेश यथार्थ रूप से कार्यान्वित नहीं किए गए थे और दूसरी तरफ आरक्षित रिक्तियों के समक्ष सामान्य उम्मीदवारों की नियुक्ति कर अनुसूचित जातियों/जनजातियों के उम्मीदवारों को उनके देय हिस्से से वंचित

किया गया था। तीसरा, आरक्षित रिक्तियों के समक्ष सामान्य उम्मीदवारों की ऐसी तदर्थ नियुक्तियां कुछ वर्षों तक चालू रही थीं और तब इस दलील पर कि ये आरक्षित रिक्तियां प्रतिबंध आदेशों के कारण भरी नही जा सकी थी, कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग से भूतलक्षी प्रभाव से तथा अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त से अनारक्षण के लिए अनुमोदन मांग कर उनकी सेवायों को नियमित करने के लिए प्रस्ताव किया गया था। यह वास्तव में आश्चर्यजनक है कि प्रतिबन्ध आदेश आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों की भर्ती पर लागू किए गए थे और आरक्षित रिक्तियों के समक्ष उन सामान्य उम्मीदवारों की भर्ती पर नहीं । इस कार्यालय ने उपर्युक्त आधारों पर आपत्ति उठाई थी और अनारक्षण के लिए प्रस्ताव को मजूर नहीं किया गया था। तथापि कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग ने इस देर की अवस्था में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों की भर्तीकरने के लिए नए सिरे से कार्यवाही करने के बजाए, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन-जाति के उम्मीदवारों का चयन करने के बाद तदर्थ व्यक्तियों की सेवाओं को समाप्त कर उनकी सेवाओं को नियमित करने के सुझाव को मान लिया था।

अनुलग्नक 6

प्रत्येक राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र की जनसंख्या (1981 की जनगणना) में अ०जा० तथा अ०ज०जा० का प्रतिशत/राज्य सेवाओं में अ०जा० तथा अ०ज०जा० के लिए आरक्षण का प्रतिशत और राज्य सेवाओं में अ०जा० तथा अ०ज०जा० के वास्तविक प्रतिनिधित्व का प्रतिशत दर्शाने वाला विवरण-पत्र

क्र०सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	जनसंख्या प्रतिशत		विहित आरक्षण का प्रतिशत			वास्तविक प्रतिनिधित्व का प्रतिशत							
						प्रतिनिधित्व की वास्तविक तारीख	समूह क		समूह ख		समूह ग		समूह घ	
		अ०जा०	अ०ज०जा०	अ०जा०	अ०ज०जा०		अ०जा०	अ०ज०जा०	अ०जा०	अ०ज०जा०	अ०जा०	अ०ज०जा०	अ०जा०	अ०ज०जा०
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
	राज्य													
1.	आन्ध्र प्रदेश	14.87	5.93	15	6	1-1-86	3.99	0.70	5.52	0.80	19.40	0.94	15.81	2.68
2.	असम	6.24	10.99	7	(पर्वत) 5 (मैदान) 10	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं
3.	बिहार	14.51	8.31	14	10	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं
4.	गुजरात	7.15	14.22	7	14	1-1-87	9.64	5.91	11.49	4.00	17.68	8.98	41.62	15.78
5.	हरियाणा	19.07	--	20	--	1-7-76	5.6	--	4.7	--	8.8	--	26.2	--
6.	हिमाचल प्रदेश	24.62	4.61	(समूह क तथा ख) 15 (समूह ग तथा घ) 22	7.5 5	1-1-83	5 40	3.90	7.80	3.70	12.00	3.40	20.50	5.80
7.	जम्मू-काश्मीर	8.31	--	8	--	1-1-87	2.08	-- (समूह क में शामिल है)		—	3.08	--	4.29	--
8.	कर्नाटक	15.07	4.91	15	3	1-1-86	12.23	1.79	8.06	1.49	11.20	1.57	19.58	3.28
9.	केरल	10.02	1.03	8	2	1-1-86	—	8.41	(समूह क में शामिल है)		9.00	—	13.49	—
10.	मध्य प्रदेश	14.10	22.97	(समूह क तथा ख) 15 (समूह ग तथा घ) 16	18 20	1-1-86	2.13	1.94	5.31	2.44	9.17	9.45	11.75	8.67
11.	महाराष्ट्र	7.14	9.19	13@	7	1-1-86	6.90	2.29	7.91	2.28	12.83	5.02	21.30	7.45
12.	मणिपुर	1.25	27.30	2	31	1-9-86	0.81	13.83	0.91	17.96	1.46	29.18	1.36	26.40
13.	मेघालय	0.41	80.58	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	1-4-84	1.04	68.70	0.70	73.35	0.86	77.13	1.73	73.00
14.	नागालैंड	--	83.99	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं
15.	उड़ीसा	14.66	22.43	15	23	1-4-86	1.41	0.88	2.87	1.56	8.64	5.62	21.29	12.02
16.	पंजाब	26.87	--	25	--	1-4-86	9.23	--	12.39	--	9.56	--	14.38	--
17.	राजस्थान	17.04	12.21	16	12	1-1-87	17.90	2.78	9.80	8.70	9.02	7.71	22.65	11.43

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
18.	सिक्किम	5.78	23.27	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	1-1-81	6.18	32.16	2.39	27.78	4.12	27.00	11.34	29.12
19.	तमिलनाडु	18.35	1.07		18 (अ०जा०/अ०ज० जा० के लिए संयुक्त)	1-1-87	7.00	0.40	14.30	0.10	13.70	0.10	16.60	0.40
20.	त्रिपुरा	15.12	28.44		15 29	1-1-87	4.40	5.69	6.65	7.73	9.59	19.20	16.26	19.21
21.	उत्तर प्रदेश	21.16	0.21	समूह क तथा ख समूह ग समूह घ	18 2 25 2 30 2	1-1-86	7.40	0.45	7.11	0.37	13.66	0.42	17.58	0.50
22.	पश्चिम बंगाल	21.99	5.63		15 5	1-4-82	4.63	0.92	6.01	0.82	9.50	2.08	16.21	4.05
	संघ राज्य क्षेत्र													
1.	अण्डमान व निकोबार द्वीप समूह		11.85	(समूह क तथा ख) (समूह ग तथा घ)	15 7.5 — 16	1-1-87	0.90	0.45	0.92	0.92	0.03	3.37	--	3.70
2.	अरुणाचल प्रदेश	0.46	69.82	—	80	1-1-86	2.37	12.58	3.44	25.02	3.76	25.30	4.39	55.95
3.	चंडीगढ़	14.09	--	(समूह क तथा ख) (समूह ग तथा घ)	15 7.5 4 —	1.1-86	3.60	--	2.50	--	11.52	0.22	27.65	0.60
4.	दादरा तथा नागर हवेली	1.97	78.82	(समूह क तथा ख) (समूह ग तथा घ)	15 7.5 2 43	1-1-87	7.14		6.89	6.89	5.97	33.14	8.23	79.42
5.	दिल्ली	18.03	---	(समूह क तथा ख) (समूह ग तथा घ)	15 7.5 16.66 7.5	1-1-87	7.3	0.9	9.2	2.1	10.63	1.19	31.3	3.4
6.	गोआ, दमण तथा दीव	2.16	0.99	(समूह क तथा ख) (समूह क तथा ख)	15 7.5 2 7.5	1-1-87	2.17	0.32	2.91	0.48	1.95	0.36	2.95	0.73
7.	लक्षद्वीप	--	93.82	(समूह क तथा ख) (समूह ग तथा घ)	15 7.5 — 45	1-1-86	3.70	44.44	4.16	47.91	0.63	59.88	0.37	89.00
8.	मिजोरम	0.03	93.55	—	45	1-1-86	4.40	73.2	1.55	87.41	0.54	90.12	2.17	88.54
9.	पांडिचेरी	15.99	—	(समूह क तथा ख) (समूह ग तथा घ)	15 7.5 16 —	1-1-87	3.95	--	11.56	0.80	9.33	0.42	14.78	1.23

असम में 1981 में जनगणना नहीं हुई।--ये प्रक्षेपित आंकड़े हैं।

@नव० बौद्धों के लिए आरक्षण शामिल है।

अनुलग्नक 7

विवरण पत्र सं० 1

दिनांक 1-1-1987 को यथास्थिति केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में अध्यापन पदों में कार्यरत अ०जा० तथा अ०ज०जा० के व्यक्तियों की संख्या तथा प्रतिशत दिखलाने वाला विवरणपत्र

पदों का वर्ग	कर्मचारियों की संख्या			प्रतिशत	
	कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०	अ० जा०	अ०ज०जा०
1	2	3	4	5	6
		(1) अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय			
प्रोफेसर . . .	209	—	—	—	—
रीडर . . .	422	—	—	—	—
प्राध्यापक . . .	451	—	—	—	—
		(2) बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय			
प्रोफेसर . . .	327	—	—	—	—
रीडर . . .	493	—	—	—	—
प्राध्यापक . . .	404	2	—	0.5	—
		(3) दिल्ली विश्वविद्यालय			
प्रोफेसर . . .	244	—	—	—	—
रीडर . . .	296	2	—	0.7	—
प्राध्यापक . . .	151	2	—	1.3	—
		(4) हैदराबाद विश्वविद्यालय			
प्रोफेसर . . .	46	—	—	—	—
रीडर . . .	50	—	—	—	—
प्राध्यापक . . .	52	4	1	7.6	1.9
		(5) जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय			
प्रोफेसर . . .	119	—	—	—	—
सहयुक्त प्रोफेसर/रीडर . .	136	2	—	1.5	—
सहायक प्रोफेसर/प्राध्यापक .	82	4	2	4.9	2.5
		(6) उत्तर-पूर्व पर्वतीय विश्वविद्यालय			
प्रोफेसर . . .	49	—	5	—	10.2
रीडर . . .	84	—	9	—	10.7
प्राध्यापक . . .	145	—	46	—	31.7
अनुसन्धान सहायक . .	11	—	5	—	45.5
		(7) पांडिचेरी विश्वविद्यालय			
प्रोफेसर . . .	8	—	—	—	—
रीडर . . .	6	—	—	—	—
प्राध्यापक . . .	12	1	—	8	—

	2	3	4	5	6
(8) विश्वभारती विश्वविद्यालय					
प्रोफेसर . . .	64	—	—	—	—
रीडर . . .	137	1	—	—	—
प्राध्यापक/निदेशक (व्यायाम शिक्षा)	105	3	1	2.86	0.95
अनुदेशक . .	6	1	—	16.67	—
सहायक प्राध्यापक/ट्यूटर .	143	2	[illegible]	1.40	70
(9) इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय					
प्रोफेसर . . .	3	—	—	—	—
रीडर . . .	2	—	—	—	—
प्राध्यापक . . .	2	—	—	—	—
अनुसंधान अधिकारी . .	1	—	—	—	—

अनुलग्नक 7

विवरण पत्र सं० 2

दिनांक 1-1-1987 को यथा स्थिति केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में गैर अध्यापन पदों में अ० जा० तथा अ०ज०जा० की संख्या तथा प्रतिशत दिखलाने वाला विवरण पत्र

पदों का समूह	कर्मचारियों की संख्या			प्रतिशत	
	कुल	अ० जा०	अ० ज० जा०	अ० जा०	अ० ज० जा०
1	2	3	4	5	6
		(1) अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय			
क . . .	113	—	—	—	—
ख . . .	347	1	—	—	—
ग . . .	1765	12	4	0.68	0.23
घ . . .	2678	470	8	17.56	0.30
		(2) बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय			
क . . .	74	—	—	—	—
ख . . .	155	—	—	—	—
ग . . .	1655	60	—	3.6	—
घ . . .	2486	504	—	20.3	—
		(3) दिल्ली विश्वविद्यालय			
क . . .	142	—	—	—	—
ख . . .	249	4	—	1.6	—
ग . . .	1369	96	3	7.0	0.2
घ . . .	1010	259	8	25.6	0.8
		(4) हैदराबाद विश्वविद्यालय			
क . . .	35	—	—	—	—
ख . . .	48	1	—	2.1	—
ग . . .	309	20	3	6.5	1.0
घ . . .	326	76	17	23.3	5.2
		(5) जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय			
क. . . .	77	5	—	6.4	—
ख . . .	101	5	1	5.0	1.0
ग . . .	456	55	—	12.0	0.3
घ . . .	390	69	1	17.7	0.3
		(6) उत्तर पूर्व पर्वतीय विश्वविद्यालय			
क . . .	55	—	27	—	49.0
ख . . .	99	—	54	—	54.5
ग . . .	471	4	335	0.85	71.0
घ . . .	345	5	237	1.45	68.7

1	2	3	4	5	6
		(7) पाण्डिचेरी विश्वविद्यालय			
क . . .	14	--	--	--	--
ख . . .	6	--	--	--	--
ग . . .	67	4	--	6	--
घ . . .	44	12	--	27	--
		(8) विश्वभारती विश्वविद्यालय			
क . . .	53	1	--	1.89	--
ख . . .	95	4	2	4.21	2.10
ग . . .	704	107	12	15.20	1.70
घ . . .	574	89	92	15.50	16.02
		(9) इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय			
क . . .	24	--	--	--	--
ख . . .	9	--	--	--	--
ग . . .	53	1	--	1.9	--
घ . . .	23	3	1	13.0	4.3

अनुलग्नक 8

विवरण पत्र सं० 1

दिनांक 1-1-1986 को यथास्थिति अध्यापन पदों में अ०जा०/अ०ज०जा० का प्रतिनिधित्व दिखलाने वाला विवरण-पत्र

क्र०सं०	विश्वविद्यालय का नाम	प्रोफेसर			रीडर/सहयुक्त प्रोफेसर			प्राध्यापक/निदेशक (व्यायाम शिक्षा)			अनुसंधान सहायक/ट्यूटर/ अनुदेशक/निदर्शक		
		कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०	कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०	कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०	कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
	आन्ध्र प्रदेश												
1.	आंध्र प्रदेश विश्वविद्याला, वालटेयर	187	3	--	283	12	--	293	28	3	2	--	--
2.	जवाहरलाल नेहरू प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद	61	--	-	35	1	--	239	3	--	9	--	--
3.	श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, तिरूपति	104	--	--	129	--	--	208	17	3	--	--	--
	असम												--
4.	डिब्रुगढ़ विश्वविद्यालय, डिब्रुगढ़	7	-	--	44		1	69	--	3	--	--	--
5	गुवाहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी	51	--	--	106		1	186	1	2	--	--	--
	बिहार												
6	भारतीय खान विद्यालय, धनबाद	41	--	--	47	--	--	38	--	--	6	--	--
	गुजरात												
7.	सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ नगर	20	--	--	60	--	--	69	--	--	3	--	--
8	दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत	17	--	--	29	--	--	31	2	--	--	--	--
	हरियाणा												
9	कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र	49	--	--	96		--	195	4	--	--	--	--
10.	महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक	27	--	--	34		--	199	1	--	--	--	--
	कर्नाटक												
11.	भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलूर	184	--	--	120	--	--	123	4	--	38	--	--
12.	कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवार	46	--	--	136	4	--	313	10	--	--	--	--
13.	कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, बंगलूर	86	1	--	270	--	1	366	9	--	477	68	2
	केरल												
14.	कोचीन विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कोचीन	37	--	-	36	--		75	2			--	--
	मध्य प्रदेश												
15.	बिक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन	24	--	--	40	--		439	-		2	--	--

महाराष्ट्र												
16. कोंकण कृषि विद्यापीठ, रत्नागिरि	43	1	—	56	—		139	1	—	—	—	—
17. नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर	40	—	1	64	2		166	19	5	3	—	—
18. पंजाबराव कृषि विद्यापीठ, अकोला	69	3	—	206	14	1	389	23	14	8	1	—
19. शिवाजी विश्वविद्यालय कोल्हापुर	18	1	—	28			102	5	—	—	—	—
20. बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई	95	—	—	134	1		105	9	—	—	—	—
उड़ीसा												
21. बरहामपुर विश्वविद्यालय, बरहामपुर	25			33			70	—	—	—	—	—
22. सम्बलपुर विश्वविद्यालय, सम्बलपुर	28			55	—		104	—	—	29	2	—
23. उत्कल विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर	45	1		31	—		157	1		—	—	—
पंजाब												
24. गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर	44	—	—	73	—	—	130	1	—	12	—	—
तमिलनाडु												
25. मद्रास विश्वविद्यालय, मद्रास	65	1	—	82	—		138	8	—	2	—	—
उत्तर प्रदेश												
26. आगरा विश्वविद्यालय, आगरा	12		—	17	—		33	—			—	—
27. गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर	5	—	—	11	—		150	3	2		—	—
28. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर	38	—	—	144			133	1		4	—	—
29. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर	167	—	—	—	—	—	130	3	—	12	—	—
30. काशीविद्यापीठ, वाराणसी	13	—	—	23	—		81	1	—		—	—
31. कुमाऊं विश्वविद्यालय, नैनीताल	8		—	53	—	1	147	1	—		—	—
32. रुड़की विश्वविद्यालय, रुड़की	112	1	—	175			134		—	12	—	—
पश्चिम बंगाल												
33. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं
34. उत्तर बंगाल विश्वविद्यालय, राजा राममोहनपुर, जिला दार्जिलिंग	29		—	57		—	53	2	—	—	—	
चंडीगढ़												
35. पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़	137	—	—	230	—	—	299	2	—	3	—	
दिल्ली												
36. अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान	52	—	—	69	—	—	151	3	—	47	—	—
37. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान	141	1	—	155			62				—	—
योग	2133	13	1	3261	34	5	5341	169	32	674	71	2

अनुलग्नक 8

विवरण पत्र सं० 2

दिनांक 1-1-1986 को यथास्थिति गैर-अध्यापन पदों में अ०जा०/अ०ज०जा० का प्रतिनिधित्व दिखलाने वाला विवरण-पत्र

क्र० सं०	विश्वविद्यालय का नाम	समूह क			समूह ख			समूह ग			समूह घ		
		कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०	कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०	कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०	कुल	अ०जा०	अ०ज०जा०
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
	आन्ध्र प्रदेश												
1.	आन्ध्र विश्वविद्यालय, वालटेअर	1425	93	5	—	—	—	—	—	—	1352	84	4
2.	जवाहर लाल नेहरू प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद	13	—	—	83	2	3	357	50	1	224*	79	1
3.	श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, तिरूपति	2	—	—	43	2	—	862	41	8	658	118	17
	असम												
4.	डिब्रुगढ़ विश्वविद्यालय, डिब्रुगढ़	17	1	—	56	1	4	117	8	12	217	7	14
5.	गुवाहटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी	158	—	—	211	—	—	433	12	7	543	12	3
	बिहार												
6.	भारतीय खान विद्यालय, धनबाद	11	—	—	17	—	—	161	13	7	205	39	8
	गुजरात												
7.	सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभनगर	9	—	1	4	—	—	134	7	2	89	10	19
8.	दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत	28	—	1	201	13	17	—	—	—	132	10	56
	हरियाणा												
9.	कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र	98	1	—	326	8	—	544	24	—	608	66	—
10.	महर्षि दयानन्द, विश्वविद्यालय, रोहतक	27	—	—	95	3	—	563	14	—	345	24	—
	जम्मू-काश्मीर												
11.	जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू	7	—	—	35	—	—	349	26	—	228	79	—
	कर्नाटक												
12.	भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलूर	465	4	1	72	3	—	802	143	9	553	151	13
13.	कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवार	22	—	—	58	1	—	529	24	1	413	19	—
14.	कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, बंगलूर	91	2	1	93	4	1	1580	138	14	631*	103	15
	केरल												
15.	कोचीन विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कोचीन	14	1	—	98	7	—	343	25	—	68	6	1
	मध्य प्रदेश												
16.	जिवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	5	5	—	12	12	—
17.	रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर	58	1	—	39	—	—	189	4	4	95	7	7
18.	विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन	1	—	—	18	1	—	304	12	—	161	55	—

अध्याय 1

अस्पृश्यता

संविधान के अनुच्छेद 17 के अधीन 'अस्पृश्यता' समाप्त की गई है तथा किसी भी रूप में इसका व्यवहार निषिद्ध किया गया है। तथापि इसका व्यवहार अभी भी जारी है, हालांकि देश के शहरी क्षेत्रों में इसका वैसा कट्टर रूप नहीं है जैसा ग्रामीण क्षेत्र में है। भारतीय गणतंत्र के संविधान के अंगीकार किए जाने के पांच वर्षों के अन्दर संसद ने मौलिक अधिकारों में दिए गए सिद्धांतों को व्यवहार में लाने के संबंध में विस्तृत विवरण विनिर्दिष्ट करने तथा उन्हें लागू करने के लिए एक कानून बनाने का निर्णय किया था। इसके परिणाम-स्वरूप अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, 1955 बना। इसके क्षेत्र को बढ़ाने और इसके दाण्डिक प्रावधानों को अधिक कठोर बनाने के लिए इस अधिनियम में 1976 में व्यापक संशोधन किए गए थे। इस संशोधन से इस अधिनियम का नाम भी बदल कर नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 कर दिया गया था। इसमें किसी व्यक्ति को अस्पृश्यता के आधार पर सार्वजनिक पूजा के स्थान में प्रवेश करने और प्रार्थना करने या किसी पवित्र तालाब, कुएं या स्रोत से पानी लेने से रोकने पर दण्ड की व्यवस्था की गई है। इस अधिनियम के प्रावधान किसी प्रकार की सामाजिक निर्योग्यता लागू करने, जैसे किसी दुकान, भोजनालय, होटल, सार्वजनिक अस्पताल या किसी शिक्षण संस्थान या लोक मनोरंजन के किसी स्थान में प्रवेश करने से मना करने या किसी सड़क, नदी, कुएं, तालाब, नलके, स्नानघाट, श्मशान भूमि इत्यादि का प्रयोग करने से मना करने पर लागू होते हैं।

2. नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के अधीन अपराध प्रसंज्ञेय और अप्रसंज्ञेय हैं। इसमें न्यूनतम एक महीने के कारावास और 100 रुपये के दण्ड से ले कर 6 महीने के कारावास तथा 500 रुपए तक के दण्ड देने की व्यवस्था है। दूसरी बार अपराध करने पर दण्ड 6 महीने के कारावास तथा 200 रुपए के दण्ड से लेकर एक वर्ष के कारावास और 500 रुपए तक का दण्ड हो सकता है। तीसरी बार तथा बाद के अपराधों के लिए दण्ड की मात्रा एक वर्ष के कारावास और 500 रुपए के दण्ड से ले कर दो वर्ष के कारावास तथा 1,000 रुपए तक हो सकती है। कारावास की न्यूनतम तीन महीने की अवधि वाले अपराधों पर न्यायालयों द्वारा सरसरी तौर पर मुकदमा चलाया जा सकता है।

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के प्रावधानों के कार्यान्वयन के लिए विभिन्न राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा उठाए गए कदम

3. इस अधिनियम की धारा 15 क (2) के अधीन राज्य सरकारों से पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध करने के लिए कदम उठाने की अपेक्षा की गई है जिनमें ये बातें सम्मिलित हैं—मुकदमे आरम्भ करने या उनका अधीक्षण करने के लिए अधिकारियों की नियुक्ति, विशेष/चल न्यायालयों की स्थापना, समुचित स्तरों पर समितियों की नियुक्ति, इस अधिनियम के प्रावधानों के कार्यचालन के लिए आवधिक सर्वेक्षण की व्यवस्था और ऐसे स्थानों का पता लगाना जहां अस्पृश्यता के कारण लोगों को निर्योग्यता का सामना करना पड़ता है तथा कोई अन्य कदम जिन्हें राज्य सरकार अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए ठीक समझती है। नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के अनुसरण में राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा उठाए गए कदमों का संक्षेप में विवेचन नीचे दिया गया है—

(क) अधिकारियों की नियुक्ति

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन मामलों की शीघ्रता से जांच करने और उनका पर्यवेक्षण करने के लिए **आंध्र प्रदेश, बिहार, गोवा, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल**, राज्यों तथा **चंडीगढ़, दिल्ली** और **पांडिचेरी** संघ शासित क्षेत्रों द्वारा इस प्रयोजन के लिए स्थापित प्रकोष्ठों में विशेष अधिकारी नियुक्त किए गए हैं अथवा विभिन्न स्तरों पर अधिकारियों को विशेष जिम्मेदारियां सौंपी गई हैं।

(ख) समितियां

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के प्रशासन तंत्र तथा अनुसूचित जातियों के कल्याण के अन्य सामान्य कार्यक्रमों के कार्यचालन का पुनरावलोकन करने के लिए **आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, गोवा, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल** राज्यों तथा **दिल्ली** संघ शासित क्षेत्र में समितियों का गठन किया गया है।

(ग) आवधिक सर्वेक्षण

ऐसे क्षेत्रों का पता लगाने के उद्देश्य से जहां अस्पृश्यता के कारण समस्यायें उत्पन्न होती हैं, नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम में एक प्रावधान किया गया है जिसके अनुसार राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा सर्वेक्षण किए जाते हैं। तदनुसार **बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु** और **उत्तर प्रदेश** राज्य सरकारों ने इस दिशा में कार्यवाही करना आरम्भ कर दिया है।

(घ) अस्पृश्यता प्रवृत्त क्षेत्रों का पता लगाना

अस्पृश्यता प्रवृत्त क्षेत्रों का पता लगाने के काम को सर्वेक्षण के साथ जोड़ा गया है। कुछ राज्यों जैसे **गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और तमिलनाडु** में क्रमश: 73, 129, 363 और 523 गांवों को अस्पृश्यता प्रवृत्त गांवों के रूप में जाना गया है। **कर्नाटक, केरल** और **उत्तर प्रदेश** ने अभी तक ऐसे गांवों का पता नहीं लगाया है परन्तु क्रमश: 6, 2 और 15 जिलों का चुनाव किया है। इन तीन राज्यों को चुने गये जिलों में अस्पृश्यता प्रवृत्त गांवों का पता लगाने के लिए कार्यवाही शीघ्र करनी चाहिए।

(ङ) प्रचार और अन्य उपाय

अस्पृश्यता की बुराई का उन्मूलन करने के लिए और इसके बारे में लोगों में जागृति लाने के लिए लगभग सभी राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा विभिन्न माध्यमों से प्रचार अभियान आरम्भ किए गए हैं। **महाराष्ट्र** सरकार ने कीतनकारों और कलापाठकों के कार्यक्रम आयोजित करके अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए प्रचार का एक नया तरीका अपनाया है।

विशेष न्यायालयों की स्थापना

4. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 11 (1) के अधीन कोई राज्य सरकार उच्च न्यायालय के परामर्श से किसी विशेष श्रेणी के मामलों का परीक्षण करने के लिए श्रेणी 1 या श्रेणी 2 न्यायिक मजिस्ट्रेट के विशेष न्यायालय स्थापित कर सकती है। इसी प्रकार नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 की धारा 15 (क) (2) (iii) के अधीन उक्त अधिनियम के अपराधों के परीक्षण के लिए विशेष न्यायालय गठित किए जा सकते हैं। इन प्रावधानों के अनुसरण में निम्नलिखित राज्य सरकारों ने प्रत्येक राज्य के सामने दिखाए गए स्थानों पर विशेष/चल न्यायालय स्थापित किए हैं—

सारणी 1

क्रम सं०	राज्य का नाम	विशेष न्यायालयों की संख्या	स्थान
1	2	3	4
1.	आंध्र प्रदेश	17	कड़प्पा, महबूबनगर, पूर्व गोदावरी, पश्चिम गोदावरी, चित्तूर, श्रीकाकुलम, मेडाक, आनन्तपुर, विजयानगारम्, निल्लूर, निजामाबाद, प्रकाशाम, विशाखापटनम, खम्मम, नालगोंडा, कर्नूल, कृष्णा
2.	बिहार	4	पटना, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया हजारीबाग
3.	कर्नाटक	2	बेलगांव, मैसूर
4.	मध्य प्रदेश	4	ग्वालियर भोपाल, सागर, बिलासपुर
5.	राजस्थान	8	अलवर जिला——अलवर, राजगढ़, बेहरोड; कोटा जिला——अतरू, इटावा, बारां, कोटा; नागोर जिला——नागौर
6.	तमिलनाडु	4	तंजावुर (कुम्भकोणम), मदुरै, तिरूचिरापल्ली, तिरुनेलवेली
7.	उत्तर प्रदेश		सभी जिलों में ऐसे मामलों में कार्यवाही करने के लिए जिनमें अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों के साथ अत्याचार हुए हैं, मजिस्ट्रेट नामित किए गए हैं और कोई विशेष न्यायालय स्थापित नहीं किया गया है।

5. विशेष न्यायालयों के कार्यचालन का अध्ययन करने की दृष्टि से इस कार्यालय ने निम्नलिखित तीन विशेष न्यायालयों का अध्ययन किया——महबूबनगर (**आंध्र प्रदेश**) का अगस्त 1983 में, अलवर (**राजस्थान**) का जनवरी 1984 में और कुम्भकोणम (**तमिलनाडु**) का जून 1984 में। इन अध्ययनों के आधार पर निम्नलिखित सुझाव दिए जाते हैं जो विभिन्न राज्यों में विशेष न्यायालयों पर लागू हो सकते हैं——

(1) विशेष/चल न्यायालयों की स्थापना के बारे में दूरदर्शन, रेडियो और समाचारपत्रों के माध्यम से व्यापक प्रचार किया जाय ताकि अनुसूचित जातियों के व्यक्ति शीघ्र न्याय प्राप्त करने की सुविधा का लाभ उठा सकें। इससे गैर-अनुसूचित जाति समुदायों में भी यह भावना उत्पन्न होगी कि सरकार अनुसूचित जातियों की समस्याओं को समाप्त करने के लिए बहुत तत्पर है और वे अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों को उत्पीड़ित करना बन्द कर दें। इस कार्यवाही से अस्पृश्यता की प्रथा के विरुद्ध मामलों और अनुसूचित जातियों पर अत्याचार के मामलों की संख्या को कम करने में मदद मिलेगी।

(2) विशेष/चल न्यायालयों द्वारा कार्यवाही किए गए मामलों की संख्या में भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता और नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम दोनों के अधीन मामले शामिल हैं। यह सुझाव है कि ये आंकड़े अलग-अलग रखे जाएं और इनके बारे में पृथक-पृथक सांख्यिकीय सूचना न्यायिक मजिस्ट्रेटों द्वारा उच्च न्यायालय, राज्य सरकार और विशेष पुलिस प्रकोष्ठ को भेजी जाय। पुलिस को भी भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता और नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के मामलों के लिए अभिलेख पृथक-पृथक रखने चाहिएं।

(3) 'इन मामलों के निपटारे में विलम्ब होने के कारण कई समस्याएं उपन्न होती हैं। उदाहरण के तौर पर समय बीतने के साथ-साथ विभिन्न प्रभाव पड़ने से साक्षी विरोधी हो जाते हैं। इससे आरोप सिद्ध करना कठिन हो जाता है और मामलों को सन्देह-लाभ देकर दोषमुक्त कर दिया जाता है और मामले बंद कर दिए जाते हैं। वास्तव में विलम्ब से अत्याचारों और अस्पृश्यता की प्रथा से त्रस्त व्यक्तियों को शीघ्र न्याय दिलाने हेतु विशेष न्यायालय स्थापित करने का प्रयोजन ही समाप्त हो जाता है।

(4) विशेष/चल न्यायालयों को कहा जाय कि वे तिमाही विवरणपत्र प्रस्तुत करें जिनमें मामलों का निपटारा करने में लगा समय दर्शाया जाय। इन विवरणपत्रों की जांच-पड़ताल जिला न्यायाधीश द्वारा सूक्ष्म रूप से की जानी चाहिए ताकि इन न्यायालयों को आवश्यक सहायता तथा मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जा सके और वे मामलों का निपटारा शीघ्रतापूर्वक करने में समर्थ हो सकें।

(5) अत्याचार के मामलों के बारे में विशेष न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों का अध्ययन करने से दोषमुक्त किए गए मामलों की संख्या बहुत अधिक होना पाया गया। यह सुझाव है कि राज्य सरकारों को दोषमुक्त किए गए मामलों का विश्लेषण करना चाहिए और अपराधियों को सबक सिखाने के लिए उपयुक्त उपाय अपनाने चाहिए।

अन्तर-जातीय विवाह

6. जातिवाद और अस्पृश्यता की भावनाओं को समाप्त करने के लिए अनुसूचित जातियों और सवर्ण हिन्दुओं के बीच अन्तर-जातीय विवाह प्रोत्साहित किए जाते हैं। अन्तर-जातीय विवाह प्रोत्साहित करने की योजनाएं प्रथम बार **गुजरात, केरल, महाराष्ट्र** और **तमिलनाडु** राज्य सरकारों द्वारा लागू की गई थीं। उसके पश्चात् इन योजनाओं के अच्छे प्रभाव को देखने के बाद कुछ और राज्यों ने भी अन्तर-जातीय विवाह की योजनाओं को लागू किया था। यदि कोई विवाह अनुसूचित जाति के किसी व्यक्ति और किसी सवर्ण हिन्दू के बीच होता है तो ये राज्य सरकारें 1,000 रुपए से 5,000 रुपये तक का नकद पुरस्कार देती हैं। कुछ राज्य सरकार इसके अतिरिक्त दूसरे लाभ भी प्रदान करती हैं। विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा अन्तर-जातीय विवाहों को प्रोत्साहित करने के लिए की गई कार्यवाही दर्शाते हुए एक विवरणपत्र अनुलग्नक 1 में दिया गया है।

अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए भारत सरकार के विभिन्न माध्यमों द्वारा किया गया कार्य

7. सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय अस्पृश्यता के विरुद्ध जनमत तैयार करने के लिए प्रयास करता रहा है। 1986 में आकाशवाणी के केन्द्रों ने इस विषय पर 4,818 कार्यक्रम प्रसारित किए थे। पत्र सूचना कार्यालय ने 30 समाचार प्रकाशन जारी किए थे। प्रकाशन विभाग द्वारा विभिन्न पत्रिकाओं में हिन्दी, अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषाओं में लेख और संपादकीय लेख भी प्रकाशित किए थे। इसके अतिरिक्त विज्ञापन तथा दृश्य प्रचार निदेशालय द्वारा 20–सूत्री कार्यक्रम और अस्पृश्यता समाप्त करने को योजनाओं के अधीन देश के विभिन्न भागों में 418 प्रदर्शनियां आयोजित की गई थीं। अस्पृश्यता की सामाजिक बुराई की ओर ध्यान केन्द्रित किए जाने के लिए क्षेत्र प्रचार निदेशालय के क्षेत्र एककों द्वारा देश के दूर-दराज के क्षेत्रों, ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्रों में विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। इसी प्रकार संगीत तथा नाटक प्रभाग द्वारा अस्पृश्यता की बुराइयों को दर्शाते हुए देश के विभिन्न भागों में लगभग 7,400 कार्यक्रम आयोजित किए गये। दूरदर्शन केन्द्रों ने अस्पृश्यता के उन्मूलन पर विभिन्न रूपों में भिन्न-भिन्न कार्यक्रम प्रसारित किए। त्रिवेन्द्रम दूरदर्शन केन्द्र ने श्रीनारायण गुरु पर एक मलयालम फिल्म दिखाई और डा० अम्बेडकर के जीवन और मिशन पर एक परिचर्चा प्रसारित की। रांची दूरदर्शन केन्द्र द्वारा 'बढ़ते कदम' और 'प्रगति के पथ पर बिहार' नामक वृत्तचित्र दिखाए गए। गुजराती में डा० अम्बेडकर के जन्म और मृत्यु की वार्षिक तिथियों पर दूरदर्शन द्वारा रिपोर्ट प्रसारित की गई। दूसरे दूरदर्शन केन्द्रों द्वारा कई अन्य कार्यक्रम भी प्रसारित किए गए।

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन मामले

8. वर्ष 1981 से 1985 तक नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के अधीन दर्ज हुए मामलों की कुल संख्या 19,378 थी। उनकी वर्ष–वार संख्या 4,085 (1981), 4,087 (1982) 3,949, (1983), 3,925 (1984) और 3,332 (1985) थी। 18 राज्यों और 4 संघ राज्य क्षेत्रों में नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन दर्ज हुए मामलों की राज्यवार तथा वर्ष-वार संख्या अनुलग्नक 2 में दी गई है। उससे यह प्रकट होगा कि इन मामलों के पंजीकरण में कमी होती जा रही है। यह एक अच्छा लक्षण है। तथापि निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि यह सवर्ण हिन्दुओं की सामाजिक मनोवृत्ति में कोई महत्वपूर्ण बदलाव दर्शाता है। **गुजरात** राज्य की सरकार ने अपने-अपने क्षेत्रों में अस्पृश्यता समाप्त करने के लिए पंचायतों की जिम्मेदारी निश्चित करके एक साहसिक कदम उठाया है। इसके अनुसार यदि कोई पंचायत किसी सार्वजनिक कुएं, जल-कल इत्यादि से पानी लेने के

संबंध में अनुसूचित जातियों के विरुद्ध भेदभाव को समाप्त करने में असफल रहती हैं तो उसे सरकारी सहायता तब तक के लिए बन्द कर दी जाती है जब तक वह भेद-भाव समाप्त नहीं किया जाता। ऐसे मामलों में सरकारी अनुदेशों का पालन करने में असफल रहने के लिए ऐसी पंचायतों का अतिक्रमण करने पर भी विचार किया जाता है। जिला विकास अधिकारियों को यह अधिकार भी दिया गया है कि वे पंचायतों के ऐसे सदस्यों को हटा दें जो इस संबंध में सरकार के आदेशों का पालन करने में असफल रहते हैं। अन्य राज्य सरकारें भी इसी प्रकार की कार्यवाही कर सकती हैं ताकि अस्पृश्यता की बुरी प्रथा को जल्दी समाप्त किया जा सके।

अस्पृश्यता की प्रथा से संबंधित कुछ मामले

9. अनुसूचित जातियों/जनजातियों, पिछड़े और अल्पसंख्यक कर्मचारी कल्याण संघ के अखिल भारतीय परिसंघ, भटिंडा के महामंत्री ने 29-6-82 की एक शिकायत में यह आरोप लगाया था कि राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड का एक फार्म अधिकारी अनुसूचित जाति के एक अधीनस्थ कर्मचारी को अस्पृश्यता के आधार पर अपमानजनक शब्द कहते हुए जैसे 'भंगी' और 'चमार') गाली-गलौज किया करता था। यह मामला उपायुक्त, भटिंडा के पास भेजा गया जिन्होंने यह पुष्टि की कि उस अधिकारी के विरुद्ध आरोप सिद्ध हो गए थे और राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड ने उस मामले के निष्कर्षों की दृष्टि से संचयी प्रभाव के साथ दो वार्षिक वेतन वृद्धियां रोक कर उस अधिकारी को दंड दिया गया।

10. 15-12-85 के 'इंडियन एक्सप्रेस' में एक समाचार छपा था कि विले पार्ले, बम्बई में नगरपालिका के एक प्राइमरी स्कूल के कुछ छात्रों से स्कूल के समय के बाद पाखाने और स्नानागार साफ करवाए गए थे। यह सफाई अभियान के भाग के रूप में नहीं कराया गया था, परन्तु केवल इसलिए कराया गया था कि उन छात्रों के माता पिता 'सफाई कामगार' थे। यह मामला बृहत बम्बई के नगर निगम के पास भेजा गया जिसने उक्त आरोप का खंडन किया और बताया कि स्कूल में पाखानों और पेशाबघरों की साफ कराने के लिए स्कूल के बच्चों को कभी भी नहीं लगाया गया। इस कार्यालय ने नगर निगम के आयुक्त से पूछा कि क्या उन्होंने समाचारपत्रों में व्यापक रूप से परिचालित की गई इस रिपोर्ट का कोई खंडन किया था। उक्त निगम ने कई अनुस्मारक भेजे जाने के बाद भी इसका कोई उत्तर नहीं दिया।

11. 'नई दुनिया' के 30-10-86 के अंक में यह रिपोर्ट छपी थी कि इन्दौर (म०प्र०) के महल कचहरी क्षेत्र में सवर्ण हिन्दुओं द्वारा अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति को सार्वजनिक नलके से पानी नहीं लेने दिया गया। यह मामला कलेक्टर, इन्दौर के पास भेजा गया जिन्होंने सूचित किया कि नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन दो अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध न्यायालय में मुकदमा दायर किया गया है। उक्त मामला विशेष न्यायालय, भोपाल में निपटान के लिए लम्बित था।

12. 'स्टेट्समैन' के 6-11-86 के अंक में एक समाचार छपा था जो मोतीनाथ संस्कृत महाविद्यालय, रमेशनगर, नई दिल्ली के दो ब्राह्मण छात्रों द्वारा अनुसूचित जाति के एक छात्र के साथ अस्पृश्यता के व्यवहार के संबंध में था जिसके परिणामस्वरूप अनुसूचित जाति के उस छात्र की हत्या की गई थी। इस अपराध का कारण यह था कि उक्त दो ब्राह्मण छात्र यह बात सहन नहीं कर सके थे कि नीची जाति का कोई छात्र उनके साथ संस्कृत पाठ्यक्रम (आचार्य) में अध्ययन करे। यह मामला दिल्ली पुलिस आयुक्त के पास भेजा गया जिनके उत्तर से यह प्रकट हुआ कि उक्त मृतक वास्तव मे पिछड़ी जाति (कुम्हार) का था। पुलिस रिपोर्ट के अनुसार ब्राह्मण छात्रों का मत था कि संस्कृत पढ़ने का अधिकार केवल ब्राह्मणों को ही है।

13. अस्पृश्यता के उन्मूलन के लिए विशिष्ट रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में जहां इसकी जड़ें गहरी हैं, केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों के विभिन्न कार्यक्रम हैं। परन्तु केवल सरकारी प्रयास ही इस समस्या को हल नहीं कर सकते। अतः स्वैच्छिक संगठनों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और धार्मिक नेताओं को भी इसमें सक्रिय रूप से लगना चाहिए और यह देखना चाहिए कि हमारे समाज से अस्पृश्यता का यह कलंक समाप्त हो जाय।

अनुलग्नक 1

विभिन्न राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा अन्तर-जातीय विवाहों को प्रोत्साहित करने के लिए आरम्भ की गई योजनाएं दर्शाने वाला विवरणपत्र

क्रम सं०	राज्य का नाम	नकद पुरस्कार (रुपयों में)	अन्य लाभ
1.	आन्ध्र प्रदेश . . .	1,000	
2.	असम	5,000	दोनों पक्षों के अभिभावकों को ग्रामीण क्षेत्रों में 2,000 रुपए तथा शहरी क्षेत्रों में 1,500 रुपए
3.	बिहार	5,000	
4.	गोवा	2,000	
5.	गुजरात	5,000	
6.	हरियाणा . . .	5,000	इस राशि में से 2,000 रुपए नकद तथा 3,000 रुपए 6 वर्षों के लिए सावधि जमा के रूप में
7.	हिमाचल प्रदेश . . .	1,000	
8.	जम्मू व काश्मीर . . .	—	
9.	कर्नाटक . . .	2,000	अनुदान देने के लिए जिला परिषदों को शक्तियां दी हुई हैं।
10.	केरल . . .	2,000	
11.	मध्य प्रदेश . . .	2,000	इसके अतिरिक्त स्वर्ण पदक भी दिया जाता है।
12.	महाराष्ट्र . . .	2,000	बर्तनों के लिए 500 रुपए भी दिए जाते हैं।
13.	उड़ीसा	3,000	बच्चों के लिए मुफ्त शिक्षा
14.	पंजाब	4,000	इस रकम में से 1,000 रुपए बर्तनों के लिए दिए जाते हैं।
15.	राजस्थान . . .	5,000	प्रोत्साहन राशि दोनों पक्षों के संयुक्त सावधि जमा खाते में डाली जाती है।
16.	सिक्किम . . .	—	
17.	तमिलनाडु . .	4,000	विवाह खर्च के लिए 300 रुपए नकद अनुदान तथा स्वर्ण पदक; बच्चों को इंजीनियरिंग तथा मेडिकल कालेजों में प्रवेश के लिए प्राथमिकता दी जाती है।
18.	त्रिपुरा	2,000	प्रशंसा प्रमाण पत्र भी दिया जाता है।
19.	उत्तर प्रदेश . . .	1,000	लघु उद्योग शुरू करने के लिए 15,000 रुपए का ब्याजमुक्त कर्ज दिया जाता है।
20.	पश्चिम बंगाल . . .	2,000	
21.	दिल्ली	—	
22.	पांडिचेरी . . .	5,000	

अनुलग्नक 2

वर्ष 1981, 1982, 1983, 1984 तथा 1985 के दौरान नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के अधीन दर्ज हुए मामलों की संख्या दर्शाने वाला विवरणपत्र

क्रम सं०	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	1981	1982	1983	1984	1985
1.	आन्ध्र प्रदेश	238	263	385	274	237
2.	असम	1	—	—	—	उ० नहीं
3.	बिहार	17	28	16	15	उ० नहीं
4.	गुजरात	281	347	306	271	169
5.	हरियाणा	6	5	5	2	1
6.	हिमाचल प्रदेश	16	6	6	4	8
7.	जम्मू-काश्मीर	5	4	5	3	3
8.	कर्नाटक	581	674	567	532	659
9.	केरल	38	29	37	39	27
10.	मध्य प्रदेश	237	337	390	370	उ० नहीं
11.	महाराष्ट्र	998	769	558	510	442
12.	उड़ीसा	106	125	90	105	88
13.	पंजाब	—	4	—	—	2
14.	राजस्थान	173	186	183	168	207
15.	सिक्किम	—	—	—	—	—
16.	तमिलनाडु	1136	1105	1205	1402	1280
17.	त्रिपुरा	—	—	—	—	—
18.	उत्तर प्रदेश	224	186	173	208	188
19.	चंडीगढ़	2	1	—	—	1
20.	दिल्ली	10	3	9	7	3
21.	गोवा, दमण और दीव	2	3	—	—	1
22.	पांडिचेरी	14	12	4	15	16
	योग .	4085	4087	3949	3925	3332

टिप्पण: इन वर्षों के दौरान मणिपुर, पश्चिम बंगाल तथा दादरा एवं नागर हवेली में एक भी मामला दर्ज नहीं किया गया था।

अध्याय 2

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचार

'अत्याचार' शब्द की किसी भी कानून में परिभाषा नहीं की गई है, अतः सरकार 'अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विरुद्ध अपराध' पद का प्रयोग करती रही है। तथापि गृह मंत्रालय ने 1974 से ऐसे अपराधों के आंकड़े एकत्र करना आरम्भ किया और बताया कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों को चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है अर्थात् हत्या, गंभीर चोट, आगजनी, और बलात्कार। इसके बाद इन आंकड़ों के संकलन में भारतीय दंड संहिता के ऐसे सभी अपराध सम्मिलित हो गए जिनमें अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के व्यक्ति पीड़ित हुए थे। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों को रोकने के लिए केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा अपनाए गए विभिन्न उपायों के बावजूद इन समुदायों के व्यक्तियों पर अत्याचार होना जारी है। उनके ऊपर अत्याचार होने के तीन मुख्य कारण हैं अर्थात् (1) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के भूमिहीन व्यक्तियों को सरकारी भूमि के आबंटन अथवा फालतू भूमि के वितरण से संबंधित अनिर्णीत भूमि विवाद, (2) राज्य सरकारों द्वारा न्यूनतम मजदूरी का भुगतान न किए जाने या कम भुगतान किए जाने के कारण उत्पन्न हुआ तनाव और विरोध और (3) संविधान तथा विभिन्न विधायी और कार्यकारी उपायों में यथाविहित अपने अधिकारों तथा विशेषाधिकारों के बारे में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों में जागृति की अभिव्यक्ति के विरुद्ध रोष।

2. 1981–86 की अवधि में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों के पंजीकृत मामलों की संख्या का अपराधवार तथा वर्षवार विस्तृत विवरण अनुलग्नक 1 में दिया गया है। 1986 के आंकड़े निम्नलिखित हैं—

सारणी 1

अपराध का स्वरूप	अनुसूचित जातियों के विरुद्ध	अनुसूचित जन-जातियों के विरुद्ध
हत्या	564	160
गंभीर चोट	1,408	311
बलात्कार	727	285
आगजनी	1,002	232
अन्य अपराध	11,715	2,957
योग	15,416	3,945

यह देखा गया है कि अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों की हत्या के मामलों की संख्या में 1981–86 की अवधि में बराबर वृद्धि होती रही सिवाय वर्ष 1985 के जिसमें थोड़ी कमी हुई थी। इसी प्रकार इस अवधि में बलात्कार के मामलों की संख्या क्रमिक रूप से बढ़ी थी। अनुसूचित जनजातियों से संबन्धित हत्या के मामलों की संख्या में 1981-84 की अवधि में वृद्धि हुई थी। 1985 में यह संख्या थोड़ी कम हो गई थी परन्तु 1986 में इसमें पुनः वृद्धि हुई।

3. अनुसूचित जातियों के विरुद्ध अपराधों की संख्या के बारे में राज्यवार तथा वर्षवार आंकड़े अनुलग्नक 2 में दिए गए हैं। उनसे यह ज्ञात होगा कि भारतीय दण्ड संहिता के अधीन ऐसे मामलों की अधिकतम संख्या, जिनमें अनुसूचित जातियों के व्यक्ति पीड़ित हुए थे, **मध्य प्रदेश** में पंजीकृत हुए थे (देश में दर्ज मामलों की कुल संख्या का 32 प्रतिशत)। ऐसे अन्य राज्य जिनमें इस छह वर्ष की अवधि में 1,000 से अधिक मामले दर्ज किए गए थे **उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल तथा आंध्र प्रदेश थे।**

4. इसी प्रकार ऊपर वर्णित अवधि में भारतीय दण्ड संहिता के अधीन ऐसे मामलों की संख्या जिनमें अनुसूचित जनजातियों के व्यक्ति पीड़ित हुए थे, अनुलग्नक 3 में दी गई है जो यह दिखाती है कि पुनः **मध्य प्रदेश** में ही ऐसे मामलों की अधिकतम संख्या पंजीकृत हुई थी (देश में दर्ज मामलों की कुल संख्या का 73.3 प्रतिशत)। ऐसे अन्य राज्य जिनमें छह वर्ष की इस अवधि में 500 से अधिक मामले दर्ज किए गए थे **राजस्थान, महाराष्ट्र, बिहार और गुजरात** थे।

अनुसूचित जाति/जनजाति की जनसंख्या से सह-संबंधित अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों की घटना के विषय में राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों का स्थान-क्रम

5. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों पर अत्याचारों से संबंधित सांख्यिकीय आंकड़े राज्यवार, वर्षवार और अपराधवार क्रमशः अनुलग्नक 4 और 5 में दिए गए हैं। विभिन्न राज्यों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के विरुद्ध अपराधों की घटनाओं की सही तुलना के लिए यह आवश्यक है कि अपराधों की संख्या का उस राज्य में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की जनसंख्या से परस्पर संबंध दिखाया जाय। अनुलग्नक 4 में दिए गए अपराधों के आंकड़ों के आधार पर 20 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को, जिनके बारे में 1988 की अवधि की सूचना प्राप्त थी, नीचे अनुसूचित जातियों की प्रति एक लाख जनसंख्या पर अत्याचारों की संख्या के अवरोही क्रम में दिखाया गया है। इस सारणी में प्रत्येक राज्य के लिए दो संख्याएं दी गई हैं: (क) अत्याचारों की उक्त चार

बड़ी श्रेणियों अर्थात् हत्या, गंभीर चोट, बलात्कार और आगजनी की घटनाओं की संख्या और (ख) उसी छह वर्ष की अवधि में भारतीय दण्ड संहिता के अधीन सभी अपराधों की (क) में दिखाए गए मामलों सहित संख्या—

सारणी 2

1981-86 के दौरान अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों की घटनाओं के विषय में राज्यों का स्थान-क्रम

(क) अत्याचारों की चार बड़ी श्रेणियों के मामलों की संख्या			(ख) भारतीय दंड संहिता के अधीन सभी अपराधों की संख्या (क) पर दिखाए गए मामलों सहित		
स्थान-क्रम	राज्य/संघराज्य क्षेत्र	अ० जा० की प्रति एक लाख जनसंख्या पर मामलों की संख्या	स्थान-क्रम	राज्य/संघराज्य क्षेत्र	अ० जा० की प्रति एक लाख जनसंख्या पर मामलों की संख्या
1	2	3	4	5	6
1.	मध्य प्रदेश	64.74	1.	मध्य प्रदेश	396.32
2.	राजस्थान	36.75	2.	राजस्थान	162.07
3.	उत्तर प्रदेश	34.11	3.	गुजरात	146.27
4.	बिहार	33.04	4.	बिहार	107.21
5.	गुजरात	32.40	5.	उत्तर प्रदेश	105.25
6.	महाराष्ट्र	19.38	6.	महाराष्ट्र	79.00
7.	जम्मू-काश्मीर	13.88	7.	जम्मू-काश्मीर	67.61
8.	हरियाणा	10.67	8.	केरल	57.98
9.	हिमाचल प्रदेश	7.50	9.	तमिलनाडु	33.22
10.	केरल	7.49	10.	हिमाचल प्रदेश	33.02
11.	पांडिचेरी	7.22	11.	कर्नाटक	28.58
12.	कर्नाटक	6.43	12.	हरियाणा	26.54
13.	उड़ीसा	6.39	13.	पांडिचेरी	23.71
14.	गोवा, दमण और दीव	4.35	14.	उड़ीसा	22.48
15.	आन्ध्र प्रदेश	4.11	15.	गोवा, दमण और दीव	17.39
16.	त्रिपुरा	3.55	16.	आन्ध्र प्रदेश	14.43
17.	पंजाब	3.19	17.	त्रिपुरा	6.77
18.	तमिलनाडु	2.65	18.	पंजाब	5.72
19.	पश्चिम बंगाल	0.49	19.	दिल्ली	0.89
20.	दिल्ली	0.45	20.	पश्चिम बंगाल	0.81

अनुलग्नक 1

वर्ष 1981-82, 1982-83, 1983-84, 1984-85, 1985-86 और 1986-87 के दौरान विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों द्वारा प्राप्त किया गया सहायता अनुदान दर्शाने वाला विवरण पत्र (अनुसूचित जातियों के लिए)

क्र० सं०	संगठन का नाम	इन वर्षों में दी गई वास्तविक राशि					
		1981-82	1982-83	1983-84	1984-85	1985-86	1986-87
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	हरिजन सेवक संघ, दिल्ली . .	18,84,230	19,07,360	21,28,866	23,72,366	28,49,935	28,83,782
2.	इंडियन रेड क्रास सोसाइटी, नई दिल्ली .	7,52,265	8,99,441	15,85,992	11,79,010	13,25,196	13,37,609
3.	सर्वेन्टस ग्राफ इंडिया सोसाइटी, पुना .	6,21,900	7,09,080	3,71,168	8,32,949	6,00,392	6,54,347
4.	हिन्द स्वीपर्स सेवक समाज, नई दिल्ली .	4,57,640	3,60,702	5,22,162	4,33,054	3,46,491	4,92,502
5.	रामकृष्ण मिशन आश्रम, रांची .	2,08,719	4,99,699	2,92,371	3,68,230	3,30,982	5,41,724
6.	रामकृष्ण मिशन आश्रम, पुरी .	2,29,640	2,13,235	2,26,880	2,27,280	2,41,500	2,50,160
7.	श्री रामकृष्ण आदिवासी आश्रम, कालाडी (केरल) . . .	2,60,051	1,46,376	--	--	--	--
8.	राम कृष्ण मिशन सेवाश्रम, सिलचर (असम) . . .	1,47,920	--	--	--	--	-
9.	ठक्कर बापा आश्रम, नीमाखांडी (उड़ीसा)	64,962	61,800	67,088	77,228	90,646	--
10.	रामकृष्ण मिशन आश्रम नरेन्द्रपुर (पश्चिम बंगाल) . . .	3,17,033	3,68,737	2,92,044	3,70,820	4,37,381	7,08,106
11.	राम कृष्ण मिशन विद्यापीठ, पुरुलिया (पश्चिम बंगाल). . .	48,040	82,160	77,164	79,760	85,240	1,05,590
12.	सोशियल वर्क एंड रिसर्च सेंटर, तिलोनिया (राजस्थान) . . .	7,85,000	6,27,400	2,66,110	28,660	--	--
13.	भारतीय हरिजन गिरिजन समाज उन्नति मंडल, भिवंडी (महाराष्ट्र) . .	2,25,656	2,07,456	3,66,264	6,80,640	5,99,624	5,67,936
14.	श्री रामकृष्ण आश्रम, निमपीठ (पश्चिम बंगाल) . . .	1,72,480	1,00,000	1,00,000	1,73,200	1,73,200	2,00,000
15.	भारतीय डिप्रेस्ड क्लासेज लीग, नई दिल्ली	1,45,225	--	--	--	--	--
16.	अखिल भारत अनुसूचित जाति परिषद्, नई दिल्ली . . .	34,000	1,39,718	--	--	--	--
17.	सुन्दरबन सेवा संघ, डाकघर पश्चिम राधानगर, जिला 24-परगना (पश्चिम बंगाल) . . .	--	--	3,71,748	--	--	2,10,000
18.	'जागरण', ई-7/10 8, वसंत विहार, नई दिल्ली . . .	--	--	--	28,750	--	--
19.	रामकृष्ण मिशन आश्रम, माल्दा (पश्चिम बंगाल) . . .	--	--	--	--	12,200	13,440
20.	महानाम सेवक संघ श्री श्री महानाम आंगन, रघुनाथपुर, आयानगर, कलकत्ता .	--	--	--	--	--	50,000
21.	बंगाली अ० जा०/अ० ज० जा० वेलफेयर एसोसिएशन (रजि०) 22/13, सेक्टर-1 पुष्प विहार, नई दिल्ली . .	--	--	--	--	--	25,000
	योग	63,54,761	63,23,164	66,67,857	68,51,947	70,92,787	80,40,196

अनुलग्नक 2

वर्ष 1981-82, 1982-83, 1983-84, 1984-85, 1985-86 और 1986-87 के दौरान विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों द्वारा प्राप्त किया गया सहायता अनुदान दर्शाने वाला विवरण-पत्र (अनुसूचित जन जातियों के लिए)

क्र० सं०	संगठन का नाम	इन वर्षों में दी गई वास्तविक राशि					
		1981-82	1982-83	1983-84	1984-85	1985-86	1986-87
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	भारतीय आदिम जाति सेवक संघ, नई दिल्ली	7,73,945	9,80,344	3,60,814	5,38,043	--	7,20,846
2.	रामकृष्ण मिशन आश्रम, चेरापूंजी, डाकघर चेरा बाजार, (मेघालय) .	15,44,244	9,62,770	11,55,819	13,66,048	14,42,471	19,23,406
3.	नगालैंड गांधी आश्रम, डाकघर चुचुयिमलांग, जिला मोकोकचुंग (नगालैंड) .	65,432	70,086	53,722	1,88,180	--	--
4.	रामकृष्ण मिशन, शिलांग . .	3,58,997	1,22,940	3,36,590	1,03,701	1,59,980	1,78,310
5.	श्री रामकृष्ण सोसाइटी, दुनकुन गांव, दीमापुर (नगालैंड) . .	1,86,651	--	75,546	--	--	--
6.	अशोक आश्रम, कलसी, डाकघर अशोक आश्रम, जिला देहरादून . .	2,26,004	--	--	--	--	--
7.	नीलगिरी आदिवासी वेलफेयर एसोसिएशन, कोटागिरी, दी नीलगिरीज (तमिलनाडु) . . .	1,65,492	1,75,256	1,66,669	1,93,830	1,93,284	1,64,346
8.	घड़मोरा मंडल सतरा हिल्स एण्ड प्लेंस कल्चरल इंस्टीट्यूट, नार्थ लखीमपुर (असम) . . .	1,52,794	1,22,085	1,11,299	1,42,893	1,62,203	2,99,271
9.	निखिल भारत वनवासी पंचायत, डाकघर झारग्राम, जिला मिदनापुर (पश्चिम बंगाल)	5,54,450	7,53,684	6,55,018	7,29,164	--	--
10.	अखिल भारतीय दयानन्द सेवा संघ, महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली	1,43,488	1,01,916	1,20,336	2,45,280	2,76,332	4,63,644
11.	रामकृष्ण मिशन स्कूल, आलांग, सियांग जिला (अरुणाचल प्रदेश) . .	1,14,437	7,25,816	4,74,401	6,48,054	3,47,443	5,82,000
12.	वनस्थली विद्यापीठ, डाकघर वनस्थली (राजस्थान) . . .	--	3,74,367	1,90,200	2,77,300	4,08,800	4,04,615
13.	रामकृष्ण मिशन, पी० ओ० नरोत्तमनगर, जिला तिराप (अरुणाचल प्रदेश) .	--	66,649	1,07,775	72,000	57,081	1,91,824
14.	डी० ए० वी० कालेज ट्रस्ट एण्ड मैनेजमेंट सोसाइटी, चित्रगुप्त रोड़, नई दिल्ली .	--	68,000	--	--	--	1,60,880
15.	सर्वेन्ट्स आफ इंडिया सोसाइटी, पुणे .	1,66,114	3,08,614	3,11,997	4,20,288	5,60,518	6,40,999
16.	प्रान्तीय समाज कल्याण केन्द्र, नार्थ लखीमपुर (असम) . . .	1,01,348	95,008	1,06,080	1,55,453	1,69,677	1,77,667
17.	कस्तूरबा गांधी नेशनल मैमोरियल ट्रस्ट, कस्तूरबाग्राम, इन्दौर (मध्य प्रदेश) .	--	--	--	--	3,85,873	--
18.	हिमालय सेवा संघ, नई दिल्ली .	1,33,870	--	--	--	--	--
19.	हरिजन सेवक संघ, 97/3, नासकरपारा रोड़, घुसुरी, हावड़ा (वेस्ट बंगाल) .	--	2,30,349	1,55,355	1,83,355	2,90,221	2,57,652
20.	सोशल वर्क एण्ड रिसर्च सेंटर, तिलोनिया, अजमेर (राजस्थान) . .	16,080	--	--	--	--	--
21.	अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद्, 15 कैनिंग लेन, नई दिल्ली .	40,000	40,000	86,070	28,869	62,086	43,904

1	2	3	4	5	6	7	8
22.	रामकृष्ण मिशन आश्रम, छत्तरिवारी रोड़, गुवाहाटी . . .	2,28,540	52,192	45,113	65,639	5,95,345	99,592
23.	नोर्थ-इस्टर्न हिल यूनिवर्सिटी, शिलांग .	3,00,000	--	--	--	--	—
24.	बालभवन सोसाइटी, कोटला रोड़, नई दिल्ली	35,200	--	14,73,072	--	50,000	—
25.	रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, सिलचर (असम) . . .	--	1,47,690	1,55,610	1,61,784	2,17,776	4,08,490
26.	रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द सोसाइटी, जमशेदपुर (बिहार) . .		--	48,000	1,04,76·	1,36,064	1,59,933
27.	श्री रामकृष्ण अद्वैत आश्रम, कालाडी (केरल) . . .	--	--	2,11,727	2,06,576	1,61,169	2,27,655
28.	रामकृष्ण मिशन अस्पताल, न्यू ईटानगर (अरुणाचल प्रदेश) . .	--	--	20,000	--	--	7,97,000
29.	रामकृष्ण मिशन आश्रम, वाणी विलास मोहल्ला, मैसूर . . .	--	--	32,000	--	49,933	32,000
30.	केन्द्रीय नेहरू स्मारक परिषद, लखनऊ .	--	--	11,072	32,192	--	--
31.	टैगोर सोसाइटी फार रूरल डेवलपमेंट .	--	--	--	2,15,600	--	--
32.	आर० के० मिशन ट्यूबरक्लोसिस सैनेटोरियम, रांची . . .	--	--	--	75,120	44,719	85,139
33.	बुद्ध विद्या निकेतन स्कूल, बुद्धिस्ट टैम्पल रोड़, शिलांग . . .	--	--	--	--	1,04,300	--
34.	राम कृष्ण मिशन, रामकृष्ण विवेकानन्द नगर, राजामुन्द्री जिला, आंध्र प्रदेश	--	--	--	--	2,68,400	--
35.	राम कृष्ण मिशन, बोएज होम, पी० ओ० रहारा, जिला, 24-परगना, (पश्चिम बंगाल) . . .	--	--	--	--	--	34,541
	कुल . .	52,77,086	53,97,766	50,05,944	61,54,129	61,43,675	80,53,717

अनुलग्नक 3

वर्ष 1986-87 के दौरान राज्य सरकारों द्वारा संगठनों को दिए गए सहायता अनुदान को दर्शाने वाला विवरण पत्र

(रुपयों में)

क्र० सं०	राज्यों के नाम	अनुसूचित जातियां	अनुसूचित जन-जातियां	अ०ज० अ०ज०जा और अन्य	कुल
1	2	3	4	5	6
1.	आन्ध्र प्रदेश	—	1,80,000	—	1,80,000
2.	बिहार	—	1,20,000	2,57,910	3,79,910
3	गुजरात	1,19,000	4,10,000	5,03,56,000	5,08,85,000
4.	हरियाणा	13,87,123	—	—	13,87,123
5.	हिमाचल प्रदेश	83,500	2,30,000	4,04,800	7,18,300
6.	मध्य प्रदेश	—	—	1,21,96,300	1,21,96,300
7.	महाराष्ट्र	—	1,74,71,246	3,22,78,000	4,97,49,246
8.	उड़ीसा	1,39,000	76,000	65,000	2,80,000
9.	राजस्थान	41,233	1,29,600	3,98,569	5,69,402
0.	त्रिपुरा	36,360	54,000	—	90,360
11.	उत्तर प्रदेश	—	—	1,29,37,000	1,29,37,000
12.	दादरा और नागर हवेली . . .	—	—	1,71,904	1,71,904
13.	दिल्ली	—	—	1,99,971	1,99,971

अध्याय 11

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की सूचियां

संविधान के अनुच्छेद 341 के खण्ड (1) के अधीन राष्ट्रपति किसी राज्य अथवा संघ राज्य-क्षेत्र के बारे में और राज्य के मामले में उसके राज्यपाल से परामर्श करने के पश्चात् लोक-अधिसूचना द्वारा उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा जातियों, मूल वंशों या जनजातियों के भागों या उनमें के समूहों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जो संविधान के प्रयोजन के लिए उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के सम्बन्ध में, जैसी स्थिति हो, अनुसूचित जातियां समझी जाएंगी। इसी प्रकार अनुच्छेद 342 के खण्ड (1) के अधीन राष्ट्रपति, किसी राज्य अथवा संघ राज्य क्षेत्र के बारे में और राज्य के मामले में उसके राज्यपाल से परामर्श करने के पश्चात् लोक अधिसूचना द्वारा उन जनजातियों अथवा जनजाति समुदायों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा जो संविधान के प्रयोजन के लिए उस राज्य अथवा संघ राज्यक्षेत्र के सम्बन्ध में, जैसी स्थिति हो, अनुसूचित जन जातियां समझी जाएंगी। इन सूचियों के एक बार प्रख्यापित कर दिए जाने पर उसमें समावेश किया जाना अथवा उसमें से निकाला जाना अनुच्छेद 341 तथा 342 के खण्ड (2) के अधीन केवल संसद द्वारा ही किया जा सकता है।

2. राष्ट्रपति ने अब तक निम्नलिखित सारणी में दिए विस्तृत विवरण के अनुसार 15 आदेश जारी किए हैं—

क्र० सं०	आदेश का नाम	आदेश की अधिसूचना की तारीख	जिन राज्य(राज्यों)/संघ राज्य क्षेत्र (राज्य-क्षेत्रों) पर यह आदेश लागू होता है, उनके नाम
1	2	3	4
अनुसूचित जातियां :			
1.	संविधान (अनुसूचित जातियां) आदेश, 1950 .	10-8-1950	सभी राज्य जम्मू-काश्मीर, नगालैण्ड और सिक्किम को छोड़कर
2.	संविधान (अनुसूचित जातियां) (संघ राज्य क्षेत्र) आदेश, 1951	20-9-1951	अरुणाचल प्रदेश, चण्डीगढ़, दिल्ली और मिजोरम
3.	संविधान (जम्मू-काश्मीर) अनुसूचित जातियां आदेश, 1956	22-12-1956	जम्मू-काश्मीर
4.	संविधान (दादरा और नागर हवेली) अनुसूचित जातियां आदेश, 1962	30-6-1962	दादरा तथा नागर हवेली
5.	संविधान (पांडिचेरी) अनुसूचित जातियां आदेश 1964	5-3-1964	पांडिचेरी
6.	संविधान (गोवा, दमण और दीव) अनुसूचित जातियां आदेश, 1968	12-1-1968	गोवा, दमण और दीव
7.	संविधान (सिक्किम) अनुसूचित जातियां आदेश, 1978	22-6-1978	सिक्किम
अनुसूचित जनजातियां			
8.	संविधान (अनुसूचित जनजातियां) आदेश, 1950 .	6-9-1950	सभी राज्य हरियाणा, जम्मू-काश्मीर, नगालैंड, पंजाब, सिक्किम और उत्तर प्रदेश को छोड़कर
9.	संविधान (अनुसूचित जनजातियां) (संघ राज्यक्षेत्र) आदेश, 1951	20-9-1951	अरुणाचल प्रदेश, लक्षद्वीप और मिजोरम
10.	संविधान (अंडमान और नीकोबार द्वीप समूह) अनुसूचित जनजातियां आदेश, 1959	31-3-1959	अंडमान और नीकोबार द्वीप समूह
11.	संविधान (दादरा और नागर हवेली) अनुसूचित जनजातियां आदेश, 1962	30-6-1962	दादरा और नागर हवेली
12.	संविधान (उत्तर प्रदेश) अनुसूचित जनजातियां आदेश, 1967	24-6-1967	उत्तर प्रदेश
13.	संविधान (गोवा, दमण और दीव) अनुसूचित जनजातियां आदेश, 1968	12-1-1968	गोवा, दमण और दीव
14.	संविधान (नगालैंड) अनुसूचित जनजातियां आदेश, 1970	23-7-1970	नगालैंड
15.	संविधान (सिक्किम) अनुसूचित जनजातियां आदेश, 1978	22-6-1978	सिक्किम

अनुसूचित जातियों के लिए कसौटी

3. अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की सूची के संबंध में पहला प्रश्न यही उठता है कि किसी समुदाय को एक अनुसूचित जाति अथवा अनुसूचित जनजाति के रूप में सूचीबद्ध करने के लिए आधार क्या है। जहां तक अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है, यह शब्द पहली बार भारत सरकार अधिनियम, 1935 में प्रयोग हुआ था। अप्रैल, 1936 में ब्रिटिश सरकार ने भारत सरकार (अनुसूचित जातियां) आदेश, 1936 जारी किया था, जिसमें तत्कालीन प्रान्तों—असम, बंगाल, बिहार, बंबई, मध्य प्रान्त तथा बिराड़, मद्रास, उड़ीसा, पंजाब और युक्त प्रान्त में कतिपय जातियों, मूलवंशों तथा जनजातियों को अनुसूचित जातियों के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया था। भारत सरकार अधिनियम, 1935 से पूर्व इन समुदायों के लिए "दलित वर्ग" पद का प्रयोग होता था। यद्यपि "दलित वर्ग" पद 1931 से पूर्व प्रयोग में था, परन्तु 1931 की जनगणना रिपोर्ट [खंड–1, भाग–1 (परिशिष्ट–1), पृष्ठ 472] में कतिपय जातियों को दलित वर्गों के रूप में वर्गीकृत करने के लिए निम्नलिखित परीक्षणों का उल्लेख किया गया था—

(1) क्या प्रश्नगत जाति अथवा वर्ग के लिए पवित्र ब्राह्मणों द्वारा कार्य किया जा सकता है अथवा नहीं।

(2) क्या प्रश्नगत जाति अथवा वर्ग के लिए नाइयों, धीवरों, दर्जियों इत्यादि द्वारा जो सवर्ण हिन्दुओं के लिए कार्य करते हैं, कार्य किया जा सकता है।

(3) क्या प्रश्नगत जाति किसी उच्च सवर्ण हिन्दू को संपर्क से अथवा सामीप्य से प्रदूषित करती है।

(4) क्या प्रश्नगत जाति अथवा वर्ग उनमें से है जिनके हाथों से एक सवर्ण हिन्दू पानी ग्रहण कर सकता है।

(5) क्या प्रश्नगत जाति या वर्ग को जन सुविधाओं जैसे सड़कों, नौकाओं, कुओं अथवा स्कूलों का प्रयोग करने के लिए वर्जित किया गया है।

(6) क्या प्रश्नगत जाति अथवा वर्ग को हिन्दू मंदिरों का प्रयोग करने से वर्जित किया गया है॥

(7) क्या सामान्य सामाजिक अंतर्व्यवहार में प्रश्नगत जाति अथवा वर्ग के एक सुशिक्षित सदस्य को उसी के समान शैक्षिक अर्हताओं वाले उच्च सवर्ण व्यक्तियों द्वारा अपने बराबर के व्यक्ति के रूप में माना जाएगा।

(8) क्या प्रश्नगत जाति अथवा वर्ग केवल अपनी ही अज्ञानता, निरक्षरता अथवा निर्धनता के कारण दलित है और अगर ऐसा न होता तो वह किसी सामाजिक निर्योग्यता के अध्यधीन नहीं होगी।

(9) क्या वह अपने व्यवसाय के कारण दलित है और क्या उस कारण से वह किसी सामाजिक निर्योग्यता के अध्यधीन नहीं होगी।

*** *** ***

"राज्य के दृष्टिकोण से जन सुविधाओं—सड़कों, कुओं और स्कूलों का प्रयोग करने के अधिकार की जांच करना महत्वपूर्ण है और यदि इसे मुख्य जांच के रूप में लिया जाए तो पता चलेगा कि धार्मिक निर्योग्यताएं और अप्रत्यक्ष रूप से उनसे पैदा होने वाली सामाजिक कठिनाइयां सम्मिलित योगदान है। उन्हें भी कुछ महत्व दिया जाना चाहिए, स्पष्ट रूप से इसलिए कि यदि जन साधारण कुछ समूहों के व्यक्तियों को इतना नापसन्द करता है कि उन्हें दूर रखने के लिए संगठित कार्यवाही की जाती है तो इससे उन समूहों के व्यक्ति गंभीर निर्योग्यता से पीड़ित होते ही हैं।"

4. उपर्युक्त कसौटी, जिसका दूसरे शब्दों में अर्थ अस्पृश्यता की घृणित प्रथा पर आधारित भेदभाव है, अनुसूचित जातियों को विनिर्दिष्ट करने के प्रयोजन के लिए उपयुक्त प्रतीत होती है। तथापि, अनुसूचित जातियों की सूचियों के बारे में कुछ विसंगतियां देखी गई हैं, जो निम्नलिखित हैं—

(1) कुछ समुदाय ऐसे हो सकते हैं जो अस्पृश्यता और सामाजिक निर्योग्यता की प्रथा से पीड़ित हैं और किसी राज्य की अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित नहीं किए गए हैं। इसके लिए पश्चिम बंगाल से एक उदाहरण लिया जा सकता है। कलकत्ता और पश्चिमी बंगाल के अन्य स्थानों में रह रहे डोम समुदाय के व्यक्ति काफी संख्या में हैं। इनमें से अधिकांश **बिहार** तथा **उत्तर प्रदेश** के प्रवासी हैं। वे दीर्घकाल से पश्चिम बंगाल में रह रहे हैं और उस राज्य की अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल नहीं किए गए हैं।

(2) कुछ ऐसे समुदाय हैं जो अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित हैं यद्यपि उन्हें स्वतंत्रता पूर्व अवधि के दौरान मूल आदिवासी माना गया था और अन्य राज्यों में स्वतंत्रता के बाद उन्हें अनुसूचित जनजातियों के रूप में घोषित भी किया जा चुका है। उदाहरण के लिए **उत्तर प्रदेश** के दक्षिणी भाग में 10 से अधिक आदिवासी समुदाय हैं जिन्हें अनुसूचित जनजातियों के रूप में घोषित नहीं किया गया है और इसके बजाय इन्हें अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल किया गया है। ये समुदाय हैं अगरिया, बगा,

भुईया, चर्रा, गोंड, खरवार, कोल, कोरवा, मझवार, पंखा (यह पनिका होना चाहिए) और महारया। यह उस स्थिति का विशिष्ट रूप है, जिनमें से संयोगवश प्रशासनिक सीमा रेखा होकर गुजरती है, विभाजित हो जाते हैं और कालक्रम संयोग से उस रेखा के एक ओर के लोग आदिवासी समुदाय के रूप में मान्यता प्राप्त कर लेते हैं जबकि उस रेखा के दूसरी ओर ऐसे रूप में मान्यता प्राप्त नहीं कर पाते हैं चाहे वे अन्यथा सभी प्रकार से उन जैसे ही क्यों न हों।

वास्तव में 1967 तक उत्तर प्रदेश में कोई भी अनुसूचित जनजातियां मान्यताप्राप्त नहीं थीं। जब 1976 में संसद में एक अधिनियम के माध्यम से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूची का संशोधन किया गया था, तब भी यह गंभीर विसंगति दूर नहीं की गई थी। यह आशा की जाती है कि अगली बार जब भी ये सूचियां संसद द्वारा संशोधित की जाती हैं, इस ओर इसी प्रकार की अन्य विसंगतियों को दूर किया जायेगा।

अनुसूचित जनजातियों के लिए कसौटी

5. अनुसूचित जातियों के मामले के विपरीत, जिसमें किसी समुदाय की स्थिति को अनुसूचित जाति के रूप में निर्धारित करने के लिए कुछ निश्चित कसौटियां अपनाई गई हैं, किसी समुदाय का अनुसूचित जनजाति के रूप में निर्धारण करने के लिए कुछ निश्चित कसौटियों को अपनाने और उन कसौटियों को व्यावहारिक प्रयोग में लाने का प्रश्न जटिल है। "अनुसूचित जनजातियाँ" पद पहली बार केवल संविधान में प्रयोग हुआ है और इससे पहले स्वतंत्रता पूर्व के समय में आदिम आदिवासी, पिछड़े आदिवासी इत्यादि पदों का प्रयोग होता था। इस पर दृष्टिपात करते हुए यह उल्लेखनीय है कि उपनिवेशवादी शासकों की दृष्टि में लगभग सारी भारतीय जनता ही पिछड़ी हुई अथवा आदिम या असभ्य थी और जनजाति शब्द का प्रयोग वस्तुनिष्ट अथवा वैज्ञानिक तरीके से करने में आवश्यक सावधानी नहीं बरती गई थी। तथापि, पूरे संसार के आदिम समाजों के संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि किसी जनजाति की कोई सार्वजनीन परिभाषा नहीं है जो सभी समाज-वैज्ञानिकों को स्वीकार्य हो। किन्तु भारतीय संदर्भ में प्रसिद्ध भारतीय मानव-विज्ञानी स्वर्गीय डॉ० डी० एन० मजूमदार द्वारा दी गई जनजाति की परिभाषा सर्वाधिक स्वीकार्य है। डॉ० मजमदार द्वारा दी गई जनजाति की परिभाषा का हिन्दी रूपान्तर इस प्रकार हो सकता है :

> "जनजाति सामाजिक व्यक्तियों का वह समूह है जो एक विशिष्ट भू-भाग से संबंधित है, जिसमें दूसरे समूहों के साथ विवाह वर्जित है, जिसमें कार्यों में कोई विशिष्टीकरण नहीं है, जिसका नियंत्रण जनजाति के अधिकारियों, चाहे वे वंशानुक्रम से हों अथवा अन्यथा, द्वारा होता है, जिसकी भाषा या बोली एक होती है, जो अन्य जनजातियों या जातियों से सामाजिक भिन्नता रखता है, परन्तु ऐसे किसी लांछन से मुक्त होती है जो जाति के ढांचे के मामले में लगा होता है, जो जनजातीय परम्पराओं, विश्वासों और प्रथाओं का अनुसरण करता है, जो विदेशों से आए विचारों को अपनाने में उदार नहीं होता है, जो इन सभी से अधिक अपने मूलवंश की सजातीयता और भू-भाग की एकता के प्रति जागरूक होता है।"

6. यह सत्य है कि विभिन्न कारकों तथा बलों और बदलाव के उन भिन्न प्रक्रमों के कारण, जिनमें से विभिन्न आदिवासी समुदाय गुजरते रहे हैं, आज की एक भारतीय जनजाति डॉ० मजूमदार की परिभाषा में सम्मिलित सभी अपेक्षाओं अथवा लक्षणों पर पूरी नहीं उतर सकती है। किन्तु हम कह सकते हैं कि यदि कोई समुदाय इन लक्षणों में से अधिकांश को पूरा करता है तो, उसे एक जनजाति माना जा सकता है। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त की पहली रिपोर्ट (1951) में यह बताया गया था कि राज्य सरकारों से यह अनुरोध किया गया था कि वे ऐसे परीक्षण सुझाएं जिनसे यह निर्धारित किया जा सके कि किन जनजातियों को अनुसूचित जनजातियां माना जाए। उस रिपोर्ट के परिशिष्ट 4 में 14 राज्य सरकारों द्वारा सुझाई गई कसौटियां बताई गई थीं। उन्होंने परस्पर विरोधी विचार प्रस्तुत किए थे। तथापि, निम्नलिखित विशेषताएं विभिन्न राज्यों में जनजातियों के लिए सामान्य प्रतीत हुई थीं—

(1) आदिवासी मूल का होना

(2) जीवन का आदिम तरीका तथा दूरवर्ती और दुर्गम्य क्षेत्रों में बसे होना

(3) सब प्रकार से सामान्य पिछड़ापन

7. प्रथम आयुक्त, श्री एल० एम० श्रीकान्त ने यह सुझाव दिया था कि सरकार द्वारा एक विशेष समिति नियुक्त की जानी चाहिए जो अनुसूचित जनजातियों को पुनः विनिर्दिष्ट किए जाने की दशा में प्रयोग में लाने के लिए एक सामान्य सूत्र तैयार करने की दृष्टि से इस मसले का आगे मथन करे। उस सुझाव पर सरकार की ओर से कोई निश्चित प्रत्युत्तर नहीं दिया गया था। पश्चातवर्ती दशकों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूचियों में संशोधन 1956 तथा 1976 में संसद के अधिनियमों द्वारा किए गए थे। यद्यपि, इन सूचियों में कानून के उपबन्ध के अनुसार ही परिवर्तन किए गए थे, परन्तु इस प्रयोजन के लिए अपनाई गई प्रक्रिया यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त कठोर नहीं थी कि उन अनुसूचियों में शामिल किए गए समुदाय ऊपर निर्दिष्ट कसौटियों को पूरा करते थे अथवा

उस पूरे राज्य में अपेक्षित विशेषताएं रखते थे जिसमें वे अनुसूचीबद्ध किए गए थे। इसलिए कुछ ऐसे उदाहरण हैं, जब एक समुदाय यद्यपि वह जनजाति संबंधी कोई विशेषताएं नहीं रखता है तो भी अनुसूचित जनजातियों में स्थान प्राप्त कर सकता है। सामाजिक वास्तविकता तथा विधिक स्थिति के बीच यह बेसुरापन जितनी जल्दी दूर किया जा सके उतना ही अच्छा है।

8. यह सुझाव दिया जाता है कि अनुसूचियों में सम्मिलित किए जाने अथवा उनमें सम्मिलित नामों की व्याख्या से संबंधित सभी दावों की जांच स्पष्ट रूप से बनाई गई एक प्रक्रिया के अनुसार की जानी चाहिए। इसमें अन्य बातों के साथ साथ अपरिहार्य रूप से ऐसी जांच भी सम्मिलित होनी चाहिए जो स्थानीय स्तर पर अन्वेषकों के एक सक्षम दल द्वारा की जाए। जिसमें उस क्षेत्र की अन्य अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सदस्यों का मत भी शामिल होना चाहिए। उनके निष्कर्षों को राष्ट्रीय स्तर पर अनुभव प्राप्त समाज वैज्ञानिकों की विशेष रूप से गठित समिति के सामने रखा जाना चाहिए। विशेष अधिकारी (अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त) को भी इस जांच के निष्कर्षों से अवगत कराया जाना चाहिए और यदि आवश्यक हो, तो वे अपना मत दे सकते हैं। इस जांच के निष्कर्षों तथा विशेषज्ञ समिति और विशेष अधिकारी के मतों को, राष्ट्रपति के आदेशों में संशोधन करने के लिए विधेयक पर विचार करते समय संसद के समक्ष रखा जा सकता है। यह अत्यधिक महत्वपूर्ण बात है कि जब तक अस्पृश्यता की कसौटी का स्पष्ट रूप से और अपरिवर्तनीय रूप से समाधान नहीं कर लिया जाता है तब तक अनुसूचित जातियों की किसी सूची में और जब तक आदिवासी विशेषताओं को कसौटी का स्पष्ट तथा अपरिवर्तनीय रूप से समाधान नहीं कर लिया जाता है तब तक अनुसूचित जनजातियों की किसी सूची में कोई वृद्धि न की जाए।

राष्ट्रपति के आदेशों के संशोधनों का पुनरावलोकन

9. अनुच्छेद 341 तथा 342 के खंड 2 के अनुसार राष्ट्रपति के आदेशों द्वारा प्रख्यापित की गई अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूचियों में कोई संशोधन केवल संसद के अधिनियमों के माध्यम से ही प्रभावी किया जा सकता है। ऐसे संशोधन अब तक (रिपोर्टाधीन वर्ष तक) दो बार 1956 में तथा पुन: 1976 में किए गए थे। सन् 1950 में संविधान को जारी करते समय भाग "क", भाग "ख" तथा भाग "ग" राज्य थे और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूचियां विभिन्न राज्यों के बारे में जारी की गई थीं। तत्पश्चात 1956 में राज्यों का पुनर्गठन किया गया था जिसमें भाग "क" तथा भाग "ख" राज्यों का अन्तर समाप्त किया गया था और भाग "ग" राज्यों का संघ राज्य क्षेत्रों के रूप में पुन: नामकरण किया गया था। इसके अतिरिक्त लोगों के भाषाई विभाजन के आधार पर एक बड़े पैमाने पर भू-भाग एक राज्य से दूसरे राज्य को हस्तांतरित किए गए थे। जहां तक अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूचियों का संबंध है भारत सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा यह सुनिश्चित करने के लिए कोई ब्यौरे-वार कार्य नहीं किया गया था कि पुनर्गठन के बाद किसी मूल अविभक्त राज्य के किन समुदायों को उस राज्य से संबंधित सूचियों में बनाए रखा जाए अथवा किन समुदायों को उस मूल अविभक्त राज्य की सूचियों में नए राज्य की सूचियों में कतिपय भू-भागों या जिलों के हस्तांतरण के साथ हस्तांतरित किया जाए। उदाहरण के लिए, हैदराबाद भाग "ख" राज्य था जो राज्य पुनर्गठन के बाद समाप्त हो गया था। तत्कालीन हैदराबाद राज्य के तेलंगाना क्षेत्र को वर्तमान आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाने के लिए तत्कालीन मद्रास राज्य से हस्तांतरित हुए आन्ध्र क्षेत्र के साथ एकीकृत कर दिया गया था। हैदराबाद राज्य के कुछ जिले अर्थात् औरंगाबाद, परभनी, नानदेड, भिड तथा उस्मानाबाद तत्कालीन बम्बई राज्य को हस्तांतरित कर दिए गए थे और साधारणतया मराठवाड़ा क्षेत्र कहे जाते हैं। इसी प्रकार से हैदराबाद राज्य के कुछ जिले अर्थात् गुलबर्गा रायचूर तथा बीदर तत्कालीन मैसूर राज्य को हस्तांतरित कर दिए गए थे। तत्कालीन हैदराबाद राज्य की सूची में 32 अनुसूचित जातियां थीं। जिस समय संसद ने 1956 में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूचियों में संशोधन किया था तब ये सभी 32 अनुसूचित जातियां मराठवाड़ा के पांच जिलों के बारे में तत्कालीन बम्बई राज्य की अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित की गई थीं और हैदराबाद राज्य से हस्तांतरित तीन जिलों के बारे में तत्कालीन मैसूर राज्य में भी सम्मिलित की गई थीं। यह संभाव्य था कि तत्कालीन हैदराबाद राज्य में अनुसूचित जातियों के रूप में घोषित ये सभी 32 समुदाय उस पूरे राज्य में समान रूप से वितरित नहीं थे और इन समुदायों में से कुछ उस राज्य से बम्बई तथा मैसूर राज्यों को हस्तांतरित क्षेत्रों में अस्तित्व में ही नहीं रहे होंगे। उस स्थिति में अस्तित्व में ही न रहे उन समुदायों को बम्बई तथा मैसूर राज्यों के हस्तांतरित क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों के रूप में घोषित नहीं किया जाना चाहिए था। किन्तु स्पष्ट रूप से यह कार्य नहीं किया गया था और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की इन सूचियों को ज्यों का त्यों अन्य राज्यों के हस्तांतरित क्षेत्रों में अपना लेने का आसान तरीका अपनाया गया था। वर्तमान मध्यप्रदेश के संबंध में इसी प्रकार के उदाहरण उद्धृत किए जा सकते हैं।

10. अनुसूचित जातियां तथा जनजातियां (संशोधन) विधेयक 1967 लोक सभा में अगस्त 1967 में प्रस्तुत किया गया था। उसके बाद श्री अनिल के० चंदा (जो उससे पहले 1962 से 1966 तक अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के आयुक्त के पद पर रह चुके थे) की अध्यक्षता में संसद के दोनों सदनों की एक संयुक्त प्रवर समिति

गठित की गई थी। उस संयुक्त प्रवर समिति ने बड़े पैमाने पर दौरे किए थे और विषय पर विचार-विमर्श किया था। परन्तु संयुक्त प्रवर समिति द्वारा रिपोर्ट दिए जाने तथा विधेयक पर संसद में चर्चा होने से पूर्व, चौथी लोक सभा भंग कर दी गई थी और विधेयक समाप्त हो गया था।

11. अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूचियां अनुसूचित जातियां तथा अनुसूचित जनजातियां आदेश (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा सन् 1976 में संशोधित की गई थीं जो कि 27-7-1977 से लागू हुआ था। परन्तु इस संशोधन अधिनियम में केवल क्षेत्र प्रतिबंधों का आंशिक प्रश्न लिया गया था और ऐसे प्रतिबंधों को हटाने के लिए एक तदर्थ निर्णय लिया गया था। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का प्रतिनिधित्व करने वाले कुछ वर्गों के अनुसार क्षेत्र प्रतिबन्ध स्थानिक तथा सामाजिक गतिशीलता के लिए अवरोध के रूप में कार्य कर रहे थे। तदनुसार अधिकांश मामलों में क्षेत्र प्रतिबन्धों को हटा दिया गया था, तथापि कुछ मामलों में ऐसे प्रतिबंधों को बरकरार रखा गया था और वे आज तक जारी हैं। उदाहरण के लिए धोबी मध्य-प्रदेश के 45 जिलों में से केवल तीन में अनसूचित जाति हैं। ये तीन जिले भोपाल, रायसेन और सिहोर हैं जिनमें तत्कालीन भोपाल का भाग "ग" राज्य गठित होता था जिसमें धोबी अनसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित थे। अन्य तीन इकाइयों, अर्थात् पुराना मध्यप्रदेश (भाग क राज्य), मध्य भारत (भाग ख राज्य) और विंध्यप्रदेश (भाग ग राज्य) जो वर्तमान मध्य प्रदेश गठित करने के लिए भोपाल सहित विलय हो गए थे, में धोबी उनकी अनुसूचित जातियों की सूचियों में सम्मिलित नहीं थे।

12. उक्त क्षेत्र प्रतिबन्ध हटाए जाने के परिणामस्वरूप कुछ विसंगत स्थितियां उत्पन्न हो गई थीं जैसे गजरात में। तत्कालीन बम्बई राज्य में मोची, डंग्स सहित केवल 14 जिलों में अनुसूचित जाति थी परन्तु यह उन अन्य जिलों में से किसी में भी अनुसूचित जाति नहीं थी जो तत्पश्चात वर्तमान गुजरात राज्य का निर्माण करने के लिए पृथक किए गए थे। इस प्रकार गजरात की अनसूचित जातियों तथा जनजातियों की अलग सूचियां जारी होने की तारीख से 1976 तक मोची केवल डंग्स जिले में अनुसूचित जाति मानी जाती थी। वास्तव में गुजरात में मोची समुदाय के सदस्य अस्पृश्य नहीं माने जाते हैं और उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति गुजरात की अनुसूचित जातियों से अधिक बहतर है। तथापि, 1976 में क्षेत्र प्रतिबन्ध हटाए जाने के कारण मोची को पूरे गुजरात में अनसूचित जाति के रूप में मान्यता मिल गई थी जिस कारण उस राज्य के अनुसूचित जातियों में बहुत रोष उत्पन्न हो गया था।

13. चूंकि 1976 के (संशोधन) अधिनियम में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की वर्तमान सूचियों में न तो कोई नई जाति अथवा जनजाति शामिल की गई थी, और न कोई उससे निकाली गई थी इसलिए छठी लोक सभा द्वारा अनुसूचित जातियों और जनजातियों की व्यापक सूचियां बनाने का प्रश्न जो बहुत समय से लम्बित पड़ा था, संसद के दोनों सदनों की एक संयुक्त समिति को निर्दिष्ट किया गया था तथापि, इस समिति का अस्तित्व 22-8-1979 को राष्ट्रपति द्वारा छठी लोकसभा भंग किए जाने के साथ ही समाप्त हो गया था।

कुछ वर्तमान प्रवृत्तियां

14. जहां एक ओर हिन्दू जातियां इस बात के लिए कम उत्सुक होती हैं कि उन्हें अनुसूचित जातियों के रूप में मान्यता दी जाए, वहीं दूसरी ओर देश के बहुत से भागों में कतिपय हिन्दू जातियों के सदस्य स्वयं ही अपने को अनुसूचित जनजाति के व्यक्ति के रूप में पहचाने जाने का प्रयत्न करते हैं और उससे कपटपूर्वक अनुसूचित जनजातियों को दिये जाने वाले लाभों को प्राप्त करते हैं जिसके लिए वे वास्तव में हकदार नहीं हैं। इस प्रयत्न में उनके समुदायों के नामों और कतिपय अनुसूचित जनजातियों के नामों में ध्वन्यात्मक समानताएं उनकी सहायता करती हैं। दृष्टांत के रूप में ऐसे मामलों की एक सूची नीचे दी गई है--

आंध्र प्रदेश

(1) **बेड जंगम, बड़गा जंगम**: सन् 1956 की सूची में यह समुदाय केवल तेलंगाना क्षेत्र में अनुसूचित जाति के रूप में अधिसूचित किया गया था। सन् 1976 में क्षेत्र प्रतिबन्ध समाप्त किए जाने के बाद अब यह समुदाय पूरे राज्य में अनसूचित जाति के रूप में माना जाता है। इसके परिणामस्वरूप जंगम जाति के सदस्य धोखे से बेड/बड़गा जंगम अनसूचित जाति से होने का दावा करते हैं।

(2) **कोंड कापु तथा कोंडारेड्डि**: ये समदाय आन्ध्र प्रदेश की अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित हैं। तेलगु में "कोंड" का अर्थ पहाड़ी है। इसलिए यह स्पष्ट है कि इन समुदायों के सदस्य पहाड़ियों में रहते हैं। परन्तु मैदानों में रहने वाली कापु तथा रेड्डी हिन्दू जातियों के कुछ सदस्य अनुसूचित जनजाति के झूठे प्रमाण-पत्र प्राप्त करके अनुसूचित जनजातियों के व्यक्ति के रूप में घुसपैठ करने का प्रयत्न करते हैं।

यह आश्चर्य की बात है कि तमिलनाडू में भी कुछ लोग कोंड कापु/कोंडारेड्डि होने के रूप में अनसूचित जनजातियों के झूठे प्रमाण-पत्र प्राप्त करते हैं, क्योंकि जैसा पहले बताया जा चुका है तत्कालीन मद्रास राज्य की अनुसूचित जनजातियों की सूची की पूर्ण रूप से संवीक्षा नहीं की गई थी और यद्यपि यह बताया गया है कि कोंड कापु तथा कोंडारेड्डि समदाय

केवल आन्ध्र प्रदेश में रहते हैं, इन्हें राज्यों के पुनर्गठन के बाद मद्रास राज्य की सूची में रखा गया था। 1961 की जनगणना के अनुसार मद्रास राज्य में कोंडरेड्डि के सदस्यों की कुल संख्या केवल 8 थी। सन् 1971 की जनगणना में यह संख्या 855 हो गई थी जिसका स्पष्ट कारण यह था कि 10 वर्ष की अवधि के अन्तराल में तमिलनाडु में कुछ लोगों ने, जो वास्तव में कोंडरेड्डि के नहीं थे स्वयं कोंडरेड्डि के होना घोषित किया था।

बिहार

(3) **गोंड:** गोंड बिहार में एक अनुसूचित जनजाति है। गोंड भारत में एक सबसे बड़ी अनुसूचित जनजाति है। इसकी जनसंख्या 60 लाख से अधिक है। गोंड लोगों का मुख्य संकेन्द्रण मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश तथा महाराष्ट्र है परन्तु उनकी गणना अन्य राज्यों जैसे बिहार, उड़ीसा तथा पश्चिम बंगाल में भी अनुसूचित जनजाति के रूप में की गई है। गोंडी भाषा/बोली द्रविड़ भाषा परिवार की है। यह सच है कि अब गोंड लोगों के कुछ वर्ग अपनी मातृभाषा को लगभग भूल गए हैं और अब वे क्षेत्रीय भाषा अथवा हिन्दी की स्थानीय बोली का प्रयोग करते हैं जैसा मध्य प्रदेश के कुछ भागों में है। तथापि, वे अपने परंपरागत रीति-रिवाज तथा प्रथाएं अपनाए हुए हैं। बिहार के पश्चिमी जिलों में अर्थात् चंपारण, सारण, सिवान, गोपालगंज, भोजपुर, आदि में एक पिछड़ी हिन्दू जाति है जो गोंड़ (Gond) कहलाती है। इस जनजाति समुदाय का नाम तथा पिछड़े वर्ग समुदाय का नाम अंग्रेजी में एक तरह से ही लिखा जाता है। केवल देवनागरी में पिछड़ी हिन्दू जाति का नाम लिखने में अक्षर ड के नीचे बिन्दु लगाया जाता है। इस पिछड़ी हिन्दू जाति में आदिवासी जनजाति के कदापि कोई लक्षण नहीं हैं और गोंड़ जनजाति के साथ इसके कोई संपर्क भी नहीं हैं। इनका परंपरागत व्यवसाय रेत में धान को भूनना है, हिन्दी क्षेत्र में इस व्यवसाय को भड़भूजा कहा जाता है। यह पिछड़ी जाति उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों में भी पाई जाती है। उत्तर प्रदेश के दक्षिणी भाग में, मुख्यत: मिर्जापुर जिले में दुद्धी क्षेत्र के लगभग 12 आदिवासी समुदाय, अनुसूचित जनजातियों की सूची में शामिल नहीं किए गए थे और इसके विपरीत वे उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जाति के रूप में घोषित किए गए थे। अब इस पिछड़ी हिन्दू जाति गोंड़ के सदस्य बिहार में सक्षम प्राधिकारियों से अनुसूचित जनजाति के तथा उत्तर प्रदेश के प्राधिकारियों से अनुसूचित जाति के झूठे प्रमाणपत्र प्राप्त करने का प्रयत्न करते है। यह बताया गया है कि इस पिछड़ी हिन्दू जाति के हजारों सदस्यों ने बिहार/उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जनजाति/अनुसूचित जाति के झूठे अथवा अनियमित प्रमाण-पत्र प्राप्त किए थे।

(4) **खरवार:** खरवार बिहार में एक अनुसूचित जनजाति है जो अधिकांश रूप से पलामू जिले में पाई जाती है। बिहार में एक पिछड़ी हिन्दू जाति है जो कहार कहलाती है। प्रत्यक हिन्दू जाति के कुछ **गोत्र** होते हैं और ये **गोत्र** प्राय: एक से अधिक जाति समूहों द्वारा प्रयोग में लाए जाते हैं। कहार जाति के गोत्रों में से एक गोत्र खरवार है। इस बात का अनुचित लाभ उठाते हुए पलामू से दूर के जिलों से भी जहां पर खरवार आदिवासी के सदस्यों के रहने की कोई संभावना ही नहीं है कहार जाति के कुछ सदस्यों ने खरवार के नाम से अनुसूचित जनजाति के झूठे प्रमाण-पत्र प्राप्त किए हैं।

कर्नाटक

(5) **मालेरू:** कर्नाटक के शिमोगा तथा चिकमगलूर जिलों में मालेरू नाम की एक अनुसूचित जनजाति है। यह एक छोटा आदिवासी समुदाय है जिसकी आर्थिक स्थिति बहुत कमजोर है। उसी क्षेत्र में मालेरू नाम का एक समुदाय है जो ब्राह्मण पुरुषवंश परंपरा का दावा रखते हुए एक संकर जाति मानी जाती है। इस जाति के सदस्य अपेक्षाकृत धनी हैं और मन्दिरों से संबद्ध हैं। उनमें आदिवासियों के कदापि कोई लक्षण नहीं हैं। इस आदिवासी समुदाय का नाम तथा इस हिन्दू जाति का नाम अंग्रेजी में साधारण तौर पर एक ही तरह से लिखा जाता है। केवल कन्नड़ अथवा देवनागरी लिपि में हिन्दू जाति के नाम की वर्तनी आदिवासी समुदाय के नाम की वर्तनी से मामूली सी भिन्न होगी। यह बताया गया है कि पर्याप्त संख्या में मालेरू हिन्दू जाति के व्यक्ति मालेरू जनजाति के नाम से अनुसूचित जनजाति के झूठे प्रमाण-पत्र प्राप्त करते हैं।

(6) **नायक अथवा नायकडा:** यह गुजराती भाषी एक छोटी जनजाति है जो गुजरात तथा उसके साथ लगे महाराष्ट्र के कुछ जिलों में रहती है। यह तत्कालीन बम्बई राज्य की अनुसूचित जनजातियों की मूल सूची में सम्मिलित थी। 1956 में राज्यों के पुनर्गठन के समय जब चार जिले अर्थात् बेलगाम, बीजापुर, धारवाड़ तथा कनारा बंबई से तत्कालीन मैसूर राज्य को हस्तांतरित किए गए थे तो इन चार हस्तांतरित जिलों के संबंध में मैसूर राज्य में 19 जनजातियों की एक पूरी सूची भी अपना ली गई थी। परन्तु वास्तव में सच्चाई यह है कि कर्नाटक

के इन चार जिलों में इस आदिवासी समुदाय का कोई सदस्य नहीं रहता है। तदुपरान्त जब 1976 में क्षेत्र प्रतिबंध हटाते हुए दूसरा संशोधन हुआ तो, यह विशिष्ट समुदाय पूरे वर्तमान कर्नाटक राज्य में अनुसूचित जाति के रूप में मान्यता प्राप्त हो गया था। परिणामस्वरूप, आदिवासियों से इतर कतिपय समुदायों के सदस्य, जैसे बेदार या बेराड और बाल्मीकि, स्वयं ही नायेक अनुसूचित जनजाति के सदस्य होना घोषित करते रहे हैं। वस्तुतः ये दोनों समुदाय विमुक्त (डिनोटीफाइड) समुदाय हैं (भूतपूर्व अपराधशील जनजातियां)। इससे पूर्व बेदार अथवा बेराड समुदाय बेलगाम, बीजापुर और धारवाड़ में अपराधशील जनजातियों की तत्कालीन सूची में सम्मिलित था। इसी प्रकार बाल्मीकि समुदाय मैसूर राज्य के बेलारी जिले में अपराधशील जनजातियों की तत्कालीन सूची में सम्मिलित था। इन दोनों समुदायों के बहुत से सदस्य नायक उपनाम का प्रयोग करते हैं और इसी कारण वे अनुसूचित लाभ उठाते हैं और स्वयं को नायेक अनुसूचित जनजाति के सदस्य होना घोषित करते हैं और अनुसूचित जनजातियों के झूठे प्रमाण-पत्र प्राप्त करते हैं। **यहाँ यह उल्लेखनीय है कि किसी उपनाम को किसी जनजाति अथवा समुदाय का नाम समझ लेने की भूल न की जाए।** भारत के किसी नागरिक पर कोई भी उपनाम अपनाने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। अतः उपनाम आवश्यकीय रूप से किसी व्यक्ति की जाति या उसके समुदाय का सूचक नहीं है। नायेक जम्मू-काश्मीर से लेकर तमिलनाडु तक सारे भारत में प्रयोग होने वाली पदवियों तथा उपनामों में से एक है। नायक उपनाम लिखने वाला व्यक्ति हिन्दू भी हो सकता है, मुसलमान भी और ईसाई भी। उड़ीसा जैसे राज्य में वह अनुसूचित जनजाति अथवा अनुसूचित जाति या हिन्दू जाति का हो सकता है। अतः केवल इस कारण से ही कि कर्नाटक में कोई व्यक्ति नायेक उपनाम लिखता है, वह कानूनी रूप से नायेक अनुसूचित जनजाति का होने का दावा नहीं कर सकता है। किन्तु दुर्भाग्यवश यह अवांछनीय प्रथा वर्ष-प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है और अब नायेक उपनाम के अन्तर्गत बेतहाशा लोग आ गए हैं। इस प्रथा का एक परिणाम यह है कि कर्नाटक में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या 1971 में केवल 2.31 लाख थी और 1981 में यह 18.25 लाख रिकार्ड की गई थी। यह बताया गया है कि यह मुख्य रूप से इसलिए हुआ है क्योंकि 1981 की जनगणना में एक बड़ी संख्या में बेदार जाति के सदस्यों ने, स्पष्टतः संगठित तरीके से स्वयं को अनुसूचित जनजातियों के व्यक्ति होना घोषित किया है। आगे यह भी बताया गया है कि एक बड़ी संख्या में बेदार जाति के व्यक्ति अनुसूचित जनजाति के झूठे प्रमाण-पत्रों के आधार पर सरकारी सेवाओं में आ गए हैं।

केरल

(7) **तण्डाल** तण्डाल केरल में मालाबार जिले को छोड़कर पूरे राज्य में अनुसूचित जातियों की 1956 की सूची में सम्मिलित थी। 1976 में यह क्षेत्र प्रतिबंध हटा दिया गया था जिसके परिणामस्वरूप अब राज्य के उत्तरी भाग के कुछ व्यक्ति, जो तण्डाल अनुसूचित जाति के नहीं हैं और इझावा समुदाय के मुखिया होने के कारण "तण्डाल" कहलाते हैं, उनके बारे में यह बताया गया है कि वे अनुसूचित जाति के व्यक्ति होने का झूठा दावा कर रहे हैं। केरल के इस भाग में इझावा मुखियाओं के लिए तण्डाल पदवी का प्रयोग किया जाता है।

महाराष्ट्र

(8) **धोबा** धोबा महाराष्ट्र में गोंड की उप-जनजाति है। इस कारण पिछड़े वर्ग धोबी (कपड़े धोने वाले) के कुछ सदस्य गोंड अनुसूचित जनजाति के सदस्य के रूप में घुसपैठ करने का प्रयास करते हैं।

(9) **हलबा, हलबी** हलबा, हलबी महाराष्ट्र में अधिकांशतः नाग-विदर्भ क्षेत्र में एक अनुसूचित जनजाति है जिसे 1956 में पुराने मध्यप्रदेश से तत्कालीन बम्बई राज्य को हस्तांतरित किया गया था। दूसरे शब्दों में यह जनजाति पश्चिमी महाराष्ट्र, मराठवाड़ा तथा दक्षिणी महाराष्ट्र में नहीं पाई जाती है। महाराष्ट्र में एक पिछड़ी हिन्दू जाति कोष्ती है जिसका परम्परागत व्यवसाय बुनना है। कोष्तियों का एक वर्ग स्वयं को हलबा कोष्ती कहता है और अनुसूचित जनजाति हलबा के सदस्य होने का दावा करता है।

(10) **महादेव कोली** महादेव कोली महाराष्ट्र में एक जनजाति है। किन्तु हिन्दू कोली जाति (मछुआरे) के सदस्य महादेव कोली होने का झूठा दावा करते हैं।

(11) **माना** जैसा कि पहले बताया जा चुका है, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश की सूचियों में अनुसूचित जनजाति गोंड से संबंधित प्रविष्टि के सामने 52 पर्यायों/उप जनजातियों का उल्लेख किया गया है। इन उप जनजातियों में से एक माना नाम की जनजाति है। नागपुर के चारों ओर महाराष्ट्र के कुछ भागों में माना नाम की एक पिछड़ी हिन्दू जाति भी है, जिसमें जनजातियों का कोई लक्षण नहीं है। परन्तु

इसके कुछ सदस्य इसका लाभ उठाने का प्रयत्न करते हैं कि उक्त माना अनुसूचित जनजाति गोंड का एक वर्ग है और इस प्रकार से अनुसूचित जनजातियों के झूठे प्रमाण-पत्र प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं।

(12) **ठाकुर, ठाकर, का ठाकुर, का ठाकर, मा ठाकुर, मा ठाकर** यह 1956 की सूची में अहमदनगर जिले में और कोलाबा, नासिक, पूना और थाना जिलों के कुछ तालुकों में एक अनुसूचित जनजाति थी। 1976 में क्षेत्र प्रतिबंध के हटने के बाद अब यह पूरे राज्य में अनुसूचित जनजाति मानी जाती है और राजपूत/ठाकुर जाति के कुछ सदस्य ठाकर अथवा ठाकुर अनुसूचित जनजाति के होने का झूठा दावा करते हैं।

उड़ीसा

(13) **देवर** देवर उड़ीसा की अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित है परन्तु इस समुदाय का कोई भी सदस्य उस राज्य में स्थायी रूप से नहीं रहता है। तथापि, 1971 की जनगणना में उनकी जनसंख्या 3,736 संगणित की गई थी। 1981 की जनगणना में उनकी जनसंख्या बढ़कर 4,205 हो गई थी और आश्चर्यजनक रूप से यह जनसंख्या शहरों में (2192) ग्रामों (2,058) से अधिक थी। साधारण तौर पर यह किसी अनुसूचित जाति अथवा जनजाति के लिए एक असाधारण घटना थी।

देवर समुदाय मूलरूप से मध्य प्रदेश के छतीसगढ़ क्षेत्र में रहने वाला समुदाय है और इसकी संख्या छोटी है परन्तु यह अपने घुमन्तु जीवन तथा नृत्य और वाद्य के कृत्यों के कारण सहज ही अलग दिखता है। यह अधिक संभव है कि मध्य प्रदेश के कुछ देवर उड़ीसा की अनुसूचित जातियों की सूची तैयार करने के समय उड़ीसा के निकटवर्ती क्षेत्रों में जैसे सम्बलपुर में चले गए हों। वे उड़िया नहीं बोलते हैं। यदि उचित सावधानी बरती जाती तो देवर उड़ीसा की अनुसूचित जातियों की सूची मे सम्मिलित नहीं हो पाती। तथापि, उड़ीसा के मछुआरे समुदाय के सदस्य जो सामान्यतः केवट अथवा कैवर्त कहे जाते हैं देवर अनुसूचित जाति के सदस्य होने का दावा करते हैं। इसका कारण यह था कि उनके समुदाय के एक पर्याय का नाम धीवर (हिन्दी में धीवर) है। यद्यपि, यह शब्द सामान्यतः प्रयोग में नहीं लाया जाता है परन्तु उन्होंने धीवर और देवर में ध्वन्यात्मक समानता का लाभ उठाया। उड़ीसा के उच्च न्यायालय ने भी उनके तर्क को स्वीकार किया था और यह बताया गया है कि भारत सरकार ने इस दावे का प्रभावी ढंग से विरोध करने के लिए आवश्यक कदम नहीं उठाए थे। गृह मंत्रालय ने सं० बी० सी०–12016/22/80–एस० सी० तथा बी० सी० डी०–4, दिनांक 23–5–1981 द्वारा इस प्रभाव के आदेश जारी किए थे कि उड़ीसा के धीवर/केवट/कैवर्त समुदाय के सदस्यों को अनुसूचित जाति के प्रमाण-पत्र जारी किए जा सकते थे परन्तु केवल देवर के नाम पर जारी हो सकते थे। इसके फलस्वरूप इस जाति के मछुआरे जाति के व्यक्ति जो कदापि अस्पृश्य नहीं माने जाते हैं और जिनकी आर्थिक स्थिति खराब नहीं है, इस समय अनुसूचित जातियों के लिए वांछित लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

15. जैसा ऊपर विवेचन किया गया है अनुसूचित जनजातियों के होने के झूठे दावे किए जाने की प्रवृत्ति समुदायों के नामों में ध्वन्यात्मक समानताएं होने के कारण तथा आदिवासी समुदायों का विशिष्ट क्षेत्रों से सम्बन्ध निर्धारण करने की कमी के कारण बढ़ती है। इस दृष्टि से संभवतः **यह आवश्यक हो गया है कि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की सूचियां जहां उपयुक्त और आवश्यक हों विशिष्ट क्षेत्रों के संदर्भ से पुनरीक्षित की जाएं,** उदाहरण के लिए, जब यह सुविदित तथ्य है कि मालेरू एक छोटी और पिछड़ी अनुसूचित जनजाति है और जो अनन्य रूप से कर्नाटक के चिकमगलूर तथा शिमोगा जिलों में पाई जाती है तो उस राज्य के दूरवर्ती क्षेत्रों के गैर-आदिवासी लोगों को उस आदिवासी समुदाय के सदस्य होने का दावा करने का अवसर क्यों दिया जाए? ऐसे मामलों में यह अनुभूति हो सकती है कि अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों को अपने पैत्रिक जिलों से उस समय अ० जा० /अ० ज० जा० के प्रमाणपत्र प्राप्त करने में कठिनाई अनुभव हो सकती है जब वे उससे बाहर जाते हैं। यह कठिनाई अन्तर्राज्यीय प्रवासियों को अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के प्रमाण पत्र जारी करने संबंधी गृह मंत्रालय के आदेश सं० बी० सी०–16014/1/82/एस० सी० एण्ड बी० सी० डी०–1 दिनांक 18–11–82 तथा 6–8–1984 के आधार पर ही अन्तर–जिला प्रवास के बारे में आदेश जारी करके दूर की जा सकती है। अब अनुसूचित जातियों/जनजातियों का एक व्यक्ति बिना अधिक परेशानी के उस राज्य के सक्षम प्राधिकारी से जहां वह नौकरी आदि के प्रयोजन से अस्थायी रूप से रह रहा है उसके मूल राज्य के एक विहित प्राधिकारी द्वारा उसके माता/पिता को जारी किए गए अनुसूचित जाति/जनजाति के प्रमाण-पत्र के आधार पर अपने लिए अनुसूचित जाति/जनजाति का प्रमाण-पत्र प्राप्त कर सकता है। **इसी के अनुरूप अनुसूचित जाति जनजाति का वह व्यक्ति और राज्य के एक जिले से उसी राज्य के दूसरे जिले में शिक्षा, रोजगार इत्यादि के प्रयोजन के लिए प्रवास करता है, उस जिले के सक्षम प्राधिकारी से जिसमें वह उस समय रह रहा है उसके मूल जिले के एक विहित प्राधिकारी द्वारा उसके माता-पिता को जारी किए गए अनुसूचित जाति/अनु-सूचित जनजाति के प्रमाण पत्र के आधार पर अपने लिए अनुसूचित जाति/जनजाति या एक प्रमाण पत्र उसे प्राप्त करने की अनुमति दी जाए। भारत सरकार इस प्रभाव के उपयुक्त आदेश जारी करने के लिए विचार कर सकती है।** यदि ऐसा हो जाता है तो अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सूचियां विशिष्ट क्षेत्रों के सन्दर्भ में पुन-रीक्षित किए जाने में ऐसे मामलों कोई में आपत्ति नहीं होनी

चाहिए जसा ऐसा करना बड़े पैमाने पर झूठे प्रमाण-पत्रों के अवसर को रोकना आवश्यक हो। यह बात और अ०जा०/अ० ज० जा० के वास्तविक व्यक्तियों द्वारा अ० जा०/अ० ज० जा० के प्रमाण-पत्र उस समय भी शीघ्रता से प्राप्त करने की आवश्यकता जब वे उस राज्य के अन्य भागों में जाते हैं और केन्द्रीय लाभों के बारे में जब वे देश के अन्य भागों में जाते हैं। ऐसी बातें नहीं हैं जिनका समाधान नहीं हो सकता है ।

16. अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सूचियों में क्षेत्रीय नाम पद्धति का प्रयोग करने से एक दूसरी गंभीर समस्या उत्पन्न हुई है। उदाहरण के लिए हिमाचल प्रदेश की अनुसूचित जनजातियों में कनौरा/किन्नारा सम्मिलित हैं जो किन्नौर जिले के नाम पर आधारित है। उस जिले में बौद्ध जनसंख्या में भी जाति प्रणाली प्रचलित है। उस जिले के स्थायी निवासियों के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति चाहे वह गैर-आदिवासी भी हो उस सूची में प्रयुक्त देशी नामों के कारण अनुसूचित जनजाति का व्यक्ति होने का दावा कर सकता है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश की अनुसूचित जनजातियों की सूची में "जौनसारी" सम्मिलित है जो देहरादून जिले के जौनसार परगने के नाम पर आधारित है। उस जिले के जौनसार और बावर दो परगनों के लोगों ने अपनी बहुपति प्रथा के कारण दीर्घकाल से मानव विज्ञानियों का ध्यान आकर्षित किया है। वे कई जातियों में विभक्त हैं अर्थात् ब्राह्मणों, राजपूत (खाश), बाढी, बाजगी और कोल्टा। इनमें से अन्तिम दो समुदाय गंदे रिवाज के कारण 'अस्पृश्य' माने जाते हैं और तौर से कोल्टाओं की स्थिति गिर रही है क्योंकि वे बंधुआ मजदूर हैं और उनके महिला वर्ग का शोषण किया जाता है और उन्हें अनैतिक व्यापार के लिए मैदानी भागों के शहरों और कस्बों में ले जाया जाता है। केवल कोल्टा और बाजगी ही वास्तव में ऐसे समुदाय हैं जो अपने समुदाय के विशिष्ट नाम से अनुसूचित जनजाति या अनुसूचित जाति के रूप में अभिहित किए जाने की अधिकारी हैं अन्यथा वह लाभ के कोई अवसर प्राप्त नहीं कर पाएगी क्योंकि लाभों पर जौनसारियों के नाम से ब्राह्मणों और राजपूतों का एकाधिकार है। उस क्षेत्र में रह रहे समुदायों के लिए अपनाया गया यह क्षेत्रीय नाम इस आधार पर अपनाया गया था कि उस क्षेत्र में रहने वाले सभी लोगों की एक सामान्य सामाजिक प्रथा थी और उन्हें युक्तियुक्त रूप से इस नाम से वर्गीकृत किया जा सकता था। परन्तु सच्चाई यह है कि अन्य लोग भी काफी संख्या में बाहर से आए थे और वहां बस गए थे जो स्थानीय सामाजिक प्रथा का एक भाग नहीं थे। जब इस विसंगत स्थिति की सरकार को जानकारी हुई तो एक कानूनी व्याख्या अपनाई गई जिससे बाहर से आने वाले सभी व्यक्ति भी अनुसूचित जनजातियों की स्थिति के विशेषाधिकार के लिए हकदार हो गए थे। बहुत थोड़े मामलों में देहरादून शहर के गैर-आदिवासी कुछ सम्पन्न व्यक्तियों ने भी जो चकरोता, एक आकर्षक पर्वतीय स्थान पर या जोनसार बावर-क्षेत्र में किसी अन्य स्थान पर कुछ सम्पत्तियों, मकानों के मालिक थे, 1967 में उत्तर प्रदेश की अनुसूचित जातियों के बारे में राष्ट्रपति के आदेश की प्रख्यापना किए जाने से पूर्व "जोनसारी" अनुसूचित जनजाति का होने का दावा करके अनुसूचित जनजातियों के लिए लिए वांछित लाभ प्राप्त किए थे।

17. अनुसूचित जातियों/जन-जातियों के झूठे प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की बेईमानी हाल में कुछ राज्यों में बड़े पैमाने पर किये जाने लगी है। इस समस्या पर पूरी चर्चा अगली रिपोर्ट में सम्मिलित किए जाने का प्रस्ताव है। तथापि, इस रपोर्ट में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूचियों का पुनरवलोकन किए जाने की आवश्यकता और किन्हीं नई गलतियों से बचने की आवश्यकता पर इसलिए बल दिया जा रहा है क्योंकि अगली दस वर्षीय जनगणना (1991) दूर नहीं है। वास्तव में 'उपेक्षित हुए समुदायों (अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों) के सदस्यों के यह सर्वोत्तम हित में होगा कि 1991 की जनगणना से काफी पहले यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक कदम उठाए जाएं कि ऐसे समुदायों के व्यक्तियों को, जो अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूचियों में सम्मिलित नहीं हैं, किसी भी मूल्य पर अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों के अधिकारों या दावा करने की अनुमति या सुविधा न दी जाए। ये कदम उठाते समय, अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखा जाए—

(क) इन समुदायों के नाम एक वचन के रूप में लिखे जाएं और बहुवचन के रूप में न रखे जाएं। इस संबंध में वर्तमान सूचियों में, एक ही राज्य/संघ राज्यक्षेत्र की सूची तक में भी कोई एकरूपता नहीं है।

(ख) इन सूचियों में क्षेत्रीय नाम पद्धतियों का प्रयोग न किया जाए और उनमें केवल विशिष्ठ समुदायों के नाम सम्मिलित किए जाए।

(ग) किसी रीति से स्पष्ट रूप से यह दर्शाया जाए कि किसी उपनाम को एक समुदाय का नाम समझने की भूल न हो और गैर अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के किसी व्यक्ति को अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का होने का दावा करने की अनुमति केवल इसीलिए न दी जाए कि वह एक ऐसे उपनाम का प्रयोग करता है जो किसी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के नाम जैसा है या बिल्कुल वैसा ही है।

यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि गैर अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के गैर समुदायों के व्यक्तियों को उनकी जातियों के नामों से और कुछ अनुसूचित जातियों/जनजातियों के नामों के बीच ध्वन्यात्मक समानताएं होने के कारण अनुसूचित जातियों/जनजातियों के व्यक्तियों के अधिकारों का दावा करने की अनुमति न दी जाए। इसके लिए मार्ग-दर्शन के रूप में कुछ खास उदाहरण दिए जा सकते हैं।

ङ) ऊपर यथार्चाचित कारणों से जहां आवश्यक हो विशिष्ट क्षेत्र से संबंधित क्षेत्र सन्दर्भ सूची तैयार की जाए।

(च) यदि किसी राज्य में कोई समुदाय अस्तित्व में नहीं है तो उसे राज्य से संबंधित अनुसूचित जातियों या जनजातियों, जैसी स्थिति हो, की सूची से निकाल दिया जाना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए 1931, 1971 और 1981 की जनगणना में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की समुदाय-वार जनसंख्या का जिले-वार विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है। ऐसे काफी मामले हैं जिनमें कोई अनुसूचित जाति/जनजाति किसी राज्य में वास्तव में अस्तित्व में नहीं है परन्तु चूंकि वह उस राज्य की अनुसूचित जातियों/जनजातियों की सूची में सम्मिलित है कुछ पिछड़ी जातियों के व्यक्ति उस विशिष्ट अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्ति होने के झूठे दावे करते हैं। उपर्युक्त पैरा 14 की मद (6) और (13) में कर्नाटक की बेदारों/वाल्मीकियों, जो नायकडा/नायका अनुसूचित जनजाति के व्यक्ति होने का दावा करते हैं और उड़ीसा के केवटों/कैवर्तों, जो देवर अनुसूचित जाति के व्यक्ति होने का दावा करते हैं, के दो स्पष्ट उदाहरणों पर विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है।

अध्याय 12

आंग्ल भारतीय

लोक सभा में प्रतिनिधित्व

संविधान के अनुच्छेद 331 में यह प्रावधान है कि यदि राष्ट्रपति का यह मत है कि लोक सभा में आंग्ल भारतीय समुदाय को पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला है, तो वह लोक सभा में उस समुदाय के अधिक से अधिक दो सदस्य नामित कर सकता है। राष्ट्रपति ने लोक सभा में आंग्ल भारतीय समुदाय के प्रतिनिधित्व के लिए आठवीं लोक सभा में श्री फ्रैंक एंथनी तथा बरो श्री ए० ई० टी० को नामित किया।

विधान सभाओं में प्रतिनिधित्व

2.2. संविधान के अनुच्छेद 333 में यह प्रावधान किया गया है कि यदि किसी राज्य के राज्यपाल का यह मत है कि उस राज्य की विधान सभा में आंग्ल-भारतीय समुदाय को प्रतिनिधित्व दिए जाने की आवश्यकता है और उसमें उस समुदाय को पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला है, तो वह विधान सभा में उस समुदाय का एक सदस्य नामित कर सकता है। उपलब्ध सूचना के अनुसार रिपोर्टाधीन वर्ष में **आन्ध्र प्रदेश, बिहार, केरल, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तामिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल** की विधान सभाओं के लिए इन राज्यों के राज्यपालों द्वारा नामित एक-एक आंग्ल-भारतीय सदस्य विधान सभाओं में अपने समुदाय का प्रतिनिधित्व करते रहे हैं।

3.1. मूल रूप में संविधान के अनुच्छेद 334 में लोक सभा तथा राज्य विधान सभाओं में आंग्ल-भारतीय समुदाय के सदस्यों को नामित करने के लिए 10 वर्ष की अवधि के लिए प्रावधान किया गया था। उस अनुच्छेद में तीन बार संशोधन किया गया और प्रत्येक बार नामित करने की यह अवधि दस वर्ष बढ़ाई गई। तदनुसार लोक सभा तथा राज्य विधान सभाओं में आंग्ल-भारतीय समुदाय के सदस्यों को नामित करने की वर्तमान व्यवस्था 25-1-1990 को समाप्त होनी है।

4. जहां तक आंग्ल-भारतीय समुदाय के अन्य अल्पसंख्यकों के समकक्ष माने जाने के लिए उनके दावे का संबंध है, उस के बारे में अस्पष्टता है। वास्तव में वे यह दावा करते हैं कि उन्हें अल्पसंख्यक माना जाने के लिए वे सभी तीनों समान्य कसौटियों अर्थात् भाषा, धर्म और मानव जाति समूह के आधार पर सर्वाधिक पात्रता रखते हैं। जनवरी, 1986 में बेंगलूर में स्थित सक्रिय आंग्ल-भारतीय लोगों के एक संगठन से एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था। प्रधान मंत्री को संबोधित इस अभ्यावेदन में उन्होंने वांछा प्रकट की थी कि अल्पसंख्यकों के कल्याण के संबंध में प्रधान मंत्री के 15-सूत्री निदेशों का लाभ उनके समुदाय को दिया जाना चाहिए। इस कार्यालय ने अल्पसंख्यक आयोग से पूछा कि क्या वे आंग्ल-भारतीयों को अल्प-संख्यकों की सूची में एक पृथक् वर्ग के रूप में मान रहे हैं और उनके हितों का संरक्षण कर रहे हैं। अल्पसंख्यक आयोग ने उत्तर दिया कि वे आंग्ल-भारतीयों को अल्पसंख्यकों के रूप में नहीं मान रहे हैं और यह बताया गया कि केवल मुसलमानों, ईसाइयों, बौद्धों, सिक्खों तथा पारसियों को ही राष्ट्रीय स्तर पर धार्मिक अल्पसंख्यक के रूप माना गया है।

ब्रह्मदेव शर्मा

ब्रह्मदेव शर्मा
आयुक्त
अनुसूचित जातियां तथा अनुसूचित जन-जातियां

NIEPA DC
D06782

Sub. National Systems Unit,
National Institute of Educational
Planning and Administration
17-B, Sri Aurobindo Marg, New Delhi-110016
DOC. No. D-6782
Date 16-4-92

MGIPF—803 SC&ST/88-21-4-89—5,000.